जाटों का नवीन इतिहास — २
१६८५–१७६३ ई०

ब्रजेन्द्र बहादुर
महाराजा सूरजमल जाट

उपेन्द्रनाथ शर्मा

मंगल प्रकाशन
गोविन्द राजियों का रास्ता,
जयपुर—१

समर्पण

परम पूज्य पिताजी

स्वर्गीय पं० जगदीश प्रसाद

पूज्य माताजी

श्रीमती चमेली देवी

उनकी सुपुत्री विद्या तथा उमा

को

अनुक्रम

प्राक्कथन

भारतवर्ष मे मुगल साम्राज्य की स्थापना के बाद और विशेषतया १७ वीं शती मे पिछले महान् मुगल सम्राटो की निरन्तर बढती हुई धर्मान्ध कट्टरतापूर्ण नीतियों की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप विभिन्न हिन्दू जातियो, सगठनो या शक्ति-केन्द्रो मे जब नवचेतना उत्पन्न हुई, तथा तब यो मुगल आधिपत्य का सक्रिय विरोध करने को कटिबद्ध हो उसका सामना करने वालों मे ब्रजभूमि के जाटो का इतिहास विशेष रूपेण अध्ययनीय और महत्वपूर्ण है। सुदूर दक्षिण स मुगल साम्राज्य के हृदय केन्द्र आगरा और दिल्ली को जाने वाले सारे मार्ग इसी ब्रजभूमि मे ही होकर आगे बढते थे। अत इस ब्रजभूमि मे मुगल साम्राज्य विरोधी जाट सत्ता का उद्भव और विकास १८ वी शती क उत्तर भारतीय इतिहास की एक अति महत्वपूर्ण और निर्णायक परिणति थी, जिसका ब्योरेवार गहराई तक व्यापक अध्ययन सर्वथा अत्यावश्यक है। परन्तु भारतीय इतिहासकारों ने प्रायः इधर विशेष ध्यान नहीं दिया है। कोई साठ वर्ष पहिले स्वर्गीय डा० कालिकारजन कानूनगो ने 'हिस्ट्री आफ दी जाट्स' लिखी थी। इधर इन पिछले साठ वर्षों में जाटों के इतिहास सम्बन्धी बहुत सी नई आधार-सामग्री प्रकाश में आई है, जो समकालीन और प्रमाणिक होने के कारण अति महत्वपूर्ण हैं। उसका आशिक उपयोग करते हुए पिछले कुछ वर्षों में दो एक ग्रन्थ, डा० राम पांडे 'भरतपुर अप टु १८२६' तथा डा० मनोहर सिंह राणावत कृत 'भरतपुर महाराज जवाहर सिंह जाट,' आदि प्रकाशित हुए हैं परन्तु उनका उद्देश्य या विषय सीमित होने के कारण ब्रजभूमि निवासी जाटों के समूचे इतिहास के ब्योरेवार व्यापक और परिपूर्ण विवेचन या अध्ययन के लिये वे पर्याप्त नही हो सके हैं।

यह वस्तुत प्रसन्नता की बात है कि इधर पिछले २० वर्षों से इस ब्रज भूमि का ही एक सुपुत्र, श्री उपेन्द्रनाथ शर्मा, जाटों के इस प्रादेशिक इतिहास का गहन अध्ययन ही नही कर रहा है, परन्तु जाटो के प्रामाणिक इतिहास को सविस्तार लिख कर अनेकों खण्डो म क्रमश उसे प्रकाशित करवाने म जुट गया है। कुछ वर्ष पहिले अपनी इसी महती योजना के अन्तर्गत उसने सर्व प्रथम, 'जाटो का नवीन इतिहास' शीर्षक अपना बृहत ग्रन्थ प्रकाशित कराया था। उसमें शाहजहा के शासन काल मे स्थापित हुए जाटो के प्रभावकारी सगठन से लेकर, औरगजेब के शासनकाल मे होने वाले सारे विभिन्न जाट मुगल सघर्षों तथा अत में जाट इतिहास में युग-निर्माता चूडामन जाट का प्रामाणिक विस्तृत इतिहास प्रस्तुत किया था।

अब श्री उपेन्द्रनाथ शर्मा ने अपने उसी सुनियोजित क्रम में अपना यह दूसरा बृहद् ग्रन्थ "ब्रजेन्द्र बहादुर राजा सूरजमल जाट (१७०७-१७६३ ई०)" लिख डाला है। इस ग्रंथ मे श्री उपेन्द्रनाथ शर्मा ने भरतपुर जाट राज्य के वास्तविक संस्थापक राव (ठाकुर) बदन सिंह और उसके सुविख्यात प्रतापी उत्तराधिकारी पुत्र जाट राजा सूरजमल के क्रमबद्ध सुव्यवस्थित ऐतिहासिक विवरण सविस्तार और सप्रमाण प्रस्तुत किये हैं। अपने पिता राव बदन सिंह के जीवनकाल में सन् १७३४ ई० में कुंवर पद पाने के बाद से ही सूरजमल एक प्रभावशाली प्रमुख सबल सेनानायक तथा राजनेता के रूप में बड़ी प्रखरता के साथ क्षेत्रीय इतिहास में उभरने लगा था। यों सन् १७५४ ई० तक का इतिहास वस्तुतः ठाकुर बदन सिंह तथा युवराज सूरजमल के संयुक्त इतिहास के रूप मे ही लिखा जा सका है। इसी प्रकार सूरजमल के शासन-काल के इतिहास मे उसके प्रतापी उत्तराधिकारी जवाहरसिंह जाट के कार्यकलापों का इतिहास *सम्मिलित हो जाना अवश्यम्भावी था।*

नवम्बर २८ १७२८ ई० को मालवा में हुए अमझरा के निर्णायक युद्ध में मराठों की पूर्ण विजय हो जाने के बाद के पैंतीस वर्षों जाटों के इतिवृत्त में ही नहीं पत-*नोन्मुख मुगल साम्राज्य के साथ ही आक्रमक मराठों के इतिहास में भी अति महत्वपूर्ण* थे, जिनमें मुगल, मराठा और जाटों के साथ ही पास-पड़ौस के अफगान सेनानायकों और राजस्थान के राजपूत शासकों की भूमिका बहुत निर्णयात्मक रही थी। अतएव श्री उपेन्द्रनाथ शर्मा को अपने इस वृहत् इतिहास ग्रन्थ में उन सब ही संबंधित अनेकानेक ऐतिहासिक शक्तियों की कार्यवाहियों का विवेचन करना पड़ा है, जिससे उसने उस समूचे क्षेत्र का एक सर्वांगीण यथासंभव पूर्ण इतिहास लिख डाला है।

अपने पूर्ववर्ती ग्रन्थ "जाटों का नवीन इतिहास" की ही तरह श्री उपेन्द्रनाथ शर्मा ने अपने इस नये ग्रन्थ में भी यथासाध्य सारी सुलभ आधार-सामग्री का पूरा-पूरा प्रयोग किया है। फारसी, मराठी, हिन्दी, राजस्थानी, आदि के साथ ही कुछ यूरोपीय भाषाओं में लिखे ग्रन्थों के अंग्रेजी अनुवादों से प्राप्त जानकारी तथा विवरणों को भी लेखक ने देखा भाला है। यों इन पिछले पचास-साठ वर्षों में प्रकाश में आई उस सारी अछूती नई सामग्री का भी लेखक ने भरसक उपयोग किया है, विशेषरूपेण जाटों के इतिहास के संदर्भ में, जिसकी पहिले अन्य किसी ने छान-बीन नहीं की थी। यह बात विशेष उल्लेखनीय है कि लेखक ने ब्रजभाषा आदि क्षेत्रीय भाषा-बोली में लिखे उन सब ही हस्तलिखित पोथियों आदि को भी देखा-भाला तथा उनका उपयोग किया है, जिनमें इस क्षेत्र में बसे तथा सक्रिय हुए उन सब ही विशिष्ट घरानों और वंशों की वंशावलियां या विवरण मिलते हैं, जिनके बारे में अन्यत्र कोई उल्लेख नहीं पाये जाते हैं। इस प्रकार यह ग्रन्थ भी उस क्षेत्र के *जाट वंशों घरानों* आदि का एक सर्वसंग्रह बन गया है। यत्र-तत्र निजी संग्रहों में सुलभ अब तक अज्ञात

कई एक फारसी अभिलेखों, कुछ फरमानों आदि का भी लेखक ने संभवतः प्रथम बार उपयोग किया है, जिनमें दिये गये आदेशों की पुष्टि अन्य समकालीन अखबारात तथा किन्हीं प्रमाणित इतिहास ग्रन्थों से नहीं होती है। नवम्बर २८, १७०१ ई० को बालकिसन को मनसब और उपाधि दिये जाने संबंधी औरंगजेब कालीन फरमान ऐसा ही एक अभिलेख है, जिसकी प्रमाणिकता की सयत्न जाच आवश्यक प्रतीत होती है।

श्री उपेन्द्रनाथ शर्मा ने इस बात का पूरा ध्यान रखा है कि जाटों के सदर्भ में लिखते समय यथासम्भव अतिशयोक्ति से बचे, तथापि यदि यत्र-तत्र ऐसी किसी प्रकार की अतिरजना का कोई पुट देख पड़ता है, तो वह क्षम्य ही होनी चाहिये।

इस ग्रन्थ की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि लेखक ने सीधी-साधी भाषा में अपनी बात कही है और अपने कथनों तथा स्थापनाओं के समर्थन में प्रासंगिक आधार-ग्रन्थों तथा अन्य विश्वसनीय आधार-सामग्री के समुचित यथेष्ट सदर्भ देकर उनको प्रामाणिक सुस्पष्ट की है। कई पाद टिप्पणियों में आवश्यकतानुसार यत्र-तत्र विवादास्पद बातों का सविस्तार विवेचन भी किया गया है। पुनः अपने इस ग्रन्थ में समकालीन इतिहास की विभिन्न शक्तियों से संबंधित परस्पर गुथी हुई अनेक राजनैतिक सामाजिक, आदि धाराओं का विवेचन अपने इस ग्रन्थ में लेखक ने इस प्रकार किया है कि उनमें परम्परा-सूत्र टूटते नहीं हैं।

ग्रन्थ के अंत में लेखक ने उसके द्वारा प्रयुक्त सारी आधार सामग्री के संकेतों और संदर्भों की पूरी तालिका दे दी है, जो इस विषय विशेष पर भविष्य में शोध करने वालों के लिये बहुत ही उपयोगी होगी।

यों यह ग्रन्थ पठनीय, अध्ययनीय और संग्रहणीय बन गया है, जिसके लिये लेखक बधाई का पात्र है। अतः इसी परम्परा में श्री उपेन्द्रनाथ शर्मा द्वारा लिखे जाने वाले अगले खण्ड की प्रतीक्षा रहेगी।

रघुवीर निवास,
सीतामऊ (मालवा)
४-६-६०

रघुवीर सिंह
(महाराज कुमार डा० रघुवीर सिंह)
एम० ए०, डी० लिट्०
निदेशक, श्री नटनागर शोध संस्थान

आमुख

जिज्ञासा थी जन्मभूमि भरतपुर का इतिहास, साहित्य, समाज व संस्कृति का अध्ययन करने की। पूज्य स्व० नानाजी (पं० नारायण लाल), जिन्होंने पर्यना युद्ध (१८८६ ई०) अपनी आँखों से देखा था तथा प्रपिता पं० रघुनाथ प्रसाद 'कौशलेश' (नाटककार तथा कहानीकार) ने भरतपुर राज्य के शासकों तथा जन प्रतिनिधियों के यशस्वी शौर्य व पराक्रम, दिग्विजय तथा पतन की अनेकों गाथायें, उपाख्यान सुना कर जिज्ञासा को बढ़ा दिया था।' निष्कर्षतः कायेड व ब्रज जनपद का तथ्यात्मक राजनैतिक व सांस्कृतिक इतिहास लिखा ही नहीं गया। जो कुछ भी मिला, अपर्याप्त व भूलों भरा था।

जिज्ञासावश ही १९५८ ई० में मैंने कायेड़ जनपद का राजनैतिक सामाजिक व सांस्कृतिक इतिहास का अध्ययन शुरू किया और लिखने का मानस बनाया। अत्यधिक दुरूह, वास्तव में दु.साध्य संकल्प सर्वज्ञ की प्रेरणा व आत्म विश्वास से ही सम्भव हो सका।

प्रारम्भ में दो वर्ष (१९६२-६३) तक 'देशबन्धु' साप्ताहिक में धारावाहिक ऐतिहासिक झलक प्रस्तुत की और 'राजस्थान का मध्यकालीन इतिहास' (१९६६) में 'जाट मुगल संघर्ष', परिशिष्ट स्नातकोत्तर छात्रों के अध्ययन के लिए प्रकाशित कराया। फिर एक दशाब्दी बाद 'जाटों का नवीन इतिहास' (१९७७) प्रकाशित हो सका। इस शोध ग्रन्थ में १७२१ ई० तक का ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक दर्शन शामिल था। इस सन्दर्भ ग्रन्थ से इतिहासकारों ने आशातीत लाभ उठाया। अब द्वितीय चरण में "राव बदन सिंह 'महेन्द्र' तथा ब्रजेन्द्र बहादुर महाराजा सूरजमल" (१७६३ ई०) प्रस्तुत करने का अवसर मिल सका।

ठाकुर रूप सिंह के परलोकवास (जुलाई, १७२० ई०) के बाद 'जमींदारी के स्वामित्व' ने किसान एकता के करपलव को झकझोर डाला। तब ठाकुर (राव) बदन सिंह को स्वकीय अस्तित्व की रक्षा तथा सामाजिक हितों व परम्पराओं की स्थिरता के लिए शीत संघर्ष करना पड़ा। अस्तु, पूर्णत. भिन्न राजनैतिक वातावरण में मीर बख्शी खानदौरान की अनुभवी सलाह से सवाई जय सिंह कछवाहा को बदन-सिंह के पक्ष में कायेड जनपद की जमींदारी का स्वामित्व स्वीकार करना पड़ा। इससे विधि सम्मत किसान राज्य के सरदारपन का मार्ग खुल गया। राव बदन सिंह ने अपनी कुशलता तथा चतुरता से ही एक स्वाधीन किसान राज्य भरतपुर की

स्थापना की। महाराजा सूरजमल विलक्षण प्रतिभा का धनी अवश्य था, परन्तु यह सभी कुछ चमत्कार था जन-जन का समर्थन, समाज में सर्वत्र मान्य बहु प्रतिभा के धनी-मानी विद्वानों का। इस प्रकार स्वाधीन किसान राज्य के एकीकरण व उत्सर्न में सह-भागीदार थी काठेड जनपद की, ब्रज की सम्पूर्ण जनता। कुशल राजनयिक व कूटनयिक राव हेमराज कटारा, राव रूपराम कटारा, राजा मोहन सिंह, सूर्यद्विज, गज सिंह चौहान आदि-आदि, जिनकी पडौसी शक्तियों के साथ निकटता थी, ने निःसन्देह बुद्धि कौशल का परिचय दिया। इस प्रकार कृषक प्रधान संगठन एक राजनैतिक इकाई के रूप मे एक शताब्दी तक भारतीय इतिहास के रंगमंच पर प्रकाशमान हो सका। हिन्दुस्तान की राजनीति मे कृषक प्रधान समाज की एकता को नकारना असम्भव था। इसी से मुगलों, अफगानों, राजपूत व मराठों आदि इकाईयो को संघर्षरत रहकर भी समझौते करने पड़े। यदि वास्तव में मराठा किसान शासक की नीति को समझ पाते और उनमें महत्वाकांक्षा के साथ सहयोग की भावना होती, तब भारत का मानचित्र कुछ भिन्न ही होता।

आलोच्य काल का इतिवृत अनेक जटिल गुत्थियों से भरपूर है और मौलिक अभिलेखों के अभाव मे अनेक बिन्दुओं को सुलझाना काफी कठिन है। पुनश्च प्रस्तुत शोध में अद्यतः उपलब्ध अभिलेखों के आधार पर कुछ नये तथ्यों को उजागर किया गया है। स्वार्थपरक राजनीति का समाज व्यवस्था पर प्रभाव, सांस्कृतिक विकास, अर्थ व्यवस्था की स्थिरता को प्रथम बार पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। महाराजा सूरजमल के जन्म स्थान व जन्म काल के बारे में कुछ लेखकों मे काफी भ्रांतियां रही हैं। इनका निराकरण द्वितीय अध्याय में किया गया है।

किसान शासकों ने जन समर्थन पाकर इतिहास अवश्य बनाया, परन्तु सम्भवत अपने शासन काल की महत्वपूर्ण घटनाओं, दिनचर्या, राजनैतिक संधियों या इकरारों को लिखवाने का, रेकॉर्ड को व्यवस्थित रूप से सुरक्षित रखने की ओर उदासीनता बरती। अभी भी राजवंश के सदस्य आधारहीन उपाख्यानों, गल्पों अथवा ब्रिटिश लेखकों की कल्पना मे विश्वासी हैं और उनकी अनेकों जानकारियां भी सदिग्ध हैं। सम्भवत. पूर्ववर्ती शासकों ने दीवानी, निजामी, वकालत तथा गृह व्यवस्था सम्बन्धी 'दफतरी' को सुरक्षित रखने की ओर अनिवार्यत. ध्यान दिया होगा?

फादर वेण्डल का कथन है कि महाराव माहर सिंह अनेक दफतरों के उपयोगी दस्तावेजो व कागजातों को अपने साथ ले गया था। इसी प्रकार 'बहार गुलजार-ए-शुजाई' का लेखक हरिचरन लिखता है कि १७६९ ई० में डीग व कुम्हेर में सैनिक उपद्रव व भयकर अग्निकाण्ड हुआ था। कॉम्पते मोडव का भी कथन है कि मई, १७७६ ई० मे मिर्जा नजफ खां ने डीग पर और कुछ वर्ष बाद कुम्हेर पर अधिकार कर लिया था, तब वहां सब कुछ बारूदखानों के साथ स्वाहा हो गया था।

दफ्तरों को लूटा गया। सम्भवतः प्रबंध की दृष्टि से मिर्जा नजफ खाँ दफ्तरों के शेष कागजातों को अपने साथ ले गया ? अस्तु, लेखक को दोहरी अभिलेखो पर निर्भर रहना पड़ा है।

कविवर सूदन माथुर चतुर्वेदी ने सर्वाधिक विश्वसनीय, तथ्यपरक तथा उपयोगी काव्य ग्रन्थ 'सुजान चरित' लिखा, परन्तु यह ग्रन्थ १७५३ ई० के अन्त में अनायास ही अधूरा रह जाता है। इस ग्रन्थ से सिनसिनवार वंश की परम्परा, समकालिक समाज व्यवस्था, आर्थिक सम्पन्नता, सैन्य विज्ञान तकनिकी का ज्ञान होता है।

फादर फ्राकोज वेण्डल ने १७६८ ई० तक का विवरण लिखा है। परन्तु लोक चर्चा के आधार पर अनेको सारहीन, कल्पित व भ्रमात्मक विवरण सन्देह के प्रतीक हैं। अतः इसके अध्ययन मे सावधानी की आवश्यकता है। इसी क्रम में जॉन गोट-लिइव कोहन की पुस्तक 'भरतपुर राजवंश की तवारीख' एकाकी है और आलोच्य-काल के लिए अधिक उपयोगी नही है।

कप्तान रॉबर्ट मारीसन के आग्रह पर प० बलदेव सिंह सूर्यद्विज ने 'तवारीख भरतपुर' नामक ग्रन्थ लिखा था, परन्तु आलोच्य काल के लिए लेखक ने, सूदन का उपयोग किया है। ज्वाला सहाय मुंसिफ ने 'वाक्या राजपूताना' तथा 'हिस्ट्री ऑफ भरतपुर' मे प० बलदेव सिंह का शाब्दिक उपयोग किया है।

ब्रिटिश शासन काल में प्रथम बार कर्नल जेम्स टॉड ने राजपूतों का, ग्रांट डफ ने मराठों का और कनिंघम ने सिखों का इतिहास लिखकर इन राजनैतिक शक्तियों को भारतीय इतिहास में उभारा। परन्तु दिल्ली के पड़ौसी जाटों पर किसी ने भी दृष्टि नहीं डाली। १९२५ ई० मे स्व० डॉ० कालिका रंजन कानूनगो ने 'हिस्ट्री ऑफ जाट्स' लिख कर जाट जन सत्ता की प्रभावशाली भूमिका को प्रकाशमान किया। जिसके लिए डा० कानूनगो का अखिल भारतवर्षीय जाट क्षत्रिय महासभा ने पुष्कर सम्मेलन में सम्मान किया था। किन्तु फिर आगे प्रगति नहीं हो सकी। इसमे आंचलिक रीति-परम्पराओं की उपेक्षा अवश्य खलती है। स्व० डॉ० यदुनाथ सरकार ने 'मुगल साम्राज्य का पतन' में संकेतात्मक ध्वनि में सूरजमल के महान व्यक्तित्व को उजागर किया है।

इधर देशी रजवाड़ों के एकीकरण के बाद राजस्थान के भिन्न भिन्न रजवाड़ों व ठिकानेदारों के अभिलेख भण्डार प्रकाश में आये हैं। इस अमूल्य व प्रचुर सामग्री, अध्ययन की सहज सुगमता के परिणामत सामन्ती संकीर्णता, पूर्वाग्रहों से विमुक्त वैज्ञानिक अनुभूतियां, नवीन चिन्तन व विकसित जनवादी विचारधाराओं के साथ शोध कार्यों में बढ़ती रुचि ने काफी प्रगति की है। राजस्थानी व मराठी अभिलेखों, जयपुर व जोधपुर रेकार्ड्स ने नवीन तथ्यों व घटनाओं को उजागर किया है। इस

अपार प्रस्तुत शोध मे मूल फारसी के सन्दर्भ ग्रन्थों, अथवा प्रकाशित और अप्रकाशित राजस्थानी कार्टेडी अभिलेखो का प्रथम बार प्रयोग किया गया है। अनेको घटनाओं की तिथि क्रम व इतिवृत में बदलाव आया है। १७२६ ई० मे ठाकुर खेमकरन की घटना मात्र उदाहरण ही है।

काठेडी, राजस्थानी तथा मराठी अभिलेखों की तारीख निर्धारण मे सावधानी की आवश्यकता है। कार्टेडी पुरालेखो मे सर्वत्र चैत्रादि विक्रमी सम्वत्, राजस्थानी पुरालेखो मे फसली (भाद्रपद कृष्णा १) तथा मराठी लेखो में अमावस्यांत चैत्रादि सम्वत् तिथियो का प्रयोग मिलता है। अस्तु ग्रेगोरियन सन् व तारीख निर्धारण मे स्वामी कन्नू पिल्लई की 'इण्डियन अफिमेरीज' (खण्ड ६) का प्रयोग करते समय सितम्बर १४, १७५२ ई० से पूर्व १० दिवस जोडकर नवीन पद्धति का प्रयोग किया गया है।

शाह वलीउल्लाह के लेखो से स्पष्ट है कि मुस्लिम दार्शनिक विदेशी शक्तियों की सहायता से जाटो व मराठों भारत मूल के मुस्लिमो की शक्ति को कुचल कर हिन्दुस्थान में इस्लामी राज्य की जडों को पुनः जमाने का स्वप्न देख रहा था, जबकि कृषक समाज का लोकप्रिय राजनेता महाराजा सूरजमल अकबर महान की भांति राजनीति राजधर्म को धर्म व सम्प्रदायों के हस्तक्षेप से विमुक्त मानकर सर्व-सम्प्रदायों, सभी जातियो, उदीयमान भिन्न-भिन्न राजनैतिक इकाईयो के सहयोग से केन्द्रीय सत्ता को लोकतान्त्रिक सिद्धान्त के आधार पर सुदृढ़ करके भारतीय शासन को पुनर्जीवित करना चाहता था। इस प्रकार उस पतनो-मुख साम्राज्यवादी व सामन्ती अथवा मनसबदारी युग में इसका जीवन व चरित्र नवीन दर्शन का द्योतक है।

महाराजा सूरजमल के परिवार का समकालीन दुर्लभ चित्र मुझको श्रीयुत भारत भूषण भार्गव, बी० ए० के निजी संग्रह से विशेष अनुकम्पा के रूप मे प्राप्त हुआ है। सम्भवत. चित्रकार श्री राम महाराव नवल सिंह का धाभी भाई था। चित्र का परिचय चित्रकार ने उपरी भाग में दिया है।

सामग्री के चयन, सकलन व व्यवस्थापन मे मेरी अर्द्धांगिनी आयुष्मती विमला शर्मा ने, प्रिय पुत्र श्री हिरेन्द्र भारद्वाज की अस्वस्थता मे भी, तन्मयता से सहयोग प्रदान किया। पारिवारिक व सामाजिक सभी उत्तरदायित्वो को वहन करके मुझको सामान्य चिन्ताओ, मानसिक तनावो से मुक्त रखा। अस्तु, वह साधुवाद की पात्रा है।

श्री जितेन्द्र कुमार जैन, निदेशक तथा श्री ब्रजलाल विश्नोई, सहायक निदेशक ने 'राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर में सकलित जयपुर रेकार्ड व अभिलेखों का अध्ययन करने की सुविधायें देकर सहयोग प्रदान किया। अत इनका

तथा उन सभी विद्वान, लेखकों का आभारी हूं, जिनके ग्रन्थों व संदर्भों से इस शोध में सहायता मिली है। श्री मनजीत सिंह दुग्गल (वर्तमान अधिशासी अभियन्ता, सिंचाई) को उत्सुकता तथा सद्भाव के लिए धन्यवाद देना अपना कर्तव्य समझता हूँ।

श्रीयुत कुँवर नटवर सिंह, उर्वरक राज्य मंत्री भारत सरकार, श्री ईश्वर चन्द श्रीवास्तव, आई० ए० एस०, श्री गिर्राज प्रसाद तिवारी (उपाध्यक्ष, राज० विधान सभा) तथा अपने बहनोई डॉ० गोपाल लाल शर्मा के प्रोत्साहन, आर्थिक सहयोग, सद्भावना तथा विशिष्ट अनुकम्पा के लिए मैं उनका कृतज्ञ हूं।

श्री भटनागर शोध संस्थान, सीतामऊ में उपलब्ध मूल्यवान प्रचुर सामग्री का अध्ययन (मई, १९७८ ई०) करते समय भारत के महान इतिहासवेत्ता महाराजकुमार डॉ० रघुवीर सिंह, एम० ए०, डी० लिट् ने अति प्रेरणादायक सुझाव दिये। अनेक जटिलताओं को सुलझाया। अमूल्य समय देकर आत्मीयता के साथ इस शोध के प्रारूप को जांचा। साथ ही प्राक्कथन लिखने की महती कृपा की। मैं आपकी उदारता, महानता व अनुकम्पा का अत्यधिक ऋणी हूँ।

लेखक श्री उमराव सिंह मंगल का भी आभारी है, जिन्होंने यह ग्रन्थ प्रकाशित करके प्रबुद्ध पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने में सहयोग प्रदान किया है।

कोतवाली के समीप
भरतपुर, (राजस्थान)

उपेन्द्र नाथ शर्मा

प्रकार प्रस्तुत शोध में मूल फारसी के सन्दर्भ ग्रन्थों, प्रथमतः प्रकाशित और अप्रकाशित राजस्थानी वार्ड्डो रिकॉर्ड्स का प्रथम बार प्रयोग किया गया है। कई घटनाओं की तिथि क्रम व इतिवृत्त में बदलाव आया है। १७२६ ई० में ठाकुर खेमकरन की घटना मात्र उदाहरण ही है।

। । कार्टेडी, राजस्थानी तथा मराठी अभिलेखों की तारीख निर्धारण में सावधानी की आवश्यकता है। कार्टेडी पुरालेखों में सर्वत्र चैत्रादि विक्रमी सम्वत्, राजस्थानी पुरालेखों में फसली (भाद्रपद कृष्णा १) तथा मराठी लेखों में अमावस्यांत चैत्रादि सम्वत् तिथियों का प्रयोग मिलता है। अस्तु ग्रेगोरियन सन् व तारीख निर्धारण में स्वामी कन्नू पिल्लई की 'इण्डियन एफिमेरीज' (खण्ड ६) का प्रयोग करते समय सितम्बर १४, १७५२ ई० से पूर्व १० दिवस जोड़कर नवीन पद्धति का प्रयोग किया गया है।

' शाह वलीउल्लाह के लेखों से स्पष्ट है कि मुस्लिम दार्शनिक विदेशी शक्तियों की सहायता से जाटों व मराठों, भारत मूल के मुस्लिमों की शक्ति को कुचल कर हिन्दुस्थान में इस्लामी राज्य की जड़ों को पुनः जमाने का स्वप्न देख रहा था, जबकि कृषक समाज का लोकप्रिय राजनेता महाराजा सूरजमल अकबर महान की भांति राजनीति राजधर्म को धर्म व सम्प्रदायों के हस्तक्षेप से विमुक्त मानकर सर्व सम्प्रदायों, सभी जातियों,'उदीयमान भिन्न-भिन्न राजनैतिक इकाईयों के सहयोग से केन्द्रीय सत्ता को लोकतान्त्रिक सिद्धान्त के आधार पर सुदृढ़ करके भारतीय शासन को पुनर्जीवित करना चाहता था। इस प्रकार उस पतनोन्मुख साम्राज्यवादी व सामन्ती अथवा मनसबदारी युग में उसका जीवन व चरित्र नवीन दर्शन का द्योतक है।

महाराजा सूरजमल के' परिवार का समकालीन दुर्लभ चित्र मुझको श्रीयुत 'भारत भूषण भार्गव, बी० ए० के निजी संग्रह से विशेष अनुकम्पा के रूप में प्राप्त हुआ है। सम्भवत. चित्रकार श्री राम महाराव नवल सिंह का धात्री भाई था। चित्र का परिचय चित्रकार ने उपरी भाग में दिया है।

सामग्री के चयन, संकलन व व्यवस्थापन में मेरी अर्द्धांगिनी आयुष्मती विमला शर्मा ने, प्रिय पुत्र श्री हितेन्द्र भारद्वाज की अस्वस्थता में भी, तन्मयता से सहयोग प्रदान किया। पारिवारिक व सामाजिक सभी उत्तरदायित्वों को वहन करके मुझको बाधाओं व चिन्ताओं, मानसिक तनावों से मुक्त रखा। अस्तु, वह साधुवाद की पात्रा है।

श्री जितेन्द्र कुमार जैन, निदेशक तथा श्री ब्रजलाल विश्नोई, सहायक निदेशक ने 'राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर में संकलित जयपुर रेकॉर्ड व अभिलेखों का अध्ययन करने की सुविधायें देकर सहयोग प्रदान किया। अतः उनका

तथा उन सभी विद्वान, लेखकों का आभारी हूं, जिनके ग्रन्थों व संदर्भों से इस शोध में सहायता मिली है। श्री मनजीत सिंह दुग्गल (वर्तमान अधिशासी अभियन्ता, सिंचाई) की उत्सुकता तथा सद्भाव के लिए धन्यवाद देना मेरा कर्तव्य समझता हूं।

श्रीयुत कुंवर नटवर सिंह, उर्वरक राज्य मंत्री भारत सरकार, श्री ईश्वर चन्द श्रीवास्तव, आई० ए० एस०, श्री गिर्राज प्रसाद तिवारी (उपाध्यक्ष, राज० विधान सभा) तथा अपने बहनोई डॉ० गोपाल लाल शर्मा के प्रोत्साहन, आर्थिक सहयोग, सद्भावना तथा विशिष्ट अनुकम्पा के लिए मैं उनका कृतज्ञ हूं।

श्री नटनागर शोध संस्थान, सीतामऊ में उपलब्ध मूल्यवान प्रचुर सामग्री का अध्ययन (मई, १९७८ ई०) करते समय भारत के महान इतिहासवेत्ता महाराजकुमार डॉ० रघुबीर सिंह, एम० ए०, डी० लिट् ने अति प्रेरणादायक सुझाव दिये। अनेक जटिलताओं को सुलझाया। अमूल्य समय देकर आत्मीयता के साथ इस शोध के प्रारूप को जांचा। साथ ही प्राक्कथन लिखने की महती कृपा की। मैं आपकी उदारता, महानता व अनुकम्पा का अत्यधिक ऋणी हूं।

लेखक श्री उमराव सिंह मंगल का भी आभारी है, जिन्होंने यह ग्रन्थ प्रकाशित करके प्रबुद्ध पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने में सहयोग प्रदान किया है।

कोतवाली के समीप
भरतपुर, (राजस्थान)

उपेन्द्र नाथ शर्मा

अध्याय १

राव बदन सिंह "महेन्द्र"

१६८५–१७५६ ई०

कांठेड़, मेवात, जगर या जगरोती, सिदगिरि, बाहरवाटी, ब्रज, अन्तर्वेद (दोआब) तथा दक्षिणी हरियाणा के बहुलांश क्षेत्र में आबाद सिनसिनवार, सोगरिया, कुन्तल (खूंटेल), बाहर, हगा, नौंहवार आदि प्रधान जाट डूंग तथा अन्यान्य जाट पाल[1], जाट कबीले साभिमान विजय मन्दिर गढ (वर्तमान बयाना) और त्रिभुवन गिरि (तवनगढ़) के चन्द्रवंशी यदुकुलीन साम्राज्य के संस्थापक भदाण-पति परम भट्टारक महाराजाधिराज विजयपाल के वंशधरों को अपना पूर्व-पुरुष तथा भदानक (भदाणक या भदान)[2] प्रान्त को अपनी मातृभूमि मानते हैं। बारहवीं शताब्दी से भारतीय इतिहास में यह भूखण्ड बयाना के नाम से प्रसिद्ध है। यह

---

१ – जाट डूंग तथा जाट पालों के क्रमिक विकास तथा विस्तार, क्षेत्रीय विभाजन सामाजिक एवं सांस्कृतिक परम्परा, रीति-रिवाज, प्रारम्भिक राजनैतिक क्रिया-कलाप प्रभृति के विशेष अध्ययन के लिए द्रष्टव्य– लेखक कृत "जाटों का नवीन इतिहास," मंगल प्रकाशन, जयपुर, १९७७ ई०।

२ – विजय मन्दिर गढ़ तथा त्रिभुवन गिरि के राजनैतिक आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक इतिहास के लिए द्रष्टव्य-लेखक कृत 'युग-युगीन बयाना'।

—मध्यकालीन प्राकृत तथा अपभ्रंश व्याकरणों जिन भण्डारों के प्राचीनतम साहित्यिक सन्दर्भों तथा प्रशस्तियों और शिलालेखों से ज्ञात होता है कि शौरसेन जनपद से इतर यमुना नदी का पश्चिमी भूभाग भादानक (भदाणक) या भदाण भुक्ति या मण्डल के नाम से सु-प्रसिद्ध था और श्री पथ (श्री पथांपुरि) इस जनपद का प्राचीनतम शासन केन्द्र था [इ० ए० भाग ४, पृ० १४, आर्कि० सर्वे०, खण्ड १, पृ० ४२, ५०, ५२, खण्ड २०, पृ० २१; इम्पी० गजे०, खण्ड ७, पृ० ११७, वीर विनोद, पृ० १५१३।]

प्रदेश विन्ध्य तथा अरावली पर्वतों का संगम स्थल है और अनेक बरसाती नदी-नालों, सघन जगलों से सर्वाधिक सुरक्षित, अति उपजाऊ, धन धान्य व खनिज सम्पदा से सम्पन्न व समृद्ध है। यहाँ अनेकों शतियों तक भारतीय सभ्यता संस्कृति, शिक्षा तथा लोक-साहित्य का नियमित विकास होता रहा और व्यापार तथा उद्योग-धन्धों को पूर्ण प्रश्रय मिला। सल्तनत काल में यदुवंशी राजपूत, ठाकुर कुटुम्ब कबीलों ने अन्यान्य युद्धरत जातियों के साथ मिलकर निरन्तर राजनैतिक सामाजिक अस्तित्व, आर्थिक विकास, समृद्धि-सम्पन्नता, संस्कृति की रक्षा

—३७२ ई० की पुण्डरीक यज्ञ प्रशस्ति [का०इ०इ०, खण्ड ३, पृ० २५३, आर्कि० सर्वे०, खण्ड ६, पृ० ५०, ५४-५५, इ०ए०, खण्ड १४ पृ० ८] तथा यौधेय गण शिलालेख [का०इ०इ०, भाग ३, पृ० २५२] के बाद हमको आठवीं शताब्दी में आचार्य जिनसेन की रचना 'हरिवंश पुराण' [७८३ ई०] से इस क्षेत्र की एक स्वतन्त्र तथा विकासशील राजनैतिक इकाई का पता चलता है। [प्रो० इ० हि० का०, १९६१ ई०; रा० हि० रि० ज०, खंड ४, सं० २, पृ० ३१-३२]।

—महाकवि राजशेखर ने 'भादानक' मण्डल या भुक्ति का मरुभू (मारवाड) तथा टक्क प्रदेशों के साथ उल्लेख किया है। अनेक शताब्दियों तक भदानपति या भदान-जन अपनी वीरता, साहस, पराक्रम के लिए भारतीय इतिहास में विख्यात थे और प्राय: अपभ्रंश भाषा का प्रयोग करते थे [काव्य मीमांसा, पृ० ५१]।

—स्कंद पुराण (कुमारिक खण्ड, ३१) से ज्ञात होता है कि भदानक प्रदेश में एक लक्ष ग्राम शामिल थे। इसी प्रकार "विजयपाल रासो" के अनुसार इस देश की सुरक्षा-व्यवस्था के लिए एक लक्ष चमू सेवारत थी (कवि रत्न माला)।

— बिजोलिया पार्श्वनाथ प्रशस्ति (११७० ई०) में "भादान भादानपते" शब्दों का प्रयोग किया गया है। [ए०इ०, लेख २६, पृ० १०२] सम्भवत: भादानक प्रान्त शाकम्भरी के चाहान राज्य का पड़ौसी राज्य था। इसी प्रकार जिनपाल के "खर्तरगच्छ पट्टावली" में भी भादानक प्रदेश का उल्लेख मिलता है।

—सिद्धसेन सूरि कृत 'सकल तीर्थ स्तोत्र' से पता चलता है कि कान्यकुब्ज (कन्नौज) तथा हर्षपुर (शेखावाटी) के मध्य भू-भाग में "भादानक देश" आबाद था और इसमें कम्म (कामां) तथा सिरोह नामक दो अति प्रसिद्ध जैन तीर्थ शामिल थे। [पत्तन भण्डार की हस्तलिखित विवरण पत्रिका, पृ० १५६, स्तोत्र, २२]।

—जिन प्रभा सूरि कृत "विविध तीर्थकल्प" से ज्ञात होता है कि दिल्ली-देवगीर के मध्य मार्ग पर "सिरोह" पड़ता था और यह अलापुर के उत्तर

राष्ट्रीय स्वाधीनता तथा एकता के लिये सतत् संघर्ष किया था। क्षेत्रीय राजपूत जातियों ने तुर्क (तुरुष्क) सुल्तानों की अधीनता में खुदकाश्त भूमि पर जमीदारी के मालिकाना हक तथा अधिकार उपार्जित करने के बाद भी केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों की अव्यवस्था, राजनैतिक अस्थिरता, राज्य-क्रान्ति, सिपहमालारों के विद्रोहों का भरपूर लाभ उठाकर समय-समय पर शाही भू-राजस्व (मालगुजारी) तथा अन्य करों (अबाब) का अपहरण करके तुर्क विद्रोहियों के साथ मिलकर व्यापक लूटमार तथा अराजकता में भाग लिया था। केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों की अर्थ-व्यवस्था को खोखला करने तथा साम्प्रदायिक वर्ग-संघर्ष को उभारने में योग दिया था। सभी राजपूत कुटुम्ब कबीलों में वंश या कुलानुगत, जातिगत (कौमी) भाईचारा, सामाजिक व सांस्कृतिक एकता, स्वाभिमानी आत्मीयता थी और प्रत्येक कुल, वंश, कुटुम्ब कबीला स्वतन्त्र इकाई के रूप में संगठित होकर भी आपात-काल में आपस में एक दूसरी इकाई से सम्बद्ध व संगठित था। इस क्षेत्र में आबाद अन्य गुजर, मीणा तथा भारतीय मुसलमान, मेवातियों के साथ मिलकर भी दीर्घ संघर्ष, सतत् प्रयासों के बाद भी सल्तनत की राजनीति में पर्याप्त सम्मान, प्रतिष्ठा, आत्म-सम्मान या आत्म गौरव प्राप्त करने में विफल रहे, फिर भी

में कहीं आबाद था। [सिंघी जैन ग्रन्थमाला संग्रह, पृ० ६५–६६] देवगीर (देवगिरि) वर्तमान करौली के दक्षिण में अभी तक बसा है। "विजयपाल रासो" के अनुसार राव नल्लसिंह का सिरोहिया गोत्र या निकास था। [कवि रत्न माला, पृ० २३] सिरोहिया गोत्र 'सिरोह' ग्राम का सूचक है। अत यह स्थान त्रिभुवन गिरि तथा देवगिरि के आसपास सोहरे वाला डाडा या श्योरया गांव हो सकता है?

—तेजपाल कृत "सम्भवनाथ चरित" की प्रशस्ति [जैन प्रशस्ति संग्रह, भाग २ प्रशस्ति सं० २८] से आभास मिलता है कि इस अपभ्रंश या अरहट्ट ग्रन्थ की रचना भदानक देश सीरी पट्टा (श्रीपथ) में की गई थी। इस समय दाऊदशाह का शासन था। अत. यह स्पष्ट है कि हिन्दू मध्यकाल से ही भादानक प्रान्त का राजनैतिक अस्तित्व विद्यमान था।

—१२६० ई० में फारसी इतिहासकार मिनहाज सिराज इस मुल्क को "भासीयाना" और बयाना को "मियाना या मयाना" लिखता है। [तबकाते नासिरी, पृ० १४५, २४०, २५०, २६६, २७४, २७८, २६७, ३१३] इस प्रकार तुर्कों के अधिकार के बाद भासीयाना या भदानक प्रदेश का नाम भारतीय मानचित्र से ओझल हो गया था और मियाना–मयाना ही बयाना कहलाने लगा था।

परम्परागत स्वभाव में पर्याप्त दृढ़ता, स्वाधीनता व अधिकार रक्षा की भावना निरन्तर परिपक्व होती गई।

१ – मुगल साम्राज्य मे जाट ड ्गों का विस्तार

अठारहवी शताब्दी मे जाटो के वैधानिक संगठन, जाट राज्य, जाट प्रशासन तथा जाट संस्कृति की स्थापना के समय आधुनिक पूर्वी राजस्थान (काठेड़ तथा मेवात), पश्चिमी उत्तर प्रदेश (दोआब-यमुना का वार पार इलाका) और दक्षिणी हरियाणा (मेवाती भूखण्ड) प्रान्त आगरा (अकबराबाद) तथा दिल्ली सूबो (प्रान्तो) मे शामिल था।[१] इस विशाल भूखण्ड पर जाट डूग तथा पाल सरदारो ने अन्यान्य गोत्री राजपूत, गूजर, बडगूजर, ब्राह्मण, मुसलमान, मेवातियों के साथ मिलकर *जमींदारी अधिकार प्राप्त कर लिये थे। अन्य जाति, धर्म या सम्प्रदाय के जमींदारो* की भांति प्राचीन रीति-रिवाज, लोक-परम्परा तथा दस्तूरों के अनुकूल जाट जमींदारो ने भी अपनी जमींदारी, रैयत की सुरक्षा-व्यवस्था के लिए कतिपय घोड़ा तथा पैदल सिपाहियों की नियुक्तिया कर ली थी। प्राय. ये सिपाही जमींदारो के खिदमती काश्तकार या किसान अथवा उसी डूंग, पाल, वश या कुल के ही सदस्य होते थे। इस प्रकार यह "जमींदाराना फौज" आवश्यकता पडने पर क्षेत्रीय फौजदार, आमिल, सूबेदार (राज्यपाल) तथा साम्राज्य की सेवा मे उपस्थित होती थी। रैय्यत की सुरक्षा, अपने प्रभुत्व की गरिमा को प्रदर्शित करने के लिए ही जाट *जमींदारो ने अपने देहातो मे वैधानिक रूप से अनेक सुरक्षित कच्ची गढ़ियों का भी* निर्माण करा लिया था। इस प्रकार अनेक प्रमुख देहात (मौजा) जमींदारो की गढ़ियो से सुरक्षित थे।

—प्रथम निकटवर्ती मुस्लिम इतिहासकार जियाउद्दीन बरनी (१३५७ ई०) ने "भियाना" तथा "बयाना" दोनों शब्दों का प्रयोग किया है। (तवारीख-इ-फीरोज शाही) इससे "बयाना" नामकरण की भ्रांत धारणा स्पष्ट हो जाती है।

१ – शेख अबुल फजल अल्लामी के अनुसार अकबर शासनकाल (१५५६–१६०५ ई०) मे अधिकांश जाट प्रधान भूखड आगरा, कोइल, सहार तीन–सरकार (जिलों) में विभाजित था। आगरा जिले की ३३ महालो (परगनो) मे से केवल (१) आगरा, (२) खानुआ, (३) बयाना, (४) हिण्डौन, (५) कठूमर, (६) चोमुंहा, (७) सौंखर सौंखरी आदि, कोइल (आधुनिक अलीगढ़) जिले की २१ मुहालों में से केवल (१) नौंह (नौंहझील), सहार जिले के सात परगनों में से (१) *बघोली*, (२) *सहार*, (३) *कामा*, (४) *कस्बा खोह (खोह मुजाहिद)*, (५) नौनेरा तथा (६) होडल परगनो में जाट जमींदार तथा काश्तकारों का अधिकाश भूमि पर अधिकार था। (आइने, खड ३, पृ० १९३-९४,२०२-३, २०६)।

मेहनतकश जाट जमीदारो, मजदूर-किसानो, कुटुम्ब-कबीलो ने सुदीर्घ प्रयास, निश्चल-सयम, उद्यमशीलता तथा परिश्रम से अन्यान्य परगनो मे प्रवेश कर लिया था और घोर परिश्रम करके अधिक उत्पादन के साथ ही वहा के सामाजिक, पारिवारिक रहन-सहन के स्तर को ऊचा उठाने की ओर ध्यान दिया। आलसी, समय पर शाही लगान तथा अन्य कर भुगतान करने म असमर्थ, अविवेकी निर्बल राजपूतो से अधिकाश देहातो की काश्तकारी का मालिकाना हक या जमीदारिया क्रय कर उन्होंने अपने आर्थिक सामाजिक, सास्कृतिक प्रभाव क्षेत्र का विस्तार कर लिया था।[१] अठारहवी शताब्दी के प्रथम चतुर्थाश तक जाट डूग तथा पालो का नियमित विकास तथा विस्तार चलता रहा।

अठारहवी शताब्दी के प्रमुख दार्शनिक तथा तत्वज्ञानी शाह वलीउल्लाह के अनुसार, "जाट प्रारम्भ में काश्तकार तथा किसान थे और शाहजहा के शासनकाल मे इनको घोडे की सवारी करने तथा बन्दूक रखने की आज्ञा नहीं थी। गढी बनाने का भी इन पर प्रतिबन्ध था। परन्तु परवर्ती शासको की उपेक्षा, मत-भिन्नता तथा अमीर (मन्त्रियो), उमरावो के दुराग्रही सघर्ष का लाभ उठाकर जाट शक्ति सम्पन्न विद्रोही (क्रान्तिकारी) शक्ति के रूप में उभरने लगे।"[२] कविवर सोमनाथ[३] का कथन है कि जाटों की सामाजिक सम्पन्नता, आर्थिक विकास तथा वैभव का आधार "खुरपा तथा जाली" थी। अधुना यह जाति उपजाऊ भूमि क्रय करने, खुदकाश्त करने में सश्रम प्रयत्नशील रहती है। इसी काल म डूग तथा पाल सरदारो ने जमीदारी अधिकारो के अलावा अनेक परगनो मे फौजदारी, मुक्द्दम तथा चौधरी के भी अधिकार प्राप्त कर लिये थे। ठाकुर (राव) चूडामन न मुगल सत्ता के लिए उत्तराधिकारियो के सघर्ष तथा प्रयास, केन्द्रीय मन्त्रियों के आपसी दलगत सघर्षों और राज्यपालों (सूबेदारो) का अकर्मण्यता का लाभ उठाकर अर्द्ध स्वाधीन जाट-सत्ता की नीव डाली और समस्त डूग तथा पालो को एक राजनैतिक इकाई के रूप मे सगठित कर लिया था। अब जाट परिवारो का प्रभुत्व, अधिकार क्षेत्र तथा राजनैतिक प्रभाव हिन्दुस्तान की राजधानी – दिल्ली से चर्मण्यवती (चम्बल) के वार–पार गोहद तक तथा पूर्व में मध्य दोआब के समस्त परगनो में व्यापक रूप से जम चुका था और 'मराठा, ढुढारी तथा हाडौती (दक्षिणी राजस्थान) लेखो मे जाट

---

१ – लाहौरी, भाग १, पृ० ४५२, मनूची, खण्ड २, पृ० ४३१-२, ४५१; मोरलैण्ड, पृ० १२४–५,; बनारसी प्रसाद, पृ० ६०–६१, २४४, २७१, २६१–४, सियासी मक्तूबात, पत्र स० २, पृ० ४८, ५०–५१।

२ – सियासी मक्तूबात, पत्र स० २, पृ० ५०–५१।

३ – माधव जयति (पाण्डु०), पृ० ६ अ।

बाहुल्य वाले इस विशाल भू-भाग को "जटवार या जटवाड़ा"[१] कहा जाता था।

गण : डूंग व पाल संगठन

जाट राष्ट्र के निर्माण से पूर्व जाटो की विभिन्न सामाजिक इकाईया, सामाजिक आर्थिक विकास या राजनैतिक प्रगति के बारे में जानना आवश्यक है। राव चूड़ामन के जाट डूग तथा पाल पचायतों का नेतृत्व प्राप्त करने से पूर्व कुशल नेता के अभाव मे निःसदेह जाट इकाईयो मे नियमित नैतिक एकता सगठन मे राजनैतिक उत्तरदायित्व ग्रहण करने की क्षमता, विचार स्थायित्व की भावना का अभाव था। वे मुगल अमीर, मनसबदार, जागीरदार तथा मुस्लिम-परस्त प्राधिकारियो के आर्थिक शोषण व दमन, धार्मिक अत्याचार के शिकार थे। डा० यदुनाथ सरकार के शब्दो मे, "अठारहवी शताब्दी के मध्य तक जाट राष्ट्र की सगठित राजनैतिक इकाई नही थी। अब तक अन्य देहाती जमीदार या सरदारो (ठाकुर फौजदार तथा चौधरी)[२] मे कोई भी जाट राजा का पद प्राप्त नही कर सका था। केवल एक लुटेरा (क्रांतिकारी) सरदार साहसी प्रधान मुखिया अवश्य था, जिसने अपनी उदात्त प्रतिभा, चारित्रिक गुणो से जाट समाज के विभिन्न डूगो व पालो के साहसी, क्रांतिकारी युवको व लड़ाकू सरदारो को अपने झण्डे के नीचे लाकर खड़ा कर दिया था, परन्तु यह कौमी सगठन केवल साहस प्रदर्शित करके शाही अमीरों (मन्त्रियो) तथा शाही परगनों को लूट मे हिस्सेदार था"[३] तत्कालीन अखबारातो से स्पष्ट ज्ञात होता है कि शाही लुटेरा जाट जमीदार तथा उनके सरदारो को आश्रय देने में भ्रष्ट, धन-लोलुप तथा लालची मुगल अमीर, सूबेदार, मनसबदार, प्रान्तीय दीवान, आमिल, फौजदार आदि अधिकारियो का हार्दिक सहयोग तथा समर्थन प्राप्त था। यदाकदा एक स्वार्थी अधिकारी अन्य को नीचा दिखलाने, एक दूसरे की कार्यक्षमता तथा कार्यकुशलता को बदनाम करने के लिए जाट धारो को हथियार भी उपलब्ध कराने में नही चूकता था। भ्रष्ट-कर्मचारी भी सरकार (जिला) तथा परगना, खालसा व जागीर परगनो की लूट मे

---

१ – पे० द०, जि० २०, लेख. १२४,१४४, जि० २७, लेख ७१, सिंदेशाही, जि० १, लेख १०१; चन्द्र चूड, जि० १, लेख, १६४, वंश भास्कर, पृ० २८८६, २९१९; अर्जदास्त।

२ – डॉ० मथुरा लाल शर्मा ने सर यदुनाथ सरकार कृत 'फॉल ऑफ दि मुगल एम्पायर' का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया है। इसमें जाट सरदारों को "पटेल" लिखा है, जो ठीक नहीं है। पूर्व राजस्थान मे जाटों को ठाकुर, फौजदार तथा चौधरी कहा जाता है, जबकि गूजर मीणा सरगनो को 'पटेल' कहा जाता है। ये सभी मुगल काल के वैधानिक पद थे और प्रशासनिक, सामाजिक कर्तव्यों के बोधक हैं।

३ – सरकार (मुगल), खड २, पृ० २८७।

सह-साझीदार थे। इस प्रकार मुगल सम्राट् तथा केन्द्रीय मंत्रियो की अकर्मण्यता, स्वार्थपरक उदारता तथा उपेक्षा, व्यक्तिगत दलगत स्वार्थपरता तथा दलगत संघर्ष की आड में अन्यान्य जाट डूग तथा पाल संगठन "लूट तथा हिस्सेदारी" के नियमन के साथ ही राजनैतिक प्रगति की ओर अग्रसर होने लगा था। थून गढ़ी के पतन (१७२२ ई०) के बाद ठाकुर मोहकमसिंह के पक्षपातियो को अपने वतन देहात, जमींदारी तथा खुदकाश्त पट्टियों मे लौटना पडा और परिस्थितियो से बाध्य होकर अपनी तलवार तथा बन्दूकों को हल तथा कुदाल मे बदलना पड़ा था। फिर भी जाट जमींदार मजदूर किसानो ने काश्तकारी तथा औद्योगिक विकास को महत्व देकर अपनी जमीदारी पट्टियो को बढाने मे सफलता प्राप्त कर ली थी।

अठारहवी शताब्दी के अति महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काव्य ग्रन्थ 'सुजान चरित' में हमको अन्यान्य जाट डूग तथा पाल गोत्र, सहयोगी योद्धा तथा प्रशासनिक जातियो, वर्ण तथा वर्गों की सामाजिक व्यवस्था अर्थ-सम्पन्नता, धर्म तथा संस्कृति का विस्तृत विवरण मिलता है। डूग कबीलो के अलावा 'तवारीख भरतपुर'[1] मे येवटिया, नाहरवार, सोहरोत, पोनिया, डागुर, भैनवार, बभेरा, सिकरवार, देशवार, माहौरी, भगोहर, इदौलिया, ठेनुआ, गधीया आदि पाल संगठनो का उल्लेख किया गया है। प्रायः इन सभी डूग व पाल संगठनो की स्वावलम्बी इकाइया और सुदृढ गढिया थी। 'लूट तथा हिस्सेदारी' के आधार पर संगठित जाट समाज मे वास्तव म सहयोगी सामाजिक एकता, राजनैतिक विचारो का अभाव था। प्रत्येक जाट प्रधान ग्राम तथा उसका जमीदार, क्षेत्रीय जमीदार फौजदार तथा चौधरी थोक या पट्टी का मुखिया अन्य डूग-पाल सरदार अन्य कौमी मजलिस' के सरदार को अपने से वरिष्ठ, श्रेष्ठ या प्रभावशाली नही मानता था। उनमे 'मूठ से मूठ' बडी न होने की स्वाभाविक समाजगत परम्परा विद्यमान थी। फिर भी क्षेत्रीय डूग व पाल 'कौमी पचायत' की कडी म जकड़े हुए थे और पचायती व्यवस्था, समाजगत आचार सहिता का पालन करने के लिये वचनबद्ध थे। इस प्रकार इनकी पचायती या व्यवस्थापक इकाईया इतनी अधिक थी कि उनको 'शिष्ट समाज' का गण राज्य नहीं कहा जा सकता है। बहुसख्यक या अगणित क्षेत्रीय इकाईयो म विभाजित होने से इनको 'सामन्ती राज्य' की परिभाषा म भी नही आका जा सकता है क्योकि जाट बाहुल्य देहात या आबादी क्षेत्र छोटे-छोटे विकसित स्वतन्त्र 'जनतन्त्र' थे। इन जनतन्त्रों के मुखिया अपने कबीलो या समूहों के साथ केवल साहस प्रदर्शित करके 'लूट के आकषण' से आपस में समय पर अवश्य मिल जात थे। इससे ये कौमी संगठन राजनैतिक या सामाजिक प्रभुत्व का कारण न होकर मात्र समान हिस्सेदारी या साझेदारी[2]

---

१ – बलदेवसिंह (पाण्डु०), पृ० ३३।

२ – सरकार (मुगल) खड २, पृ० २८८।

प्रारम्भिक जीवन की घटना, शिक्षा, किशोर व युवावस्था के कार्यकलापो का ब्यौरा नही लिखा है। बाल्यकाल तथा किशोरावस्था मे देहातीजन, बिरादरी के लोग ठाकुर बदनसिंह को दुलार के साथ क्षेत्रीय भाषा मे प्राय. बदना[1] कहते थे। हरसुखराय तथा जॉन कोहन का मत है कि देहान्त (जून ७, १७५६ ई०) से अनेक वर्ष पूर्व उसकी (बदनसिंह) नेत्र-ज्योति धुंधली और स्मृति क्षीण हो गई थी।[2] कुसुम सरोवर (गोवर्द्धन) मे अद्यतः प्राप्त एक भित्ति चित्र से ज्ञात होता है कि वृद्धावस्था मे उसकी मूंछ तथा केश श्वेत हो गए थे। अतः इन आधारो से यह सहज अनुमान उचित ही होगा कि बदनसिंह का जन्म १६८५ ई० के आसपास हुआ होगा।[3] इस प्रकार अपने पिता (दाऊजी) भावसिंह की मृत्यु (१७०२ ई०) के समय बदनसिंह की आयु सत्रह वर्ष के आसपास रही होगी। तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था मे यह भी अनुमान लगाया जा सकता है कि बाल्यकाल मे मौजा सिनसिनी मे ही उसका पालन-पोषण हुआ था और वहीं तत्कालीन सामाजिक लोक-परम्परा, रीति व्यवहार के अनुसार ही किसी पण्डित की पाठशाला मे हिन्दी (लोकभाषा कांठेडी, ब्रज या मेवाती) भाषा, सामान्य गणित तथा धार्मिक शिक्षा ग्रहण की थी। यत्र तत्र अद्यत सुरक्षित अनेक स्फुट कवित्तो से आभास होता है कि उसकी हिन्दी भाषा, साहित्य तथा काव्य मे अभीष्ट अभिरुचि थी। किशोरावस्था मे गजल, रसिया, जिकरी, भजन, गीत, होरी सुनने, कठाग्र करने या गायन वादन का स्वाभाविक मोह था और युवाकाल मे उसने अनेक अखाडो मे काव्य पाठ किया था। उसकी काव्यगत भाषा अति परमार्जित, सरल तथा कलात्मक थी। इन कवित्तो में कविता-कामिनी के अग पर अलकार भार रूप न होकर स्वाभाविक शोभावर्द्धक दिखलाई पडते हैं। ब्रज भाषा का माधुर्य रीति-

---

१ – रुस्तम अली (फा०), पृ० ४६५, ४२८, ई० डा०, खण्ड ८, पृ० ५३।

२ – इ० डा० (हरसुख राय कृत मजमाउल अखबार) खण्ड ८, पृ० ३६२, जॉन कोहन, पृ० २०, अ, सरकार (मुगल) खण्ड २, पृ० ३६२।

३ – फादर वेण्डल, मजमाउल अखबार, जॉन कोहन, कुसुम सरोवर तथा अन्य भित्ति-चित्रो से ठाकुर बदनसिंह की आयु तथा वृद्धावस्था का सहज अनुमान लगाया जा सकता है। अनुमानत उसका प्राणान्त ७० वर्ष की आयु या इसके आसपास हुआ होगा। प्राय यह देखा भी जाता कि वीर, साहसी, भद्र तथा कुशल राजनयिकों का देहान्त ७० वर्ष की उम्र तक हो जाता था। आसफजहाँ निजाम-उल्मुल्क का ६७ सौर वर्ष [इर्विन, भाग १, पृ० २७०] मे, खान दौरान का ६८ सौर वर्ष की उम्र [रुस्तम अली, पृ० ५६६, सहादत-ये-फर्रुखसियर, पृ० १०६] में देहान्त हो गया था। फलतः घटना चक्र से यह अनुमान उचित ही होगा कि बदनसिंह का जन्म १६८५ ई० के आसपास हुआ होगा। फिर उत्तराधिकारी राजा सूरजमल का जन्म १७०७-८ ई० मे हुआ था। इससे पूर्व बदनसिंह के चार पुत्र हो चुके थे। सन्तानोत्पत्ति युवावस्था मे ही सम्भव है।

कालीन कवियो से किसी भी प्रकार कम नही है ।[१] काव्य मे नामोल्लेख की एक निश्चित परम्परा के अनुसार बदनसिंह स्वय अपनी रचनाओ में 'बदन या बदन कवि' लिखता था ।

१६८६-६० ई० में मुगल-कछवाहा साम्राज्यवादी सेनाओ ने सिनसिनी पर आक्रमण कर दिया था। सम्भवत इस आक्रमण के समय भावसिंह ने बदनसिंह को सपरिवार अपनी ससुराल ग्राम सोगर की गढो मे भेज दिया था। लेकिन मई, १६६१ ई० में सोगर गढी पर साम्राज्यवादियो के आक्रमण के कारण इस परिवार को बलात् बयाना की सुरक्षित पहाडियो मे जाकर शरण लेनी पडी थी। सुस्थिर शान्ति के बाद १६६५ ई० में यह परिवार पुन सिनसिनी वापिस लौट आया। १७०२ ई० मे मुगलो ने सिनसिनी पर पुन आक्रमण किया। फलत बदनसिंह को पुन अपनी जन्म भूमि छोडकर कुछ समय के लिए अन्यत्र जाना पडा था। सम्भवत: इस बार उसने अपने चाचा ठाकुर अतिराम के यहाँ ग्राम हलैना में शरण ली थी। बाद म यह परिवार अन्य योद्धा परिवारो सहित कज्जकाना जाट धारो के सरक्षण मे बयाना की पहाडियो में चला गया और आगामी पाच वर्ष बयाना के दक्षिण पूर्व म ८ कि० मी० पहाडी की उपत्यका में निर्मित बदनगढी में व्यतीत किये।[२]

बदनसिंह के जन्मजात सौम्य स्वभाव, निश्छलता, साधारण रहन सहन, किशोरावस्था के सकटों का अनुभव, शान्ति प्रयासों के साथ राजनैतिक घटनाओं पर अकुश रखने, कपट नीति की अपेक्षा सहयोगी वातावरण बनाने तथा मित्रो के साथ

---

१ – मिश्र बन्धु विनोद, कवि परिचय, सख्या ६४२, स्वर्ण जयन्ती ग्रन्थ, कवि कुसुमाजलि खण्ड २, पृ० २०–२१।

— बदनसिंह के ज्येष्ठ भ्राता रूपसिंह मे मातृ भाषा काठेडी ब्रज के अलावा फारसी तथा सस्कृत भाषा का व्यवहारिक ज्ञान तथा योग्यता थी।

२ – विस्तृत अध्ययन के लिए द्रष्टव्य, जाटों का नवीन इतिहास, अ० ६ पृ० १२८-१४३, १४७-१५२, अ० ७, पृ० १८४-६, लेखक कृत 'बदनसिंह द फाउण्डर ऑफ द भरतपुर स्टेट, रा० हि० रि० ज० वष २, अङ्क २, अप्रेल-जून, १६६७ ई०, पृ० २७-३२।

—ठाकुर गगासिंह का अनुमान है कि बदनसिंह का जन्म बदनगढ़ी मे हुआ था और इसका नाम बदनगढ़ी कहलाने लगा था। यह घटना १६८०-८२ की मानी गई है (यदुवश, पृ० ४७)। लेखक ने किसी प्रमाण का उल्लेख नहीं किया है। अत यह स्वीकार करना अभीष्ट होगा कि ठाकुर पद उपार्जित करने के बाद ही गढ़ी बाम्रना – बयाना मार्ग पर स्थित गढी का नाम (बदनगढ़ी) रखा गया था। बदनसिंह ने सहमण डूगरी (जयपुर) पर भी बदनगढ़ी का निर्माण कराया था। ये गढ़ियां क्षत–विक्षत स्थिति में अभी तक मौजूद हैं।

स्थाई नम्र भाव प्रगट करने की क्षमता आदि सद्गुणा के साक्ष्य मे इतिहासकार प्राय एक मत[१] हैं। सुपुष्ट शरीर, भारी भरकम दमकता चेहरा, निडर वीरता, स्वीय कृपाजनो के प्रति कृतज्ञ भाव प्रकृतजन्य वरदान थ। युवाकाल म नाना सकट, विपत्तियो को सहन करने के कारण साहस, आत्म विश्वास निश्चल धैर्य, राजनैतिक तथा अर्थ सतुलन की क्षमता पर्याप्त रूप म विकसित हो चुकी थी। अपने चाचा राव चूडामन की भाति बदनसिह का विश्वास दीर्घकालिक अनिश्चित कज्जकाना सघर्ष, नियमित लूटमार तथा साम्राज्य के सम्पन्न मन्त्री, उमरावो के साथ अलाभकारी टकराव मे नही था। पुन इस समय की माग, आवश्यकता तथा परिस्थितियो के अनुरूप परिवार, बिरादरी, समाज तथा आत्म रक्षा के लिये शारीरिक पुष्टता, सैनिक प्रशिक्षण, कूटनयिक दावपेचा की शिक्षा अनिवार्य थी और उसने सामाजिक परम्परा व व्यवस्था के अन्तर्गत ही अपने शरीर को अखाडे म पुष्ट किया था। कज्जकाना युद्ध का नियमित प्रशिक्षण प्राप्त कर लिया था। अपने विशिष्ट गुणो के कारण ही राव चूडामन के प्राणा त (१७२१ ई०) के बाद जाट जमीदार अन्यान्य सवहारा मजदूर किसानो का नेतृत्व प्राप्त करके अठारहवी शताब्दी के तृतीय दशक में सिनसिनवार डूग की निर्वाचित सरदारी ग्रहण कर ली थी और अपने महान परिश्रम, त्याग, चातुर्य्य तथा निश्चल कूटनयिक प्रयासो से आधुनिक पूर्वी राजस्थान, पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा दक्षिणी हरियाणा प्रान्त के जमीदारो सर्वहारा वग, मजदूर किसानो, बहुसख्य जाट समुदाय को एक राजनैतिक इकाई मे सगठित करने म सफलता प्राप्त कर ली थी। एक सम्पन्न सबल जाट राज्य की स्थापना करके जाट–राष्ट्र तथा कृषक समाज को मुगलो के दमन, कोप से बचाकर हिन्दू सस्कृति तथा मानवता की हार्दिक सेवा की थी।

४ – व्यक्तित्व का विकास १७०७ – १६ ई०

ठाकुर भावसिह की वीर गति (१७०२ ई०) क बाद उसके सुयोग्य पुत्रो, (१) रूपसिह तथा (२) बदनसिह ने अपने चाचा राव चूडामन के सरक्षण मे पैतृक जमीदारी मौजा सिनसिनी तथा डीग का प्रबन्ध सभाल कर पर्याप्त अनुभव प्राप्त कर लिया था। तत्कालीन सामाजिक परम्पराओ के अनुसार लगभग दस बारह वर्ष की आयु मे ही बदनसिह का विवाह हो चुका था। उसने युवाकाल मे कॉमर[२] के

---

१ – द्रष्टव्य – लेखक कृत 'जाट मुगल सघर्ष', राजस्थान का मध्यकालीन इतिहास, पृ० २३३–४, कानूनगो, पृ० ६० तथा सरकार (मुगल), भाग २, पृ० २६।

२ – मथुरा के उत्तर पश्चिम में ५३ कि०मी०, कोसी के द०पू० मे १० कि०मी० तथा नदगांव के उत्तर में ११ कि०मी०।

—आधुनिक काल मे कॉमर तहसील छाता जिला मथुरा (उ०प्र०) मे एक

प्रभावशाली, अति साधन सम्पन्न जमींदार चौधरी अखैराम भैनवार की सुपुत्री देवकी के साथ विवाह किया। पुन उसने चौधरी अखैराम की द्वितीय पुत्री सहोदरा, कठूमर के चौधरी पतराम की पुत्री सहजो आगरा के चौधरी रामा की पुत्री जसोदा, चौधरी हिरदैराम रीजवार की पुत्री सतइरा, फिर उसकी बहिन मायाकौर और सम्भवत १७१४ ई० में सहार[1] के चौधरी जिरधाराम भदैग्न की पुत्री भज्जो को अपने महलो म रख लिया था।[2] इस प्रकार प्रारभ म बदनसिह न सैनिक प्रयासा की अपक्षा 'सामन्तवादी' दाम्पत्य सूत्र बन्धन नीति को अपना कर स्व शक्ति तथा पारिवारिक

कस्बा है। जाट शासनकाल मे यह कस्बा अति सम्पन्न व समृद्ध था और व्यापारिक मण्डी का केन्द्र था। यहा पर अभी तक एक विशाल पक्का बाग है, जहा भैनवार पाल के वशजा की छतरिया बनी हैं। दुर्वासा नामक जलाशय है, जहा राजा सूरजमल ने श्री मदन मोहन जी मन्दिर का निर्माण कराया। (गजे० आगरा व अवध खण्ड ८, पृ० २६७-८)।

१ – मथुरा के पूर्व मे ३४ कि० मी०, डीग के उत्तर-पश्चिम मे २२ कि० मी० तथा बरसाना के पूर्व म ११ कि०मी०।

—अकबर शासनकाल मे सहार सूबा अकबराबाद का एक जिला (सरकार) था। इसमें परगना पहाडी, बघोली, सहार कामा, कस्बा खोह मुजाहिद नौनेरा तथा होडल शामिल था। इस जिले मे ७, ६३, ४७४ बीघा भूमि शामिल थी। इसका भू-राजस्व १,४७,६३६ रुपया वार्षिक था और २,७२६ रुपया की पुण्यय जागीर शामिल थी। सहार के जमींदारों के पास २६५ सवार तथा १००० पैदल रहते थे और यहां एक पुख्ता गढ़ी थी। (आइन०, खण्ड २ पृ० २०६)।

—औरगजेब शासनकाल मे परगना सहार (१)टप्पा हवेली, (२)टप्पा हाथीया, (३) टप्पा जटात, (४) टप्पा तरोली, (५) टप्पा जसावत, (६) टप्पा कछाग, (७) टप्पा महता (८) टप्पा सेरान और (९) टप्पा शेरगढ मे विभाजित था। इस परगने मे २०६ गांव शामिल थे। जमा २ ३४ ०१४ रुपया वार्षिक थी (दस्तूर-उल-अमल परगना सहार १६८९, १६९०, १६९२ ई०)।

—कस्बा सहार गोवर्द्धन-छाता राजपथ मे जुडा हुआ है। इस कस्बे मे जाट ब्राह्मणों की जमींदारियां हैं। जाट शासनकाल मे सहार एक अति अर्थ सम्पन्न जिला था। राव बदनसिंह ने यहा पर अपना निवास स्थान बनवाया। विशाल पुख्ता महल के खण्डहर अभी तक मौजूद हैं। एक पक्का विशाल जलाशय भी है।

२ – पोथी जागा खेडिया।

प्रभाव का धीरे-धीरे विस्तार किया और डूंग पाल जाट संगठन को मजबूत बनाने मे भी सफलता प्राप्त कर ली थी।

अभी तक हमको अखबारातो तथा वाक्या-पत्रो (१७१५-१६ ई०) मे रूपसिंह तथा बदनसिंह का अति सूक्ष्म विवरण मिल सका है। स्पष्टतः काठेड प्रदेश मे राव चूडामन की शक्ति तथा जाट एकता का मूलाधार बन्धु-बान्धव, परिवारजन तथा कौमी मजलिस के प्रमुख जाट जमीदार कबीले थे। ठाकुर रूपसिंह ने डीग (परगना अऊ) मे, विजैराम तुलाराम तथा रणजीत अवारिया ने ग्राम डहरा (परगना हेलक) मे, ठाकुर अतिराम ने ग्राम हलैना-पथैना (परगना भुसावर)[1] मे, ठाकुर गजसिंह तथा बुधसिंह ने ग्राम गारु (परगना सोंखर-सोखरी)[2] मे भव्य व शालीन महल, विशाल बाग तथा कच्ची गढ़ियो का निर्माण करा लिया था और ये सभी बन्धु-बान्धव जाट बाहुल्य क्षेत्र काठेड के प्रबन्ध मे सह-साझीदार थे। फर्रुखसियर शासनकाल मे ये लोग इजारा पर प्राप्त परगनो के गावो तथा राहदारी सीमाओ के आस-पास निर्बल शाही मनसबदारो, जागीरदारो की मनसब तथा वेतन जागीरो मे खुलकर हस्तक्षेप करने लगे थे और इन जागीरो का प्रबन्ध स्वय इजारे पर प्राप्त करने में प्रयत्नशील थे। वाक्या-पत्रो से स्पष्ट पता चलता है कि सिनसिनवार जाट जमीदार अधिकाश ग्रामो के क्षेत्रीय जाट-राजपूत जमीदारो के प्रबन्ध मे शामिल गावो के प्रतिभू (जामिन) थे। इस प्रकार रैय्यतबारी ग्रामों मे भी इन जाट जमीदारो का पूर्ण हस्तक्षेप था।

जटवाडा (जाट मुल्क) मे चूडामन के नियमित लडाकू सैनिको के अलावा जमींदारो की अति बलशाली अस्थाई जमातें (धारें) थी और प्रारम्भ में शाही मनसबदार व जमीदार आवश्यकता पडने पर अपनी मनसब जागीरो से राजस्व वसूल करने मे इनकी सेवायें प्राप्त करते थे। क्रमश जोर तलब जमीदारो ने इन मनसब जागीरो पर अपना प्रभाव जमा लिया था और प्रतिभू बनकर दखल करना शुरू कर दिया था।[3] अखबारातो से ज्ञात होता है कि अक्टूबर, १७१५ ई० में मौजा सहार के

---

१ – फर्रुखसियर शासनकाल मे परगना भुसावर के जाट प्रधान ३४ गांव हलैना-पथैना जागीर मे शामिल थे तथा सात गांवों पर जाट व गूजरों का अधिकार था। इनके अलावा लगभग बीस गांवों पर ठाकुर अतिराम का प्रभाव था और वह इन गावों से भू-राजस्व तथा अन्य अधिशुल्क वसूल करता था। (अठसता, परगना भुसावर, १७१६ ई०।

२ – फर्रुखसियर शासनकाल मे परगना सोंखर-सोंखरी के इक्कीस गांव गढ़ी गारू मे शामिल थे। बारह गांवों में देसवार जाट डूंग की आबादी थी। (अठसता, परगना सोंखर-सोंखरी)।

३ – बाल मुकुन्दनामा, पत्र स० २६, पृ० १०२।

प्रभावशाली जाट जमीदार विजैसिंह ने जब सिनसिनवार जाट सरदारो की सलाह स्वीकार नही की, तब ठाकुर रूपसिंह ने उस पर अचानक आक्रमण कर दिया और सपरिवार बन्दी बना लिया। फिर रूपसिंह ने टप्पा सहार के रैय्यती मौजो के पटेलों को मुस्लिम जागीरदारो व मनसबदारो के गुमास्तो (कारिन्दाओ) के लिए निर्धारित जमा, कर या अधिशुल्क (अबवा), नजराना भुगतान न करने तथा दाना-घास एकत्रित करने में रोड़ा अटकाने की प्रभावी सलाह दी थी।[1] इस प्रकार समकालीन वाक्या-पत्रों से ज्ञात होता है कि ठाकुर रूपसिंह ने राव चूडामन की सह-साझेदारी में परगना सहार के अनेक गाव व टप्पो का इजारापट्टा प्राप्त कर लिया था। साथ ही अनेक रैय्यती जमीदारों का प्रतिभू था। १७१५ ई० में राव चूडामन ने ग्राम बावोली, जिला अलवर में मजबूत गढ़ी का निर्माण करा कर थाना स्थापित कर लिया था और आंचलिक व्यवस्था शांति सुरक्षा के लिए अपने सगे सम्बन्धियो को तैनात कर दिया था।[2] नवाब वजीर कुतुबउलमुल्क तथा उसके दीवान राजा रतन चन्द की ब्रज मण्डल के सभी जाट जमीदारो पर विशिष्ट अनुकम्पा थी और उत्तर भारत मे ब्रज तथा हरियाणा मे आबाद जाट जन शक्ति उनके राजनैतिक उत्कर्ष, जीवन-मरण सघर्ष मे सशक्त सहायक के रूप में राजनैतिक क्षितिज पर उभरने लगी थी। राज्यारोहण के कुछ वर्ष बाद से ही सम्राट् फर्रुखसियर ने सैय्यद बन्धुओ के तानाशाही पजो से मुक्त होने के लिए जिस एक षड्यन्त्रकारी व सबल विपक्षी घटक का गठन करने का प्रयास किया। वह सदैव अपनी इस कुटिल नीति मे विफल रहा। सितम्बर १८, १६१५ ई० को सम्राट् फर्रुखसियर ने नायब मीर बख्शी खानदौरान के गोपनीय परामर्श पर जाट जन शक्ति को कुचल कर नवाब वजीर कुतुबउलमुल्क की सैनिक शक्ति को अपरोक्ष रूप से कमजोर बनाने के लिए जाटो के वशानुगत शत्रु महाराजा जयसिंह कछवाहा को शीघ्र ही मालवा प्रान्त से दिल्ली आने के लिए फरमान[3] भेजा था। सम्राट् ने जयसिंह कछवाहा की सेवाओ को पुरस्कृत करने के लिए ही दिसम्बर १, १७१५ ई० को वृन्दावन मे १,०१,८५० रुपयो की जागीर और ३ दिसम्बर को परगना सोहरी मे मुहम्मद खा की ४,६२,७४० रुपया की जागीर उसके नाम कर दी थी।[4] इसी समय उसने जयसिंह को निर्देश दिया कि मथुरा जिले मे जाट मेवातियो के साथ मिलकर उपद्रव कर रहे हैं। अतः इन उत्पातियो को दबाने के लिए दीवान रामचन्द को पूर्ण साज-सज्जा के साथ

---

१ – अ० अल०, २६ अक्टूबर तथा १२ नवम्बर, १७१५ ई०।

२ – सतुत मह०, स० ३४१/३३१, अक्टूबर ११, १७१५ ई०।

३ – फरमान, सितम्बर १८, १७१५, वकील रिपोर्ट (राअ०), सं० २८२/२५१, सितम्बर ८, १७१५, मिर्जा मुह०, पृ० ६५ व०।

४ – कपड़ द्वारा, स० ५८/१२८, ६०/१३६।

परगना खोहरी म नियुक्त करक रवाना किया जावे।[1] मार्च, १७१६ ई० मे जयसिंह मालवा स ग्रामेर पहुँच गया था। आगामी छ महीना म उभय पक्षो— नवाब वजीर कुतुबउलमुल्क तथा नायब मीर बख्शी खानदौरान क माध्यम स सम्राट न सवाई जयसिंह को अपनी-अपनी अनुकम्पा स लाभान्वित करके अपन पक्ष म शामिल करन का प्रयास किया किन्तु शाही दरबार म पदासीन वकील जगराम की सलाह का स्वीकार करके जयसिंह न सम्राट का पक्ष स्वीकार करना हितकर समझा। मई के अन्त मे जयसिंह कछवाहा सैनिको के साथ आमेर से दिल्ली पहुँचा और २८ मई को नायब मीर बख्शी खान दौरान के माध्यम स शाही दरबार म जाकर उपस्थित हो गया। ६ जून को उसकी सवाग्रो को पुरस्कृत करन क लिए सम्राट ने उसक मनसब मे एक हजार जात। एक हजार सवार की वृद्धि की और राजाधिराज का खिताब, एक हाथी, एक घोडा छ थाना की खिलग्रत (सरोपाव) एक सरपेच, एक कटारी मुरसाकारी व कवरी प्रदान की। इसी समय उसको स शस्त्र अग रक्षकों क साथ दीवान-ग्राम म उपस्थित होन की आज्ञा प्रदान कर दी गई थी।[2]

थन गढी पर प्रथम आक्रमण १७१६–१८ ई०

सम्राट फर्रुखसियर की 'जाटो क दमन की हार्दिक अभिलाषा' का देख कर अपने पूर्वजों के कलक को मिटान, ब्रज मण्डल मे स्थाई जागीर प्राप्त करन मुगल साम्राज्य म अपने राजनैतिक अस्तित्व तथा हित सम्वर्द्धन की महत्वाकाक्षा स काठेड़ प्रदेश क स्वाधीनता प्रिय जाटो की कौमी एकता को कुचलने क लिए जयसिंह ने अपनी सैनिक सेवाए प्रस्तुत की। सितम्बर २० १७१६ ई० को मथुरा (इस्लामाबाद) की फौजदारी खानदौरान से कुवर शिव सिंह के नाम और फरीदाबाद से आगरा तक की राहदारी के अधिकार राव चूडामन से जयसिंह क नाम रवाना करित[3] कर दिये गए थे। सुव्यवस्थित युद्ध-सचालन तथा जाट दमन की फौजो व्यवस्था क लिए इसी समय २६ सितम्बर (१० शव्वाल) को दयारामसिंह खगारोत तथा खानदौरान क स्थान

---

१ – वकील रिपोर्ट (राज०) स० २७६/१४६ जून ११, १७१५ सलावत खा का पत्र।

२ – उपरोक्त, स० २७६/२४६ २८०/२५१ (जून ११, १७१५) राजा रतन चद का पत्र तथा वजीर का हस्व-उल-हुक्म मार्च २२, १७१६, फरमान (कपड़ द्वारा), स० १४/४०, ७७/१०६ मार्च २२, १७१६ (२६ रबीउलअव्वल)।

३ – महाराणा सग्रामसिंह के नाम जयसिंह का ड्राफ्ट खरीता जून ७ १७१६, ल० सह०, ३४४/३३४, १४ जून, शिवदास पृ० १६, अखबा०, जुलाई २, १७१६ (रजब १३, हि० ११२८)।

४ – हस्व-उल-हुक्म स० ७५/२५७, परवाना, स० ७६/२७० (कपड़ द्वारा)।

पर कुंवर शिवसिंह के लिए परगना हिण्डौन, बयाना की फौजदारी, ३ अक्टूबर को परगना हिण्डौन मे आकिलउद्दीन खा की ३३२५ रुपया (१,३३,००० दाम) की जागीर तथा कठूमर, खोह मुजाहिद, सौंखर सौंखरी आदि परगनो की राजस्व व प्रशासनिक व्यवस्था महाराजा जयसिंह के लिए सौंप दी गई थी। इसके साथ ही ५ अक्टूबर (१६ शव्वाल) को आगरा प्रान्त मे राव चूडामन, ठाकुर रूपसिंह, अनन्तराम आदि जाट जमीदारो तथा नरूका जागीरदारो के द्वारा जबरन अधिकृत गाव भी जयसिंह के नाम स्थानान्त रत कर दिये गये। ३१ अक्टूबर को परगना कठूमर में ६०,००० रुपया (२४ लाख दाम) की वेतन जागीर दी गई। १३ नवम्बर को परगना टोडाभीम की फौजदारी भी जयसिंह को प्रदान करने की अधि–सूचना प्रसारित कर दा गई।[1] काठेड जनपद की व्यवस्था के बारे मे एक फरमान मे जयसिंह को निदेशित किया गया—

"………आज्ञा व्यक्त की जाती है कि आप विद्रोह को कुचल कर, विप्लवियो की गढ़ियों को बरवाद करके शाही राजस्व की वसूली करेंगे। आपके फौजदारी प्रबन्ध के परगनो में लुहार तोप, बन्दूक व अन्य हथियार बनाना बन्द कर देंगे। प्रत्येक महाल मे एक–एक थाना स्थापित कर दिया जावेगा और शराब पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया जावेगा। निर्धन व कमजोर रैय्यत को नही सताया जावेगा और न उनको बन्दी बनाने का ही प्रयास किया जावेगा। विद्रोहियो के कब्जे से प्राप्त लूट का माल व सामान शाही खजाने मे जमा करा दिया जावगा। चोरी करने वाले तथा डकैती डालने वालो से सख्ती से निपटा जावे। उनसे चोरी–डकैतो का माल बरामद कर लिया जावे अथवा उपद्रवग्रस्त गावो के चौधरी, कानूनगो व जमीदारो से क्षति–पूर्ति कर ली जावे।"[2] फलतः अक्तूबर मे कछवाहा नरेश ने परगना मुसावर, कठूमर, हिण्डौन, सौखर-सौंखरी, पहाडी आदि मे अपने थाने स्थापित करके तथा विश्वासी फौजदार, आमिल, कोतवाल आदि अधिकारी तैनात करके प्रबन्ध सभाल लिया था।

काठेड जनपद की सीमान्त व्यवस्था

अनुमानत. चालीस सहस्र बन्दूकची सवार व इनसे भी अधिक पैदल सैनिको की विशाल सेना व तोपखाना के साथ जयसिंह ने दशहरा (२५ सितम्बर, ६ शव्वाल)

---

१ – फरमान (कपड़ द्वारा), सं० ७८/६४ (१० शव्वाल), सं०७६/८६ (१७ शव्वाल) स० ६४/७६ सितम्बर २६, १७१६ (१० शव्वाल), हस्ब-उल-हुक्म (कपड द्वारा), ५ अक्तूबर (१६ शव्वाल), परवाना (कपड द्वारा), सं०८५/१७५ (२६ जिकाद); अठसता, परगना कठूमर।

२ – फरमान (कपड द्वारा), ६४/७६, सितम्बर २६, १७१६।

के शुभ दिन जाट जन शक्ति के विरुद्ध कूच करने की परम्परागत औपचारिता पूर्ण की। अक्तूबर के प्रारम्भ मे जाट अभियान का सचालन करने के निर्देशो के साथ ही विधिवत विदाई के बाद उसने पलवल मे पडाव डाल कर महाराजा अजीतसिंह के लिए सूचना दी। "बादशाह के आदेशों से मैं जाटों के विरुद्ध मथुरा की ओर कूच कर रहा हू। मैंने खीवसी भण्डारी से अनेक मामलो पर विशद विचार-विमर्श किया है और वह आपको इस बारे मे अवगत करावेगा।"[१]

साम्राज्यवादी सेनापति तथा शाही फौजों को थून गढी से दूर सीमावर्ती इलाको मे ही फसाने, उनकी रसद व्यवस्था तथा रक्षा पक्तियो को अव्यवस्थित करने की रणनीति अपना कर राव चूडामन ने अपने अति साहसी व उत्साही पुत्रो – मोहकम सिंह, जुलकरन आदि, अपने भतीजों रूपसिंह, बदनसिंह तथा अन्यान्य बन्धु-बान्धवो की कमान मे दक्ष व प्रशिक्षित जाट टुकडियो को अपनी सीमाओ पर तैनात कर दिया था। जुलकरन ने देसवार पालो से मिलकर परगना सोसर-सौंखरी में, ठाकुर प्रतिराम तथा उसके पुत्र शार्दूल ने परगना भुमावर मे, बदनसिंह ने परगना सहार मे, रूपसिंह ने परगना डीग मे, हठीसिंह कुन्तल ने सौंख-अडीग मे अपने लडाकू सैनिक छितराकर मोर्चा लगा लिये थे। काठेड, मेवात तथा ब्रजमण्डल की स्वाधीनता प्रिय जनता सम्प्रदाय, जाति व वर्गगत भेदभावों को भुलाकर अपने लोकप्रिय नेता की कमान मे अपनी अर्थ-सम्पन्नता, अपनी जनवादी परम्परा के लिए एकजुट होकर साम्राज्यवादी सेनाओ का सामना करने के लिए पूर्णत सजग व सक्रिय हो गई थी। बदनसिंह ने मेवात के समीपवर्ती अनेक शाही मनसवदारो के व खालसा गावों में आतंक फैलाकर क्षेत्रीय ब्राह्मण, गुर्जर-मीणा, गौरया व कछावा राजपूतो, जाट तथा मेवाती जमीदारो के सहयोग से कामा सीमा से आगे सहार की ओर कूच कर दिया था।[२]

महाराजा जयसिंह ने होडल-पलवल शाह-राह की सुरक्षा-व्यवस्था पूर्ण करने के बाद पलवल छावनी से कूच करके १८ अक्तूबर (३ जिलकाद) को ग्राम सकरसी और २० अक्तूबर को ग्राम महराना (टप्पा जटात, परगना सहार) मे और राव जैतसिंह व दीवान ताराचन्द ने ग्राम घुसावली (परगना पहाडी) मे पडाव डाला। फिर २४ अक्तूबर को जयसिंह कामा पहुँच गया।[३] परगना खोहरी (मेवात)

---

१ – खरीता, कार्तिक वदि " स० १७७३ (१ अक्तूबर- १४ अक्तूबर १७१६ ई०), इसी प्रकार महाराणा संग्राम सिंह के नाम खरीता में सूचना दी गई थी। (खरीता, अक्तूबर १३, १७१६ ई०, कार्तिक वदि १४, स० १७७३)।

२ – थून अभियान के विस्तृत अध्ययन के लिये द्रष्टव्य – लेखक कृत 'जाटो का नवीन इतिहास' पृ० २४८ २७३।

३ – अखबारात (ज० रि०); अरठसता, परगना पहाडी, १७१६ ई०।

में राव चूडामन का प्रति विश्वासपात्र साथी फौजदार वाजीद खां खानजादा तैनात था, किन्तु शाही भक्ति भावना के प्रलोभन में फसकर वह जयसिंह से मिल गया।[1] पांच सौ मेवाती बन्दूकची सवार व पैदलों के साथ वाजीद खां ने अपनी वतन जागीर भुसावली से टप्पा जटात (सहार) की ओर कूच किया और २५ अक्तूबर को उसने जाटों पर अचानक आक्रमण कर दिया। उसका लक्ष्य बदनसिंह को कामां दुर्ग की ओर खदेड़ कर घेराबन्दी करने का था। किन्तु राजा जैतसिंह (कामा) ने बदनसिंह को कामा में घेरने की अपेक्षा थून पर आक्रमण करने पर बल दिया। बदनसिंह ने डीग की ओर हटकर फौजदार वाजीद खां को युद्ध के लिए ललकारा और वह पांच दिन तक खानजादा की छावनी का घेरा डालकर पड़ा रहा। अपनी रसद व छावनी को जाटों के आक्रमण व लूट से बचाने के प्रयास में वाजीद खां स्वयं एक झड़प में घायल हो गया। ३० अक्तूबर को जयसिंह कछवाहा ने अपनी छावनी से एक सहस्र राजपूत सवार व पांच सहस्र पैदलों की कुमुक भेजकर वाजीद खां को इस बरबादी से बचा लिया। इसमे बदनसिंह को बाध्य होकर पीछे डीग की ओर हटना पड़ा। एक नवम्बर को खानजादा अपने साज सामान तथा सैनिकों के साथ शाही छावनी मे पहुँच गया, जहां ७ नवम्बर को जयसिंह ने सरोपाव प्रदान करके उसके साहस की सराहना की।[2] इसी बीच में कतिपय कछवाहा सैनिकों ने थून की ओर कूच करने का प्रयास किया। ३१ अक्तूबर को केहरी सिंह जाट ने उनके प्रयासों को विफल कर दिया।[3]

राधाकुण्ड में अपनी छावनी डालकर जयसिंह ने नवम्बर, १७१६ ई० में सुनियोजित सैनिक परम्परा व युद्ध-नीति के आधार पर थून गढ़ी का तीन ओर से घेरा डालने के लिए अपनी टुकड़ियों को एक साथ आगे कूच करने के लिए तैनात किया। थून गढ़ी की बाहरी सुरक्षा व्यवस्था के लिए अधिकांश जाट प्रधान गांव कच्ची गढ़ियों से सुरक्षित थे और इनके आसपास सघन जंगल फैले हुए थे। एक नवम्बर को शाही दरबार से प्रसारित एक फरमान में कहा गया कि आपके पास आगरा के नायब राज्यपाल नुसरतयार खां को भेजा जा रहा है। आप थून गढ़ी का रेखांकित मानचित्र, थून घेरा की सैनिक व्यवस्था व युद्ध संचालन के लिए तैनात सेनानायकों के स्थानों की स्थिति चिह्नित करके दरबार में सम्राट के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए भेजें।[4] जयसिंह ने एक सैनिक टुकड़ी ग्राम पौंगा (परगना सहार) की गढ़ी को

१ – शिवदास, पृ० २०।

२ – अखबारात, १४, २७, ३० अक्तूबर, १, ७ नवम्बर, १७१६ ई०।

३ – अरठसता परगना पहाड़ी, १७१६ ई०।

४ – हस्य उल हुक्म, स० ५०/१६६, १ नवम्बर (१७ जिल्काद), अखबारात (वपड द्वारा), स० ८०/८७।

बरबाद करने के लिए रवाना की। दीवान रामचन्द ने ग्राम बहरोड़ पर धावा बोल दिया। यहा जाटो ने जमकर सघर्ष किया और रामचन्द को हताश होकर पीछे हटना पडा। लेखराज आमिल ने कोतल दलो के साथ ग्राम बहरावल की ओर कूच किया, जहा १५ नवम्बर को बदनसिंह ने अदम्य साहस व उत्साह से उसका सामना किया। लेखराज को भारी सैनिक क्षति उठाकर पीछे हटना पडा। इसी प्रकार मौजा सहजादपुर मे एक सहस्र जाट सवारो ने दीपसिंह को खदेड दिया।[1] १६ नवम्बर को दो सहस्र बन्दूकची सवारो के साथ रूपसिंह ने शत्रु के कोतल दलो पर सीधा आक्रमण किया। भयकर मुठभेड म दोनो ओर के सैकडो सैनिक खेत रहे। रूपसिंह का स कुटुम्बी भ्राता अनीराम (अनन्तराम ?) एक साहसिक मुठभेड मे काम आया और रूपसिंह स्वय घायल हो गया किन्तु वह सकुशल पीछे हटने मे सफल रहा। मोहकम सिंह ने थहज गढी पर साम्राज्यवादियो का जमकर मुकाबिला किया। भयकर मुठभेड के बाद उसको पीछे हटना पडा। २० नवम्बर को जयसिंह ने स्वयं योद्धा राजपूत सरदारो व राजपूत नरेशो के साथ थून की ओर प्रस्थान किया और २७ नवम्बर (१३ जिल्हिज) को थून गढी का घेरा प्रारम्भ किया। यह देखकर चूडामन ने अपने पुत्रो, भतीजो तथा योद्धा जमीदारो को पीछे हटाकर थून की सुरक्षा की ओर ध्यान दिया।[2]

परगना भुसावर मे सघर्ष

जयसिंह ने परगना भुसावर की भू राजस्व व्यवस्था के लिए साहू प्रतापसिंह तथा केसरी सिंह कासलीवाल को आमिल, राव बखतसिंह कल्याणोत को फौजदार, कायम खा को कोतवाल चबूतरा कस्बा भुसावर और साहू बखतराम को वाकया नवीस नियुक्त कर दिया था। दिसम्बर १७१६ ई० के प्रथम सप्ताह मे कछवाहा नरेश ने बयाना हिण्डौन मार्ग को खुला रखने के लिए कल्याणोत व राजावत राजपूतो को भुसावर के दुर्ग पर आक्रमण करने का निर्देश दिया। इस दुर्ग तथा जाट प्रधान गावो की रक्षा का भार ठाकुर अतिराम, सालवाहन (अनीराम का पुत्र), नन्दराम (महाराम का पुत्र) राजाराम, अर्जुनराम जाट जमीदारो, गूजर व पठान जागीरदारो पर था। इन सरदारो ने राजपूत सवारो का जमकर मुकाबला किया,

---

१ – अखबारात, १, १५ नवम्बर, १७१६ ई०।

२ – अखबारात, १६ नवम्बर (५ जिल्हज), दिसम्बर १, १७१६ई०, शिवदास पृ०२०, अठसता परगना पहाडी १७१६।

—३० नवम्बर को राजा इन्द्र सिंह ने अपने खरीता मे चूडामन के पुत्र के भागने तथा शाही छावनी मे चौबे की हरामखोरी व भगडे का ब्योरा भेजा था।

लेकिन भारी दबाव के कारण पीछे हटना पड़ा। शीघ्र ही १३ दिसम्बर को मोहकम सिंह तथा रूपसिंह ने जाट छापामारों के साथ भुसावर पहुँचकर राजपूतों पर प्रत्याक्रमण किया और रैय्यती लुटेरा धारों ने कल्याणोत व राजावतों के गावों मे प्रवेश करके भारी लूटमार व बरबादी की। अविलम्ब ही जयसिंह ने छापामार जाट धारों को भगाने के लिए नवीन सैनिक टुकडियां रवाना कर दी, किन्तु इनको सफलता नही मिल सकी।[१] सर्वत्र यह अफवाह फैलने लगी कि जोर तलब जाट रैय्यत कस्बा कठूमर पर आक्रमण करने वाली है। इससे १६ दिसम्बर को कस्बा कठूमर की सुरक्षा के लिए थाना तैनात कर दिया गया और वहां दो गाडी पातशाही रहकला व गोला बारूद भेजा गया। २० दिसम्बर को आमिल कठूमर ने जाट धारों की टोह लेने के लिये थून की ओर जासूस रवाना किये।[२] १८ दिसम्बर को महाराजा जयसिंह ने करौली के जादौं राजा अनदपाल के नाम रुक्का खास भेजकर लिखा—"आजकल सरकारी फौज बयाना की ओर तैनात है। आप स्वय अपनी जमीयत, सवार व बरकंदाजो के साथ कछवाहों व राजावतो की सहायता के लिए बयाना की ओर प्रस्थान करें। फौज व सरजाम का कुल खर्च सरकार वहन करेगी।"[३] फलतः कुंवर पाल जादौ ने स-सैन्य कूंच करके भुसावर दुर्ग का घेरा डाल दिया। भारी जमाव व दबाव पड़ने पर सुरक्षा समझौता के बाद अतिराम का किलेदार किले को खाली करके चला गया। २१ दिसम्बर को जयसिंह ने अपनी इस विजय का समाचार दिल्ली भेजा। वस्तुतः शाही सैनिको की कार्यवाही को अंकुशित करने के लिए ठाकुर अतिराम ने ग्राम झरसोली में नया मोर्चा लगा लिया था। तब राव हठीसिह कल्याणोत ने आगे कूच किया और उसने जाट टुकडियो को ग्राम सहजादपुर (निकट ग्राम सलेमपुर) खाली करने के लिए बाध्य कर दिया। क्रोधित होकर चूड़ामन के छापामार सैनिको ने राजपूतों को भुसावर मे घेर लिया। कवरपाल जादौं की मुक्ति के लिए जयसिह ने दीपसिह की कमान मे नवीन कुमुक भेजी। जाट रैय्यत ने भुसावर तथा खोखर-सोंखरी के राजपूत अधिकृत अनेक गावो मे भारी लूटमार, आगजनी करके बरबादी की। अन्त मे दीपसिह की नवीन कुमुक आ जाने पर छापामार जाट टुकडियां भुसावर से थून की ओर हट गईं।[४] किन्तु कछवाहा झरसोली को खाली करवाने में विफल रहे।

१—अखबारात, १६, २०, ३० दिसम्बर, १७१६ (५, ६, ६ मुहर्रम)।

२—अठसता, परगना कठूमर, १८१६।

३—ड्राफ्ट खरीता व परवाना, सं० १३८ (१/१३६), पौष सुदि ५, सं १७७३।

४—अखबारात, १६, २०, २३ दिसम्बर (५, ६, ६ मुहर्रम); वाक्या पत्र, मुहर्रम ७, हि० ११२६।

थून गढ़ी का घेरा

२२ दिसम्बर को जयसिंह ने दिल्ली से एक हजार मन बारूद तथा एक हजार मन गोला व सीसा भेजने का आग्रह पत्र भेजा। नायब सूबेदार नुसरतयार खां लम्बी मार करने वाली शाही तोप, गोला बारूद लेकर थून छावनी में आ गया। ५ जनवरी को महाराजा के लिए थून का नियमित घेरा डालने तथा शत्रु को जीवित या मृत शाही दरबार में प्रस्तुत करने का आदेश दिया गया। यह भी लिखा गया कि नुसरतयार खां शीघ्र गढ़ी का घेरा डालकर आपकी मदद करेगा।[1] २० जनवरी को दीवान रामचन्द ने गढ़ी जहाज की ओर कूच करके आक्रमण कर दिया। यह अफवाह फैल गई थी कि गढ़ी भदीरा तथा गाढ़ की रैय्यती थानों थाना वहूमर पर आक्रमण करने वाली हैं। इससे शामिल ने उधर लुगिया नवीस रवाना कर दिये थे। राव चूड़ामन थून गढ़ी से बाहर निकल कर अन्य गढ़ियों का प्रबन्ध निर्भीकता व निडरता से कर रहा था। इससे २४ जनवरी को जयसिंह के लिए सुझाव दिया गया कि चूड़ामन को गिरफ्तार करके स्वयं दरबार में समर्पण कराने या मारने से विजय मिल सकती है अथवा उसको आत्मसमर्पण के लिए बाध्य करने और दरबार में हाथ बांध कर उपस्थित करने से जाटों का दमन सम्भव हो सकेगा। इससे चूड़ामन के साथ आपसी समझौता की नीति अपना कर शाही चाकरी में उपस्थित होने का सफल दबाव डाला जावे। लेकिन जयसिंह ने समझौतावादी नीति को कायरता समझा। उसने जाटों को रणक्षेत्र में परास्त करके अपने पैरों के सामने झुकाने का दृढ़ विश्वास प्रगट किया। सम्राट ने इस आत्मविश्वास व दृढ़ता की सराहना की और जयसिंह के लिए विशिष्ट वासन्ती खिलअत भेजकर सम्मानित किया।[2]

१६ फरवरी को सूर्यास्त के बाद जयसिंह तथा महाराजा भीमसिंह हाडा गढ़ी सौंख गूजर (सौंखिया) में थाना स्थापित करके लौट रहे थे। तब जाट सैनिकों ने घात लगाकर उन पर हमला कर दिया, जिसमें अनेकों राजपूत खेत रहे या घायल हो गये। अनेकों ऊंट खच्चर व घोड़ा काम आये या जाटों के हाथ लगे। फलतः २६ फरवरी को जयसिंह को निर्देश मिले कि दयामसिंह खंगारोत, दीपसिंह, ताराचन्द और दीवान रामचन्द आदि सभी आपस में मिलकर शत्रु की जड़ों व शाखाओं को बरबाद करने का अथक प्रयास करें। किन्तु जाट काफी सजग व सक्रिय थे और शाही सेनाओं का

---

१ – अखबारात, २२ दिसम्बर, फरमान (कपड द्वारा) सं० ८७/१०१, शिवदास पृ० २०।

२ – अठसता, परगना कठूमर, १७१६ ई०, फरमान (कपड द्वारा), सं० ३१/१३८ (२२ मुहर्रम), १७४ स/४७, १७५ स/४५ आर, १५/१८७ (११ सफर), १७४, १७६, १७६, खाफी खां, खण्ड २, पृ० १४६।

घेराव होने पर भी १२ मार्च को कठूमर से मवेशियों को घेरकर अपने गावो मे ले गये।[1]

फर्रुखसियर ने १७ मार्च के फरमान मे जयसिंह की विफलता को माप लिया था। वास्तव मे काठेड प्रदेश की जनता स्वाधीनता संग्राम मे एकता, आत्म-विश्वास तथा कठोर परिश्रम के साथ संघर्षरत थी और जयसिंह अपने राजनैतिक अस्तित्व, आर्थिक लाभ, सामाजिक उत्कर्ष के लिए प्रयत्नशील था। २४ मार्च को छ हाथी थून छावनी मे पहुँच गये थे। अब जयसिंह ने थून घेरा के प्रयास काफी कठोर कर दिये थे। अप्रेल १२, १७१७ को जयसिंह ने महाराजा अजीतसिंह राठौड को लिखा, "जाट मुल्क का बन्दोबस्त ठीक हो गया है और जाट गढी का घेरा भलीभांति चल रहा है। शीघ्र ही विजय मिलने की आशा है।" इसी समय जयसिंह के लिए अतिरिक्त सैनिक भरती के लिए पांच लाख रुपया भेजा गया और उसे विप्लवियों को जीवित या मृत लाने के लिए कहा गया। दीवान ताराचन्द ने थून गढी की खाई को आवश्यकता पड़ने पर भरने वाले बाध 'सलमती कूंचा' की ओर प्रस्थान किया। वाजीद खा खानजादी हरावल में तैनात किया गया। जब जाटों ने दीवान ताराचन्द को बाध से हटाने का प्रयास किया, तब वाजीद खा ने वहा पहुँचकर जाट छापामारो को पीछे धकेल दिया। कस्बा नगर मे श्यामसिंह ने जाटो पर आक्रमण किया। मौजा शाही गढी, गढ़ी सुल्तानपुर (मुसावर), सीसवाडा, मुड़ेरा, खटीला तथा ताजौली गढ़ियों पर जाटो ने जमकर लोहा लिया।[2]

, मई-जून के वाक्या-पत्रो से स्पष्ट है कि राजा जयसिंह ने अहर्निश गस्त देने, गढियो पर निगरानी रखने के लिए अति साहसी सैनिक टुकडिया तैनात कर दी थी और स्वयं सुप्रसिद्ध सरदारों व सैनिक दलो के साथ हाथी पर सवार होकर निगरानी करने के लिए घूमने लगा था। गढी थून अनेक छोटी-छोटी गढियो तथा सघन जगलो के चक्र से सुरक्षित थी। जयसिंह ने शाही चौकी व मोर्चों को आपस में सम्बद्ध करने के लिए स्थान-स्थान पर अनेक सावात, सलावत तथा खन्दको के निर्माण के लिए असख्य मिस्त्री, कारीगर व बेलदार लगा दिये थे और वहा तक पानी पहुँचाने के लिये तीन हजार ऊट तथा दो हजार गाडियो के अलावा असख्य खच्चर भैंसा तथा बैल भारी पखालों के साथ तैयार रखे और भिश्ती पखाल भर कर

---

१ – वाक्या-पत्र (कपड द्वारा), खरीता (कपड द्वारा) स० ५७१/१०७, फरमान ३७/५३, २६ फरवरी (१४ रबी अव्वल), अठसता, परगना कठूमर, १७१६-१७ ई०।

२ – फरमान (कपड द्वारा) स० ५२/२१२, ४ रबीदोयम, अतिरिक्त वाक्यापत्र स० २/१४३, रसीद प्राप्ति (कपड द्वारा) स० ७०/६५०, ड्राफ्ट खरीता व परवाना, स० १६ (१/१६६, बैसाख सुदि २, सं० १७७४, फरमान (कपड द्वारा), सं० ८२/१६५, ८६/१६४, अखबारात २०,२५,२७, अप्रैल, १७१७ ई०।

निर्दिष्ट स्थान पर कुछ ही समय मे पहुँच जाते थे। इस प्रकार जयसिंह ने थून के समीप तक जंगलो को साफ करा कर चौड़ी व गहरी प्रच्छन्न सुरक्षित सुरंगे, मोर्चा तथा टीले तैयार कर लिए थे।[1] मई में यह अफवाह फैली कि मेवाती भी इस सघर्ष मे जाटो के साथ आकर मिलने वाले हैं। २ मई को निःसन्देह खोहरी में जाट व मेवातियो ने मिलकर भारी उपद्रव किये और अनेक स्थानो पर राजपूतों से भारी भड़पें हुईं। इसी प्रकार मथुरा के दक्षिण-पश्चिम म सुनेल गढ़ी पर भी जाट राजपूतो मे अति भीषण मुठभेड हुई, जिसम शाही सैनिको को भारी क्षति उठानी पड़ी। यह स्थिति देखकर दिल्ली से नुसरतयार खा तथा सैय्यद मुजफ्फर खा खानजहा बहादुर को नवीन शाही सेना व साज सामान के साथ थून की ओर रवाना होने का आदेश दिया गया।[2]

मई मे साधारण किन्तु तेज तूफान क साथ वर्षा (ज्येष्ठ डोगरा) आई, फिर अनावृष्टि के कारण काठड मे भारी सूखा पड गया। जयसिंह को मालवा तथा अपने देश ढुंढ़ार से खाद्यान की व्यवस्था करनी पडी। १४ जुनाई को फर्रुखसियर ने जाटो के प्रछन्न अन्न भण्डारो (खत्तीरो) को खोजकर प्राप्त करने का निर्देश दिया। भीषण सूखा व दुर्भिक्ष के प्राकृतिक प्रकोप से जयसिंह लाभ उठाना चाहता था, किन्तु यह दिवा-स्वप्न नीति थी। जाट जमीदारो को पथक प्रयास करने पडे और २ जुलाई को ग्राम दुलैहरा (मेवात) मे शाही सैनिको के साथ जाट व मेवातियो को एक भीषण मुठभेड हुई। ९ जुलाई को चूडामन स्वय मोहकम सिंह, अतिराम, रूपसिंह, बदनसिंह आदि के साथ गाव गढी मे पहुँच गया और वहा एक विशाल पंचायत मे लूटमार व सघर्ष को तीव्र करने का प्रचार किया।[3]

अगस्त १३, १७१६ ई० क अखबारातो में हमको थून आक्रमण का अति रोचक वर्णन मिलता है। राजाधिराज मोजा भूतेडा छावनी में था। कल (१२ अगस्त) राजा ने नुसरत यार खा क पास थून छावनी मे समाचार भेजा कि उसको बाईं ओर से कूच करना है। राजा स्वय थून के समीप अपने सैनिकों सहित ग्राम कणकुटी में पहुँच गया और उसने राजा गजसिंह नरवर, महाराव भीमसिंह हाडा, दीवान तारा चन्द, बुधसिंह कुम्भाणी को सूचित किया कि वे सभी नुसरत यार खां की सहायता के लिए पहुँचें। जब वे कणकुटो ग्राम के समीप पहुँचे तब दो सहस्र

---

१ – शिवदास, पृ० २०, वाक्या पत्र, २४ जून, ८ जुलाई १७१७ (२०, २६ रज्जब, हि० ११२६)।

२ – अखबारात, वाक्या रिपोर्ट, जून ३, १७१७ ई०, अठघता, परगना पहाडी, शिवदास पृ० २०, फरमान (कपड द्वारा) स० ८५/१६६।

३ – फरमान (कपड द्वारा) सं० १४/१६३ (५ सावान), अठघता परगना पहाड़ी (जुलाई २, १७७०), परगना कठूमर।

छापामार जाटों ने उनपर आक्रमण कर दिया। इस दिन राजा गजसिंह व महाराव भीमसिंह हरावल मे, दीवान ताराचन्द, बुधसिंह कुम्माणी चन्दौल मे और शाही सेना के चुनिंदा लड़ाकू सवार दाईं-बाईं पंक्ति मे तैनात थे। तीव्र झड़पों के बाद छापामार जाट सामने से तिरोहित हो गये। फिर नई कुमुक के साथ दो सहस्र जाटों ने नुसरत यार खा पर हमला कर दिया। उन्होंने जयसिंह के चन्दौल पर आक्रमण किया। चार घड़ी तक भीषण युद्ध चलता रहा। अन्त मे जाट टुकड़िया मैदान से हट गईं। शाही सैनिकों ने उनका पीछा किया और समीपस्थ तीन चार गावो का घेरा डाला। नुसरत यार खा ने कणकुटी छावनी की सुरक्षा के लिए अपने आदमी तैनात कर दिये। जाट छापामारों ने ग्राम मऊ मे तैनात शाही सैनिकों पर पुनः अचानक हमला कर दिया। सूर्योदय से एक घड़ी पूर्व तक आपस मे सशस्त्र संघर्ष चलता रहा। इन मुठभेड़ों मे उभय पक्ष के असख्य सैनिक काम मे आये या घायल हो गये।[1]

खान जहा बहादुर का आगमन तथा समझौता के प्रयास

जून मे दिल्ली से प्रस्थान करने के बाद सितम्बर मे खानजहां बहादुर ने कामा के निकट अपना पड़ाव डाला। इससे ७ सितम्बर के दिन जाटों मे भारी हलचल मच गई थी और उनको अति भागदौड़ करनी पड़ी। चूड़ामन ने मेवाती, शाहजहापुर तथा अन्य स्थानों की ओर से भागकर आने वाले असंख्य भारतवंशी अफगानों को तीन रुपया दैनिक मजदूरी पर भरती कर लिया और उनको शाही परगनो मे लूटमार करने, शाही राज-मार्गों मे विप्लव मचाने का काम सौंपा। इन लोगो ने नवाब वजीर कुतुबुउलमुल्क तथा नायब मीर बख्शी खानदौरान की जागीरों मे भारी लूटमार व उपद्रव किये।[2] जयसिंह इन जागीरी गावो मे प्रवेश करने मे असमर्थ था। इससे उसकी बदनामी होने लगी। १० सितम्बर को नवाब खान दौरान के स्थान पर कुवर शिवसिंह को मथुरा (इस्लामाबाद) का फौजदार नियुक्त किया गया और इसी दिन फरीदाबाद से आगरा तक की राहदारी वसूली के अधिकार चूड़ामन की बजाय कुवर शिवसिंह को प्रदान किये गये। अतिरिक्त व्यय की पूर्ति के लिए सम्राट ने जयसिंह को ढाई लाख रुपया (एक करोड़ दाम) जमा का परगना मालपुरा बिरादरी जागीर' के रूप मे प्रदान कर दिया। १४ सितम्बर को पचोली जगजीवन दास ने लिखा, 'जाटो के साथ भीषण संघर्ष तथा महाराजा की विजय के बारे मे महाराव भीमसिंह तथा नुसरत यार खा की अर्जदास्त सम्राट तथा नवाब वजीर को मिली। सम्राट को भी आपकी अर्जदास्त से समाचार मिल चुके हैं। शुभ समाचार को सुन-

---

१—अखबारात, स० ६२६ (रमजान ६, हि० ११२६।

२—अठसता, परगना वटूमर, १७१७-१८ पृ० ४०, फरमान (रूपड़ द्वारा) सं०८५/१६६, कैंमवर, पृ० १७०।

कर सम्राट ने आपको एक जोडी कुण्डल प्रदान करने का आदेश दिया है और नुसरत यार खा, महाराव भीमसिंह और गुलाम नवी को खिलअत तथा घोडो से सम्मानित किया गया है।" १६ अक्टूबर को सम्राट ने अति प्रसन्न मुद्रा म जगराम को दीवाने-खास मे फरमान प्रदान किया। इसी समय पर खानदौरान ने महाराजा को शाही खजाने से अतिरिक्त रकम दिलवाने का आश्वासन दिया। महाराजा को यह भी अधिकार प्रदान कर दिया गया कि शाही छावनी मे आपके आदेशो की अवहेलना करने वाले सरदारो व सैनिको को सेवा से पदच्युत कर दिया जावे।[1] इस प्रकार शाही दरबार से जयसिंह को पर्याप्त प्रोत्साहन मिल रहा था। किन्तु जाट भी लग्न के पक्के थे और उन्होने चूडामन, रूपसिंह आदि के सयुक्त प्रयास से प्रोत्साहित होकर परगना मथुरा तथा आसपास भारी लूटमार शुरू कर दी थी। स्वय रूपसिंह ने परगना सहार में अपने जागीरी मौजो व कस्बो पर पुनः अपना दखल जमा लिया था। इसी प्रकार कुन्तल जाटो ने गढी सौंख पर पुनः अधिकार कर लिया था। परगना तिजारा मे मेवाती लूटमार व शाही मार्गों मे उपद्रव करने मे मस्त थे। इससे नवम्बर ३, १७१७ ई० को तिजारा के मेवाती विद्रोहियो का दमन करने के लिए कुंवर सिर्वसिंह को तैनात किया गया। ६ नवम्बर को परगना कठूमर मे जाट कछवाहो में भारी सघर्ष हुआ। जाटो ने सौंख गूजर गढी पर और मथुरा मे सुनेल गढ़ी पर अधिकार जमा लिया।[2] १२ नवम्बर को शाही दरबार से फौजदार कुंवर सिर्वसिंह के नाम मथुरा (इस्लामाबाद) मे २, ३४, ८७, ५८७ (रु० ५८७ ११०) दाम की स्थाई जागीर कर दी गई।[3] सभी प्रयासों के बाद भी जयसिंह अधिक सफल नहीं हो सका। सम्राट को भी भारी धक्का लगा। सरकार के शब्दो मे, "खान जहां बहादुर ने थून छावनी मे आपसी तालमेल की अपेक्षा चूडामन के साथ मिलकर गुप्त षडयन्त्र की नीति अपनाई। इससे जयसिंह को सफलता को आघात पहुँचा।"[4] निःसन्देह अब नवाब वजीर कुतुबउलमुल्क महाराजा जयसिंह की विफलता के लिए प्रयत्नशील था और चूडामन शस्त्र सघर्ष के साथ कूटनयिक वार्ता भी करने लगा था। मीर बख्शी खानदौरान ने भी वजीर के रुख को देखकर समझौता-वार्ता की नीति अपनाई।

---

१ – परवाना व हस्व-उल-हुक्म (कपड़ द्वारा), सं० ७६/२७०, ४ शव्वाल, परवाना, सितम्बर २३, १७१७ ई०, अर्जदास्त, सं० ४४२/१६३, ४४३/१६५, ४४४/१६७, फरमान (कपड़ द्वारा), सं० ८०/११३।

२ – महमत अली का पत्र, ६ अक्तूबर, अब्दुल्ला खां का पत्र, ५, २७ अक्तूबर, परवाना (कपड़ द्वारा), ८४/८६, (२६ जिल्काद), अठसता परगना कठूमर।

३ – परवाना, ८६/६३।

४ – हिस्ट्री ऑफ जयपुर (पाण्डुलिपि)।

दिसम्बर के अन्त मे चूडामन ने युद्ध का नया मोर्चा खोलने के लिए गढ़ी गारू को काफी मजबूत कर लिया था। जनवरी ३, १७१८ ई० को ताराचन्द स्वय स सैन्य गारू की गढी पर पहुँच गया था। उसने अपने जासूसो को तैनात करके गढ़ी में जाटों की तैनात जमीयत के बारे मे भेद लेने का विफल प्रयास किया। १५ जनवरी को चूडामन स्वय अपने भतीजो के साथ ताराचन्द का मुकाबला करने के लिए गारू की गढी में पहुँचा। किन्तु कछवाहा सरदार की उस पर आक्रमण करने की हिम्मत नहीं हो सकी।[1]

नवाब वजीर कुतुबउल्मुल्क का हस्तक्षेप तथा संघर्ष का अन्त

जनवरी, १७१८ ई० मे महाराजा जयसिह ने अपनी अर्जदास्त मे लिखा कि जाटो को दरबार से सहयोग मिल रहा है और वे अब आत्म–समर्पण करने को तैयार नहीं है। जगराम ने आगरा के दीवान तथा पेशकार से मिलकर रुपया ८०००/- मे जाट जमीदारी के गांव महाराजा क नाम लिखवा[2] लिए थे। साथ ही जयसिह ने ठाकुर गजसिह नरुका (जावली) की मदद से कुछ जाट जमींदारों को लुभावने आश्वासन देकर भी अपनी ओर मिला लिया था। उसने २३ जनवरी को हिम्मता जाट को एक घोडा, दो कब्जा, दो तलवार, दो सिरोपाव तथा १ फरवरी को फर्रासखाना से गजी की पाल और ३१ जनवरी को उदीया जाट को स-साज एक हाथी पुरस्कार मे प्रदान करके शाही दरबार मे यह प्रचार करने का अवसर खोज निकाला था कि वह निकट भविष्य मे चूडामन की गढी को शीघ्र ही बरबाद कर देगा। इसी समय उसने गजसिह नरुका को भी एक कब्जा प्रदान किया।[3] २१ फरवरी, १७१८ ई० को शाही दरबार से महाराजा को लिखा गया कि चूडामन ने अपना वायदा अभी पूरा नही किया है। उसको या तो पकड लिया जावे या मार दिया जावे।[4] वास्तव मे जाट जमीदारों ने उसके सभी प्रयास विफल कर दिये थे।

संघर्ष की दीर्घता व जयसिह की हटवादिता को देखकर चूडामन ने कुतुब-उल्मुल्क के पास अपना वकील तथा आग्रह पत्र भेजकर 'पेशकश भुगतान करके समर्पण करने की इच्छा व्यक्त की। उसने वजीर कुतुबउल्मुल्क को पचास लाख रुपया तथा शाही खजाने मे से तीस लाख रुपया पेशकश जमा कराने का भी आश्वासन दिया। सम्राट फर्रुखसियर न इन प्रस्तावो में (१) थून, डीग तथा अन्य कई जाट प्रधान गढ़ियों की किलेबन्दी तोडने और भविष्य में पुन इनकी मरम्मत न कराने

---

१ – अठसता, परगना कठूमर।

२ – ड्राफ्ट खरीता व परवाना, स० ११२ (१/२००), फरवरी ११, १७१८।

३ – दस्तूर कोमवार, जि० ७, पृ० ६१५, ३१५, जि० ११, पृ० ८७।

४ – फरमान (कपड़ द्वारा) स० २६/१५३।

और (२) चूडामन व उसके पुत्र भाई–भतीजो द्वारा वतन जागीर के बाहर अन्यत्र शाही चाकरी करने की दो शर्ते जोड दी थी।[१] अब महाराजा जयसिंह को लिखा गया, "यदि चूडामन तय की गई शर्तों की पालना नही करेगा तो उसे मार डाला जावेगा। यह आपकी दया पर निर्भर रहेगा कि चूडामन को मौत की सजा दी जावे या नही।" अन्य फरमान मे लिखा गया कि "चूडामन को काठेड से दूर काबुल भेज दिया जावेगा। थून व डीग की गढियो की व्यवस्था सैय्यद खानजहा को सौंपनी होगी। जाटो की अन्य सभी गढिया धूल–धूसरित कर दी जावेंगी और जब तक हमीद खा तथा सय्यद नुसरत यार खा वहा नही आवें, तब तक राजपूत सैनिकों को नही हटाया जाय।" इसी समय नवाब वजीर ने खानजहा बहादुर के पास हस्ब-उल-हुक्म भेजकर लिखा, "चूडामन जाट ने बादशाह से अपने अपराधो के लिए क्षमा करके सरक्षण प्रदान करने का निवेदन किया है। उसकी प्रार्थना को स्वीकार करके दया का पजा व कौलनामा प्रदान कर दिया गया है। आप चूडामन, उसके पुत्रों, भाइयो व भतीजो को सरक्षण का आश्वासन देकर उनके साथ सधि व कौल करार करें। अपने सरक्षण मे सुरक्षित थून की गढी से लाकर दरबार मे प्रस्तुत करें। इस बात का विशेष ध्यान रखा जावे कि किसी भी स्थान पर उनके या उनके साज-सामान के साथ किसी भी प्रकार की रुकावट या खीचतान नही की जावे। विश्वास है कि आप शाही निर्देशानुसार समुचित कार्यवाही करेंगे।" अन्य फरमान मे जयसिंह को लिखा गया, "स्पष्टत, चूडामन जाट को बरबाद करने तथा दमन करने में सम्राट आपकी बहादुरी व प्रयत्नो से भलीभाति विज्ञ है। सम्राट की दिली अभिलाषानुसार तथा प्रभु की कृपा से शापित जाटो का पर्याप्त दमन हो चुका है, और उनको पर्याप्त सजा मिल चुकी है। आपने अपनी वीरता से कानूनी व्यवस्था, नियमो तथा फौजी प्रावधानो का भलीभाति पालन किया है तथा अन्य सरदारो ने भी अपनी सूझबूझ व वीरता का परिचय दिया है। एकमात्र आप तुल्य योद्धा ही इतना सत्कार्य कर सकता है। अब उस शापित ने पश्चाताप का टीका लगाकर हमारा सरक्षण प्राप्त कर लिया है। अपने विगत अपराधों के लिए क्षमा याचना और अपने जीवन व सम्पत्ति (जान ओ-माल) की रक्षा के लिए शाही सरक्षण प्रदान करने की विनती की है। अत उसको कौल व पजा भेजा जा चुका है। इससे आपसे अब आशा की जाती है कि आप उसको सन्तुष्ट करके दरबार मे लाने मे सहायता करेंगे। यद्यपि उसके अपराध एक प्रकार से अक्षम्य हैं। फिर भी सम्राट ने दया करके सरक्षण देना स्वीकार कर लिया है और कौल व पजा भेजकर सम्मान की रक्षा का वचन दिया है। अत. अब हस्तक्षेप न करके सहयोग प्रदान करें।"[२]

---

१ – शिवदास पृ० २३, फरमान मार्च, १७१८ ई०।

२ – शिवदास, पृ० २५ (फरमान व हस्ब–उल हुकम की प्रतिलिपि) फरमान (क्पड द्वारा) स० ७८/१८३।

सम्राट ने फरमान मे जयसिंह को निर्देश दिए, "चूडामन अपने परिवार सहित दरबार की चाकरी मे आ रहा है। सैय्यद नुसरत यार खा तथा खानजहां बहादुर को आदेश दिये गये हैं कि वे चूडामन को उसके परिवार के साथ आपकी छावनी में लाकर उपस्थित करें। तब आप उसको सान्त्वना देकर साम्राज्य की ओर से खिलअत प्रदान करें।" एक हस्व-उल-हुक्म मे लिखा गया, "अब चूडामन के परिवार (महिलाओं व बालकों) ने गढी मे शरण ली है। उनको नही सताया जावे।"[1] तब जयसिंह ने अनिच्छा से आदेशों की अनुपालना की। १२ मार्च को सैय्यद खानजहा बहादुर तथा सैय्यद नुसरत यार खा के सरक्षण मे चूडामन, उसके पुत्र तथा भतीजे आदि जयसिंह की छावनी मे आकर उपस्थित हुये। चूडामन ने महाराजा जयसिंह व खानजहा बहादुर को क्रमशः दो ईराकी तथा अरबी घोडा मय साज नजर किये। जयसिंह ने उसको तीन थानो की खिलअत, सात साज व सामान के एक घोडा प्रदान किया। अखबारातों के अनुसार इसी समय जयसिंह ने ठाकुर अतिराम को तीन थानो की खिलअत, एक मोतियो का तोरा, दो स्वर्ण हार तथा एक घोडा और रूपसिंह को कुछ अन्य सामान प्रदान किया।[2] फिर चूडामन खानजहा बहादुर को अपने साथ गढी के अन्दर ले गया, जहा उसने अपने भण्डार, सम्पत्ति व सामान का निरीक्षण कराया और सभी कुछ उसकी निगरानी मे सौप दिया। सैय्यदों ने गढी की सुरक्षा के लिए अपना थाना स्थापित किया।[3]

अप्रेल १०, १७१८ ई० (१० जमादि अव्वल) को खानजहा बहादुर के सरक्षण मे चूडामन अपने भतीजो– रूपसिंह, बदनसिंह, भ्राता सुलाराम, राजाराम आदि के साथ दिल्ली पहुँचा और नवाब वजीर कुतुबउलमुल्क की हवेली के समीप अपना पडाव डाल कर प्रथम बार उससे भेंट-वार्ता की। जयसिंह भी इसी समय दिल्ली पहुँच गया था और उसने सम्राट के सामने 'कौल व पजा' का अति विरोध किया। जयसिंह को सन्तुष्ट करने के लिये १२ अप्रेल को वृन्दावन, बिशनपुरा, परगना हवेली मथुरा इनाम मे प्रदान कर दिये गये। १६ अप्रेल को उसने नारायणदास खत्री को मथुरा रवाना कर दिया।[4] १६ अप्रेल को नवाब वजीर के सुरक्षात्मक प्रबन्ध मे

---

१ – फरमान (कपड द्वारा) सं० ६६/१६२, २०/१४०, ६४/१६२, १६४, हस्व उल्-हुक्म, सं० २०/१४० (१० मार्च)।

२ – शिवदास, पृ० २६, फरमान (कपड द्वारा), स० १६२, दस्तूर कौमवार, जि० ७ पृ० ३४५, अखबारात, स० ६५२, ६५६।

३ – शिवदास पृ० २६।

४ – अलीकउल्लाह के नाम परवाना, सं० ६१/२७६ (कपड द्वारा), दस्तूर कौमवार, जि० ३, पृ० ५६३।

चूडामन अपने भतीजो आदि के साथ शाही दरबार मे जाकर उपस्थित हुआ और वजीर ने उनको अपने समीप बैठने का स्थान दिया । चूडामन ने सम्राट को एक सहस्र असर्फी, मोहकमसिंह व रूपसिंह ने पाच पाच सौ असर्फिया नजर की । सम्राट ने सभी को खिलअत प्रदान की तथा अन्य सुविधाए देना स्वीकार कर लिया। जयसिंह के कडे रुख के बाद भी फर्रुखसियर वजीर की फौलादी कूटनीति के सामने असहाय था। फिर भी उसने जाट सरदारो के प्रति भारी रुक्षता दिखलाई और पुनः दर्शन देने से मना कर दिया।[1] २१ अप्रेल को जयसिंह दिल्ली से थून की ओर वापिस लौट आया और उसने राजा गजसिंह नरवर को एक तारा व एक घोडा प्रदान किया।[2] अब चूडामन बराह सैय्यदो का सशक्त समर्थक तथा कृतज्ञ मित्र बन गया था।

थून व काठेड जनपद के समर्पण की माग

२१ मई को जयसिंह ने थून गढी की घेराबन्दी के लिए तैनात अपनी समस्त सेनाओ को हटा लिया और २६ मई को काठेड जनपद से दिल्ली लौट गया। जाटों ने वास्तव मे अपनी गढियों का समर्पण नही किया था। इससे ३१ मई को जयसिंह को पुनः आदेश दिया गया कि थून व झरसौली गढियों पर अपना अधिकार करने का प्रयास करे। कछवाहा नरेश इन जाट गढियो का व्यवहारिक समर्पण चाहता था। इस स्थिति को टालने के लिए ७ जून को वजीर कुतुबउलमुल्क ने दरबार मे निवेदन किया कि चूडामन ने शाही कोषागार मे पचास लाख रुपया नक्द व जिंस मे जमा करा दिया है।[3] ३ जुलाई को जयसिंह ने फर्रुखसियर के समक्ष पाच मोहरो के साथ थून व झरसौली गढियो की चाबिया प्रस्तुत करके एकान्त में सम्राट को नवाब वजीर कुतुबउलमुल्क के व्यावहारिक चगुल से त्रास पाने की सलाह दी और इस कार्य हेतु सैय्यद बन्धुओ विरोधी अमीरो को दूरस्थ प्रान्तो से राजधानी मे बुलाने का परामर्श दिया। इसके बाद चूडामन तथा राजा रतन चन्द को ही अशान्ति की जड मानकर सम्राट ने वजीर से इन दोनों को सरकार-ए-वाला को सौंपने का आदेश दिया। फलत. राजधानी मे सम्राट तथा नवाब वजीर कुतुबउलमुल्क के बीच मे जीवन-मरण व राजनैतिक अस्तित्व का गलियारा झगडा छिड गया, जिसमे मात्र एक जयसिंह ने सम्राट का साथ दिया।

सम्राट् फर्रुखसियर सैय्यदो की अपेक्षा जटवाडा प्रदेश व गढियो पर अपने पक्षधर जयसिंह कछवाहा का व्यावहारिक अधिकार व प्रबन्ध चाहता था। इससे

---

१ – शिवदास पृ० २६, कासिम पृ० ८६।

२ – दस्तूर कौ०, जि० १, पृ० ८५।

३ – फरमान (कपड़ द्वारा), स० १०/१८५ रजब २, हि० ११३० (३१ मई, १७१८), शिवदास पृ० ३०।

प्रारम्भ में उसने जयसिंह के परामर्श पर १४ सितम्बर को सर बुलन्द खां के लिए आगरा प्रान्त का राज्यपाल पद प्रदान किया और जटवाड़ा में तैनात सैय्यदों के थानों को हटाकर थून आदि प्रमुख गढ़ियों पर दखल करने का आदेश दिया। इसी समय शाही दरबार से चूड़ामन के लिए भी निर्देश दिए गए—'चूंकि थून की गढ़ी पातशाही अमल में आ चुकी है और वहां से सैय्यदों के थानों की रद्दबदल की जा रही है। गढ़ी तथा प्रदेश में प्रबन्ध व देखभाल के लिए सर बुलन्द खां अब अपने विश्वास पात्र सैनिक तैनात करेगा। आप इसकी सूचना अपने पुत्रों, भाई–भतीजों तथा अन्य जमींदारों को भेज दें।''[1]

सम्राट के इन निर्णयों से काठेड़ तथा नरुखण्ड में जाट व नरुका राजपूत पुनः सक्रिय हो गये और उन्होंने पर्दे की ओट शिकार करने वाली जयसिंह की नीति का जमकर विरोध किया। मूडहड़ा (मुढेरा) ग्राम में आयोजित कौमी पंचायत के बारे में १५ नवम्बर को हरकारा ने सूचना भेजी, ''.....इस प्रकार ये सभी (चूड़ामन के भाई–भतीजे तथा अन्य कौमी जमींदार) मौजा मूडहड़ा में एकत्रित हुए और उन्होंने सभी पहलुओं पर विचार किया। जुलकरन व मोहकमसिंह ने कहा, ''यदि आप अपने वतन व कौम की स्वाधीनता के लिए संघर्ष जारी रखना चाहते हैं, तब फिर बना–बनाया गढ़ क्यों छोड़ा जाए? ये (विरोधी अमीर) नवीन गांवों की गढ़ियों को भी बन्द करना चाहते हैं, ताकि हम लोग इधर–उधर पृथक–पृथक हो सकें। इससे प्रभावित होकर जाटों ने थून व अन्य गढ़ियों को पातशाही अमल में सौंपने की अपेक्षा थून की गढ़ी में रहकर संघर्ष करने का संकल्प किया।'' जातीय पंचायत के सर्व–सम्मत निर्णय के बाद दीवान ताराचन्द ने १७ नवम्बर के पत्र में साह विजैराम को लिखा, ''थून से अब सैय्यदों का थाना उठ गया है और उसके स्थान पर जाटों ने प्रबन्ध संभाल लिया है। चूड़ामन के बहू–बेटा गढ़ी में पहुँच चुके हैं।.........गढ़ी में जाट भारी पड़ जाता है और फिर भारी तैयारी करनी पड़ती है। इससे उनको बाहर ही रोकने का यत्न करना चाहिये।'' इसी समय मेवातियों ने प्रतापसिंह पर हमला कर दिया, जिसमें वह काम आया। नि.सन्देह जयसिंह इस बार भी अपनी कूटनीति व कपट चालों में पूर्णतः विफल रहा। सर बुलन्द खां भी जाटों की कौमी एकता से व्यथित हो गया और आर्थिक संकट का बहाना बनाकर २३ नवम्बर को राज्यपाल पद को त्याग कर दिल्ली लौट गया।[2]

६ जनवरी को चार-पांच सौ जाट सवारों ने अलवर की तलहटी के गांवों में पहुँचकर सवाई जयसिंह के इलाके में भारी लूटमार व उपद्रव किये और तीसरे दिन

---

१ – शिवदास, पृ० ३०, ख० प०, स० ३४८/३४७।

२ – ख० प्रह०, सं० ३४८/३४७, ३४६/३४८, ३५०/३४६, अख०, खाफी खां, भाग २, पृ० ७६०।

इन गावो की मवेशियो को घेरकर मौजा मुढ़ेरा पथरेड़े आदि के बीहड़ो मे लौट आये। इसी समय तुलाराम व मोहकम सिह आदि की मुहर शाही दरबार के प्रतिष्ठित अमीरो के हस्ताक्षर तथा मथुरा शहर के व्यापारियो ने शहर काजो से मुहर लगवाकर दरबार मे एक महजरनामा (प्रार्थना-पत्र) प्रस्तुत करके निवेदन किया कि दिल्ली व अन्य ओर के शाही मार्ग अब आवागमन के लिए पूर्णतः खुल चुके हैं, लेकिन मेवात का रास्ता अभी तक महाराजा की फौजदारी मे शामिल होने से बन्द है। इसको पुनः चालू कराया जाए। जयसिंह के आमिलो व फौजदारो को भी उपद्रवों के कारण व्यवस्था करने मे काफी दिक्कतें आने लगी थी। २६ जनवरी को कुंवर जोरावर सिह ने किसनराम चक्रवर्ती को लिखा—"सेनायें जाटो को हटाने के लिए मौजा हुस्तेडा की ओर कूच कर चुकी हैं। शीघ्र ही अधिक द्रव्य की व्यवस्था की जावे।" ५ फरवरी को दीवान ताराचन्द ने साह विजैराम को लिखा, "पथैना से उदैराय और रिणी (रेणी) से बदैराय का पत्र आया है। बदैराय ने पाच सौ बरकंदाज तैनात करने के लिए लिखा है। रेणी मे किसनसिंह नरूका का थाना है और पथैना मे सात सौ बरकदाज मौजूद हैं। *श्यामसिंह राजावत को दो सौ बरकदाजो के साथ रवाना कर दिया जावे।"*[1] अब मीर बख्शी सैय्यद हुसैन अली दिल्ली के समीप तक आ चुका था। इससे सम्राट तथा जयसिंह ने नवाब वजीर व चूड़ामन के साथ सद्भावी समझौता करने का प्रयास किया। १२ फरवरी को हेमराज बख्शी हरकिशन जाट के पास सिरोपाव लेकर पहुँचा और १५ फरवरी को सवाई जयसिंह ने चूड़ामन के पास तीन थानों का सिरोपाव तथा दूसरे दिन सिलहखाना (शस्त्रागार) से एक तलवार, एक तेगा सिरोही भेजकर अपना स्नेह प्रगट करने का विफल प्रयास किया।[2] किन्तु सैय्यद हुसैन अली के दिल्ली आगमन के बाद फरवरी २३, १७१६ के दिन महाराजा जयसिंह को औपचारिक विदाई के बिना ही दिल्ली से अपने वतन की ओर कूंच करना पडा।[3]

आगरा विद्रोह मे जयसिंह की विफलता

सम्राट् फर्रुखसियर को सिंहासन च्युत (फरवरी २८, १७१६ ई०) करने से जयसिंह को भारी आघात पहुँचा और उसने मित्रसेन नागर से गुप्त मुलाकात करने के बाद अपने जीवन व राजनैतिक अस्तित्व की रक्षा के लिए सैय्यद बन्धुओ के विरुद्ध देशव्यापी सशस्त्र विद्रोह की एक व्यापक योजना का सूत्रपात किया। मई १८, १७१६ ई० को मित्रसेन नागर ने आगरा दुर्ग मे निकोसियर को मुगल सम्राट

१—ख० अ०, सं० ३५१/३५० (६ जनवरी), ३५२/३६५, ३५४/३३७ (५ फरवरी)।

२—द० कौ०, जि० ७, पृ० ६१२, ३४७।

३—शिवदास, पृ० २३, सियार, पृ० १२८, टॉड, भाग १, पृ० ३२३ (पा०टि० १)।

घोषित करके सघर्ष की तैय्यारिया शुरू कर दी थी। जून के मध्य में जयसिंह स्वयं ससैन्य टोडा पहुंच गया था। उसने २८ जून को गर्जासिंह नरूका (जावली) को बेरहड़ और जुलाई के द्वितीय सप्ताह मे निकोसियर की मदद तथा आगरा के समाचारो की जानकारी के लिए सहीराम की कमान मे एक अश्वारोही दल जटवाडा की ओर रवाना कर दिया था। अब उसने आगरा तथा मथुरा के समाचारों के लिए तथा आगरा परगने के सीमान्त में उपद्रव कराने के लिए ठाकुर खेमकरन सोगरिया की पीठ थपथपाई। उसको चूडामन का प्रतिद्वन्दी सरदार बनाने का विफल प्रयास किया। ११ जुलाई को जयसिंह ने खेमकरन सोगरिया के भ्राता किरपाराम को तोपखाना से एक बन्दूक आहनी (लोहा) व एक बन्दूक जरब (धातु) और मखमली पीढ़ी, दूसरे दिन उसको व उसके भ्राता भीखा राम व भतीजे सार्वतसिंह को तीन-तीन थानो का सीख का सिरोपाव और इसी दिन गर्जासिंह नरूका को उनके ही साथ एक बन्दूक आहनी प्रदान करके प्रोत्साहित किया।[1]

आगरा विद्रोह को दबाने की प्रारम्भिक कार्यवाहियो के बाद अमीर उल उमरा हुसैन अली खां स्वय ८ जुलाई को सिकन्दरा (आगरा) आ धमका और उसने सूचना मिलते ही ठाकुर खेमकरन की सरगर्मी व सहीराम की सेनाओं को आगरा दुर्ग से दूर मार्ग मे ही रोकने के लिए बख्शी सैय्यद दिलावर अली खा तथा मीर मुसरिफ जफर खा तुर्रेबाज की कमान मे सैनिक टुकडियां फतहपुर की ओर रवाना की। साथ ही उसने ठाकुर खेमकरन सोगरिया के नाम एक हस्ब-उल्-हुक्म भेजकर अपने क्षेत्र मे शान्ति-व्यवस्था के लिए जयसिंह की कछवाहा टुकडी को मार्ग मे ही रोकने का दबाव डाला।[2] जुलाई के तृतीय सप्ताह मे (१८ जुलाई) सैय्यदो तथा कछवाहों में आपस में तीन दिन तक झड़पें हुई। अन्त मे सहीराम ने शाही सेना नायको के समक्ष समर्पण कर दिया और वह अपने कछवाहा सवारो के साथ खेमकरन सोगरिया के सरक्षण मे पीछे हटकर अथापुर की गढ़ी मे लौट आया। १२ जुलाई की अर्जदास्त मे उसने इस सघर्ष का ब्योरा भेजकर जयसिंह को आश्वासन दिया कि आपके इधर आने पर हम आपकी सेवा में उपस्थित हो जावेंगे। इसी प्रकार जाटो तथा राजसिंह नरूका ने मिलकर वाजीद खा को मेवात मे पराजित कर दिया।[3] १२ अगस्त को मीर बख्शी तथा चूडामन के प्रयास से आगरा दुर्ग के हजारी तथा दफ्तरियों ने आत्म-समर्पण कर दिया और इसके साथ ही आगरा का विद्रोह भी समाप्त हो गया। इससे जयसिंह का भयभीत होना स्वाभाविक था।

---

१ – द० कौ०, जि० ११, पृ० ८७, जि० ७, पृ० ३२८, ४८६, ५३१; जि० ११, पृ० ८७।

२ – कासिम, पृ० ८८ ब, बाल मु०, पत्र सं० २४, पृ० ६०।

३ – अर्जदास्त, नं० ४४८/११६, ४४६/११८।

आगरा दुर्ग के पतन के बाद २४ अगस्त को जयसिंह ने खेमकरन सोगरिया के भाई किरपाराम व भतीजे सावर्तसिंह को अपनी टोडा छावनी से विदा कर दिया। फिर २८ अगस्त को उसने अयामल खत्री के हाथों ठाकुर रूपसिंह के लिए एक चीरा मुकेसी तरहपटी, एक जामा दुदामी चिक्दोजी, फेंटा गुजराती, मोमजामा तथा दो गज नरमा भेजकर आपसी सहयोग की कामना व्यक्त की।[1] सम्भवत. जयसिंह जाट सरदारो के माध्यम से सैय्यद बन्धुओं से आमेर की ओर प्रस्थान न करने का अनुरोध करना चाहता था। शाही छावनी में महाराजा अजीत सिंह राठौड उसका पक्ष ले रहा था, किन्तु १७/१८ सितम्बर को फतहपुर-सीकरी के समीप बिस्वापुर नामक ग्राम मे सम्राट् रफीउद्दौला की अचानक मृत्यु और सम्राट् मुहम्मद शाह के राज्यारोहण (सितम्बर २८ १७१९ ई०) के कारण सैय्यद बन्धुओं को समय विशेष के लिए सवाई जयसिंह विरोधी अभियान स्थगित करना पडा। अब वास्तव मे सैय्यद बन्धु अपनी सैनिक शक्ति तथा राजनैतिक घटनाओं को नियन्त्रित करने की पराकाष्ठा पर पहुँच चुके थे। फिर भी उन्होने जयसिंह को सन्तुष्ट करने का प्रयास किया। १९ अक्तूबर को खेमकरन का भ्राता जयसिंह के हुजूर मे पहुँचा और उसने जयसिंह को राजनैतिक घटनाओं से अवगत कराया।[2] फलत नवम्बर में सैय्यद दिलावर अली खा ने खेमकरन सोगरिया को उसकी फतहगढी (फतहाबाद ?) मे घेर लिया और उसने समर्पण करके क्षमा मांग ली। १५ नवम्बर को जयसिंह ने भी कालाडेरा मे महाराजा अजीत सिंह से भेंट की और प्रस्तावित शर्तें स्वीकार करके संघर्ष को टाल दिया।[3] इस समय राव चूडामन सैय्यद बन्धुओं का निकटतम हितैषी तथा कृपापात्र सरदार था। इससे जयसिंह ने ठाकुर रूपसिंह के माध्यम से चूडामन के प्रति मित्रता की भावना प्रगट की। २७ फरवरी, १७२० ई० को रूपसिंह ने अपना सेवक मीर महमद हुसैन जयसिंह के पास अपना सन्देश लेकर आमेर भेजा और जयसिंह ने सन्तुष्ट होकर अयामल खत्री के हाथो रूपसिंह के लिए पाच परिधानो, चीरा, फेंटा, रजाई, जामा तथा मसरू, का सिरोपाव भेजा। जुलाई, १७२० के अंतिम सप्ताह मे अनायास ही साधारण बीमारी के बाद ठाकुर रूपसिंह की नि सन्तान मृत्यु हो गई। इस समाचार से जयसिंह को भारी धक्का लगा। ४ अगस्त को उसने सूरपुरा (जोधपुर) से उसके लघुभ्राता बदनसिंह के पास और ८ अगस्त को अयामल खत्री के माध्यम से ठाकुर तुलाराम के पास मातमी का सिरोपाव चीरा, मसरू फेंटा भेजकर अपनी

१– द० कौ०, जि० ७, पृ० ३२६, ५३१, ५०२।

२– उपरोक्त, पृ० ४८६।

३– बाल मु०, लेख ५, पृ० ३५, कासिम, पृ० ६३ अ०, इर्विन भाग २, पृ० ४।

सम्वेदना प्रगट की।[1] ठाकुर रूपसिंह की मृत्यु ने निःसन्देह सिनसिनवार जाट डूंग में आन्तरिक गृह कलह का मार्ग खोल दिया था।

५–जमींदारी के लिए संघर्ष १७२१-२२ ई०

सैय्यद हुसैन अली की हत्या (अक्तूबर ८, १७२०) के शीघ्र बाद ही सम्राट् मुहम्मद शाह ने सआदत खां को आगरा प्रान्त का राज्यपाल पद प्रदान (अक्तूबर १५, १७२०) करके सम्मानित किया।[2] हसनपुर युद्ध (१३–१४ नवम्बर) में नवाब वजीर कुतुबउलमुल्क की पराजय के बाद सम्राट मुहम्मद शाह सीधा दिल्ली पहुँचा। समस्त अमीर ससैन्य उसके साथ ही दिल्ली चले गए थे। ठाकुर खेमकरन सोगरिया स्वयं अपने सभी सैनिकों के साथ दिल्ली पहुँच गया था। लगभग नौ माह (नवम्बर-सितम्बर २२, १७२१) तक वहां रुक कर उसने उच्च मनसब व जागीर, राव चूड़ामन की अपेक्षा समस्त जाटों की सरदारी प्राप्त करने का विफल प्रयास किया। हसनपुर युद्ध के बाद अपने भाग्य निर्माण की आशा में सवाई जयसिंह मुगल सम्राट के दरबार में जाकर अब अवश्य उपस्थित (२५ नवम्बर) हो गया था, किन्तु उत्तर भारत में इस समय राव चूड़ामन, महाराजा अजीतसिंह राठौड़ तथा महाराजा छत्रसाल बुन्देला–तीन महान हिन्दू शक्तियां थीं। इन तीनों ने ही 'रुक कर देखने' की नीति अपनाई। साम्राज्य का निकटतम पंच हजारी मनसबदार होने पर भी राव चूड़ामन स्वयं हसनपुर युद्ध के बाद विशाल लूट की सम्पत्ति के साथ अपने देश में लौट आया था और उसने दिसम्बर के अन्त में शाही दरबार से अपने मनसब तथा अन्य प्रदत्त अधिकारों के नवीनीकरण आदेश प्राप्त करने के लिए अपने वकील पण्डित चिन्तामणि को दिल्ली भेजा। जाट वकील के साथ ठाकुर तुलाराम भी दिल्ली गया। सम्राट मुहम्मद शाह ने सत्मार्गान्वेषी सवाई जयसिंह, गिरधर बहादुर नागर आदि हिन्दू सरदारों तथा जनता की मांग पर हिन्दुओं पर आरोपित 'जजिया' कर को स्थगित करा दिया था। इससे राजधानी में सवाई जयसिंह का पर्याप्त प्रभाव व सम्मान बढ़ गया था। जयसिंह ने दिल्ली में ठाकुर तुलाराम का अति सम्मान व

१–इ० कौ०, जि० ७, पृ० ५०४, ५०२, ४३३, ३८५।

—ठाकुर रूपसिंह ने नन्दगांव में नन्दराय जी मन्दिर का निर्माण कराया था। (प्राउज, पृ० १८०) डीग में महल व बदनसिंह के पूरब पुराना महल के किनारे रूपसागर, ड्योढ़ी, पंचायत घर, रूपेश्वर महादेव का मन्दिर बनवाया था। इनके समीप ही एक विशाल बाग भी लगवाया, जहां आजकल जवाहर प्रदर्शनी लगती है। इसी बाग में उसकी तथा उसकी धर्म पत्नी की विशाल छतरी बनी है। (दीक्षित, पृ० १८३)।

२–कॅमवर, जि० २, पृ० ३२५ ब०, कासिम।

सत्कार किया और जनवरी १६, १७२१ (माघ वदि ४, सं० १७७७) को डोल मिजमानी के रूप में दो सौ रुपया उसके डेरे पर भेजे। १८ जनवरी को जाट वकील ने सवाई जयसिंह तथा तुलाराम की आपसी भेंट-वार्ता का प्रबन्ध किया और १६ जनवरी (माघ वदि ७) को तुलाराम ने जयसिंह पुरा छावनी में पहुँचकर उससे भेंट की। जयसिंह ने जाट प्रतिनिधि को तीन थानो का सिरोपाव, किरकिराखाना से एक धुगधुगी तिलाई मूरसाकारी और २२ जनवरी को पूर्ण साज सहित एक घोडा प्रदान करके सम्मानित किया।[1] इसी समय ठाकुर तुलाराम ने जाट वकील के माध्यम से नव-विजेता सम्राट मुहम्मदशाह के प्रति अपनी निष्ठा व भक्ति प्रगट की। उसने नव-नियुक्त राज्यपाल से भी औपचारिक भेंट वार्ता की। किन्तु २७ जनवरी को नवाब वजीर मुहम्मद अमीन खा की मृत्यु के कारण शाही दरबार षडयन्त्रकारी अमीरो की चालबाजियो का प्रमुख अखाडा बन गया। इसमे जाट वकील व प्रतिनिधि को स्वभावतः राजधानी मे ही रुकना पडा और इस बीच मे जटवाडा के अन्य जाट जमीदार भी दिल्ली पहुच गये।

१२ फरवरी को सवाई जयसिंह के लिए 'सरामद राजाये हिन्दोस्तान राज राजेन्द्र राजाधिराज' के विरुद से सम्मानित किया गया, तब १६ फरवरी को जाट वकील व जाट प्रतिनिधि तुलाराम ने जगराम, दूदाराम, देवसिंह, राजाराम, मनरूप, मन्नू आदि जाट जमीदारो के साथ जयसिंह के लिए इस सम्मान पर अपनी बधाइयाँ प्रस्तुत की। इन सभी को सिरोपाव प्रदान किए गए और १७ फरवरी को वकील चिन्तामणि को एक घोडा व लगाम देकर पुरस्कृत किया गया।[2] इस प्रकार जटवाडा के अन्यान्य जाट जमीदारो के दिल्ली पहुँचने के बाद सम्राट मुहम्मदशाह ने फरवरी १६, १७२१ ई० के दिन सआदत खा को बुरहान-उलमुल्क बहादुर जंग का खिताब देकर राज्यपाल पद का कार्यभार संभालने के लिए बिदा किया और वह मार्च मे दिल्ली से आगरा आ गया।

सिनसिनवार जाट डूंग की वशानुगत व सामाजिक परम्पराओ के अनुसार बदनसिंह अपने ज्येष्ठ भ्राता रूपसिंह की जमीदारी का व्यवहारिक स्वामी व प्रबन्धक था, किन्तु प्रचलित दस्तूरो के अन्तर्गत शाही दरबार से जमीदारी की मान्यता प्राप्त करना आवश्यक था। अतः प्रारम्भ में बदनसिंह ने मार्च के द्वितीय सप्ताह मे अपने पुत्र सूरजमल को उसके मामा भज्जू (सुपुत्र रामकिशन) के साथ दिल्ली भेजा। तब २० मार्च को सवाई जयसिंह ने तीन थानो का सिरोपाव भेजकर सम्मानित किया

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३८७, ३४७, ३८५।

२ – उपरोक्त, जि० २४, पृ० १२, [डॉ० टिक्कीवाल (पृ० ५१) की तिथि भ्रमात्मक है।], जि० ७, पृ० ३५४,३५७,३६४,३६५,४००,४६०,४६१,३२५।

और मुलाकात के समय उसको एक जडाऊ कलकी प्रदान की। १८ अप्रेल को सवाई जयसिंह तथा सूरजमल मे आपसी मुलाकात हुई, तब जयसिंह ने उसको विदाई में एक घोडा, एक लगाम तथा बांग और २९ अप्रेल को सिरोपाव भेंट किया। इसके बाद समस्त जाट जमीदार बदलती राजनैतिक स्थितियों का अध्ययन करने के लिए राजधानी में पडाव डाले पडे रहे। ९ मई को जयसिंह ने सूरजमल, तुलाराम, भजूराम (सुपुत्र गोकुल), जाट वकील को विधिवत विदाई का सिरोपाव दिया। विदाई मे टूलाराम को इस समय मोती की लड दी गई।[1] सम्भवतः सवाई जयसिंह ने इस समय सूरजमल तथा अन्य जाट जमीदारों को बदनसिंह के उत्तराधिकार को स्वीकार कराने का आश्वासन देकर विदा किया था। इन प्रयासों तथा प्रयत्नों के बाद, बदलती राजनैतिक हवा का रुख देखकर बदनसिंह ने राव चूडामन के सामने 'न्यायोचित जमींदारी के मालिकाना हक-हकूक तथा बंटवारा' की सुस्पष्ट मांग[2] प्रस्तुत की। इस समय राव चूडामन ने मुगल सत्ता के विरुद्ध बुन्देला तथा राठोडो को सैनिक सहायता भेजकर अपने राजनैतिक अस्तित्व के लिए सघर्ष शुरू कर दिया था। कुंवर अभयसिंह राठौड ने मोहकमसिंह की सहायता से मेवात मे भारी लूटमार व बरबादी की। इससे राव चूडामन ने प्रारम्भ में बदनसिंह की इस मांग को सदेहास्पद स्थिति मे टाल दिया, किन्तु बाद मे मोहकम सिंह की हठवादिता, अदूरदर्शिता के कारण समय निकलते ही यह माग उग्र होने लगी और स्वभावतः गृह-कलह बढने लगा।

बदनसिंह का भाग्य नक्षत्र कठिनाइयो के बीच ही चमकने वाला था। अस्थिर तन्द्रिल विजयों की अपेक्षा सह-अस्तित्व की भावना से सम्राट व केन्द्रीय मन्त्रियो के साथ मधुरता व सहयोगी मित्रता आवश्यक थी। मुगल सरकार से निरन्तर सघर्षरत रहने की अपेक्षा बदनसिंह बदलती राजनैतिक परिस्थितियो मे जातीय पचायन के आर्थिक, राजनैतिक व सामाजिक स्थायित्व या जमीदारी अधिकारो के हित मे, लोक शक्ति की दृढता के लिए समझौता करने का पक्षपाती था। व्यक्तिवादी व्यवस्था की अपेक्षा जनतान्त्रिक सिद्धान्तो पर आधारित सामाजिक व्यवस्था को अति हितकारी समझता था। उसके पक्षधर ठाकुर तुलाराम अवारिया (डहरा), रणजीत अवारिया, अढींग का फौजदार फौदाराम, अनोपसिंह, फतहसिंह (आजऊ), गाढ का ठाकुर घराना, ठाकुर अतिराम व उसका पुत्र सादूल, गोपाल सिंह (नगला दादू), हैलक सेऊ के गुर्जर पटेल, खूंटल, मीणा, पुरोहित कालूराम (बरसाना), श्री लालजी

१ – द० कौ०, पृ० ५३६,३८५,४८५।

२ – मा० उल उमरा, पृ०४४०, टॉड, खण्ड २, पृ० २११, इर्विन, भाग २, पृ०१२१।
—खाफी खां, (जि० २, पृ० ९४४) का मत है कि आपसी झगड़े का कारण वतन जागीर थी।

(बरस ना), हेमराज कटारा, ठाकुर मनोपसिंह साबोरा, कामर तथा सहार के जमीदार (चोधरी) तथा परिवार के निकटतम सम्बन्धी व जमातदार थे। प्रायः यह युवा वर्ग था मिश्रित युवा शक्ति थी और पुरानी रूढ़िवादी परम्पराओं, एकाधिकार, निरन्तर संघर्ष की नीति में क्रान्तिकारी परिवर्तन के पक्ष में थी। इधर बदनसिंह का परिवार तथा उसकी महत्वाकांक्षायें नित्यश बढ रही थी और वतन जागीर सिनसिनी व डीग भी प्राय अपर्याप्त थी।

कुवर अभयसिंह राठौड की लूट व बरबादी को देखकर सम्राट मुहम्मद शाह ने सआदत खा को महाराजा अजीत सिंह राठौड के विरुद्ध सैनिक कमान सभालने के लिए दिल्ली बुलाया, तब बदनसिंह ने जाट वकील पण्डित चिन्तामणि को पुन. दिल्ली दरबार मे भेजा। १५ सितम्बर को उसने सवाई जयसिंह से भेंट की और उसने सआदत खा से मिलकर बदनसिंह की नीति संगत माग को दरबार मे प्रस्तुत करने का दबाव डाला। यशोपार्जन के इच्छुक सआदत खा को शाही दरबार मे षड्यन्त्रकारी अमीरो, मुख्यतः मीर बख्शी खानदौरान व जयसिंह की कुटिलता का शिकार बनना पड़ा और उसका अजमेर प्रस्थान स्थगित हो गया। इस बीच मे सितम्बर २६, १७२१ ई० को मोहकम सिंह व सार्दूल ने सआदत खां के नायब नीलकण्ठ नागर को एक आक्रमण में पराजित कर दिया और इस मुठभेड मे नागर की मृत्यु[1] हो गई। इस प्रकार निरन्तर मिलती सफलताओं से मोहकम सिंह घमण्ड से फूल उठा। ठीक इसी समय गारू के चौरासिया क्षेत्र की जमीदारी के मालिकाना अधिकार के प्रश्न को लेकर चुलकरन, मोहकम सिंह तथा अन्य भाइयो मे आपस मे झगडा व मारपीट होने लगी। राव चूड़ामन गृह-कलह को नही रोक सका। इससे उसने पुत्रो के कलह से पीडित होकर सितम्बर, १७२१ ई० म आत्मग्लानि के साथ हीरा की कनी खाकर आत्म-हत्या कर ली।[2] १० अक्तूबर को सवाई जयसिंह ने जयसिंह पुरा छावनी से ज्येष्ठ पुत्र व उत्तराधिकारी जुलकरन के पास मातमी का सिरोपाव, चीरा, फेंटा, समरू व दो गज नरमा भेजा,[3] किन्तु जोर-तलब मोहकम सिंह न हूंग पंचायत की नेक-सलाह न नैतिकता की अवहेलना करके सैनिक बल से शीघ्र ही अर्द्ध स्वाधीन काठेड़ जनपद का प्रबन्ध सभाल लिया। इसने काठेड जनपद में एक नवीन संघर्ष का बीजारोपण किया।

सआदत खा का सरक्षण तथा जमीदारी के अधिकार

नीलकण्ठ नागर की हत्या तथा राव चूड़ामन की मृत्यु का समाचार मिलते ही ठाकुर खेमकरन सोगरिया शीघ्र ही दिल्ली से फतहगढी लौट आया। साथ ही

१– शिवदास, पृ० १३६, १४३।
२ – उपरोक्त, पृ० १३६, देखिये, जाटों का नवीन इतिहास, पृ० ३०६–७।
३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३५५।

अक्तूबर २, १७२१ ई० के दिन शाही दरबार से नवाब सम्रादत खाँ को एक फरमान, खासा खिलअत और सरपेच मुरसावारी प्रदान करके मोह्कम सिंह के दमन के लिए दिल्ली से विदाई दी गई। अपने इरादो तथा शूरवीरता में विख्यात राज्यपाल सम्रादत खाँ अक्तूबर के अन्त मे आगरा लौट आया और उसने अपने नायब नीलकंठ नागर की मृत्यु का बदला लेने तथा जोर तलब मोहकम सिंह को बेदखल करने का फौजी उपक्रम बनाया। 'सुजान चरित'[1] से ज्ञात होता है कि ठाकुर रूपसिंह व सम्रादत खाँ मे अच्छी मित्रता थी। राज्यपाल काठेड प्रदेश के जाट जमीदारो के नैतिक समर्थन का आकांक्षी था। प्रारम्भ मे उसने मोहकम सिंह के विरुद्ध फौजी कार्यवाही करने का उपक्रम बनाया और सैनिक भरती भी किए, किन्तु शाही दरबार मे अमीर–उल–उमरा खानदौरान तथा कमरुद्दीन खाँ के नेतृत्व मे राज्यपाल के विरुद्ध खुला षडयन्त्र रचा जा रहा था। सम्राट् स्वय राजधानी के निकट नित्यप्रति बढती अराजकता व लूटमार से काफी खिन्न था। फिर भी अमीरो की कपट–चालो मे फसकर वह राज्यपाल को यथिक सहायता नही दे सका। बदनसिंह कौमी मजलिस तथा सगे–सम्बन्धियो की राय से 'जमीदारी के मालिकाना हक' की माग को नियमित कराने की भावना से एक अनुपेक्षित मित्र की भांति राज्यपाल सम्रादत खाँ के पास आगरा पहुँचा। पारदर्शी राज्यपाल ने साधन हीन जाट को अपने सरक्षण मे रखकर स्वार्थ पिपासा को शान्त करने के लिए जाटो के सहयोग व सद्भावना से मोहकम सिंह के विरुद्ध हथियारो की अपेक्षा कूटनयिक कपट योजना बनाई और उसने जाट कुंवर को ठाकुर रूपसिंह का उत्तराधिकारी स्वीकार करके जमीदारी के अधिकार सौंपते हुए एक हाथी तथा सम्मानीय खिलअत (पोशाक)[2] प्रदान करके काठेड के परगनों पर व्यावहारिक अधिकार कराने का वचन दिया। यह स्थिति देखकर सर्वत्र यह चर्चा होने लगी कि जाटो के दमन के लिए सम्रादत खा के स्थान पर किसी अन्य अमीर की नियुक्ति की जा रही है। भारी ऋण भार से त्रस्त होकर भी सम्रादत खा ने केन्द्रीय सरकार की गतिविधियो का भारी विरोध किया, किन्तु केन्द्र मे अन्य कोई साहसी व साधन सम्पन्न सरदार इस दीर्घ–सघर्षात्मक कमान को सभालने के लिए तैयार नही था। इससे सम्राट् मुहम्मदशाह ने भारी कष्ट के साथ दक्षिणी सूबो के नाजिम नवाब निजामुल्मुल्क तथा अवध के राज्यपाल राजा गिरधर बहादुर के पास फरमान भेजकर लिखा—

"दिवगत चूड़ामन के पुत्र मोहकम सिंह, जुलकरन व अन्यों ने एक बड़ी फौज तैयार कर ली है और वे सभी शाही–राहो, गावो व कस्बो मे लूटमार करने व उपद्रव मचाने मे व्यस्त हैं। उन्होंने नीलकण्ठ नागर को दस सहस्र सवारो की उपस्थिति मे

---

१ – सूदन, पृ० ६७।

२ – शिवदास पृ० १३२, १४०, खाफी खा, जि० २, पृ० ६४४।

भी मार डाला और उसके सभी साज-सामान पर अपना कब्जा कर लिया। खालसा सरीफा (शाही जेब-खर्च) के महालों, मनसबदारों व जागीरदारों के गावों से भू-राजस्व, कर तथा अधिशुल्क संग्रह करना शुरू कर दिया है और शाही-राहों पर यात्रियों तथा व्यापारियों के माल को लूट रहे हैं। ... आशा की जाती है कि आप इन विप्लवियों का दमन करके शान्ति-सुव्यवस्था व प्रशासनिक प्रबन्ध पुनः स्थापित करेंगे।" औरंगाबाद से नवाब निजामुल्मुल्क ने शाही अनुज्ञा पत्र के उत्तर में आशा प्रगट की 'चूड़ामन जाट के पुत्रों का उपद्रव घास की चिनगारी मात्र है। प्रभु की कृपा तथा आपके यशस्वी प्रताप से सभी बिगड़ती स्थितियों पर काबू पाना सम्भव हो सकेगा।"[1]

राजधानी में भी जाटों के दमन की प्रक्रिया काफी तेज थी। सवाई जयसिंह ने खानदौरान से पूर्ण-समर्थन मिलने के आश्वासन के बाद जनवरी १७२२ ई० के प्रारम्भ में अपने माथे पर लगे कलङ्क के टीके को साफ करने के लिए जाटों के विरुद्ध कमान सभांलने की स्वीकृति प्रदान कर दी थी। दरबार में राज्यपाल सम्रादत खाँ के प्रस्ताव पर विचार कर लिया गया था और बदनसिंह के लिए रूपसिंह के प्रबन्ध में शामिल शाही गावों की जमीदारी का प्रबन्ध प्रदान करने की प्रबल सम्भावना थी, तब मोहकम सिंह ने अपना वकील वृन्दावन दिल्ली भेजा और उसने जनवरी ५, १७२२ ई० को जयसिंह से भेंट[2] की। लेकिन अब नवाब निजामुल्मुल्क बुन्देलखण्ड में आ चुका था। १६ जनवरी को वह आगरा और २८ जनवरी को बारापुला पहुँचा। इससे मोहकम सिंह का वकील अपने प्रयासों में सफल नहीं हो सका। २० फरवरी को सम्राट ने एक भव्य दरबार में नवाब निजामुल्मुल्क को वजीर के रिक्त पद पर नियुक्त किया। इससे मुगल साम्राज्य की नीति में भारी फेर बदल होने की सम्भावना बढ़ चुकी थी।

मार्च १, १७२२ ई० को सवाई जयसिंह ने जाट सरदार फतहसिंह के पुत्र के पास चांदसिंह के हाथों सिरोपाव भेजकर काठेड़ के जमीदारों को अपने पक्ष में मिलाने का प्रयास किया। अब सम्राट ने बदन सिंह को काठेड़ जनपद के पैतृक गावों वा तथा अन्य शाही गावों का जमीदार स्वीकार कर लिया था। बुधवार, मार्च १७, १७२२ ई० (चैत्र सुदि प्रतिपदा, स० १७७९/३० जमादि-उल अव्वल, हि० ११३४) के शुभ दिन बदनसिंह ने डीग में विधिवत जमीदारी का बन्दोबस्त संभाल लिया।[3] इस प्रकार बदनसिंह ने राज्यपाल सम्रादत खा के संरक्षण में 'जमीदारी'

---

१ – शिवदास, पृ० १४३, (प्रति फरमान), पृ० १४६ (अर्जदास्त)।
२ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४६२।
३ – ग० ईस्टर्न राज०, पृ० ३०; वीर विनोद, पृ० १६४३।

का बन्दोबस्त अवश्य प्राप्त कर लिया था, लेकिन उसकी सैनिक भागदौड़ नवयुवक बदनसिंह को अधिक समय तक म्यान में नहीं रख सकी। स्पष्टतः मोहकम सिंह इस वैधानिक अधिकार को स्वीकार नहीं कर सका। खुले गृह संघर्ष की आशंका से भयभीत होकर उसने अपने अविवेकी अदूरदर्शी सलाहकारों की राय से अपने प्रतिस्पर्धी भ्राता बदन सिंह को सैनिक दस्तों की मदद से घेर लिया और अपनी गिरफ्त में लेकर थोह के प्राचीन मुगलिया कारागार में अति कठोर नियन्त्रण व कड़ी निगरानी में रखा।[1] किसी भी व्यक्ति या परिवार के सदस्यों को भी उससे नहीं मिलने दिया गया। कारागार की कठिनतम यातना तथा कष्टों के बीच में मात्र एक ईश-विनय तथा सच्ची आराधना ही बदन सिंह का सहारा थी।

कुटुम्बी-जन के साथ मोहकम सिंह की इस अन्यायिक कार्यवाही तथा ताना-शाही से जातीय संगठन में बदनसिंह का पक्ष अधिक सबल हो गया था। मुगल अमीरों, मनसबदारों, जागीरदारों तथा सवाई जयसिंह के गुमास्तों ने बदनसिंह के पक्ष में जाट जमींदारों की भावनाओं को उभारकर कौमी एकता को विभाजित करने का सफल प्रयास किया। इससे जाट कबीलों के दो घटक स्वतः आमने-सामने आकर आपस में वाद-विवाद करने लगे।

बदनसिंह की रिहाई और चौधरी रतीराम का सहयोग

अब जाट जमींदारों ने आपस में मिलकर इस समस्या पर विचार किया और बाईस जमींदारों की पंचायत ने मोहकम सिंह पर बदनसिंह को कारागार से मुक्त करने का सामूहिक तथा व्यक्तिगत दबाव डाला, फिर भी उसने उनकी प्रार्थना व सुझाव को ठुकराकर कड़ा रुख अपनाया। फलतः मोहकम सिंह के विरुद्ध जन आक्रोश भड़क उठा और इसने असहयोग जन आन्दोलन का रूप धारण कर लिया। मोहकम सिंह का आध्यात्मिक गुरु महन्त माखनदास बैरागी था। डूंग व पाल जमींदारों तथा रैय्यत ने बदनसिंह को कारागार से मुक्त करवाने के लिए उस पर भारी दबाव डाला। जन आन्दोलन, जन आक्रोश की उमड़ती लहर को देखकर महन्त माखनदास ने मोहकम सिंह को बदनसिंह के लिए मुक्त करने की प्रभावी सलाह देकर जाट एकता की रक्षा का प्रयास किया। कहा जाता है कि इसी समय मोहकम सिंह ने किसी प्रीतिभोज में शामिल होने के लिए अपनी बिरादरी को निमन्त्रण दिया, किन्तु बिरादरी ने उसको सामूहिक बहिष्कार की कड़ी चेतावनी देकर बदनसिंह को मुक्त करने का दबाव डाला। फलतः मोहकम सिंह ने अपने गुरु से कहा, "मुझमें आपकी आज्ञा का उलंघन करने की क्षमता नहीं। प्रतीत होता है कि अब आप वास्तव में काठेड़ प्रान्त की जमींदारी का भार बदनसिंह को सौंपना चाहते हैं।"[2] इस प्रकार संयुक्त प्रयास

१ – सोम, पृ० ६; ग्र. बलदेव सिंह, पृ० १९; बाक्या राज०; जि० २, पृ० ४७।

के बाद ही बदनसिंह को कारागार से मुक्ति मिल सकी और अब वह वास्तव में जन जन का नेता बन गया था।

बदनसिंह ने शीघ्र ही सपरिवार डीग काठेड जनपद से बाहर भुसावर के दक्षिण-पूर्व मे दस किमी० पहाड व जगलो के चक्र में आबाद जहाज ग्राम मे अपना पडाव डाला। यहां पर तरगवां ग्राम के प्रभावशाली जाट जमीदार रतीराम नाहरवार से उनका सम्पर्क बढ गया था। रतीराम सवाई जयसिंह का इजारेदार सरदार था। उसने बदनसिंह का अति नम्र, उदार तथा सद्भावी वातावरण मे स्वागत सत्कार किया और सहयोग प्राप्त करने की सलाह दी। कुछ ही दिनो मे दोनो जाट सरदारो मे अभिन्न मित्रता हो गई। रतीराम ने अपनी सुयोग्य विदुषी पुत्री हसिया की सगाई चतुर तथा भावी जाट राज्य निर्माता कुवर सूरजमल के साथ करके 'दाम्पत्य सूत्र बन्धन' सिद्धान्त की पवित्रता को साकार बनाने का प्रयास किया। इस समय सूरजमल की आयु लगभग चौदह वर्ष थी। इस पारिवारिक आत्मीयता ने बदनसिंह तथा जाट समाज के राजनैतिक उत्कर्ष, आर्थिक विकास व प्रगति तथा भाग्य नक्षत्रो को प्रदीप्त करने मे अति सहायता की और रतीराम ने जयसिंह के दरबार मे बदनसिंह की ईमानदारी व सचाई का पक्ष प्रस्तुत करके एक सद्भावी वातावरण बनाया। बदनसिंह ने अपनी प्रार्थना में सवाई जयसिंह से एक बार पुन. थून गढी पर आक्रमण करने, जातीय पचायत के अवैधानिक प्रतिनिधि को काठेड जनपद की जमीदारी से बेदखल करने का विनम्र आग्रह किया। उसने इस कार्य मे यथासम्भव, यथासाध्य सामयिक नैतिक सहायता प्रदान करने का भी आश्वासन दिया।[1]

बुन्देलखण्ड के नरेशो ने महाराजा जयसिंह के आग्रह पर सघर्ष को समाप्त कर दिया था और अनेको शासक नवाब निजामुलमुल्क के साथ सैनिक टुकडियो सहित दिल्ली पहुँच गए थे। नवाब निजामुलमुल्क की वजीर पद पर विधिवत नियुक्ति के

---

१ – द्रष्टव्य, जाटों का नवीन इतिहास, पृ० ३१०–१; जाट मुगल सघर्ष, पृ० २३३, बदन सिंह–दी फाउन्डर ऑफ भरतपुर स्टेट, रा० हि० रि० ज०, वर्ष ४, अक २, अप्रैल-जून, १९६९, पृ० ३०–३१, कागजात बल्लभगढ जागीर (लेखक सग्रह)। —एक दिन अवसर मिलने पर बदनसिंह ने महाराजा से कहा, 'सभी बड़े-बड़े राजा आपके आज्ञा पालक हैं। मोहकम सिंह का खजाना शाही–राहों की लूट से सचित है। वह अभिमान के साथ अपनी गढ़ी–थून मे रहता है। अपनी स्वतन्त्र सत्ता के लिए उसने सैनिको की भरती कर ली है। अब विद्रोही को कुचलने का समय आ गया है। यदि आप अपनी सेना को थून गढी को बरबाद करने तथा मोहकम सिंह को मारने की आज्ञा दे दें, तो आपका ब्रजमण्डल पर आसानी से शासन हो सकता है।'' (जॉन कोहन, पृ० १६ व १७ अ)।

(अ)द मार्च, १७२२ ई० मे महाराजा अजीतसिंह राठौड ने सम्राट से क्षमा याचना (म)ाग ली थी और वह ससैन्य अजमेर से जोधपुर लौट गया था।[1] इससे केन्द्रीय (स)रकार राजपूतो के संघर्ष से मुक्त हो चुकी थी। अब एक मात्र जाट विद्रोही शेष था। (स)वाई जयसिंह स्वयं केन्द्रीय दरबार में यश, सम्मान व प्रतिष्ठा अर्जित करने के लिए (ला)लायित था। वह शाही दरबार में भारतीय हिन्दू शक्तियों का यथार्थ प्रतिनिधि व (प्र)वक्ता बनने का प्रयास कर रहा था। अत उसने बदनसिंह क 'नैतिक समर्थन' का प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर लिया था। सम्राट मुहम्मद शाह ने वजीर तथा मीरबख्शी खानदौरान के परामर्श पर अप्रैल १९, १७२२ ई० के दिन सवाई जयसिंह कछवाहा को मोहकम सिंह विरोधी अभियान के लिए नियुक्त[2] किया, लेकिन जब तक उसको आगरा प्रान्त का राज्यपाल पद तथा मथुरा, वस्तुत ब्रजमण्डल, की फौजदारी का फरमान नही मिल सका, तब तक उसने दिल्ली से प्रस्थान करना अनुचित समझा।

६–द्वितीय थून अभियान मे बदन सिंह की कर्तव्य परायणता, १७२२ ई०

जाटो के विरुद्ध दूसरी बार अभियान की कमान सभालने के लिए सम्राट तथा केन्द्रीय सरकार के मन्त्रियो ने सवाई जयसिंह के लिए मई १२, १७२२ को परगना भानगढ (जिला अलवर) व अमरसर म अनेक अच्छी जमा की सम्पन्न जागीरें, परगना खोहरी मे दिवगत राव चूडामन के प्रबन्ध म शामिल एक करोड दाम (२,५०,००० रुपया) जमा की जागीरें, २९ मई को सआदत खा की जागीर मे शामिल परगना हिण्डौन तथा टोड़ा भीम की फौजदारी स्थानान्तरित कर दी थी।[3] ५ जून को जयसिंह ने जयसिंह पुरा (दिल्ली) से ठाकुर खेमकरन सोगरिया तथा उसके पुत्र धर्मसिंह को, २४ जून को बदनसिंह व ठाकुर तुलाराम, दोनो सिनसिनवार जाट सरदारो, क लिए जमीदारी का सिरोपाव, २६ जून को बदनसिंह के लिए तेरह नगो के साथ एक घोडा भेजकर सम्मानित किया।[4]

सैय्यद गुलाम हुसैन[5] का मत है कि सवाई जयसिंह ने बदनसिंह के लिए राव चूडामन की वतन जागीर तथा जमीदारी का बन्दोबस्त सौंपने के लिए शाही दरबार

---

१ – शिवदास, पृ० १४७–८, खाफी खा, भाग २, पृ० ९३८, सियार, भाग १, पृ० २३१, ड्राफ्ट खरीता व परवाना (बुन्देलखण्ड के शासकों के नाम)।

२ – फरमान (कपड द्वारा), स० १५७, इर्विन, भाग २, पृ० १२०–१।

३ – फरमान (कपड द्वारा), स० ९३|१३१, परवाना (कपड द्वारा), स० १४०/२९९, १५७/९०।

४ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३३६, ४१९, ४३३, ३८७।

५ – सियार, भाग १, पृ० २१९।

से अनुज्ञा-पत्र प्रदान करने का आश्वासन भी प्राप्त कर लिया था। अन्त में निश्चित निर्णय के बाद २६ अगस्त को उसे शाही लदकर तथा जगी-जिसी तोपखाना के साथ जाटो के विरुद्ध कूच करने का निर्देश दिया गया। इसी समय सम्रादत खां स्वयं दिल्ली पहुंच गया था। अतः एक सितम्बर (२१ जिल्काद) को जयसिंह के लिए चौदह लाख वार्षिक जमा के प्रान्त आगरा का राज्यपाल पद, जिला मथुरा की फौज दारी तथा काठेड जनपद निजी जागीर मे प्रदान किया गया। उसको इनाम मे एक लाख रुपया (चालीस लाख दाम) नकद दिया गया तथा फौजी व्यय के लिए शाही खजाने से दो लाख रुपया भुगतान का आग्रह स्वीकार किया गया।[1] ४ सितम्बर को जयसिंह ने राजा अयामल खत्री को आगरा प्रान्त मे अपना नायब नियुक्त[2] करके अग्रगामी सैनिक दस्तो के साथ रवाना किया। ८ सितम्बर के दिन महाराजा को दिल्ली से अन्तिम रूप से कूंच करने की विदाई दी गई। इस बार सैय्यद मुजफ्फर खा को आगरा का नायब राज्यपाल तथा सहायक सेनापति का भार सौंपा गया। इस प्रकार सवाई जयसिंह ने पैंसठ सहस्र सुदृढ़ सेना, शाही जगी-जिन्सी तोपखाना तथा रणयोद्धा विशारदो के साथ दूसरी बार थून की ओर प्रस्थान किया।

बदनसिंह जयसिंह की भेंट तथा थून का घेरा

मोहकम सिंह न अपने सहोदर भ्राताओ, सहयोगियो, नातेदारो की सहायता से बीहडो से सुरक्षित थून तथा आसपास की कुछ गढियो को सैनिको व हथियारो से सुरक्षित कर लिया था। लेकिन इस बार सवाई जयसिंह ने राज्यपाल की हैसियत से पूर्णत भिन्न परिस्थितियो तथा अनुकूल राजनैतिक वातावरण मे भारी उत्साह व उमंग के साथ काठेड की ओर प्रस्थान किया था। केवल साम्राज्यवादी सेनापति तथा मुगल फौजो ने ही मोहकमसिंह के विरुद्ध कूच नही किया था, बल्कि 'एक तानाशाह *जाट के विरुद्ध नम्र व सद्भावी जातीय सगठन तथा भाई के विरुद्ध भाई'* था। 'जाट कूं जाट मारे या मारे करतार' कहावत के अनुसार नि सन्देह अधिनायकवाद, एकाधिकार, पारिवारिक अन्याय स्वार्थपरता के विरुद्ध एक सुदृढ कौमी सगठन बन चुका था और यह जन जागृति, शीत सघर्ष का अन्तिम परिणाम था, जिसने समाज मे साहस व कर्मठता को बल दिया था। बदनसिंह की कर्तव्यनिष्ठा से सवाई जयसिंह के लिए जाट डूग पाल जमीदार सघ, अन्यान्य क्षेत्रीय जातियों, सर्वहारा मजदूर-किसानो की हार्दिक सहानुभूति, नैतिक समर्थन मिल चुका था। परिणामत बिना किसी गतिरोध-प्रतिरोध, अडचन के साम्राज्यवादी सेनायें काठेड जनपद मे प्रवेश करके थून के समीप

---

१ – फरमान (कपड द्वारा) स० १६०, २७/३६ अ, इमाद, पृ० ७, कॅमवर, जि० २, पृ० ३७८ अ-ब, खाफी खा, भाग २, पृ० ६४४, इ० डा०, खण्ड ८, पृ० १७३, ३६१।

२ – द० कौ०, जि० ३, पृ० ४८६।

तक पहुँच गई और उन्होने क्षेत्रीय जनता की सहायता से सितम्बर, १७२२ ई० मे थून की बाहरी गढ़ियो का घेरा[1] डाल दिया था।

सितम्बर १४, १७२२ ई० (भाद्रपद सुदि ५, सं० १७७९) को बदनसिंह की ओर से दो वकीलो, रूपराम कटारा व पण्डित चिन्तामणि, ने जयसिंह की छावनी मे पहुँच कर आपसी शर्तों पर बातचीत की। फिर २८ सितम्बर को ठाकुर तुलाराम जयसिंह के हजूर मे पहुँचा। सवाई जयसिंह ने नवोदित जाट सरदार बदनसिंह को काठेड जनपद का वास्तविक जमींदार तथा शाही-प्रबन्धक स्वीकार करते हुए उसकी मित्रता व सहयोग से लाभ उठाने का आश्वासन देकर तुलाराम को रस्मी सिरोपाव तथा पाच घोडा मय साज प्रदान किये। इस प्रकार जयसिंह रतीराम नाहरवार, ठाकुर तुलाराम तथा जाट वकीलों की मध्यस्थता से अपनी नीति मे पूर्णतः सफल रहा। एक अक्तूबर को उसने स्वयं शाही फौज, शाही सेनानायको तथा तोपखाना पंक्ति के साथ थून गढ़ी की ओर प्रस्थान किया, तब उसने डीग गढ़ी के समीप पडाव डालकर बदनसिंह के लिए फीलखाना से महोलत व अन्य साज-सामान से सुसज्जित मिठवा नामक एक हाथी भेजा। फिर ३ अक्तूबर को बदनसिंह स्वय डीग गढी से चलकर उसके डेरो पर पहुँचा। इस प्रकार दस्तूर कौमवार[2] मे हमको प्रथम बार जयसिंह कछवाहा तथा बदनसिंह की भेंट वार्ता का निम्न विवरण मिलता है—

"अक्तूबर ३, १७२२ ई० (आसोज वदि १०, स० १७७९) के दिन बदनसिंह डीग की गढ़ी से छावनी में आया, तब उसको तीन थानो का जरी का सिरोपाव प्रदान किया गया। उसके हजूर मे आने पर एक खंजर मुरसाकारी, एक धुगधुगी तिला मुरसाकारी बख्शीश की गई। फिर ४ अक्तूबर (एकादशी) को बदनसिंह ड्योढ़ी खास पर आया, जहा नायब अयामल खत्री, ठाकुर दीपसिंह, ठाकुर मोहनसिंह नाथावत, ठाकुर बुधसिंह ने आगे बढकर अगवानी की और ससम्मान उसको अपने साथ अन्दर दीवान खाना मे लेकर आये। पीछे महाराजा ने अन्दर से दीवानखाने मे प्रवेश किया। तब बदनसिंह ने उसकी कदम पोशी[3] की व एक घोडा मय साज तिलाई, एक घोडा तुमरा नजर किया और उस तुच्छ भेंट को स्वीकार करने का आग्रह किया।

१—कॅमवर, पृ० ३७९ अ।

२—द० कौ०, जि० ७, पृ० ४६०, ४११, ३८८, ४३३, ४३६।

३—कवि सोभनाथ लिखता है कि, "बदन सिंह ने जयसिंह के पैरों मे पडकर अपने आपको कछवाहों का चाकर (सेवक) उद्घोषित किया।" (पृ० ३ ब); वास्तव मे बदन सिंह ने भारतीय परम्परा तथा शाही दरबारी सिद्धान्त के अनुरूप नतमस्तक होकर प्रणाम किया था और शिष्टतापूर्वक अपने आपको 'कछवाहों का सेवक' कहकर नम्रता व उदारता के भाव प्रगट किये थे।

महाराजा ने कहा कि आपको ही बख्शीश किया। इस पर बदनसिंह ने निवेदन किया कि यदि श्री जी (आप) मुझे रजामन्द करना, खुशविस्मत देखना चाहते हैं तो इस तुच्छ नजर को स्वीकार करके अनुग्रहीत करें। तब महाराजा ने नजर को स्वीकार करके खातिरदारी रखने की आज्ञा दी। फिर उसको अपने ही समीप बिठला कर सम्मानित किया।" संभवतः इस समय दोनो मे अति गोपनीय समझौता की शर्तों पर बातचीत हुई होगी; किन्तु समझौता व शर्तों का अनुबन्ध अभी तक अप्रकाश्य है। ५ अक्तूबर को ठाकुर तुलाराम, असालत जाट, भुमानीराम, घासीराम, चूड़ामणि व रतनसिंह पाच जमीदारों के साथ हुजूर मे आया। जयसिंह ने पाचों जमीदारो को एक-एक घोडा मय पांच नग साज व सरोपाव प्रदान किया और ८ अक्तूबर (आसोज वदि १४) को शस्त्रागार से एक तलवार व कड़ी सहित एक ढाल गिरदा प्रदान की।[1]

१८ अक्तूबर को दशहरा का सांस्कृतिक पर्व मनाने के बाद भारतीय परपरागत जयसिंह ने थून गढो के नियमित घेरा का संचालन किया। २२ अक्तूबर को सूरजमल भी सात जमीदारो व प्रतिष्ठित व्यक्तियों, अणदराम, कीरमाराम (मामा सूरजमल, कामर), महीरावन, फौजदार देवकरण, के साथ जयसिंह के डेरो पर पहुँचा। इनके साथ मे जाट वकील चिन्तामणि भी मौजूद था। जयसिंह ने बदनसिंह को शाही अधिकार सौंपने तथा कौमी मजलिस की सरदारी प्रदान करने के आश्वासनों पर नियमित रूप से अपने सरक्षण मे रखने का सफल प्रयास किया और इसी दिन रुपया ५३५३/- मूल्य का मोती के नाका की जोडी प्रदान की। सूरजमल को सिरोपाव सहित एक जडाऊ सरपेच व प्रत्येक जमीदार को सिरोपाव देकर सम्मानित किया।[2]

सवाई जयसिंह ने फौजी नियमो का पालन करते हुए सुचारु रूप से थून की ओर प्रस्थान किया। शाही सेनाओ ने इमसे पूर्व ही बाहरी गढियों का मुस्तैदी के साथ पडाव डाल दिया था, किन्तु उनको अधिकार करने में सफलता नही मिल सकी। जयसिंह ने बाहरी गढ़ियो को पूर्णतः बन्द करके तीन सप्ताहों मे ० १० किमी० तक बीहड जगलो को साफ कराकर खुले मार्ग बनवाने का प्रयास किया। लडाकू छापामार जाटो ने शाही बेलदारों तथा तोपखाना पक्ति पर अनेक बार हमले भी किए। लेकिन वे अपने प्रयासो मे विफल रहे। बाहरी गढियों पर अधिकार किये बगैर शाही सेना नायक थून पर व्यवस्थित आक्रमण नही कर सकते थे। तब बदनसिंह ने मोहकमसिंह के सहयोगी जमीदार तथा नियमित सेना के जमादारो को धन-धरती

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३१७, ३४०, ३४३, ३४६, ४९७, ४३६।

२ – उपरोक्त, पृ० ५३६, ३०६, ३२६, ४६३, ४५०, ४६०, ६१५, ३६४, ४३६।

तथा अपनी सेवा में रखने का आश्वासन देकर निष्क्रिय[1] कर दिया। इस प्रकार रक्त प्लावन या फौजी संघर्ष की अपेक्षा जाटों के नैतिक समर्थन से शाही सेनानायकों ने डेढ़ माह के बाद अक्तूबर के तृतीय सप्ताह में दो-तीन बाहरी गढ़ियों पर अधिकार कर लिया।[2] २५ अक्तूबर को सवाई जयसिंह ने शीघ्र ही थून गढ़ी के समर्पण की आशा व्यक्त की। इसी समय दिल्ली से गढ़ विध्वंसक एक विशाल तोप, एक हजार रहकला, तीन सौ बान, पांच सौ मन सीसा तथा बारूद भेजने की मांग की गई।[3] २६ अक्तूबर को चुलकरन का वकील टेकचन्द जयसिंह के हुजूर में पहुँचा और इसी दिन अमरा ब्राह्मण जाटों की ओर से एक हाथी नजर करने पहुँचा। ३० अक्तूबर को अणीराम और ४ नवम्बर को जाट वकील चिन्तामणि ने कछवाहा छावनी में पहुँचकर बातचीत की।[4] इसी समय शाही दरबार से जयसिंह के लिए अवैधानिक शत्रु को जीवित ही गिरफ्तार करने तथा थून पर अधिकार करने में बदनसिंह की सेवाओं का भरपूर उपयोग करने का निर्देश दिया गया। सम्राट ने जयसिंह को घातक आक्रमण की युद्ध-प्रक्रिया अपनाने के लिए प्रदर्शक के माध्यम से जाटों की युद्ध-प्रणाली का पता लगाने का भी निर्देश दिया। साथ ही यह भी लिखा गया कि यदि शत्रु शाही क्षमा की प्रार्थना करे तो सम्राट स्वयं खान मुजफ्फर खां व अन्य अमीरों के साथ वहां पहुँच सकता है।[5]

मोहकमसिंह ने भारी विरोध के बाद भी अपनी निर्भीकता, निडरता से साहसपूर्वक जमकर सामना किया। उसने वास्तव में राठौड़ों की सहायता प्राप्त करने के लिए अपना दूत जोधपुर दरबार में भेज दिया था। तीन लाख रुपया भुगतान तथा फौजी खर्च की शर्त पर महाराजा अजीत सिंह राठौड़ ने जाटों की सहायता के लिए विजयराम भण्डारी की कमान में सेना रवाना कर दी थी। ६ नवम्बर को बदनसिंह का दीवान किरपाराम गूजर शाही डेरों पर पहुँचा। ७ नवम्बर को दीपावली का महान सांस्कृतिक पर्व था। बदनसिंह ने अपने प्रयासों से देशवार पाल पचायत के जमींदारों को भी तोड़ लिया था। फलत. ८ नवम्बर को जगता (साबोरा) जगरूप, मसाराम व सूरतराम (भदीरा), सुन्दर (कैलूरी), दुरगभाण

---

१ – जॉन कोहन, पृ० १७ अ।

२ – इस विजय का समाचार शाही दरबार में २१ अक्तूबर को पहुचा था। खरीता, वाकया पत्र, २५ अक्तूबर, खाफी खां, भाग २, पृ० १३७, मा० उमरा, (हि०), भाग १, पृ० १२७, जाटों का नवीन इतिहास, पृ० ३१५-१६।

३ – वाकया पत्र, इर्विन, भाग २, पृ० १२३।

४ – व० को०, जि० ७, पृ० ३५६, ३०६, ४५१।

५ – खरीता (कपड द्वारा), स० १७६ स/११७, कॅमवर, पृ० २५४।

(ऐचेरा), पतराम तथा पीताम्बर, वालखू, बीलका ग्रादि ने जयसिंह की ग्रधीनता स्वीकार कर ली। १० नवम्बर को सूरजमल के लिए विदाई का सिरोपाव ग्रौर बदनसिंह के माध्मम से ग्रणीराम के पास एक घोडा भेजा गया। १४ नवम्बर को तुलाराम का भ्राता राजाराम भी जयसिंह के दरबार मे पहुँच गया था।[१] इस प्रकार प्राय ग्रधिकाश पाल जमीदारो ने जयसिंह की ग्रधीनता स्वीकार कर ली थी ग्रौर मोहकम सिंह ग्रलग-थलग पड गया था।

निर्जन गढी पर ग्रधिकार, १७/१८ नवम्वर, १७२२ ई०

दीर्घ सघर्ष या सैनिक बल प्रयोग की ग्रपेक्षा शाही सेनापति को विश्वास घात, कूट तथा कपट व्यवहार से इस बार विजय मिल सकी। द्रुत निर्णय के लिए ही बदनसिंह ने थून गढी के कमजोर स्थानो का भेद दे दिया था। इससे शाही सेनापति १५ नवम्बर को व्यवस्थित रूप से पूर्ण घेरा डालने में सफल रहा ग्रौर उसने गढी के मजबूत द्वारो पर ग्रधिकार कर लिया। निजी जमादारों के विश्वासघात की सूचना मिलते ही मोहकम सिंह ने गढी मे विस्फोटक बारूदी सुरगें लगवा दी थी ग्रौर १७-१८ नवम्बर की रात्रि मे उसने ग्रसहाय होकर बारूदी सुरगों में ग्राग लगवा दी। स्वय सचित कोप तथा परिवार के सकुशल गढी से निकलकर मार्ग मे ग्रा रही राठोडी सेना की सुरक्षा मे साभर पहुँच गया।

यह बदनसिंह के महान त्याग, कर्तव्य परायणता, धर्मनिष्ठा तथा वचन-बद्धता की घडी थी। बदनसिंह के परिश्रम तथा सत्परामर्श से जयसिंह कछवाहा पुन. महान विनाश तथा भीष्ण सकट से बच गया। हरकारो से पलायन का समाचार मिलते ही नवम्बर १८, १७२२ ई० को प्रात.काल विजयोन्मत कछवाहा नरेश ग्रपनी सेनाग्रो के साथ सवार होकर विजय-नाद के साथ मैदान में ग्रागे बढा। उसी समय बदनसिंह ने जयसिंह तथा उसकी फौजो को शीघ्र ही पीछे हटने का ग्राग्रह करके भयकर नर-सहार से बचा लिया। कुछ ही घडियो म बारूदी सुरगो से पर-कोटा उड गया। सवाई जयसिंह ने बदनसिंह की सामयिक सहायता, चातुर्य तथा लग्न शीलता की भूरि-भूरि प्रशसा की ग्रौर जीवन-रक्षा के लिए कृतज्ञता प्रगट की। इससे बदनसिंह ने कछवाहा नरेश का ग्रसीम प्रेम ग्रात्म विश्वास प्राप्त कर लिया था। इस प्रकार शाही सेनापति ने बदनसिंह की सत्प्रेरणा से साधारण प्रतिरोघ से वीरान गढी मे प्रवेश करके ग्रपने पूर्वजो के कलक को मिटाया।[२]

---

१ – ग्रर्जदास्त, स० ४५३/२५१, द० कौ०, जि० ७, पृ० ४४६, ३५४, ३६३, ४१६, ४७१-२, ५३६।

२ – खाफी खा, भाग २, पृ० ६४४, द्रष्टव्य – जाट मुगल सघर्ष, पृ० २३४, जाटों का नवीन इतिहास, पृ० ३१६-८।

१९ नवम्बर को जयसिंह ने विजयोत्सव के बाद बादशाही सेवक नवाब ारब अली खा इज्जत अली खा, नवाब इरादत मद खा तथा उसके वख्शी माबिद ा आदि अनेको अमीर–उमरावों को उनके पद व सम्मान के अनुरूप सिरोपाव, ेरा, घोडा आदि आदि वस्तुयें देकर थून से विदा किया और २० नवम्बर को ादशाही अमीर नवाब आजम खाँ को पच परिधान व सिरोपाव देकर थून विजय ा समाचार उसकी कुञ्जियो के साथ दिल्ली भेजा। इसी समय वकील जगराम ने वजित गढियो की सात चाबिया विजय–पत्र के साथ सम्राट की सेवा मे प्रस्तुत की और पाच सौ मोहर नजर की। उसको एक खिलअत प्रदान की गई और शत्रु का ीछा करके उसकी जडो को उखाडने का आदेश दिया।[1] २० नवम्बर को जाट वकील चिन्तामणि के साथ जाट जमीदार अनोपसिंह, प्रसालत जाट, चूडामणि (मगो-१), हरीसिंह, हरलाल, चौधरी छत्रमणि का पुत्र, चौधरी बालकराम ने जयसिंह के हुजूर में प्रस्तुत होकर अपनी बधाइयाँ प्रस्तुत की और उन्होने पैमाली भुगतान का आश्वासन दिया। इसी दिन रामचेरा (राम की चाहर) भी उसकी छावनी म पहुँच गया।[2] इस प्रकार काठेड जनपद पर सम्राट का व्यावहारिक अधिकार हो गया था।

७–जाट राज्य की वैधानिक स्थापना, दिसम्बर २, १७२२ ई०

(अ) ऐतिहासिक पचायत सम्मेलन

मुगल सम्राट मुहम्मदशाह तथा अमीर–उमराव यद्यपि राजधानी के समीप एक स्वाधीन जाट राष्ट्र की इकाई को नैतिक रूप मे स्वीकार नही कर सक्ते थे, फिर भी कुछ अमीर-उमराव, मनसबदार व जागीरदार जाटो को अपनी शक्ति के प्रसार व प्रभुत्व क लिए उपयोगी साधन मानकर ऐन–केन प्रकारेण प्रश्रय देने के पक्षपाती थे। मोहकमसिंह केन्द्रीय सरकार से वैधानिक अधिकार व जमीदारी का नवीनीकरण कराने मे विफल रहा। फलत काठेड जनपद में अर्द्ध–विकसित या अर्द्ध स्वाधीन जाट राज्य के विकास तथा विस्तार का अन्त हो गया। काठेड जनपद की रैय्यत, मजदूर किसान, जाट पचायत अपनी सुरक्षा, सामाजिक एकता आर्थिक विकास, स्वाधीनता, धम तथा सस्कृति की रक्षा के प्रति पूर्णत सजग व जागरुक थी। नेत्रो मे मातृभूमि की चमक, वाणी में देश प्रेम के गीत और दिल दिमाग मे सगठित जाट राज्य की भावना उभर रही थी। वे आशावादी थ। जाट जमीदारो के सयुक्त गुरिल्ला युद्धों, मानव कल्याण, समाज व संस्कृति की रक्षा के लिए किये

१–द० कौ०, जि० १८, पृ० ५६३, ७०६, ७५०, ७५६, खरीता (कपड द्वारा) स० १८५/१०२, कॅमबर पृ० ३७६ ब।

२–द० कौ०, जि० ७, पृ० ३११–२, ३४६, ६१३–४, ४५३, जि० १, पृ० ६०६, ६२७।

गये क्रान्तिकारी आन्दोलनो ने शान्तिपूर्ण नवीन स्थाई क्रान्ति तथा ब्रज मण्डल मे सास्कृतिक तथा धार्मिक विकास का निश्चित मार्ग खोल दिया था, जिसका प्रारम्भिक रूप प्रगट होने लगा था और स्वतन्त्र जाट राज्य के स्थापना की निहित भावना को साकार रूप मिला।

थून गढी को धूल-धूसरित करने के बाद सवाई जयसिह ने डीग के समीप अचलपुरा, किसनपुरा नामक ग्रामो के बीच प्रागण मे लगे भव्य व शालीन कछवाहा शिविर मे मिनसिनवार पचायत के पच भाइयो के समक्ष बदनसिह की सद्भावना, स्नेह, आत्मीयता तथा राजभक्ति को पुरस्कृत किया और बाठेड जनपद की कौमी पचायत, डू ग पाल जमीदारो की तात्कालिक सन्तुष्टि तथा अपने पूर्व वचनों की पालना मे शुक्रवार, दिसम्बर २, १७२२ (मार्गशीर्ष वदि एकादशी, स० १७७६/२४ सफर, हि० ११३५) के दिन शुभ मुहूर्त मे एक अति सूक्ष्म दरबार मे बदनसिह के सिर पर सरदारी की पाग बाधी। राजाओ की भाति तिलक किया और ५च परिधानो के साथ पचरगी निशान सौंपकर ठाकुर [1] पद से सम्मानित किया। इसी समय

१—कॅमवर पृ० २४६, सियार, भाग १, पृ० २१६, मा० उमरा, जि० १, पृ०१२७—८, बलदेव सिह, पृ० १६, ग्राउज, पृ०२३, इर्विन, भाग २, पृ०११३, २१३, कानूनगो, पृ० ५६, सतीश, पृ० १७८।

—सल्तनत तथा मुगल शासन काल में देशी रजवाडों को वतन जागीर का बन्दोबस्त, शान्ति सुरक्षा, ग्राम तथा समाज के विकास, समृद्धि, उत्पादन, सांस्कृतिक प्रगति आदि के लिए 'ठाकुर' एक जिम्मेदार पद था। ठाकुर पूर्णत राजा का खिदमती चाकर (सेवक) होता था और उसकी कृपा पर्यन्त प्रशास निक अधिकारी मात्र था। प्राय' यह पद पैतृक था। ठाकुर का केन्द्रीय सरकार, केन्द्रीय सत्ता तथा राजनीति मे किसी भी प्रकार का सीधा सम्बन्ध नहीं होता था और न 'माल-ओ-सायर-ओ-जकात' (भू-राजस्व कर व अधिशुल्क) की 'हासिल वसूली' के प्रति उत्तरदायी होता था। राजपूत राज्यो के प्रत्येक राजकीय परवाना व पट्टो मे ठाकुर का नाम शामिल किया जाता था। इस प्रकार ठाकुर शासन-व्यवस्था मे सयुक्त उत्तरदायी अधिकारी था। (कोटा राज्य का इतिहास, खण्ड प्रथम, पृ० १३७, १८७) मुगल शासन काल मे राजपूत जागीरदार या सामन्त 'ठाकुर या राव' कहलाते थे और राजा तथा सरकार के प्रति उत्तरदायी रहकर भी अपनी वतन जागीर की आन्तरिक व्यवस्था के लिए स्वतन्त्र प्रबन्धक थे। वे अपनी स्थिति के अनुरूप नाना विशेषाधिकारो व सम्मानों का उपभोग करते थे। राज्य की गृह व विदेश नीति को भी प्रभावित करते थे। अधिकाश ठाकुर किसी खाप, कुल या वश के नेता※

उसको सदर-ए-कोतवाली के अधिकार[1] सौंपे गये। विदाई के समय तीन वस्त्रो का रस्मी सिरोपाव तथा अन्य पच विरादरी-भाइयो को भी तीन थानो का सिरोपाव प्रदान किया गया। एक माह के बाद जनवरी ६, १७२३ को जयसिंह ने बदनसिंह के माध्यम से किशोरसिंह के लिए सिरोपाव भेजा।[2] मीर मुरतिजा हुसैन बिलग्रामी के अनुसार इस समय बदनसिंह ने उससे माग की—"सैय्यद हुसैनअली ने राव चूडामन को 'राजा' की उपाधि प्रदान करने का वचन दिया था। इस वचन-पालना का उचित अवसर आ गया है।" जयसिंह ने बदनसिंह के लिए अन्य डूंग व पाल जमीदारो को सतुष्ट करने के लिए यह वचन दिया कि मै आपको बादशाह से 'राजा' का विरद प्रदान कराने का भरसक प्रयत्न करूगा।[3] इस प्रकार जयसिंह ने बदनसिंह को सन्तुष्ट रखने का प्रयास किया। बाद मे कछवाहा राज्य के कुलीन सामन्तो की भाति बदनसिंह को जयपुर नगर के समीप लक्ष्मण डूंगरी की उपत्यका म भूमि आवटित की गई। यहा पर बदनसिंह ने निजी निवास के लिए एक विशाल हवेली, अति रमणीय पक्का बाग, सैनिक आवास बनवाये और अपने नाम पर बदनपुरा बस्ती बसाई।[4] कछवाहा राजधानी मे बदनपुरा जाट शासक तथा वकील (प्रतिनिधि) का निवास तथा जाटो की सैनिक छावनी थी, जहा बदनसिंह तथा उसका परिवार जाकर ठहरता था।

(व) काठेड जनपद का स्थायी प्रबन्ध

समकालीन इतिहासकार रुस्तम अली खाँ के शब्दो में—"इस प्रकार सर्व प्रथम सवाई जयसिंह की अनुकम्पा, स्नेह तथा सरक्षण प्राप्त करने के लिए बदनसिंह

❀ होते थे, इससे जब-तब विद्रोह करके स्वतन्त्र राज्य या जागीर बनाने का भी प्रयास करते थे। परन्तु जाट शासन में 'ठाकुर' की स्थिति राजपूत रजवाड़ों से पूर्णत भिन्न थी। जाट ठाकुर वास्तव मे अपने क्षेत्र का स्वाधीन स्वामी था। उसको कछवाहा नरेश बेदखल करने मे स्वतन्त्र नहीं था। सम्राट ही सीधा इस ओर कदम उठा सकता था। इसी प्रकार जाट शासक द्वारा नियुक्त ठाकुर राज्य के आन्तरिक, विदेश नीति या फौजी मामलों मे हस्तक्षेप नहीं कर सकता था और न अपनी जागीर मे किसी जमींदार या रैय्यत को बेदखल कर सकता था।

१ – जॉन कोहन, पृ० १८ ब।

२ – द० को०, जि० ७, पृ० ४३६-७, ४४६ (सरदारो का विवरण), जॉन कोहन, पृ० १५ ब।

३ – हदीकत, पृ० ३८१, इर्विन, भाग २, पृ० २१३।

४ – स्याह ववाया कागजात, बेण्डल, मथुरालाल (जयपुर), पृ० १६६।

ने नम्रता का मार्ग अपनाया। अपने पूर्वजो के कठोर स्वभाव से इतर उसमे शिष्टाचार, सहृदयता, आत्मीयता, समर्पण की भावना तथा व्यवहारिक सह-अस्तित्व की सामाजिक क्षमता थी। बदनसिंह की क्रमिक उन्नति तथा जाटो की सामाजिक प्रगति से सरक्षक की कीर्ति बढेगी, इसी पारदर्शिता से अनुग्रही जयसिंह ने उसको एक साधारण स्तर से इतना ऊचा सम्मान दिया था।"[1] बीसवी शताब्दी के इतिहासकारो के अनुसार "इस प्रकार बदनसिंह कछवाहो का नम्र खिदमती जागीरदार बन गया था।"[2] इन आधुनिक इतिहासकारो के कथन मे तत्कालीन साम्राज्यवादी दरबारी इतिहासकारो की विचारधारा, राजनैतिक घटनाचक्र, सामयिक घटनाओं के विश्लेषण की अपेक्षा विपरीत दिशा बोध की भावना प्रधान है। यद्यपि बदनसिंह की प्रारम्भिक तथागत कठिनाइया इस कथन के अनुरूप मानी जा सकती है। फिर भी यह सत्य है कि समय की गति, युग की माँग को चतुराई से भापकर बदनसिंह ने शाही परगनो का औचित्यपूर्ण वार्षिक खिराज (कर) देना स्वीकार करक जाट एकता को राजनैतिक फौजी सकटो तथा उलझनो से बचा लिया था[3] और उसकी पारदर्शिता से ही आगे के दो दशको (कल्पो) मे जाट राज्य सर्वांगीण उन्नति के शिखर पर आरूढ होने लगा था। इस घटना के बाद जाटों की पडौसी राज्यो से कटुता समाप्त हो गई थी और जाट-कछवाहा सम स्तर पर अच्छे पडौसियो की तरह रहने लगे थे। भारतीय रीति व नैतिक परम्परागत बदनसिंह जयसिंह की अनुकम्पा का ऋणी अवश्य था, किन्तु कछवाहा नरेश आगरा प्रान्त का राज्यपाल तथा जिला मथुरा का फौजदार था। ये पद व अधिकार मुगल सम्राट को अनुकम्पा तथा केन्द्रीय दरबार के दलगत राजनैतिक घटना चक्र तक सीमित थे। अत बदनसिंह को 'कछवाहा सामन्त या खिदमती जागीरदार' कहना एक भ्रान्ति है। स्वय दरबार मे जयसिंह ने सदैव कछवाहा ठाकुर या सामन्त से भिन्न एक शाही जागीरदार व मनसबदार की भाति उसका स्वागत-सत्कार व सम्मान किया था।

राजधानी के निकट स्थाई शान्ति तथा सुव्यवस्था के लिए यह अनिवार्य था कि मुगल सम्राट मुहम्मदशाह जाट सरदार बदनसिंह को सम्पूर्ण काठेड जनपद तथा उनक पूर्वकालिक अधिकार क्षेत्र के वैधानिक तथा नैतिक अधिकार सौंपकर उसको जाटो क प्रमुख सरदार क रूप में मान्यता प्रदान करे। इस ओर शनै शनै कदम उठाये गये। जनवरी २१, १७२३ ई० को मुगल दरबार से सवाई जयसिंह के नाम परगना सौहरी (सरकार मथुरा) मे रुपया ६४, ६५०/- (२८, २५, ६६७ दाम) की

---

१ - तारीख-ए-हिन्दी, पृ० ४६५, माधव जयति, पृ० ३ अ।

२ - कानूनगो, पृ० ६०, सरकार (मुगल), भाग २, पृ० २६१, सतीश, पृ० १७८।

३ - इम्पी०, गजे०, खण्ड ८, पृ० ७५, ओडायर, खण्ड ३, पृ०२६, कै० हि०, भाग४, पृ० ३४९, लोडिंग चीफ्स, ४/८६।

जागीर तथा २,५०,००० रुपया (एक करोड दाम) का अनुदान[१] दिया गया। सैय्यद गुलाम अली खा का मत है कि राव चूडामन की वतन जागीर व प्रबन्ध मे दस शाही परगना शामिल थे, जिनकी वार्षिक जमा पच्चीस लाख रुपया वार्षिक थी।[२] ग्राम डहरा के बागो मे लगे शिलालेखो से ज्ञात होता है कि जाट सरदारों ने स्पष्टत मुगल सम्राट मुहम्मदशाह का शासन स्वीकार कर लिया था और वार्षिक खिराज भुगतान की शर्त पर अधीनता स्वीकार कर ली थी। सम्राट ने इन जमीदारो को फौजदारी के अधिकार भी प्रदान कर दिए थे। अटसतो से ज्ञात होता है कि सिनसिनवार जाट बाहुल्य जनपद के अलावा १७२३ ई० मे बदन सिंह के प्रबन्ध व जमीदारी में परगना भुसावर मे १५६, परगना सौंखर-सोखरी मे २१, परगना कठूमर मे ५६ ग्राम शामिल हो चुके थे।[३] मई २२, १७२३ को मुगल दरबार से प्रसारित खरीता से पता चलता है कि सम्राट ने राव चूडामन की जमीदारी के कुछ परगने प्रदान करके बदन सिंह को उत्तराधिकारी जाट जमीदार स्वीकार कर लिया था।[४] इस प्रकार सवाई जयसिंह ने कछवाहा राज्य की पूर्वी सीमा पर एक सबल जाट क्रान्तिकारियो का सक्षम बल तथा विश्वास प्राप्त कर लिया था और मुगल अमीरो की आन्तरिक कटुता व कमजोरी के कारण ही अपरोक्ष रूप मे काठेड जनपद आगरा प्रान्त मे एक पृथक् राजनैतिक इकाई बन गया था। प्रारम्भ म इस क्षेत्र को आमेर राज्य की जागीर का अग बनाने की सम्भावना बढ़ गई थी, किन्तु बाद के दशको मे जयसिंह की कल्पना साकार नही हो सकी।

८—एकता तथा दृढता के प्रयास : भावी उपलब्धियां

समकालीन ऐतिहासिक विवरणो के अध्ययन से पता चलता है कि वैधानिक पद व अधिकार ग्रहण करने के बाद बदनसिंह ने (१) आन्तरिक तथा (२) बाहरी कठिनाईयो पर शान्ति, निश्चल सयम, नम्रता तथा दृढता से विजय प्राप्त की थी। निर्वाचित हू ग सरदारी काटो का उत्तरदायित्व, विविध समस्याओ का ताज था। जाट शक्ति दो घटको मे विभाजित होने पर भी प्रतिपक्ष अधिक सबल व सशक्त था। प्रतिगामी जमीदार, जाट जमातदार यथा उनके प्रभाव से रैय्यत ने समर्पण करके बदन सिंह के समक्ष आज्ञाकारिता की भावना प्रदर्शित नही की थी। इधर ठाकुर मोहकम सिंह, जुलकरन आदि भगोडा जाट सरदार महाराजा अजीत सिंह राठौड के सरक्षण मे अपनी वतन जागीर व जमीदारी पुनः उपलब्ध करने के लिए प्रयत्न-

---

१—परवाना (कपड़ द्वारा), स० १६५/११०, १६४/२६२।
२—इमाद, पृ० ५५।
३—अठसता, १७२३-२४ ई०।
४—खरीता, मई २२, १७२३ (ज्येष्ठ सुदि ६, स० १७७६), दस्तम अर्ल

शील थे। क्षेत्रीय सहयोगी जाट जमींदारो पर उनका प्रभाव परिलक्षित था। बदन सिंह न कुछ वर्ष तक कछवाहा नरेश तथा आगरा मे उसके नायब को हार्दिक सहयोग देकर अपनी सैनिक शक्ति, आर्थिक सम्पन्नता तथा जातीय एकता के लिए सफल प्रयास किया। इन सत्कार्य मे ठाकुर तुलाराम, रणजीत अवारिया (डहरा) ने उसको पूर्ण सहयोग प्रदान किया।

बदनसिंह ने सर्व प्रथम अऊ के पश्चिमोत्तर छ. किमी० पर डीग की साधारण गढ़ी के समीप अपना स्थाई निवास तथा प्रशासनिक केन्द्र बनाने का विवेकपूर्ण निश्चय किया और प्रारम्भ में यहा पर एक विशाल व पक्का बदन सिंह महल, रमणीक बाग की एक परियोजना क्रियान्वित की गई। राजनैतिक शक्ति की दृढता तथा प्रसार, प्रशासकीय प्रमुत्व तथा जाट जनशक्ति को सगठित करने के लिए '(१) दाम्पत्य सूत्र ब धन तथा (२) भाई-चारा' की नीति को अपनाया। उसने पूर्व निश्चित बचनो की पालना मे अपने ज्येष्ठ पुत्र सूरजमल का विवाह जाट जमीदार रतीराम की पुत्री हसिया के साथ सम्पन्न किया। यह 'दाम्पत्य सूत्र बन्धन' दो प्रभावी जमीदारो का न केवल पारिवारिक वरन् राजनैतिक तथा सैनिक गठबन्धन था। इस अवसर पर ठाकुर बदनसिंह ने चौधरी[1] रतीराम से हंसते हसते कहा, "चौधरी साहब! यहां हम आपके ठिकाने का बन्दोबस्त समुचित तथा प्रशसनीय देख रहे हैं और यहा आपकी सरदारी तथा ठकुराई परिलक्षित हो रही है। लेकिन अब आपका हमारे राज्य से नाता हो चुका है। आपने अपने इस राज्य की रक्षा के लिए क्या सोचा है?' आन्तरिक भाव व विचारो की गम्भीरता को समझकर रतीराम ने विनम्र शब्दों मे कहा, "ठाकुर साहब! मैं स्वय, मेरा परिवार तथा नाहरवार कुटुम्ब-कबीला आपकी आज्ञाकारिता मे अपना जीवन न्योछावर करने के लिए सर्वदा तत्पर रहेगा।" उसने उसी समय अपने सुयोग्य पुत्रो (१) बलराम (२) दानीराम (३) चैनसुख (४) फतहसिंह और (५) छतरसिंह को बदनसिंह की सेवा म प्रस्तुत कर दिया और इसके बाद ये सभी अपने साहसी सवारो के साथ डीग पहुँच गए।[2]

---

१ – सिनसिनवार जाट शासकों की परम्परा के अनुसार राजवश जिन घरानो की पुत्रियों से विवाह कर लेता था, उस घराने के व्यक्ति 'चौधरी' पद से सम्मानित किये जाते थे और ये चौधरी घराने अपने कुटुम्बीजनो के साथ राज सेवा करते थे। उच्च पदासीन रहने के कारण इन घरानों को राजकीय हवेलिया, खानपान (कांसा खर्च, विभिन्न विभागों से व्यवसाय तथा जागीर मे कुछ गांव व उपजाऊ भूमि दी जाती थी। इस प्रकार ये 'चौधरी घराने मुगल सम्राटों द्वारा मान्यता प्राप्त चौधरी पद या जातीय चौधरियों से भिन्न होते थे।

२ – कागजात बरसानिया खानदान।

इस सूत्र बन्धन से ठाकुर बदन सिंह ने भुसावर तथा बयाना के शाही परगनो मे अपना राजनैतिक प्रभाव बढाने मे सफलता प्राप्त कर ली थी। भुसावर के उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त पर पथैना तथा इसके आसपास गडासिया पाल की आबादी थी। पाल सरदार बिजैराम गडासिया ने मोहकम सिंह के पराभव के बाद लोकाचार के लिए विरोधात्मक नीति त्याग दी थी। बदन सिंह ने शीघ्र ही उसकी पुत्री कल्याण-कौर की शादी सूरजमल के साथ करके गडासिया पाल की शक्ति वरण कर ली। छतरपुर (परगना गारु) के फौजदार चतरसिंह ने समझौता कर लिया था और देसवार पाल ने भी समर्पण कर दिया था। इससे गारु (तहसील नदबई) मे पूर्ण प्रभाव जम गया था।

नन्दगाव-बरसाना के समीपवर्ती इलाको मे गौरवा राजपूतो की घनी आबादी थी। सामाजिक दृष्टि से गौरवा राजपूत कछवाहो से निम्न श्रेणी में माने जाते थे और कछवाहा-गौरवा राजपूतो मे आपस मे शादी सम्बन्ध भी नही होते थे। बदन सिंह ने गौरवा राजपूतो की पुत्री का विवाह[1] सूरजमल के साथ करके इस खाप को अपने साथ मे मिला लिया था। बदन सिंह ने स्वय अनेक परिवारो की कन्या वरण कीं, वहा अपने बीस पुत्र तथा पौत्रो का विवाह सम्पन्न जमीदारो के यहा करके 'दाम्पत्य सूत्र बन्धन' नीति से डूंग-पाल समाज को एकता क रूप मे उभारा।

कुम्हेर के उत्तर-पूर्व मे १३ किमी० तथा गोवर्धन के दक्षिण मे ११ किमी० सोंख के फौजदार हथीसिंह कुन्तल (खूटेल), अडीग के जाट सरदार फौदाराम कुन्तल ने बदन सिंह को अपना सरदार मान लिया था। फौदाराम ने बदन सिंह के सरक्षण व साझेदारी में मथुरा मण्डल के अनेक गाव इजारे पर प्राप्त कर लिये थे। साथ ही बदन सिंह ने बरसाना के ब्राह्मण परिवारो का भावात्मक आशीर्वाद ग्रहण कर लिया था। कानूराम वशिष्ठ (बरसानिया या लवानिया खानदान) के पुत्र (१) मोहनराम (२) नैनसुख, (३) हरसुख, (४) मयाराम, (५) गिरधारी और (६) ठाकुरसी की कमान में रिसाला शक्ति सगठित कर ली थी और सूरजमल ने इनको फौजदार व बख्शी पद तथा सरदार-राज का सम्मान प्रदान किया था। इसी प्रकार बरसाना के तीर्थ पुरोहित हेमराज कटारा तथा उसके भाई रूपराम कटारा को तीर्थ पुरोहित तथा अपना वकील नियुक्त किया।[2] डीग तथा नगर तहसीलो मे आबाद गुर्जर परिवारों को 'धाऊ' का सम्मान दिया गया। इस भांति बदन सिंह सम्पूर्ण काठेड तथा ब्रज मण्डल का व्यवहारिक प्रभावी स्वामी बन गया था।

---

१ – इमाद, पृ० ५६; वेन्डल, पृ० ५१; कानूनगो पृ० ६०।

२ – कागजात बरसानिया खानदान, द्रष्टव्य, 'जाट राज्य के दो स्तम्भ'–मोहनराम बरसानिया तथा रूपराम कटारा, रा० हि० का० प्रो०, खण्ड ८, १९७५, पृ० ४७-५२।

जमीदार सिपाहियों की नियमित टोली के अलावा बदन सिंह ने मोहकम सिंह के सभी सैनिको को अपनी सेवा मे नियुक्त करके निजी सैनिक शक्ति को भी बढाया। राज्य की सैनिक कमान उसके सुयोग्य पुत्रो, सूरजमल प्रतापसिह, वीरनारायण, अखैसिह, उम्मेदसिह, दलेलसिह, सोभाराम (सभाराम) आदि ने सभाल ली थी। थून अभियान के बाद सम्राट के आदेश से सवाई जयसिंह को महाराजा अजीतसिह राठौड के विरुद्ध छिडे सैनिक अभियान मे भाग लेने के लिए अजमेर जाना पडा। तब सूरजमल, ठाकुर तुलाराम तथा हेमराज कटारा भी ससैन्य उसके साथ हाजिर रकाब[1] थे। महाराजा अजीत सिंह के साथ समझौता सम्पन्न कराकर सवाई जयसिह मथुरा लौट आया। यहा उसने लगभग एक वर्ष(१७२४-२५ ई०) रुककर आगरा प्रान्त तथा जिला मथुरा मे राजस्व व प्रशासनिक व्यवस्था सुदृढ की। धार्मिक तथा सास्कृतिक नगरी मथुरा से तीन किमी० दूर मथुरा-वृन्दावन राजमार्ग पर जयसिंह-पुरा नामक ज्योतिष वेधशाला[2] वृन्दावन मे कचहरी तथा भव्य मन्दिरो का निर्माण कार्य सम्पन्न कराया। शाही दरबार के आन्तरिक कुचक्रो तथा कोकीजी के हस्तक्षेप से व्यथित होकर दिसम्बर ७ १७२३ ई० को नवाब निजामुलमुल्क वजीर पद त्याग कर सपरिवार दिल्ली से दक्षिण चला गया था। निजामुलमुल्क के प्रस्थान के सात माह बाद शाही दरबार मे मुगल दल के नेता मुहम्मद, अमीन खां के पुत्र कमरुद्दीन खा की वजीर पद (जुलाई २२, १७२४ ई०) पर नियुक्ति की गई। उसने चौबीस वर्ष तक वजीर पद का उपभोग किया। नवीन वजीर शराबी तथा आलसी था। सम्राट स्वय कोकीजी के प्रभाव मे फस चुका था। इससे शाही प्रशासन मे भ्रष्टाचार, दलगत-राजनीति को अति बल मिला और हिन्दू शक्तियो के साथ ताल मेल बिठलाने का प्रयास किया गया। फलतः आगरा प्रान्त की प्रशासनिक व्यवस्था मे केन्द्रीय सरकार तथा अमीरो का हस्तक्षेप अपनी मनसब जागीरो से नियमित जमा वसूल करने तक ही सीमित रहा। जून ८, १७२४ ई० को मुगल दरबार से परगना खोहरी मे चूडामन की जागीर मे शामिल ५१,२६० रुपया (२०,५०,४१२ दाम) के गाव लालसिंह के नाम स्थानान्तरित कर दिये गये थे।[3] किन्तु परगना खोहरी मे स्थाई शान्ति नहीं रह सकी। फलत. आगामी वर्ष ही जून २६, १७२५ ई० (अषाढ बदि ५, सं० १७८२) को सम्राट ने ठाकुर बदन सिंह के लिए अनेक जाट प्रभावित गावों व कस्बो का बन्दोबस्त स्थाई रूप से सौंप दिया। इस समय सवाई जयसिंह स्वयं मथुरा मे मौजूद था। शाही आदेश मिलने पर उसने ठाकुर बदन सिंह के साथ पेशकश भुगतान करने का एक आर्थिक समझौता किया। बदन सिंह ने इस समय

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५३७, ५५४, ४६५, ४६२।

२ – द० कौ०, जि० १६, पृ० २११।

३ – परवाना (कपड द्वारा), सं० २११/६१।

ज्यपाल के पक्ष में एक अनुबन्ध (कबूलियत) मे लिखा, "चूडामन की जमीदारी की रती व गाव (खानदानी जायदाद व गांव) जो महाराजा की अनुकम्पा से मुझको ाप्त हुए है, उसके एवज मे हुजूर की सेवा मे उपस्थित रहूगा और प्रति वर्ष तिरासी हस रुपया पेशकश के रूप मे भुगतान करता रहूगा।"[1] इस प्रकार बदन सिंह शकश नियमित जमा कराकर सावधानी के साथ चाकरी[2] करता रहा और कुछ ी वर्षो मे बदन सिंह 'पेशकशी जमीदार' बन गया। इस पेशकश के एवज में बदन सह राज्यपाल की सैनिक सेवा' करने के लिए वाध्य था, किन्तु यह अनुबन्ध बदन सह की स्वाधीन जाट जन-सत्ता के सिद्धान्त के अनुरूप नही था।

पेशकशी या इस्मी जमीदार बदन सिंह के इस अनुबन्ध का जटवाडा के राजी व रैय्यती जमीदारों तथा शाही मनसबदारो पर सीधा प्रभाव पडा। बदन सह न स्वभावत अन्य ढ ग के साधारण जमीदार तथा रैय्यती जमीदारो, पटेलो व कद्दमो से 'माल ओ जकात-ओ-सायर' की वसूली में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया ा। सवाई जयसिंह ने प्रथम बार पाच वर्ष (१७२२–२७ ई०) तक आगरा प्रान्त राज्यपाल पद का उपभोग किया था, किन्तु नायब अति आलसी व अयोग्य था। ससे स्थिर शान्ति स्थापित नही रह सकी।

सीमित वैधानिक अधिकार व सीमित आर्थिक साधनो के बाद भी बदन सिंह े नवीन भव्य नगर नवीन विशाल मैदानी दुर्ग तथा आकर्षक महलो व तालावो का नर्माण कार्य प्रारम्भ करके सहस्रो मजदूरो तथा शिल्पियो का पालन-पोषण किया। सितम्बर १२, १७२५ ई० को सीकर मे जयसिंह से भेंट की और फिर लौटकर डीग को जाट राज्य की राजधानी का रूप देने के लिए पक्का दुर्ग तथा नगर की विशाल योजना प्रारम्भ की। जॉन कोहन के अनुसार 'थून से कूच करके जयसिंह डीग वापिस लौटा और उसने अपने हाथो से डीग दुर्ग की बुनियाद मे पहली ईंट रखी और पुख्ता दुर्ग बनवाने का आदेश दिया। बदन सिंह ने फिर इस दुर्ग का निर्माण कराया।'[3] किन्तु अद्यत हमको किसी फारसी इतिहास या जयपुर रिकार्ड मे इस प्रकार का कोई

---

१ – कबूलियत (कपड द्वारा), सं० २३३/१४०६।

२ – सोभनाथ पृ० ३ अ (पेशकश की रकम या सैनिक चाकरी आमेर नरेश के पद की अपेक्षा राज्यपाल पद के लिए देय थी।)

३ – जॉन कोहन, पृ० १४ ब,

प० गोकुल चन्द्र दीक्षित लिखते हैं कि "महाराजा सूरजमल ने जयपुर महाराजा जयसिंह के अश्वमेध यज्ञ से लौटकर पहिले पहाडताल के निकट किला बनवाना चाहा। पीछे से डीग नगर के भीतर ही दुर्ग की नींव डाली।" (पृ० १८४) यह विवरण पूर्णतः तथ्य सगत नहीं है। पहाडताल इस योग्य स्थान नहीं था, जहां बदनसिंह विशाल दुर्ग तथा नगर का निर्माण कराता।

सन्दर्भ नही मिल सका है, जिसके आधार पर जॉन कोहन के कथन को स्वीकारा जा सके। लोकवार्ता से ज्ञात होता है कि महन्त मारानदास (पीतमदास ?) ने डीग दुर्ग की नींव रखी थी। यह कहा जाता है कि जब महन्त जी ग्यारह फावडे लगा चुके, तब ठाकुर बदन सिंह ने रोक दिया था। इस पर उसने कहा, 'ठीक है, तेरी ग्यारह टोपी राज करेंगी।" इस प्रकार डीग को जाट राज्य की प्रथम राजधानी बनाया गया।

निःसन्देह ठाकुर बदन सिंह ने जमीदाराना सिपाही तथा अपने निजी सैनिको के बल पर अपनी शक्ति को बढा लिया था। अब उसने तालुकेदारी या इजारेदारी की ओर ध्यान दिया। शीघ्र ही रैय्यती व खिराजी जमींदारो को अपनी अस्थाई सेवा मे भरती कर लिया था। उसने आगरा–दिल्ली प्रान्त के अन्यान्य पाल सरदारो, मेवातियो से लूट मे साझेदारी निश्चित करके आगरा–दिल्ली तथा मेवात मार्गों पर लूटमार को प्रोत्साहित किया। जाट मेवाती लुटेरा धारें निर्बाध गति मे शाही मार्गों पर इतस्ततः घूमने लगीं और विशाल व भव्य इमारत मस्जिद तथा बागो को उजाडने लगी। केवल कुछ ताबों के पैसे, संगमरमर या पत्थर के टुकडे तथा लोहे की सलाखो के लिए उनको तोडने-फोडने लगी। वे विशाल फाटक, भारी मरकम पत्थरो की नक्काशी, शहतीर आदि निकाल कर उन महलो में ले जाने लगे थे, जिनको बदन सिंह बनवा रहा था। साथ ही ये लोग दो-दो, तीन-तीन सौ की धारो मे लाठी, तलवार, भाला, बन्दूको से सुसज्जित होकर कुल्हाडी तथा मसालो के साथ बिगुल बजाकर सम्पन्न व्यक्तियो को लूटने के लिए निकल पडते थे। वे पहिले अपनी धारो मे सम्पन्न जमीदार तथा घरों को आपस मे बाट लेते थे और यह ज्ञात कर लेते थे कि उनका किस स्थान पर प्रतिरोध नही होगा। इस प्रकार इन धारो मे जाट-गुर्जर, मीणा, मेवाती, राजपूत आदि सभी जातिया शामिल थी और लूटमार करती थीं।[१] वास्तव मे कुछ ही महीनो मे इन क्रान्तिकारी लुटेरो ने भारी अराजकता पैदा कर दी थी। लूटमार इतनी व्यापक थी कि नवम्बर ६, १७२५ ई० को महाराजा के लिए लिखा गया कि विद्रोहियो के दमन के लिए फौज भेजी जा रही है, फिर भी आपको अति सतर्क व सावधान रहना चाहिए। २४ दिसम्बर को कुमार्गियो को मौत के घाट उतारने के भी अधिकार सौंप दिये गये।[२] वास्तव मे कुछ ही महीनो मे इन क्रान्तिकारी लुटेरो ने प्रान्तव्यापी अराजकता पैदा कर दी थी।

सवाई जयसिंह ने ठाकुर कीरत सिंह खगारोत (डिग्गी–मालपुरा) को हिण्डौन, टोडा भीम तथा भुसावर के अनेक गाव सैनिक जागीर मे प्रदान कर दिये थे।

---

१ – सरकार (मुगल), सं० २, पृ० २६०, मा० उमरा, खण्ड १, पृ० १२८।

२ – खरीता (कपड़ द्वारा) सं० २३६/५१; परवाना (कपड़ द्वारा), सं० २४५स/११८।

वह[1] अति आलसी, नम्र व दयालु व्यक्ति था। इससे क्षेत्रीय राजपूतों ने गुर्जर मीणों के साथ मिलकर भारा उपद्रव किये और 'वाजिब माल' का भुगतान भी नहीं किया। अक्तूबर, १७२५ ई० म भुसावर के कल्याणोत जागीरदारो ने भी काफी विरोध किया। ठाकुर बदन सिंह न कल्याणोत जागीरदारो के जागीरी गाव शाही दरबार से अपन नाम करा लिए थे। कल्याणोत राजपूतो की यह स्थिति देखकर दिसम्बर २, १७२५ को राय स्यौदास को लिखा गया, "बदनसिंह के गुमास्ता ने लिखा है कि उन्होंने दिल्ली मे रकम जमा कराई है, किन्तु हठीसिह सबलसिह, छीतरसिंह फौजसिंह, बदनसिंह आदि कल्याणोत जागीरदारो न उनक पैसो का अभी तक भुगतान नहो किया है। अत इनके पैसा वसूल करा देना।"[2] इन विप्लवो का प्रभाव बयाना पर भी पडा। फलत फरवरी २२, १७२६ ई० को परगना बयाना की फौजदारी भी जयसिंह के लिए प्रदान कर दी गई।[3] अब बदनसिंह ने अपने पुत्र प्रतापसिंह के लिए वैर का इलाका जागीर म सौंपा और उसने ससैन्य प्रस्थान किया। सोमनाथ साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि प्रताप सिंह ने भुसावर, टोडाभीम के विद्रोही जागीरदार व जमीदारों की गढियो पर अति तीव्र व साहसी आक्रमण किये। उनकी गढ़ियो को बरबाद करके जमीदार, जागीरदारो को आज्ञाकारी बनाने मे सफलता प्राप्त करके १७२६ ई० म वैर दुर्ग तथा कस्बा की नीव डाली।[4] इसी प्रकार सूरजमल ने मई, १७२६ ई० में खेमकरन सोगरिया को फतहगढी से पराजित करके भगा दिया। उसने इसी वर्ष कुम्हेर दुर्ग की नीव डाली। जयसिंह न टप्पा सीगार (परगना पहाडी) म पाच ग्राम बदनसिंह के प्रबन्ध म प्रदान कर दिए थे। फिर जनवरी ५, १७२७ ई० को ठाकुर बदनसिंह तथा सम्पतसिंह ने मिलकर रुपया ४४,३३३/- पेशकश भुगतान की शर्त पर कई गांव प्राप्त किये। सावल सवाई सिंह नाथावत तथा जोरावर सिंह ने इस कबूलियत की जमानत दी।[5] १७ जुलाई को बदनसिंह ने टोडा ठक (नारनौल) मे सवाई जयसिंह से भेंट की फिर नवम्बर, १७२७ ई० में जयसिंह ने स्वय लश्कर के साथ तीन माह तक पावटा (टोडा भीम) में पडाव डाला, जहां बदनसिंह ने २५ नवम्बर को उससे भेंट[6] करके आगरा परगना के अनेक गाव इजारे पर प्राप्त करन म सफलता प्राप्त की।

---

१ – जय अख०, फरमान स० ३०।
२ – ड्राफ्ट परवाना, स० २/१६८।
३ – खरीता (कपड द्वारा) स० २४८/२६१।
४ – रस पीयूष निधि (पा० लि०)।
५ – कबूलियत (कपड द्वारा) स० २८६/११७६।
६ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४३८।

सवाई जयसिंह को निःसन्देह बदनसिंह की योग्यता, प्रबन्ध–कुशलता पर अधिक विश्वास था। उसमे परगना हवेली आगरा के रैय्यती जमीदारो या मुकदमो, अराजक तत्वों को दबाने तथा उनसे जमा वसूल करने की क्षमता थी। फलतः भिकारीदास नाटाणी की जमानत पर दिसम्बर १६, १७२७ ई० को परगना आगरा के अनेक रैय्यती गाव १,५१,६०१ रुपया इजारा भुगतान की शर्त पर प्रदान किये गये। इसी प्रकार अप्रेल ६, १७२८ को भिकारीदास व लूणकरण ने ठाकुर बदनसिंह की ओर से ७५,२०० रुपया भुगतान की जमानत दी। जनवरी १६, १७२६ ई० को भिकारीदास व लूणकरण की जमानत पर इन पट्टो को पुनः बहाल कर दिया गया।[1] अप्रेल १३, १७२६ ई० को बदनसिंह के वकील हेमराज कटारा ने जयसिंह को लिखित आश्वासन दिया कि फरीदाबाद, पलवल तथा तालुका मेवात की राहदारी के एवज मे बदनसिंह एक लाख रुपया भुगतान करता रहेगा।[2] इस प्रकार राहदारी का अधिकार[3] जाटो की अनैतिक लूट को वैधानिक रूप मे स्वीकार करने की नीति थी। अब अवैधानिक अपराध स्पष्टतः वैधानिक अनुबन्ध था। इससे बदनसिंह का प्रभाव मेवात तथा दिल्ली की ओर बढने लगा। फिर भी बदनसिंह के सन्तोष के लिए यह अपर्याप्त इजारा समझौता था।

मालवा मे सवाई जयसिंह की तीसरी नियुक्ति काल मे बदनसिंह ने राजनैतिक अस्थिरता से पर्याप्त लाभ उठाया और अपने मुल्क (देश) के बाहर व्रजमण्डल मुख्यतः गोवर्द्धन, बरसाना, मथुरा, वृन्दावन मे अनेक धार्मिक अनुष्ठान, धार्मिक व सास्कृतिक राष्ट्रीय पर्वों मे शामिल होकर, विशाल भव्य भवन, धर्मशाला तथा नवीन मन्दिरो का निर्माण कराकर हिन्दू संस्कृति तथा धर्म की रक्षा के नाम पर जनता पर अपना प्रभाव जमा लिया था। इसी समय अनेक जन हितकारी बाध तथा नहरो का निर्माण कार्य प्रारम्भ किया गया। सार्वजनिक राजकीय बाध जमींदाराना बन्धो से पृथक् थे। वास्तव मे उसने मुगलो के अन्याय, धार्मिक पक्षपात के विरुद्ध हिन्दू–धर्म व भारतीय समाज व सस्कृति की रक्षा का सकल्प धारण कर लिया था। उसके शासन मे शान्ति व सुव्यवस्था परिलक्षित होने लगी थी। लोकहित की भावनायें प्रधान थी। इससे उसके न्याय सगत शासन प्रबन्ध तथा समुचित बन्दोबस्त के प्रति जनता मे मोह[4] पैदा हो गया था।

कुम्हेर तथा वैर के पुख्ता दुर्गों के अलावा इसी कल्प (दशक) मे जाट राज्य

---

१ – कपड द्वारा, स० २८२/१४४५, ४४७/११४६, ३३६/१०७२।
२ – अनुबन्ध (कपड द्वारा), स० ४४७/११४६, ४६७/१४२६।
३ – सियार, जि० १, पृ० २५६।
४ – कानूनगो, पृ० ६२।

उत्तरी सीमा पर मेवात में गोपालगढ,[1] पश्चिमी सीमा पर अखैसिह ने अखैगढ, दूंल ने पथैना, बलराम ने वल्लभगढ़, हथीसिंह कुन्तल ने सौंख, फौंदाराम ने मडोग पुस्ता गढियों का निर्माण करा लिया था। इन गढियों की सुरक्षा व्यवस्था दनसिह के पुत्रो, बन्धु-बान्धवो तथा निकटतम सहयोगी व रिश्तेदारों के हाथो मे । इन नवीन नगरो तथा गढियों में दूरस्थ नागरिको, सेठ-साहूकार तथा व्यापायो ने बसकर आर्थिक विकास, औद्योगिक संस्थानो का विस्तार किया और कुछ ही मय मे ये स्थान प्रमुख व्यापारिक मण्डियां बन गई थी।

नागरिको की दीर्घकालिक सुरक्षा तथा जाट-मुल्क की रक्षा के लिए गोलाारूद, छोटी तोपें, हथियार एकत्रित करने का सफल प्रयास किया गया और डीग, म्हेर, वैर, वल्लभगढ मे रहकला, हथनाल, गजनाल, सुतरनाल जुजर्वा आदि तोप था बन्दूकें बनाने के कारखाने चालू किये गये। यह सभी कुछ देखकर बदनसिह के रोध मे मुस्लिम जागीरदारों, वाक्या नवीसो ने शाही दरबार मे अनेको शिकायतें जकर भारी शोर मचाया, किन्तु बदनसिह ने शान्ति-सयम तथा निष्ठा से इन ाकायतो को निष्फल कर दिया।

–मेवाती परगनो मे बदनसिह की उपलब्धिया

जिला मथुरा मे शामिल खोह (मुजाहिद), पहाडी तथा खोहरी पहाड तथा गलो से भरपूर रूपारेल व साबी नदी के बहाव से अति सम्पन्न व समृद्ध उपजाऊ रगने थ। यहा पर दुधारू जानवरों का बाहुल्य था। परगना खोह मे १०२ ाव शामिल थे, जिनमे से सत्ताईस गावो मे जाट गूजरो की जमीदारिया और पन्द्रह ावो पर कल्याणोत राजपूतो का अधिकार था। परगना खोहरी की जमा नौ लाख, हाड़ी की जमा साढ़े सात लाख रुपया वार्षिक थी। केवल परगना पहाडी मे खानादों के पास ८८,००० रुपया वार्षिक को मनसब जागीरें थी। ये मनसबदार शाही ाकरी मे तैनात थे। इन परगनो मे अधिकांश खानजादों की मनसब जागीरें व मीदारिया थी और खानजादे अपने आपको सुलतान[2] मानते थ। इनके अलावा राजक मेवाती डाकुओ व लुटेरों की अनेक छोटी-छोटी जागीरो तथा जमीदारो की

–डीग के उत्तर-पश्चिम मे ३६ किमी०।

—बदनसिह ने मेवाती चौधरियों, खानजादों व मेहरों को नियन्त्रित करने के लिए दौराला नामक गाँव के समीप गोपालगढ़ गढ़ी का निर्माण कराया था। इस समय जाट शासकों ने इसको परगना के प्रधान केन्द्र के रूप मे विकसित किया। (गजे० ई० राज०, पृ० २०) टप्पा दौराला मे छत्तीस गाव शामिल थे। (अठसता, परगना पहाडी, स० १७७३)।

–सूदन, पृ० ७, तारीख-ए-खान जादों, पृ० २६१।

मेवाती इलाके पर धीरे-धीरे अधिकार किया। अब मुगल दरबार ने मेवात के अनेक गाव दो लाख चालीस हजार रुपया वार्षिक इजारे पर बदनसिंह को सौंप दिए थे।[1] इस दशक के अन्त तक जाटो के अधिकार मे अठारह लाख रुपया वार्षिक जमा[2] का इलाका आ चुका था।

१७३१ ई० मे मेवात मे भारी उत्पात मचा और मेवातियों ने संघर्ष की तैयारियाँ कर ली थी। फलत. जयसिंह को स्वय मथुरा में आकर पडाव डालना पडा था। उसने बदनसिंह को 'राव' का विरुद प्रदान करने के बाद अप्रेल के प्रारम्भ मे दीवान नारायणदास खत्री के साथ सूरजमल तथा अन्य जाट सरदारों की कमान मे फौज तैनात करके रवाना की। ७ अप्रेल को पावटा मे भी बरकदाजो की भरती की गई। जाट सैनिकों ने मेवातियो को गुलपाडा की गढी मे घेर लिया। बदनसिंह के स्वजातीय भ्राता गोपाल सिंह ने सूरजमल की कमान मे मेवातियो पर प्रबल प्रहार किये और आत्म-विश्वास तथा सूझबूझ से मेवातियो को पराजित किया। सूरजमल की नेतृत्व योग्यता तथा जाटो के युद्ध नैपुण्य के आगे मेवातियो ने समर्पण कर दिया और गुलपाडा की गढी पर जाटो का अधिकार हो गया। ३० अप्रेल को सवाई जयसिंह ने मथुरा छावनी मे बदनसिंह के प्रयासों की भारी प्रशसा की और दीवान नारायण दास, सूरजमल आदि को सिरोपाव से सम्मानित किया।[3] नवम्बर २४, १७३१ के परवाना से ज्ञात होता है कि टप्पा हाथीया (परगना सहार) मे मेवातियो ने पुन. उपद्रव कर दिया था। फलतः सूरजमल को कूच करना पडा। अन्त मे मीरजा दावर जग को सूरजमल के सामने समर्पण करना पडा। नादिरशाह के आक्रमण के बाद देश में भारी अराजकता फैल गई थी। मेवातियो ने भारी उत्पात मचाया और परगना खोहरी के आमिल को मारकर भगा दिया। उन्होंने कस्बा खोहरी में भी भारी आगजनी व बरबादी की। सवाई जयसिंह नादिरशाह के भावी आक्रमण की सम्भावना से कुछ नही कर सका। वह अपनी राजधानी की सुरक्षा मे व्यस्त था। तब उसने बदनसिंह को मेवातियो को दबाने के लिए लिखा। सूरजमल ने शीघ्र ही खोहरी की ओर प्रस्थान किया और अनेक मुठभेडों के बाद कस्बा खोहरी तथा परगना में सरकार का अमल करने मे सफलता प्राप्त कर ली। ९ अप्रेल को जयसिंह ने उसके लिए सिरोपाव भेजकर प्रसन्नता प्रगट की।[4] इस प्रकार अनेक वर्षों के बाद बदनसिंह ने अपनी नीति निपुणता धैर्य व योग्यता से मेवात पर विजय[5] प्राप्त कर ली थी।

---

१ – अशोब, खण्ड २, पृ० ३१६, दीक्षित, पृ० ८।
२ – इमाद, पृ० ५५, कानूनगो, पृ० ६१।
३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५३९, जि० २, पृ० ६०१।
४ – ड्राफ्ट खरीता व परवाना, स० १७३; द० कौ०, जि०७, पृ०४४४ (९ अप्रेल)।
५ – सरकार (मुगल), भाग २, पृ० २९२ तथा पा० टि० २।

मेवात के साथ ही बदनसिंह ने दक्षिण में भी धीरे-धीरे अपना कदम बढ़ाया। खेमकरन सोगरिया के इलाके को अपने अधिकार में लेने के बाद उसने आगरा के अनेक परगनों पर अपनी दृष्टि डाली। १७३५ ई० तक उसने हवेली आगरा के ६१ गांव ८०, १६४ रुपया में तथा कांगारोल आदि का जाट प्रधान सम्पूर्ण इलाका १,७६,४५१ रुपया वार्षिक इजारे पर उपलब्ध कर लिया था।[1] इससे उसको बाहुर पाल की अपार शक्ति मिल गई थी। इस प्रकार नादिरशाह के आक्रमण से पूर्व ही बदनसिंह का राज्य व शासन अस्सी लाख रुपया वार्षिक जमा के इलाकों तक फैल चुका था। उसने जो गांव व परगना अपने पुत्रों के नाम जागीर या कासा (पालन-पोषण) खर्च में प्रदान कर दिये थे, वे इस जमा में शामिल नहीं थे।[2] अपनी कुशलता सूझबूझ व निपुणता से ही बदनसिंह ने इस अल्प (दशक) तक राव चूड़ामन से कहीं अधिक जाट राज्य का विस्तार करने में सफलता प्राप्त कर ली थी।

फादर वेण्डल लिखता है, "अपार सम्पत्ति, सैनिक बल अर्जित करने के बाद भी बदनसिंह सम्राट के आमन्त्रण पर अपने आपको एक साधारण जमीदार कह कर शाही दरबार मे उपस्थित नहीं होता था। वह केवल आमेर नरेश के प्रति अपनी भक्ति प्रगट किया करता था और प्रतिवर्ष दशहरा दरबार मे उपस्थित हुआ करता था। वृद्धावस्था मे अशक्त होने के कारण उसने उपस्थित होना कम कर दिया था।"[3] सम्राट्, वजीर कमरुद्दीन तथा मीर बख्शी खानदौरान की मित्रता के कारण जयसिंह राजस्थान, मालवा तथा बुन्देलखण्ड के हिन्दू शासकों के हितों का सर्व मान्य प्रतिनिधि तथा शाही दरबार में उनका राजनैतिक प्रवक्ता था। निःसन्देह इस काल मे भारत में उसके समकक्ष कोई भी प्रतिभाशाली हिन्दू सरदार नहीं था प्रायः सभी हिन्दू शासक उसकी सलाह तथा निजी हितों की रक्षा के लिए शाही दरबार में उस पर निर्भर रहने लगे थे। स्वभावतः ठाकुर बदनसिंह भी अपने प्रभाव, यश, प्रतिष्ठा, सैनिक शक्ति के संगठन तथा राज्य विस्तार की भावना को मूर्त रूप देने के लिए जयसिंह से शत्रुता मोल नही ले सकता था। केवल राजनैतिक हित सम्वर्द्धन तथा नैतिक समर्थन के लिए ही वह निमन्त्रण मिलने पर दशहरा दरबार में स्वयं उपस्थित होता था या अपने प्रतिनिधि अथवा वकील को भेजा करता था।[4] महाराजा ईश्वरी सिंह तथा माधोसिंह राजनैतिक सम्बन्धो को स्थाई रखने के लिए प्रति वर्ष दशहरा का औपचारिक सिरोपाव भेजकर सन्तोष कर लेते थे। अतः दस्तूर कौमवार तथा वाक्या

---

१ – अठसता, परगना अकबराबाद।

२ – नामहे मुजफ्फरी (अली० प्रति०), पृ० २११,

३ – वेण्डल, सरकार, खण्ड २, पृ० २८८; मथुरालाल (जयपुर), पृ० १४४, १४४।

४ – द० कौ० के अनुसार १७२२, १७३१, १७३३, १७३५ में बदनसिंह, १७३८, १७३६, १७४२ में प्रतापसिंह दशहरा दरबार में उपस्थित था। (जि०" पृ० ४३४, ४३८, ४४०, ४४२, ४४४, ४२१)।

पत्रों से स्पष्ट है कि १७३५ के बाद राव बदनसिंह स्वयं दरबार में जाकर उपस्थित नहीं हो सका। अब वह जाट राज्य का संरक्षक तथा राजनीति का अधिष्ठाता मात्र था। उसने शनैः शनैः राज्य संचालन व दिग्विजय की समस्त जिम्मेदारिया अपने पुत्र सूरजमल को सौंप दी थी। नादिरशाह का आक्रमण (१७३९) जाट राज्य तथा शासन विस्तार के लिये एक ईश्वरीय वरदान था। अग्रतर इतिहास नि.सन्देह सूरजमल कालिक इतिहास माना जा सकता है।

१० – जाट कछवाहा सम्बन्ध १७३०–१७४३ ई०

सैनिक सगठन या युद्धो मे भाग लेने की अपेक्षा बदनसिंह स्वयं 'कौमी सभा या कौमी दरबार' मे बैठकर जमीदारो की सलाह से आन्तरिक गृह राजस्व प्रबन्ध, राज्य प्रशासन तथा निर्माण परियोजनाओं मे अधिक व्यस्त रहता था। सवाई जयसिंह तथा बदनसिंह मे जीवन पर्यन्त अति मधुर तथा निकटतम सम्बन्ध रहे। उसने आवश्यकता के अनुरूप समय–समय पर कछवाहा नरेश की सहायतार्थ जाट टुकडिया भेजकर अपनी मित्रता को अति प्रगाढ कर लिया था। अक्तूबर २९,१७२९ को सवाई जयसिंह के लिए मालवा प्रान्त का राज्यपाल पद दूसरी बार प्रदान किया गया, तब सूरजमल की कमान मे जाट सवारो ने भी मालवा अभियान मे भाग लेकर अपनी वीरता का परिचय दिया। इसका विवरण अगले अध्याय मे दिया गया है।

सम्राट मालवा मे 'मराठो को सन्तुष्ट रखने' की सवाई जयसिंह की नीति के प्रतिकूल था। इससे वजीर कमरुद्दीन खां, सआदत खा, जफर खा आदि तूरानी घटक के प्रयास से सितम्बर, १७३० मे सवाई जयसिंह के स्थान पर मुहम्मद खा बगस के लिए मालवा का राज्यपाल पद प्रदान किया गया और कुछ समय बाद सवाई जयसिंह की दूसरी बार आगरा प्रान्त के नाजिम पद पर नियुक्ति कर दी गई। इस बार वह पुनः सात वर्ष (१७३१–१७३७ ई०) तक आगरा प्रान्त का प्रबन्धक और फिर नायब रहा। जाट सगठन, जातीय एकता की दृढता के लिए बदनसिंह के लिए उसके साथ राजनैतिक सम्बन्ध सुस्थिर रखने पड़े। फरवरी,१७३१ मे सवाई जयसिंह स्वयं मथुरा आ गया और लगभग एक वर्ष तक मथुरा मे ही रहा। यहां उसने अनेको धार्मिक व सास्कृतिक कार्यक्रमो, धर्म सम्मेलनों का आयोजन किया तथा ब्रज के सास्कृतिक विकास मे रुचि ली। ३० मार्च को उसने बदनसिंह के लिए 'राव' के विरुद से सम्मानित किया। १७ अक्तूबर (कार्तिक वदि ३, स० १७८८) को बदनसिंह ने उससे भेंट की। १२ नवम्बर को जयसिंह ने ख्यालखाना से कागज का गजफा, २७ दिसम्बर को सिरोपाव और मार्च ४, १७३२ (फाल्गुन सुदि नवमी, स० १७८८) को बसन्ती छापदार पंच परिधान (जामा, चीरा, ईजार, नीमा व फेंटा तथा इजारबन्द तापता) प्रदान करके ब्रज में होली का महान सास्कृतिक पर्व मनाया।[1] फिर

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४४१।

उसने अप्रैल के प्रारम्भ मे मथुरा से जयपुर की ओर प्रस्थान किया, तब थून मे पड़ाव डालकर ६ अप्रैल को बदनसिंह से डीग में भेंट की। दस्तूर कोमवार[1] मे इस भेंट का निम्न विवरण मिलता है :—

'अप्रैल १५, १७३२ (वैसाख बदि ६, सं० १७८९) के दिन सर्व प्रथम महारानी जोधी (राठौड़ी) डीग पधारी, तब राव बदनसिंह, ठाकुर रूपसिंह तथा ठाकुर फूदाराम की पत्नियों ने छः खवासिनों के साथ उसकी अगवानी की। सरकार की ओर से राठौड़ी रानी ने राव बदनसिंह की दोनो ठकुरानियों को पांच वस्त्रों का एक-एक वेस (साड़ी जरी, मसरू, घाघरा, कुरता जरी तथा कंचुकी), रूपसिंह की विधवा पत्नी को साल, थिरमा व साड़ी और फूदाराम की पत्नी व पुत्री को साड़ी जरी, कुरता जरी व मसरू तथा खवासिनों को एक-एक थिरमा प्रदान किया।

"१६ अप्रैल (वैसाख बदि ७) को सूर्योदय के चार घड़ी बाद महाराजा थून से घोड़े पर सवार होकर बदनसिंह की गढ़ी डीग की ओर रवाना हुए। बदनसिंह ने डीग डेरो पर महाराजा के चरण-स्पर्श किए और हाथी, घोड़ा, तोरा, गांव तथा नौ सहस्र रुपया भेंट करते हुए निवेदन किया, 'महाराजा सलामत, सभी वस्तुयें आपकी नजर हैं। मुझे केवल दस बीघा धरती व चढ़ने के लिए एक घोड़ी काफी है।' तब महाराजा ने प्रस्तुत नजर को देखकर कहा कि सभी आपकी ही नजर हैं। उसने अपने हाथो से उठाकर एक मोहर स्वीकार कर ली। फिर उसने तोरा में से एक चीरा उठाकर अपने हाथो से बदनसिंह के माथे पर बांधा और शेष नजर उसको लौटा दी। महाराजा एक घड़ी वहाँ विराजे और फिर सवार होकर थून के डेरों पर लौट आए।" इसके बाद बदनसिंह उसको अपनी सीमाओ तक विदा करने गया। १४ मई (ज्येष्ठ बदि ६) को सवाई जयसिंह ने लालसोट छावनी से बदनसिंह को विदा करते समय एक तलवार, एक तेगा मय मूंठ, जड़ाऊ सेहनाल व मोहनाल प्रदान की।"

मालवा मे मुहम्मद खां बंगश मराठो की शक्ति को रोकने मे विफल रहा। इससे खानदौरान के निश्चित तर्कों व नियमित प्रयासो के बाद अक्तूबर १७, १७३२ को सवाई जयसिंह के लिए तीसरी बार मालवा का राज्यपाल तथा मन्दसौर का फौजदार नियुक्त किया गया। २० अक्तूबर को जयपुर से प्रस्थान करके जयसिंह दिसम्बर मे उज्जैन पहुँच गया। इस बार उसका प्रयास मराठो से समझौता करके अपने राज्य को उनकी लूट तथा बरबादी से बचाने तक सीमित रहा। इस समय सूरजमल पुनः उसके साथ मौजूद था। मालवा में कुछ माह रुककर वह जयपुर वापिस लौट आया। तब दशहरा दरबार मे बदनसिंह जाकर शामिल हुआ और अक्तूबर २२, १७३३ (कार्तिक बदि १, सं०१७९०) को बदनसिंह के लिए चांदी का खासा सिरोपाव

---

२ – द०कौ०, जि० ७, पृ० ४४८, ५०३, ४२८, ४४२।

तथा दयाराम को सीख का सिरोपाव प्रदान करके विदा किया गया।[1] दस्तूर कौमवार के विवरण से ज्ञात होता है कि सवाई जयसिंह ने तीसरी बार मालवा की ओर कूंच करने से पूर्व ही सूरजमल को 'कुंवर' पद की मान्यता स्वीकार कर ली थी[2] और अगले वर्ष अश्वमेघ यज्ञ (अगस्त, १७३४) में बदनसिंह का 'ब्रजराज' के रूप में सम्मान किया गया था।

अगस्त, १७३५ ई० के मध्य में बाजीराव पेशवा की माता राधाबाई तथा उसकी पत्नी ने ब्रज की यात्रा की, तब बदनसिंह ने उसका भारी आदर सत्कार किया। राधा बाई की इस तीर्थ यात्रा का जाटों को सुखद लाभ मिला और बदनसिंह ने परगना मथुरा का प्रमुख मौजा चौमुंहा, परगना हवेली आगरा के इकसठ गांव ५,३८,३५५ रुपया तीन वार्षिक किश्तों में भुगतान की शर्त पर और रुणकता तथा कागारोल की राहदारी २००१ रुपया वार्षिक इजारे पर प्राप्त करने में सफलता प्राप्त कर ली थी।[3] इससे समस्त बाहरवाटी तथा आगरा का पश्चिमी जाट प्रधान इलाका जाट राज्य का अंग बन गया। फिर ४ अक्तूबर, नवम्बर १५, १७३५ को जयसिंह तथा बदनसिंह में आपसी मुलाकात हुई और दोनो राज नेताओं ने मराठोंकी प्रमुख समस्या पर विचार किया।

अगस्त १३, १७३७ ई० को सम्राट ने आगरा का राज्यपाल पद आसफजाहों निजामुल्मुल्क के पुत्र गाजीउद्दीन खां को प्रदान कर दिया था। तब बदनसिंह ने वकील-ए-मुतलक निजामुल्मुल्क के साथ अपने पुत्र प्रतापसिंह को भूपाल भेजा। इस समय कुंवर ईश्वरी सिंह भी उसके साथ था। भूपाल युद्ध के बाद कुंवर ईश्वरी सिंह तथा राजा अयामल खत्री आगरा होकर डीग पधारे और मार्च ६, १७३८ को इन्होंने राव बदनसिंह से डीग में मुलाकात की।[4] निजामुल्मुल्क की पराजय के बाद अगस्त, १७३८ में सवाई जयसिंह को आगरा का नायब पद प्रदान किया गया। इससे जाटों ने भारी लाभ उठाया।

नादिरशाह की वापसी के बाद केन्द्रीय सरकार के पदाधिकारियों के पदों में भारी परिवर्तन किया गया। इसी समय बाजीराव पेशवा का पूना में (अप्रैल २८,

---

१ – द०कौ०, जि० ७, पृ० ४४८, ५०४, ४४२।

२ – ज्वाला सहाय (*हिस्ट्री ऑफ़ भरतपुर*, पृ० ६३) तथा दीक्षित (पृ० ४०) का कथन है कि जयसिंह ने बदनसिंह को 'ब्रजराज' तथा सूरजमल को 'कुंवर' पद से अश्वमेघ यज्ञ के अवसर पर सम्मानित किया था। डा० कानूनगो (पृ० ६३) ने ज्वालासहाय के कथन को ही स्वीकारा है। द० कौ० (पृ० ५४१) में जून ३, १७३३ ई० के वाक्या में सूरजमल को 'जमींदार' लिखा है।

३ – अठसता, परगना अकबराबाद तथा मथुरा।

४ – द०कौ०, जि० २४, पृ० ४२।

१७४०) देहान्त हो गया और उसके नवयुवक पुत्र बाजीराव ने पेशवा पद की पोशाक (२५ जून) धारण की। सम्राट ने इस राजनैतिक परिवर्तन से लाभ उठाने का विफल प्रयास किया और आसफज्हाँ निजामुल्मुल्क का भतीजा अजीमुल्ला खा मालवा मे असफल रहा। इसी बीच मे २७ जुलाई को मीरबख्शी आसफजहाँ अपने पुत्र गाजी-उद्दीन खा को केन्द्र मे अपना नायब नियुक्त करके दिल्ली से दक्षिण की ओर रवाना हो गया।[1] नवयुवक बालाजी राव पेशवा ने मालवा पर यथापूर्व मराठा अधिकार बनाये रखने के उद्देश्य से नवम्बर २३, १७४० को पूना से प्रस्थान किया। जनवरी ५, १७४१ को सिंधिया व होल्कर ने धार के दुर्ग पर आक्रमण करके अधिकार कर लिया। इससे उत्तरी मालवा मे भारी भगदड मच गई। इन समाचारों से सम्राट काफी भयभीत हो उठा और उसने दिल्ली को मराठों की लूट से बचाने के लिए मराठों को चम्बल नदी के पार ही रोकने के लिए सवाई जयसिंह तथा अन्य मुगल सरदारो के पास अति आवश्यक निर्देश भेजे।[2] आदेशो की पालना मे सवाई जयसिंह जनवरी मे जयपुर से आगरा आया। सीमान्त प्रदेश मे कुंवर सूरजमल, ठाकुर विजयराम, छीत्रसिंह (भानजा तुलाराम), जैतसिंह (पुत्र फौंदाराम) ने जनवरी १३, १७४१ को उसका स्वागत किया और ये सभी सवारो के साथ रकाब मे शामिल हो गए। फिर जयसिंह स्वय डीग पहुचा और १५ फरवरी (फाल्गुन सुदि १, स०१७९७) को राव बदनसिंह के महलों पर पहुँच कर भेंट वार्ता की। इस बार सवाई जयसिंह की कमान में पन्द्रह सहस्र सैनिक थे। बदनसिंह ने उसका भव्य स्वागत किया और उसको नौ मोहर, एक जडाऊ कलगी, एक जडाऊ सरपेच, दो हाथी, पाच घोडा तथा ५६ थान वस्त्र, कुवर सूरजमल ने पाँच तथा रणजीत ने दो मोहर नजर की।[3] सम्भवत. इस बार राजनेताओं ने मराठों के साथ चल रहे सघर्ष तथा शान्ति-वार्ता की रूपरेखाओं पर विशद चर्चा की थी। नि सन्देह यह दो राजनेताओं की अन्तिम मुलाकात थी। फिर जयसिंह डीग से आगरा पहुँचा, जहा २६ फरवरी को आगरा के काजी ने उससे भेंट की।

सवाई जयसिंह ने मराठो से सघर्ष को टालकर सम्राट तथा पेशवा के बीच मे शान्ति-समझौता कराने का सफल प्रयास किया। आदेशानुसार नवाब आजम खा (२३ मार्च), मुहम्मद सईद खा, नवाब समसामुद्दौला आदि भी ससैन्य आगरा पहुँच गए थे। १५ मई को सवाई जयसिंह ने आगरा से फतहाबाद (धौलपुर) की ओर कूच

१ – हिंगणे, जि० १, लेख १५, १७–१९, २१, २३, २४; पे० द०, जि० २१, लेख २, राजवाडे, खण्ड ६, लेख १४५,१५२, इ० डा० (दस्तमअली), खण्ड ८, पृ० ५०।

२ – राजवाडे, खण्ड ६, लेख १४५–४६; पे० द०, खण्ड १३, लेख ४।

३ – द०को०, जि० ७, पृ० ५४६, ४४४।

करके अपना डेरा डाला। २२ मई को बालाजी राव पेशवा ने राजघाट पर चम्बल नदी पार की और पवित्र तीर्थ मचकुण्ड मे अपना पडाव डाला। २३ मई (ज्येष्ठ सुदि ६) को जयसिंह तथा पेशवा में फतहाबाद में एक आम्र-वृक्ष के नीचे प्रथम मुलाकात हुई और २८ मई तक आपस में प्रस्तावो पर विचार चलता रहा। फिर पेशवा लौट गया।[1] इस अवसर पर जाट शासक पूर्णत सतर्क व सावधान रहा। उसने सवाई जयसिंह की छावनी की सुरक्षा व्यवस्था के लिए अपने सैनिक तैनात कर दिए थे। जयसिंह ३१ मई तक फतहाबाद छावनी मे ही रुका। अचानक ही उसको बख्तसिंह राठौड के विरुद्ध अजमेर की ओर प्रस्थान करना पडा। ६ जून को बहादुर सिंह ने उससे भेंट की।[2] ४ जुलाई को सम्राट ने पेशवा को मालवा मे नायब तथा ७ सितम्बर को सम्पूर्ण मालवा का फौजदार नियुक्त कर दिया।[3] सवाई जयसिंह की मृत्यु (सितम्बर २१, १७४३ ई०) से नवोदित जाट राज्य के राजनेता को भारी धक्का लगा। अब जाट शासक को मुगल दरबार से अपने सीधे राजनैतिक सम्बन्ध बनाने का प्रयास करना पडा।

११-राजत्व पद की अभिलाषा

राव बदनसिंह ने शस्त्रो की अपेक्षा चातुर्य, विवेक, असीम धैर्य तथा नम्रता की नीति व सिद्धान्तो का अनुसरण करके अपने मुल्क (देश) राज्य तथा शासन का विस्तार किया। उसने जाट डूंग व पालो के लुटेरा, उत्पाती जमीदारो व गांवो के मुकदमो को अपना निर्देश मानने के लिए बाध्य कर दिया था और उनके बीच मे बैठकर सम्मान प्रतिष्ठा तथा वैभव प्राप्त कर लिया था। प्रारम्भ मे उसने जाट डूंग व पाल सरदारो की एक 'सभा या कौमी परिषद' का गठन किया और उनकी सलाह से शासन करने लगा। बाद मे उसने दरबारी शिष्टता, सभ्यता, राजकार्य में निपुण अनेक मुस्लिम अधिकारियो, चतुर पण्डितों तथा कायस्थो को राज-सेवा मे रखकर प्रभावी सभ्य दरबार तथा शाही अमीरों की परम्परा पर सभा की स्थापना की। इन अधिकारियो ने जाट जमीदारो को शाही दरबारी परम्परा, शिष्टता तथा सभ्यता, बातचीत करने की शिक्षा-दीक्षा दी। हमको ज्ञात है कि राजा प्रतापसिंह ने मुस्लिम सभ्यता, कुलीन शिष्टता ग्रहण कर ली थी। प्रतापसिंह का सर्वत्र अधिक

---

१ – द०कौ०, जि० १८, पृ० ८४३, जि० १०, पृ० १०२३-११२३ (मुलाकात), जि० १८, पृ० ४३७, ८२१, ६१७, ८४३।

२ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४३१।

३ – एति० फा० सा०, स० २१, २४, पे० द०, जि० १५, लेख ८६, ८८, ८९, ९७-८, सरदेसाई, खण्ड २, पृ० २६३, राजवाडे, जि० ६, लेख १५१, पुरन्दरे, जि० १, लेख १४६।

मान-सम्मान होने लगा था। उसके पुत्र बहादुर सिंह ने अरबी तथा फारसी भी सीख ली थी। बदनसिंह को अपने देश मे राजा के अनुरूप आदर[1] मिलने लगा था और राजकीय परवानों मे 'राज श्री राजा बदनसिंह'[2] लिखा जाता था। निकटतम परगनो के जमीदार, शाही फौजदार, मनसबदार तथा जागीरदार भी उससे भयभीत रहते थे। १७२६ ई० के बाद सिनसिनवार-सोगरिया डूंग तथा सिनसिनवार-खूटेल परगनो से संयुक्त कायेड क्षेत्र 'जटवाडा या जाट राज्य' कहलाने लगा था।

कहा जाता है कि प्रारम्भ में बदनसिंह की हार्दिक अभिलाषा राजत्व पद प्राप्त करने की थी। यह भावना उभरने भी लगी थी। सम्भवत वह सवाई जयसिंह के अनुग्रह से उऋण होना चाहता था। कानूनगो के शब्दों मे "वह (बदनसिंह) शाही सिंहासन के सामने नतमस्तक होन के लिए तैयार था और वह इसको सहज प्राप्त कर सकता था। लेकिन जयपुर नरेश निजी स्वार्थ के लिए जाटो को अपने अधीन रखना चाहता था। सम्भवत इसी ईर्ष्या के कारण वह सफल नही हो सका।"[3]

राज्यपाल सरबुलन्द खा गुजरात प्रान्त मे मराठा प्रवेश को रोकने मे विफल रहा और बाध्य होकर उसको फरवरी, १७२७ ई० मे पेशवा के लिए गुजरात प्रान्त मे सरदेशमुखी संग्रह का अधिकार सौंप कर शान्ति समझौता करना पडा। मीर बख्शी खानदौरान ने सरबुलन्द खा क मनमाने अत्याचार, राजस्व प्रशासन में हस्तक्षेप तथा मराठो को सन्तुष्ट करने की नीति के विरुद्ध सम्राट के कान भरना शुरू कर दिया था। फलत १७३० ई० में खान के त्यागपत्र को स्वीकार करके जोधपुर के महाराजा अभयसिंह राठौड की गुजरात के राज्यपाल पद पर नियुक्ति की गई। सम्राट सर बुलन्द खा से इतना अधिक रुष्ट था कि उसने उस पर शाही दरबार मे भी उपस्थित होने पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। त्याग-पत्र स्वीकार करने और अभयसिंह राठौड की नियुक्ति का समाचार सुनकर सरबुलन्द खा ने विद्रोह कर दिया। २७ अक्तूबर को अभयसिंह राठौड ससैन्य गुजरात पहुँच गया और उसने विद्रोही राज्यपाल को परास्त करके अहमदाबाद पर अपना अधिकार कर लिया।[4] अपदस्थ राज्यपाल

---

१ – सरकार, खण्ड २, पृ० २८६

२ – परवाना, महन्त रामकिशन के नाम।

३ – कानूनगो, पृ० ६२।

४ – मी० अहमदी, खण्ड २, पृ० ११८, जोध० ख्यात, खण्ड २, पृ० २१३-४, राज रूपक, पृ० ५०-५१, सूरज प्रकाश, पृ० ५६, वीर विनोद, पृ० ८४४, टॉड, खण्ड २, पृ० ११, इर्विन, भाग २, पृ०२०५-१२, सरकार, खण्ड १, पृ०१५३, भार्गव, पृ० १६८-६, असोव, पृ० ३७१।

सरबुलन्द खां ने अपनी सेना के साथ उदयपुर अजमेर मार्ग से आगरा की ओर द्रुतगति से प्रस्थान किया। किन्तु बकाया वेतन न मिलने पर मार्ग में उसके सैनिकों ने विद्रोह कर दिया और उसको छावनी का साज-सामान, आभूषण आदि बोहरों के यहाँ रहन (गिरवी) रखना पड़ा। इस प्रकार कठिनाईयों को पार करके वह जाट राज्य की सीमाओं के समीप आया। आगरा का मार्ग जाट राज्य में होकर था और उसको पार करने के लिए ठाकुर बदनसिंह की अनुमति आवश्यक थी। सरबुलन्द खां के समीप आने पर बदनसिंह ने खिजर खां तथा नूर अली खां नामक अपने दो हाकिमों (अधिकारियों) को उसकी छावनी में अपना सन्देश लेकर भेजा, "जब तक बादशाह की उस पर अनुकम्पा न हो जावे और वह जाट सीमाओं में अपना शिविर डालकर रुकना चाहे तो उसे एक लाख रुपया का नजराना भुगतान करना पड़ेगा।" एक सप्ताह के बाद ये दोनों वकील नवाब सरबुलन्द खां के सामने प्रस्तुत हुए। इस समय नवाब के पैरों में पीड़ा हो रही थी और वह शिविर में पैर फैलाए बैठा था। जाट जमींदार के इस सन्देश को सुनकर वह हँसने लगा और उसने वकीलों से आश्चर्य के साथ कहा, "मुझे इस आतिथ्य सत्कार पर आश्चर्य है। लेकिन मैं अभी उस स्थिति तक नहीं पहुँचा हूं, जैसा कि बराबर वालों से मांग की जाती है। फिर भी, मैं जिस स्थिति में, जहां भी हूं, बड़े मजे में हूँ और मुझे किसी भी तरह की कठिनाई नहीं है। जब कभी मुझे जाटों के सहयोग की आवश्यकता होगी मैं सूचना भेज दूंगा।" यह कहकर उसने एक घोड़ा तथा अमूल्य जवाहरातों से जड़ित एक तलवार बदनसिंह के लिए उपहार में भेजी और इसी समय बदनसिंह के नाम एक पत्र भी लिखा। इस पत्र में उसने बदनसिंह को 'ठाकुर' पद से सम्बोधित किया था। इसके उत्तर में बदनसिंह ने पांच सहस्र रुपयों की भेंट के साथ एक अन्य पत्र भेजा। उसने लिखा, "उसको 'ठाकुर' की अपेक्षा पत्रव्यवहार में 'राजा' के विरुद से सम्बोधित किया जावे। सैय्यद हुसैन अली खां जब आगरा से दक्षिण की ओर बढ़ रहा था, तब उसने राव चूड़ामन को यह विरुद प्रदान करने का वचन दिया था, किन्तु सैय्यद की हत्या के कारण यह वचन अभी तक पूरा नहीं हो सका। फिर भी महाराजा जयसिंह ने थून गढ़ी पर अधिकार करते समय मुझको यह वचन दिया था कि आपको सम्राट से 'राजा' का विरुद प्रदान कराने का भरसक प्रयत्न करूंगा। यही नहीं, मुझे महाराजा अजीतसिंह तथा उसका पुत्र महाराजा अभयसिंह राठौड़ 'राजा', विरुद से उद्बोधित करते हैं।" नवाब ने उत्तर में लिखा, "मुझको विरुद प्रदान करने का कोई भी अधिकार नहीं है। केवल बादशाह ही विरुद प्रदान कर सकता है। फिर भी यदि मैं बादशाह का अनुग्रह पुनः प्राप्त करने में सफल रहा, तब मैं निःसन्देह आपकी इस भावना तथा मांग के लिए उनके समक्ष निवेदन करूंगा।" इसके बाद उसने भेंट की धनराशि बदनसिंह को लौटा दी और वह जटवाड़ा की सीमाओं को पार करके आगरा चला गया। जहां उसने एक वर्ष रुक कर सम्राट का अनुग्रह वरण करने का

सफल प्रयास किया और उसे इलाहाबाद के राज्यपाल पद की सनद प्रदान की गई।[1]

मुरतिजा हुसैन बिलग्रामी तथा मुहम्मद उमर के इस विवरण से स्पष्ट आभास मिलता है कि बदनसिंह अपने चाचा चूड़ामन के लिए प्रदत्त आश्वासन को पूरा करवाना चाहता था, किन्तु सवाई जयसिंह क निजी विस्तारवादी स्वाथ नीति के कारण वह आठ वर्ष (१७२३–३० ई०) तक 'राजा' का विरुद प्राप्त नहीं कर सका। फिर भी अगले दशक मे धीरे-धीरे वह स्वय स्वाधीन सत्ता का उपभोग करने मे सफल रहा। १७२८–२६ ई० मे बदनसिंह का परगना मथुरा म पर्याप्त प्रभाव बढ़ चुका था। ब्रजमण्डल के समस्त जमीदार, ग्रामो क जाट-गूजर, मुकदम तथा रैय्यत अपना नेता मानने लगी थी। १७२६ ई० के अठसतों से स्पष्ट है कि परगना मथुरा के गावो मे जोर तलब जाट मुकदमो को नियन्त्रित करने के लिए सवाई जयसिंह तथा मीर बख्शी खानदौरान के आमिलो को बदनसिंह का नियमित सहारा लेना पडता था। नि सन्देह इस समय से जाट शासक वर्ग यदुवश उत्तराधिकार का स्पष्ट रूप से उपयोग करके 'ब्रजराज' विरुद का उपभोग करन लगा था। यद्यपि विगत परम्पराओं के आधार पर जाटो के लिए 'ब्रजराज' का विरुद पवित्रता का प्रतीक नही स्वीकार किया गया, फिर भी ब्रज या मथुरा मण्डल पर अधिकार हो जाने के बाद प्रामाणिकता का मूल आधार[2] था। मुगल सम्राट मुहम्मदशाह, वजीर कमरुद्दीन, मीर बख्शी खानदौरान तथा सवाई जयसिंह जाटो की स्वाधीनता की भावना को प्रोत्साहित नहीं करना चाहते थे, फिर भी राठौड शासको ने जाटो को स्वाधीन मानकर एक सहयोगी राज्य का आदर्श प्रस्तुत किया था। जयसिंह ने बदनसिंह का अपने दरबार मे एक शाही मनसबदार की भाति सदैव आदर सत्कार किया था। अन्त मे वह भी जाट-जागृति, उनकी महत्वाकाक्षा, फौजी सहयोग की उपेक्षा नही कर सका। फरवरी–मार्च, १७३१ ई० मे सवाई जयसिंह मथुरा पहुँचा। मथुरा मण्डल में अस्थाई शान्ति व समृद्धि के लिए वजीर कमरुद्दीन खा ने अपनी जागीर महावन के ग्राम कोइला तथा अलीपुर बदनसिंह को जागीर म प्रदान कर दिये थे और मार्च ३०, १७३१ ई० (चैत्र वदि ८, स० १७८७) के दिन मथुरा में सवाई जयसिंह ने बदनसिंह के लिए 'राव' का विरुद प्रदान करके सिरोपाव दिया।[3] प्रारम्भ में सवाई जयसिंह अपने सामन्तों का कोपभाजन बनने की आशका से ही बदनसिंह को स्पष्टत 'ब्रजराज' नहीं मान सका। लेकिन जून १३, १७३४ ई० को जब कुंवर ईश्वरी सिंह को

---

१ – हदीक्त-उल्-अकालीम, पृ० ३८१, ६४१, खिजिर, खण्ड १, पृ० २२, इर्विन, खण्ड २, पृ० २१३।

२ – कानूनगो, पृ० ६२, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २८६।

३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४४०।

'युवराज' (कुँवर) पद प्रदान किया गया, तब बदनसिंह तुलाराम के साथ जयपुर पहुँचा। उस समय बदनसिंह को स्पष्ट शब्दों में 'ब्रजराज' उद्घोषित करके उसको ब्रजमण्डल का सरदार स्वीकार कर लिया गया था और १६ जून को विदाई में एक जड़ाऊ कलगी (रुपया ४७४० ५० पैसा) प्रदान की[१] गई।

कुँवर माधोसिंह तथा मल्हार राव होल्कर के नियमित आक्रमणों से परेशान होकर महाराजा ईश्वरीसिंह ने अपने सेनापति राजा अयामल खत्री को राव बदनसिंह के पास डीग भेजा। बदनसिंह स्वयं अपने वकील हेमराज कटारा तथा वकील बहादुर सिंह के साथ जयपुर पहुँचा और उसने कछवाहों की मुलाजमत की। सिरोपाव के साथ सात मोहर भेंट की। नवम्बर ३, १७४५ (कार्तिक सुदि १०, सं० १८०२) के दिन महाराजा ईश्वरी सिंह ने उसको 'ताजीम' दी और जरी का निशान (ध्वज) तथा पंच परिधान– जामा, फेंटा, इजार, मलाय बूंटादार, तुर्रा व इजाबरन्द प्रदान किये। राजा अयामल खत्री के हस्ताक्षरों से 'ताजीमी सरदार' की फर्द प्रसारित की गई। फिर मई २९, १७४७ ई० को जाट वकील हेमराज के पत्र की पालना में खत खास में बदन सिंह के लिए 'राव बहादुर' का खिताब लिखा जाने लगा और जुलाई ६, १७४८ ई० के दिन सूरजमल को 'युवराज' स्वीकार कर लिया गया।[२]

फादर वेण्डल के अनुसार सवाई जयसिंह ने बदनसिंह को सामन्ती चिह्न टीका, नक्कारा व निशान प्रदान करके ब्रजराज' विरुद से सम्मानित किया था *किन्तु यह सम्मान जाट शासक के व्यक्तित्व का भावात्मक प्रतीक मात्र था।* फिर भी एक नरेश के सम्मान सूचक चिह्न प्राप्त करके भी वह जन-उद्घोषित 'राजा' का विरुद[३] ग्रहण नहीं करना चाहता था और सम्राट के समक्ष जीवन पर्यन्त अपने आपको ठाकुर' मानने में ही बड़प्पन समझता रहा। नादिरशाह के आक्रमण का तात्कालिक लाभ जाटों को मिला। ईरानी तथा तूरानी सरदारों की आपसी दल-बन्दी, सत्ता तथा अधिकार की लड़ाई के कारण किसी भी मुगल अमीर में जाटों की बढ़ती जन-शक्ति पर चोट करने का साहस नहीं था। फिर भी मराठी प्रलेखों में हमको बदनसिंह के नाम के साथ 'ठाकुर' उपाधि का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। सम्भवतः बदनसिंह ने स्वयं 'राव' विरुद का प्रयोग नहीं किया था। बदनसिंह के द्वितीय पुत्र प्रतापसिंह को 'राजा' का पद प्रदान किया जा चुका था और ज्येष्ठ पुत्र *सूरजमल को कुँवर बहादुर, पौत्र जवाहर सिंह तथा रतनसिंह के लिए उसके ही* जीवन काल में मनसब प्रदान किए गए थे। इसका विवरण यथास्थान आगामी

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३६०, ४४३, जि० २४, पृ० ४७।

२ – उपरोक्त, पृ० ४४६, ४५६, ४६७, ४४७, ५५२।

३ – सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २८६।

ध्यायों मे दिया गया है। अत. यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि जाट शासक अति सम्पन्न हो गए थे। १७५२ ई० मे सफदर जग के अनुमोदन पर सम्राट ने बदनसिंह को महेन्द्र' की उपाधि[1] प्रदान कर दी थी। इस प्रकार तीस वर्षों मे बदनसिंह न 'ब्रजराज' तथा 'महेन्द्र' का विरुद उपार्जित कर लिया था और आन्तरिक राजकीय पत्रो मे 'राजा' शब्द का प्रयोग किया जाता था।

१२ –मुगल सरकार के साथ सम्बन्ध

सैय्यद बन्धुओ क पराभव के बाद सम्राट मुहम्मदशाह के दरबार मे ईरानी तथा तूरानी वर्गों मे शासन तथा सत्ता का सघर्ष काफी प्रबल था। मीर बख्शी खानदौरान की कमान म भारतीय मूल के मुस्लिम मनसबदारों, मुस्लिम जागीरदारो तथा भारतीय हिन्दू शक्तियो, जाट राजपूत आदि का अधिक जमाव था और उसने अपने राजनतिक उत्कर्ष, शक्ति तथा अधिकार के सघर्ष मे भारतीय शक्तियों का पक्ष पोषण करके सैय्यद बन्धुओ की उदार नीति का अनुसरण किया था। शाही दरबार म वह वास्तव म हिन्दू शक्तियों का मुख्य सचेतक तथा प्रवक्ता था। सवाई जयसिंह उसका एक मात्र अनुग्रही भारतीय सरदार था और जीवन पर्यन्त दोनो म उच्चतम राजनयिक सम्बन्ध यथावत स्थिर रहे। खानदौरान के प्रस्ताव पर ही सम्राट ने सआदत खा के स्थान पर सवाई जयसिंह को आगरा प्रान्त का राज्यपाल पद प्रदान करके अपनी शक्ति व प्रभाव को बढाया। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव जाट राज्य की स्थापना तथा स्वतन्त्र इकाई के रूप मे विकसित होने पर पड़ा। ठाकुर बदनसिंह ने खानदौरान की मनसब जागीरो मे सहयोगी हस्तक्षेप करके समय-समय पर इन जागीरो को इजारे पर प्राप्त कर लिया था।

विरोधी तथा अवसरवादियो ने अपने निजी स्वार्थ मे विरोधी पक्ष के राजनेता वजीर कमरुद्दीन खा के पास ठाकुर बदनसिंह के विरुद्ध लूट तथा उत्पातो की अतिरंजित शिकायतें की। किन्तु वजीर काफी आरामतलब तथा खानदौरान की अपेक्षा अधिक निर्बल था और वह जाटो से विरोध मोल लेकर शान्ति से नही बैठ सकता था। उसने भी अपने पक्ष की प्रबलता के लिए सदैव जाटों का ही पक्ष-पोषण किया। मार्च १७३० मे सम्राट ने परगना महावन वजीर की जागीर म प्रदान कर दिया था। इससे वजीर तथा कछवाहा आमिलो मे यमुनापारी महावन परगने के गावो की जमा पर झगडा होने लगा। जाटों ने बदनसिंह का संरक्षण प्राप्त करके भारी उपद्रव किये। इससे वजीर कमरुद्दीन खा ने कुछ जाट प्रधान गाव बदनसिंह के लिए इजारे पर उठा दिए।[2] फलत बदनसिंह के वजीर के साथ निकट सम्बन्ध बन

---

१ – सूदन, पृ० ५ ४४, ता० अ०, पृ० ४३ ब, ४५ ब, ईश्वर विलास, पृ० ५०, पद्य-मुक्तावली, वेण्डल, सरकार, भाग २, पृ० २६३ पा० टि०।

२ – अठसता, परगना मथुरा, १७२९–३१।

गये। इस प्रकार बदनसिंह ने समय-समय पर वजीर को भारी नजरें भेज कर शिकायतों को प्रभावहीन करवाने मे अनुकम्पा वरण कर ली थी।[१] फलतः जाट प्रभावी इलाको मे अन्य मुस्लिम मनसबदारों का रैय्यत से व्यक्तिशः सम्पर्क टूट गया था और वे इन जागीरो से दाना-घास, सैनिकों की भरती का भी प्रबन्ध करने में असमर्थ थे। जमींदार तथा रैय्यत बदनसिंह को ही अपना स्वामी समझने लगी थी। बदनसिंह के गुमास्ता ही इन परगनों में राजस्व वसूली करने लगे थे। समय निकलते ही ये मौजा तथा परगने जाट राज्य में समाहित हो गये।

मालवा में 'मराठो को सन्तुष्ट रखने' की जिस नीति की जयसिंह ने अभिदाषा की थी। वह नीति वजीर तथा मीर बख्शी मे आपसी प्रतिद्वन्द्वता का मूल कारण बन गई थी। सितम्बर, १७३२ मे वजीर कमरुद्दीन खा स्वयं आगरा आया, तब स्वभावतः बदनसिंह ने उससे भेंट की। वजीर ने परगना महावन के दो गाव कोइला (कोला) व अलीपुर बदनसिंह के प्रबन्ध में सौंप दिए। पुन. अप्रैल, १७३३ में वजीर ने मराठों को उत्तरी मालवा से बाहर खदेडने के लिये दिल्ली से नरवर तक कूच किया, तब आगरा मे जमीयत भरती की गई। आगरा प्रवासकाल मे वजीर ने 'पेशकश' भुगतान की शर्त पर परगना कोइल (अलीगढ़) में अनेक गाव बदनसिंह को जागीर मे प्रदान किए।[२] इससे यमुनापारी जाट इलाक पर बदनसिंह का प्रभाव व प्रभुत्व बढ़ गया और मुरसान के जाट कबीलों ने बदनसिंह को अपना स्वामी स्वीकार करके एक संगठन तैयार कर लिया।

बाजीराव पेशवा की राजस्थान यात्रा (१७३६) के समय यह प्रस्तावित किया गया था कि पेशवा स्वयं सम्राट से व्यक्तिशः भेंट करके मालवा सम्बन्धी प्रस्तावों पर विचार करे, किन्तु खानदौरान विरोधी पक्ष ने मराठो को नर्मदा तट के पार ही रोकने के लिए शस्त्र प्रयोग की सलाह दी। फलतः बाजीराव पेशवा ने विचाराधीन प्रस्तावो, प्रति-प्रस्तावो की दृढता के लिए अगले वर्ष (१७३७ ई०) राजधानी दिल्ली में मराठा घुडसवारों का अद्भुत प्रदर्शन करने का दृढ निश्चय कर लिया था और पेशवा को चम्बल नदी के पार रोकने के लिए दिल्ली मे सैनिक गतिविधिया तेज कर दी गई थी। वजीर कमरुद्दीन तथा मीर बख्शी खानदौरान की कमान मे दो सेनायें आगरा भेजने का प्रबन्ध किया गया। अवध के नवाब सआदत खा, सवाई जयसिंह, महाराजा अभयसिंह राठौड आदि के पास ससैन्य आगरा पहुँचने का फरमान भेजा गया। सवाई जयसिंह ने आगरा दुर्ग की मजबूती के लिए मार्च, १७३७ के

१ – अशोब, जि० २, पृ० २६३; ता० अ०, पृ० १०६ ब, इमाद, पृ० ६३; कानूनगो, पृ० ६१-२।

२ – अठसता मथरा तथा अकबराबाद।

प्रारम्भ मे राजा अयामल खत्री की कमान मे अनेक सरदार रवाना कर दिये थे। हस्ब-उल-हुक्म की पालना मे ठाकुर बदनसिंह ने भी राजा अयामल खत्री की सहायता के लिए अपने पुत्रो, सूरजमल व अखैसिंह के साथ ठाकुर तुलाराम, प्रताप सिंह चौहान, दयामसिंह खूटैल, फौंदाराम, बहादुरसिंह, हेमराज कटारा, विजैराम, (इहरा), महाबल सोगरिया, रामबल आदि की कमान मे सैनिक रवाना कर दिये थे और इन्होने आगरा दुर्ग की सुरक्षा, व्यवस्था भली भांति संभाल ली थी।[1] सवाई जयसिंह स्वय पन्द्रह सहस्र सवार व सत्तर हाथियो के साथ अनिच्छा से शाही आदेश की पालना में जयपुर से रवाना होकर नीमराना मे रुक गया और महाराजा अभय-सिंह राठौड दस-पन्द्रह सहस्र सेना व तोपखाना सहित रवाना होकर मौजाबाद या बसवा तक ही आ सका।[2]

मराठा वकीलो के माध्यम से सवाई जयसिंह बाजीराव पेशवा के निकट सम्पर्क में था और उसने मराठो से अपने देश मे लूटमार न करने की प्रार्थना की थी। यह समय राव बदनसिंह की कठिन परीक्षा का था। विषम परिस्थितियो मे वह शाही सेनापतियों या मराठो, दोनों मे से किसी एक का खुलकर विरोध या साथ नही दे सकता था। फिर भी इस समय उसकी हार्दिक शुभकामनायें व सहानुभूति पेशवा के साथ थी। पेशवा का दिल्ली मार्ग जटवाडा की सीमाओ मे होकर जाता था। अतः मराठा टुकडिया जाट राज्य मे निश्चित ही बरबादी करती। इससे जाट शासक ने मराठा वकीलो के लिए पेशवा को जटवाडा से सुरक्षित निकल कर जाने का आश्वासन देकर भारतीयत्व की भावना को स्पष्ट कर दिया था। दूसरी ओर प्रतिपक्षी दल के नेता वजीर कमरुद्दीन खा ने कामा की पहाडियो के निकट अपने सैनिक तैनात करके शिविर डाल दिया था। खानदौरान व मुहम्मद खां बगस ससैन्य दिल्ली से आगरा की ओर बढ रहे थे। बदनसिंह ने मुगल अमीरो को सन्तुष्ट रखने के लिए अपने राज्य मे रसद व्यवस्था करके मुगलिया सैनिकों की बरबादी से अपने राज्य को सुरक्षित रखने का सफल प्रयास किया।

फरवरी, १७३७ मे बाजीराव पेशवा पचास सहस्र सेना के साथ आगरा के दक्षिण मे ११२ किमी० तक आ धमका। मराठो के कोतल दलों ने आगरा से १६ किमी० दूर एतिमादपुर तथा मोतीबाग मे भारी बरबादी की। २३ मार्च को नवाब

---

१ – द०कौ०, जि० ७, पृ० ५४५, ३१०, ३६१, ५८६, ६०६, ४५८, ४६६, ४७३, ४८६, ४६६।

—२६ अप्रेल के दिन जयसिंह ने सभी सरदारों को सिरोपाव देकर सम्मानित किया था।

सम्रादक खां ने मल्हार राव होल्कर, पिलाजी जादव तथा विठोजी बुले को जलेसर (आगरा के उत्तर-पूर्व मे ४२ किमी०) के समीप करारी मात देकर पीछे खदेड दिया। इस बार मराठो को भारी क्षति उठानी पडी। नवाब सम्रादत खां का अतिशयोक्ति भरा गर्वीला विजय सम्वाद २५ मार्च को दिल्ली मे पहुँचा। इससे प्रसन्न होकर सम्राट के आदेश से मराठा वकील धोंडो गोविन्द (पन्त) को दरबार से निकाल दिया गया।[1] शाही सेनाओ के घेराव के बाद भी बाजीराव अपने निश्चित लक्ष्य पर दृढ रहा। वह कुशल कूटनयिक, सफल राजनयिक वीर पुरुष था। नि:सन्देह प्रारम्भ मे उसका विचार चम्बल नदी पार करके जटवाडा मुल्क म होकर दिल्ली पहुँचने का था, किन्तु उसने अब अपना मार्ग बदल दिया। थोडा नीचे हट कर उसने जटवाडा तथा मेवात मार्ग से दिल्ली की ओर तूफानी गति से कूच किया और ६ अप्रेल को खिजराबाद के समीप कालिका पहाडो पर अपना शिविर डाला। इस दिन रामनवमी का सास्कृतिक पर्व था। मराठा सवारो के उत्पात को देखकर भीड मे भारी भगदड मच गई। १० अप्रेल को मीर हसन खा कोका की कमान मे शामिल मुगलों से एक भडप तथा लूटमार, बरबादी करके पेशवा रेवाडी, कोटपुतली, मनोहरपुर, लालसोठ मार्ग से वापस लौट गया।[2]

तारीख-इ-हिन्दी के अनुसार "एक दिन मीर बख्शो खान दौरान ने सम्रादत खा को अपने शिविर मे भोजन पर आमन्त्रित किया। भोजन के बीच मे उसको पता लगा कि बाजीराव पेशवा फतहपुर (सीकरी) मार्ग से ठाकुर बदनसिंह (बदना) की गढी डीग को दाई ओर छोडकर दिल्ली की ओर बढ रहा है। बदनसिंह ने उसको दिल्ली तक सकुशल पहुँचान का उत्तरदायित्व स्वय स्वीकार कर लिया है। शाही सेनापतियो ने तुरन्त ही मथुरा स छावनी उठाने का निश्चय किया और बिना किसी प्रकार की शर्म के साथ दातो तले उगली दबा कर दिल्लो की ओर चल दिया।" बाजीराव पेशवा के इस अद्भुत प्रदर्शन ने मुगल अमीरो क अहकार पर भारी चोट की और उत्तर भारत की जनता पर मराठा शक्ति का आतक छा गया। मेवात तथा हरियाणा मे मेवातो तथा जाटो ने शाही परगनो मे भारी लूटमार की और शाही अमीरो की सेनायें भी उनकी लूट से नही बच सकी। 'जब खानदौरान तथा मुहम्मद खा बंगस ने मथुरा से दिल्ली की ओर प्रस्थान किया, तब होडल तथा पलवल के

---

१ – ब्रह्मेन्द्र चरित, लेख २७, पे० ८०, जि० ३०, लेख ११८, ३६६, जि० १५, लेख २२, २७, २८, ३७, ४७; शाकिर, पृ० ३२-८; रुस्तम, पृ० ५२८, सियार, २/४५७; हादिक, पृ०३८४, कासिम, पृ०३८७, अशोब, पृ०११४-५।

२ – ब्रह्मेन्द्र चरित, लेख २७; पे०८०, जि० १५, लेख ३७-४७; अशोब, पृ०११८-१२३, इर्विन भाग २, पृ० २८८-९४, सरदेसाई, पृ० १९८-२००।

बीच मे मित्रोल (होडल के उत्तर मे १४ किमी० तथा पलवल के दक्षिण मे १३ किमी०) गाव के जाट गुर्जरो ने मिलकर उसके पृष्ठ भाग में जा रहे सैनिक साज-सामान को लूट लिया। यह देखकर मुख्य सेना के सैनिको ने पीछे लौटकर इस ग्राम को घेर लिया और उसको बरबाद कर दिया।[१] इस उत्पात से मुगल फौजो के मार्ग मे अचानक ही बाधा पड गई थी और वह पेशवा के दिल्ली से वापिस लौटने से पूर्व घटना स्थल पर नहीं पहुँच सकी। इस प्रकार बदनसिंह ने अपने आश्वासन को पूर्ण करके मराठो के लिए अपरोक्ष सहायता प्रदान की।

१३-भूपाल युद्ध मे प्रतापसिंह का पराक्रम, जनवरी १७३८ ई०

बाजीराव पेशवा क इस अद्‌भुत कौशल से सम्राट मुहम्मद शाह को भारी निराशा हुई और उसने नवाब सम्रादत खा के प्रस्तावो को ठुकराकर मालवा स मराठो को निकालने की पूर्व शर्त पर दक्षिण से निजामुल्मुल्क को दरबार मे आमन्त्रित किया। जुलाई १२, १७३७ (१५ रबी-उल-अव्वल, हि० ११५०) को वह दिल्ली पहुँच गया, जहा १३ जुलाई को सम्राट ने उसको 'वकील-इ-मुतलक' की खिलग्रत (पोशाक), आसफजहाँ का श्रेष्ठतम विरुद प्रदान किया। शाही दरबार मे एक बार पुन तूरानी दल का प्रभाव बढ गया। १३ अगस्त को सवाई जयसिंह के स्थान पर निजामुल्मुल्क के ज्येष्ठ पुत्र गाजीउद्दीन को आगरा व मालवा प्रा त का राज्यपाल पद प्रदान किया गया और आसफजहा को मराठों के लिए मालवा मे बाहर निकालने का आदेश दिया। इसी समय अनेक प्रमुख अमीरों भारतीय नरेशो व जमीदारों के नाम इस अभियान मे शामिल होने के लिए फरमान, हस्व उल हुक्म व परवाना भेजे गए। निजामुल्मुल्क ने तीस सहस्र चुनि दा फौज के साथ अक्तूबर, १७३७ मे दिल्ली से आगरा की ओर प्रस्थान किया और आगरा प्रान्त की व्यवस्था के लिए अपने पुत्र की ओर से अपने निकटतम रिश्तेदार (मुहीउद्दीन कुली खा) को नायब नियुक्त किया।[२] ठाकुर बदनसिंह ने निजामुल्मुल्क क परवाना का समुचित सम्मान किया और उसने अपने द्वितीय पुत्र प्रताप सिंह (वैर) की कमान में बन्दूकची सवारो की एक सुदृढ काठेडी सेना आसफजहा के साथ रवाना की।[३] सवाई जयसिंह

---

१ – रुस्तम अली, पृ० ५४३, इर्विन, भाग २, पृ० २८८।

२ – अशोब, पृ० १२५ अ, सियार, जि० १, पृ० २६६-७, कासिम, पृ० ३५६; पे० द०, जि० १५ लेख २३, २६, २६, ३३, ५३, जि० १०, लेख २७, माधवराव, पृ० १३३-३७, खुशहाल, पृ० १०८२, दिघे पृ० १४५।

३ – द० कौ०, जि० २४, पृ० ३६, सूदन, पृ० ५, २३४, सोमनाथ (रस पीयूष निधि, माधव विनोद)

राजवाडे (खण्ड ६, ११७) के अनुसार बदनसिंह का पुत्र शामिल' था। म० उमरा के अ ग्रेजी अनुवाद के अनुसार 'उसने (मोट्कम)*

ने भी अपने पुत्र कुंवर ईश्वरी सिंह को राजा प्रयामल खत्री के संरक्षण मे मराठा विरोधी अभियान मे शामिल होने के लिए भेजा।

आसफजहा ने ग्वालियर की अपेक्षा आगरा से काल्पी, बुन्देलखण्ड मार्ग से सिरोज होकर भूपाल की ओर प्रस्थान किया। मार्ग मे बुन्देला नरेश भी ससैन्य उसके साथ शामिल हो गए। इस प्रकार भूपाल पहुँचने तक उसकी कमान में पचास सहस्र सैनिक तथा विशाल तोपखाना एकत्रित हो चुका था।[1] दिसम्बर के द्वितीय सप्ताह म मराठो के कोतल दलो ने निजाम की छावनी के समीप पहुँचकर उत्पात शुरू कर दिया। फलत तोपखाना क बचाव के लिए निजाम को भूपाल के दुर्ग की ओर कूच करना पडा। दिसम्बर १३, १७३७ (पौष वदि ७, स० १७९४) को कुवर प्रतापसिह ईश्वरीसिह के डेरों पर मिलने [2] गया और उसे मराठा दलो को मुख्य सैनिक छावनी से दूर रखने के लिए अन्य बुन्देला सैनिको के साथ तैनात किया गया। इस प्रकार आसफजहा मराठो के कोतल दलो स लडता-भगडता सेना तथा तोपखाना के साथ २३ दिसम्बर को सिरोज से प्राचीर युक्त नगर भूपाल पहुँच गया। २४ दिसम्बर को प्रातः काल बाजीराव पेशवा स्वयं मुगल सेना से दस किमो०दूर आ धमका और उसने मल्हार राव, राणोजी सिंधिया, पिलाजी जादव को अग्र पक्ति मे तैनात करके भूपाल दुर्ग का घेरा डालने के लिए रवाना किया। इधर कुवर प्रताप सिंह, ईश्वरी सिंह तथा महमद खा के पुत्र ने तोप युद्ध शुरू किया। दिन भर भयकर युद्ध चलता रहा। इस दिन के सघर्ष मे जाट सवारों ने मराठों का खुलकर सामना किया। जाट सवार अति निर्भीक, आन के पक्के, चतुर चुनिन्दा सवार थे और रणक्षेत्र मे प्राणो की बाजी लगाने के लिए सदैव प्रस्तुत रहते थे। सूदन के अनुसार 'भूपाल युद्ध मे प्रताप सिंह हरावल (अग्र पक्ति) का नेतृत्व कर रहा था और उसने बाजीराव पेशवा पर विजय प्राप्त की।[3] सोमनाथ साहित्य के अनुसार, "घोडे पर सवार प्रतापसिंह उत्साह

● अपने रिश्तेदार (आपस वाले) को सेना के साथ रवाना किया।' (पृ० ४४१); ना० प्र० सभा के हिन्दी अनुवाद में 'उसने (बदनसिंह) अपने एक आपस वाले को सेना सहित भेजा।' (खण्ड १, पृ० १२८), डॉ० भटनागर लिखता है कि बदनसिंह ने अपने पुत्र सूरजमल के साथ एक जाट दस्ता भेजा (पृ० १६५), जबकि अन्यत्र लिखता है कि बदनसिंह ने अपने पुत्र प्रतापसिंह के साथ एक टुकडी भेजी (पृ० २४१)।

१ – सियार, भाग १, पृ० २६७।

२ – द० कौ०, जि० २४, पृ० ३७।

३ – (१) सग निजामुलमुल्क गढ़ भूपाल मभार।
जीत्यो बाजीराव सौं, सिंह प्रताप कुवार॥ — सूदन, पृ० ५१।

(२) प्रतापा कहौ कौन तौ मैं बताऊ?
लरयो दुग्ग भूपाल मे जो अगाऊ। —सूदन, पृ० २३४।

के साथ बाजीराव पेशवा के सामने पहुँच गया और उसने धनुष से बाण बरसा-बरसा कर मराठो के जिरह-बख्तर तोड डाले। उसने कज्जकाना दलो का उत्साह व घमण्ड चूर करके धूल मे मिला दिया। मराठो के गोल (मध्य भाग) को तीक्ष्ण तलवार की धार, बर्छा तथा बाणो से विचलित करके पीठ मोडने के लिए बाध्य कर दिया। उसन दक्षिणियो में यश, प्रतिष्ठा अर्जित की और उसकी कमान म तैनात जाट सवार निजाम तथा अन्य अमीरो को बचाकर ले आये।''[1] समसामुद्दौला का मत है कि भूपाल युद्ध मे जाट सैनिकों ने अच्छी वीरता का परिचय दिया।'[2] इस युद्ध मे मराठो के तीन सौ सवार तथा राजपूतो के पाच सौ सैनिक बुरी तरह घायल हो गए।[3] अन्त मे निजाम ने अपनी राजपूत-जाट टुकडियो को रणक्षेत्र से वापिस बुला लिया। २५ दिसम्बर (पौष सुदि ५) के दिन कुवर ईश्वरी सिंह ने युद्ध में दिखलाई वीरता के लिए प्रताप सिंह को जडाऊ सरपेच व सिरोपाव प्रदान करके सम्मानित किया।[4] २६ दिसम्बर (५ रमजान) को आसफजहाँ ने अपने विशाल तोपखाने की सुरक्षा के लिए भूपाल दुर्ग मे प्रवेश किया।

बाजीराव ने दुग को घेरकर रसद व्यवस्था पूर्णत भग कर दी थी। एक सप्ताह से कम समय मे ही दुर्ग मे रसद, खाद्यान्न, चारा तथा जल को कठिन समस्या बन गई थी। फलत निजाम को बाहर निकलना पडा और चार-पांच मील (७-८

---

१ - (अ) छायो उग्र ध्याइ बाजेराव सन्मुख ह्वै कै,
जाकी बांह छाह बसै सहर सितारा है।
खेत भुवपाल के प्रचण्ड प्रतापसिंह,
इतने उमण्डित सिन्धु रहकारा है॥
'सोमनाथ' कहै भारी भीम घमसान भयो,
अमर विमान कम्पे बज्जत नगारा है।
जोरि सर धनुष सौं तोरि बखतर,
जोर गरब गनीम का गरद करि डारा है॥
—रा०च० र०, छन्द ४३।

(ब) उद्यत बाजियराव बली, भुपाल के खेत अचानक आयौ।
तच्छन श्री परताप कुवर गइयन्द सवार सम्मुख धायौ॥
तिच्छ बरच्छिनि बावँनि खग्गनि मारि गनीम को गोल भगायौ।
दक्षिण से निज नाम कमाय, बचाइ कै मीर निजामहि लायौ॥
—रा० च० र०, छन्द ४७।

२ - म० उमरा (हि०), भाग १, पृ० १२८।

३ - राजवाडे, खण्ड ६, लेख ११७, पे० द०, जि० १५, लेख ५, जि० ३०, लेख २०७।

४ - द०को०, जि० २४, पृ० ३८।

किमी०) प्रति घण्टा की गति से विशाल तोपखाने के सरक्षण मे भारी साज सामान के साथ दिल्ली की ओर चल दिया। जाट–राजपूत तथा बुन्देला सैनिकों ने रक्षा पक्ति का काम किया।[1] अन्य कही से नई मदद न मिलने की सम्भावना से निजाम को बाध्य होकर समझौता वार्ता शुरू करनी पडी। मराठो ने उसको बुरी तरह घेर रखा था। उसने राजा अयामल खत्री, सैय्यद लश्कर खा आदि अन्य सरदारों को पेशवा के शिविर मे वार्ता करने भेजा और अन्त में जनवरी १६, १७३८ (२६ रमजान) को सिरोज से १०३ किमी० उत्तर मे दुराहासराय नामक स्थान पर उसको अति अपमान जनक समझौता पत्र पर हस्ताक्षर करने पडे।[2] यह बाजीराव पेशवा की महान विजय थी और अब चम्बल पर्यन्त मालवा प्रान्त मराठों के हाथो मे स्थाई रूप से चला गया था। भूपाल से प्रस्थान करके निजाम ससैन्य मार्च मे आगरा आ गया, जहा जाट तथा राजपूतो को उसने विदाई दी। ६ मार्च को ईश्वरी सिंह ने डीग मे ठाकुर बदनसिंह से मुलाकात की और फिर कछवाहा ससैन्य जयपुर लौट गये। निजाम ने कु वर प्रताप सिंह की सेवाओ को पुरस्कृत किया और उसको 'राजा' का विरुद देकर शाही मनसबदार बनाया गया। नि सन्देह दुराहासराय का समझौता 'मराठो को सन्तुष्ट रखने' की नीति का ही परिणाम था। अब जयसिंह को आगरा का नायब पद पुन प्रदान किया गया और ३० अगस्त को उसने दयोदास खत्री को आगरा मे अपना नायब नियुक्त[3] करके भेजा।

---

१ – पे०द०, जि० २२, लेख ३६६, इर्विन, भाग २, पृ० ३०४–५।

२ – ब्रह्मेन्द्र चरित, लेख ३५-३६, ११६, पे०द०, जि० १५, लेख ६६, ८७, विधे, पृ० १४८–६, मालवा, पृ० २६१–२, सतीश, पृ० २३५।

—डॉ० युसुफ हुसैन का कथन है, "घोर संघर्ष के समय राजपूत तथा बुन्देलों का विश्वास नहीं किया जा सकता था, क्योंकि वे शत्रु पक्ष को निजाम की योजना व उद्देश्य की गुप्त सूचनायें भेज रहे थे। खानदौरान निजाम का विरोधी था और उसने राजपूतों के साथ मिलकर निजाम को सहयोग न करने की मत्रणा कर ली थी। (निजामुल्मुल्क आसफजहाँ फर्स्ट, पृ० १२३, २१४), ब्रह्मेन्द्र चरित (लेख, ३३) तथा अन्य प्रलेखों में मराठों को राजपूतों से सहयोग मिलने का कोई उल्लेख नहीं मिलता है। रुस्तम् अली निजाम की अदूरदर्शिता तथा भूपाल दुर्ग में शरण लेने की गलत नीति को ही पराजय का कारण मानता है। (ता० हिन्दी, पृ० ५४६–५०), अन्य सन्दर्भों में भी इस प्रकार का कोई उल्लेख नहीं मिलता है।

३ – द० कौ०, जि० ३, पृ० ७०२ :

१४–नादिर शाह् का आक्रमण और साम्राज्य का विघटन, १७३९ ई०

'तुर्कमान' डाकू के नाम से विख्यात नादिर ने १७३६ मे ईरान साम्राज्य का राजमुकुट धारण किया और कधार, बलख, बुखारा पर ईरान का ध्वज फहराने लगा।[1] कधार के पतन (१२ मार्च, १७३८) के बाद १९ जून को काबुल, १७ सितम्बर को जलालाबाद पर अधिकार करने के बाद जनवरी, १७३९ मे लाहौर पर विजय पताका फहराई और अब उसने दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। दिल्ली दरबार वशंगत व दलगत सघर्ष, ईरानी–तूरानी सरदारो के व्यक्तिगत षडयन्त्रो का अखाडा था। जब नादिरशाह् ने लाहौर से दिल्ली की ओर कूंच किया, तब खान–दौरान के परामर्श पर सम्राट ने पेशवा, राजस्थान के राजपूत नरेशो, राज्पालो, नवाबों तथा जमीदारों के नाम शीघ्र ही राजधानी मे आकर उपस्थित होने के लिए फरमान व आदेश–पत्र भेजे, किन्तु किसी ने भी इन फरमानो की ओर ध्यान नहीं दिया।[2] मुगल दरबार मे सवाई जयसिंह का वकील राव कृपाराम कुछ सैनिको के साथ मौजूद था। वह कुछ जाट सैनिकों के साथ खानदौरान के चन्दोल की रक्षा के लिए तैनात किया गया। मीर बख्शी खानदौरान के घायल हो जाने तथा सम्रादत खा के बन्दी बनाए जाने पर वृहस्पतिवार फरवरी २४, १७३९ ई० को करनाल युद्ध मे सम्राट मुहम्मद शाह ने अपनी पराजय स्वीकार कर ली थी।[3] अब नादिरशाह् ने दिल्ली आने का निर्णय किया और ६ मार्च को सम्रादत खा के लिए सम्राट की ओर से वकील–इ–मुतलक और नादिर शाह ने अपनी ओर से तहमास्प खा जालेर को पूर्ण शक्ति सम्पन्न महादूत नियुक्त करके चार सहस्र सवारो के साथ दिल्ली दुर्ग पर अधिकार कर वहा नादिरशाह के स्वागत की तैयारिया करने के लिए रवाना किया। इनके साथ मे निसार मुहम्मद खा शेरजग (भतीजा सम्रादत खा) तथा कमरुद्दीन खा का भतीजा अजीमुल्ला खा भी दिल्ली आ गया था। राजधानी में शाही प्रतिनिधि लुत्फुल्ला खा ने शाही फरमान की पालना मे दुर्ग तथा कार्यालयों की कुंजिया तहमास्प खा को सौंप दी थी।[4]

---

१ – लोकहार्ट, पृ० १०५–१११।

२ – राजवाड़े, जि० ६, लेख, १३०, सियार, जि० १, पृ० ४८२, इर्विन, जि० २, पृ० ३३१६ दिघे, पृ० १५१–५२।

३ – जेम्स फ्रेजर, दि हिस्ट्री आफ नादिरशाह, पृ० १५३; लोकहार्ट, पृ० १३७–६; सियार, जि० १, पृ० ४८३; इर्विन, जि० २, पृ० ३४५–७, ३५४; अवध, पृ० ६८–७१।

४ – अशोब, पृ० २६३, बहार, पृ० ८६, ता० मुजफ्फरी, ३३७–८, शाकिर, पृ० ४४, इर्विन, भाग २, पृ० २५५–६।

२५ फरवरी को ही करनाल युद्ध के सभी समाचार दिल्ली तथा आसपास फैल गए थे और राजधानी मे भारी अराजकता, भयंकर भय व आतंक छा गया था। दिल्ली तथा समीपस्थ परगनों के सम्भ्रान्त नागरिक, पू जीपति, सर्राफ, सेठ-साहूकारो ने चल-सम्पत्ति के साथ भागकर मथुरा, आगरा तथा जाट प्रशासित परगनो में शरण ली, जहा बदनसिंह ने इन परिवारो को सुरक्षा प्रदान की। मराठा प्रलेखो के अनुसार मार्च के प्रथम सप्ताह में जनता तथा राज्य की रक्षार्थ सूरजमल स्वय स-सैन्य दिल्ली के पड़ौस में पहुँच चुका था। मराठा वकील बाबू राव मल्हार जब करनाल की रणक्षेत्र से ७ मार्च को दिल्ली के लिए रवाना हुआ, तब वह १० मार्च को सूरजमल छावनी मार्ग से सकुशल जयपुर पहुँचा। ६ मार्च को सम्रादत खा दिल्ली के निकट आ गया था। उसने अपने पक्ष की सबलता के लिए भारतीय शक्तियो से सम्पर्क स्थापित करने का शीघ्र ही प्रयास किया। दिल्ली के निकट मात्र जाट जन शक्ति पर्याप्त प्रबल व सम्पन्न थी। बदनसिंह तथा सम्रादत खा मे काफी मित्रता थी। अत इसी पुरातन मित्रता के आधार पर उसने जाटो का सहयोग तथा समर्थन प्राप्त करने का प्रयास किया। तब वह दिल्ली से पलवल आया, जहा दूसरे दिन सूरजमल ने वहा पहुँच कर उससे भेंट की।[1] ११ मार्च को नादिर शाह ने मुहम्मद शाह के साथ करनाल से दिल्ली की ओर कूँच कर दिया था और १६ मार्च को उसने भव्य स्वागत सत्कार के साथ राजधानी मे प्रवेश किया। दिल्ली मे ५७ दिन रुककर उसने भयकर लूट-मार तथा बरबादी की। बीस सहस्र निर्दोष व्यक्ति मारे गए। अन्त में एक करोड रुपया नकद, हीरा-जवाहरात, तख्ते-ताऊस तथा कोहनूर हीरा, सिंधु-पार के पश्चिमोत्तर प्रान्तो का हस्तान्तरण-पत्र प्राप्त करके १५ मई (७ सफर) को दिल्ली से वापिस लौट गया।[2]

नादिर के दिल्ली प्रवास काल मे यह सम्भावना सर्वत्र व्याप्त हो चुकी थी कि उसका विचार दिल्ली से शेख मुईउद्दीन चिश्ती की दरगाह — अजमेर तक की तीर्थ-यात्रा करने का है। प्राय. सभी हिन्दू शासक अपने राज्य, परिवार तथा नागरिको की सुरक्षा-व्यवस्था की तैयारी करने लगे। महाराजा उदयपुर ने अपने परिवार को सुदूर अज्ञात पहाडी स्थान की ओर तथा सवाई जयसिंह ने अपना परिवार उदयपुर रवाना कर दिया था। वह स्वय जयपुर की रक्षा तथा आवश्यकता पडने पर भागने की तैयारी मे था। पेशवा नादिरशाह को नर्मदा नदी के तट पर रोकने की योजना बना रहा था।[3] दिल्ली के पडौस में जाट शासक प्रथम बिन्दू था।

---

१ - राजवाड़े, खण्ड ६, लेख १३१ (मार्च १७, १७३९ ई०)।

२ - लोकहार्ट पृ० १५१-३, पे०द०, जि० २२, लेख ३६६, जि० १५, लेख ८३, बे० क्रॉनो. इंडिन भाग २. पृ० ३७०-५१।

कतिपय मुगलो की आखों मे, ठाकुर बदनसिंह अभी तक एक सामान्य विद्रोही सरदार था और वह सर्वाधिक सजा का पात्र था। इस प्रकार नादिरशाह हिन्दुस्तान में कुछ समय और रुकने का विचार करता या अजमेर की तीर्थ-यात्रा करता तो बदनसिंह को ईरान के बादशाह की शक्ति का सामना करना पड़ता। परन्तु उसका ध्यान पड़ौसी पश्चिमोत्तर प्रान्तो तक ही सीमित था, इससे जाट मुल्क, जाट जन-शक्ति बरबादी से बच गई।[1]

नादिरशाह के लौटने के बाद देश मे भारी अराजकता फैली और मथुरा जिले में जाट विद्रोह ने जोर पकड लिया। रुस्तम अली के अनुसार, "महावन के जाटो ने विद्रोह कर दिया था। जाट क्रान्तिकारियो ने परगना फिरोजाबाद के हाकिम काजिम को पकड़कर मार डाला और उसकी सभी सम्पत्ति तथा शाही कोष को भी लूट लिया। जाट सरदार ने अपने आपको बख्तर शाह घोषित करके पाच सहस्र की भीड़-भाड एकत्रित कर ली थी। उन्होंने चारो ओर भारी उत्पात किया तथा लूटमार की। इस स्थिति मे जून २८, १७३९ ई० को छ: सहस्र सवारो की एक सेना के साथ कमरुद्दीन खा के भतीजे अजीमउद्दौला खा (अजीमुल्लाह) तथा निसार मुहम्मद खा शेरजग को महाबन के जाट क्रान्तिकारियो के दमन के लिए तैनात करके दिल्ली से रवाना किया गया।[2] उन्होंने कठिनपरिश्रम के बाद उनका पीछा किया। क्रान्तिकारी यमुना व चम्बल नदी पार करके भदावर प्रान्त मे निकल गए। इस समय चम्बल नदी पूर्ण वेग पर थी। इससे मुगल सवारो को बाध्य होकर महाबन के क्रान्तिकारियो के विरुद्ध फौजी कार्यवाही स्थगित करनी पडी।"[3]

कहा जाता है कि इस विद्रोह म भिण्ड के जमींदार राजसिंह भदौरिया का हाथ था और वह चम्बल पार भदावर के सम्पूर्ण इलाके पर अपना अधिकार करना चाहता था। उसने अटेर पर भी चढ़ाई कर दी थी। सम्राट ने सवाई जयसिंह से भदावर के जमींदार के विरुद्ध सेनायें भेजने का अनुरोध किया। फलत जयसिंह ने ४ जून को नारायण दास खत्री के साथ कुंवर सूरजमल की कमान में जाट सेनायें भदावर की ओर रवाना कीं। जाट कछवाहा सैनिक चम्बल नदी के पार भदावर प्रदेश मे पहुँच गए। राजसिंह को पीछे हटकर समर्पण करना पडा। जाट कछवाहो ने अपने सयुक्त प्रयास के बाद हिम्मतसिंह भदौरिया को अटेर की गद्दी पर आरूढ किया।[4] सूरजमल ने भदावर में अच्छी वीरता का परिचय दिया। इससे नारायण दास

---

१ – वेण्डल, कानूनगो, पृ० ६२।

२ – दे० कॉनौ, पृ० ६।

३ – तारीख-इ-हिन्दी (इ० डा०, खण्ड ८, पृ० ४९)।

४ – हिगणे दफ्तर, भाग १, लेख २१।

व तत्परता से सेवा करने का प्रयास करता रहा।"[1] यद्यपि सूरजमल तथा प्रतापसिंह दोनों भ्राताओ मे राजनैतिक तथा प्रबन्ध नीति सम्बन्धी मतभेद थे और प्रताप सिंह के गरल पान[2] (नवम्बर, १७४५ ई०) और सूरज-जवाहर (पिता-पुत्र) मे आपसी मतभेद की कष्टदायक घटनाओ से उसके हृदय मे गहन सताप था और वह उदविग्न रहता था। फिर भी हमको जाट इतिहास के मौलिक सन्दर्भों, लोक-वार्ताओ तथा घटनाओ के विश्लेषण से सताप की जानकारी नही मिलती है। अत. अब्दुलकरीम[3] का कथन अधिक भ्रामक है। वास्तव मे वृद्ध पुरुष का गोलोकवास सुख, वैभव तथा ऐश्वर्य के बीच मे हुआ था।

१३—बदनसिंह का परिवार

(अ) रनिवास

फादर वेण्डल फाकोज के आधार पर यदुनाथ सरकार का मत है कि राव बदन सिंह ने अपने विवाह ऐसे घरानो में किये जो उसके पूर्वजो के समकक्ष माने जाते थे। इसके अलावा उसने विभिन्न जाति की कितनी ही महिलायें अपने हरम मे रखी। जिससे पता चलता है कि उसके पास बहुत धन था। भागवत पुराण के अनुसार उसके प्राचीन पूर्वज गोपाल, जो मथुरा मे राज्य करता था, एक सौ युवतियो से घिरा रहता था। बदनसिंह ने इसमे और तरक्की की। उसके अन्त.पुर (रनिवास) में एक सौ पचास स्त्रिया थी। कुछ राजी होकर आई थीं और कुछ बलपूर्वक लाई गई थी।'[4] 'मजमा-उल अखबार' का लेखक हरसुखराय के अनुसार बदन सिंह के हरम में सैकडों रखैल थी।[5] जॉन कोहन लिखता है बदन सिंह के हरम मे एक से एक बढकर अति लावण्यशील, सौन्दर्यमयी लगभग चार सौ रानिया थी।[6] खेडा जगाओ की पोथी मे प्राप्त सूची के अनुसार बदन सिंह के अन्त.पुर मे पच्चीस पत्निया थी।[7]

---

१ — म० उल उमरा, भाग १, पृ० १२८।
२ — अब्दुल करीम, पृ० १३३; कानूनगो, पृ० ६४।
३ — बयाने वाकई, पृ० १३३।
४ — सरकार (मु०) भाग २, पृ० २६१—२, वेण्डल।
५ — इ० डा०, खड ८, पृ० ३६२।
६ — जॉन कोहन, पृ० १६ अ।
७ — (१) देवकी, कॉमर के चौधरी अखैराम (गोत्र भंनवार) की पुत्री, (२) देवकी की बहिन सहोदरा, (३) कठूमर के चौधरी पतराम (रोजधार) की पुत्री सहजो, (४) आगरा के चौधरी रामा की पुत्री जसोदा (५) चौधरी हिरदेराम की पुत्री सतइया तथा (६) मयाकौर, (७) चौधरी खेमकरन (पचेरे रावत) की पुत्री महाकौर (८) भगवती (९) गुढ़ावली के चौधरी तिठाद *

ठाकुर गंगासिंह जागाओं की सूचना को अधिक सही मानते हैं।[1]

राजपूतों की सामन्ती परम्परा से इतर जाट ठाकुर, फौजदार या चौधरियों के यहां प्राय: सभी पत्नियों को समान सम्मान मिलता है। उनमें ऊंच-नीच (आला-अदना) का व्यवहार नहीं होता। इस प्रकार बदन सिंह के रनिवास में रहने वाली पत्नियों में छोटी-बड़ी, वंश, गोत्र या जाति के आधार पर किसी भी पत्नी को पटरानी या ज्येष्ठा का सम्मान प्राप्त नहीं था। 'सुजान चरित' के लेखक[2] ने बदन सिंह के पुत्रों का वर्गीकरण किया है। इस वर्गीकरण तथा अन्य आंचलिक इतिवृत्तों[3] के सन्दर्भ से ज्ञात होता है कि उसके अन्त:पुर में बाईस ठकुरानियां थीं।

सम्भवत: फादर वेण्डल, जॉन कोहन तथा हरसुखराय ने भ्रांतिवश ड्योढ़ियों पर तैनात लालियां (लाडली)[4] या परिचारिकाओं को भी बदन सिंह की पत्नियां समझ लिया था। जनानी ड्योढियों पर सभी वर्ग की महिलाओं का एक अन्य समूह भी रहता था और वे परिचारिकाओं का कार्य निष्पादित करती थीं। इनको जाट राज्य में लाली (लाडली) से सम्बोधित किया जाता था। इनकी सेवा या चाकरी केवल ड्योढ़ियों तक सीमित थी। पर्दा व्यवस्था की कठोरता के कारण वे राजा के सामने भी उपस्थित नहीं हो सकती थीं। अस्तु इन लेखकों ने गल्पों के आधार पर रनिवास में विभिन्न वर्गों की कार्यरत महिलाओं को भी बदनसिंह की पत्नी मानकर 'राजपूती सामन्ती' परम्परा के सिद्धान्त' पर उसके ऐश्वर्य व वैभव का दिग्दर्शन कराने की कुचेष्टा की है।

* (बैसवार) की पुत्री तुरसा तथा (१०) मोठो, (११) चौधरी रामसिंह (सूरौठिया) की पुत्री सरुपो, (१२) हरको, (१३) मानो (१४) महाकौर (१५) मानो, (१६) सहार के चौधरी कृपाराम (मदरन) की पुत्री मज्जो, (१७) नौनैरा के राजपूतों की पुत्री सदाकौर, (१८) हलैना के चौधरी बल्ला (सोहरौत) की पुत्री अनुसिया, (१९) किशनी, (२०) रामो, (२१) बीरा (२२) लच्छो (२३) गोढ़ा, (२४) गढ़नेर के चौधरी भूपा (मगोहर) की पुत्री अनभा और (२५) किसनी।

१ – यदुवंश, पृ० ११०।

२ – सूदन, पृ० ५–६।

३ – बलदेव सिंह, पृ० २०। वाक्या राज, जि० २, पृ० ४३।

४ – राजपूत नरेशों तथा रावों के अन्त:पुर में, जागीरदारों के रावलों में रानियों की सेवा चाकरी में नियुक्त सेविकायें चेरी, लौंडी, दासी, बांदी आदि कहलाती थीं। इनमें से अनेकों का राजा, राव या जागीरदारों के साथ गुप्त शारीरिक सम्बन्ध था। किन्तु जाट राज्य की परम्परायें भिन्न थीं। रनिवास की सेविकायें रानी की सेवा मात्र करती थीं [illegible]

(ब) बदन सिंह की सन्तानें

फ्रेंच लेखको के विवरण के आधार पर यदुनाथ सरकार लिखते हैं–"बदन सिंह ने अपने पुत्रो मे से तीस को अपने राज्य के विभिन्न गावो मे जागीरदार बना दिया था और लगभग इतने ही और थे, परन्तु उनके विषय में कोई विशेष जानकारी नही है।" सूदन हरसुखराय तथा जॉन कोहन के अनुसार बदन सिंह के बीस पुत्र थे।[1] अन्यो ने छब्बीस पुत्रों की नामावली अंकित[2] की है। इनमे केवल अठारह जीवन्त पुत्र थे और उन्होने सोलह कोठरिया स्थापित की थी। ये खानदान 'कोठरी बन्द' ठाकुर कहलाते थे।

सूरजमल बदन सिंह का ज्येष्ठ पुत्र था और प्रताप सिंह सहोदर कनिष्ठ[3] भ्राता था। इसी प्रकार जोधसिंह व देवी सिंह, मेदसिंह (उम्मेद सिंह) व भवानी सिंह, लालसिंह व उदैसिंह भी सहोदर भ्राता थे। अन्य अपनी माताओं के इकलौते पुत्र थे।[4] चौबे राधारमण का मत है कि इनमे दो धर्मपुत्र[5] थे। राव बदन सिंह ने ज्येष्ठ पुत्र सूरजमल को राजकाज मे निपुण समझकर अपने पास रखा[6] और बाद मे युवराज पद प्रदान कर दिया था। पाच लाख जमा की जागीर[7] वैर देकर मुख्य जाट राज्य की दक्षिणी–पश्चिमी सीमा पर राजा प्रताप सिंह को 'सह राज्य' का अधिपति नियुक्त किया। अखैसिंह अति बली दुष्टों पर प्रहार करने वाला, महावीर तथा तेजस्वी युवक[8] था। उसको बदन सिंह ने अपने चाचा गर्जसिंह व बुधसिंह की जागीर ग्राम थाऊ, जिस पर चूड़ामन के पुत्रो ने झगड़ा किया था, तथा इसके दक्षिण–पश्चिम मे २-५० कि. मी. अखैगढ प्रदान किया। अखैसिंह ने यहां कच्ची गढी, महल, पक्का बाग तथा कुआ का निर्माण

---

१ – सरकार (मु०), खंड २, पृ० २६२, इ० डा०, खंड ८, पृ० ३६२; जॉन कोहन, पृ० १६ अ।
– "सर्स बीस बेटा, बडौ सूरगाजा।"
"बिना बीस बेटा नहीं जाट कोई।" — सूदन, पृ० २३५।
२ – टॉड, २/२६६, गजे. ई. राज०, ग्रोडायर, ४/२६; बलदेव सिंह, पृ० २०; वाक्या राज०, २/४३, चौबे, पृ० ७–८; दीक्षित, पृ० ३६।
– नामावली के लिए द्रष्टव्य–'जाटो का नवीन इतिहास', पृ० ३४३।
३ – सोमनाथ (माधव विनोद, राम चरित रत्नाकर), सूदन, जग १, दोहा १४।
४ – सूदन, पृ०५–६।
५ – चौबे, पृ० ८।
६ – सोमनाथ (सुजान विलास), सूदन, पृ० २३६।
७ – इमाद, पृ० ५५।
८ – सूदन, पृ० ६।

कराया। शेष पुत्रो ने दो से चार गावो की जागीर प्राप्त कर 'कोठरिया' स्थापित[१] की। इन पुत्रो ने अपनी जागीरो मे निवास स्थान, बाग तथा कुआ बनवाकर ग्राम्य विकास मे अति रुचि ली थी।

सुजान चरित के सन्दर्भों से ज्ञात होता है कि प्राय ये कुवर दरबार मे उपस्थित रहते थे और डीग मे सपरिवार निवास करते थ। उनकी जागीरो का प्रबन्ध इनके कारिन्दा या कामदार करते थे। इनकी निजी कमान मे जागीरो की आय के अनुपात में कुछ सवार व सिपाही भी रहते थे। सूरजमल की कमान मे शामिल रहकर युद्धो मे भाग लेते थे। परन्तु इनको रणनीति निर्धारण या राज्य की ओर से किसी के साथ समझौता करने का अधिकार नही था। दस्तूर कौमवार मे इनको अर्जुसिंह, उम्मेद सिंह, दलेल सिंह, वीर नारायण तथा सोभाराम का विवरण मिलता है और इनको समय-समय पर पुरस्कृत किया गया था।

(स) प्रतिभाशाली राजा प्रताप सिंह तथा उसका परिवार

प्रताप सिंह सूरजमल का सहोदर कनिष्ठ[२] भ्राता था। और उसकी माता का नाम देवकी था। आचार्य सोमनाथ के शब्दो मे "उसका वर्ण कुन्दन, चौड़ा मस्तिष्क, बाकी भौंहे, मुखमण्डल पर दीप्त आभा, नेत्रो मे चमक, सुडौल तथा सुपुष्ट शरीर था। उसके स्वभाव मे सरलता, सरसता, विनोद, विनम्रता, स्पष्टवादिता तथा स्वतत्र प्रतिभा थी। वह अपने मित्र व आश्रितो के प्रति विचारवान, कृपालु, सरस, सरल, दानी, उदारमना, सुहृद, सहयोगी, गरीब व दुखियो का पालक था। व्यवहार मे सादगी, शिष्टता व विचारों मे गम्भीरता थी। सुसस्कृत प्रकृति, ललित व स्थापत्य कलाओं के प्रति अनुराग था। वह अपने मित्र, विद्वान प्रतिभावान भूपति (जमीदार) या जागीरदारो के साथ रहने मे, उनके साथ बैठकर अपने आपको गौरवान्वित अनुभव करता था।"[४] उसके आकर्षित व्यक्तित्व व उन्नत स्वाभिमान की गाथायें अधुना स्मरण की जाती हैं। "वह (सूरजमल) अपने लघु-

---

१ – अन्य कोठरी बन्द ठाकुरों की जागीर का निम्न विवरण मिलता है—
(१) रामबल (खटका), (२) गुमान सिंह-मानसिंह (गादौली) (३) सुल्तान सिंह (खोहरी, डीग), (४) जोधसिंह (बाजौली), (५) सोभाराम (हसनपुर) (६) देवी सिंह (अस्तावन), (७) रामकिसन (महलौनी), (८) खुस्याल सिंह (आजौली), (६) लाल सिंह (सुहास), (१०) बलराम (अजनौली) (११) वीर नारायण (बांसी)

२ – इमाद, पृ० ५५, सोमनाथ (रस पीयूष निधि, माधव विनोद), सूदन, पृ० ५, कानूनगो, पृ० ६३।

३ – जॉन कोहन, पृ० २० अ, पोथी जागा, ज्ञाट जगत, पृ० १८।

४ – रस पीयूष निधि, माधव विनोद, राम चरित रत्नाकर।

भ्राता प्रताप सिंह को अधिक प्यार करता था। प्रताप सिंह भी अपने ज्येष्ठ भ्राता की बडी इज्जत करता था और उसको अपने बडो (बुजुर्ग) की तरह मानता था। वह लियाकत वाला, इन्सानो को पहचानने वाला तथा मुसलमानों का अभिन्न साथी व मित्र था। उसकी दीगर पोशाक, पगडी की बन्दिश तथा खानपान देहली के बडे-बडे अमीरो की तरह था। उसका पुत्र बहादुर सिंह अपने पिता से भी एक कदम आगे बढ़ गया था। उसने कुरान का अध्ययन किया था और सुराजामी तक अरबी पढ़ा था।" [१] कानूनगो के अनुसार "बदन सिंह ने अनेको कुलीन सम्भ्रान्त, सुयोग्य तथा विद्वान मुस्लिम हाकिमों की नियुक्ति करके अपने दरबार को गौरव प्रदान किया था। उसने जाट जमीदारो (भू-स्वामी या साहिब इ-जमी), जागीरदारों आदि को मुगल अमीरो के अनुरूप शिष्टता, सभ्य समाज में रहने, बैठने-उठने की दीक्षा देकर सभासद जीवन का आदर्श प्रतिष्ठापित किया था। दरबारी सभ्यता, कुलीनता, शिष्टता के प्रति बढते अनुराग की गरिमा उसके प्रिय पुत्र प्रताप सिंह की शिक्षा-दीक्षा में परिलक्षित होती थी।" [२]

परगना मुसावर, टोडा भीम तथा बयाना के जाट बाहुल्य गावो पर सवाई जयसिंह अनिश्चित काल तक अधिकार नही रख सकता था और इन गावो का प्रबन्ध यथापूर्व जाटो के सुपुर्द करना अति आवश्यक था। अप्रल ३०, १७२५ ई० (ज्येष्ठ वदि ४, स. १७८१) को प्रताप सिंह ने मथुरा छावनी मे जयसिंह से भेंट की और उसने प्रारम्भ मे परगना मुसावर के जाट-गुर्जर बाहुल्य ग्रामो का पट्टा प्रताप सिंह के नाम करके सिरोपाव प्रदान किया। [३] इस प्रकार परगना बयाना के पूर्वी भूखड, मुसावर, टोडा भीम के विप्लवी जमीदार तथा पट्टीदार, गुर्जर, मीणा, धाकड (आगरा क्षेत्रीय राजपूत विशेष), अन्य राजपूत तथा पाल जाटो का दमन करके १७२५ ई० के अन्त मे बदन सिंह ने परगना मुसावर, बयाना तथा कस्बा उच्चैन के मध्य भाग मे वैर [४] नामक नवीन परगना गठित किया और प्रताप सिंह को पाच

---

१ – मीर गुलाम अली कृत इमादउस्सआदत, पृ० ५५।

२ – कानूनगो, पृ० ६३।

३ – द० को०, जि० ७, पृ० ४२१।

४ – २७°-० 'अक्षांस-७७°-१४ 'दे०, भरतपुर के दक्षिण-पश्चिम मे ४८ कि मी., डीग के दक्षिण पश्चिम में ५८ कि मी, बयाना के उत्तर-पश्चिम में १७ कि मी. तथा मुसावर के पूर्व मे १३ कि०मी०।

' – समकालीन दरबारी लेखक आचार्य सोमनाथ तथा सूदन (पृ० २२४, २४२, २४६, २४७) के अनुसार इसका नाम बैरि गढ़ था, जिसे आजकल वैर कहते हैं। मुस्लिम या मुगलकालीन इतिहासों मे इस स्थान के नाम का विवरण नहीं मिलता है। १६६४ ई० के अठसता से ज्ञात होता है कि ग्राम वैर पर ❀

लाख रुपया वार्षिक जमा का मुल्क जागीर मे प्रदान करके वैर का प्रबन्ध उसको सौंप दिया था। [1] अनुमानत इस जागीर मे दो सौ असली व दाखिली गाव शामिल थे। वैर के पश्चिम मे बल्लभगढ की जागीर एक पृथक परगना के रूप मे गठित की गई थी, जबकि दक्षिणी भूखड, जो अधिकाश पहाडी इलाका है, में आबाद ग्राम जहाज, हालौडी उमरेड तथा तुहारी की प्रमुख चार जागीरें वैर मे शामिल कर ली गई थी। वैर का अधिकाश भूखड अति उपजाऊ, समृद्ध तथा सम्पन्न है और यहा के पहाडो से इमारती पत्थर निकाला जाता है। प्राय प्रत्येक गाव बाघो से सुरक्षित तथा सिंचित है और यहा पर बेर, नारगी, आम तथा नीबू उत्पादन के असख्य बाग आज भी हैं। यहा गुर्जर, मीणा, पाल जाट, धाकड (माली राजपूत), गद्दी (गदही) राजपूत व

❀ गना भुसावर मे शामिल था और इसमे पाच दाखिली नगला (एमरेजपुर, पीर मुहम्मदपुर, सहबाजपुर, सहजादपुर, सलेमपुर, हुसैनपुर) शामिल थे। मीर गुलाम अली (पृ०-५५), चतुराराई (पृ० २ अ, ४ अ) और दीक्षित (पृ० १८६) इसका नाम बैरि या वरि लिखते हैं। ओडायर (भाग ३, पृ० २३) के अनुसार इस भूभाग मे बेर (जगली या भाडी बेर) तथा नींबू का उत्पादन होता था और बेर उत्पादन के लिए हिन्दुस्तान के अन्य भागों मे प्रसिद्ध था। सम्भवत बेर उत्पादन के कारण इस स्थान का नाम बैर, वरि, वैरिगढ पड़ा था। अठसतों में इसको बैर लिखा है और वहा जाटों की जमींदारी थी।

– वर्तमान वैरगढ़ के पूर्वी प्रवेश द्वार के सामने दक्षिणी भाग में कुछ ही दूरी पर अति प्राचीन एक ऊचा टीला है। इस टीले पर शहर की आबादी है। इस टीले पर प्राचीनतम बस्ती के भूमिगत अवशेष, पक्की पुख्ता दीवारें यत्र तत्र दिखलाई देती हैं। टीलें के सर्वेक्षण से स्पष्ट होता है कि यह एक अति प्राचीन कस्बा था।

– सुप्रसिद्ध उपन्यासकार स्व० डा० रांगेय राघव ने मार्च, १९६० मे वैर मे एक लिंग, मोहनजोदड़ों शैली के पत्थर का एक ढक्कन व कुछ पाषाण के टुकड़े, कुषाणकालीन लकड़ी की प्रतिमा, पार्श्वनाथ की प्रतिमा, गुलाम वश कालीन एक शिलालेख (१२६० ई०। तथा तुगलक शैली की एक प्राचीन मस्जिद का पता लगाया था। (रिपोर्ट सग्रहालय, भरतपुर)

– वैर के कस्बा-टीले पर १९७१ मे दसवीं शताब्दी के आसपास निर्मित अति आकर्षक लाल पत्थर की चक्रेश्वरी देवी की एक जिन प्रतिमा तथा जैन मदिर के कुछ पाषाण अवशेष मिले हैं। अत इन पुरातत्व अवशेषों से स्पष्ट हैं कि वैर हिन्दू-तथा मुस्लिम काल के अति सम्पन्न व सांस्कृतिक कस्बा था।

[1] – इमाद, पृ० ५५, वेण्डल, कानूनगो पृ० ६४ ओडायर, जि. ३, पृ० ३२।

मुसलमान, बागडी तथा अन्य ब्राह्मणो की जमोदारिया थी।[१]

प्रताप सिंह में स्थापत्य कला के प्रति विशेष सुरूचि थी और उसने अपने निरीक्षण मे वैर गढ का निर्माण कराकर नवीन नगर बसाया। १७२६ ई० में एक प्राचीन टीले को घेरकर एक सुदृढ पुख्ता गढ की नीव डाली गई। इसके चारो ओर सुरक्षात्मक पक्की जलप्लावित खाई, गढी मे निवास गृह, कचहरी, बारूद-खाना, शस्त्रागार तथा सैनिक निवास, जल व्यवस्था के लिए कुए बनवाये। गढी के नीचे खाई के पार पूर्वी मुख्य द्वार के सामने नवीन नगर की स्थापना की गई। दुर्ग में प्रवेश के लिए पूर्व तथा पश्चिम से दो विशाल द्वार हैं, जिनके सामने, ढालू मार्ग हैं। प्राचीन वैर नामक गाव मे नयावास (१ कि मी.) को शामिल करके लग-भग दो कि मी की परिधि मे कच्चा परकोटा बनवाया गया था। इस परकोटा के चारो ओर गहरी खाई थी, किन्तु अब यह खाई पूर्णतः भर चुकी है। मुख्य दुर्ग की नहर तथा खाई को भरने के लिए सीता नामक बाध से सीता नहर बनाई गई। नगर मे प्रवेश के लिए उत्तर मे भरतपुर तथा कुम्हेर, पूर्व मे बयाना, दक्षिण मे सीता, पश्चिम मे भुसावर नामक पाच[२] पक्के द्वार तथा दो खिडकिया अभी तक मौजूद हैं। इन प्रवेश द्वारो पर विशाल भारी फाटक थे, जिन पर भारी लोहे की चद्दरें तथा लोहे की मोटी कीलें लगी थी। इन द्वारों की सुरक्षा के लिए बाहरी भाग मे मरकला भी थे। मुख्य बाजार की सडकें सकरी व सीधी हैं। चौक मे कोत-वाली व अन्य विभागो के लिए विशाल मकान बने हैं।

इस नगर का मुख्य आकर्षण दुर्ग के उत्तरी पार्श्व में निर्मित विशाल, भव्य तथा चित्ताकर्षक फूलबाडी है। इस बाग मे श्वेत महल, लाल महल अति दर्श-नीय हैं। श्वेत महल के सामने एक तालाब, चारो ओर फव्वारा पक्तियो का निर्माण अति आकर्षक है। इन फव्वारों को पश्चिमी पार्श्व मे बनी छत के ऊपर के एक जलागार से चलाया जाता था। ये निर्माण जाट तथा मुगल शैली का उत्कृष्ट नमूना है और डीग के जल-महलो के निर्माण की प्रारम्भिक पृष्ठ-भूमि कहा जा सकता है। फूलबाडी की बाहरी सीमा से सटा दक्षिणात्य तथा जाटो की मिश्रित शैली श्री सीताराम जी के मदिर मे प्रताप सिंह की कलाप्रियता तथा कला पोषण का परिचायक है। इसी बाग मे बहादुर सिंह ने आगरा विजय के बाद सम्राट जहागीर का अति आकर्षक श्वेत संगमरमर का हिंडौला (झूला)[३] लाकर लगवाया था।

---

१ – अोडायर, खड ३, पृ० २३, ३२।

२ – सूदन, पृ० २४७।

३ – १८६१ मे मेजर बावरी ने इस हिंडोला को फूलबाडी (वैर) से हटाकर गोपाल भवन, डीग के सामने लगवा दिया था, जहां अभी तक मौजूद है। (दीक्षित,

वैर नगर को कलात्मक परिवेश मे सुशोभित करने का पूर्ण श्रेय प्रताप सिंह को है। इसी से कला प्रेमी जनता के मानस मे आपके प्रति अगाध श्रद्धा है। आपने अपनी राजधानी के शरीर तथा आत्मा को अति रमणीय बनाने मे अपना अपार खजाना न्योछावर कर दिया था। दिल्ली, मथुरा तथा आगरा प्रान्त के, अगणित उस्तादों (अभियंता तथा रेखाकार), कारीगर, शिल्पकार तथा कलावन्तो ने उसका संरक्षण प्राप्त किया। सोमनाथ साहित्य से आभास मिलता है कि १७३७ ई० से पूर्व तक यह गढ तथा नगर पूर्णत विकसित हो चुका था और भुसावर, टोडा भीम, बयाना तथा अन्य दूर-दराजो से सम्भ्रान्त परिवार, सेठ-साहूकार, सर्राफ, व्यापारी, अनेक वेदान्ती, पुराण, ज्योतिषविज्ञ, शास्त्रों के अध्येता, भाषाविज्ञ, काव्यकार, नीतिकार, कर्मकाण्डी पंडित, युद्ध-प्रवीण वीर आकर बस गये थे। रस पीयूष निधि में इस नगर की शोभा का वर्णन करते हुये आचार्य सोमनाथ ने लिखा है-"वैर की शोभा निराली है। चतुर्दिक वृक्ष गुल्म, अनेको बाग, सरोवर विद्यमान हैं। चतुर्वर्ण के शूरवीर यहा निवास करते हैं। विलन्द महल तथा गढ सौन्दर्य सुषमा के प्रतीक है।" [१]

प्रताप सिंह अति वीर, साहसी गुण सम्पन्न योद्धा था। उसमे असाधारण शारीरिक क्षमता, अदम्य साहस, नि शंक उत्साह, सतर्कता, अथक सामर्थ्य व सहनशीलता आदि गुण [२] विद्यमान थे। उसने अपने शत्रु तथा विप्लवी जमींदारो (भूपतियो) पर दृढ संकल्पित होकर आक्रमण किये और अनेक कच्ची गढ़ियो का विध्वंस करके विप्लवी जमीदारो, जागीरदारो को निज प्रभुत्व स्वीकार करने के लिए बाध्य कर दिया था। [३] अनेक विप्लवी जमीदारो को बेदखल करके अन्य जातियो के जमीदारो को आबाद किया और उनको जमींदारी अधिकार सौंपे। वह स्वय कुशल अश्वारोही था और साथियो के साथ आखेट करता था। वैर गढ की सुरक्षा व्यवस्था के लिए कुशल तोपची, पैदल व बन्दूकची सवार तैनात थे। इसके अलावा केन्द्रीय सेवा के लिए लगभग तीन सहस्र नियमित व अनुशासित सेना तैनात रहती थी। आवश्यकता पडने पर पैदल व सवार सेना में वृद्धि की जाती थी। इस सेना मे गब्बर सधे हाथी, गर्वीले ताजो, काबुल-कन्धार के अरबी-तुर्की व देशी घोडे, ऊंटो का रिशाला, रथ, पालकी-नालकी तथा सामान ढोने के लिए बैलगाडियां (भारकस) शामिल थे। फौजी टुकडियो के साथ निरायुद्ध बेलदार तथा मजदूर चलते थे। तोपखाना पंक्ति में पृथक् तोपची थे, जिनमे मुस्लिम भी शामिल थे। इस प्रकार सेना के अग्र भाग में हाथी पर भगवा ध्वज चलता था। उसके पीछे धौंसा व नगाडे बजते

---

१ – सोमनाथ, रस पीयूष निधि, छप्पय २३।

२ – उपरोक्त, राम चरित मानस।

३ – माधव विनोद, छप्पय १३।

मुसलमान, बागडी तथा अन्य ब्राह्मणो की जमींदारियां थी।[1]

प्रताप सिंह में स्थापत्य कला के प्रति विशेष सुरूचि थी और उसने अपने निरीक्षण म वैर गढ का निर्माण कराकर नवीन नगर बसाया। १७२६ ई० में एक प्राचीन टीले को घेरकर एक सुदृढ पुख्ता गढ की नीव डाली गई। इसके चारो ओर सुरक्षात्मक पक्की जलप्लावित खाई, गढी में निवास गृह, कचहरी, बारूदखाना, शस्त्रागार तथा सैनिक निवास, जल व्यवस्था के लिए कुए बनवाये। गढी के नीचे खाई के पार पूर्वी मुख्य द्वार के सामने नवीन नगर की स्थापना की गई। दुर्ग मे प्रवेश के लिए पूर्व तथा पश्चिम से दो विशाल द्वार हैं, जिनके सामने ढालू मार्ग हैं। प्राचीन वैर नामक गाव मे नयावास (१ कि मी.) को शामिल करके लगभग दो कि मी की परिधि मे कच्चा परकोटा बनवाया गया था। इस परकोटा क चारो ओर गहरी खाई थी, किन्तु अब यह खाई पूर्णत भर चुकी है। मुख्य दुर्ग की नहर तथा खाई को भरने के लिए सीता नामक बाध से सीता नहर बनाई गई। नगर मे प्रवेश के लिए उत्तर मे भरतपुर तथा कुम्हेर, पूर्व मे बयाना, दक्षिण में सीता, पश्चिम मे भुसावर नामक पाव[2] पक्के द्वार तथा दो खिडकियां अभी तक मौजूद हैं। इन प्रवेश द्वारो पर विशाल भारी फाटक थ, जिन पर भारी लोहे की चद्दरें तथा लोहे की मोटी कीलें लगी थी। इन द्वारो की सुरक्षा के लिए बाहरी भाग में मरदला भी थे। मुख्य बाजार की सडकें सकरी व सीधी हैं। चौक मे कोतवाली व अ य विभागो के लिए विशाल मकान बने हैं।

इस नगर का मुख्य आकर्षण दुर्ग के उत्तरी पार्श्व में निर्मित विशाल, भव्य तथा चित्ताकर्षक फूलवाडी है। इस बाग मे श्वेत महल, लाल महल अति दर्शनीय हैं। श्वेत महल के सामने एक तालाब, चारो ओर फव्वारा पक्तियो का निर्माण अति आकषक है। इन फव्वारों को पश्चिमी पार्श्व मे बनी छत के ऊपर के एक जलागार से चलाया जाता था। ये निर्माण जाट तथा मुगल शैली का उत्कृष्ट नमूना है और डीग के जल-महलो के निर्माण की प्रारम्भिक पृष्ठ-भूमि कहा जा सकता है। फूलवाडी की बाहरी सीमा से सटा दक्षिणात्य तथा जाटो की मिश्रित शैली श्री सीताराम जी के मदिर मे प्रताप सिंह की कलाप्रियता तथा कला पोषण का परिचायक है। इसी बाग मे बहादुर सिंह ने आगरा विजय क बाद सम्राट जहांगीर का अति आकषक श्वेत सगमरमर का हिंडोला (झूला)[3] लाकर लगवाया था।

---

१ – ओडायर, खड ३, पृ० २३, ३२।

२ – सूदन, पृ० २४७।

३ – १८६१ में मेजर बावरी ने इस हिंडोला को फूलबाडी (वैर) से हटाकर गोपाल भवन, डीग के सामने लगवा दिया था, जहा अभी तक मौजूद है। (दीक्षित, पृ० १९६)

वैर नगर को कलात्मक परिवेश में सुशोभित करने का पूर्ण श्रेय प्रताप सिंह को है। इसी से कला प्रेमी जनता के मानस में आपके प्रति अद्यतन श्रद्धा है। आपने अपनी राजधानी के शरीर तथा आत्मा को अति रमणीय बनाने में अपना अपार खजाना न्यौछावर कर दिया था। दिल्ली, मथुरा तथा आगरा प्रान्त के, प्रदर्शित उस्तादों (अभियंता तथा रेखाकार), कारीगर, शिल्पकार तथा कलावन्तों ने उसका सरक्षण प्राप्त किया। सोमनाथ साहित्य से आभास मिलता है कि १७३७ ई० से पूर्व तक यह गढ तथा नगर पूर्णत: विकसित हो चुका था और मुसावर, टोडा भीम, बयाना तथा अन्य दूर-दराजों से सम्भ्रान्त परिवार, सेठ-साहूकार, सर्राफ, व्यापारी, अनेक वेदान्ती, पुराण, ज्योतिषविज्ञ, शास्त्रों के अध्येता, भाषाविज्ञ, काव्यकार, नीतिकार, कर्मकाण्डी पंडित, युद्ध-प्रवीण वीर आकर बस गये थे। रस पीयूष निधि में इस नगर की शोभा का वर्णन करते हुये आचार्य सोमनाथ ने लिखा है-"वैर की शोभा निराली है। चतुर्दिक वृक्ष गुल्म, अनेको बाग, सरोवर विद्यमान हैं। चतुर्-वर्ण के शूरवीर यहां निवास करते हैं। विलन्द महल तथा गढ सौन्दर्य सुषमा के प्रतीक है।" [1]

प्रताप सिंह अति वीर, साहसी गुण सम्पन्न योद्धा था। उसमे असाधारण शारीरिक क्षमता, अदम्य साहस, निर्भीक उत्साह, सतर्कता, अथक सामर्थ्य व सहन-शीलता आदि गुण [2] विद्यमान थे। उसने अपने शत्रु तथा विप्लवी जमीदारों (भू-पतियों) पर दृढ़ संकल्पित होकर आक्रमण किये और अनेक कच्ची गढियों का विध्वंस करके विप्लवी जमीदारों, जागीरदारों को निज प्रभुत्व स्वीकार करने के लिए बाध्य कर दिया था। [3] अनेक विप्लवी जमींदारों को बेदखल करके अन्य जातियों के जमी-दारों को आबाद किया और उनको जमीदारी अधिकार सौंपे। वह स्वयं कुशल अश्वारोही था और साथियों के साथ आखेट करता था। वैर गढ की सुरक्षा व्यवस्था के लिए कुशल तोपची, पैदल व बन्दूकची सवार तैनात थे। इसके अलावा केन्द्रीय सेवा के लिए लगभग तीन सहस्त्र नियमित व अनुशासित सेना तैनात रहती थी। आवश्यकता पडने पर पैदल व सवार सेना मे वृद्धि की जाती थी। इस सेना मे गब्बर रूपे हाथी, गर्वीले ताजी, काबुल-कन्धार के अरबी-तुर्की व देशी घोडे, ऊंटो का रिसाला, रथ, पालकी-नालकी तथा सामान ढोने के लिए बैलगाडियां (भारकस) शामिल थे। फौजी टुकडियों के साथ निरायुद्ध बेलदार तथा मजदूर चलते थे। तोपखाना पंक्ति में पृथक् तोपची थे, जिनमे मुस्लिम भी शामिल थे। इस प्रकार सेना के अग्र भाग में हाथी पर भगवा ध्वज चलता था। उसके पीछे धौंसा व नगाडे बजते

---

१ – सोमनाथ, रस पीयूष निधि, छप्पय २३।

२ – उपरोक्त; राम चरित मानस।

३ – माधव विनोद, छप्पय १३।

थे। सैनिक टुकड़ियों के साथ अनेक निसान तथा पताकाएं फहराती थीं। अश्वारोही तथा पदाति जिरह बख्तर पहनते थे और सिर पर साफा बांधते थे। सैन्य दल अन्न (गल्ला) वस्त्र, अस्त्र-शस्त्रों से पूर्णतः सुसज्जित तथा युद्ध के लिए सदैव तैयार रहता था।[1]

वह अपनी सेना को अपने पुत्र बहादुर सिंह के निरीक्षण में कठिन श्रम में व्यस्त रखता था और ये सेनाएं अपना अधिकांश समय रणक्षेत्रों में व्यतीत करती थी। प्रताप सिंह ने अपने देश के बाहर भी कई युद्धों में भाग लिया था। सवाई जयसिंह ने जब परगना रामपुरा का प्रस्ताव लेकर उदयपुर की ओर प्रस्थान किया, तब प्रताप सिंह सार्दूल (पचैना) तथा तेजसिंह सोगरिया (पुत्र ठाकुर खेमकरन) ने जाट टुकड़ियों का नेतृत्व किया था। सितम्बर ६, १७२८ (भादों सुदि ४, स. १७८५) को सवाई जयसिंह ने ब्यावर मुकाम पर फेंटा आगरा जरी, जामा कुरता जरी तथा निसान मुकेशी प्रदान किया और अनेक गांवों का पट्टा उसके तथा सार्दूल के नाम कर दिया था, जबकि तेजसिंह सोगरिया को सिरोपाव देकर विदा किया। फिर १७३१ में जयसिंह ने जब बदनसिंह को 'राव' का विरुद प्रदान किया, तब मुसावर के राजपूत विद्रोहियों को दबाने के लिए मथुरा छावनी से अप्रेल १२, १७३१ को प्रताप सिंह के लिए औपचारिक विदाई का सिरोपाव देकर विदा किया गया। इन विद्रोहियों को दबाकर जब अक्तूबर ८, १७३१ (आसोज सुदि ९, स. १७८८) को प्रताप सिंह उसके हुजूर में पहुँचा, तब उसको अनेक गांव प्रदान करके सम्मानित किया।[2] प्रताप सिंह ने भूपाल युद्ध (अनुच्छेद-१३) में जाट बन्दूकची सवारों का नेतृत्व संभाल कर अपनी वीरता का परिचय दिया था। इस समय प्रताप सिंह युवराज ईश्वरी सिंह के काफी निकट सम्पर्क में आ गया था। अतः अक्तूबर, १७३८ तथा १७३९ में वह स्वयं दशहरा दरबार में मुजरा करने के लिए जयपुर पहुँचा।[3] फतहाबाद सम्मेलन के बाद सवाई जयसिंह ने बख्त सिंह राठौड़ के विरुद्ध आगरा से अजमेर की ओर प्रस्थान किया, तब बदनसिंह ने अपने दोनों पुत्रों सूरजमल व प्रताप सिंह को उसके साथ में रवाना किया। गगवांना युद्ध में प्रताप सिंह ने भी जाट टुकड़ियों का नेतृत्व किया। सितम्बर २१, १७४१ को ससैन्य उसको विदा किया गया। फिर अक्तूबर, १७४२ में प्रताप सिंह दशहरा का मुजरा करने जयपुर पहुँचा। महाराजा सवाई ईश्वरी सिंह के राज्यारोहण के बाद राव बदनसिंह ने नवम्बर, १७४३ में प्रताप सिंह तथा हेमराज कटारा को राजतिलक का साज लेकर जयपुर

---

१ – रस पीयूष निधि।

२ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४२१, ५३२, ३६२।

३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४२२।

भेजा। [1] इस प्रकार प्रताप सिंह भी सूरजमल के साथ ही निरन्तर अपनी वीरता, कुशलता से अग्रसर होने लगा था।

वैर सेना का प्रधान चमूपति सेनापति) विप्र हरवल था, जिसकी कमान में इस सेना ने सूरजमल के साथ अनेक युद्धों मे भाग लिया था। इसके अलावा निर्मोही रामानुज सम्प्रदाय के महन्त राघवदास ने सन्यासियों की एक जमात एकत्रित कर ली थी। उसके पट शिष्य केशोदास की कमान में एक शती सवारों का नागा लश्कर था और इनका गुरुद्वारा श्री रघुनाथ जी लश्करी के नाम से प्रसिद्ध था। प्रारम्भ में ये सवार आसपास के शाही इलाकों में लूटमार करते थे और राज सेवा भी करते थे। राजा प्रताप सिंह ने केशोदास को बारह गांव की 'खिदमत जागीर' प्रदान की थी और वैर नगर की सुरक्षा का भार सौंप दिया था। [2] वैर में जाट राज्य के लिए अस्त्र-शस्त्र, तोप, गोला बारुद बनाने के कारखाने थे और यहा से जजैल, जबूरे, रहकला, बन्दूक आदि जाट राजधानी में भेजी जाती थीं। [3] वैर नगर तथा दुर्ग की रक्षा के लिए प्रताप सिंह ने सैकड़ों छोटी-बड़ी तोपें, जबूरे, जजैल आदि का संग्रह किया, किन्तु यह तोपखाना आवश्यकता पड़ने पर ही शस्त्रागार से निकाल कर दुर्ग प्राचीरों तथा परकोटा पर लगाया जाता था। [4]

प्रताप सिंह ने मुगल व राजपूत परम्परा पर 'सभा' की स्थापना की थी, जिसमें राजपूत-जाट मिश्रित सभ्यता परिलक्षित होती थी। साथ ही मुगलिया शिष्टाचार, मुगलिया पोशाक तथा मुगल संस्कृति का प्रभाव था। वह स्वयं मसनद पर आसीन होता था। ऊपर मोरपंखी का पंखा झलकता था और चवर ढुलकता था। सवानों के हाथों में सुगन्धित इत्रदान रहते थे और महफिल (सभा मंडप) मे सर्वत्र सुगन्धि महकती थी। सभाजनों को पान-सुपारी भेंट की जाती थी। गढ के प्रवेश द्वार पर अम्बारी से सज्जित हाथी तथा अमूल्य रत्नो से सुसज्जित अश्व सलामी देते थे। इस समाज-सभा (महफिल) में प्रभावी जमींदार, जागीरदार, नीतिज्ञ, ज्योतिषज्ञ, पुराणों के ज्ञाता, अरबी-फारसी के विद्वान राजकीय पोशाक में उपस्थित रहते थे। द्वार पर छडीबरदार तैनात थे। सभी सभाजनो का क्रम तथा स्थान नियत था। विजयादशमी का महान सांस्कृतिक पर्व भारी उल्लास व उमग से मनाया जाता था। उस दिन दरबार (समाज सभा) होता था। सभासद नजर भेंट करते थे। महलो में मंगलाचार, बधाये व गीत गाये जाते थे। समस्त नगर मे सजावट होती थी। घोड़ों पर हीरा-पन्ना, जवाहरात के बेश कीमती साज प्रदर्शित

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४२२।
२ – फाइल मुकदमा मंदिर लश्करी, वैर
३ – मोडव, दीक्षित पृ० १८४।
४ – सूदन, पृ० २४७।

होते थे। नगाड़े सुरई व नफीरी बजती थी और नट-नटनिया नृत्य करती थीं। गायन व वादन अति सरस व हृदयग्राही होता था।[1]

वह अप्रतिम विद्यानुरागी, काव्य कला मर्मज्ञ, काव्य रसिक तथा गुणी व्यक्ति था। उसका पुराण, ज्योतिष, (नुजूम), चिकित्सा विज्ञान, प्राचीन भारतीय साहित्य, नाटक, नाटिकायें, काव्य तथा भाषा विज्ञान में सुरुचि थी। वह विद्वानो का समुचित आदर-सत्कार व सम्मान करता था। साहित्यकार तथा कलाकारो का उदारमना संरक्षक था। उसने सस्कृत, फारसी ब्रजभाषा के विद्वानो को अतुल-दान देकर सम्मानित किया और एक शिष्ट व गुणी समाज को प्रोत्साहित किया था। प्रताप सिंह की कीर्ति को सुनकर ही आचार्य सोमनाथ नवाब आजम खा[2] का आश्रय

---

१ – सोमनाथ, रस पीयूष निधि।

२ – भाषाविदों ने कवि श्रीधर उर्फ मुरलीधर, कविवर नेवाज, आचार्य सोमनाथ तथा टीकाराम के आश्रयदाता नवाब आजम खां के जीवन वृत को 'मासिर-उल-उमरा' में खोजने का निष्फल प्रयास किया है। (आचार्य रामचन्द शुक्ल, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' पृ० २६३; शिव सिंह सरोज, पृ० ३३३-५; बाबू ब्रज रत्न दास, 'हिन्दी नाट्य साहित्य, पृ० ६०; गोपीनाथ तिवारी, 'भारतेन्दु कालीन नाटक साहित्य,' पृ० २०; राजेन्द्र शर्मा, सम्पा., "सकुन्तला नाटक," मंगल प्रकाशन, (१६७०)। इसी सन्दर्भ में सोमनाथ ग्रंथावली के सम्पादक सुधाकर पाण्डेय ने वजीर इमादुल्मुल्क को आजम खां माना है। (पृ० ७५)।

– सकुन्तला नाटक की प्रशस्ति से सुज्ञात है कि मुसलेह खां नवीन विरुदधारी फिदाई खां, का पुत्र था। 'जंगनामा (तज्करा)' में श्रीधर उर्फ मुरलीधर ने अपने आश्रयदाता 'मुसलेह खां या आजम खां' की वीरता की अति प्रशंसा की है। सोमनाथ ने इसी नवाब आजम खां के लिए 'नवाबोल्लास' नामक ग्रंथ की रचना की थी।

– फर्रुखसियर ने आजम खां की नियुक्ति सरकार थट्टा में की थी। अप्रेल, १७२० मे जब वह थट्टा से दिल्ली की ओर लौटा, तब उसने जोधपुर में पड़ाव डाला। महाराजा अजीत सिंह तथा जयसिंह ने उसका स्वागत सत्कार किया था। हसनपुर युद्ध के बाद २५ नवम्बर, १७२० ई० को उसने खिज्राबाद में जयसिंह की अगवानी की थी और १७२२ में जयसिंह के साथ द्वितीय थून अभियान में भाग लिया था। (द० कौ० जि० १८, पृ० ५६३)। १७२३ मे उसको पुनः थट्टा का सूबेदार नियुक्त किया गया। १७२६ में उसको सादाबाद परगना में जागीर प्रदान कर दी गई थी। उसने फतहाबाद छावनी में बालाजी राव पेशवा से मुलाकात की और गगवाना युद्ध में भाग लिया था। (द० कौ० जि० १८) इस प्रकार मुसलेह खां ही नवाब आजम खां था।

त्यागकर १७३० ई० के आसपास वैर दरबार में स्थाई रूप से आये । दरबारी संस्कृति तथा जीवन पद्धति मे व्यक्ति के स्वत गरिमा स्थापन में शास्त्र-ज्ञान सहायक था । इसी से भारतीय नरेशो के दरबारो में विद्वानो का अधिक महत्व था । प्रताप सिंह ने आचार्य सोमनाथ को सरक्षण प्रदान किया और वैर मे निवास हेतु हवेली प्रदान की थी । आचार्य सोमनाथ ब्रजभाषा के प्रणेता, सस्कृत भाषा व साहित्य, ज्योतिष तथा वैद्यक के प्रकाड ज्ञाता थे । वह प्रताप की सभा के शिरोमणि सभासद थे । प्रताप सिंह के आग्रह पर उन्होने रीति ग्रन्थ 'रस पीयूष निधि' (प्रारम्भ, मई २३, १७३७ ई०/ज्येष्ठ वदि १०, स १७९४ , 'राम कलाधर' (अध्यात्म रामायण का काव्यात्मक अनुवाद), 'राम चरित रत्नाकर' (वाल्मीकि रामायण क किष्किंधा तथा सुन्दरकांड का काव्यात्मक अनुवाद), 'व्रजेन्द्र विनोद' (भागवत उत्तरार्द्ध), 'रास पचाध्यायी' (प्रारम्भ, नवम्बर २०, १७४३ ई०/अगहन सुदि ५, स १८००) आदि उत्कृष्ट ग्रन्थो का सृजन किया था । इसके अतिरिक्त आपने कुछ ग्रन्थ 'स्वांत, सुखाय , कुछ लोक हिताय ' तथा कई ग्रन्थ सूरजमल के लिए भी लिखे थे । [1] महाराव बुद्ध सिंह हाडा (बूदी) के दरबार मे आचार्य श्री कृष्ण भट्ट कलानिधि ने प्रताप का यश सुना था और उसने आचार्य सोमनाथ के सहकर्मी क रूप में प्रताप सिंह के दरबार मे अनेक वर्ष आश्रय प्राप्त किया । प्रताप सिंह के आग्रह पर उसने वाल्मीकि रामायण के बाल, युद्ध तथा उत्तरकांडों का काव्यात्मक अनुवाद किया और १७४३ मे 'दुर्गा महात्म्य' की रचना की थी । सुयोग्य, कुलीन मुस्लिम विद्वानो को भी राज्याश्रय मिला और उन्होंने प्रशासन मे उच्च पद प्राप्त कर लिये थे । जाट राज्य तथा जागीर के आन्तरिक प्रबंधो मे नागरी लिपि व व्रजभाषा का प्रयोग होता था, लेकिन साम्राज्य की शासकीय भाषा फारसी थी । इससे फारसी का भी सम्यक महत्व बना रहा । इन हिन्दू-मुस्लिम विद्वानो ने वैर मे पाठशालायें, मदरसे, मखतब व महाजनी स्कूल चलाकर शिक्षा, सस्कृति तथा ललित कलाओं के प्रचार-प्रसार मे योग दिया और वैर एक साहित्यिक केन्द्र बन गया था। प्रताप सिंह को चित्रकला से भी विशेष अनुराग था । इस काल में चित्रकारों ने रागरागनियों पर चित्र तैयार किये । [2] इनमे राजपूत, मुगल व जाट शैली का अद्भुत मिश्रण था ।

---

१ – सुजान विलास, सग्राम दर्पण, द्रष्टव्य–सोमनाथ ग्रन्थावली' प्र०१०, ना.प्र सभा

२ – राज मोदी परिवार काव्य तथा ललित कला प्रेमी था । इस घराने के पास अभी तक कई हस्तलिखित ग्रन्थ सुरक्षित है । लगभग डेढ़ सौ चित्रों का सग्रह इस परिवार के पास था । बाद में इन चित्रों को डा० रांगेय राघव ने बम्बई भेज दिया था ।

प्रताप सिंह अपनी जागीर का स्वयं बन्दोबस्त देखता था। उसने अपनी वतन-जागीर की समृद्धि के लिए काश्तकारी, बागो को प्रोत्साहित किया। अनेक बांध तथा नहरों का निर्माण कराया। ये बांध बाढ़ को नियंत्रित करने तथा सिंचन के लिए अति उपयोगी थे।[1]

सिनसिनवार जाट शासक ब्रजमण्डल के निवासी थे और हिन्दू धर्म व वैष्णव संस्कृति के रक्षक थे। ब्रज में सर्वदेव की पूजा, अर्चना तथा प्रतिष्ठापन था और उन पौराणिक कथाओं का श्रवण (चर्चा) कीर्तन, स्मरण होता था, जिनका हिंदू धर्म तथा समाज पर विशेष प्रभाव रहा है। राजा तथा जमींदार के मत, प्रभुत्व का लोक-जीवन व समाज पर प्रभाव पड़ता था। उसने गढ़ मे ब्रज-दूल्ह, फूलबाड़ी मे लाल महल के सामने श्री मोहन जी का मंदिर बनवाया। इन मंदिरो के प्रबन्ध तथा भोग-राग के लिए चौदह सौ रुपया वार्षिक जमा की ५७२ बीघा भूमि पुण्य-जागीर में प्रदान कर दी थी। प्रताप सिंह स्वयं श्री रघुनाथ जी का परम भक्त था। उसने फूलबाड़ी मे ही श्री मोहन जी के मन्दिर के पृष्ठ भाग मे मन्दिर श्री रघुनाथ जी लश्करी बनवाया और इसकी व्यवस्था के लिए २५१२ रुपया वार्षिक जमा की २०१६ बीघा भूमि पुण्य तथा खिदमत जागीर के रूप प्रदान की थी।[2]

तैङ्गलै (अर्काट, तामिलनाडु) के सुप्रसिद्ध आचार्य षड्मर्षण गोत्री श्री निवासाचार्य, जो रामानुजाचार्य परम्परा तथा सम्प्रदाय से संसर्गित थे, को उसने धर्माचार्य का उच्च सम्मान प्रदान करके धर्म गुरु पद प्रदान किया था। परम्परा के अनुसार श्री निवासाचार्य श्री मुरणम् (दक्षिण अर्काट) से सवाई जयसिंह के आमन्त्रण पर जयपुर पधारे थे। आप अति विद्वान तथा कर्मकाण्डी थे और आपने जयपुर मे वाजपेय व अश्वमेध यज्ञों में भाग लिया था। लोक-वार्ता के अनुसार वे एक बार ठाकुर शार्दूल के अनुग्रह पर उनके साथ घोड़े पर सवार होकर वैर पधारे जहां प्रताप सिंह ने आपका हार्दिक स्वागत-सत्कार किया और गुरु-दीक्षा ग्रहण कर ली थी। उसने उनको एक हाथी, एक घोड़ा तथा प्रचुर द्रव्य दिया। बाद मे वे प्रताप सिंह के आग्रह पर वैर मे आकर बस गये, जहां फूलबाड़ी के समीप ही अति विशाल, भव्य व आकर्षक मलाई पत्थर का विशाल दालान संयुक्त दाक्षिणात्य-जाट मिश्रित शैली का श्री सीताराम जी मंदिर व तीन मंजिल निवास स्थान बनवाया। कहा जाता है कि सवाई जयसिंह ने आपको रुपया ६००१।- वार्षिक जमा का ग्राम बरौली *त्तित जागीर मे देकर सम्मानित किया था, जबकि प्रताप सिंह ने अन्यान्य मौजो मे ४२६८ रुपया वार्षिक जमा की ४२५७ बीघा ६ बिस्वा भूमि मंदिर

---

१ – इरीगेशन रिकार्ड।

२ – रजिस्टर, सूची व जागीर देवस्थान विभाग।

के भोग राग के लिए और हाथी के पालन के लिए जटवलाई नामक एक मौजा प्रदान किया था। यह गाव "हाथी का गाव या जागीर" कहलाती थी। इसके अलावा जागीर-कोष से नकद रुपया भी दिया जाता था। [1] श्री निवासाचार्य ने काफी उम्र पाई थी। बयाना, मुसावर परगनों पर अधिकार करने के बाद १७७७ ई (११६१ हि०) मे मीर बख्शी मिर्जा नजफ खा ने महन्त श्री निवासाचार्य के नाम मौजा बरौली, परगना मुसावर पुन्यार्थ जागीर यथावत प्रदान करने की सनद प्रदान की थी। फिर सितम्बर २६,१७८५ ई०(आसोज बुदि ११, स० १८४२) को महादजी सिन्धिया ने भी नवीन सनद प्रदान कर दी थी। [2] इसी काल मे राम सनेही सम्प्रदाय के महंत ने भी प्रताप सिंह का आश्रय प्राप्त किया और श्री जानराय जी का दो मजिल का एक विशाल मन्दिर बनवाया। इस मन्दिर के लिए भी पुण्यर्थ जागीर दी गई थी। प्रताप सिंह मे धार्मिक सहिष्णुता की भावना पर्याप्त थी। इसी से प्रजा मे जातीयता, धर्म, सम्प्रदाय के नाम पर भेदभाव नहीं था। मुसलमानो को भी मस्जिद, दरगाह बनाने के लिए भूमिया तथा अन्य सुविधायें दी गईं थी। वास्तव मे हिन्दू-मुसलमान दोनों मे प्रेम तथा समता थी और दोनों की सह सस्कृति चलती थी।

समकालीन सन्दर्भो से स्पष्ट है कि प्रतापसिंह तथा सूरजमल दोनों भ्राताओ म अटूट प्रेम था, किन्तु कविवर उदैराम[3] के काव्यात्मक सन्दर्भ तथा लोक वार्ताओ से ज्ञात होता है कि माता देवकी की मृत्यु (जुलाई, १७४२) के बाद दोनो भ्राताओं को प्रभावित करने वाला पारिवारिक सम्पर्क सूत्र टूट गया था और राव बदनसिंह की वृद्धावस्था मे उभय भ्राताओ मे बन्दोबस्त तथा अन्य राजनैतिक मामलों को लेकर आपस में खींचतान हुई थी। सम्भवत आपसी मतभेद व कटुता को उग्र करने मे दरबारी सभासदो तथा अधिकारियों का व्यक्तिगत स्वार्थपरक हाथ था। वैर जागीर एक स्वतन्त्र सह-राज्य के रूप से विकसित हो रही थी और नि सन्देह वैर सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक गतिविधियों का प्रमुख केन्द्र बनता जा रहा था। अब सूरजमल का पुत्र जवाहरसिंह युवा हो चुका था और अक्तूबर, १७४५ में वह

१ – रजिस्टर, सूची व जागीर देवस्थान विभाग।
—श्री निवासाचार्य वश से सम्बन्धित कागजात, सनदें आचार्य श्री कृष्णमूर्ति, एम० एस० सी, एल० एल० बी० से प्राप्त हुई हैं। उनके पास अभी तक तेलगु भाषा के प्राचीन ग्रन्थ सुरक्षित हैं। डा० रांगेय राघव आपके ही कनिष्ठ भ्राता थे।

२ – सनद; इन सनदों के शीर्ष पर फारसी मुहर है। सनद फारसी, हिन्दी तथा मराठी मोड़ी लिपि में लिखी गई हैं।

३ – गिरधर विलास (पा० लि०)।

महाराजा सवाई ईश्वरीसिंह के दशहरा दरबार मे मुजरा करने गया था। ७ अक्तूबर (आश्विन सुदि १३, सं० १८०२) को ईश्वरीसिंह ने उसको सिरोपाव तथा १७ अक्तूबर को विदा करते समय एक जोडी जडाऊ पोंहची प्रदान की थी।[१] इसके बाद राव बदनसिंह को 'ताजीम' से सम्मानित करने के लिए सवाई ईश्वरीसिंह ने जयपुर आमन्त्रित किया, तब अक्तूबर के अन्त मे वह हेमराज कटारा तथा बहादुर सिंह वकील के साथ जयपुर पहुँचा।[२] इसी बीच मे अपने पिता की अनुपस्थिति में सूरजमल ने प्रतापसिंह को कुम्हेर दुर्ग के महलों में नजरबन्द कर लिया। फादर वैण्डल लिखता है कि उभय भ्राताओं में बातचीत करते समय भारी तनाव पैदा हो गया था। प्रतापसिंह ने अपने भाई के सामने ही जहर खाकर असार ससार त्याग दिया था।[३]

समकालीन इतिवृतो में दोनों भाईयों के बीच मनमुटाव के कारणो तथा प्रतापसिंह की मृत्यु-समय का विवरण उपलब्ध नही है, परन्तु लोक-वार्ताओ, ऐतिहासिक विवरणो, तथा साहित्यिक सन्दर्भों से पता चलता है कि गृह सघर्ष की गम्भीरता, राजनैतिक घटनाओ पर अपना प्रभाव देखकर ही प्रतापसिंह ने अपने पिता बदनसिंह के प्रस्थान करते ही नवम्बर ३, १७४५ ई० (कर्तिक सुदि १० स० १८०२) को सहृदयता से कुम्हेर के महलों मे भगवद्प्रसाद के रूप मे गरलपान करके इस असार ससार को त्याग दिया था।[४]

नवम्बर १२, १७४५ (मार्गशीर्ष वदि २, स. १८०२) को महाराजा सवाई ईश्वरीसिंह ने लूणकरण नाटाणी के साथ बहादुरसिंह के लिए मातमी का सिरोपाव भेजकर राजा प्रतापसिंह की मृत्यु पर अपनी हार्दिक सम्वेदना प्रगट की थी।[५]

राजा प्रतापसिंह के आकर्षक व्यक्तित्व, सुसस्कृत स्वभाव तथा उन्नत स्वाभिमान की गाथाए उसकी मृत्यु के बाद सभी जाट राज्य मे घर कर गई थीं। इस कला, साहित्य तथा सास्कृतिक प्रमी की मृत्यु के बाद अन्यान्य विश्रुत कवियों ने उसकी मृत्यु गाथा अवश्य गाई होगी। ये ग्रन्थ अभी तक खोजनीय हैं।

२ – राजा बहादुर सिंह

राजा प्रतापसिंह के बहादुरसिंह नामक एक मात्र पुत्र-रत्न था। आचार्य सोमनाथ के शब्दो मे "वह अति सुन्दर, मेधावी, सकल गुणो का खान था। वैर में

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३७६।
२ – उपरोक्त, पृ० ४४६, ४६७, ४५६।
३ – वेण्डल।
४ – गिरवर विलास, "भाई कुँवर प्रताप कू स्वर्ग दयो पठाय, ।", वेण्डल,
५ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४२६, ४८१।

रहकर जागीर की व्यवस्था करता था। उसकी तलवार के तेज से शत्रु घबडाते थे। चेहरे पर कभी उदासी परिलक्षित नही होती थी। वह मित्रो की अभिलाषा पूर्ण करने वाला व दानवीर था। विकट जगलो मे शिकार खेलता था और उसके नगाडे की गर्जन सुनकर शत्रुओ के दिल दहल जाते थे। दीर्घ गढ़ व गढिया डगमगाती थीं। उसने अनेक युद्धो में भाग लेकर विजय प्राप्त की थीं। भारतीय परम्परा के अनुसार उसने समय समय पर अनेक शरणागतो की सुरक्षा की थी। योद्धा होकर भी वह अनुरक्त व्यक्ति था और अपनी पत्नी को बहुत प्यार करता था।" [१] सूदन ने उसको 'राजनीति का ओक (आश्रयस्थल), रणक्षेत्र मे भारी उमग के साथ भाग लेने वाला सावधान, निशक अति प्रतापी तथा रण बाकरा व्यक्ति" लिखा है। [२] मीर गुलाम अली के अनुसार "वह अरबी तथा फारसी का शुद्ध व स्पष्ट उच्चारण करता था। मुगल दरबारियो की भांति ठाठबाट से रहता था। खानपान व पोशाक धारण करने में वह अपने पिता से भी बढ़कर था।" [३] वेण्डल का मत है कि "बहादुरसिंह सदृश शिष्टता, व्यवहारिकता अन्य जाटो मे नहीं मिलता थी। उसके विचारो मे सादगी तथा भावनाओ मे उदारता थी। जाट जाति के अधिकाश व्यक्तियो में इन गुणो का अभाव" था। [४] नि सन्देह बहादुरसिंह अति शिष्ट, व्यवहार कुशल, गुणी व सज्जन था। वह भाषा विज्ञ तथा युद्ध कला प्रवीण था। उसने आचार्य सोमनाथ तथा सुयोग्य मौलवियो से उच्च शिक्षा ग्रहण की थी। उसे कुरान सुराजामी तक कठाग्र [५] थी। वह शिष्टजना तथा विद्वानो का समादर करता था। हिन्दू मुस्लिन गुणियो को बिना भेदभाव के दान देकर प्रोत्साहित करता था। आचार्य सोमनाथ ने उसके आग्रह पर 'मालती माधव' नाटक की रचना की। कवि चतुराराई का कथन है कि 'वह समय को देखकर उसके अनुसार ही राजनैतिक गतिविधियो पर आचरण करने मे विश्वास रखता था। कठिन काल मे सघर्ष या युद्ध को टालकर समझौता नीति का पोषक भी था।" [६]

बहादुरसिंह ने अपने पिता के जीवनकाल में ही जागीर प्रबन्ध का कार्यभार तथा सैनिक कमान सभाल ली थी। उसकी कमान म तीन सहस्र सेना तथा सभी प्रकार की दुर्ग रक्षक तोपें [७] थी। उसका खजाना धन से परिपूर्ण था और

१ – माधव विनोद।
२ – सूदन, पृ० ५, २३४।
३ – इमाद, पृ० ५५।
४ – वेण्डल, पृ० ६३।
५ – इमाद, पृ० ५५।
६ – पर्वना रासो, पृ० ८८।
७ – सूदन, पृ० २४७।

उसमे कभी कमी नही आई थी। दस्तूर कौमवार से ज्ञात होता है कि मई, १७४१ मे जब सवाई जयसिंह फतहाबाद शिविर मे बाजीराव पेशवा के साथ समझौता-वार्ता करने मे व्यस्त था, तब बहादुरसिंह अपने सवारो के साथ उसकी छावनी मे उपस्थित था और वार्ता के बाद जयसिंह ने गगवाना की ओर कूंच किया, तब जून ६, १७४१ को उसने बहादुरसिंह को सिरोपाव प्रदान करके अपनी छावनी से बिदा किया।[१]

राजा प्रतापसिंह के परलोकवास (नवम्बर, १७४५) के बाद उसको जागीर वैर का उत्तराधिकार तथा राजा का विरुद यथापूर्व मिला। उसने अपने चाचा राजा सूरजमल की निष्ठा तथा आस्थापूर्वक सेवा की और वह अनेक युद्धो मे ससैन्य उपस्थित रहा। १७४६ की वर्षा ऋतु के बाद कुवर बहादुर सूरजमल को वजीर तथा मीर बख्शी की कुचालो के विरुद्ध देश की रक्षा का प्रबन्ध करना पडा, तब बहादुरसिंह तथा हेमराज कटारा को महाराजा ईश्वरीसिंह के दशहरा दरबार में मुजरा करने के लिए जयपुर भेजा गया। अक्तूबर २०, १७४६ (आश्विन सुदि १०) को उनके लिए सिरोपाव प्रदान करके बिदा किया गया। इसी प्रकार १७५३ में सवाई माधोसिंह दिल्ली से डीग आया, तब उसने डीग मे बहादुरसिंह को नवम्बर, २१, १७५३ को खासगी जरी का सिरोपाव प्रदान किया।[२] उसने आगरा दुर्ग पर *आक्रमण में भाग लिया और विजय-स्मृति के रूप में जहांगीर कालीन संगमरमर का* हिंडोला प्राप्त कर लिया था। सूरजमल जब बलूची सरदारो से युद्धरत था, तब वह चौधरी बलराम नाहरवार के साथ दशहरा का मुजरा करने जयपुर पहुँचा। माधोसिंह ने मोदीखाना से मिजमानी का सामान भेजा तथा अक्तूबर २८, १७६३ (कार्तिक वदि ६, स० १८२०) को दोनो के लिए जडाऊ सरपेच तथा खासगी सिरोपाव प्रदान करके बिदा किया।[३] दिल्ली अभियान (दिसम्बर, १७६३) मे वह राजा सूरजमल के साथ उपस्थित था। सूरजमल ने उसकी निपुणता, योग्यता तथा पारदर्शिता को आंक कर अनेक बार पुरस्कृत किया था।[४] जवाहरसिंह तथा अन्य उत्तराधिकारियो के साथ उसके सम्बन्धो का विवरण आगे यथास्थान दिया जावेगा।

बहादुरसिंह के पुहुपसिंह नामक योग्य, शिष्ट तथा गुणवान् पुत्र था। १७८२ मे देवेश्वर चतुर्वेदी ने इसके नाम पर "पुहुप प्रकाश" नामक एक लघु ग्रन्थ की रचना[५] की थी।

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४३१।
२ – उपरोक्त।
३ – उपरोक्त, पृ० ४८२, ४८०।
४ – वेण्डल, पृ० १०३।
५ – कवि कुसुमांजलि, पृ० ५०।

अध्याय २

सूरजमल का प्रारम्भिक जीवन

१ – बाल्यकाल, किशोरावस्था तथा शिक्षा १७०७ – १७२३ ई०

जाट राज्य संस्थापक सूरजमल का निश्चित जन्म स्थान या जन्म तिथि बाल्यकाल व किशोरावस्था मे उसके अद्भुत चमत्कारो की गाथायें किसी इतिवृत, साहित्यिक सन्दर्भों या लोकवार्ताओ मे नही मिलती हैं। फिर भी समकालीन प्रलेखो तथा काव्य साहित्य मे उसके सूजा या सूज्या,[1] सुजान, सुजानसिंह, सूरजमल या सूरजमल्ल आदि बहुनामो का उल्लेख मिलता है।[2] इतर परवर्ती इतिहासकारो ने

१ – सोमनाथ, पृ० ९अ, १२ब, कागजात हलैना पर्गना जागीर (लेखक संग्रह)।

२ – 'सुजान चरित' मे सुजान, सुजानसिंह तथा सूरजमल तीन नामों का उल्लेख किया गया है। (पृ० ५, ६, ८ तथा अन्य) आचार्य शिवराम ने 'सुजान, महाराज पुरजमल तथा सूरजमल्ल' और आचार्य सोमनाथ ने अपने काव्य ग्रन्थों मे 'सूरजमल्ल, सिंह सूरजकुमार, सिंह सूरज सुजान' लिखा है। (नवधा भक्ति राग रस सार, माधव-विनोद), कविवर अखैराम के पद्यांशों मे 'सूरजमल के नाम को रच्यो सुजान विलास' वाक्य मिलता है। (द्रष्टव्य-लेखक कृत, कविवर अखैराम और उनकी काव्य साधना, समिति वाणी, वर्ष १, अंक ३-४, पृ० ७५-८२), सूर्यमल मिश्रण ने भावावेश में उसको 'रविमल्ल' लिखा है। (वंश भास्कर भाग ४, पृ० ३५१८)।

— समकालीन फारसी, मराठी, राजस्थानी, अंग्रेजी तथा फ्रेंच प्रलेखों में सभी स्थानों पर 'सूरजमल' के नाम का प्रयोग किया गया है।

— सितम्बर ४, १७५८ ई० (भादौ सुदि २, सं० १८१५) को महन्त लालदास के नाम प्रसारित आज्ञा पत्रक, कबूलियत चूंगी मे 'सुजान सिंह' के नाम की मुहर अंकित है और इसके प्रारम्भ मे 'श्री महाराज विराजमान ब्रजेन्द्र महाराज सुजान सिंह जी बहादुर' वाक्य का प्रयोग किया गया है (प्रतिलिपि लेखक संग्रह)।

किसी आधारभूत लेखों का उल्लेख न करके जन्म काल की काल्पनिक गणना की है।[1] मात्र एक तज्किरा-इ इमादुल्मुल्क[2] के विवरण से आभास मिलता है कि अप्रेल, १७५७ ई० में सूरजमल अपने जीवन के पचास वर्ष पूर्ण कर चुका था। इस आधार पर सूरजमल का जन्म वि० स० १७६४ (१७०७-८ ई०) मानने मे कठिनाई नही हो सकती है। उसका जन्म रानी देवकी की कोख[3] से ननिहाल मे हुआ था और वह उसका ज्येष्ठ[4] पुत्र था। रानी देवकी कॉमर के चौधरी अखैराम की सुयोग्य पुत्री थी।[5] बीसवी शताब्दी के प्रमुख इतिहासकारों ने फादर वेण्डल के आधार पर सूरजमल के पितृपक्ष को विवादास्पद बना दिया है। वेण्डल के अनुसार सूरजमल न तो बदनसिंह का पुत्र था और न उसकी धमनियो मे इस कुल या वंश

१ — पं० बलदेवसिंह ने लिखा है कि बदनसिंह 'रियासत' पाकर तामीर किले-जात, मकानात कुम्हेर व डीग व वैर के मसरूफ हुये और कुंवर सूरजमल, कि जो व उम्र दस वर्ष के थे, निगाहदाश्त फौज व मुल्कगीरी में रहते थे। (पृ० २०), वाकया राजपूताना के लेखक (भाग २, पृ० ४६) ने भी इसी आधार को स्वीकार किया है। प० बलदेव सिंह का कथन सत्यानुरूप नहीं है।
— प० गोकुल चन्द दीक्षित, के अनुसार, "बदनसिंह के देहान्त (वि० १८१२/१७५५ ई० के समय सूरजमल की अवस्था बाईस वर्ष थी।" (पृ० ३८) इस उल्लेख के अनुसार सूरजमल का जन्मकाल स० १७६२/१७३३ ई० होता है। लेखक ने पाद टिप्पणी में जन्म स० १७६५ लिखा है। यह आगे लिखता है कि 'यून विजय के बाद इनके पिता सवाई जयसिंह के साथ जयपुर चले गये थे। लौटते समय बयाना के समीप इनके पुत्र रत्न पैदा हुआ और उनको नाम सुजान रखा गया।' अत लेखक का जन्मकाल निर्धारण विक्रमी या शक दोनों हो पचागों के आधार पर भ्रमात्मक है।

२ — तज्किरा-इ-इमाद, पृ० २४४ (डॉ० गंडासिंह द्वारा अहमदशाह दुर्रानी (पृ० १८२) में अनुदित)।

३ — जॉन कोहन, पृ० २० अ, फो० पो० प्रो० स० १८, जुलाई ७, १८२६ ई०, स० ४६, जुलाई २६, १८२६, स० १७३ फरवरी १७, १८५४ ई०; पोथी जागा, जाट जगत, पृ० १८।

४ — सूदन, पृ० ५, सोमनाथ साहित्य।

५ — जॉन कोहन, पृ० २० अ, पोथी जागा।
—ग्राउज (पृ० २३) के अनुसार देवकी के पिता का नाम अखैराम तथा भाई का नाम महाराम था। द० कौ० (जि० ७, पृ० ४६०) के अनुसार महाराम ने अक्टूबर २२, १७२२ ई० (आसोज सुदि १४, सं० १७७६) को सूरजमल के साथ जयसिंह से भेंट की थी।

का रक्त था। वह किसी अन्य की विवाहिता पत्नी का औरस पुत्र था। लेखक आगे लिखता है "कहा जाता है कि एक दिन यह युवती एक शिशु (सूरजमल) को अपनी गोद में लेकर बदनसिंह की हवेली पर अपनी बहिन से मिलने आई थी। बदनसिंह की उस पर निगाह पड़ी और उसके रूप-लावण्य व सौन्दर्य पर मुग्ध होकर उसने उसको अपने घर मे रख लिया। वह शीघ्र ही अपने गुणों के कारण उसकी प्रधान प्रेमिका बन गई। अपनी माता के प्रभाव से इतर स्वय सूरजमल की अदभुत प्रतिभा, सैन्य सगठन की क्षमता ने यह प्रमाणित कर दिया कि वह नव विकासोन्मुख जाट राज्य के लिए उपयुक्त व्यक्तित्व है। इससे बदनसिंह ने अपनी औरस सतानो को सत्ताच्युत करके बिरादरी (कौमी मजलिस) की अनुमति से सूरजमल को गोद ले लिया और उसको उत्तराधिकार प्रदान किया।"[1]

यदुनाथ सरकार ने सिनसिनवार जाटो की सामाजिक परम्परा तथा काठेड क्षेत्र की लोक प्रचलित ऐतिहासिक वार्ताओं पर ध्यान दिये बगैर एक विदेशी पादरी के कथन को स्वीकार किया है।[2] डा० कुजबिहारीलाल गुप्ता ने अनचाहे प्रतिकूल परिस्थितियो मे सूरजमल को बदनसिंह का दत्तक पुत्र[3] माना है, जबकि रामपाडे ने सूरजमल के लिए बदनसिंह का भतीजा होने की तर्कहीन सम्भावना व्यक्त की है। इसी प्रकार एक काल्पनिक लोकगीत के अलकारिक अध्ययन की उपेक्षा करके उसने सूरजमल को कायस्थ पुत्र होने की कल्पना पर बल दिया है।[4] डा० कानूनगो स्पष्ट शब्दो मे स्वीकार करते हैं कि 'सूरजमल बदनसिंह का पुत्र था और फादर वेण्डल का विवरण मात्र अफवाहो पर आधारित है'।[5] फिर भी अपने इस विवादास्पद प्रश्न पर अधिक प्रकाश नहीं डाला है। हमको अन्य किसी फारसी भाषा के ग्रन्थो, अखबारातो, मराठी व राजस्थानी प्रलेखो, ब्रिटिश शासनकालीन

---

१ – वेण्डल, सरकार (मुगल) भाग २, पृ० २६२।

२ – उपरोक्त।

३ – इवोल्यूसन ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ द फोर्मर 'भरतपुर स्टेट,' (१७२२–१९४७ ई०), पृ० ३५, लेखक ने अपने कथन मे फो० पो० प्रो०, स० १८, जुलाई ७, १८२६ के पत्र का उल्लेख किया है, किन्तु इस पत्र मे 'दत्तक' पुत्र का उल्लेख नहीं है। आगे इसी लेखक ने 'स्वर्ण जयन्ती ग्रन्थ या कवि कुसुमांजलि' (पृ० २१) का सम्पादन करते समय सूदन के 'भूपाल पालक भूमिपति बदनेश नन्द सुजान है' चरण के आधार पर सूरजमल को 'दत्तक या पालित' पुत्र मानने की चेष्टा की है। यह आधारहीन तथ्य है।

४ – भरतपुर अप टू १८२६, पृ० ४६।

५ – कानूनगो, पृ० ३१५, परिशिष्ट, बी।

इतिहासों या रिपोर्टों में इस प्रकार का उल्लेख या सूत्र नहीं मिलता है कि सूरजमल बदनसिंह का दत्तक, पालित या धर्मपुत्र था। मीर गुलाम अली लिखता है कि जब बदनसिंह ने वफात (स्वर्गवास) पाई, उसका ज्येष्ठ पुत्र (पिसरे बुजरगस) सूरजमल स्वय घर का स्वामी बना।[1] 'मजमा-उल अखबार' का लेखक हरिसुखराय, समसामुद्दौला तथा जॉन कोहन भी सूरजमल को बदनसिंह का पुत्र मानते हैं और दस्तूर कौमवार में भी सूरजमल को बदनसिंह का पुत्र लिखा है।[2] सुजान चरित[3] के लेखक ने सूरजमल को पितृभक्त' और बदनसिंह के अन्य पुत्रो की नामावली मे उसको 'सिरताज' लिखा है। सूदन को सूरजमल का चारण[4] कहना मात्र दुराग्रह है। 'सुजान चरित' में जाटों की सामाजिक, आर्थिक, सैनिक व्यवस्था, सास्कृतिक परम्परा तथा ऐतिहासिक तथ्यो का निरुपण अतिरजित नही माना जा सकता है। सूदन एक स्वाभिमानी, निर्भीक तथा स्पष्ट वक्ता था और उसने कटु सत्य[5] को भी स्पष्ट शब्दो मे व्यक्त किया है। वास्तव मे वह अपने ग्रन्थ को अधूरा छोडकर दरबारी साहित्यकारो के मतभेदो से रूष्ट होकर सूरजमल के सानिध्य को त्यागकर गगा तट की ओर चला गया था और वहा उसने भावद् भक्ति व सूरजमल की वीरता से प्रभावित अनेक स्फुट कवित्त लिखे। उसके ऐतिहासिक वर्णन 'देहली क्रॉनीकल', 'तारीख इ-अहमद-शाही, अन्य फारसी इतिहासो तथा अभी तक प्राप्त लेखो से पूर्णत मेल खाते हैं। यदि सूदन को सूरजमल का चारण या प्रशस्ति वाचक कहा जा सकता है, तब अन्य समकालीन काव्यकार आचार्य शिवराम, आचार्य सोमनाथ, अखैराम, उदैराम आदि विद्वानो तथा जयपुर राज्य के आश्रित लेखक आचार्य श्री कृष्ण 'कलानिधि', सोमनाथ की स्वीकारोक्ति तथा विवरणो को क्या माना जावेगा ?[6] इन सभी भारतीय लेखको ने सूरजमल को बदनसिंह का पुत्र स्वीकार किया है।

---

१ – इमाद, पृ० ५५।

२ – इ० डा०, भाग ८, पृ० ३६०, मा० उमरा, भाग १, पृ० १२८।

३ – सूदन, पृ० ६।

४ – राम पाडे, पृ० ४५।

५ – सूदन ने व्यगोक्ति में सूरजमल के नाम से बदनसिंह की ओर इगित किया है–
"ज्यौं चूडामनि के मिले, पहिले जाइ आगार,
त्यौं काहू के जाइवौं सो क्यौं करें अवार"। पृ० २४०।

६ – द्रष्टव्य–नवधा भक्ति राग रस सार, माधव विनोद, रस पीयूष निधि, सिंहासन बत्तीसी, गिरवर विलास (सुजान सम्वत्), पद्य मुक्तावली, माधव जयति।
—लेखक कृत जाट राजा सूरजमल का पितृपक्ष, रा० हि० का० प्रो०, खड ५ १६७२।

पदच्युत तथा प्रतिद्वन्दी मोहकमसिंह 'दत्तक, पालित या धर्मपुत्र' सूरजमल के असामाजिक गठबन्धन के विरुद्ध राजपूतो तथा केन्द्रीय अमीरो मे प्रचार कर सकता था या समाज मे विद्वेष की भावना फैला सकता था। किन्तु अद्यत. इस प्रकार की विपरीत सामग्री उपलब्ध नही हो सकी है। इस प्रकार आचार्यों के विवरण, सिनसिनवार दुर्ग की सामाजिक, सास्कृतिक, धार्मिक मान्यताओ व परम्पराओ के आधार पर सूरजमल को बदनसिंह का औरस पुत्र स्वीकार करने में कठिनाई नही हो सकती।

मीर गुलाम अली के शब्दो मे 'सूरजमल केवल जमीदाराना पोशाक धारण करता था और अपनी देशी (ब्रज) भाषा बोलता था'।[१] स्पष्टत. उसने अपनी जन्मभूमि कॉमरमे रहकर लोक-व्यवहारिक अति साधारण शिक्षा ग्रहण की थी। भाषा या साहित्य अध्ययन की अपेक्षा सैनिक तथा धार्मिक वृतियो में, जमीदारी के प्रबन्ध में उसकी अधिक अभिरुचि थी। 'फिर भी हिन्दू-मुस्लिम विद्वानों, प्रशासनिक अधिकारियों तथा कुशल राजनयिकों के नियमित सम्पर्क में रहकर उसने सासारिक अनुभवो से उच्च प्रशासनिक व राजनैतिक ज्ञान प्राप्त कर लिया था। समकालीन लेखकों ने उसको 'चौदह विद्या निधान तथा धर्म कर्म प्रवीण, पर उर पीर विदारक, अभीत'[२] माना है। सैयद गुलाम अली ने सूरजमल को दीवानी व फौजदारी, मुल्कगीरी (दिग्विजय) तथा कूटनीति मे अठारहवी शताब्दी का महानतम व्यक्ति[३] लिखा है। सूरजमल पर अपनी माता देवकी के धार्मिक विचारो की छाप थी। उसमें पितृ भक्ति तथा श्री हरदेव भक्ति अति प्रबल[४] थी और वह श्री गोवरधन की पूजा करना अपना परम कर्तव्य मानता था। सिनसिनवारो मे यह परम्परा, अटूट आस्था व श्रद्धा भक्ति अद्यत विद्यमान है।

'तवारीख भरतपुर' तथा अन्य परवर्ती इतिहासकारो के अनुसार दस वर्ष (१७१७ ई०) की आयु में ही सूरजमल ने निगाहदास्त फौज व मुल्कगीरी (दिग्विजय) में भाग लेना शुरू कर दिया था।[५] दस्तूर कौमवार से हमको ज्ञात होता है कि उसने पिता के प्रतिनिधि के रूप में मार्च २०, १७२१ (चैत्र वदि ८, स० १७७७) को सूरजमल अपने मामा अज्जू के साथ प्रथमबार केन्द्रीय मन्त्रियों तथा अमीर-उमरावों से वार्ता करने के लिए दिल्ली गया था, वहां उसने काटेह जनपद के जाट

१—इमाद, पृ० ५५।
२—शिवराम, अखैराम, सूदन।
३—सियार, भाग ४, पृ० ३८, इमाद, पृ० ५५।
४—सूदन, पृ० ५।
५—बलदेवसिंह, पृ० २०, बा० राज०, भाग २, पृ० ४६।

वकील चिंतामणि तथा अन्य प्रमुख बिरादरी के जमींदारों के साथ मिलकर सवाई जयसिंह से भेंट की थी और सवाई जयसिंह ने जाटों में शिरोमणि डूग के वंशानुगत भू-स्वामी (जमीदार) के पुत्र सूरजमल का अपने दरबार में परम्परागत समुचित आदर सत्कार किया था। उसको प्रथम भेंट में एक जड़ाऊ कलगी, एक घोड़ा, एक लगाम व बाग के साथ सिरोपाव प्रदान करके बदनसिंह को मान्यता प्रदान कर दी थी। दिल्ली प्रवास काल में स्वभावत सूरजमल ने अपने वकील के माध्यम से अपने पिता की न्यायोचित मांगो पर शाही दरबार के अन्य अमीरो व अधिकारियो से भेंट-वार्ता अवश्य की होगी? ये तथ्य अभी खोजन्य हैं। फिर अक्तूबर २२, १७२२ को थाठेड, कॉमर, सहार तथा मेवात के प्रमुख जमीदारों, दीवान नदाल गूजर तथा फौजदार देवकरण सहित जयसिंह की छावनी में पहुँच कर उसको जमींदारो की ओर से हरसम्भव सहयोग देने का आश्वासन दिया। इस प्रकार दो तीन वर्ष के संघर्षात्मक अनुभव के बाद तेरह--चौदह वर्ष की आयु में ही कायेड, मेवात तथा परगना सहार के अन्यान्य जमीदारो को सवाई जयसिंह की सेवा में ले जाकर उपस्थित करने मे सूरजमल ने अति गौरवशाली भूमिका का निर्वाह किया।

सूरजमल के जन्मजात व विकासशील उच्च सैनिक गुण, प्रशासनिक पटुता, कुशल राजनयिक तथा कूटनीतिज्ञ होने के बारे मे समकालीन फारसी, हिन्दी तथा फ्रेंच लेखक एक मत [1] हैं। सुपुष्ट शरीर, शारीरिक बल राजनयिक क्षमता, नि शक वीरता, नम्रता, मानवता, सरसता, उदारता तथा ब्रज संस्कृति की रक्षा व विकास को अद्भुत प्रतिभा आदि गुण ईश्वरीय उपहार थे। उसने किशोरावस्था में थून के प्रबल आक्रमण, जाट डूग व पालो की लूट तथा साझेदारी परम्परा, जमींदारी के दीवानी व फौजदारी प्रबन्धो का भली भांति अध्ययन किया था। मुगल अमीरो मे राज्य हित या जन हित की अपेक्षा व्यक्तिश या दलीय हित सम्वर्द्धन के लिए होने वाले संघर्षों आपसी दलगत या कौमी खांपों की कटुता, दरबारी दलबन्दी, व्याप्त भ्रष्टाचार व आचरणों को भली प्रकार परखा था और असीम धैर्य, साहस, आत्म-विश्वास व आत्म बल के साथ उसने अपने विचारो को पुष्ट कर लिया था। सैन्य संगठन की क्षमता, नियमित सैनिको को अनुशासित रखने या आज्ञापालित करने की बुद्धिमत्ता, विकसित युद्ध कला को अपनाने, विशाल दुर्गों मे रहकर शत्रु को पराजित करने की युद्ध शैली तथा शिक्षण ने उसको उत्तम योद्धा, कुशल सेनापति तथा सर्व मान्य नेता बना दिया था। प्रारम्भ में युवको या जमीदारो को कज्जकाना धारो मे शामिल होकर और बाद मे राजपूतो के साथ मिलकर पर्याप्त अनुभव प्राप्त कर लिया था। इस प्रकार नि सन्देह अठारहवी शताब्दी के मध्यकाल में विधि ने

---

१ – इमाद, पृ० ५५, सियार, जि० ४, पृ० २८, वेन्डल।

सूरजमल को भारतीय इतिहास में जातीय संगठन, ब्रजमण्डल में राज्य निर्माण, सर्व धर्म, साहित्य व संस्कृति के विकास के लिए नियुक्त किया था।

२-जातीय तथा सैनिक संगठन का प्रसार

नवाब सम्रादत खाँ की अनुशंसा (तजवीज) पर प्रारम्भ में बदनसिंह को उसके ज्येष्ठ भ्राता ठाकुर रूपसिंह का उत्तराधिकारी तथा पूर्वोत्तर काथेड जनपद का वंशानुगत जमीदार (साहिब-ए जमी या भोमिया) स्वीकार (मार्च १७, १७२२) कर लिया गया था। फिर सवाई जयसिंह के साथ सम्पन्न कौल करार के आधार पर बदनसिंह ने दिसम्बर २, १७२२ को ठाकुर पद तथा सिनसिनवार डूंग बाहुल्य पूर्वोत्तर कायेड जनपद की सरदारी प्राप्त कर ली थी और मई २२, १७२३ को मुगल सरकार ने इस समझौते के लिए वैधानिक रूप मे स्वीकार कर लिया था। 'दाम्पत्य सूत्र बन्धन' तथा भाई चारा' के सिद्धान्त ने उसको प्रभावी सैनिक संगठन की शक्ति प्रदान कर दी थी। सूरजमल ने हंसिया, कल्याणकौर, गंगा, खेतकौर (किसनकौर) आदि के साथ शादी करने के बाद अपने नातेदारों के साथ मिलकर सुदृढ़ जमींदाराना सैनिक दस्तों का गठन किया। शनै शनै मोहकमसिंह के स्थाई जमादार तथा स्थाई या अस्थाई सैनिक दल, प्रभावित जमीदार भी अपने सवारो सहित बदनसिंह की नियमित सेवा मे आकर शामिल हो गये थे।

पून अभियान के शीघ्र बाद ही जून, १७२३ मे सवाई जयसिंह को सम्राट के आदेशों की अनुपालना में महाराजा अजीतसिंह राठौड के विरुद्ध जटवाडा से अजमेर की ओर ससैन्य प्रस्थान करना पड़ा, तब ठाकुर तुलाराम, खजर का पुत्र मैदा, बलराम का पुत्र भज्जूराम आदि जमीदारो तथा जाट वकील हेमराज कटारा के साथ ससैन्य सूरजमल को भी अजमेर की ओर रवाना किया गया। मुगल-राठौड संघर्ष में हेमराज कटारा की कमान मे नियुक्त जाट सवारो ने प्रथमबार अपनी कुशलता का परिचय दिया। अन्त में सवाई जयसिंह के सद् प्रयत्नो से महाराजा अजीतसिंह ने मुगल सरदारो के साथ समझौता करना स्वीकार कर लिया। फलत जनवरी २१, १७२४ को सवाई जयसिंह ने बुधवाडा (सूबा अजमेर) नामक स्थान पर सूरजमल को सीख का, ठाकुर तुलाराम को सिरमा तथा अन्य को सिरोपाव प्रदान करके विदा किया।[१] इसके बाद जब जयसिंह स्वय मथुरा लौटा, तब जून १६, १७२४ को सूरजमल अन्य दो पटेलों के साथ उसके हुजूर में पहुँचा। उसने एक मोहर तथा पटेलों ने एक-एक रुपया नजर किया।[२]

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४५४, ४६५ ४६२, ५२७, मारवाड़ अभियान के लिए द्रष्टव्य-इर्विन भाग २ पृ० ११२-११५; रेऊ, भाग १, पृ० ३२४, भटनागर, पृ० १६६-८।

२ – स्याहा हजूर, सं० १७८०।

डीग के दक्षिण में ठाकुर तुलाराम, विजयराम तथा रणजीत अवारिया सिनसिनवारो का अधिकार था और ये तीनो बन्धु-बान्धव फर्रुखसियर शासन काल से ही क्षेत्रीय जमींदारी के प्रबन्ध के साथ ताल्लुकेदारी तथा फौजदारी मे साझीदार थे। क्षेत्रीय भाषा मे तुलाराम इहरा का 'राजा' कहलाता था।[1] तुलाराम अति दूरदर्शी तथा बात का धनी सरदार था और प्रारम्भ से ही उसने बदनसिंह के पक्ष को पुष्ट करने मे हर सम्भव सहायता प्रदान की थी। निःसन्देह बदनसिंह मध्यस्थता, सहायता तथा अथक प्रयासों के लिए अवारिया भाई-बन्धुओं का ऋणी था। बदनसिंह, तुलाराम व रणजीत अवारिया सरदारो ने भाई-चारा तथा साझेदारी के आधार पर जिला आगरा के अनेक जाट प्रधान गांव इजारे पर प्राप्त कर लिये थे और इस इजारा के एवज मे बन्दूकची सवारो के साथ राज्यपाल की सेवा के लिए प्रस्तुत थे।

जून २६, १७२५ ई० को शाही आदेशानुसार सवाई जयसिंह ने जाट मुल्क की दीवानी अधिकार भी बदनसिंह को सौंप दिये थे। २४ अक्तूबर को विजयराम अवारिया ने जैसिंहपुरा दिल्ली मे जयसिंह से भेंट की और उसको परगना इहरा का वशानुगत बिरादरी सरदार स्वीकार कर लिया गया। पुन. बदनसिंह ने सौंख के हथीसिंह कुन्तल तथा अडीग के फौंदाराम कुन्तल के साथ भाई-चारा सम्बन्ध प्रगाढ़ करने का सफल प्रयास किया और उसके प्रयास से फौंदाराम सूरजमल के साथ दिल्ली पहुँचा। इस समय जयसिंह ने सम्भवतः सूरजमल के लिए पृथक् वतन जागीर मे कुम्हेर का इलाका (परगना हैलक का उत्तरी-पूर्वी इलाका) प्रदान किया तथा फौंदाराम को कुन्तल (खूटैल) डूग का सरदार स्वीकार कर लिया था और जनवरी २३, १७२६ को दोनों के लिए सौंख का सिरोपाव प्रदान करके सम्मानित किया।[2] बाद में फौंदाराम व बदनसिंह ने आपस में मिलकर परगना मथुरा, महावन तथा सहार मे अनेक गाव व कस्बा इजारे पर प्राप्त कर लिये थे और अडीग पृथक् जिला के रूप मे गठित किया गया।

परगना हेलक क दक्षिणी भाग में सोगरिया डूंग का विस्तार व प्रभुत्व था। 'सिन कुन्तल' डूग की एकता तथा साझेदारी के बाद बदनसिंह ने परम्परागत 'सिन-सोग' डूग की एकता का जी-तोड प्रयास किया, किन्तु ठाकुर खेमकरन सोगरिया की अदूरदर्शिता से यह गठबन्धन गतिशील नहीं हो सका और इसका दु:खद परिणाम खेमकरन को भुगतना पडा। फलत. जाट इतिहास मे सोगरिया डूग का अस्तित्व सदैव के लिए धूमिल हो गया।

१ – विशेष अध्ययन के लिए द्रष्टव्य– 'जाटों का नवीन इतिहास' परि० ५: पोथी तीर्थ पुरो०, प्रलेख २५, ३३।

२ – ह० कौ० जि० ७, पृ० ४७२, ५३७।

३ – सोगरिया दुंग का पतन, मई–जून, १७२६ ई०

ठाकुर खेमकरन ने राव चूड़ामन की सह साझेदारी तथा भाई-चारा सिद्धान्त पर सिनसिनवार–सोगरिया दुग की एकता के बाद सोगरिया दुग की सरदारी प्राप्त करली थी और अठारहवी शताब्दी के प्रथम दशक में बाणगंगा तथा रूपारेल नदियो के तट पर सघन जगलो के चक्र से सुरक्षित वर्तमान भरतपुर दुर्ग के आन्तरिक भाग में फतहगढ़ी (फतहपुर या फतहाबाद) नामक एक कच्ची गढ़ी का निर्माण करा लिया था।[१] आगरा विद्रोह (१७१६) के समय उसने सवाई जयसिंह के पक्ष मे शामिल होकर सम्पूर्ण काठेड प्रदेश की सरदारी प्राप्त करने की निजी महत्वाकाक्षा को उजागर कर दिया था, किन्तु अन्त मे उसको सैय्यद बन्धुओ तथा राव चूड़ामन के सामने समर्पण करना पडा था।

अमीर-उल उमरा सैय्यद हुसैन अली की हत्या के बाद खेमकरन (खेमा) स्वयं दस सहस्र सवार व पैदलो की भीडभाड के साथ कस्बा पहाडी छावनी (अक्टूबर, १७२०) में विजेता सम्राट मुहम्मद शाह के हुजूर मे जाकर उपस्थित हो गया था। सम्राट ने अन्यो की भाति उस पर भी अनुकम्पा की और सेना के चन्दोल डेरो की सुरक्षा का भार सौंपा[२]। हसनपुर युद्ध मे उसकी लुटेरा धारो ने चूड़ामन के सैनिको के साथ मिलकर बिना किसी भेदभाव के उभय-पक्षों की लूट मे भाग लिया था। फिर भी युद्ध के बाद वह सम्राट की छावनी मे ही उपस्थित रहा और मुहम्मदशाह के साथ दिल्ली पहुँचकर सम्राट तथा नव नियुक्त वजीर नवाब मुहम्मद अमीन खाँ के प्रति अपनी राजभक्ति तथा निष्ठा प्रगट करके उच्च मनसब व जागीर प्राप्त करने का प्रयत्न करता रहा। वजीर नवाब मुहम्मद अमीन खाँ ने प्रारम्भ में जब कट्टरपंथी मुस्लिमों की प्रसन्नता व शाही खजाने मे राजस्व वृद्धि के लिए हिन्दुओं पर पुन जजिया लगाने का प्रस्ताव रखा, तब दिल्ली के हिन्दू नागरिको ने प्रदर्शन करके घोर विरोध किया। इसके साथ ही सवाई जयसिंह, राजा गिरधर बहादुर नागर को दरबार में हिन्दू शक्तियों को जजिया के विरोध मे सगठित करने का अवसर मिला। दिसम्बर १३, १७२० को खेमकरन जयसिंह की जैसिंहपुरा छावनी मे पहुँचा। तब जयसिंह ने उसको ससाज एक घोडा, एक झण्डा जरी, एक फेंटा, एक जामा कुरता जरी, एक जड़ाऊ कलगी से, सम्मानित किया।[३] हिन्दुओं के विरोध के फलस्वरुप

---

१ – सोगरिया दुग के राजनैतिक विकास के लिए दृष्टव्य 'जाटोंका नवीन इतिहास,' पृ० १०३–४, ११२–३, २४३, (फतहगढ़ी का निर्माण) पृ० ३२५–६ पा० टि० ३।

२ – शिवदास, पृ० ५७ ब, खाफी खाँ, जि० २, पृ० ९२०, कॅमवर, पृ० २३७; सियार, भाग १, पृ० १७४।

३ – ह० को०, जि० ७, पृ० ३२३।

सम्राट के परामर्श पर २४ दिसम्बर को वजीर ने जजिया प्रस्ताव को 'रैय्यत की समृद्धि तथा देश की खुशहाली' आने तक स्थगित करके हिन्दू जमींदारो, हिन्दू अधिकारियों तथा प्रजा को प्रसन्न करने का प्रयास किया।[१]

खेमकरन अति वीर, साहसी तथा चतुर सरदार था। कहा जाता है कि वह खुले बाडे मे बाघो से कुश्ती लडकर उनको कटारी से मारने मे अति निपुण था। दिल्ली प्रवास काल मे शाही मैदान में आयोजित प्रदर्शन में उसने कुश्ती लडकर दो तीन बाघो को कटारी से मारकर सम्राट व अमीर उमरावो को अपनी वीरता व साहस से चमत्कृत कर दिया था। सम्राट ने अति प्रसन्न होकर उसका 'बाघमार' व 'बहादुर' की उपाधि, एक घोडा, खिलअत व वतन जागीर मे दीवानी के अधिकारों का नवीनीकरण करके सम्मानित किया।[२] २२ फरवरी का जयसिंह ने उसको फर्रासखाना से गजी की छोलदारी प्रदान की।[३] २६ जून को पवित्र रमजान का प्रथम दिन था। इस दिन खेमकरन ने शाही दरबार में उपस्थित होकर सम्राट के लिए दो मोहर नजर की। उसको अन्य अमीरो की भांति पान तथा इत्र प्रदान करके सम्मानित किया गया।[४] इस प्रकार वह दिल्ली मे दस माह (नवम्बर, १७२० से सितम्बर, १७२१) तक रुका और इस काल म नवाब रूहल्ला खाँ के खजाने से उसकी मिजमानी पर १३३० मोहर, ३६,४५१ रुपया व्यय किया गया। बाद मे जब जयसिंह क लिए आगरा प्रान्त का राज्यपाल पद प्रदान किया गया, तब उसने इस मिजमानी व्यय का भुगतान किया।[५] राव चूडामन की मृत्यु का समाचार मिलते ही खेमकरन अविलम्ब दिल्ली से वतन जागीर को रवाना हो गया था और उसने सिनसिनवार डूग मे फूट व कलह को भडकाने मे मोहकमसिंह के विरुद्ध बदनसिंह का साथ दिया था, किन्तु द्वितीय थून अभियान के समय वदनसिंह की पारदर्शिता के कारण जयसिंह को उससे व्यावहारिक सहयोग नहीं मिल सका।

खेमकरण वीर होने के साथ दानवीर तथा उदार था। कहा जाता है कि वह दोपहर को सह भोज मे शामिल होन के लिए धौसा बजाकर अपने साथियों को बुलाया करता था। उसके पास एक चतुर तथा स्वामिभक्त हथिनी थी।[६] उसने

---

१ – खाफी खाँ, जि० २, पृ० ९३९; इकबाल, पृ० १३१, कॅमवर, शिवदास, पृ० ६४ अ–६५ ब, सवाई जयसिंह के नाम महाराणा संग्रामसिंह का खरीता, जनवरी ६, १७२१ (पौष सुदि ९, सं० [illegible])।

२ – जॉन कोहन, पृ० २० ब–२१ अ।

३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३२५।

४ – शिवदास पृ० ७३।

५ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३३६।

६ – देशराज, पृ० ५५४।

अपनी सैनिक शक्ति भी बढ़ा ली थी। समकालीन प्रलेखो से ज्ञात होता है कि उसने बदनसिंह के 'सिन सोग' संघ के प्रस्ताव को ठुकराकर अपने नेतृत्व में जाट संगठन का प्रयास किया। खेमकरन पर 'भाई-चारा' सिद्धान्त स्वीकार करने तथा दबाव डालने के लिए बदनसिंह ने जनवरी, १७२६ में मीर बख्शी खानदौरान तथा कई एक शाही मनसबदारो की वतन-जागीर के गांव इजारे पर प्राप्त कर लिये थे, किन्तु खेमकरन ने इसका विरोध किया और रबी फसल के समय बदनसिंह के गुमास्तों को अपने क्षेत्र से रकम का भुगतान नहीं करने दिया। कहा जाता है कि एक दिन सूरजमल शिकार करते हुये फतहगढ़ी (फतहपुर) तक जा पहुँचा और यहाँ उसने 'शेर तथा गऊ' को निर्भीकता से एक घाट पर पानी पीते देखा। उसने शीघ्र ही इस चमत्कार का कारण ज्ञात कर लिया और नागाजी महाराज के दर्शन करने के बाद उनका साधुवाद प्राप्त करके नैतिक व आध्यात्मिक बल प्राप्त कर लिया था। नागाजी ने इस स्थान को अजेय बतलाया। इससे सूरजमल ने इस गढ़ी पर अधिकार करने का विचार किया। इस लोक वार्ता से आभास मिलता है कि वास्तव में सूरजमल ने खेमकरन के विरुद्ध जनसमर्थन प्राप्त करने में सफलता प्राप्त कर ली थी।

रबी की फसल आने पर जब बदनसिंह के गुमास्तो ने परगना हेलक के दक्षिणी तथा दक्षिणी-पश्चिमी ग्रामो के जमीदारो से जमा वसूल करने का प्रयास किया, तब खेमकरन ने हस्तक्षेप करके विरोध किया। फलतः मई, १७२६ के प्रथम सप्ताह मे बदनसिंह ने सोगरिया के विरुद्ध अपनी टुकड़ियाँ रवाना करके सवाई जयसिंह को स्थिति से अवगत कराया। मई ८, १७२६ (वैसाख सुदि ८, स० १७८३) को ताराचन्द तथा राय स्योदास के नाम परवाना भेजा गया और उनको बदनसिंह की सहायता के निर्देश दिये गये।

'खेमू (खेमकरन) जाट पातशाही मनसबदारो की जमा का भुगतान नहीं कर रहा है इससे बदनसिंह को उसके विरुद्ध चढ़ाई करनी पड़ी है। आप शीघ्र ही अपनी टुकड़ी के साथ बदनसिंह की सहायता के लिए रवाना हो जाए। राय स्योदास को भी आदेश भेज दिये गये हैं और वह भी उधर पहुँच रहा है। आप दोनो आपस मे मिलकर विचार करके तुलाराम आदि सभी जाट-पचों को बुलाकर खेमा को समझा दें कि बदनसिंह शाही मनसबदारों व जमींदारों के गाँवों से जमा वसूल करने का वैधानिक अधिकारी है। अतः आप उसको भुगतान करने का कष्ट करें। यदि वह रकम भुगतान न करे और कहना नहीं माने, तब उसको कायल करके बदनसिंह के निर्देशानुसार दमनात्मक कार्यवाही मे सहायता करें।'' [१] खेमकरन ने

---

१ – ड्रा० खरोता व परवाना, सं० ३/४३३ ; आमेर रिकार्ड, राजा अयामल के नाम शिवदास की अर्जी, मई ४, १७२६ ई० (वैशाख सुदि ४, स० १७८३)।

इन प्रस्तावों तथा आदेशों को ठुकरा कर खुला विरोध किया। फलत. सूरजमल ने फतहगढ़ी पर अचानक रात्रि आक्रमण कर दिया। खेमकरन अपनी हथिनी पर सवार होकर निजी सवारो के साथ फौंदाराम कुन्तल के पास अडींग भाग गया और सूरजमल ने उसकी गढ़ी पर बिना रक्तपात के अधिकार कर लिया।[1] अन्त में कुछ वर्षों के बाद इस कच्ची गढ़ी को पूरी तरह बरबाद कर दिया गया।

सूरजमल ने ठाकुर फौंदाराम को खेमकरन के लिए किसी भी प्रकार मारने का सुझाव दिया और इस कार्य के एवज मे उच्च सम्मान व जायदाद प्रदान कराने का प्रलोभन दिया। जब खेमा अडींग पहुँचा, तब फौंदाराम ने उसका भारी सत्कार किया और वहां कुछ दिन रुकने का आग्रह किया। अन्त में फौंदाराम ने उसको भोजन मे विष दे दिया। विष अति घातक था और वह उसके शरीर मे फैलने लगा। फलत खेमकरन अपने साथी सवारों सहित अपनी स्वामिभक्त हथिनी पर सवार होकर ग्राम मुतिया (इलाका फतहपुर) की ओर चल दिया। मुतिया ग्राम का ठाकुर उसका रिश्तेदार था और उसने खेमकरन को बचाने का भारी प्रयास किया। अन्त मे तीसरे दिन उसकी मृत्यु हो गई।[2] विष के प्रभाव मे हथिनी भी वहीं समाप्त हो गई। फिर सूरजमल ने वचन पालन का सतत् प्रयास किया और अगस्त, १७२६ मे तुलाराम, फौंदाराम क साथ जयसिंह के हजूर मे आमेर पहुँचा। जयसिंह ने दोनो को अगस्त १४, १७२६ (भादों वदि २, सं० १७८३) को सीख का सिरोपाव देकर फौंदाराम को परगना मथुरा के अनेक गाव इजारे पर उठा दिये। धीरे-धीरे फौंदाराम ने तीन लाख वार्षिक जमा का इलाका प्राप्त करके जीवत-पर्यन्त बदनसिंह के साथ भाई-चारा निभाया।[3]

अब खेमकरन के पुत्र तेजसिंह को जमीदारी का उत्तराधिकार प्रदान किया गया। अन्य पुत्र-पेना आदि तथा खेमकरन के भाई यथापूर्व अपनी जमीदारी पर काबिज रहे, किन्तु सोगरिया दुर्ग की सरदारी का अन्त हो गया। अक्तूबर, १७२७

---

१ – जॉन कोहन (पृ० २० ब), लेखक ने अपने विवरण में किसी सम्वत् का उल्लेख नहीं किया है। पं० बलदेवसिंह (पृ० २०) के अनुसार यह घटना स० १७८६ (१७३२-३३ ई०) मे घटी थी। वावपा राज० (खड २, पृ० ४६) में बलदेवसिंह की प्रतिलिपि की गई है और इस प्रकाशन के बाद अन्य लेखकों, गजेटियरों में यह सम्वत् दिया गया है। अत यह सम्वत या सन् भ्रमात्मक है।

२ – जॉन कोहन, पृ० २१ अ-ब।
—देशराज (पृ० ५५४, ५५७) ने 'विष देकर' तथा 'आक्रमण के समय मारने' के दो विवरण दिये हैं। जॉन कोहन का मत अन्य स्रोतों से भी पुष्ट होता है।

मे जब बदनसिंह दूदाराम, हरीसिंह, हरलाल मेदा आदि के साथ आमेर पहुंचा, तब वकील चिन्तामणि तथा तेजसिंह सोगरिया भी उसके साथ मौजूद था। ४ अक्तूबर (कार्तिक वदि ५, सं० १७८४) को अन्य सरदारों के साथ तेजसिंह को भी सिरोपाव दिया गया।[१]

भरतपुर के पूर्व मे ग्यारह किमी० आगरा भरतपुर राजमार्ग पर ऊंडेरा अति समृद्ध तथा सम्पन्न गाव था। कालान्तर मे यह ग्राम विशाल टीले तथा बीहड जगल में बदल गया था। अठमतो के अनुसार सोगरिया हूण के अस्तित्व मे आने से पूर्व यह ग्राम परगना फतहपुर-सीकरी या किरावली मे शामिल था और यहा कछवाहो का वास था। कहा जाता है कि यहा का जमीदार अति प्रतिभा सम्पन्न, तांत्रिक तथा तत्व ज्ञानदर्शी था। उसने सूरजमल की निडरता से प्रसन्न होकर एक घोडा, एक भुजा-तावीज तथा तांत्रिक यन्त्र प्रदान किया था। यह यन्त्र विजय लाभ व अपार खजाने के लिए सिद्ध-तन्त्र था। सूरजमल सदैव इसको अपने साथ रखता था। बाद मे इस तन्त्र को राज खजाने म रखा गया। वह तावीज को अपनी भुजा में धारण करता था और घोडा अस्तबल मे पूजा जाता था। इस तान्त्रिक के आशीर्वाद से सूरजमल का यश सर्वत्र फैलने लगा। इस प्रकार सूरजमल ने अपनी वीरता, बुद्धि-चातुर्य्य से 'सिन सोग' व कुन्तल हूणो की बिरादरी का वृहद् सघ बनाकर बाथेड़ राज्य की सीमाओं का दक्षिण की ओर विस्तार किया। इससे पहारवाटी के बहार हूण से सीधा सम्पर्क बनने का मार्ग खुल गया। इसके बाद उसने इसी वर्ष (१७२६) कुम्हेर के विशाल दुर्ग की नीव डाली और यहां अपनी ड्योढियां बनवाई।

खेमकरन के पतन के बाद सूरजमल ने उत्तर में मेवाती परगनो की ओर ध्यान दिया। सुजान चरित' के प्रारम्भ म सूदन लिखता है 'बदनसिंह का आदेश मानकर कुवर सूरजमल ने सर्व प्रथम मेवात पर आक्रमण करके अपना अधिकार कर लिया'[२] जेम्स टॉड का कथन है कि सूरजमल ने बयाना मे भारी नर सहार[३] किया था, किन्तु इस कथन की पुष्टि अद्यत नही हो सकी है। फिर भी अठसतों स ज्ञात होता है कि परगना बयाना की सीमायें बसेडी, (पवारपाटी) तक थी। सम्भवत सूरजमल ने डाग तथा बसेडी, सरमथुरा के पहाडी इलाको मे आबाद गुजर तथा पवार पल्लो व जमीदारो को दबाकर राजभक्त बनाने का सफल प्रयास किया होगा और कालान्तर मे यह क्षेत्र जाट राज्य मे समाहित हो गया। आगामी वर्षों मे जयसिंह ने आगरा प्रान्त के अनेक गाव व प्रमुख राहदारी कस्बे 'सैनिक

१ – द० कौ०, जिल्द ७, पृ० ३६२।

२ – सूदन, पृ० ६।

३ – टॉड, भाग २, पृ० ८६।

चाकरी या- पेशकश' भुगतान की शर्त पर बदनसिंह को सौंप दिये थे। इससे बदनसिंह ने सूरजमल की कमान मे सवार टुकडी को जयसिंह की सेवा मे तैनात कर दिया था।

४ – रामपुरा मालवा में सूरजमल का योग, १७२६ ई०

सवाई जयसिंह का कोटा-बूंदी के हाड़ौती राज्यो मे पूर्ण हस्तक्षेप था और बुन्देलखण्ड के जमींदार उसकी आज्ञा का पालन करने लगे थे। उसका मालवा प्रान्त के प्रति गहन मोह [1] था और वह हाड़ौती की सुरक्षा के लिए मालवा मे अपना राजनैतिक हस्तक्षेप बनाये रखना चाहता था। नवम्बर, १७२७ ई० में छीतरसिंह हाडा (धाटी) तथा उसके कुछ साथी कोटा राज्य के कुछ गावो को लूटकर रामपुरा के ठाकुर (रावत) संग्रामसिंह चन्द्रावत की शरण मे चले गये थे। अगस्त, १७१७ से रामपुरा मेवाड राज्य के अधीन था। महाराव दुर्जनसाल ने बिना महाराणा की अनुमति प्राप्त किये दिसम्बर, १७२७ मे रामपुरा पर आक्रमण करके नगर को बुरी तरह लूटा और रामपुरा पर अधिकार कर लिया। फलतः रावत संग्रामसिंह चन्द्रावत तथा छीतरसिंह हाडा आदि भागकर बिजोलिया चले गये। महाराव दुर्जन लाल कुकडेसर में नियुक्त महाराणा के थानेदार को रामपुरा का प्रबन्ध सौंप कर वापिस लौट आया। इसके बाद उभय पक्षो ने सवाई जयसिंह से मदद का आग्रह किया। जयसिंह ने महाराणा को सलाह दी कि रावत संग्रामसिंह चन्द्रावत मेवाड का वशानुगत सेवक है, उसको रामपुरा की वंशानुगत जागीर से पृथक् नही किया जावे। किन्तु महाराणा ने इस बात को नही माना। फलत. संग्रामसिंह शाही दरबार मे जाकर उपस्थित हो गया और सवाई जयसिंह के वकील की सहायता से अमीरो को रिश्वत देकर जुलाई, १७२८ मे मुकाता भुगतान की शर्त पर रामपुरा जागीर का पट्टा प्राप्त कर लिया था। किन्तु जब वह लौट रहा था तब मार्ग में किसी ने उसको मार डाला।[2]

समुचित अवसर देखकर सवाई जयसिंह ने सितम्बर, १७२८ मे जयपुर से उदयपुर की ओर प्रस्थान किया, तब प्रतापसिंह जाट जमीदारो के साथ मौजूद था। [3] जयसिंह १ अक्तूबर से २२ अक्तूबर तक मेवाड में रुका और उसने

---

१ – पेशवा के नाम दादो भीमसेन का पत्र, अगस्त १७, १७२८ ई०; सरदेसाई, पृ० २६।

२ – वंश भास्कर, खंड ४, पृ० ३११६–३१२१, जयसिंह के नाम दुर्जनसाल का पत्र, द. ३१ दिसम्बर, १७२७ तथा रावत संग्रामसिंह का पत्र, २६ दिसम्बर, धायभाई नगजी की अर्जदास्त, स० ४६८/२०५, जुलाई २०, १७२८।

३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३०२।

महाराणा के सामने परगना रामपुरा अपने प्रबन्ध में हस्तान्तरण करने का प्रस्ताव रखा, किन्तु मेवाड के मंत्री पचोली विहारीदास ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। दिसम्बर, १७२८ समाप्त होते ही सवाई जयसिंह एक कठिन उलझन व समस्या में फस गया। दिसम्बर, २७ १७२८ (पौष वदि १२, मंगलवार, सं० १७८५) को सिसोदिया रानी चन्द्रकु वर बाई ने माधोसिंह को जन्म देकर कछवाहा उत्तराधिकार के प्रश्न को उलझा दिया था। फलत: १७०८ के समझौते के निदान के लिए अप्रेल, १७२६ में जयसिंह को पुनः उदयपुर की ओर प्रस्थान करना पडा, तब सूरजमल, ठाकुर तेजसिंह सोगरिया, बालकराम (भतीजा फौदाराम) की कमान मे जाट टुकडियो ने उसके साथ कू च किया। इस बार भारी दवाव मे आकर महाराणा ने अप्रेल ५, १७२६ को परगना रामपुरा का पट्टा छ माह तक एक हजार सवार व एक हजार बन्दूकचियो के साथ मेवाड की सैनिक चाकरी करने की शर्त पर अपने भानजे माधोसिंह को नामान्तरित कर दिया।[१] फिर कछवाहा जाट सवारो ने रामपुरा जागीर का प्रबन्ध सम्भालने के लिए कू च किया। ज सिंह स्वय कुकडेसुर पहुँच गया। कछवाहा-जाट सैनिको को रामपुरा के चन्द्रावतो पर आक्रमण करना पडा। १७ अप्रेल को कुकडेसुर म जयसिंह ने सूरजमल तथा सोगरिया, कुन्तल सरदारो की वीरता के लिए सम्मानित किया। सूरजमल को खासगी सिरोपाव एक जामा फर्रुखशाही, एक फेंटा गुजराती तथा जरी का निशान प्रदान किया गया।[२] यह जाट सैनिकों के जीवन का प्रथम अवसर था, जब वे सूरजमल की कमान मे अपने मुल्क के बाहर निकले और अपनी वीरता, साहस व कुशलता का परिचय देकर जयसिंह का असीम स्नेह प्राप्त कर लिया।

५ – मालवा अभियान मे जाटो का सहयोग, १७२६-३३ ई०

अमझरा युद्ध (नवम्बर २६, १७२८) के बाद राजा छबीलाराम नागर का पुत्र भवानीराम नागर गिरधर बहादुर के पुत्रों कुँवर विजयराम व सम्भूराम तथा मालवा के अन्य शाही सेनानायको व अधिकारियों के असहयोग तथा आर्थिक सकट के कारण मराठो को मालवा के प्रमुख नगरों से चौथ वसूल करने तथा उनके उपद्रवो को रोकने में पूर्णत विफल रहा। उसको शाही निर्देशो क बाद भी राजपूत नरेशो का भी सहयोग नही मिल सका। १७२६ की वर्षा ऋतु के बाद मल्हार राव होल्कर, ऊदाजी पवार, कठाजी कदम आदि ने दक्षिण मालवा मे भारी लूट की और मराठा

---

१ – वीर विनोद, खड २, पृ० ७७१, ६७३–६, वश भास्कर, पृ० ३१२१, स्याहा हजूर पत्र, टॉड, जि० २, पृ० २६८, ईश्वर विलास, परि० २, पृ० ६१।

२ – ह० को०, जि० ७, पृ० ४२०, ५३८, ४७१।

टुकड़िया मालवा के प्रमुख दुर्ग माण्डू तक पहुँच गई।[1] सवाई जयसिंह वास्तव में आगरा प्रान्त के साथ मालवा में भी अपनी नियुक्ति के लिए प्रयत्नशील था। अत मराठो की आक्रामक गतिविधियों तथा मालवा के शाही अधिकारियो के असहयोग को देखकर सम्राट ने खानदौरान के परामर्श पर नवम्बर, १७२६ में सवाई जयसिंह को मालवा मे राज्यपाल नियुक्त किया और अतिरिक्त सवारो की भरती के लिए मदसौर व टोडा जागीर मे प्रदान कर दिये थे।[2]

नवम्बर २, १७२६ को जयसिंह ने शाही साधनों से सयुक्त निजी सेनाओं के बल पर मराठो को मालवा से बाहर निकालने तथा प्रान्त का प्रशासन सभालने के लिए जयपुर से उज्जैन की ओर प्रस्थान किया। सूरजमल भी काठेड प्रदेश के प्रमुख जमीदारो की कमान में शामिल बन्दूकची सवारो के साथ इस अभियान मे जाकर शामिल हो गया था। महाराणा सग्रामसिंह ने भी मराठो को मालवा से बाहर निकालने की कडी चेतावनी दी।[3] ३० दिसम्बर को जयसिंह ससैन्य ग्गोर पहुँच गया था, जहा उज्जैन प्रा त के पातशाही दीवान आगा महमद सैद खा ने उससे भेट[4] की और मालवा विशेषत उज्जैन नगर की सुरक्षा–व्यवस्था के लिए उधर चलने का आग्रह किया। फरवरी १२, १७३० को जयसिंह ने उज्जैन के पदच्युत राज्यपाल भवानीराम (चिमनाजी राजा) से भेंट की और गिरधर बहादुर, दयाबहादुर आदि की मृत्यु पर सम्वेदना प्रगट की। १३ फरवरी को चिमनाजी राजा उसके डेरो पर मिलने आया।[5]

माण्डवगढ का प्राचीन दुर्ग नर्मदा नदी के किनारे सामरिक दृष्टि से अति महत्वपूर्ण था। दक्षिण मालवा की घाटी तथा दुर्गम मार्गों का नियन्त्रण इसी दुर्ग से होता था। जयसिंह के उज्जैन पहुँचने से पूर्व ही मल्हार राव, ऊदाजी पवार, कठाजी कदम आदि मराठो ने दिसम्बर के प्रारम्भ मे माण्डवगढ़ (माण्डू) पर अधिकार कर लिया था। फलत जयसिंह ने उज्जैन न रुक कर माण्डवगढ़ की ओर सीधा कूच किया और फरवरी १७३० के अत मे जाट–राजपूत टुकड़ियों की मराठो के साथ एक झडप हुई। इस बारे में डा० रघुबीरसिंह का मत है कि इस बार माण्डू के लिए

---

१ – मालवा, पृ० १६३–६४, १६६–२०७, पे० द०, जि० १३, पृ० ५१, इर्विन, भाग २, पृ० २४५, अजाइब, ७४, ब।

२ – पे० द०, जि० १०/६६, २१/३१, वीरविनोद, पृ० ३१३३–४, अजाइब, पृ० ७७ अ, फरमान (कपड द्वारा), स० १३७ आर, मालवा, पृ० १७३–७४, साहू रोजनिसी, १/१६८।

३ – जयसिंह के नाम महाराणा सग्रामसिंह का पत्र दिसम्बर २०, १७२६।

४ – द० कौ०, जि० १८, पृ० ५८५।

५ – उपरोक्त, जि० १६, पृ० ३१६।

युद्ध हुआ या नहीं ? यह एक विवेच्य विषय है। यद्यपि मराठा प्रलेखों में अभी तक माण्डू के लिए इस बार कछवाहा मराठों में संघर्ष का कोई विवरण नहीं मिलता है, फिर भी 'सवाई जयसिंह' के जीवन चरित्र के लेखक डॉ० भटनागर तथा डॉ० टिक्कीवाल का मत है कि इस बार माण्डू के लिए झड़पें हुई थी। [1] इस बारे में सूदन लिखता है कि प्रथम मेवात पर अधिकार करने के बाद फिर सिंह सुजान (सूरजमल) ने मालवा स्थित मांडोगढ़ पर विजय प्राप्त की। इस प्रकार उसने अपने हाथ में कृपाण धारण करके आगे (अन्य युद्धों में भी) कूर्म (कछवाहों) की रक्षा की। [2] आचार्य सोमनाथ के अनुसार 'सूरजमल ने बानो (राकेट) की बौछार करके मराठा मुण्डों को विचलित कर दिया और उसने तैलंग प्रदेश से पेशकश प्राप्त करने में सहायता की।'' अतः समकालीन लेखकों के विवरणों से आभास मिलता कि माण्डू के आस पास मराठों से कोई साधारण झड़प अवश्य हुई होगी अथवा मालवा के जमींदारों को शाही आदेश मानने के लिए बाध्य करने में जाट अश्वारोहियों ने कछवाहों का साथ अवश्य दिया होगा। [3] दस्तूर कौमवार में अंकित है कि मार्च २, १७३० (फाल्गुन सुदि १४ स० १७८६) को सवाई जयसिंह ने गनीमा (मराठों) से लड़ाई में बहादुरी दिखलाने पर सूरजमल के लिए तुर्रा सहित खासगी सिरोपाव

---

१ – भटनागर, पृ० २०४, टिक्कीवाल, पृ० ७५।

२ – सूदन, पृ० ७।

३ – सरकार (मुगल, भाग २, पृ० २६३, पा० टि० २) का मत है कि "सूदन ने जिस मांडोगढ़ (माण्डू) का उल्लेख किया है, वह नर्मदा नदी के समीप बना दुर्ग नहीं है ? बल्कि यह स्थान जिला अलीगढ़ का मेंडू होना चाहिये।'' यदि सरकार के इस कथन को मान लिया जावे तो यह भी सम्भव हो सकता है कि सूरजमल ने मेवात में आबाद मांडोगढ़ (मण्डल) पर विजय प्राप्त की होगी। परन्तु अन्तर या बाहिय् साक्ष्यों से सरकार का मत अस्वीकारणीय है। —सूदन ने मांडोगढ़ की स्थिति मालवा में बतलाई है। लेखक मथुरा का निवासी था और उसे भौगोलिक स्थिति का स्पष्ट ज्ञान था। अत. उसका कथन काल्पनिक न होकर समुचित है। आचार्य सोमनाथ ने 'रस पीयूष निधि' में यद्यपि मालवा या माण्डव गढ़ का उल्लेख नहीं किया है, फिर भी तिलगाना (तैलंग) प्रदेश का उल्लेख सूदन के कथन को पुष्ट करता है। दस्तूर कौमवार में दी गई तिथि तथा मालवा अभियान की सूचना से स्पष्ट है कि, इस अभियान में सूरजमल शामिल था। इस प्रकार सरकार ने सूरजमल के प्रारम्भिक प्रयासों का जाट सीमाओं के आसपास निर्धारण करने का प्रयास किया है, वह समकालीन प्रलेखों से पूर्णत. असत्य प्रमाणित होता है।

प्रदान करके सम्मानित किया।[१] मराठा प्रलेखो के अनुसार राजा साहू तथा जयसिंह के बीच मालवा प्रान्त की समस्या का समाधान खोजने के लिए काफी समय पूर्व से वार्ताए चल रही थी ? अत जयसिंह के राजनैतिक सम्बन्धो को प्रगाढ करने के विचार से राजा साहू ने मार्च १८, १७३० को चिमनाजी अप्पा, ऊदाजी पवार तथा मल्हार राव को राजा जयसिंह के साथ सम्मानपूर्वक आचरण करने व माण्डू का दुर्ग सौप देने का निर्देश दिया। फलस्वरुप मराठा सरदार माण्डू जयसिंह को सौंपकर वापस लौट गये।[२]

पचोला युद्ध

सवाई जयसिंह जब मालवा मे व्यस्त था, तब बूंदी के राज्यच्युत महाराव बुद्धसिंह हाडा तथा कोटा-बूंदी के स्वामिभक्त हाडा सामन्तो ने बूंदी राज्य में जयसिंह के हस्तक्षेप को अस्वीकार करके बूंदी पर अधिकार करने की योजना बनाई। जयसिंह को ज्ञात हुआ कि महाराव बुद्धसिंह के पास चार सहस्र रुहेलो सहित पन्द्रह सहस्र सवार एकत्रित हो गये है और गजसिंह खीची की कमान म पन्द्रह सहस्र फौज, जिसमें अनेक पठान भी शामिल हैं, गागरोन के दुर्ग मे मौजूद हैं। इस समय करवाड का हाडा सालिमसिंह अपने द्वितीय पुत्र तथा बूंदी राज्य के उत्तराधिकारी दलेलसिंह की ओर से बूंदी की रक्षा कर रहा था। फलत जयसिंह ने बूंदी राज्य को हाडा राजपूतों के आक्रमण से बचाने क लिए मालवा से सूरजमल की कमान में जाट बन्दूकची सवारो को मनोनीत महाराव दलेलसिंह के साथ रवाना कर दिया। नरवर से दीवान खांडेराय की कमान मे एक फौज और जयपुर के छ प्रमुख सामन्तो कोजूसिंह (ईसरदा), फतहसिंह (सारसोप), मावर, सेवार, अचलसिंह राजावत (नतोरी) व घासीराम-बहादुरसिंह (पाऊनढेरा) को तीन सहस्र सैनिको के साथ सालिमसिंह की सहायता के लिए भेजा गया। अप्रेल ६, १७३० को उभय पक्षो मे पचोला नामक स्थान पर भयकर युद्ध हुआ, जिसमे दीवान खांडेराय (नरवर) व जयपुर के सभी छ सामन्त तथा अनेक जाट सवार काम आये, परन्तु महाराव बुद्धसिंह तथा उसके सहायको को पराजित होकर भागना पडा।[३]

---

१ – द० को०, जि० ७, पृ० ५३८।

२ – समझौता वार्ता की प्रतिलिपि, फरवरी २६, १७३० (कपड द्वारा सं० ६६); सतारा पेशवा डायरी, जि० १, लेख ६५, मालवा, पृ० १७८, १७६ पा० टि० १८०, सरदेसाई, पृ० १२६ १४०।

३ – वश भास्कर,पृ० ३१४२-३१६०, गहलोत, पृ० ८१, कोटा, खड १, पृ० ३३८, हेमराज के नाम बख्शी जोरावरसिंह तथा गुलाबराय को रिपोर्ट, ११ मई, २ जून, १७३०)।

इस स्थिति में अप्रेल के मध्य में जयसिंह को मालवा से ससैन्य बूंदी की ओर कूच करना पड़ा। तब उसने अप्रेल २०, १७३० (वैसाख वदि ४, सं० १७८७) को सिरखिराखाना से एक जोड़ी तिला मुरसाकारी जड़ाऊ पहोंची और २१ अप्रेल को सोख का सिरोपाव-जामा कुरता जरी, गुजराती फेंटा के साथ जरी का झण्डा सूरजमल के लिए प्रदान किया। इसी दिन सादूंल, असालत खां पठान, दयाराम, बहादुरसिंह वकील, तेजसिंह सोगरिया, तुलाराम (सुपुत्र पोहकर), (चाहसिंह (पौत्र ठाकुर राजाराम) आदि जाट सरदारों को सिरोपाव प्रदान करके उनकी वीरता के लिए सम्मानित किया गया।[१]

महाराव दुर्जनसाल हाडा (कोटा) के साथ मिलकर जयसिंह ने मई २६, १७३० (ज्येष्ठ सुदि १३, सं० १७८७) को दलेलसिंह को बूंदी राज्य का रावराजा घोषित करके राजतिलक किया।[२] फिर वह जयपुर लौट आया। जून २१, १७३० (अषाढ़ सुदि ७) को उसने राजा अयामल खत्री के माध्यम से गोविन्दा के हाथ बदनसिंह के पास इन युद्धों में काम आये शूरवीरों के प्रति संवेदना प्रगट करने के लिए मातमी का सिरोपाव भेजा।[३]

मालवा में तीसरी बार नियुक्ति

मालवा में स्थाई शांति के लिए शाही दरबार में मुगल-मराठा समझौता के जिस प्रस्ताव को स्वीकार करने पर जयसिंह ने जोर डाला, उसका दरबार में वजीर कमरुद्दीन, सम्रादत खां आदि ने भारी विरोध किया और सम्राट ने जफर खां रोशनउद्दौला तथा कोकीजू के अनुमोदन पर सितम्बर १६, १७३० को मुहम्मद खां बंगश को मालवा का राज्यपाल नियुक्त कर दिया, परन्तु वह अपने उद्देश्य में पूर्णत विफल रहा। फलत खानदौरान के परामर्श पर सितम्बर २६, १७३२ को जयसिंह के लिए तीसरी बार मालवा का प्रबन्ध व मन्दसौर की फौजदारी प्रदान की गई। अतिरिक्त सैनिकों की भरती के लिए तेरह लाख रुपया का अनुदान व सात लाख रुपया उधार दिया गया।[४]

२० अक्तूबर को जयसिंह ने जयपुर से प्रस्थान किया और दिसम्बर में आगरा पहुँच गया दिसम्बर ६, १७३२ को बंगश मालवा से चल दिया और १६ दिसम्बर को आगरा आ गया। इस बार सूरजमल पुन जाट सैनिकों के साथ

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३४५, ३६२, ४२०, ४५८, ४५५, ४७०, ५३२।
२ – वंश भास्कर, पृ० ३१६२–३।
३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४४०।
४ – वारिद, पृ० ११५–६, पे० द०, जि० १३/१०, १४/४७, वंश भास्कर, पृ० ३२१२।

मालवा पहुँचा। जनवरी १०, १७३३ (माघ वदि ११, सं० १७८६) को जयसिंह ने सूरजमल के लिए खासा बसन्ती पोशाक जामा नीमा, इजार, तहपेच, फैटा कलावतू चीरा तुर्रा बादला तिलाई तथा सादा रगीन झण्डा प्रदान किया। [1] इस समय चिमनाजी अप्पा के बुन्देलखण्ड की ओर जाने का समाचार मिला। अतः मराठो को दबाने के लिए जयसिंह ने उज्जैन से मंदसौर की ओर कूच किया, जहा उसको कृष्णाजी पवार व ऊदाजी पवार से सामना करना पडा। पवार सरदार पेशवा की नीति से असन्तुष्ट थे, इससे जयसिंह ने उनको जब अपनी ओर मिलाने का प्रयास किया तभी फरवरी मे मल्हार राव होल्कर व रानोजी सिंधिया ने फौज का भारी सामान पीछे छोड कर जयसिंह को मदसौर के निकट घेर लिया और उन्होंने पवारो को भगा दिया। इससे जयसिंह को खाइया खोदकर वही रुकना पडा। नवीन कुमुक न मिलने की स्थिति मे जयसिंह ने घेरा समाप्त कराने के उद्देश्य से मल्हार राव को छ लाख रुपया नकद व मालवा के अट्ठाईस परगनो से उनके द्वारा पूर्व मे की गई वसूली यथावत देने का प्रस्ताव रखा, किन्तु मल्हार ने इन प्रस्तावों को नही माना। इसी समय जयसिंह को पता लगा कि सम्राट स्वयं उसकी सहायता के लिए दिल्ली से आगरा आरहा है, तब उसने मराठो पर जोरदार आक्रमण कर दिया। जयसिंह चौहान ने जाट सवारो के साथ अपनी वीरता का परिचय दिया और मराठो को मदसौर से ५२ किमी० पीछे खदेड दिया। इस युद्ध मे जयसिंह की सेना के चन्दौल का सेनापति मारा गया और मराठों के १०–१५ बडे अधिकारी तथा सो–दो सौ सवार काम आये। [2] १७ फरवरी को गजसिंह चौहान को उसकी वीरता के लिए सिरोपाव प्रदान करके सम्मानित किया गया। [3]

कछवाहा–जाट सैनिको ने फिर मल्हार का पीछा किया, किन्तु मल्हार ने २६ किमी० आगे बढकर पुन कछवाहो को घेर लिया। फलत सघर्ष की अपेक्षा जयसिंह ने पुन समझौता वार्ता शुरू की और १० मार्च (चैत वदि १०, १७८६) को जयसिंह ने अपनी छावनी ग्राम खीजूरया (परगना मदसौर) से दौलतसिंह कुभाणी (झाला दीपसिंह) को राजा साहू के चाकर साहूजी बाघ को लिवाकर लाने के लिए भेजा। उसने छावनी में पहुँच कर वार्ता की। जयसिंह ने उसको दो घोडा, ५६ थान सिरोपाव तथा होलकर छावनी में मिजमानी की मिठाई भेजी। १७ मार्च को नरसी पडित ने पुन वार्ता की। [4] फलत. मल्हार ने जयसिंह के पूर्व प्रस्तावो

---

१ – द० को०, जि० ७, पृ० ५४० ।

२ – पे० द०, जि० १४/१–३, ३०/३०७–६, १५/६ ।

३ – द० को, जि० ७, पृ० ५८८ ।

४ – उपरोक्त, जि० १०, पृ० १३१६, ६८२ ।

को स्वीकार कर लिया।[1] २० मार्च (चैत सुदि ६, स० १७९०) को जयसिंह ने मदसौर मे सूरजमल को एक जडाऊ कलगी प्रदान की। २१ मार्च को गजसिंह नरूका (जावली) ने मदसौर मे जाट वकील रूपराम कटारा को अपना तीर्थ पुरोहित स्वीकार कर लिया।[2] इसके बाद जयसिंह मालवा मे अपने अफसर व नायब छोडकर जयपुर की ओर चल दिया और मालवा का मोह छोडकर जयपुर में ही व्यस्त हो गया। ३ जून (प्रथम असाढ वदि ७) को उसने सूरजमल तथा अन्य जाट सरदारों के लिए तेरह सिरोपाव जाट डेरों पर भेजकर विदा किया।[3] इस प्रकार सूरजमल ने मालवा अभियान मे मराठो की सैनिक व राजनैतिक गतिविधियो का गहन अध्ययन किया और सवाई जयसिंह के यश व सम्मान की रक्षा की।

६ – कुंवर पद तथा जयसिंह का स्नेह १७३२–३५

मालवा प्रान्त के प्रबन्ध से दूसरी बार मुक्त होने के बाद आगरा प्रान्त मे अपनी स्थिति को सुदृढ करने तथा मालवा पुन प्राप्त करने की अभिलाषा से सवाई जयसिंह मथुरा लौट आया था। उसको जाटो के सहयोग की अति आवश्यकता थी। अतः उसकी अनुकपा पर मार्च १७३१ मे मुगल सरकार ने बदनसिंह को 'राव' की उपाधि तथा आगरा प्रान्त में पच्चीस गाव प्रदान करके सम्मानित किया था। सुजान चरित तथा दस्तूर कौमवार के वर्णनो से स्पष्ट होता है कि अप्रेल, १७३२ में बदनसिंह ने सूरजमल को 'कुंवर' पदवी प्रदान करक सैन्य सचालन की शक्तियाँ प्रदान कर दी थी।[4] सवाई जयसिंह कुवर सूरजमल की निष्ठा से काफी प्रभावित हुआ। हुरडा सम्मेलन (२७, जुलाई/श्रावण वदि १३, स० १७९१)[5] के बाद सवाई जयसिंह ने प्राचीन वैदिक विधि विधान के अनुसार अश्वमेध यज्ञ[6] सम्पन्न

---

१ – पे० द० १४/१–३, १५/६, ३०/३१०–११, वीर विनोद, खण्ड २ पृ० १२१८–२०, यश भास्कर, ३२१२, मालवा, पृ० २२३–४३, सरकार, भाग १, पृ० १३३–४।

२ – पोथी तीर्थ पुरोहिताई, अपत्र ४४।

३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५४।

४ – सूदन, पृ० ६; द० कौ०, जि० ७, पृ० ५४१।

५ – वीर विनोद, पृ० १२२५–६, जोधपुर खरीता बही, सं० २, स० १७८९–१७९२, समझौते की प्रतिलिपि कपट द्वारा मे भी उपलब्ध है।

६ – ओझा निबन्ध सग्रह (खण्ड ३–४ पृ० १०७) के अनुसार यह प्रथम वाजपेय यज्ञ था। लेकिन ज्वाला सहाय (हिस्ट्री आफ भरतपुर, पृ० १९), प० गोकुल चन्द दीक्षित (पृ०–४०), भटनागर (पृ० २६४) का मत है कि यह अश्वमेध यज्ञ था। ईश्वर विलास महाकाव्यम् सर्ग ४–५ में इसका विशद वर्णन मिलता है।

किया। इस यज्ञ मे शामिल होने के लिए उसने अपने राज्य के समस्त सामन्तो तथा देशी नरेशो के लिए आमन्त्रण पत्र भेजे।[1] अगस्त ७, १७३४ (श्रावण सुदि ६, सं० १७९१) के दिन उसने इस यज्ञ की दीक्षा ली और ८ सितम्बर (भाद्रपद सुदि १२) को मानसागर के जल मे तीर्थोदक मिलाकर अवभृथ स्नान किया। इस अवसर पर कुंवर सूरजमल भी इस यज्ञ मे जाकर शामिल हुआ और १२ सितम्बर को उसने पांच सो मोहर भेंट की।[2] जयसिंह का सूरजमल के प्रति अति स्नेह व अनुराग था, उसने इस समय उसके प्रति पितृ-स्नेह प्रगट करके शुभ-आर्शीवाद दिया और १४ सितम्बर को जडाऊ कलगी प्रदान कीं।[3]

'पितृवत स्नेह' सूरजमल के राजनैतिक व्यक्तित्व के समुचित विकास का प्रथम चरण था। सूरजमल की कीर्ति सर्वत्र फैलने लगी थी और अनेक विद्वान दूरस्थ प्रदेशो से उसके आश्रय मे आने लगे। 'नवधा भक्ति राग रस सार' ग्रन्थ[4] से ज्ञात होता है कि १७३६ ई० के प्रारम्भ मे सूरजमल का जागीर केन्द्र कुम्हेर अति सम्पन्न नगर के रूप में विकसित हो चुका था और जाट राज्य में सुख, शान्ति तथा समृद्धि थी।

मालवा, बुन्देलखण्ड तथा हाडौती में मराठों के निरयशः बढते चरणो को रोकने के लिए सम्राट ने वजीर तथा मीर बख्शी की कमान मे सेनायें रवाना करने का निश्चय किया। नवम्बर २०, १७३४ को वजीर कमरुद्दीन ने आगरा होकर नरवर की ओर, और खानदौरान ने जयपुर होकर मुकन्दरा दर्रा के पार रामपुरा की ओर विशाल शाही सेना के साथ कूंच किया। मार्ग मे सवाई जयसिंह, राजा अभयसिंह, महाराव दुर्जन साल तथा अन्य राजपूत नरेश भी उसके साथ आकर शामिल हो गये थे। कुवर सूरजमल भी अपने वकील बहादुरसिंह सहित मीर बख्शी के साथ था। मल्हार राव व रानोजी सिंधिया ने फरवरी, १७३५ मे खानदौरान

ॐ—जयसिंह के अश्वमेध व वाजपेय यज्ञ की तिथियों के विस्तृत अध्ययन के लिए द्रष्टव्य 'टॉड कृत राजस्थान' भाग १ खण्ड १, पृ० ११३-४ पा० टि० १०१ (मगल प्रकाशन जयपुर)।

१ – स्याह् हकीकत, परगना टोंक भाद्रपद सुदि ५, स० १७९१ (२ सितम्बर)।

२ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५४२।

३ – उपरोक्त; ज्वाला सहाय हिस्ट्री ऑफ भरतपुर (पृ० १६) के आधार पर डा० कानूनगो, पृ० ६३।

—दीक्षित (पृ० ४०) का कथन 'जब राजपुत्र को मार देकर आर्शीवाद देने का समय आया तो राजपुत्रों में से उस समय वहां कोई भी उपस्थित नहीं था' पूर्णत: असत्य है।

४ – द्रष्टव्य–मोतीलाल गुप्ता, पृ० ४४।

को आठ दिन तक घेर कर उसकी रसद व्यवस्था भग कर दी। फिर मराठा दलों ने मुकन्दरा को पार करके साभर को लूटकर बरबाद कर दिया। फलत मीरबख्शी को अकेला छोडकर जयसिंह को अपने राज्य की सुरक्षा के लिए पीछे लौटना पडा। शाही सेना तथा राजपूत सैनिक मराठो को रोकने मे पूर्णत विफल रहे और २२ मार्च को खान दौरान को बाध्य होकर बू दी मे मराठा सरदारो से समझौता करने की सहमति देनी पडी। इन अपमानजनक युद्धों के बाद दोनो सेनापति अप्रेल के अन्त में दिल्ली वापिस लौट आये।[१] २३ अप्रेल (वैसाख सुदि २) को जयसिंह ने कु वर सूरजमल को आनमजरी, फेंटा जरी, जामा, कुरता जरी का सिरोपाव तथा उसके अन्य तेरह सरदारों को सिरोपाव प्रदान किया और २ मई (वैसाख सुदि ११, सं० १७९२) को जाट वकील को जयपुर से विदा किया।[२]

इस समय राधा बाई तथा बाजीराव पेशवा की पत्नी तीर्थयात्रा के प्रयोजन से उत्तर भारत म आ रही थीं। तब राजस्थान के राजाओ ने उसके स्वागत की भव्य तैयारियाँ करके मराठो के प्रति महानतम हार्दिक सम्मान प्रगट किया। जून ११, १७३५ (असाढ वदि ७) को राधाबाई जयपुर क समीप पहुँच गई थी, तब सूरजमल भी जयपुर पहुँचा और १७ जून को जयसिंह ने उसको फीलखाना से महोला व झूल सहित राया गज नामक हाथी बख्शीश किया।[३] फिर उसने सूरजमल सहित १९ जून (असाढ़ वदि ३०) के दिन एक सहस्त्र मोहर भेंट करके राधाबाई की मग मानी की। १८ अगस्त (भाद्रपद सुदि १) को जयसिंह स्वय राधाबाई को विदा करने के लिए वदनसिंह की हवेली पर पहुँचा। यहाँ से राधाबाई ने सूरजमल की कमान मे ब्रज की ओर प्रस्थान किया।[४]

७ — पेशवा की राजस्थान यात्रा तथा सूरजमल की उपलब्धि, १७३६ ई०

तूरानी सरदारा के सुझाव से इतर मीरबख्शी खानदौरान तथा सवाई जयसिंह

१ — अशोब, रुस्तम अली, पृ० २६६–७, खुशहाल, वे० द०, जि० १४, सेल २१–२३, २६–२६ इर्विन, खड २, पृ० २८०, दिघे, पृ० ११८–२०, सरकार, खड १, पृ० १३७–८, हेमराज के नाम बख्शी जोरावरसिंह का पत्र, मार्च २२, १७३५, जोरावरसिंह के नाम बालसिंह का पत्र, ३१ मार्च।

२ — द० कौ०, जि० ७ पृ० ५४२, ५५८।

३ — द० कौ०, जि० ७, पृ० ५४२।

४ — द० कौ०, जि० १०, पृ० १२११–३१, वे० द०, खड ९, सेल १२, ३०/२३१, १३४, वंश भास्कर भाग ४, पृ० ३२२३–४, सरदेसाई, पृ० १८९ ९०, हिंगणे, भाग १, सेल १९; जोरावरसिंह के नाम हेमराज का पत्र, ५ अगस्त (भाद्रपद वदि ३, स० १७९२ (रूपइ द्वारा) स० ६६६/७३।

सिंह का निश्चित सुभाव था कि मालवा तथा गुजरात प्रान्तों मे मराठों की लूट को रोकने के लिए केवल आपसी समझौता–वार्ता ही एक उपयुक्त तथा सामयिक मार्ग हो सकता है।[1] फलतः जयसिंह ने मराठों की मागो व प्रस्तावो पर विचार विमर्श करने के लिए सम्राट की अनुज्ञा से पेशवा को उत्तर–भारत की यात्रा का नियन्त्रण दिया; ताकि वह सम्राट से व्यक्तिशः भेंट करके मराठा प्रसार की राजनैतिक तथा आर्थिक समस्या का समाधान निकलवा सके।[2] राजा साहू की अनुमति प्राप्त करके अक्तूबर १५,१७३५ (कार्तिक वदि ३०) को बाजीराव पेशवा ने पांच सहस्र मराठा सवारो के साथ प्रथम बार राजस्थान की यात्रा प्रारम्भ की और फरवरी, १७३६ ई० के अन्त मे वह बूंदी के उत्तर पश्चिम में ४० किमी० जहाजपुर नामक स्थान पर पहुँच गया। सवाई जयसिंह भी अपने प्रमुख सरदारो तथा सेना सहित भाडली (मालपुरा) ग्राम मे पहुँच गया था। सूरजमल भी अनेक जाट सरदारों के साथ उनके साथ मौजूद था। बाजीराव पेशवा के निर्देश पर खुले मैदान मे मुलाकात के लिए शामियाना लगवाया गया, जिसके दोनों ओर उभय-पक्ष की सेनायें तैनात थीं। ६ मार्च (बुद्धवार, चैत्र वदि १०) को जयसिंह ने अपने शिविर से कई किमी० आगे बढ़कर पेशवा का प्रथम बार स्वागत किया। कुछ क्षणों की औपचारिक वार्ता के बाद दोनों सरदार अपने-अपने शिविरों मे लौट आये। ७ मार्च को बाजीराव पेशवा, रामचन्द्र पंडित व राजा अयामल खत्री के साथ जयसिंह से मिलने आया। दीवानखाना में उनमे तीन घण्टे तक आपस मे विचार-विमर्श चलता रहा। इस प्रकार पेशवा–जयसिंह मे मालवा तथा राजस्थान के मामलों पर नौ सप्ताह तक (६ मार्च–११ मई) बातचीत चलती रहीं।[3]

कहा जाता है कि इन मुलाकातो के समय सूरजमल ने विनम्र भाव से हाथ जोड़कर मस्तक नवाकर पेशवा को नमस्कार किया था। इसके उत्तर में बाजीराव ने उससे कहा "सूजा, जाटान मे तेरयो भाग्य नीको छै" सूरजमल ने शिष्टाचार वस

---

१ – पे० द०, जि० १४, लेख ३६ (अगस्त, १७३५), ३०/१३४, १४/३६, ३३/१६८; दिघे, पृ० १२३; ज० ए० सु० बं० १८७८, पृ० ३२७–८; सतीश, पृ० २२३–४।

२ – पे० द०, जि० १४, लेख ४७, ५१, ३०/१३४, माधवराव, पृ० १४१–३, सतीश, पृ० २२४।

३ – द० कौ०, जि० १०, पृ० ११५८–८६ (विस्तृत वर्णन)।

—सूर्यमल मिश्रण (पृ० ३२३८–६) के आधार पर सरदेसाई (पृ० १६४); सरकार (खंड १, पृ० १६६) तथा सतीश (पृ० २२५) का कथन है कि यह मुलाकात किशनगढ के द० पू० मे २७ किमी० भंमोला नामक स्थान पर हुई थी।

पेशवा को इसका उत्तर नहीं दिया, किन्तु सादूर्लसिंह (पर्यना) ने विनम्रता के साथ कहा "बाज्या, हाथ ओटान में तिहारो भाग्य नीचो छै।" इसको सुनकर पेशवा को भारी क्रोध आया, फिर भी वह अपने अर्न्तद्वन्द को पचा गया। इस घटना से जयसिंह को भारी क्षोभ हुआ। बाद में वह स्वय जाट शिविर में पहुँचा और उसने कहा "सूजा, तेरे चाचा सादूर्ल ने दरबार में पेशवा को उत्तर देकर ठीक नहीं किया। ठीक यही रहेगा कि आप उसे यथाशीघ्र छावनी से रवाना कर दें।" सादूर्ल ने सूरज को आश्वासन दिया कि वह शिविर छोड़कर नहीं जावेगा, किन्तु अन्य दिन दरबार में उपस्थित नहीं रहेगा। १२ मार्च (चैत्र सुदि १) को सायकाल सवाई जयसिंह ने पुन दरबार किया, जिसमें पेशवा अपने सरदारों के साथ आया। उसको अनेको भारी उपहार, पान व इत्र भेंट किये गये। कहा जाता है कि इस दिन पेशवा ने दरबार में चारों ओर दृष्टि डालकर सादूर्ल को देखा। फिर उसने सूरजमल से कहा, "सूजा, तेरा चाचा आज दिखलाई नहीं दिया" सूरजमल ने विनम्रता से नतमस्तक होकर निवेदन किया "श्रीमन्त वह आपके भय से आतंकित होकर रात्रि को ही शिविर छोड़कर चले गये" पेशवा ने कहा "अरे वह एक निडर व्यक्ति है। मुझे विश्वास है कि वह शिविर छोड़कर अन्यत्र जाने वाला व्यक्ति नहीं है। यदि वह आज मेरे सामने होता तो मैं उसको एक जागीर प्रदान करके सम्मानित करता, फिर पेशवा ने जयसिंह से आग्रह किया कि "इस प्रकार के निर्भीक शूरवीर को वह एक लाख दाम की जागीर देकर पुरस्कृत करे।"[१] कहा जाता है कि पेशवा के परामर्श पर सवाई जयसिंह ने सादूर्लसिंह को पर्यना ग्राम के समीप उत्तरी दक्षिणी सीमावर्ती इलाके में २७४४ बीघा क्षेत्रफल का भारोटी नामक इलाका जागीर में प्रदान किया। सादूर्ल ने भारोटी को अपनी पर्यना जागीर में मिला लिया। बाद में ये गाव जाट राज्य में मिला लिये गये।[२]

२४ मार्च को जयसिंह ने अजमेर से ५६ किमी० दक्षिण-पूर्व में मोरला नामक स्थान पर मुलाकात की। १० मई को जयसिंह का शिविर गेहलपुर में था, जहाँ से वह पेशवा से मिलन गया। ११ मई को बाजीराव ने जयसिंह से बिदाई ली और वह सीतागढ की ओर चल दिया।[३] दीर्घ प्रतीक्षा के बाद भी सम्राट ने पेशवा की मागों को स्वीकार नहीं किया, फिर भी मालवा में मराठों का अप्रत्यक्ष

---

१ – कागजात हलेना-पर्यना जागीर, जाटों का नवीन इतिहास, पृ० ३४८–९, पदुवश, पृ० १०१–२।

२ – ओडायर, खण्ड ३, पृ० ४०, खण्ड ४ पृ० ३०।

३ – द० कौ०, जि० १०, पृ० ११८४–१२१२।

अधिकार मान्य किया जा चुका था।[1] अन्त में बाजीराव आगामी वर्ष अपनी मांगों को स्वीकार कराने के दृढ संकल्प के साथ महाराष्ट्र की ओर लौट गया।[2] इसके बाद १६ मई (प्रथम ज्येष्ठ सुदि ७) को सूरजमल के लिए सिरोपाव प्रदान करके जयपुर से विदा किया गया।[3]

८ – कछवाहो के साथ सहयोग

बाजीराव पेशवा के दिल्ली प्रदर्शन (फरवरी–अप्रेल, १७३७) के समय सूरजमल के नेतृत्व मे जाट सवारो ने आगरा दुर्ग की सुरक्षा का भार सभाल लिया था। इसके फलस्वरूप १२ अप्रेल (चैत्र सुदि १३, स० १७९३) के दिन सूरजमल को जडाऊ सरपेच, दो मोतियों का बाजूबन्द तथा चार पोशाको का सिरोपाव, उसके साथ अन्य दस सेनानायको व जमींदारों को सिरोपाव से सम्मानित किया गया था।[4] फिर नादिरशाह के आक्रमण के समय सूरजमल ने दिल्ली तथा आस पास के क्षेत्रो से भाग कर आये नागरिको की सुरक्षा का भार उठाया और जून, १७३६ में भदौरिया राजपूतो की सहायता की थी।

९ – गगवाना युद्ध मे सूरजमल का पराक्रम १७४१ ई०

१७३४ ई० के बाद १७४० ई० मे महाराजा अभयसिंह राठौड ने बीकानेर के कुछ इलाको को हस्तगत करने की भावना से अपनी सेनाओ को उधर भेजा। इस समय बख्तसिंह राठौड (नागौर) ने बीकानेर के महाराजा जोरावरसिंह को सवाई जयसिंह की सहायता प्राप्त करने का परामर्श दिया।[5] जोरावरसिंह ने अपने खरीता मे सवाई जयसिंह को अति दयार्द्र दोहा[6] लिखकर अपने विशेष दूत मत्री आनन्दराम मेहता को जयसिंह से सहायता प्राप्त करने के लिए भेजा।

---

१ – पे० द०, १४/५५, ५६–६२, १५/६२–६६, २२/३३१, हिंगणे १/४,६, ग्रांट डफ, भाग १, पृ० ४३६, ४३२, सरकार, भाग १, पृ० १६७–७०।

२ – पे० द०, २२/३३, हिंगणे, ३/३; सरदेसाई, पृ० १६५, इर्विन, भाग २, पृ० २८४।

३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५४४।

४ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५४५, ३१०, ३६१, ३७३, ५८६, ६०१, ४२८, ४५८, ४६६, ४८६, ४६६।

५ – ओझा बीकानेर, जि० १, पृ० ३०६–१०, जोधपुर, जि० २, पृ० ६४८–५२, टॉड, जि० २, पृ० ८४, रेऊ पृ० ३५१, वीर विनोद, पृ० ५०२।

६ – अभो ग्राह बीकाण गज, मारू समद अथाह।
गरुड़ कार राठौडरी, सहाय करो जय शाह॥ टॉड, २/१२०॥

कछवाहा सामन्तों के परामर्श पर जयसिंह ने अभयसिंह को बीकानेर राज्य से घेरा उठाकर आपसी भाई चारा की सलाह दी। किन्तु उसने राठौड़ परिवारों का आपसी झगड़ा बतला कर कछवाहा नरेश की सलाह को नहीं माना।[1] फलत जयसिंह ने शीघ्र ही जुलाई, १७४० में अपने दीवान राजा अयामल खत्री की कमान में बीस सहस्र कछवाहा सेना बीकानेर की ओर रवाना कर दी और स्वयं ने अन्य सेना के साथ जोधपुर की ओर कूच किया। इस कूच में कुंवर सूरजमल अपने जाट सवारों के साथ मौजूद था।[2] जयसिंह के आग्रह पर महाराणा जगतसिंह भी पन्द्रह सहस्र सेना के साथ अजमेर की ओर चल दिया। फलत दबाव में आकर अभयसिंह को जयसिंह के साथ अति कठोर शर्तों पर समझौता करना पड़ा।[3] इन शर्तों में दो शर्तें अति कठोर व अपमानजनक थी, जिनका मारवाड़ के सामन्तों ने कड़ा विरोध किया। इस समझौता से जयसिंह की कटुता के कारण बख्तसिंह को भी अधिक लाभ नहीं मिल सका और उसने अपने भ्राता अभयसिंह को राठौड़ प्रतिष्ठा की स्थिरता व अपमान का बदला लेने की सलाह दी।[4] अन्त में दोनों भ्राताओं ने ससैन्य मेड़ता की ओर कूच कर दिया, किन्तु अजमेर के समीप राठौड़ शिविर में घटित अप्रिय घटना के परिणामस्वरूप बख्तसिंह ने स्वयं अपनी पाँच सहस्र सेना से ही कछवाहों का मुकाबला करने का दृढ़ संकल्प दोहराया।[5] उसने क्रोधित होकर आगे कूच कर दिया और कछवाहा राज्य के अनेक गांवों को लूट लिया।

सवाई जयसिंह इस समय बालाजी राव पेशवा के साथ फतहाबाद (धौलपुर) सम्मेलन (२६-२८ मई, १७४१) में व्यस्त था। सूरजमल तथा जाट सरदार सवारों सहित उसकी छावनी में उपस्थित थे। सम्मेलन के समय जयसिंह को राठौड़ आक्रमण की सूचना मिली। फलत वह मुगल मराठों से समझौता-वार्ता कराने के बाद विशाल सेना सहित अजमेर की ओर चल दिया। इस समय उसके साथ हाड़ा

---

१ – ओझा, जोधपुर जि० २, पृ० ६५३-४, टॉड जि० २, पृ० ८४-५।

२ – वीर विनोद, पृ० ५०७।

३ – ओझा, जोधपुर जि० २ पृ० ६५२-५, बीकानेर जि० १ पृ० ३१५, वीर विनोद, पृ० ८४८, वंश भास्कर, पृ० ३२६८-३३०१, जोधपुर ख्यात, पृ० २३६-४४; बांकीदास की ख्यात, पृ० ४०, भार्गव, पृ० १७१, कपड़द्वारा, यादवास्त स० १०६४, अगस्त ४, १७४० (श्रावण सुदि १३, स० १७६७)।

४ – दुर्जनसाल के नाम बख्तसिंह का पत्र, वैशाख वदि १३, स० १७६७ (अप्रेल १२, १७४१)।

५ – वंश भास्कर, भाग ४, पृ० ३३०१, ओझा, जोधपुर, खड २, पृ० ६५५-७, वीर विनोद, पृ० ८४८।

राजपूत, राजा उम्मेदसिंह (शाहपुरा), राजा गोपालसिंह (करौली), खींची चौहान, सूरजमल की कमान में जाट घुड़सवार, नवाब आजमखाँ, मुहम्मद सईद खाँ, समसामुद्दौला अपनी सेना सहित उपस्थित थे। इस प्रसंगठित एक लाख फौज के साथ जयसिंह जून, २१, १७४१ को पुष्कर से १८ किमी० उत्तर-पूर्व किशनगढ के निकट गंगवाना नामक स्थान पर पहुँच गया था। इसी समय उसको पता चला कि राजा बख्तसिंह अपनी सेनाओं सहित आक्रमण करने के लिए बढ रहा है। उसने शीघ्र ही राठौड़ो के सामने अपनी तोपें व्यवस्थित कीं। जयसिंह की एक लाख फौज के मुकाबले बख्तसिंह की कमान में प्राण-पण से लड़ने वाले पांच सहस्र राठौड सवार थे और वे भेड़ों के झुण्ड पर खूंख्वार चीते की भांति टूट पड़े। प्रथम आक्रमण में ही कछवाहा सेना के पैर उखड गये और दृढ-प्रतिज्ञ राठौड दो बार कछवाहा सेना को चीर कर आर पार निकल गये। परन्तु इस युद्ध में सूरजमल के जाट सवारों ने अति वीरता, साहस, अदम्य उत्साह से राठौड सवारों का सामना किया। उनके करारे प्रहार से सहस्रों राठौड सवार खेत रहे या घायल हो गये। इस प्रकार कुंवर सूरजमल ने यश, प्रतिष्ठा प्राप्त की। सवाई जयसिंह के यश की रक्षा की। राठौडों के भीषण आक्रमण से बचने के लिए जयसिंह के पास अन्य कोई उपाय नहीं था। कछवाहा पक्ष के सहस्रों सैनिक काम आये और इससे अधिक घायल हो गये। सहस्रों सैनिकों ने युद्ध मे भाग ही नहीं लिया और वे मैदान छोड़कर भाग गये। चार घण्टे में ही रणभूमि खाली हो गई और वहां घायल तथा मृतक सैनिकों के अतिरिक्त कुछ भी शेष नहीं बचा था। जयसिंह स्वयं तीन किमी० पीछे हट गया था और कुछ समय तक परेशान होकर देखता रहा। तीनों शाही सेनानायक पहाड़ी के समीप रणभूमि मे अपने अपने स्थान पर जम रहे थे। उन पर किसी ने भी हमला नहीं किया था। फिर भी दस सहस्र मुगलों मे से केवल एक सौ मुगल सैनिक ही अपने सेनानायकों की रक्षा के लिए रणभूमि में जमे रहे, शेष सभी सवार भयभीत होकर भाग गये। राजा बख्तसिंह के एक तीर व गोली लग चुकी थी और केवल सत्तर राठौड सवार उसके साथ थे, फिर भी उसमें अति साहस था। फलतः अपने सैनिकों के आग्रह पर भारी मन से उसने मेड़ता-नागौर की ओर प्रस्थान किया और महाराजा अभयसिंह व उसकी सेना से जाकर मिल गया।[1] इस प्रकार जयसिंह संभावित भयंकर युद्ध से बच गया। उसको भारी आत्मग्लानि हुई और

---

१ – चहार पृ० ३३७ ब–३७६ ब (आखों देखा हाल); जोधपुर ख्यात, खंड २, पृ० २५१–३; ओझा, जोधपुर, खंड २, पृ० ६५५–८; टॉड, खंड २, पृ० ८६; वंश भास्कर, खड ४, पृ० ३३१०–१; वीर विनोद, पृ० ८४८; रेऊ, पृ० ३५२; स्याह वाका, सं० १०५; खतूत, सं० ३६३/१८३, असाढ़ सुदि ६, सं० १७९८ (२१ जून)।

एक दिन गंगवाना शिविर मे रुक कर २३ जून को अजमेर पहुँचा।[1] फिर वह जयपुर लौट आया।

यह कछवाहा-राठौड संघर्ष राजस्थान के राजपूतों के विनाश का परिचायक था। इस कटुता को मिटाने के लिए महाराणा जगतसिंह के आग्रह पर महाराजा अभयसिंह ने जून के अन्तिम सप्ताह में जयसिंह के साथ सद्भावी समझौता अवश्य कर लिया था, किन्तु राजस्थान के दो बडे घरानो में मधुर सम्बन्ध पुन: स्थापित नहीं हो सके।[2] २१ सितम्बर, १७४१ (भादो सुदि १२, सं० १७९८) को सूरजमल तथा उसके साथ शामिल वकील बहादुरसिंह, रूपराम कटारा, हेमराज कटारा, तुलाराम (अवार), प्रतापसिंह चौहान, राजा प्रतापसिंह (वैर) आदि को सिरोपाव प्रदान करके जयपुर से विदा किया गया।[3] कछवाहा नरेश जयसिंह की कमान मे सूरजमल का यह अन्तिम युद्ध था। इसके बाद वह स्वयं जाट राज्य की विस्तार-वादी योजना मे सक्रिय हो गया।

---

१ – स्याह शाका, स० १०५, २३ जून (असाढ सुदि ११, स० १७९७)।

२ – रेऊ, पृ० ५३३, फरमान, अगस्त १५, १७४३ ई० (ज०अ०), कपड़ द्वारा स० १/६, १०५।

३ – द० को, जि० ७, पृ० ५४७, ३९१, ४२२, ४५६, ४५८, ४६०, ४६६, ४९१।

अध्याय ३

व्यक्तित्व का विकास

१७४१–१७४८

करनाल युद्ध में तूरानी घटक की स्वार्थपरता, विश्वासघात से देश को भारी आघात पहुँचा और मीर बख्शी आसफजहाँ दिल्ली से दक्षिण चला गया था। इसके साथ ही साम्राज्य के विघटन ने जोर पकड़ लिया था। सवाई जयसिंह मद्यपान में डूब गया था और उत्तेजक औषधियों का सेवन करने से उसका स्वास्थ्य गिरने लगा था। फिर भी सम्राट ने जुलाई ६, १७४० (१५ रबी २) को अस्सी लाख दाम के इनाम के साथ उसको मथुरा की फौजदारी, मनसब में तीन हजार सवार की वृद्धि व एक करोड़ तीस लाख दाम के इनाम के साथ आगरा निजामत की व्यवस्था व फौजदारी प्रदान[1] कर दी थी। सितम्बर, १७४० के अन्त में जयसिंह आगरा आया और राव बदनसिंह के परामर्श पर उसने दिल्ली पलवल 'शाह-राह' की सुरक्षा व्यवस्था के लिए ५ अक्तूबर को बल्लमगढ़ के चौधरी बल्लू से मुलाकात[2] करके समाधान खोजने का प्रयास किया।

जाट राज्य के दक्षिण-पूर्व में सिदगिरि क्षेत्र में आबाद बहार जमींदारों ने सूरजमल को अपना नेता स्वीकार कर लिया था और सूरजमल ने बहारवाटी के तेईस गाँवों को इजारे पर प्राप्त कर लिया था। इससे बहारवाटी का प्रमुख जमींदार मभा बहार भाई-बन्धुओं तथा परिवारों सहित डीग चला आया था। इसी प्रकार १७४२ के आस पास उसने पवारपाटी तथा सिकरवार जमींदारों को भी अधीनस्थ बना लिया था। मथुरा जिले की फौजदारी इजारे पर प्राप्त करने से यमुना पारी क्षेत्र के टेनुआ, नौहवार, रावत आदि के साथ मिलकर सूरजमल ने

---

१ – कपड़ द्वारा, परवाना सं० ६८६/१३४; फरमान सं० ६६०/६७।

२ – इ० को०, जि० ७, पृ० ४७०।

व सशक्त कौमी संगठन बना लिया था।[१] पश्चिम में जाट राज्य का विस्तार सम्भव था। उत्तर में मेवात के प्रमुख कस्बों–फीरोजपुर-झिरका, तिजारा कोटकासिम, नगीना, पुन्हेना तथा हथीन[२] पर अधिकार हो चुका था और होडल, पलवल प्रभाव मे आ चुके थे। इससे सूरजमल ने तेवतिया जाटो तथा तैगाव के गुजरों को अपना नैतिक समर्थन व परामर्श देकर दिल्ली के पडोस मे शाही परगनों पर अधिकार करने के लिए प्रोत्साहित किया। फिर उसने जनवरी २६, १७४३ (माघ सुदि ५, वि० स० १७६६) के शुभ मुहूर्त मे एक अति सुदीर्घ मैदानी दुर्ग व नगर भर्थपुर (बाद में भरतपुर) की आधार शिला रखी। इस प्रकार जाट राज्य प्रगति पथ पर अग्रसर होने लगा था।

१ – बल्लमगढ का तेवतिया परिवार और उसका राजनैतिक विकास १७०५–४५ ई०

१७०५ ई० के आसपास गोपालसिंह तेवतिया बल्लमगढ़ (दिल्ली के दक्षिण में ३८ किमी०) से लगभग पांच किमी० उत्तर में सीही ग्राम मे आबाद था। औरंगजेब की मृत्यु के बाद उसने अस्थिरता का लाभ उठाकर जाट गुर्जरो के एक कज्जकाना दल (जमात) का गठन किया और जमींदारी अर्जित करने की निहित नीति से दिल्ली पलवल 'शाह राह' पर लूटमार तथा शाही परगनो में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया था। राव चूंडामन के प्रभाव व सहयोग से कुछ ही वर्षों मे वह सम्पन्न तथा शक्तिशाली जाट नेता बन गया था। दूसरे दशक में तैगांव या तागौन (बल्लमगढके पूर्व मे १३ किमी०) ग्राम के व गुर्जरो के साथ मिलकर उसने निकटस्थ ग्रामो के राजपूत चौधरी को एक मुठभेड में मार डाला और क्षेत्रीय गावो पर दखल कर लिया।

अन्त में फरीदाबाद (दिल्ली के दक्षिण में २६ किमी०) के मुगल हाकिम मुरतिजाखां को चौधरी पद प्रदान कराकर उससे समझौता करना पडा। इस प्रकार गोपालसिंह को 'माल ओ-सायर ओ जकात' पर एक आना प्रति रुपया चौधरात वसूल करने का शाही अनुज्ञा-पत्र प्राप्त हो गया था। फिर उसने जाट प्रवक्ता राव चूडामन के अनुग्रह से समीपस्थ अनेक गावो की इजारेदारी प्राप्त की। इस प्रकार प्राणान्त से पूर्व क्षेत्रीय जाटो को एक राजनैतिक इकाई बना दिया था। उसके पुत्र

---

१ – नेवली, गजे० आगरा व अवध, खण्ड ४, पृ० ६३–६।

२ – पहाडी (जिला भरतपुर) के उ० प० मे १६ किमी०, फिरोजपुर–झिरका (जिला गुडगावा), तिजारा–फिरोजपुर झिरका के मे १५ किमी० पुन्हेना–नगीना के पूर्व में २६ किमी०, और होडल के पूर्व मे १५ किमी० हतीन–होडल के उ० प० में १६ किमी०।

चरणदास के नाम जमींदारी तथा चौधरी पद का नवीनीकरण किया गया और अन्य दो भ्राताओं ने अनेक गावों की जमींदारी प्राप्त की।

चौधरी चरणदास शूरवीर, धर्मज्ञ, रणबांकुरा [1] तथा महत्वाकांक्षी युवक था। उसने 'मदना' व निर्बल जमींदारों तथा अकर्मण्य शाही मनसबदारों की वेतन जागीर में हस्तक्षेप करने का प्रयास किया और मालगुजारी रोककर मुरतिजा खां के निर्देशों की खुली अवज्ञा की। मुरतिजा खां ने उसको बन्दी बनाकर फरीदाबाद के बन्दी खाने मे डाल दिया। कुछ समय बाद उसके पुत्र बल्लू (बलराम) ने मुगल हाकिम को धोखा देकर अपने पिता चरणदास को बन्दीखाना से छुड़ा लिया। कहा जाता है कि "बल्लू ने अपने पिता को मुक्त कराने के लिए मुरतिजा खां को व्यक्तिश एक मुश्त रकम देने का वचन दिया था। मुरतिजा खां के सिपाही चौधरी चरणदास को अपने साथ लेकर बिसनदास तालाब पर पहुँचे। बल्लू भी बोरियो में भरी धन राशि को छकड़ो मे लादकर वहाँ पहुँच गया। जब परखैया इन थैलियों को खोलकर रुपया गिनने तथा परखने में व्यस्त थे, तब बल्लू ने सिपाहियो से अपने पिता को छोड़ने का आग्रह किया। मुक्त होते ही चरणदास अपने पुत्र के घोड़े पर सवार होकर भाग गया। बाद मे परखैयों को अन्य बोरियो में केवल तांबे के दाम ही मिले।" इस प्रकार चतुर बल्लू ने अपने पिता व परिवार सहित भागकर सूरजमल के यहाँ शरण[2] ली। अन्त मे दोनो परिवारो मे नातेदारी [3] हो गई। इससे दो वशों के आपसी राजनैतिक सम्बन्ध निरयशः प्रगाढ़ होने लगे थे।

एक लाख रुपया जमा का परगना फरीदाबाद तथा इसका दक्षिणी भू-भाग परम्परागत वजीर कमरुद्दीन खा की सशर्त जागीर मे शामिल था। नादिरशाह के आक्रमण के बाद सम्राट ने मुरतिजा खा को मीर तुजुक के पद पर नियुक्त कर दिया था, किन्तु वह एक ईरानी सरदार था। सवाई जयसिंह की भेंट–वार्ता के बाद सूरजमल का नैतिक समर्थन प्राप्त करके बल्लू ने मुरतिजा खा को धोका देकर मार डाला और धीरे धीरे समीपस्थ ग्रामों पर भी नियन्त्रण कर लिया। फिर अपने राजनैतिक व सामाजिक प्रभाव की भव्यता के लिए अपने जन्मस्थान सीही के समीप एक गढ़ी का निर्माण कराया। बाद में इसका नाम 'बल्लभगढ़'

---

१ – धनि तेवतिया गौत, धन्य श्री सीही नगरी।
करि कालिका कृपा, भक्त भुज गहिके पकरी॥
चरणदास तिय पुत्र, मनहू तिय देव अवतरे।
धर्म धुरंधर शूरवीर, रणबांके अति जबरे॥ डायरी पं० जगदीशप्रसाद

२ – दिल्ली गजे०, पृ० २१३, कानूनगो, पृ० ७७–७८।

३ – इ० डा० (चहार), खण्ड ८, पृ० १५८, सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० २३६।

कमरुद्दीन खाँ के आमिल को एक मुठभेड मे मारकर फरीदाबाद पर भी अधिकार कर लिया। फिर उसने शीघ्र ही वजीर से 'हासिल वसूली' का अधिकार प्राप्त करके वहां अपने कारिन्दा नियुक्त कर दिये। इस साहसिक प्रयास ने उसको विशेष यश, सम्मान तथा प्रतिष्ठा प्रदान की। कुछ समय बाद उसने पलवल (वल्लभगढ के दक्षिण मे २१ किमी०) तथा उसके सभी गावो पर भी अधिकार कर लिया और 'राव' की उपाधि धारण करके इन शाही परगनों का प्रबन्ध करने लगा।[1] इस प्रकार अपरोक्ष रूप मे सूरजमल का प्रभाव दिल्ली के समीप तक फैल गया था।

२ – फतेहअली–असद खा युद्ध मे सूरजमल की वीरता, नवम्बर, १७४५ ई०

गगा-यमुना का मध्यवर्ती काठे का सम्पन्न, समृद्ध, उपजाऊ क्षेत्र है। मुगल काल में मध्य काठे का मुख्य प्रशासनिक केन्द्र जिला कोइल (वर्तमान अलीगढ़ के द०प० मे ५ कि०मी०) था। सम्राट मुहम्मद शाह के शासन मे इस जिले का प्रशासनिक अधिकारी (हाकिम) मीरजादा साबित खा था, जिसको ७०००/७००० सवार के मनसब व जागीर तथा नवाब की उपाधि से सम्मानित किया था। कोइल जागीर मे मध्य दोआब के टप्पल, जावरा, ईसू, चन्दौस, खुर्जा, नूँह आदि परगने शामिल थे।[2] नवाब साबित खां ने आधुनिक अलीगढ़ नामक स्थान पर एक विशाल तालाब तथा एक नवीन दुर्ग का निर्माण कराया और इसका नाम साबितगढ़' रखा। शस्त्रों से सुसज्जित उसकी सेना अति अनुशासित थी। सैनिक सफेद लम्बा कोट, पजामा व मौजे पहिनते थे।[3]

नादिरशाह के आक्रमण के बाद साबित खा ने अन्यो की भाति कोइल पर अपना स्वतत्र अधिकार कर लिया था। उसकी मृत्यु के बाद उसके पुत्र नवाब फतहअली ने बे सनद उत्तराधिकार प्राप्त किया। अत सम्राट ने अक्तूबर, १७४५ मे नवाब फतहअली को बेदखल (हटान) करने व विचार से अफगान सरदार असद खां खानजादा को आठ सहस्र सैनिकों तथा हल्के शाही तोपखाना के साथ रवाना किया। इस अवसर पर फतेहअली ने सूरजमल की सहायता प्राप्त करन के लिए कोइल से अपने दूत को रवाना किया। इस समय सूरजमल स्वय शिकार खेलने के लिए

१ – ता० अहमद शाही, पृ० २२ ब-२३ अ, इ०शा० (थाहर), खड ८, पृ० १५८, अवध, पृ० १४७,

२ – सूदन, पृ० १०, बलदेवसिंह, पृ० ३७।

३ – शिव, पृ० ७५ अ, रुस्तम अली, पृ० ५२१–२, ता० मुजफ्फरी, पृ० ७५।

नौंहभील (मथुरा के उत्तर तथा अलीगढ़ के पश्चिम में क्रमश ४० ४० किमी०) मे पड़ाव डाले पड़ा था। जाट कुंवर जाट राज्य की अनाधिकृत सीमाओं की सुरक्षा के लिए वास्तव मे शाही अमीरो को जाटों की सगठित शक्ति से परचित कराना चाहता था। अत. सलाहकारो के परामर्श पर उसने जाटों के प्रति नवाब के रुख को आंकने तथा राजनैतिक स्तर पर समझौता करने के विचार से दूत को व्यक्तिगः भेंट-वार्ता का सुझाव दिया। फिर ज्योतिषविदो के घोषित शुभ-मुहूर्त मे अपने गोल खास (अग रक्षक) सरदारो तथा सवारो के साथ ईखू पहुँचा, जहाँ फतेहअली ने पाच सौ सवारो के साथ उसकी अगवानी की। समीप आने पर खुले प्रागण मे नवाब हाथी से उतरा और दोनो ने नतमस्तक होकर एक दूसरे का अभिवादन तथा भुजा पसारकर आलिगन किया। उपस्थित जाट सरदारों से नवाब का परिचय कराया। फिर दोनो सरदारो ने आपस मे कुशल मगल पूछकर एकान्त मे लगभग दो घडी तक विचार विमर्श किया। सम्भवत फौज खर्च[1] भुगतान की शर्त पर निश्चित सहमति के बाद उभय सरदार अपने अपने शिविरो मे लौट गये।[2] इसके बाद सूरजमल आखेट करता हुआ नौंहभील शिविर मे लौट आया।

प्रारम्भ म सूरजमल ने अपने बख्शी की कमान मे जाट, राजपूत, गुर्जर, अहीर तथा मेवो की एक फौज चन्दौस (अलीगढ़ के उ० प० म ३२ किमी०) की ओर भेज दी थी। नवाब भी अपने दो सहस्त्र सवारो के साथ कोइल से २६ किमी० आगे आ गया। उधर बहादुरसिंह बडगूजर (घासेड़ा) अपनी एक सहस्र फौज के साथ असद खा के पक्ष मे आकर शामिल हो गया था। फलत. फतेहअली न कुवर सूरजमल से स्वय उपस्थित होकर युद्ध-सचालन का आग्रह किया। इससे वह चार तवेला (एक हजार सवार) फौज के साथ ईखू पहुँच गया।[3]

२ नवम्बर, १७४५ के अन्त मे असद खा तोपखाना पक्ति के साथ २४ किमी० आगे बढ़ा और चन्दौस के समीप शाही सेनानायको से क्रमश ६ १० १३ किमी० की दूरी पर फतेहअली, राव बहादुरसिंह तथा सूरजमल ने अपना पडाव डाला। प्रारम्भ मे फतेहअली न असद खा से वार्ता द्वारा मामलत तय करने का प्रयास किया। किन्तु उसने प्रस्तावों को ठुकरा कर युद्ध की धमकी दी। असद खा के सलाहकारो न समीपवर्ती जमींदारो को भी बुलाने तथा शाही तोपखाना आने पर युद्ध करने की सलाह दी। लेकिन उसका विचार था कि यदि युद्ध को दो-चार दिन के लिए टाल दिया गया तो जाट सैनिक उसकी छावनी

---

१ – सरकार (मुगल), भाग २, पृ० २९३।

२ – सूदन, पृ० ६–१३, बलदेवसिंह, पृ० ३८, वा० राज०, खण्ड २, पृ० ४६।

३ – उपरोक्त, पृ० १३–१४, बलदेवसिंह, पृ० ३६।

का घेरा डालकर रसद व्यवस्था को भग कर देंगे और उन्हे बलात् समर्पण करना पडेगा। इसी भय से उसने अगले दिन ही युद्ध करने का निश्चय किया और पौ फटते ही स्वय हाथी पर सवार होकर रणक्षेत्र मे आकर जम गया। इधर फतेहअली भी अपने दो सहस्र सवारो के साथ युद्ध-भूमि मे आ गया था।

सूरजमल ने रणक्षेत्र मे एक सहस्र सवारो के साथ गोकुल राम गौर (गौड ?) को अनी (हरावल=अग्रभाग) मे, सात सौ सवारो के साथ प्रतापसिंह कछवाहा को अनी के दाई ओर और पाच सौ सवारो के साथ बृजसिंह को बाई ओर तैनात किया। रामचन्द तवर, ठाकुरदास सेंगर, फतेहसिंह, समरसिंह चन्देल तथा मेदसिंह चौहान को क्रमश एक-एक सौ सवारो के साथ सैन्य मुख (सामने) में और गजसिंह, स्योसिंह विप्र उदयभानु तथा हरनारायण को अपने सन्मुख पक्ति मे तैनात किया अन्य सेनानायको को शेष सैनिको के साथ चन्दौल (पृष्ठ भाग) म रसद, सैन्य सामग्री तथा डेरों की सुरक्षा के लिए छोड दिया और स्वय हाथी पर सवार होकर गोल (मध्य भाग) मे युद्ध सचालन के लिए जम गया था। प्रात. दस बजे युद्ध शुरू हो गया। जाट हरावल ने शत्रु पर भीषण प्रहार किया। उभय पक्ष के बहुत से सैनिक खेत रहे या घायल हो गये। यह देखकर असद खा ने तीव्र आक्रमण किया, जिससे जाट व फतेहअली की अनी के पैर उखड गये। फतेहअली घबडाकर हाथी से उतर पडा और उसने घोडे पर सवार होकर अपने सैनिकों को उत्साहित किया। सूरजमल ने भी गजसिंह को हरावल की सहायता के लिए भेजा। जाट सैनिको ने अपने करारे हाथ दिखलाये। क्रोधित होकर असद खा आगे बढा, किन्तु उसके तुफग की गोली लगी और वह निष्प्राण होकर औहदा म गिर पडा। फिर केवल बीस मिनट युद्ध चला और शाही सेना मैदान से भाग निकली। जाट सवारों ने पराजितों का तेरह किमी० तक पीछा किया और असद खा के हाथी, घोडा, तुफग, रहकला तथा रसद आदि पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार इस युद्ध मे नवाब को जाटो की वीरता व साहस से विजय मिली।[१] इस विजय से मध्य दोआब मे जाटों की विजय-गाथा गाई गई और ब्रज का पूर्वी सीमान्त प्रदेश अनेक वर्षों तक शाही अधिकारियों क हस्तक्षेप से मुक्त रहा।

१३ – उत्तराधिकार युद्ध मे सवाई ईश्वरीसिंह की सहायता, १७४३–४८ ई०

जयसिंह की मृत्यु के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र ईश्वरीसिंह कछवाहा राज्य के सामन्तों के सहयोग स गद्दी पर आरूढ हुआ। इस समय जाट राज्य मे कुवर जवाहरसिंह के विवाह की तैयारिया चल रही थीं। इससे राव बदनसिंह ने अपने

---

१ – सूदन, पृ० १५–२६, बलदेवसिंह, पृ० ४१–३।

पुत्र प्रतापसिंह तथा वकील हेमराज भटारा को राजतिलक का साज, एक हाथी व जवाहरात आदि के साथ प्रतिनिधित्व करने भेजा। १८–१६ नवम्बर, १७४३ ई० को उनके लिए विदाई का सिरोपाव प्रदान किया गया।[1] मौका देखकर महाराव दुर्जनसाल (कोटा) ने नाहरमगरा में महाराणा जगतसिंह से भेंट की और माधोसिंह तथा उम्मेदसिंह को क्रमश: जयपुर–बूंदी राज्य की गद्दी पर आरूढ़ कराने का प्रस्ताव रखा। तब नाहरमगरा से चलकर दिसम्बर, १७४३ ई० के अन्त में महाराणा जगतसिंह ने ससैन्य बनास नदी के किनारे जामोली नामक स्थान पर पड़ाव डाला। इधर ईश्वरी सिंह ने भी हेमराज बख्शी की कमान में कछवाहा सेनायें रवाना कीं और स्वयं ने पढेर में पड़ाव डाला। राव दलेलसिंह (बूंदी) तथा कुंवर सूरजमल जाट भी उसकी सहायता के लिए पढेर पहुँच गये थे। चालीस दिन तक दोनों ओर की सेनायें मैदान में जमी रहीं। अन्त में ईश्वरीसिंह ने कुशल मंत्री राजा अयामल खत्री के माध्यम से जामोली में अपने भाई माधोसिंह को पांच लाख रुपया जमा का परगना टोंक का पट्टा जागीर में प्रदान करने की शर्त पर समझौता कर लिया।[2] इसके बाद ईश्वरीसिंह ने अप्रेल १०, १७४४ (वैशाख वदि १४, स० १८००) को सूरजमल को बारह सिरोपाव तथा उसके साथ ही ठाकुर फौदाराम के पुत्र दौलतराम, धीरजसिंह पृथ्वीसिंह तथा रणसिंह सिकरवार, हयातसिंह आदि को भी सिरोपाव देकर विदा किया।[3]

बून्दी के लिए संघर्ष

जामोली युद्ध के बाद ईश्वरीसिंह जब दिल्ली दरबार में पहुँचा, तब महाराव दुर्जनसाल ने जुलाई २०, १७४४ को बूंदी पर आक्रमण करके अधिकार कर लिया। फलतः सम्राट से शीघ्र लेकर ईश्वरीसिंह को दिल्ली से प्रस्थान करना पड़ा और जाट सीमान्त प्रदेश में ७ नवम्बर को कुंवर सूरजमल ने उसकी अगवानी की। यहां से दोनों होडल पहुँचे, जहां १६ नवम्बर को ईश्वरीसिंह ने बूंदी राज्य पर अधिकार करने का शाही फरमान स्वीकार किया।[4] फलतः सूरजमल को अपनी टुकड़ियों के साथ जयपुर की ओर प्रस्थान करना पड़ा।

महाराणा जगतसिंह ने रावत कुबेरसिंह तथा काका बख्तसिंह को मराठों की

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४२२, ४६६, ईश्वर विलास, सर्ग १०, श्लोक ३२-३।

२ – जामोली समझौता, वंश भास्कर, पृ० ३३२४, ३३३७–८, ओझा, भाग ३, पृ० ६४४, वीर विनोद, पृ० १२३२-३; ईश्वरसिंह, पृ० ३१–४०; द० कौ०, जि० २४, पृ० ६६।

३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५४८, ३६६, ५८६।

४ – वंश भास्कर, पृ० ३३५४–६१; ईश्वरसिंह, पृ० ४१–४२; द० कौ०, जि० ७, पृ० ५४६; जि० १८, पृ० २७७।

सहायता प्राप्त करने के लिए रवाना कर दिया था। बख्तसिंह ने ग्वालियर में जयप्पाजी सिंधिया से पगडी बदल कर बीस लाख रूपया भुगतान की शर्त पर सहायता प्राप्त करने की संधि की। किन्तु राजा अयामल खत्री के प्रयास से मल्हार राव होल्कर के अतिरिक्त अन्य सभी मराठा सरदार ईश्वरीसिंह की सहायता के लिए तैयार हो गये। मराठो ने कूंच करके कोटा पर गोलाबारी की और वहां भारी लूटमार की। इसी बीच मे मेवाडी सेना ने टोडा का घेरा डालकर मल्हार की प्रतीक्षा की। २४ दिसम्बर को राणोजी सिंधिया, मल्हार राव, रामचन्द पंडित व जसवन्त राय पंवार ने ईश्वरीसिंह से वणयली (टोडा रायसिंह) मे मुलाकात की। इसी समय कछवाहों ने मेवाडी सेना पर आक्रमण कर दिया था। मेवाड़ी सेना के पराजित होने पर महाराणा ने बाईस लाख रुपया देकर मराठो से पिण्ड छुडाया। ईश्वरीसिंह ने मराठा व जाटो के साथ बूंदी पर अधिकार कर लिया। फिर मराठों ने कोटा पर आक्रमण किया और दो माह तक भारी गोलाबारी की गई। मराठो को कापरसी का किला, पाच गांव व पाटन का पट्टा देकर महाराव को समझौता करना पडा। २७ फरवरी को कोटा छावनी में ईश्वरीसिंह ने सूरजमल तथा अन्य सेनानायको –रूपराम कटारा, प्रतापसिंह चौहान, जैतसिंह, छोत्रसिंह, वकील मोहनसिंह भूर्यद्विज, विजयराम, सूरतराम कटारिया को बिदाई दी। १६ मई को मराठा सरदारो को विदा करके २६ मार्च को ईश्वरीसिंह जयपुर लौट आया।[1]

जाटों के साथ प्रगाढ मित्रता

सवाई जयसिंह की कुटिल नीति तथा अन्य राजपूतों के साथ आपसी संघर्ष के कारण ईश्वरीसिंह को जाटों की सैनिक व कूटनयिक सहायता पर निर्भर रहना पड़ा। जाटों की एकाग्र भावना से ही वह वास्तव मे अपने राज्य को मेवाड़ी–हाडौती सेनाओ के आक्रमणों से बचा सका। जाटों ने अटूट मित्रता निभाई और परम्परागत अक्तूबर ७, १७४५ (आश्विन सुदि १३) को कुंवर जवाहरसिंह दशहरा का मुजरा करने पहुँचा। १० अक्तूबर को बिदाई मे एक जडाऊ पहोंची तथा सिरोपाव प्रदान किया गया। बन्दौस युद्ध के बाद सूरजमल जाट वकीलो के साथ जयपुर पहुँचा और उसने वदनपुरा मे पडाव डाला। तब मार्च २, १७४६ को सवाई ईश्वरीसिंह स्वयं उसके डेरों पर मिलने आया। दो घडी तक वहां रुका। सूरजमल ने उसको सात मोहर, एक जोड़ी जड़ाऊ कड़े, दो जडाऊ सरपेच व जड़ाऊ कलगी, चार तोरा नजर किये और ईश्वरीसिंह ने उसको सिरोपाव भेंट किये। ३ मार्च को

---

१ – इकरार नामा (क० द्वारा), सं० ७४७ सी/१११३; द०को०, जि० १०, पृ० १२६६–१३०० जि० ७, पृ० ५४६; ४६१, ५५७, ३५६, ५६०, ४७३, ५६२; जि० २४, प० ७०; वीर विनोद, पृ० १२३३; [illegible] ३३७४–८४।

सूरजमल के साथ ठाकुर विजयराम (डहरा), वकील मोहनसिंह सूर्यद्विज, हेमराज व रूपराम कटारा को सिरोपाव और ५ मार्च को कछवाहा दरबार की ओर से हेमराज कटारा को वामां की जमा से एक हजार रुपया वार्षिक पुण्यर्थ जागीर की सनद प्रदान की गई। फिर अप्रेल, १७४६ मे सूरजमल ने अपने मुंशी करीमुल्ला के साथ ईश्वरीसिंह को भेंट करने के लिए एक हाथी भेजा। २६ सितम्बर को जवाहरसिंह दशहरा का मुजरा करने गया।[1] इस प्रकार नित्यशः प्रगाढ़ मित्रता की धारा बहने लगी।

राजमहल युद्ध, फरवरी-मई १७४७

अक्तूबर १४, १७४६ ई० को महाराणा जगतसिंह व महाराव दुर्जनसाल ने होल्कर की सहायता प्राप्त करने के लिए खुमानसिंह व प्रेमसिंह गोगावत को कालपी भेजा। दो लाख रुपया फौज खर्च के भुगतान की शर्त पर मल्हार ने अपने पुत्र खाण्डेराव को माधोसिंह की सहायता के लिए रवाना किया। महाराणा जगतसिंह, मराठा तथा भोपतराम चारण (कोटा) ससैन्य राजमहल पहुँच गये। इसी समय दिल्ली तथा कछवाहो के समझौता प्रयासो की विफलता के बाद ईश्वरीसिंह ने राजमहल की ओर हरगोविन्द नाटाणी की कमान में अग्र दस्ते रवाना किये और फरवरी २६, १७४७ ई० को हेमराज कटारा को सूरजमल के पास भेजा। रूपराम कटारा कुछ जाट टुकड़ियों के साथ जयपुर मे मौजूद था, उसको भी नाटाणी के साथ जाना पड़ा। ११ मार्च को नाटाणी ने मित्र-सेना पर आक्रमण किया और १२ मार्च को मित्र सेनाओ ने पराजय स्वीकार करके मैदान छोड़ दिया। १५ मार्च को जाट वकील रूपराम कटारा को बालाबाला का डेरा व सिरोपाव देकर सम्मानित किया गया। फिर पीछे से सूरजमल भी ससैन्य ईश्वरीसिंह की सहायता के लिए पहुँच गया था। फलत. भयभीत महाराणा को समझौता करना पड़ा। इससे महाराव कोटा को भारी धक्का लगा, किन्तु ईश्वरीसिंह ने जाटों के साथ उसका पीछा किया। इस प्रकार जाट-कछवाहों की एकरूपता को देखकर सभी मित्र सेनायें बिखर गई।[2] फिर जब कुंवर सूरजमल निवाई मे डेरा डाले पड़ा था, तब १२ मई को ईश्वरीसिंह घोड़े पर सवार होकर उसके डेरो पर आया और उसने

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३७६, ४६७, ४५६, ४५७, ५४६, ४७३, ५६०, ४६१, ४६७।

२ – द० कौ, जि० ७, पृ० ४६७, ४६२, पे० द०, जि० २१, लेख १७, २४; जि० २, लेख ३-४, वंश भास्कर, पृ० ३४६०-३४६८, वीर विनोद पृ० १२३६।

सूरजमल के लिए दो हाथी, दो घोडा, जडाऊ सरपेच, एक जोडी जडाऊ पहोंची, तोरा तथा दस सिरोपाव भेंट किये।[1] दूसरे दिन वीरनारायण व उम्मेदसिंह, मसालत खां मेवाती, हेमराज कटारा, पृथ्वीसिंह, तुलाराम, चैनसिंह, मानसिंह चौहान कवर रामचन्द तवर, शेरसिंह, हरबल्लभसिंह, हरिसिंह व सीसराम खूटेल, जैतसिंह आदि को विदाई दी गई। सवाई ईश्वरीसिंह के राजधानी मे लौटने पर २६ मई को जाट वकील हेमराज कटारा ने दरबार मे उपस्थित होकर निवेदन किया कि अब राव बदनसिंह को निजी पत्रों में 'बहादुर' का खिताब लिखा जावे।[1]

मानूपुर युद्ध मे ईश्वरीसिंह की कायरता

१७४७ ई० का सम्पूर्ण वर्ष हिन्दुस्तान मे अराजकता, भारी फेरबदल व राजनैतिक संघर्षों का था। अच्छी वर्षा के अभाव मे सर्वत्र दुर्भिक्ष फैल रहा था। इससे रैय्यत मे भारी तबाही तथा बेचैनी फैल रही थी।[2] राजस्थान के सभी शासक कछवाहा उत्तराधिकार युद्ध मे बुरी तरह फस रहे थे। इसी समय ईरान मे अहमद शाह दुर्रानी (अब्दाली) ने जून मे सत्ता का अपहरण कर लिया था। फिर उसने पश्चिमोत्तर प्रान्तों पर अपना स्वत्व प्रस्तुत करके हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने की धमकी दी थी। फलत वृद्ध सम्राट मुहम्मद शाह ने छत्रपति राजा शाहू, राजपूत शासकों, जाटों व पंजाब के जमीदारों को दुर्रानी की चुनौती का सामना करने के लिए आमंत्रित किया। फरमान मिलते ही नारायण दास खत्री, राव दलेलसिंह हाडा तथा उसके भाई प्रतापसिंह सहित ईश्वरीसिंह ने ससैन्य दिल्ली की ओर कूच किया और वह कई सप्ताह मथुरा मे रुका। २६ दिसम्बर को जाट वकील बदनसिंह ने उससे भेंट की और फिर ३० दिसम्बर (पौष वदि ३०) के दिन उसने राव बदनसिंह, जैतसिंह, सूरजमल, मंत्री गजसिंह चौहान, कुंवर जवाहरसिंह से मुलाकात की। मार्ग मे जनवरी ३, १७४८ को बल्लू चौधरी ने भेंट की। दूसरे दिन (४ जनवरी/पौष सुदि ५) ईश्वरीसिंह दिल्ली दरबार में उपस्थित हो गया।[3]

जयपुर राज्य पर आक्रमण की सूचना मिलने पर ईश्वरीसिंह मानूपुर रणक्षेत्र (११ मार्च १७४८ ई०) से अपने खास खवास के परामर्श को मानकर युद्ध

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५५०, ५६२, ४७४, ४६८, ४२१, ३९१, ५८८, ६०८, ६११, ५३३, ३५६, ३१८, ४४७।

२ – पे० द०, जि० २, लेख ४, जि० २१, लेख १६; मोराते, जि० २, पृ० ३६४; वंश भास्कर, पृ० ३४४६, ३४७२।

३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४४८, ३५६, ५५२, ५८८, ३७७, ४३२, जि० २४, पृ० ७०।

मे बायें पार्श्व का सचालन करते समय अचानक ही भाग निकला। उसके भागते ही कछवाहा पेशखीमा व ऊँट लूट लिये गये। १७ मार्च को मार्ग मे पटियाला राज्य के भावी सस्थापक अलासिंह जाट से खने की सराय मे भेंट की और जाट सिखो के सरक्षण मे वह सीमाएं तक पहुँच गया। [१] इस प्रकार भारी बरबादी तथा बदनामी के साथ उसने अपनी राजधानी मे प्रवेश किया। बालाजी राव पेशवा के दिल्ली पहुँचने से पूर्व ही दुर्रानी पराजित होकर अपने देश को वापिस लौट गया था। इससे पेशवा ने मई मे निवाई मे ईश्वरीसिंह से भेंट की। तत्क्षण रुपराम कटारा तथा अन्य सरदारो के साथ कुवर जवाहरसिंह जयपुर पहुँचा और रुपराम कटारा की मध्यस्थता से ईश्वरीसिंह ने माधोसिंह को टोक, टोडा, मालपुरा और परगना निवाई में बरवाडा देने का वचन देकर पेशवा को सन्तुष्ट किया। दोनो भाईयो, के बीच में होल्कर को प्रतिभू नियुक्त किया गया। [२] इस प्रकार निवाई समझौता तथा पेशवा के प्रस्थान के बाद ११ मई को जवाहरसिंह के लिए एक जडाऊ धुगधुगी सिरोपाव और फौजदार देवकरण, रुपराम कटारा, शेख महमदपनाह, सूरतराम गौड वीरनारायण, सुखराम को विदाई दी गई। [३]

आपत्काल मे जाटो की निर्णयात्मक भूमिका, १७४८ ई०

पेशवा की पीठ मुडते ही ईश्वरीसिंह ने सूरजमल के परामर्श पर निवाई समझौता को ठुकरा दिया था। इससे समझौता के क्रियान्वयन के लिए माधोसिंह, राव उम्मेदसिंह, महाराव दुर्जनसाल सहित होल्कर तथा उसके दीवान गगाधर तात्या ने गलवा नदी पार करके उणियारा के समीप जयपुर राज्य म प्रवेश किया और उन्होने चारों परगनो पर अधिकार कर लिया। कछवाहा राज्य के अनेक जागीरदार उनकी सेवा मे चले गये। लडाना से महाराव चार हजार सेना के साथ आ गया था। इस समय उसके साथ राजपूताना के अन्य पाच राज्यों के सरदार व सेना भी आ गई थी। माधोसिंह ने फिर मराठा छावनी में बैठकर कछवाहा सामन्तों को तोडने का भी प्रयास किया। [४] इस महान् आपात्काल में ईश्वरीसिंह ने राव बदन–

---

१ – ता० अ०, पृ० ७ ब, पे० द०, जि० २, लेख ३०, २७/३०, सियार ३/१६, आनन्दराम, पृ० ३४३–७७; द० कौ०, जि० ७, पृ० ३१३, जि० २३, पृ० १८०४।

२ – पे० द०, जि० २७, लेख ३०, सरदेसाई, पृ० ३०६, सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० १५८, राजवाडे, जि० ७, लेख १६०–१६१; हिगणे, खण्ड १, लेख ३० (५ जून, १७४८ ई०)।

३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३७७, ३६५, ४६२, ४६४, ४७५, ५३४।

४ – ईश्वरसिंह, पृ० ६५–६६, नरेन्द्रसिंह, पृ० १३६; सरकार (मुगल), जि० १, पृ० १५८; मथुरालाल (जयपुर) पृ० १६८-६।

सिंह के पास अपने दूत के हाथों तात्कालिक सहायता के लिए पत्र व पुष्प भेज कर सहायता भेजने की प्रार्थना की। बदनसिंह ने शीघ्र ही युवराज सूरजमल को जयपुर पहुँचने का आदेश दिया। फलतः आठ सहस्र सवार, दो सहस्र वह्निधारी व पैदल सैनिकों की एक सेना के साथ शुभ-मुहूर्त मे सूरजमल ने कुम्हेर से कूच किया। वह स्वयं मंगल गज पर सवार था। भारी युद्ध के साज-सामान के साथ जाट सेना ने तीन दिन में १७० किमी० का मार्ग तय किया। जयपुर में सर्व प्रथम दीवान (प्रधान मंत्री) केशवदास ने सूरजमल का आगे आकर स्वागत किया। फिर स्वयं ईश्वरीसिंह जाट छावनी में पहुँचा, जहां उसका भारी स्वागत किया गया।[१] जुलाई ३, १७४८ ई० को सहजराम के हाथों जाट छावनी में इत्र केवड़ा तथा गुलाब-जल भेजा गया। फिर ६ जुलाई को दरबार में युवराज पदवी की ताजीम दी गई।[२] आपसी विचार-विमर्श के बाद सूरजमल को अग्र दलों की व्यवस्था सौंपी गई।

मोती डूंगरी पर जाट मराठों की मुठभेड़, जुलाई १७४८ ई०

इस समय मराठो की प्रधान छावनी मोती डूंगरी पर थी, जहां से दीवान गंगाधर तातिया (चन्द्रचूड़) की कमान मे आठ सहस्र मराठा सवारों ने जयपुर नगर के चादपोल फाटक को तोड़कर नगर मे प्रवेश करने का प्रयास किया। किन्तु राव शिवसिंह (सीकर) के साथ हुई दो घड़ी की झड़प के बाद गंगाधर को अपनी प्रधान छावनी की ओर पीछे हटना पड़ा।[३] 'सुजान चरित' के अनुसार इधर युवराज सूरजमल ने मराठा छावनी पर धावा बोल दिया था। शम्भूराम, सुखराम, सहजराम तथा गोकुलराम गौड़ आदि सेनानायको ने अग्र पंक्ति मे बढ़कर मराठों पर भीषण प्रहार किये। लगभग एक घण्टा तक मुठभेड़ हुई, जिसमे लगभग एक सौ मराठा व राजपूत काम आये। राजपूत-मराठो मे मची भगदड़ से छावनी पूर्णतः साफ हो गई। अब मराठा मित्र सेनायें पीछे हटकर बगरू (जयपुर के द०प० मे २६ किमी०) के समीप पहुंच गई थीं। ईश्वरीसिंह ने भी निजी राजपूत तथा जाट सेनाओ के साथ उनका पीछा किया और वह भी बगरू के महलो में पहुँच गया था।[४]

बगरू के निर्णायक युद्ध[५] में जाटों की यशस्वी सफलता, अगस्त १७४८ ई०

बगरू में उभय पक्ष कई दिन तक बिना छेड़छाड़ के अपने शिविरों मे पड़ा रहा। कछवाहा राज्य के सामन्तों पर विश्वास नहीं किया जा सकता था। इससे

---

१ – सूदन, पृ० २८–३२।
२ – द० को०, जि० ७, पृ० ५५४, ५५२।
३ – वंश भास्कर, पृ० ३४६५; नरेन्द्रसिंह, पृ० १३७।
४ – सूदन, पृ० ३३–३६।
५ – वंश भास्कर, पृ० ३४६३–३५२५; सूदन, पृ० ३८–४०; राजवाड़े, खण्ड ६,

ईश्वरीसिंह ने रण-कुशल सूरजमल से रणनीति पर विचार करके एक योद्धा राजपूत की भांति युद्ध संचालन का निर्णय लिया। ११ अगस्त (भादों वदि ४) को उभय पक्षीय सेनायें निर्णायक युद्ध के लिए रणभूमि में आकर जम गईं। राव शिवसिंह (सीकर) को हरावल (अनी) में, सूरजमल तथा राव सरदारसिंह नरूका (उणियारा) को ससैन्य बाईं-दाईं ओर तैनात किया गया और गोल (मध्य भाग) में स्वयं ईश्वरीसिंह ने हाथी पर सवार होकर युद्ध का संचालन किया। शत्रु पक्ष में मल्हार राव ने स्वयं गंगाधर सहित हरावल की कमान संभाली। मेवाडी सेना के साथ माधोसिंह, रावराजा उम्मेदसिंह तथा जोधपुरी सेनायें दोनों बाजुओं पर खडी थी। इस प्रकार सुसज्जित सेनाओं ने भयंकर, धुंआधार तोप युद्ध प्रारम्भ किया। इसने भारी भगदड मचा दी थी। फिर दोनों ओर के सैनिकों में युद्ध शुरू हो गया था। इसी बीच में अत्यधिक जल वृष्टि प्रारम्भ हो गई और सूर्यास्त के साथ दोनों सेनायें अपनी-अपनी छावनियों में लौट गईं। योद्धाओं के लिए यह रात्रि अति कष्टप्रद थी। मल्हार राव तथा माधोसिंह ने एक किसान की झोपडी में शरण लेकर रात्रि बिताई।

दूसरे दिन (१२ अगस्त) सूर्योदय होते ही भयंकर आक्रमण-प्रत्याक्रमण हुआ, परन्तु यह सारा दिन जयपुर पक्ष के लिए अधिक लाभप्रद नहीं हो सका। इस दिन शत्रु ने अपनी व्यूह रचना बदल दी थी। पूर्वाह्न में मित्र वाहिनी का भीषण सहार हुआ। अपराह्न में गंगाधर व होल्कर ने रावराजा शिवसिंह पर भीषण हमला किया। उसने अनुपम साहस से सामना किया। पृष्ठ भाग में सूरजमल तैनात था। इससे शत्रु का दबाव शिवसिंह पर था। इस बार शत्रु के पचास सैनिक खेत रहे और तीन सौ घायल हो गये।

तीसरे दिन (१३ अगस्त) सूरजमल ने हरावल की कमान संभाल ली थी। गगन मेघाच्छादित था और नन्ही नन्हीं बूंदों से मरूभूमि की धूलि दब रही थी। ये बूंदें वीरों के साहस व उत्साह को शीतल नहीं कर सकी। इस दिन निर्णायक भयंकर युद्ध छिड़ा। मल्हार ने अपने दीवान की कमान में एक विशाल दल कछवाहा चन्दौल पर आक्रमण करने, वहां लूटमार तथा उत्पात मचाने के लिए रवाना किया और मुख भाग में स्वयं ने आक्रमण कर दिया। मराठों का यह अति वेगपूर्ण आकस्मिक अप्रत्याशित आक्रमण था। इससे चन्दौल में भारी भगदड मच गई थी। राव सरदारसिंह (उणियारा) घबडाकर तोपखाना चौकी से भी आगे मध्य में हट गया। इससे गंगाधर ने तोप पंक्ति पर अधिकार कर लिया और तोपों की रंजकों में खूंटा ठोककर उनको बेकार कर दिया। पृष्ठ भाग की यह स्थिति देखकर

---

* लेख २६१, ६४८; पुरन्दरे, खण्ड १, लेख १८५, १६६; वीर विनोद, पृ० १२२८-६; कानूनगो, पृ० ६७-६०; सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० १५८-५६।

ईश्वरीसिंह पराजय अनुभव करने लगा था। इस निराश घड़ी में उसको आशा-बिन्दु दिखलाई दिया और सूरजमल को चन्दौल की रक्षा के लिए ललकारा गया। यद्यपि सूरजमल इस शुभ दिन हरावल का संचालन कर रहा था और जाट सवार चट्टान की भांति अड़कर मल्हार राव के वारों को निष्फल कर रहे थे, फिर भी सूरजमल ने निविश्राम अपलक अपनी गोल खास टुकड़ी के साथ पीछे मुड़कर गंगाधर के बगल में प्रत्याक्रमण किया। अर्द्ध विजेता मराठा सरदार तथा हठीले जाट दो घंटा तक जमकर युद्ध में व्यस्त रहे। सूरजमल की कृपाण की चमक, गर्वीले जाटों के कठोर प्रहार से मित्र सैनिकों की शक्ति व कीर्ति वृन्द हो गई और वे पीठ दिखाकर भाग गये। इस प्रकार जाट युवराज ने रावराजा सरदारसिंह को महान विनाश तथा विपत्ति से बचा लिया और उसको चन्दौल में पुनः तैनात करके शत्रु की अनी पर प्रबल प्रहार किया। वर्षा कुछ समय रुकने के बाद पुनः तेज हो गई थी, फिर भी युद्ध चलता रहा। आकाश में बादलों की गर्जन-तर्जन, बिजली की चमक व कड़कड़ाहट थी और मरूभूमि पर तोपें दहाड़ रही थीं। कछवाहा नरेश को निर्णायक विजय की धूमिल आशा थी। फिर भी सूरजमल ने आत्म-विश्वास, निश्छल भाव से अनी में प्रवेश किया और मदमत्त होकर अपनी तलवार की चमक से शत्रु के दांत खट्टे कर दिये। "उसने इस युद्ध में स्वयं पचास शत्रुओं को तलवार के घाट उतारा और एक सौ आठ घायल सैनिक रणभूमि में सिसकते रहे।" अन्त में सान्ध्य बेला का झांझ बज उठा और अन्धकार से पूर्व ही उभय पक्ष की क्लान्त सेनायें अपने-अपने शिविरों में लौट गईं। इस दिन सूरजमल की कमान में काठेड़ी सैनिकों ने अभूतपूर्व साहस, वीरता, अदम्य उत्साह दिखलाया और विजय घोष के साथ सैनिक कछवाहों के पीछे-पीछे रणभूमि से लौटे। इस प्रकार अपनी सूझबूझ से जाटों ने सिंह के मुख में जाती विजय बलि को छीनने में सफलता प्राप्त की।

राजकवि सूर्यमल मिश्रण ने सूरजमल की इस वीरता, साहस व रण कौशल की मुक्त लेखनी से प्रशंसा की है। उसने लिखा, "जाटनी ने व्यर्थ ही प्रसूति पीडा सहन नहीं की, जिसके गर्भ से शत्रु संहारक और आमेर राज्य का हितैषी रविमल्ल (सूरजमल) ने जन्म लिया। फिर (चन्दौल में विजय पाकर) जाट व मल्हार राव हरावल में बढ़ बढ़कर युद्ध करने लगे। होल्कर रात्रि की छाया है और सूरजमल सूर्य है। दोनों वीर रणक्षेत्र में अच्छी तरह जमकर लड़े।"[1] इसी प्रकार एक

---

१ - सह्यो भले हि जट्टनी, जाय अरिष्ट अरिष्ट।
जाठर तस रविमल्ल हुव, आमेरन को इष्ट॥
बहुरि जट्ट मल्हार सन, लरन लग्यो हरवल्ल।
आंगर है हुल्कर, जाट मिहर मल्ल प्रति मल्ल। —वंश भा०, पृ० ३५१८।

अन्य राजस्थानी कवि के शब्दो मे— "बगरू के महलों से किसी तरुणी ने गर्वोन्नत होकर पूछा कि यह व्यक्ति कौन है, जिसकी पगडी पर मोर पख का निशान है, जो घोडे की लगाम दातो में दबाकर दोनों हाथो से तलवार चला रहा है ?" नीचे खडे किसी कवि ने उत्साह के साथ कहा, "यह जाटनी के जठर (गर्भ) से उत्पन्न सूरजमल है। यह सावाणी वंश का सिरताज है। इसी ने दिल्ली को बरबाद किया और तुर्कों को बुरी तरह लूटा।" [1]

अरुणोदय के साथ ही चौथे दिन युद्ध-पिपासु सेनायें रणक्षेत्र मे आकर पुन जम गई थीं। घनघोर वर्षा के बाद भी १५ व १६ अगस्त को भी इसी प्रकार भयकर युद्ध चला, जिसमे राठेडी सेना ने जमकर तीव्र वेग से सप्त-मित्र शासको व सरदारो की मित्रवाहिनी को पीछे धकेल दिया था और भारतीय इतिहास मे एक नवीन कीर्तिमान स्थापित किया। फिर मराठो ने रसद व्यवस्था को भग करने का प्रयास किया और साभर तक कछवाहा राज्य के गावो मे भारी लूटमार की। ईश्वरीसिह ने अति कठिनाई से जाटो के सरक्षण मे बगरू महलो मे शरण ली। मल्हार का धैर्य-नाद टूट चुका था। वर्षा के कारण शिर छिपाने तथा खाना पकाने के लिए कोई भी सुरक्षित स्थान नही था। होल्कर स्वय मिल जुलकर सम्मानजनक शर्तों पर समझौता करने के लिए उत्सुक था। ईश्वरीसिह तथा मल्हार राव ने अपनी-अपनी पगडी बदलकर बन्धुत्व की भावना प्रगट की और होल्कर विचारो के तनाव को दूर कराने के लिए पदच्युत महाराव उम्मेदसिह (बूदी) के साथ दो बार कछवाहा शिविर मे गया। ईश्वरीसिह ने अपने भ्राता माधोसिह तथा मल्हार को युद्ध क्षति की रकम भुगतान का आश्वासन दिया। १६ अगस्त (भादो वदि १२) को ईश्वरीसिह युवराज सूरजमल के साथ होल्कर व उसके सरदारो से मिला और सभी ने मिल बैठकर पारस्परिक मित्रता की शपथ ली। तब २० अगस्त को मित्र-वाहिनी ने कूच किया और दूसरे दिन ईश्वरीसिह अपनी राजधानी की ओर चल दिया। २८ अगस्त [2] को कछवाहा शासक ने मराठा सरदारो के लिए पाच सिरोपाव सीरा आदि-आदि अपार सामान भेजकर विधिवत बिदाई दी।

कछवाहा नरेश ने सूरजमल की वीरता, सामयिक सहायता के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रगट की। ४ सितम्बर (भादो सुदि १३, स० १८०५) को सूरजमल के लिए युवराज पद व विदाई की छ पोशाको (आलमजरी, जामा, इजार, पैटा, तुर्रा तथा नाडा) का सिरोपाव, जड़ाऊ सरपेंच, मोतियों का बाजूबन्द हाथी तथा

---

१ – जायो जाटणी सावणी कुल सेहरो।
दिल्ली ढहाणी, तुर्कान लूट्यो नेहरो॥

२ – इ० कौ०, जि० ६, पृ० ४५०।

घोडा भेंटकर सम्मानित किया गया। पारस्परिक दृढ़ मित्रता की भावना तथा भविष्य मे सहयोग बनाये रखने की कामना की। इसी समय भीवसिंह राणा व बलजीत राणा (गोहद), अनोपसिंह, अखैसिंह, देवीसिंह, गोकुल राम गौड, धाकल (गदाल) गूजर, रूपराम व हेमराज कटारा, असालत खां पठान, मसाराम आदि छब्बीस सरदारों को भी सिरोपाव प्रदान किये गये। फिर १० अक्तूबर को सूरजमल के लिए पूर्ण साज सहित दो घोडा तथा १४ अक्तूबर को जाट वकील हेमराज कटारा के साथ सिरोपाव के १४८ अदद भेजे गये।[1]

इस प्रकार सूरजमल ने सात राजपूत नरेशो तथा मराठो को पराजित करके भारतीय इतिहास मे जाटो की स्वतन्त्र प्रतिभा व प्रतिष्ठा प्रतिपादित की। इससे राजस्थान के अलावा दिल्ली के अमीरो मे भी उसकी धाक जम गई थी।

---

१ – इ० कौ० जि० ७, पृ० ५५३, ५५४ तथा अन्य।

तय करके मराठा लश्कर ने चम्बल नदी पार की और जाट प्रान्त मे प्रवेश किया। २३ अप्रल को आगरा के समीप पार्वती नदी पर पडाव डाल कर सूरजमल से खडनी की माग की। सूरजमल ने शीघ्र ही अपने सवार रवाना करके जाट अधिकृत प्रान्त मे थाने स्थापित कर लिये। पार्वती नदी शिविर म सूरजमल के वकील ने मराठा सरदारो से भेट करके उनकी मागो पर विचार विमर्श किया, फलत दामोदर हिंगणे ने जाटों के पास पहुँचकर बातचीत कीं। बुन्देलखण्ड से नई कुमुक मिलने पर मई मे मराठा सेना ने जाट प्रदेश मे भारी बरबादी की। यद्यपि फतहपुर के निकट जाट-मराठा सैनिकों म एक झडप भी हुई, किन्तु मराठा सेनाओ के दबाव के कारण जाट सैनिको को पीछे हटना पडा। नवाब वजीर सफदरजग ने जाटो के आग्रह पर भी इसमे हस्तक्षेप करना उचित नही समझा। फलत सूरजमल न जाट मराठा सघष को टालने के लिए ही १,१० ००० रुपया की हुण्डी तत्काल देने का वचन दिया। किन्तु हिंगणे अभिलेखो से स्पष्ट है कि जाटों ने वचन देकर भी इस हुण्डी का भुगतान नही किया। [१]

२ – वजीर तथा मीरबख्शी की नैतिक पराजय जाट विरोधी अभियान का सूत्रपात

नवाब वजीर सफदरजग ने साम्राज्य के पतन, विघटन तथा अपहरण को रोकने के लिए सर्वप्रथम भारत मूल के रुहेला-अफगानो को दबाने, फिर जाट राजपूतो की सहायता से मराठो को नर्मदा के पार तक खदेडने और अन्त मे राजपूतो की मदद से नवोदित जाट-शक्ति को कुचलने की योजना बनाई थी। लेकिन द्वितीय बख्शी इंतजामुद्दौला की सरदारी में गठित तूरानी घटक ने भारतीय शक्तियो को प्रबल समर्थन देकर दरबार में वजीर की महत्वाकाक्षा व नीति को ठण्डा [२] कर दिया था। अन्त मे वजीर को जाट शक्ति पर आश्रित रहना पडा।

सफदर जग को विधिवत नियुक्ति के बाद परम्परागत वजीर की सशर्त जागीर फरीदाबाद की सनद मिल गई थी। [३] अब उसने कुंवर बहादुर सूरजमल तथा राव बलराम के नाम फरीदाबाद तथा आसपास की अन्य वजीर की सशर्त जागीरों को समर्पित करने के लिए कई-एक पत्र लिखे। किन्तु सूरजमल ने वजीर की मांग को कूटनयिक विवादो मे फसा दिया था। फलत उत्तजित वजीर ने शक्ति

---

१ -पे० द०, खण्ड २७, लेख ४३-४४, हिंगणे, जि० १, लेख ३५-३६, ३७, ४०, ४३ ६३।

२ – ता० अ० शाही, पृ० ३४ ब, शाकिर, पृ० ६३, ६५, हरिचरन, पृ० ३९९ ब अवध, पृ० १३६-७।

३ – चहार, पृ० ४४।

योग की सुनियोजित योजना बनाई।[1]

ठीक इसी समय मारवाड़ के उत्तराधिकारी रामसिंह के ईश्वरीसिंह कछवाहा यहां शरण लेने तथा अपने समर्थन में जयप्पा सिंधिया की सहायता प्राप्त करने प्रयास को देखकर जोधपुर राज्य के अपहर्ता राजा बख्तसिंह ने दिल्ली पहुँचकर र बख्शी सैय्यद सलावत खां (सम्रादल खां जुल्फिकार जंग) से सैनिक मदद की र्थना की थी। सम्राट ने मीर बख्शी (अमीर-उल-उमरा) सैय्यद सलावत खां को गरा व अजमेर प्रान्त का राज्यपाल पद प्रदान कर दिया था। इससे मीर बख्शी वयं आगरा व अजमेर प्रान्तों में निजी प्रबन्धक नियुक्त करने का इच्छुक था। उसने न प्रान्तो के बलात् अपहर्त्ताओं- जाट, मराठा, क्षेत्रीय जमींदारों, के पंजों से इन न्तों को छुडवाने मे शाही सेना की मदद करने की शर्त पर रामसिंह के विरुद्ध राजा बख्तसिंह को सहायता देना स्वीकार कर लिया था।[2] इसी समय सफदरजंग था मीर बख्शी में जाटों के विरुद्ध दो भिन्न दिशाओं तथा मार्गों से एक ही समय दोनों के प्रस्थान करने का अति गोपनीय समझौता[3] हो चुका था। यद्यपि सलावत खां अपने अभियान में पूर्णतः विफल रहा, लेकिन सफदर जंग ने आगे बढ़कर नवम्बर, १७४९ ई० में फरीदाबाद पर अधिकार जमा लिया और वहां अपने आमिलों की नियुक्ति कर दी थी। फिर उसने अन्य शाही परगनों को खाली करके सुपुर्द करने की धमकियां दी। किन्तु सूरजमल स्वयं अति बलशाली व निपुण सरदार था। इससे उभय पक्ष दीर्घ संघर्ष की तैयारियां करने लगे। सूरजमल ने शीघ्र ही डीग, कुम्हेर के किलों में सुरक्षात्मक प्रबन्ध कर लिये और चौधरी बलराम की सहायता के लिए जाट रिसाले (प्रत्येक रिसाला में शामिल १२० से २०० तक सवार) पलवल भेजे। भाग्य ने सूरजमल का साथ दिया। इसी समय कायम खां बंगश की मृत्यु (नवम्बर २२, १७४९ ई०) का समाचार मिलते ही वजीर ने दिल्ली लौट कर जाटो से उलझने की अपेक्षा फर्रुखाबाद पर अधिकार करने की योजना पर अधिक बल दिया।[4] फलतः वजीर तथा मीर बख्शी के बीच सम्पन्न समझौता स्वतः अप्रभावी हो गया और सूरजमल ने अति निपुणता से मीर बख्शी को पराजित कर दिया।

---

१ – ता० अ० शाही, पृ० २८ ब; इ० डा० (बहार), खण्ड ८, पृ० २१२-३, कानूनगो, पृ० ७६।

२ – दे० फ्रॉनी, पृ० ३८; ता० मुज० पृ० २८; सियार, खण्ड ३, पृ० ३११; रेऊ, खण्ड १, पृ० ३६१।

३ – ता० अ० शाही, पृ० २८ ब।

४ – ता० अ० शाही, पृ० २८ अ-ब; इ० डा० (बहार), खण्ड ८, पृ० २१२-३; दे० फ्रॉनी, पृ० ४२; मथुरा, पृ० १४७; कानूनगो, पृ० ७६।

३ – सलावत खां की पराजय, नवम्बर–जनवरी १७५०, ई०

वजीर सफदरजंग ने जिस समय फरीदाबाद की ओर अपनी सैनिक टुकड़ियां रवाना कीं, ठीक उसी समय नवम्बर २६, १७४६ को मीर बख्शी सलावत खां ने अली रुस्तम खां, हकीम खां खेशगी, कोइल के नवाब फतेहअली, अहमद शुजा खां, सैय्यद अब्दुल अली खां, मीर अली असगर कुवरा, मुबारिज खा आदि विख्यात तथा सद्चरित्र सेनानायकों की कमान में पन्द्रह सहस्र सवार व तोपखाना सहित के साथ दिल्ली से दक्षिण–पश्चिम की ओर प्रस्थान किया। मीर बख्शी ने मुहर्रम के प्रथम दस दिन (१० दिसम्बर–१६ दिसम्बर) दिल्ली के दक्षिण–पश्चिम में ५६ किमी० पटौडी (पटोदी) मे व्यतीत किये। [१] मार्ग मे अनेक मीर तथा राव भी अपने सैनिकों सहित आकर मिल गये। इस प्रकार लगभग तीस सहस्र सवार व असंख्य पैदलों की एक विशाल सेना के साथ उसने मेवात मे होकर जाटों की सीमान्त चौकी की ओर प्रस्थान किया। अहमदशाह ने मीर बख्शी को मेवात का फौजदार भी नियुक्त कर दिया था। अतः उसने मेवात को बुरी तरह लूटकर उजाड दिया। [२]

जाट इतिहास मे यह प्रथम अवसर था, जबकि वजीर तथा मीर बख्शी दोनों ने मिलकर दो भिन्न दिशाओं से जाट राज्य पर आक्रमण किया। सूरजमल ने अपनी सूझबूझ, निर्भीकता, निडरता तथा निपुणता से जाट राज्य की रक्षा तथा दीर्घ-संघर्ष की सैनिक तैयारियां करली थी। गोहद का जाट राणा भीमसिंह स्वय दो सो सवारो के एक रिसाला के साथ सूरजमल की सहायता के लिए डीग पहुँच गया था। [३] सूरजमल ने शीघ्र ही अपने दाऊजी–राव वदनसिंह से परामर्श करके अपनी चतुरंगी (हाथी, घोडा, ऊंट तथा पैदल) सेना के साथ कूच किया और नीमराना (डीग के उत्तर–पश्चिम मे ५० किमी०, नीमराना के द० पू० मे ६४ किमी०) मे अपना प्रथम पडाव डाला। [४] यहा से उसने अपने वकील राजा मोहनसिंह सूर्यद्विज को मीर बख्शी से समझौता वार्ता करने भेजा।

"सुजान चरित" के अनुसार जाट वकील ने नवाब सलावत खां को बाअदब (शिष्टाचार) सलाम (नमस्कार) करके विनम्र शब्दों मे निवेदन किया— "कुंवर बहादुर (सूरजमल) ने आपको अपना सलाम भेजकर कहलवाया है कि हमको शाही चाकरी (सेवा) करते हुए यह देश मिला है। हमने अभी तक कोई अपराध भी नही किया है। यह शाही प्रदेश (इलाका) है। फिर आप इसको उजाड कर

---

१ – ता० मुज०, पृ० २६, दे० फॉनी०, सियार, ड ३, पृ० ३१२।
२ – सूदन, पृ० ४४।
३ – पे० द०, जि०, २१, लेख २१; सूदन, पृ० ४६।
४ – सूदन, पृ० ४३, बलदेवसिंह, पृ० ४६, वाक्या राज०, भाग २, पृ० ५२।

क्यों बरबाद करना चाहते हैं। सम्राट ने आपको जो भी आदेश दिया है, हम उसी के अनुसार आपकी चाकरी (सेवा) करने को तैयार हैं।" विशाल सैन्य-बल के घमण्ड मे चूर सलावत खा ने जाट वकील राजा मोहनसिंह सूर्यद्विज से स्पष्ट शब्दों में कहा— "मेवात उसकी जागीर (फौजदारी) का भाग है, जिसके अनेक परगने तथा देहातो पर जाटो ने जबरन अधिकार कर लिया है। आगरा, ग्वालियर, बयाना, हिण्डौन, होडल, पलवल, अलवर तथा मथुरा पार तक के सभी इलाके मेरी सूबेदारी (राज्यपाली) में शामिल हैं। अधिकाश परगनों पर जाटो ने अवैधानिक अधिकार कर लिया है। जाट इन परगनो को मेरे अधिकार में सौंप दें तथा दो करोड रुपया नजराना देकर मेरे साथ चाकरी मे शामिल हो जावें।" उसने आगे कहा— "वृद्ध असद खां अफगान (खानजादा) को मारकर उसने साम्राज्य के साथ महान भूल तथा अपराध किया है। इससे सूरजमल को विशेष घमण्ड हो गया है।"

सम्भवत मीर बख्शी ने जाटो को निर्बल समझा था और उसने सैनिक बल से आगरा प्रान्त तथा जाट प्रदेश पर अधिकार करने की निश्चित धारणा बना ली थी। जाट वकील ने मीर बख्शी की दर्पोक्ति का उत्तर देते हुए कहा— "सूरजमल साम्राज्य का पुश्तैनी चाकर (वंशानुगत सेवक) है, जिसको शाही दरबार से दिल्ली-आगरा के मध्यवर्ती परगनो की सुरक्षा-व्यवस्था का भार (राहदारी) सौंपा गया है। वह इस देश का निवासी है। इससे उसकी यह आन है कि वह अपने अधिकार क्षेत्र की एक अगुल भूमि भी नही छोडेगा।" इसके बाद जाट वकील ने शीघ्र ही भेंट वार्ता का विवरण सूरजमल के पास भेजा और लिखा कि सलावत खा आपसे युद्ध करने के लिए पूर्णत तैयार है।[1]

सूरजमल ने मीरबख्शी की माग को ठुकराकर चुनिंदा छः सहस्र लड़ाकू बन्दूकची सवारों के साथ प्रात काल नौगाव (मेवात) से तीस किमी० आगे कूंच करके डेरा डाला। मीर बख्शी अभी बत्तीस किमी० दूर था। इससे दूसरे दिन उसने सोलह किमी० आगे पुन. प्रस्थान किया और यहा उसने अपने अश्वारोही दल को पाच टुकडियो मे विभक्त किया। इनको आगे बढकर सलावत खा की छावनी को घेरने, छावनी मे जाने वाली रसद व्यवस्था को भग करने तथा रसद मार्गों की नाकेबन्दी करने का आदेश देकर रवाना किया।[2] इस प्रकार व्यवस्थित जाट टुकडियों ने अपने कार्यों मे पूर्ण सफलता प्राप्त की। इन सभी गतिविधियो की

---

१ – सूदन पृ० ४४-५, बलदेवसिंह, पृ० ४७-६, वाक्या राज०, जि० २, पृ० ५२; सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० १६६।

२ – सूदन, पृ० ४६-७।

सूचना लेकर ४ जनवरी को साडिया सवार ईश्वरीसिंह के पास जयपुर पहुँचा।[1]

सलावत खा ने मेवात को बुरी तरह लूटते हुए जाटो की पश्चिमोत्तर सीमा की ओर प्रस्थान किया और उसके अग्र दलो ने जनवरी ६, १७५० ई० को नीमराना[2] की कच्ची गढ़ी पर अति वेग से आक्रमण किया। सूरजमल ने इस गढ़ी का निर्माण कराकर इसकी सुरक्षा–व्यवस्था का भार क्षेत्रीय चौहान राजपूतों को सौंप दिया था। कुछ घटो की झडप के बाद जाट रक्षकों ने इम गढो को खाली कर दिया। सलावत खा ने इस साधारण झडप को जाट–राजपूतो पर महान् विजय मानकर अपनी छावनी मे विजय घोष का आदेश दिया।[3] इस सफलता से उसको भारी हर्ष हुआ और उसकी भावी योजनायें अवरुद्ध हो गईं। मीर बख्शी न अपनी फौज के डेरा, युद्ध प्रसाधन तथा सामान से लदे भारकसो को नीमराना के पश्चिम में २७ किमी० नारनौल की ओर रवाना कर दिया था और दूसरे दिन १० जनवरी को प्रात.काल कुछ घंटे बाद वह स्वय घोडे पर सवार होकर चलने को तैयार हो गया था, परन्तु उसने अचानक ही अजमेर–मारवाड योजना स्थगित करके सर्व प्रथम जाटो का दमन करने की भावना से आगरा की ओर कूंच करने का निश्चय किया। इस निर्णय के साथ ही उसने नारनौल की ओर जा रहे कोतल दल को शुतुर सवार भेजकर पीछे लौट आने का आदेश भेजा। उसने यह रात्रि शोभाचन्द सराय (नारनौल के पूर्व में ८ किमी० तथा नीमराना के उत्तर–पश्चिम मे २१ किमी०) मे व्यतीत की। मीर बख्शी के इस अचानक निर्णय से उसके अनुभवी सरदारो को भारी आश्चर्य हुआ और उन्होने जाटो से संघर्ष छेडने की अपेक्षा सुनियोजित मारवाड प्रस्थान पर जोर दिया। किन्तु अनुभवहीन मीर बख्शी ने जाट विजय को सुलभ समझकर अपने सरदारों की राय को ठुकरा दिया।[4]

रात्रि युद्ध, जनवरी ११, १७५० ई०

सूरजमल के सेनानायकत्व मे पाच सहस्र जाट बन्दूकची सवारो ने द्रुतगति से कूंच करके सलावत खा की छावनी को पूर्णतः घेर लिया और रसद व्यवस्था भंग कर दी। दूसरे दिने (११ जनवरी) प्रात.काल मीर बख्शी ने नवाब फतेहअली

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५८०।

२ – पटौडी के द० प० तथा अलवर के उ०प० मे क्रमश. ५३/५३ किमी०, यह जिला रेवाडी का एक परगना था। १७२७ ई० मे सवाई जयसिंह ने जालिम सिंह चौहान के वंशजों के नाम इसका पट्टा कर दिया था। उस समय इसमे १६ देहात शामिल थे।

३ – सियार, खण्ड ३, पृ० ३१२; ता० मुजफ्फरी, पृ० २६।

४ – उपरोक्त, ता० मुजफ्फरी, पृ० २६–३०, कानूनगो, पृ० ७२।

के नायकत्व में तैनात उसके निजी सात सौ सैनिकों की रसद, दाना-घास लाने के लिए रवाना किया। दोपहर के बाद जब यह दल मालवाहक गाडियों के साथ छावनी की ओर लौट रहा था, तब जाट सवारों ने प्रधान छावनी से सात-आठ किमी० की दूरी पर इस रसद दल को घेर लिया। इससे मुगलो मे भारी भगदड मच गई। सलावत खा ने सूचना मिलते ही छावनी से अपनी हरावल के सेनानायक अली रुस्तम खा को उसके निजी दो सहस्र सवारो सहित सहायता के लिए रवाना किया। अब सूर्य काफी ढल चुका था। इसके हकीम खा सेरागी, मीर बख्शी की मुख्य सेना के दायें पार्श्व का सेनानायक, अपने निजी सात सौ सवारों सहित उसके पीछे चल दिया। सूर्यास्त मे अभी दो घटे शेष थे। फतेहअली ने जाट शक्ति, उनके साहस पराक्रम तथा घेराबन्दी का अनुमान लगाकर सलावत खां के पास उसी स्थान पर रात्रि व्यतीत करने का सन्देश भेजा था, परन्तु हठी अनुभवहीन मीर बख्शी ने उसके परामर्श को नही माना। फतेहअली के सवार तथा मालवाहक दिन भर के परिश्रम व सूर्य की तपन से परेशान थे। वे भूख प्यास से व्याकुल थे। उन्होंने द्रुतगति से छावनी मे पहुँचने का प्रयास किया। शाही सेनानायक हाथियो पर सवार थे और उनके साथ मे गजनाल तथा शुतुरनाल थीं। इस सेना को दो-दो सहस्र सैनिकों की टुकडियों में विभक्त किया गया और ये सभी छः किमी० की परिधि में फैल चुके थे। शाही सैनिकों को अभी तक जाट बन्दूकचियो की अचूक निशानेबाजी, युद्धभूमि मे जमकर लड़ने की कला का अनुभव नही था। उन्होंने जाटो की तीव्र गति का विरोध किया। उन्होने तोप, रहकला, जज्जैल पक्ति को अग्र पक्ति मे व्यवस्थित कर लिया था, ताकि अंधकार का लाभ उठाकर जाट सैनिक उस पर अधिकार नहीं कर सकें। शाही सैनिको की इस भगदड़ हट, उतावलापन का अनुमान लगाकर सूरजमल ने अपनी चारों चौकियो को दृढ करके दो सहस्र सवारो सहित पृष्ठभाग से धावो का सचालन किया। गोकुलराम गौड, सूरत राम गौड बलराम, प्रतापसिंह कछवाहा, शिवसिंह, श्यामसिंह, व्रजसिंह, पाखरमल, किसनसिंह, हरिनारायन के नायकत्व मे जाट सवारो ने कई दलो मे विभक्त होकर बडी कुशलता, तत्परता, सयम, विश्वास तथा सावधानी से धावा बोल दिया और रात्रि के अन्धकार में घोडों पर सवार हो अचूक निशाना बांधकर गोलिया बरसाना शुरू किया। इससे मीर बख्शी के अनुभवहीन सैनिक बहुसख्या मे मरने लगे और उनमे भगदड मच गई। जाट सवारों ने इनका इतनी मुस्तैदी से घेरा डाला कि एक भी सैनिक बाहर नहीं निकल सका। उनके तीव्र धावे, अचूक निशाने से अली रुस्तम खां का हाथी बिगड गया। यह देखकर हकीम खा उसके समीप पहुँचा और विशेष प्रयास के बाद अली रुस्तमखां को अपने हाथी पर खीचने मे सफल रहा। जब हाथी खडा हो रहा था, तब हरिनारायन ने हकीम खां पर वार किया उसके होठ पर

गोली [१] लगी। और वह भूमि पर गिर पड़ा। दूसरी गोली से अली रुस्तम खाँ घायल हो गया। जाटों की ओर से प्रताप सिंह कछवाहा, बलराम, अखैसिंह, महमदपनाह, रतना, हरनारायन वीरगति को प्राप्त हुये। [२]

अब युद्ध भयंकर हो गया, जिसमें हजारों मुगल खेत रहे या घायल हो गये। भगदड़ मचते ही मुगलों ने भाग कर मीरबख्शी की छावनी में शरण ली। वहां भी भगदड़, भय व आतंक छा गया। जाटों का अग्रदल पीछा करता हुआ शाही छावनी तक पहुँच गया और उसने छावनी का घेरा डालकर विजय घोष किया। करीब दो तीन दिन तक जाटों का घेरा रहा, इससे एक भी सैनिक शिविर से बाहर नहीं निकल सका। जाटों ने मीर बख्शी के दो-तीन हाथियों पर भी अधिकार [३] कर लिया। सूरजमल ने एक हाथी राणा भीम सिंह को सौंप दिया। यह देखकर भयभीत सलावत खां ने भागने का विचार किया, किन्तु कुशल सेनानायकों ने उसे रोककर छावनी को बरबादी से बचा लिया।

अमीर-उल्-उमरा (सरदारों का सरदार) अत्यधिक पीड़ित था। विजय आशा का उमड़ता सागर अपयश की गाथा बन गया। अब उसकी कीर्ति का मापदण्ड सहायक सन्धि थी और वह सन्धि करने के लिए उत्सुक था। सैय्यद गुलाम हुसैन खां का चाचा अब्दुल अली खां चार सौ सवारों के साथ इस अभियान में शामिल था। इसके आधार पर वह लिखता है— "सौभाग्य से जाट कुंवर केवल आत्मरक्षा करने तक सीमित रहा। उसने दो-तीन दिन तक लगातार शाही शिविर का घेरा डालकर ही

---

१ – सियार, खण्ड ३, पृ० ३१४; ता० मुजफ्फरी, पृ०३०–३१; कानूनगो, पृ० ७३; सरकार, खण्ड १, पृ० १६६।

– सूदन के वर्णन से ज्ञात होता है कि "अलीकुली खां, फतेहअली और मीर अली असगर कुबरा मैदान छोड़ कर भाग निकले। हकीम खां खेशगी अपनी सेना को उत्तेजित करते हुए आगे बढ़ा। यह देखकर घोड़े पर सवार हरिनारायन उसके हाथी के समीप पहुंच गया। हकीम खां ने उस पर अति तीक्ष्ण बाण छोड़ा, जिससे उसके हृदय से रक्त धारा बहने लगी, लेकिन शूरवीर ने वह तीर खींच लिया और रौद्र रूप धारण करके हकीम खां पर अपना तेगा कसकर फेंका, जिससे उसका ओहदा टूट गया। उसके हृदय पर गहरी चोट लगी। फिर उसने अपना भाला फेंका, जिससे हकीम खां की पसलियां चूर-चूर हो गईं। दूसरी ओर अली रुस्तम खां बाणों की मार से घायल होकर भूमि पर गिर पड़ा (पृ० ५४–५५; बलदेवसिंह, पृ० ४६-५१; वाकया राज०, जि० २, पृ० ५३)

२ – बलदेव सिंह पृ० ५१; वाकया राज०, जि० २, पृ० ५३।

३ – पे० द०, जि० २१, लेख २७; सरकार (मुगल), खंड १, पा० टि० पृ० १६७।

सन्तोष कर लिया। वास्तव मे उसका विचार अमीर-उल्-उमरा को मृत्यु दण्ड देकर अपयश अर्जित करने का नही था।"[१] अन्त मे सलावत खा को आत्म समर्पण करके जाटों के साथ समझौता करना पडा।

कोइल के नवाब फतेहअली की मध्यस्थता मे उभय पक्षो मे समझौता वार्ता शुरू की गई। मीर बख्शी ने जाटो द्वारा प्रस्तुत शर्तों को अपनी "महान विजय" मानकर सहर्ष स्वीकार कर लिया। सूरजमल ने अपने पुत्र जवाहरसिंह को मुगल छावनी में भेजा। उसने सलावत खा का शाही परम्परानुसार अभिवादन किया और अमीर-उल् उमरा ने निम्न शर्तों के अनुबन्ध पर अपने हस्ताक्षर करके समझौता कर लिया—

(१) अमीर-उल-उमरा ने स्वीकार किया कि उसके सेवक जाट क्षेत्र मे पीपल के वृक्ष नही काटेंगे।

(२) बदले की भावना से सेवा-पूजा को रोकने के लिए इस देश के देवालयो को क्षति नही पहुँचायेंगे और न देवस्थानो या मूर्तियो का अनादर ही करेंगे।

(३) सूरजमल ने यह स्वीकार किया कि यदि राज्यपाल प्रतिज्ञा करके आश्वासन दे कि वह उसकी सलाह को मानकर नारनौल से आगे कूच नहीं करेगा, तो वह स्वय इस अभियान मे शाही सेना के साथ चलने को तैयार था और इस बात की जुम्मेदारी लेता था कि अजमेर प्रान्त के राजपूतो से पन्द्रह लाख रुपया पेशकश वसूल करके शाही खजाने म जमा करा देगा[२]। मराठा अलेखों[३] के अनुसार जाटों ने नौ लाख रुपया की मामलत तय करके समझौता कर लिया था। किन्तु अन्य किसी फारसी इतिहासकार ने इसका विवरण नहीं दिया है।

वास्तव मे सलावत खा ने असम्मानीय सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर करके मुगल कीर्ति पर धब्बा लगा दिया था और उसके सैन्य-सचालन के खोखलापन का पता चल गया था। इस प्रकार सूरजमल ने राजनैतिक शर्तों की अपेक्षा धार्मिक सामाजिक तथा सास्कृतिक शर्तों पर समझौता करके मीर बख्शी पर उपकार किया। इससे उसने भारतीय इतिहास मे महान् प्रतिष्ठा, यश तथा सम्मान प्राप्त कर लिया और वह राजनैतिक अखाड़े मे नैतिक दावपेच के लिए मुक्त था।

सलावत खा ने नारनौल की ओर प्रस्थान किया, तब सूरजमल स्वय अपने पाच सहस्र सवारो के साथ हरावल के रूप मे उसके साथ रहा। जाट सैनिक शाही

---

१ – सियार, जि० ३, पृ० ३१४; कानूनगो, पृ० ७४।

२ – सियार, जि० ३, पृ० ३१५, ता० मुजफ्फरी, पृ० ३१–२, कानूनगो, पृ० ७४; सरकार (मुगल), जि० १, पृ० १९६।

३ – पे० द०, जि० २१, लेख २६।

शिविर से सदैव चार–पांच किमी० आगे अपना शिविर डालते थे और शाही छावनी मे आने–जाने वालो पर कडी निगरानी रखते थे। इस प्रकार मीरबख्शी नारनौल तक पहुँच गया, जहा महाराजा बख्तसिह राठौड ने उसकी अगवानी की। उसको जाटो के साथ सम्पन्न शर्मनाक सधि से भारी ग्लानि हुई और उसने अब राठौडो की सहायता से अजमेर प्रान्त पर अधिकार करने की सलाह देकर यश अर्जित करने की पहल की। सलावत खा ने इस सलाह को मानकर पुन· महान भूल की [1] और उसको जीवन भर प्रायश्चित करना पडा। सूरजमल को मीरबख्शी के निर्णय से भारी निराशा हुई।

युद्ध, समझौता तथा मीरबख्शी की आगामी योजना का समाचार लेकर सूरजमल का सन्देशक १८ जनवरी को सवाई ईश्वरीसिह के दरबार मे पहुँचा। २४ जनवरी को ईश्वरीसिह ने सूरजमल के लिए छ पोशाक का सिरोपाव भेजकर अपनी सहयोगी भावना प्रगट की। इसके बाद वह स्वय जयपुर से रवाना होकर मीरबख्शी की ओर चल दिया। इस समय मीरबख्शी नारनौल से अजमेर की ओर बढ रहा था। समीप पहुँचने पर ईश्वरीसिह ने १६ फरवरी को सूरजमल के लिए जडाऊ पहोची भेजी। २४ फरवरी को सूरजमल सहित शाही सैनिको ने भाभरा नदी पर पडाव डाला, तब ईश्वरीसिह स्वय सवार होकर सूरजमल से मिलने जाट डेरो पर आया। इस समय सूरजमल ने उसको ग्यारह मुहर तथा जवाहरसिह ने नौ मुहर, दो जडाऊ सरपेच, दो तोरा, पाच घोडा तथा एक हाथी भेंट किया, किन्तु उसने केवल मुहरें, तोरा, सरपेच तथा एक घोडा स्वीकार किया। फिर सूरज्मल सवार होकर कछवाहा शिविर मे गया। वहां पर दोनो सरदारो मे आपस मे काफी देर तक बातचीत होती रही। [2] यहा से सूरजमल ने अपने पुत्र जवाहरसिह के नेतृत्व मे पाच सहस्र सवार तथा राणा गोहद ने अपने वकील फतेहसिह के साथ कुछ सवार मीरबख्शी के साथ रवाना किये और दोनों अपने देश मे वापिस लौट आये। [3]

जवाहरसिह कुछ दिन कछवाहा शासक के साथ रुका। इस बीच मे जाट सरदारो ने मारबख्शी को 'मारवाड सघर्ष' मे हस्तक्षेप न करने की सलाह दी, किन्तु वह अपनी जिद्द पर अडा रहा। अत· १४ मार्च को जगतपुरा नामक स्थान पर

---

१ – सियार, खड ३, पृ० ३१५, रेऊ, खड १, पृ० ३६१।

२ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५८०, ५५५।

३ – सूदन, पृ० ४८; बलदेवसिह, पृ० ५२; वाक्या राज०, जि० २, पृ० ५३। जोधपुर राज्य की ख्यात, जि० २, पृ० १६५ के अनुसार—रामसिह ने सूरजमल को बख्शी का साथ छोडकर लौटने की शर्त पर एक लाख रुपया देने का प्रस्ताव रखा था।

सवाई ईश्वरीसिंह ने जवाहरसिंह के लिए एक जड़ाऊ सरपेच तथा तीन पोशाक का सिरोपाव भेंट करके विदाई दी।[1] जवाहरसिंह अपनी कुछ टुकडियों को मीरबख्शी के साथ छोड़कर वापिस लौट आया।

४ – मारवाड़ अभियान मे जाटो का सहयोग, मार्च–मई, १७५० ई०

मीरबख्शी सलावत खा नारनौल से अजमेर होकर रावना पहुँचा। सवाई ईश्वरीसिंह भी ससैन्य जोधपुर पहुँच गया था और यहां से तीस सहस्र कछवाहा–मारवाडी फौज ने १४ अप्रेल को पीपरी (रावना से ग्यारह किमी०) मे पड़ाव डाला।[2] नारनौल से पीपरी तक जाट सवारों ने मार्ग रक्षक की भूमिका निभाई और मराठा प्रलेखों के अनुसार पीपरी युद्ध म जाट पदाति दलो को चौकियो की सुरक्षा-व्यवस्था के लिए तैनात किया गया।[3] दस दिन (१४–२३ अप्रेल) तक मीरबख्शी तथा कछवाहो मे शांति वार्ता का दौर चला। २४ अप्रेल को तोप युद्ध प्रारम्भ हुआ। किन्तु मुगल सैनिक ग्रीष्मताप तथा प्यास से व्याकुल होकर भागने लगे। इस प्रकार युद्ध स्वत बन्द हो गया। अन्त में ईश्वरीसिंह की मध्यस्थता मे रामसिंह तथा बख्तसिंह के बीच समझौता हो गया। ईश्वरीसिंह ने मीर बख्शी को सत्ताईस लाख रुपया इस शर्त पर देने का वचन दिया कि वह राजस्थान से अपनी सेनायें हटा ले और आगरा प्रान्त का नायब पद उसे दान कर दे। इस समझौता से बख्तसिंह को कोई लाभ नही मिल सका। फिर भी उसने मीरबख्शी को राजस्थान में फँसाये रखने के लिए सुझाव दिया— "सभी राजपूत नरेश तथा जाट जमीदार उसकी अधीनता स्वीकार करके पर्याप्त धन देंगे। इससे सूरजमल जाट को भी वाध्य होकर आपसे समझौता करना पड़ेगा और आगरा व उसके आसपास के परगनो पर अधिकार करने में सरलता रहगी।"[4] परन्तु मीरबख्शी ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार करके अजमेर की ओर कूच कर दिया। बख्तसिंह निराश होकर नागौर और जाट सैनिक अपने देश को वापिस लौट आये। इस प्रकार मीरबख्शी का राजस्थान अभियान पूर्णत विफल रहा।

५ – रानी किशोरी का वरण, मार्च, १७५० ई०

ईश्वरीसिंह से मुलाकात करके सूरजमल शाही छावनी को छोडकर दिनरात

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३७८।

२ – सियार, खड ३, पृ० ३१५–६, ता० मुज०, पृ० ३२–३।

३ – पे० द०, जि० २१, लेख २७।

४ – सियार, खड ३, पृ० ६१६–७, ता० मुज०, पृ० ३४।

कूंच करके गोरधन लौटा और यहाँ हरिदेव जी का पूजन करके विजय पर्व मनाया। फिर सम्भवतः २१ मार्च (फाल्गुण सुदि १५) को होड़ल के प्रतिभाशाली जाट सरदार काशी की सुयोग्य पुत्री किशोरी के साथ विवाह[१] सम्पन्न हुआ। यह एक राजनैतिक सूत्र-बन्धन था। इससे परगना होडल पूर्णतः जाट राज्य के प्रभाव में आ गया। विदुषी किशोरी का वरण भरतपुर राज्य की प्रगति तथा स्थिरता का सूचक था।

६ – सफदरजंग का जाटों के विरूद्ध द्वितीय अभियान, जुलाई, १७५० ई०

फर्रुखाबाद के नवाब कायम खां की मृत्यु (नवम्बर, १७४९ ई०) के बाद सफदरजंग ने जाट विरोधी अपना प्रथम अभियान स्थगित कर दिया था। बगश राज्य को अवध मे मिलाकर उसने फर्रुखाबाद की व्यवस्था के लिए अपने नायब नवलराय की नियुक्ति की और स्वयं ५ जून को दिल्ली लौट आया।[२] अब वजीर ने कुंवर सूरजमल तथा उसके अनुजीवी चौधरी बलराम (बल्लू) पर शाही परगनो को खाली करके उसके अधिकार में सौंपने के लिए दबाव डाला। सूरजमल ने वजीर की मांग को ठुकरा कर राव बलराम की सहायता के लिए बल्लमगढ सैनिक कुमुद भेज दी। फलतः वजीर ने शीघ्र ही बलराम का दमन करने के लिए फौजी टुकड़िया भेजने का निश्चय किया। इससे पूर्व ही जुलाई के प्रारम्भ में बलराम की प्रेरणा से आसपास के जाटो ने दिल्ली के दक्षिण मे कुछ किमी० दूर शम्सपुर के शाही थाने पर आक्रमण करके अधिकार कर लिया था। इस आक्रमण मे वजीर का थानेदार व सिपाही काम आये। फलतः शम्सपुर थाने पर पुन. अधिकार करने के लिए वजीर ने एक सेना रवाना की, जिसका बलराम के सैनिको ने वीरता के साथ सामना किया। इसमे वर्षा होते हुए भी वजीर सफदर जंग को स्वय शुक्रवार, ६ जुलाई को विशाल सेना के साथ जाटो का दमन करने के लिए कूंच करना पड़ा और उसने शम्सपुर थाना के समीप बाग में रात्रि विश्राम किया। यहा पर उसको नायब नवलराय के पत्र से मऊ में बीबी साहिबा (कायम खा की माता) तथा कायम खा के लघु भ्राता अहमद खा बगश की कमान मे भयंकर पठान विद्रोह का समाचार मिला। अस्तु, उसको जाटो के साथ समझौता करने का निर्णय करना पड़ा। दूसरे दिन (१० जुलाई) प्रातःकाल वह दिल्ली के दक्षिण में ८ किमी०, खिज्राबाद पहुँचा और मराठा वकील को सूरजमल तथा बलराम से समझौता वार्ता कराने के

---

१ – सूदन, पृ० ५८।
२ – ता० अ० शाही, पृ० २२ अ०; ता० मुज०, पृ० ११; दे० क्रॉनी०, पृ० २७; अवध, पृ० १५३।

लिए अपने डेरो पर बुलवाया। मराठा वकील के प्रयास से बलराम स्वय रात्रि के समय अपने दोनो हाथो को एक रुमाल से बाधकर वजीर के डेरो पर उपस्थित हुआ और उसने वजीर के समक्ष नम्रता तथा शिष्टता प्रगट की। उसने वजीर की आज्ञा पालन करने का आश्वासन दिया। वजीर ने उसको क्षमा करके मराठा वकील के सुपुर्द कर दिया और वह मराठा वकील के साथ कुछ दिन जयसिहपुरा मे रुका। इस प्रकार वजीर ने बाध्य होकर शाही परगनो के अपहरण को मान्यता प्रदान करके राव बलराम को बल्लमगढ सहित इस क्षेत्र का सरदार मान लिया।[1] इससे बलराम की कीर्ति, यश तथा सम्मान बढ गया और सूरजमल के हाथ मजबूत हो गये।

इसी समय उसने सूरजमल को शाति समझौता करने के लिए अपने डेरो पर आमन्त्रित किया। तब जाट वकील रूपराम कटारा तथा मराठा वकील की मध्यस्थता मे हुई शाति वार्ता से सन्तुष्ट होकर सूरजमल ने वजीर सफदर जग के आमन्त्रण को स्वीकार कर लिया और वह निजी टुकडियो सहित दिल्ली के समीप पहुँचा। वजीर स्वय सूरजमल से मिलने आया और विशिष्ट जाट सरदारो न उसकी अगवानी की। फिर खिज्राबाद के निकट किसनदास तालाब क आसपास वजीर सफदर जग तथा सूरजमल की मुलाकात हुई। दोनों ने एकान्त मे बैठ कर विचार-विनिमय किया और अन्त मे वजीर ने सशपथ सूरजमल के साथ मैत्री सन्धि की। सूरजमल अपने राज्य की ओर और वजीर दिल्ली मे अपनी हवेली पर लौट गया। सम्राट अहमदशाह ने जाटों के साथ सम्पन्न सन्धि को स्वीकार कर लिया और सूरजमल को छः वस्त्रो की तथा उसके बख्शी को दो वस्त्रो को खिलअत भेजकर सम्मानित किया।[2] इस प्रकार सूरजमल की योग्यता निर्भीकता तथा सैनिक क्षमता का समादर हुआ और जाटों तथा वजीर मे वास्तविक मित्रता की जड जम गई। स्पष्टत. यह सम्राट द्वारा जाटो के राजनैतिक तथा प्रशासनिक औचित्य की वैधानिक स्वीकृति थी। सूरजमल ने महान विपत्ति के समय सफदरजग को नैतिक, हार्दिक तथा सैनिक सहायता देकर मित्रता की भावना को निभाया।

७— पठान अभियान मे सफदर जग की सहायता, अगस्त–सितम्बर, १७५० ई०

सोमवार, ३ अगस्त को सम्राट ने एक विदाई समारोह मे वजीर को फर्रुखाबाद जाने के लिए खिलअत प्रदान की और उसके पुत्र जलालुद्दीन हैदर खां (शुजाउ-

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० २२ ब–२३ अ, दे० क्रॉनो०, पृ० २९, कानूनगो, पृ० ८०; अवध, पृ० १५४ (तिथियां भ्रमात्मक)।

२ – पे० द०, जि० २, लेख १५, अवध, पृ० १५४, कानूनगो, पृ० ८०।

दौला) को नायब वजीर नियुक्त किया।[१] एक सहस्र तोप, तीन सौ हाथी, तीन सौ ऊंट, दस सहस्र सवार, बीस सहस्र पैदल तथा भारी साज-सामान (भरावा)[२] के साथ वजीर ने ४ अगस्त को यमुना नदी पार करके दिल्ली से फर्रुखाबाद की ओर प्रस्थान किया। वह केवल ६४ किमी०[३] ही पहुँचा होगा कि मार्ग में उसको खुदागंज युद्ध (१२ अगस्त) में उसके नायब नवलराय की पराजय व मृत्यु का हृदय विदारक समाचार मिला। फलतः अपनी तीस सहस्र अनुशासनहीन, अनुभवहीन सेना को अपर्याप्त समझकर उसने बालाजी राव पेशवा से सिन्धिया तथा होल्कर के नेतृत्व में मराठा सैनिक भेजने का आग्रह किया। परन्तु इस समय सतारा के छत्रपति रामराजा के राज्यारोहण के कारण दोनो मराठा सरदारो की सहायता असम्भव थी। महाराजा ईश्वरी सिंह तथा अन्य प्रभावशाली हिन्दू राजा राव तथा जमींदारों को उपस्थित होने के लिए परवाना भेजे गये। बदनसिंह ने अपने पुत्र प्रतापसिंह को ईश्वरीसिंह से परामर्श करने के लिए जयपुर भेजा। राव बहादुरसिंह (घासहरा) ने दो सहस्र सवारो के साथ वजीर का आगे बढ़कर स्वागत किया। इस प्रकार मेंडू, हाथरस के पौरच, पुडीर राजपूत जमींदार भी अपनी टुकड़ी सहित वजीर की छावनी में आकर उपस्थित हो गये थे।[४]

इस महान संघर्ष काल में वजीर सफदरजंग ने जाट जन-शक्ति तथा उसके सरदार की उपेक्षा करना अभीष्ट नही समझा और उसने अपनी छावनी में उपस्थित जाट वकील दयानाथ को अपने डेरे पर बुलवाया। उसको स्वहस्तलिखित परवाना (पत्र) सौंपकर शीघ्र ही कुंवर बहादुर सूरजमल को ससैन्य बुलाने का आग्रह किया। उसने लिखा,— "कुंवर बहादुर सूरजमल आपके समान इस समय कोई भी बलशाली योग्य हिन्दू नही है। हमारे-आपके बीच मे पुश्तैनी (पैतृक) मित्रता विद्यमान रही है। आप फौज खर्च की ओर ध्यान न देकर अपनी सेना सहित शीघ्र ही मेरी सहायता के लिए कूंच करने का कष्ट करें।" जाट वकील दयानाथ ने सिर नवाकर नवाब सफदर जंग का परवाना प्राप्त किया और नवाब की ड्योढी से बाहर आकर शुतुरसवार के हाथो यह परवाना सूरजमल के पास भेज दिया। कुंवर सूरजमल इस समय सहार मे था, जहां उसने अपने पिताजी से विचार-विमर्श किया और शीघ्र ही अपने देश के भिन्न-भिन्न स्थानो पर तैनात विश्वासपात्र सरदारो को ससैन्य आने के लिए रुक्का (आदेश-पत्र) भेजे। राव बदनसिंह ने सूरजमल को मुगलो से

---

१ – सूदन, पृ० ५६; देo क्रॉनी०, पृ० २६; सियार, खण्ड ३, पृ० २९१; अवध, पृ० १६२।

२ – सूदन, पृ० ६०, ६४; पे० द० जि २, लेख २३; ता० अहमदशाही, पृ० २५ ब।

३ – पे० द०, जि० २, लेख १४ अ; सूदन पृ० ६०।

४ – सरदेसाई, पृ० ४६६, सूदन पृ० ६०; द०, कौ०, जि० ७, पृ० १०७।

"सावधान तथा सतर्क" रहने की सतसलाह भी दी। सूरजमल ने शुभ-मुहूर्त मे प्रस्थान करके यमुना पार प्रथम डेरा डाला, जहां लगभग पन्द्रह सेनानायक सवार सेना तथा मरावा के साथ आकर उपस्थित हुये। यहा पर सूरजमल को कोइल छावनी से वजीर का अन्य परवाना मिला। उसने हरावल के कोतवाल (दरोगा इ वहीर) को वहीर रवाना करने की आज्ञा दी और दूसरे दिन प्रात काल स्वय ने कोइल की ओर प्रस्थान किया।[1]

वजीर सफदर जग से भेंट-वार्ता

सूरजमल के कोइल छावनी के समीप पहुँचने पर नवाब वजीर सफदर जग ने उसकी अगवानी के लिये अपना विश्वासपात्र सलाहकार व दीवान इस्माइल बेग खा के लिए रवाना किया। दोनो ने परस्पर मिलकर बातचीत की। फिर दोनो नवाब के डेरो की ओर बढे, जहां नवाब के अन्य अमीरो ने उसका स्वागत किया। सूरजमल सवार होकर नवाब के दरबार में उपस्थित हुआ। वजीर आगे बढकर गले लगा और उपस्थित तेरह जाट सरदारो का सम्मान किया। उसने सूरजमल के हाथो मे हाथ डालकर कुशल-क्षेम पूछी और सूरजमल सहित सभी जाट सरदारो को सिरोपाव प्रदान करके अनुगृहीत किया। इसके बाद सभी अपने डेरों पर लौटे।

दूसरे दिन सूरजमल पुन नवाब के दरबार में गया और भावी कार्यक्रम पर विचार किया। वजीर ने अपनी सभी फौज बुलाने का उससे आग्रह किया और उसके सहयोगी सरदारो का स्वागत करने का आश्वासन दिया। सूरजमल ने कहा, "चलते समय ठाकुर साहब ने मुझे आपकी सेवा करने तथा आज्ञा पालन करने की शिक्षा दी है। उनकी यह स्पष्ट प्रवृति है कि मित्र के साथ अन्तिम क्षण तक मित्रता निभाते हैं। एक लाख सिर्नसिनवारो (भाई बन्धुओ) की जन-शक्ति आपकी सेवा के लिए सदैव तैयार है। ब्रज में तैनात सभी फौजो को शाही चाकरी के लिए शीघ्र ही बुला लूगा।" नवाब सफदर जग ने आत्मीयता के साथ कहा— 'आप (ब्रजराज) समस्त हिन्दुओ में शिरोमणि हैं। आपने अपने चाचा रूपसिंह तथा सआदत खां (नवाब का श्वसुर) के बीच विद्यमान पुश्तैनी मित्रता को बढाया है।" यह कहकर सफदर जग ने उसके गले में मोतियों की माला डालकर उस सम्मानित किया। सूरजमल ने नतमस्तक होकर कृतज्ञता प्रगट करते हुए कहा—"मेंडू, मुरसान, खुर्जा आदि के सभी जमीदार योद्धा आ रहे हैं। आप पूर्वी प्रान्त (इलाहाबाद) मे तैनात अपनी सभी फौज को बुला लें तथा भदावर के राजा हिम्मतसिंह को भी शीघ्र बुलाकर सम्मानित करें।" इसके बाद सूरजमल वजीर को सलाम करके अपने डेरा पर लौट आया।

---

१ – सूदन, पृ० ६१–६३।

दूसरे दिन नवाब वजीर पालकी मे बैठकर अपने अमीरो के साथ जाट डेरों पर गया। सूरजमल ने अपने सरदारो के साथ उनका अभिनन्दन किया और रुपया भेंट किये। नवाब को ससम्मान अपने दरबार मे लेकर पहुँचा। नवाब सफदर जंग हले मसनद पर बैठा, तब उसने सूरजमल से मसनद पर बैठने का आग्रह किया। अदव बजाकर सूरजमल उसके समीप मसनद पर बैठ गया। थालो मे सुगन्धित वस्तुयें, पान आदि सजाकर खवासो ने वजीर के सामने प्रस्तुत किये। दोनो मे कुछ देर तक बातचीत हुई। इस प्रकार नवाब वजीर सफदर जंग ने एक जमीदार का शाही अमीर (मनसबदार) के अनुरूप सम्मान करके जाट-शक्ति को सम्मानित किया।[१] इसके बाद अगस्त के द्वितीय सप्ताह मे शाही सेना ने कोइल से मारहरा (कासगंज के द० प० मे ११ किमी० तथा एटा के उत्तर-पश्चिम मे २१ किमी०) की ओर प्रस्थान किया और यहा विभिन्न क्षेत्रो से आने वाली फौजो की प्रतीक्षा मे वजीर एक महीने से अधिक छावनी डाले पड़ा रहा।

उभय पक्षीय सैन्य बल

मारहरा छावनी में नसीरुद्दीन हैदर तथा सवारो का सेनानायक व वजीर का बख्शी मुहम्मद अली खां अपनी सेनाओ के साथ आकर उनसे मिल गये थे। महाराजा ईश्वरीसिंह ने अपने बख्शी हेमराज के नेतृत्व मे एक सहस्र सवार भेजे। राव चूड़ामन का पुत्र मोहकम सिंह, राजा हिम्मत सिंह भदौरिया, कामगार खां बलूच आदि जमीदार भी अपनी टुकड़ियों के साथ पहुँच गये थे।[२] सूरजमल के नेतृत्व मे पन्द्रह सहस्र[३] सैनिक जमा हो चुके थे। इस प्रकार वजीर की छावनी मे एकत्रित अन्य सैन्यबल अमीरों की व्यक्तिगत कटुता तथा अनुभवहीनता के कारण अति निर्बल, अव्यवस्थित, असंगठित शस्त्रधारी जन समूह मात्र था। २० दिसम्बर को वजीर ने मारहरा से कूच करके नदरई में पड़ाव डाला। फिर उसने काली नदी पार की और बघरी (कासगंज के पूर्व मे ८ किमी०) नामक गाव के दक्षिण-पूर्व मे कुछ किमी० दूर अपनी छावनी डाली।[४]

---

१ – सूदन, पृ० ६४–६।

२ – पे० द०, जि० २, लेख २३; सूदन, पृ ६७, ७०–७१; वाक्या राज०, जि० २, पृ० ५४, सम्राट अहमदशाह ने हिम्मतसिंह भदौरिया के लिए ३ जून को राजा की खिलअत प्रदान कर दी थी। (दे० कॉनो, पृ० २८)

३ – सूदन, पृ० ६०, ७१; इमाद, पृ० ४८; शाकिर, पृ० ६४; सियार, जि० ३, पृ० २८६; कानूनगो, पृ० ८०; वाक्या राज०, जि० २, पृ० ५४; अवध, पृ० १६४।

४ – दे० कॉनो, पृ० ५६; हरिचरन, पृ० २०४ अ; अवध, पृ० १६३।

अहमद खां बगश बीस सहस्त्र अनुशासित तथा प्राण-पण से लडने वाले सैनिको के साथ गगा तट पर आ धमका और उसने वजीर की छावनी से १६ किमी० पूव म पलास के पेडों से सपुष्ट गगा नदी की दक्षिणी खादरो मे अपनी छावनी डाली। सादुल्ला खा रुहेला ने उसकी सहायता के लिए परमल खा तथा दावर खां की कमान में दस सहस्त्र रुहेला सवार भेज दिये थे। [1] युद्ध पूर्व रात्रि में अहमद खा बगश ने वजीर की छावनी मे अपने दूत भेजकर कामगार खा बलूच, मीर बका (पुत्र वजीर कमरुद्दीन खां) तथा राव बहादुरसिंह बडगूजर का नैतिक समर्थन प्राप्त करके निष्क्रिय कर दिया था। उसने सूरजमल से भी 'जमीदार के जमीदार से लडने" के औचित्य को प्रमाणीकृत न करने का आग्रह किया। किन्तु उसने इस सघर्ष को जमीदार का सघर्ष न मानकर बगश के आग्रह को ठुकरा दिया और रणक्षेत्र म वजीर सफदर जग की सेना का सचालन करके अन्तिम क्षण तक सेवा की। [2]

राम चतौनी युद्ध में वजीर की पराजय, सितम्बर २३, १७५० ई०

रणक्षत्र में उतरने से पूर्व रात्रि मे वजीर सफदर जग ने अपने डेरो पर युद्ध-विशारदो को रणनीति तथा सैन्य सचालन पर विचार करने के लिए आमन्त्रित किया। सूरजमल ने सुझाव दिया— "आप स्वय पृष्ठ भाग में खडे रहकर युद्ध का सचालन करें और मैं हरावल का सचालन करूगा।" यह सुनकर वजीर ने उसका भारी सम्मान किया और अन्त मे सूरजमल तथा इस्हाक खा नज्मुद्दौला (दीवान शाही खालसा) के परामर्श को स्वीकार किया। इसके बाद सूरजमल अपने डेरे पर लौट आया और शीघ्र ही चोबदार (नकीब) को भेजकर छावनी में सूचना भिजवाई कि बहीर को लदवाकर नवाब सफदर जग के पृष्ठ भाग (चन्दौल) मे पहुंचा दिया जाए और सभी सवार युद्ध के लिए तैयार हो जायें। कोतवाल बहीर ने आदेश की पालना करके चन्दौल मे बहीर की सुरक्षा-व्यवस्था के लिए पैदल सैनिक तैनात किये। इस प्रकार जाट कुवर ने अनुभवी सवारों को रणक्षेत्र मे रखकर नवीन भरती के सिपाहियो को रसद व सामान की सुरक्षा का भार सौंपने की उचित व्यवस्था की। [3]

२३, सितम्बर १७५० ई० (२२ शव्वाल, हि० ११६३) को अपनी प्रात

---

१ – पे० द०, जि० २, लेख २३, सूदन, पृ० ७२-७३; ता० अहमदशाही, पृ० २६ ब; गुलिस्ताने रहमत, पृ० ३७।

२ – सूदन, पृ० ७७–८, बलदेव सिंह, पृ० ५८, वाक्या राज, जि० २, पृ० ५५।

३ – सियार, जि० ३, पृ०२६४; अवध, पृ १६५, सूदन, पृ० ७४,७६; बलदेवसिंह, पृ० ५६, वाक्या राज, जि० २, पृ० ५५।

भाग पर हमला कर दिया और मुख्य सेना ने वजीर की अग्र पंक्ति पर आक्रमण किया। दोपहर को करीब दो बजे अहमद खां बंगश छः सहस्र बन्दूकची धनुर्धारी सवार व पैदलो के साथ पलास बन की झाड से निकल आया और उसने वजीर पर सीधा आक्रमण किया। इससे वजीर दो ओर से घिर गया। आंधी व तूफान ने भी स्थिति को बिगाड दिया और वजीर का महावत व सेवक मिर्जा अली नकी खा जम्बूरक की गोली से खेत रहा। वजीर के जबड़े मे भी गोली लगी और वह बेहोश होकर अपने पीतल के हौदा मे गिर पडा। हाथी इधर उधर भागने लगा, किन्तु जगत नारायण उस हाथी को आपत्ति से हटा कर ले गया। इससे उसके भारी खजाने व सामान को मुगलो ने लूट लिया और शेष सामान को विजयी पठान व ग्रामीण लूट कर ले गये।[१]

इसी बीच मे वजीर की दाईं पंक्ति में तैनात सूरजमल, इस्माइल बेग खा, राजा हिम्मत सिह भदौरिया अफीदियो का पीछा छोड़कर लौट रहे थे, तब उनको मार्ग में वजीर की पराजय तथा भागने का समाचार मिला। सूरजमल स्वयं अपने साठ अंगरक्षक सवारो के साथ पलास बन के समीप रुक कर पठानो की गतिविधि को देखने लगा। उसने शीघ्र ही पठानो पर आक्रमण करने का प्रयास भी किया, किन्तु अन्य सेनानायकों ने अपनी के शेष सवारों के आन तक रुकने का आग्रह करके इस प्रयास को टाल दिया। अहमद खा बंगश जाटो की रणनीति, कुशलता व वीरता के प्रति अधिक सतर्क व चिन्तित था। इससे उसने अपने सैनिकों को जाटो की ओर बढ़ने से रोक कर बुद्धिमता दिखलाई। फलतः सूरजमल ने अपने सैनिको को एक स्थान पर एकत्रित करने के लिए काली (कालिन्द्री) नदी के तट पर डेरा डाल दिया और वही रात्रि विश्राम किया। उसके पास यहा दो सौ सवार आ गये थे। उसकी कुछ सेना मेड़ू व कुछ मथुरा पहुँच गई थी। प्रातःकाल उसने काली नदी के तट से प्रस्थान किया। मारहरा छावनी मे वजीर भी दग्ध चिकित्सा से ठीक हो गया था और २४ सितम्बर को प्रातः उसने दिल्ली की ओर कूंच कर दिया था। यह समाचार मिलने पर सूरजमल भी हेमराज बख्शी सहित यमुना पार करके अपने देश में लौट आया।[२] इस प्रकार इस युद्ध मे जाट वीरो ने हरावल का नेतृत्व

---

१ – सियार, खण्ड ३, पृ० २६५–७; इमाद, पृ० ४६; हरिचरन, पृ० ४०५ अ; हादिक, पृ० १७४; ता० मुजफ्फरी, पृ० ४७–८; शाकिर, पृ० ६४; गुलिस्ताने रहमत, पृ० ३६; ता० अहमदशाही, पृ० २६ ब; पे० द०, जि० २, लेख २०,२३; इर्विन, ज० ए० सु० बं०, १८७६, पृ० ७४; अवध पृ० १६८–६।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० २६ ब, सियार, जि० ३, पृ० २६८; पे० द०, जि० २, लेख २०, २३; सूदन, पृ० ६८–६।

करके प्रथम आक्रमण में ही विजय प्राप्त कर ली थी। उनको इस युद्ध से पठानों की युद्ध शैली व मुगलों की आन्तरिक कटुता, अनुशासनहीनता का पूर्ण ज्ञान हो गया था। पराजय का मूल कारण नवाब वजीर सफदर जग की अयोग्यता थी।

सर्वत्र अराजकता तथा उपद्रव

अहमद शाह ने सितम्बर के प्रारम्भ में मीर बख्शी सलाबत खां को शीघ्र ही राजधानी लौटने का फरमान भेजा। आर्थिक सकट से विपन्न मीर बख्शी ने एक लाख रुपया पेशकश लेकर जिला नारनौल महाराजा ईश्वरीसिंह को सौंप दिया। ३० सितम्बर को वजीर अपनी सेना के साथ दिल्ली पहुँच गया।[1]

विजय के शीघ्र बाद अहमदखां बगश ने कोइल से शाह अकबरपुर (कानपुर के पूर्व म ४२ किमी०) तक अपना अधिकार कर लिया। उसके आमिलो ने फफूद, शम्साबाद, छिब्रामऊ, जौनपुर तथा गाजीपुर पर अधिकार कर लिया। पठानो की भयकर लूटमार के बारे म फरवरी, १७५१ में मराठा कमाबिसदार गोविन्द पन्त बुन्देला ने अपने दो पत्रो में भाऊ को लिखा, "समस्त दोआब तथा इलाहाबाद प्रान्त में भयंकर अराजकता फैल चुकी है। हर जगह व्यापारियो ने अपनी दुकानें बन्द कर दी हैं। यातायात रुक गया है और व्यापार ठप्प हो गया है। रैय्यत जंगलों मे भागकर प्राण बचा रही हैं।"[2] इसी समय मेवात प्रान्त में मेवाती तथा जाट धारो ने मिलकर उपद्रव व लूटमार शुरू कर दी थी और वहां से शाही आमिल तथा अन्य शाही प्रबन्धको को निकालकर अपना अधिकार कर लिया।[3] सम्भवत इसी समय सूरजमल ने चौधरी काशीराम को कस्बा तालरू (तावडू, परगना नूँह) का प्रबन्धक नियुक्त किया और मेवात में अपनी स्थिति को पूरी तरह मजबूत कर लिया।

८ – अफगानो के द्वितीय आक्रमण मे जाटो का सहयोग, मार्च १७५१–अप्रेल १७५१ ई०

दिल्ली दरबार मे तूरानी घटक नवाब–वजीर सफदर जग का कट्टर विरोधी था और हिन्दुस्तान मे अब कोई अन्य मुस्लिम शक्ति शेष नहीं थी, जो वजीर को

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० २६ ब, २७ अ, इमाद, पृ० ५०; सियार, जि० ३, पृ० ३०३; पे० द०, जि० २, लेख, २०, २१, २३।

२ – पे० द०, जि० २, लेख २६, ३०, राजवाडे, जि० ३, लेख ३७६, ३८३; ता० मुजफ्फरी, पृ० ५३, सियार, जि० ३, पृ० ३०१; इमाद, पृ० ५०–१; गजे० फर्रुखाबाद, पृ० १६४–५।

३ – पे० द०, जि० २१, लेख ३४, ता० अहमदशाही, पृ० २६ अ, ता० मुजफ्फरी, पृ० ३४।

सैनिक मदद दे सके। इससे "वह अपने माथे पर लगे कलक तथा पराजय के टीके को केवल भारतीय हिन्दू शक्तियो की सहायता से मिटा सकता था।"[1] वजीर ने शीघ्र ही अपने अभिन्न सहयोगी अमीर व मित्र इस्माइल बेग खा, राजा लक्ष्मी नारायण, राजा नागरमल, जाट सरदार सूरजमल, सैय्यद अब्दुल अली खां आदि को अफगानो से युद्ध करने की नीति पर विचार करने के लिए आमन्त्रित किया और उनके परामर्श से मराठा सरदारो को अपनी सहायता के लिए बुलाने का निश्चय किया गया।[2] रामचतौनी युद्ध से पूर्व ही मल्हार राव होलकर तथा जयप्पा सिन्धिया के नेतृत्व मे पचास सहस्र मराठा सवारो ने दक्षिण से हिन्दुस्तान की ओर कूच कर दिया था। नवाब वजीर ने अपने दीवान राजा रामनारायण तथा राजा जुगलकिशोर को मराठो को दिल्ली लिवा कर लाने के लिए रवाना किया।[3]

नवम्बर १७५० ई० के अन्त मे कोटा के समीप इन प्रतिनिधियों की मराठा सरदारो से मुलाकात हुई। मराठा कूच करके जयपुर पहुँचे। दिसम्बर, १३, १७५० ई० की रात्रि को महाराजा ईश्वरीसिंह ने हताश होकर आत्म हत्या कर ली थी। इससे मराठा सरदारो ने २६ दिसम्बर को माधोसिंह को जयपुर राज्य की गद्दी पर आसीन किया और फरवरी के द्वितीय सप्ताह में पेशवा की स्वीकृति प्राप्त करके वजीर की सहायता के लिए दिल्ली की ओर प्रस्थान किया।[4]

मराठो के दिल्ली के समीप आने पर नवाब वजीर सफदर जंग ने अफगान विद्रोह को कुचलने के लिए दिल्ली से प्रस्थान करने की फरवरी २१, १७५१ ई० के दिन सम्राट से विधिवत आज्ञा प्राप्त कर ली थी और २८ फरवरी को उसने किसनदास तालाब के समीप छावनी डाली। २ मार्च को मल्हार राव तथा वजीर मे भेंट हुई और १४ मार्च को पच्चीस (पैंतीस?) सहस्र रुपया दैनिक सैनिक भत्ता देने की शर्त पर बीस सहस्र मराठा सैनिको ने फर्रुखाबाद अभियान मे शामिल होना स्वीकार कर लिया। इसी प्रकार पन्द्रह सहस्र रुपया दैनिक भत्ते के वचन पर सूरजमल दस सहस्र जाट सेना के साथ वजीर की सैनिक सहायता के लिए पहुँच गया। खुर्जा, मेडू के जमीदार तथा भदावर का राजा भी अपनी टुकडियो सहित

१ – कीन, फॉल ऑफ दी मुगल एम्पायर, पृ० ४४।

२ – पे० द०, जि० २, लेख २०; सूदन, पृ० १००; सियार, जि० ३; पृ० ३०४।

३ – पे० द०, जि० २, लेख २८; ता० अहमदशाही, पृ० २८ अ; इमाद, पृ० ५७, सियार, जि० ३, पृ० ३०४।

४ – पे० द०, जि० २, लेख ३१, जि० २७, लेख ६४–५; ता० मुजफ्फरी, पृ० ४३; वश भास्कर, पृ० ३६०८–३६१६; सरदेसाई, पृ० ३०६; ड्रा० ख०, सं० ४/५३१, फरवरी २१, १७५१।

आकर शामिल हो गया। इस प्रकार द्वितीय अभियान में वजीर पक्षीय सेना में अस्सी सहस्र सवार व पन्द्रह सहस्र पैदल सैनिक एकत्रित हो गये थे।[1]

दोआब में शादिल खा की पराजय, मार्च २०, १७५१ ई०

समुचित युद्ध-व्यवस्था के बाद नवाब वजीर सफदर जंग ने मार्च के द्वितीय सप्ताह मे दिल्ली से प्रस्थान किया और आगरा पहुंचकर बीस सहस्र फुर्तीले मराठा सवार तथा जाटो को शादिल खा के विरुद्ध आक्रमण करने के लिए रवाना किया। अहमद खा बंगश ने शादिल खां को कोइल जलेसर से पटियाली पर्यन्त नवीन विजित प्रदेश का बन्दोबस्त सभालने के लिए नियुक्त किया था। कोइल की ओर से जाटो ने तथा आगरा के समीप यमुना पार करके मराठो ने उस पर आक्रमण किया। इस बार जाट मराठो पर युद्ध का समस्त भार डालकर वजीर स्वय आगरा से दिल्ली लौट गया। मार्च के तृतीय सप्ताह (२० मार्च) में मराठा टुकडियों ने कादरगंज (इटावा के उ० प० मे ४८ किमी०) के समीप शादिल खा पर आक्रमण किया जिसमे वह पराजित होकर फरुखाबाद की ओर भाग गया। जाट मराठो के हाथ लूट का भारी सामान हजारो घोडे व बहुत से हाथी लगे। बहुत से पठान खेत रहे तथा उनके डेरे लूट लिये गये। इस प्रकार दोआब मे जाट तथा मराठो का भीषण आतंक छा गया।[2]

अहमद खा बगश की फतेहगढ़ में सामरिक तैयारिया, अप्रैल, १७५१ ई०

शादिल खां की पराजय का समाचार मिलने पर अहमद खा बगश ने अपनी राजधानी फर्रुखाबाद को खाली कर दिया और स्वय फर्रुखाबाद के दक्षिण-पूर्व मे ५ किमी० गगा तट पर हुमन घाट के समीप स्थित फतहगढ चला गया। गगा के उस पार रुहेलखण्ड था और उधर से उसको नियमित रसद तथा रुहेलो की सहायता मिल सकती थी। उसने गगा तट पर अपनी मुख्य छावनी डालकर गगा नदी पर नावो का पुल बाध लिया था। अवध से उसका पुत्र महमूद खा व कादिर चौक

---

१ – पे० द०, जि० २, लख ३१, जि० २१, लख ४४, सियार, जि० ३, पृ० ३०५, गुलिस्ताने रहमत, पृ० ४०, इब्रतनामा, पृ० ४१, बयाने वाकई, पृ० २६२, दे० कानी, पृ० ३१, कानूनगो, पृ० ८२, अवध, पृ० १८४, खरीता इ० जय०, स० ११।

२ – प० द०, जि० २, लख ३२, जि० २१, लेख २४, ४३, जि० २६, लेख १७६, सियार, जि० ३, पृ० ३०५, ता० मुजफ्फरी, पृ० ५४, अवध, पृ० १८७, ड्रा० ख०, स० ४/६५६।

(कादिर गज से ८ किमी०) से शादिल खा भी अपनी सेनाओ सहित फतेहगढ़ पहुँच गये और उन्होने नदी के बाये किनारे पर अपनी छावनी डाली।[1]

दीवान गगाधर तातिया ने आगे कूंच करके फतेहगढ़ के उत्तर-पश्चिम मे एक किमी० दूर अपना पडाव डाला। २४ मार्च को नवाव वजीर सफदर जग व कुंवर सूरजमल भी स सैन्य फतेहगढ के समीप पहुँच गये थे। अब वजीर ने होलकर व जयप्पा सिंधिया को कासिम बाग पर तैनात किया और स्वय ने दक्षिण की ओर बढकर पठानो की खाइयो से करीब १८ किमी० दक्षिण में सिंधीराम घाट नामक गाव के समीप छावनी डाली। इस प्रकार वजीर, जाट तथा मराठो ने अहमद खा को उत्तर-दक्षिण तथा पश्चिम दिशाओ से घेर लिया। २५ दिन तक साधारण आपसी भडपों के साथ फतेहगढ़ का घेरा पडा रहा। २६ अप्रेल को नवाव वजीर, जाट तथा मल्हारराव ने भावी योजना पर विचार किया। २७ अप्रेल को वजीर ने बगश-रूहेला मिलन को रोकने के लिए गगाधर तातिया तथा कुंवर जवाहरसिंह जाट के नेतृत्व मे मराठा, जाट व कुछ मुगलों को सिंधीराम पुल के पार गगा के पूर्वी तट पर अविलम्ब रवाना कर दिया। २८ अप्रेल को प्रात.काल तीस सहस्र अफगान-रूहेला युद्ध को पूरी तरह तैयार हो गये और उभय पक्ष की ओर से हवाई हुक्का व बन्दूको की मार के साथ युद्ध शुरू हो गया। इस समय एक ओर से मराठों ने पूरी शक्ति के साथ आक्रमण किया। दूसरी ओर से जाटो ने भयकर युद्ध के बाद सेल, सांग तथा बन्दूको से करारी मार की।[2] भारी उत्साह व दृढता के बाद भी रूहेला सफल नहीं हो सके। दस सहस्र रूहेला खेत रहे, घायल हो गये अथवा बंदी बना लिये गये। स्वय बहादुर खा मैदान मे काम आया। यह देखकर सादुल्ला खा आवला भाग गया। सूरजमल ने इस विजय का समाचार वजीर की छावनी मे भेजा। विजेताओं ने रूहेला छावनी को पूरी तरह लूट लिया। उनके हाथ भारी मूल्य का सामान, अनेक हाथी, कई हजार घोडे, कालीन, डेरा व वस्त्र लगे। इस प्रकार रूहेलो पर विजय प्राप्त करके सूरजमल स्वय वजीर की छावनी मे पहुँचा। अब फतेहगढ पर दवाव डाला गया।[3]

अहमद खा बगश ने प्रभात से पूर्व ही अचानक आक्रमण करने की घोर प्रतिज्ञा की, परन्तु सध्या से तीन घटा बाद ही रात्रि में मराठो ने सादुल्ला खा के

---

१ – पें० द०, जि० २, लेख ३१, २०, इमाद, पृ० ५७; इर्विन, ज० ए० सु० ब०, १८७९, पृ० ६०, अवध, पृ० १८७।

२ – सूदन, पृ० १००-१०२, सियार, जि० ३, पृ० ३०६-७, ज-इ० खरीता (अ-ब) स० ११, चैत वदि १४, पें० द०, जि० २, लेख ३७।

३ – सूदन, पृ० १०३, वाक्या राज०, जि० २, पृ० ५६।

सामान मे आग लगा दी। फलत. अहमद खां बंगश रात्रि मे ही फतेहगढ़ को खाली करके भाग गया। २६ अप्रेल को प्रात काल खाईयों मे तैनात अनेक पठान सैनिको को जाट व मराठों ने घेर कर मार डाला या बन्दी बना लिया। उनका सभी सामान जाटों व मराठों ने लूट लिया। इसके बाद जाटो व मराठो ने बंगश प्रदेश को आग व तलवार से बरबाद करके बदला लिया। उनके भय से रुहेला-पठान सरदार व उनके परिवार आवला से कुमायू की पहाडियो में भाग गये, जहा उनको मलेरिया ज्वर ने घेर लिया। ४ मई को नवाब वजीर ने अफगान विजय का समाचार दिल्ली भेजा। इस प्रकार तीन महीने मे ही वजीर ने अपने कलक को मिटाकर यशोपाजन किया। अब वजीर जाटों की शक्ति, साहस, उद्यमशीलता की उपेक्षा नही कर सकता था और यह अभियान उनकी प्रगाढ़ मित्रता का कारण बन गया था। वर्षा पूर्व ही वजीर ने अवध प्रस्थान से पूर्व सूरजमल को अपने देश में जाने की विधिवत विदाई दी और वह जुलाई के प्रारम्भ मे भरतपुर लौट आया,[1] जहां दुर्ग निर्माण कार्य समाप्त हो चुका था और नगर की बसावट प्रगति में थी। अब जाटों का प्रभाव व प्रभुत्व पूर्व मे मैनपुरी तक फैल गया था।

६ – सूरजमल के पुत्रो के मनसब मे वृद्धि, अप्रेल १७५२ ई०

मीर बख्शी सलावत खा ने जाटो को अपना विरोधी बना लिया था। वह स्वय एक योग्य योद्धा व दूरदर्शी सरदार भी नहीं था। अत: नवाब वजीर की अनुपस्थिति मे राजमाता उधमबाई व जाविद खा के प्रयासो से जून १७,१७५१ ई० के दिन सलावत खां के स्थान पर गाजीउद्दीन खा को मीर बख्शी बनाया गया और उस अमीर उल्-उमरा की पदवी दी गई। इस दिन इन्तिजामुद्दौला को अजमेर का राज्यपाल पद तथा खानखाना के विरुद स सम्मानित किया गया।[2] इस प्रकार नवाब वजीर की अनुपस्थिति में शाही दरबार मे तूरानी दल के दो अमीरो ने दो उच्च पद व मनसब प्राप्त करके राजधानी में शीत युद्ध प्रारम्भ कर दिया था। जुलाई १७५१ ई० मे सवाई माधोसिह को आगरा प्रान्त मे नायब नियुक्त करन का फरमान व खिलअत भेजी गई,[3] किन्तु माधोसिह मल्हार राव की अनुमति के बिना आगरा प्रान्त की व्यवस्था के बारे मे कोई कदम नहीं उठा सकता था। उसको

---

१ – ता० अ० शाही, पृ० २७ ब, २८ अ, दे० कॉनी, पृ० ६२, सियार, जि० ३, पृ० ३०७, जि० ४, पृ० ३६, इमाद, पृ० ५६; राजवाडे, जि० ३, लेख १६०, ३८३-४, ३९७, जि० ६, लेख २२२, इति पत्रेण, लेख ७६, ८२, ८३।

२ – ता० अ० शाही, पृ० २६ अ-३० अ, सियार, जि० ३, पृ० ३११, ता० मुज० पृ० ३४-५, दे० कॉनी, पृ० ३२।

३ – द० कौ०, जि० १६, पृ० १३८, ३६४, ७१२ (जुलाई ३१, १७५१ ई०)

मल्हार राव का स्पष्ट आदेश था कि वह राव हेमराज कटारा व राव रूपराम कटारा के माध्यम से ही राजनैतिक विषयों पर चर्चा करे। इससे माधोसिंह ने सूरजमल को अनेक राजनैतिक विषयों पर आपस मे मिलकर बातचीत करने के लिए दशहरा पूर्व जयपुर आमन्त्रित किया। सूरजमल ने व्यक्तिगत मिलन की बात को स्वीकार करके भी जयपुर जाना उचित नहीं समझा और सितम्बर, १७५१ ई० में अपने पुत्र नाहर सिंह को उसके धाभाई श्रीराम, राव हेमराज के भतीजे गोकुलचन्द मामा कृपाराम, भूपसिंह कल्याणोत (लूणहरा) के साथ भेजा। २७ सितम्बर को माधोसिंह ने नाहर सिंह को सरपेच व सिरोपाव देकर विदा किया।[१] इधर अक्तूबर मे सूरजमल ने राव रूपराम कटारा को मल्हार राव के पास आपसी वार्ता के लिए भेजा और उसने सवाई माधोसिंह के विषय में भी बातचीत की। इसके बाद मल्हार राव के सदेश के साथ सूरजमल ने नवम्बर के प्रारम्भ मे अपने बख्शी बलराम, अनोप सिंह, गोकुल चन्द को बातचीत करने के लिए जयपुर भेजा। उन्हे ११ नवम्बर को विदा किया गया।[२]

इसी समय सितम्बर, १७५१ ई० मे अहमद शाह दुर्रानी ने तीसरी बार भारत की ओर प्रस्थान किया और २६ नवम्बर को उसने लाहौर के समीप अपनी छावनी डाली। यह समाचार दिल्ली मे ६ दिसम्बर को मिला। इससे दिल्ली के नागरिको मे काफी बचैनी, घबराहट व अराजकता फैलने लगी थी। सम्राट ने नवाब वजीर से दिल्ली लौटने का आग्रह किया, किन्तु वह बगश-रुहेला अभियान में बुरी तरह व्यस्त था।[३] अतः तूरानी घटक ने जाटो से सहायता प्राप्त करने का निश्चय किया। जाविद खा ने शीघ्र ही सूरजमल तथा अन्य पडोसियों को राजधानी मे उपस्थित होने के लिए पत्र लिखे। फरवरी ५, १७५२ को नवाब बहादुर जाविद खां शाह मरदान की दरगाह पर पहुँचा, जहा सूरजमल तथा राव बलराम (बल्लू) ने उससे मुलाकात करके अशर्फी भेंट की। इसी दिन सूरजमल को छः पोशाको की खिलअत व जड़ाऊ सरपेच और उसके बख्शी बलराम तथा दीवान को दो पोशाको की तथा फतेहअली खा को एक पोशाक की खिलअत से सम्मानित किया गया[४]।

१६ मार्च को शाह दुर्रानी ने लाहौर पर अधिकार कर लिया और उसने

१ — ड्रा० ख०, ४/४६ (१अगस्त), द० कौ०, जि० ७, पृ० ४१३, ५६७ ५८०, ५८६, ५६३।
२ — जय-इन्दौर खरीता स० २२ (२३ अक्तूबर), द० कौ०, जि० ७ पृ० ४५०, ३०७, ५८०।
३ — ता० अ० शाही, पृ० ३१ अ, ३२ अ– ३३ ब, ता० मुज०, पृ० ५८, सियार, जि० ३, पृ० ३२६, तहमास्प खा, पृ० १५ ब, गर्डासिंह, पृ० १०६।
४ — दे फॉनो, पृ० ३५।

दिल्ली की ओर प्रस्थान करने की धमकी दी। २३ मार्च को दिल्ली मे यह समाचार मिला। इससे भयभीत होकर असख्य सम्पन्न नागरिकों ने अपने परिवारों को जाट शासक के सुरक्षित प्रदेश, मुख्यतः मथुरा की ओर रवाना कर दिया था। कुछ दिन तक राजधानी मे दिल्ली के किसी भी गांव से अन्न नही पहुँचा। मराठो के साथ दिल्ली आने के लिए २३ मार्च को सम्राट ने अपने हाथ से वजीर सफदर जग के नाम कड़ा पत्र लिखा। इस समय सूरजमल स्वय मथुरा मे मौजूद था और वहा की सुरक्षा व्यवस्था म व्यस्त रहकर नवाब वजीर तथा मल्हार राव के आगमन की प्रतीक्षा कर रहा था। इसी बीच मे लाहौर के राज्यपाल मुईनउलमुल्क ने दुर्रानी के साथ समझौता कर लिया और सधि की शर्तो को विधिवत पुष्ट कराने की भावना से दुर्रानी अपने राजदूत कलन्दर बेग खा को दिल्ली भेजा। ग्यारह अप्रेल (२६ जमादि-अव्वल) को कलन्दर बेग खा दिल्ली पहुँच गया था, जहा सम्राट की ओर से मुईनउद्दीन जफर अली खा ने शालीमार बाग मे उसका स्वागत किया। इस दिन सूरजमल का द्वितीय पुत्र रतनसिंह शाही दरबार मे उपस्थित हुआ और उसने सम्राट को सात मोहर भेंट की। उसको चार पोशाकों की खिलअत, जड़ाऊ सरपेच के साथ तीन हजार जात/दो हजार सवार का मनसब तथा 'राव' का विरुद प्रदान किया गया। इसी समय उसके ज्येष्ठ भ्राता जवाहरसिंह के मनसब में एक हजार जात व एक हजार सवार की वृद्धि की गई। इससे उसका मनसब चार हजार जात/३५०० सवार हो गया।[1] साथ ही उसको नौबत भी प्रदान की गई।[2] इन सम्मानों से शाही दरबार मे सूरजमल की प्रतिष्ठा बढ गई थी। राजमाता उधमबाई, जाविद खा तथा अन्य अमीरो की सलाह पर सम्राट ने महान अपमानजनक सधि को स्वीकार करके २३ अप्रेल को दुर्रानी के राजदूत कलन्दर बेग खां को दिल्ली से रवाना कर दिया था।[3] इससे पश्चिमी प्रान्तों पर दुर्रानी का अधिकार हो गया।

कुवर बहादुर सूरजमल तथा उसके पुत्रों के सम्मान पर सवाई माधोसिंह ने २ जून को पेमसिंह गोगावत के हाथों राव बदन सिंह के पास दस सिरोपाव भेज कर अपना बधाई सन्देश भेजा।[4] माधोसिंह वास्तव मे मराठा सरदारों के चगुल से मुक्त होना चाहता था और उसने बख्तसिंह राठौड तथा जाटो के साथ मिलकर मराठों

---

१ – दे० फ्रांनी, पृ० ३७; कानूनगो पृ० ८३।

२ – सूदन, पृ० ५।

३ – पे० द०, जि० २१, पत्र ५३, ५५, दे० फ्रांनी, ता० अ० शाही, पृ० ३३ व; सियार, जि० ३, पृ० ३२७, ता० मुज०, पृ० ५६, गंडासिंह, पृ० १२३, सरकार (मुगल), खड १, पृ० २८०।

४ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४७१।

के साथ सम्पन्न सहायक संधि के परिणामो तथा अन्य समस्याओ पर विचार विमर्श करने का निश्चय किया।

दिल्ली स्थित मराठा वकील बापू महादेव हिंगणे ने आगरा प्रांत के प्रश्न की आड मे सूरजमल तथा माधोसिंह मे अलगाव पैदा करने का प्रयास किया और उसने जाट वकील के माध्यम से प्रस्तावित किया कि आगरा प्रान्त मे जाट शासक को कछवाहा जागीरो के एवज में ६–१० लाख रुपया कछवाहा दरबार को देना शेष है। अब जाटो को उसका भुगतान नही करना चाहिये। यदि माधोसिंह नायब पद को स्वीकार करके उन पर लेनदारी के लिए आक्रमण करता है, तब मल्हार राव आपकी सहायता के लिए प्रस्तुत रहेगा। इस प्रस्ताव की सहमति के एवज मे उसने जाटों को एक लाख रुपया देने का भी प्रलोभन दिया। किन्तु सूरजमल माधोसिंह को मराठा चगुल से मुक्त कराना चाहता था और उसकी सद्भावना पूर्ण मैत्री अधिक हितकर थी। इससे उसने मराठो के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया।[1]

१०– सूरजमल माधोसिंह का मिलन, जुलाई १७५२ ई०

राजधानी में नवाब वजीर सफदर जग की अनुपस्थिति म नवाब बहादुर जाविद खा सर्व शक्ति सम्पन्न अमीर था। उसने सम्राट को अत्यधिक विलासिता मे डुबाकर साम्राज्य के प्रशासनिक व राजनैतिक क्रियाकलापो पर पूर्ण नियन्त्रण कर लिया था। साम्राज्य पर आई महान विपत्ति के समय सम्राट के अनेक पत्र मिलने पर भी सफदर जग ने अवध से दिल्ली तक के मार्ग को चौबीस दिन मे तय किया, जबकि सवार इस मार्ग को केवल चार दिन मे तय कर सकते थे। ३ अप्रेल को मराठो सहित अवध से प्रस्थान करके वह ५ मई को दिल्ली के समीप पहुँचा और उसने यमुना तट पर अपनी छावनी डाली, जहा दूसरे दिन (६ मई) जाविद खा ने उससे मुलाकात की।[2]

मराठो को अपने साथ दिल्ली लाते समय सफदर जग ने पेशवा को मथुरा तथा अन्य जिलो की फौजदारी सहित आगरा व नारनौल की फौजदारी व अजमेर प्रान्त का राज्यपाल पद प्रदान करने, इन पदों के लिए स्वीकृत वेतन, विशेषाधिकार राज्यपाल व फौजदार के परम्परागत भत्ते आदि दिलवाने का आश्वासन दिया था। इस शर्त के अन्तर्गत पेशवा व उसके सरदार आन्तरिक विरोधियो, क्षेत्रीय राजाओ व जमीदारो से उन प्रदेशो व परगनों को छीनकर शाही अधिकारियो की व्यवस्था में सौंपने के लिए वचनबद्ध थे, जिन पर उन्होने अनाधिकृत कब्जा कर लिया था।

---

१ – हिंगणे, खड २, लेख १२।

२ – ता० म० शाही, पृ० २८ ब, ३० ब।

मराठा के दिल्ली पहुँचने पर वजीर ने दुर्रानी आक्रमण के विरुद्ध पारस्परिक रक्षा के लिए सहायक संधि की व्यवस्था की और सम्राट ने फरमान प्रसारित करके इस सहायक संधि को स्वीकार कर लिया था।[1] तभी मराठा दिल्ली से वापिस लौट सके। इसको स्वीकार कराने व मराठो के साथ अन्य व्यवस्थायें तय कराने में वजीर की अपेक्षा जाविद खा ने अति महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी और उसी के प्रयास से मराठा सेनायें मई में दक्षिण की ओर लौट सकी थीं। इस सहायक संधि का तात्कालिक प्रभाव जाट तथा कछवाहो पर पड़ता। इससे जुलाई २, १७५२ ई० को विचार विमर्श करने के लिए सूरजमल स्वयं अपने गोल खास सरदारो सहित जयपुर पहुँचा और उसने लूणकरण के बाग में अपना शिविर लगाया।

दस्तूर कौमवार[2] मे हमको सूरजमल-माधोसिंह की आपसी भेंट (३-१३ जुलाई) का विशद वर्णन मिलता है। उसके अनुसार— "३ जुलाई को अपराह्न सवाई माधोसिंह सभा निवास में आकर विराजे। एक घडी बाद सूरजमल मिलने आया और उसने दीवानखाना चौक मे प्रवेश करते ही तीन बार धरती छूकर सलाम किया। जब वह द्वार पर आया, तब महाराजा ने उसकी अगवानी करके ताजीम दी। पिछले खम्भा के समीप पहुँचकर सूरजमल ने पुन तीन बार सलाम किया और सात मोहर भेंट की। पीछे हटकर तीन सलाम किये। तब श्री जी ने सूरजमल को आगे बुलाया और उसने शिर नवाकर प्रणाम किया। श्री जी ने सूरजमल के शिर पर हाथ रखा। फिर उसने खडे होकर जाट सरदारो से एक मोहर तथा सैंतीस रुपया की नजर अपने हाथो से उठाकर स्वीकार की। तत्पश्चात एक घडी के लिए सूरजमल को अपनी दाईं ओर चादनी पर बिठलाया। फिर उसको अपने साथ अन्दर ले गये और वहाँ तेजसिंह चौहान को अन्दर बुलाकर आपस मे बातचीत की।

"रात्रि को महाराजा माधोसिंह पालकी में सवार होकर राज चौक मे आये। यहाँ से हाथी पर सवार होकर कोट बाहर जाकर विराजे। एक घडी रात्रि निकलने पर सूरजमल वहा आया और उसको ताजीम देकर अपने मसनद के समीप बिठलाया। यहा पर आतिशबाजी तथा हाथियो की लडाई हुई। माधोसिंह यहा से हाथी क रथ पर सवार हुआ और उसने अपने समीप ही सूरजमल, पेमसिंह, राजा सदाशिव भट्ट राव सरदारसिंह, देवीसिंह, हेमराज कटारा, जयसिंह चूडावत, दयाराम धाभाई, जोधसिंह को बिठलाया और यहाँ से चादनी चौक होकर महलों में पधारे।

---

१ – राजवाडे, जि० १, लेख १, ९, पे० द०, जि० २१, लेख ४४, ५०, ५७, प्रबंध पृ० २१०–११, शिंदेशाही, जि० १, लेख ८६, पुरन्दरे, लेख ९२, सरकार (मुगल) खंड १, पृ० १६६–७।

२ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५५७–५६४।

"८ जुलाई को श्री जी सवार होकर सूरजमल के डेरे पर पधारे। बाग के द्वार पर सूरजमल ने उसकी अगवानी की। सूरजमल ने उसको २१ मोहर, चार तोरा, चार घोड़ा, एक हाथी तथा २५ रुपया नजर किये। दो घड़ी वहां रुककर महाराजा माजी के बाग लौट आये। फिर १२ जुलाई को माधोसिंह तथा सूरजमल दिन भर शिकार में शामिल रहे और रात्रि में सूरजमल को डेरों पर पहुँचा कर विदाई की औपचारिकता की गई। विदाई में सूरजमल को खासगी सिरोपाव, एक घोड़ा, एक हाथी दिया गया। साथियों को हेमराज कटारा के हाथों बीस सिरोपाव दिये गये। दूसरे दिन (१३ जुलाई) को सूरजमल के लिए सरपेच आदि पाँच वस्तुयें तथा अन्य सेवकों को ६७ सिरोपाव गाठ बाँध कर भेजे गये।" इस प्रकार दोनों नेताओं ने मराठों के साथ सम्पन्न सहायक संधि को प्रभावहीन करने के लिए क्रमशः मथुरा तथा नारनौल की फौजदारी प्रदान किये जाने की माग की और इसका अभीष्ट परिणाम निकला।

११– सिकन्दराबाद की लूट, जुलाई–अगस्त, १७५२ ई०

नवाब वजीर सफदर जंग को दिल्ली पहुँचने पर सम्राट की अनुकम्पा वरण करने का प्रयास करना पड़ा। अन्त में सम्राट के आदेश से उसने १२ जुलाई को अपनी छावनी से नगर में प्रवेश किया।[1] सफदर जंग जब अपनी नगर हवेली की ओर जा रहा था, उसी समय नवाब बहादुर जाविद खा अंगूरी बाग में आकर बैठ गया था, ताकि वजीर वहा उससे मिलने तथा सलाम करने आए। परन्तु सफदर जंग ने उसकी उपेक्षा की। इस समय राव बलराम (बल्लू चौधरी) दिल्ली में मौजूद था। वजीर की अनुपस्थिति में जाविद खा ने बलराम के सहयोग से जाट–शक्ति को अपना समर्थक बना लिया था। घमण्डी तथा सर्व सत्ता सम्पन्न जाविद खा ने शीघ्र ही अपने यश व आत्म–प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए बलराम जाट को अंगूरी बाग में बुला लिया। उसके साथ बैठकर दरबार किया और उसको वजीर की मित्रता से विमुख करने के लिए खिलअत प्रदान की। दिल्ली के दक्षिण–पूर्व में ५१ किमी० सिकन्दराबाद परगना सम्राट के निजी जेब खर्च की जागीर का भाग था। जाविद खाँ ने बलराम को इस परगना का फौजदार नियुक्त करके उस पर शीघ्र ही अधिकार करने का परामर्श दिया। उसने सकट के समय उसकी यथासंभव सहायता तथा दरबार में सरक्षण प्रदान करने का भी वचन दिया। इसके बाद यह स्वयं किले में अपने निवास पर लौट आया और बलराम जाट शीघ्र ही वल्लभगढ़ पहुँचा। वहा कुछ दिन रुककर उसने अपनी जागीरी सेना एकत्रित की और फिर यमुना नदी पार करके सिकन्दराबाद पहुँच गया। उसने वहा के फौजदार कमर अली पर आक्रमण

---

१ – ता० अ० शाही, पृ० ३४ ब, ३८ अ तथा ब, ४० ब।

कर दिया और उसे परास्त करके भगा दिया। उसके पुत्र को मार डाला और सैनिक बल से परगना पर अधिकार कर लिया। फिर उसने परगना में अपना आतंक जमाने के लिए नगर को बुरी तरह लूटा। अनेक सम्पन्न व्यापारियों व साहूकारों के घरों के फर्श खोद डाले गये। अनेक साहूकारों को पकड़ लिया और उनसे बलपूर्वक धन वसूली के लिए औंधा लटकाकर कोड़ों से पिटवाया। उनको अनेक प्रकार की शारीरिक व मानसिक यातनायें दी गई। बलराम के इन कुकृत्यों की सूचना सम्राट को उसी रात्रि को दरबार में पहुँच गई। इस समय वजीर सफदर जंग भी दरबार में उपस्थित था। उसने नवाब जाविद खां से पूछा, "क्या आपने बल्लू को वहां का फौजदार नियुक्त किया है? वह वहां के नागरिकों की सम्पत्ति को क्यों लूट रहा है और क्यों कत्ल कर रहा है? यदि वह आपकी बिना अनुमति के यह कार्य कर रहा है तो मैं स्वयं वहां जाकर उसका दमन करूंगा।" वजीर के इन प्रश्नों को टालकर जाविद ने कहा—"मैं स्वयं उसको दण्ड दूंगा।" दूसरे दिन जाविद खां ने राव बलराम को सिकन्दराबाद परगना से बाहर निकालने के लिए अपने जमादार राव नरसिंह राय को एक छोटी सी सैनिक टुकड़ी के साथ उधर रवाना किया। उसने बलराम को समझा-बुझाकर वहां से चले जाने के लिए राजी कर लिया और बलराम लूट के भारी सामान के साथ जाविद खां के निजी जागीरी दुर्ग दनकौर (बल्लभगढ़ के पूर्व में २४ किमी०) में चला गया। इसी बीच में वजीर ने भी राव बलराम का दमन करने के लिए अपने सेना नायक राजेन्द्र गिरि गुसाईं के नेतृत्व में एक सैनिक टुकड़ी रवाना की और इस सैनिक टुकड़ी ने उसका दनकौर तक पीछा किया। चतुर बलराम वजीर से संघर्ष में नहीं फसना चाहता था। उसने शीघ्र ही किले से कुछ नौकायें एकत्रित कर लीं और यमुना नदी पार करके सकुशल बल्लभगढ़ चला गया। राजेन्द्र गिरि भी दिल्ली लौट आया। इस प्रकार राजधानी के समीप बादशाह की जेब-खास की जागीर को लूटने वाले जाट सरदार को किसी भी प्रकार की सजा तथा सिकन्दराबाद की रैय्यत व व्यापारियों को किसी भी प्रकार का न्याय नहीं मिल सका। वास्तव में जाविद खां व वजीर उभय पक्ष जाटों को असन्तुष्ट नहीं कर सकते थे। सूरजमल बलराम का संरक्षक था और बल्लभगढ़ तथा उसके आस-पास के परगनों की गढ़ियां जाट राज्य की सैनिक चौकियां थीं। फिर भी नवाब वजीर ने दलगत संघर्ष को उत्तेजित करने के लिए जाविद खां पर दरबार में गम्भीर आरोप लगाया कि उसकी सदेच्छा व प्रेरणा से ही बल्लू जाट ने यह जघन्य अपराध किया है। किन्तु जाविद खां चुप हो गया और उसने शर्म से अपनी गर्दन झुका ली।[1]

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ३८ अ ४० अ, शाकिर, पृ० ७१, अवध, पृ० २१६-७, सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० २३७।

१२–सूरजमल का प्रभाव तथा जाविद खां की हत्या, अगस्त १७५२ ई०

सफदर जंग को अब स्पष्ट आभास हो गया था कि उसकी दीर्घकालिक अनुपस्थिति में जाविद खां ने व्यवहारिक राजनैतिक, प्रशासनिक सत्ता तथा प्रबन्ध को अपने हाथ में पूर्णतः केन्द्रीकृत कर लिया है। सम्राट उसके चंगुल में फंस चुका है और शाही दरबार में ईरानी पक्ष अधिक प्रबल है। सिकन्दराबाद की घटना से वजीर सफदर जंग की क्रोधाग्नि भड़क उठी और उसने वजीर पद की गरिमा की स्थिरता के लिए व्यवहारिक राजनैतिक व प्रशासनिक शक्तियां हस्तगत करने का दृढ़ निश्चय कर लिया था। इतिहासकार सैय्यद गुलामअली खां तथा अब्दुल करीम काश्मीरी का यह कथन राजनैतिक तथा अन्य घटनाओं से पूर्णत: विपरीत है कि "वल्लू जाट के कथानक से बादशाह का दिल–दिमाग हिल उठा और उसने सफदर जंग से जाविद खा से छुटकारा दिलाने के लिए कहा।"[1] जाविद खां अति षडयन्त्रकारी व सम्राट का मुंह लगा सरदार था। इसने वजीर ने उसको राजनैतिक रंगमंच से ओझल करने की अति गोपनीय कपट–योजना बना ली। इस योजना को वह स्वयं अकेला ही पूर्ण नहीं कर सकता था। उसके सहयोगी मराठा सरदार जाविद खा की कूट चालों में फंसकर दिल्ली से रवाना हो चुके थे। जाविद खां को पूर्ण विश्वास था कि जाट उसके समर्थक हैं। इस स्थिति में वजीर सुदृढ, साहसी मित्र तथा सहयोगियों की तलाश में था। अब राजधानी के निकट केवल जाट–जन शक्ति शेष थी और दूरस्थ कछवाहा सवाई माधोसिंह था, जिनकी तात्कालिक सहायता से वह विरोधी अमीरों को कुचल सकता था। बंगश अफगान युद्ध से सूरजमल को अधिक आर्थिक लाभ नही मिल सका था। अपनी सत्ता व शक्ति की स्थिरता के लिए वजीर सूरजमल को उसकी मांग पर मथुरा की फौजदारी तथा अन्य कुछ शाही परगनों का पट्टा प्रदान कराकर पुरस्कृत करना चाहता था और सूरजमल समयानुकूल नवाब बहादुर व नवाब वजीर दोनों से ही मिल जुलकर, उन पर दबाव डालकर जाट संगठन की प्रबलता के लिए राजनैतिक व आर्थिक लाभ उठाने के लिए प्रयत्नशील था।

वजीर ने दरबार में उपस्थित होकर जाट व राजपूतों के साथ मिल-बैठकर साम्राज्य में स्थाई शांति, आन्तरिक सुरक्षा व्यवस्था की नीति पर विचार करने का प्रस्ताव रखा। वह वास्तव में पद की गरिमा के लिए अपने मार्ग के कांटे नवाब बहादुर जाविद खां को सदैव के लिए हटाने का निश्चय कर चुका था। फलतः सम्राट की सहमति से वजीर ने साम्राज्य की उचित व्यवस्था किस प्रकार सम्भव

---

१ – इमाद, पृ० ६०, बयाने वाकई, पृ० २७३; अवध, पृ० २१६, पा० टि०।

हो सकती है, जाट व राजपूतों से पेशकश की रकम किस प्रकार तय की जावे आदि
प्रश्नों पर विचार विमर्श करने के लिए सूरजमल तथा माधोसिंह को दिल्ली मे उप-
स्थित होने के लिए हस्ब-उल् हुक्म भेजे ? । [१] अगस्त के द्वितीय सप्ताह मे सूरजमल
ने कछवाहा प्रतिनिधि के साथ दिल्ली की ओर प्रस्थान किया और उसने एक सप्ताह
ख्वाजा सराय के समीप पड़ाव डाला । [२] यहां से उसने जाविद खां तथा वजीर से
अनुरोध किया कि उसको मथुरा की फौजदारी प्रदान की जावे । इस प्रस्ताव पर
साम्राज्य के दोनों पक्ष पूर्णतः सहमत हो गए थे । फलतः सूरजमल अपने अंगरक्षक
दलों के साथ दिल्ली पहुंचा और उसने कालिका पहाड़ी पर अपना शिविर डाला,
जहां सवाई माधोसिंह का मुत्सद्दी तथा राव बलराम जाट अपनी टुकड़ियों सहित
उससे आकर मिले । जाविद खां ने इस अवसर पर दरबार में प्रस्ताव रखा कि वजीर
की अनुपस्थिति मे ये सरदार सदैव उसकी अनुकम्पा के पात्र रहे हैं । इससे सूरजमल
तथा अन्य सरदार वजीर से पूर्व उससे आकर मुलाकात करें और उसी के प्रस्ताव
पर उनको पुरस्कृत किया जाना उचित होगा । इस समय साम्राज्य का सर्वोच्च
मन्त्री वजीर सफदर जंग राजधानी व दरबार में मौजूद था । इससे शाही परम्परा
के अनुसार सम्राट व दरबार से वार्ता उसके द्वारा करना नीति सगत था । वजीर ने
इस नीति के अनुसरण पर बल दिया । अन्त में काफी वाद-विवाद के बाद सम्राट
की अनुमति से यह निश्चय किया गया कि जाविद खां तथा वजीर दोनों वजीर
की हवेली में बैठकर एक साथ इन सरदारों से भेंट-वार्ता करें और फिर ये दोनों ही
साथ-साथ सम्राट से उनकी मुलाकात करायें । इस भेंट-वार्ता के लिए गुरुवार,
२७ अगस्त का दिन निश्चित किया गया । समकालीन लेखकों का मत है कि वजीर
ने आन्तरिक भाव से सूरजमल को नगर मे होने वाले हंगामों की स्थिति मे अपनी
सहायता के लिए जाट सैनिकों सहित शहर मे बुलाने का निश्चय किया । इधर

---

१ – मीराते आफताबनुमा, पृ० ३५६, अहवाल-सतातीन ये-मुतअखरीन हिन्द, पृ० ११६;
—अब्दुल करीम काश्मीरी का यह कथन भ्रांतिपूर्ण है कि वजीर ने सूरज
मल को जाविद खां की हत्या के प्रस्ताव पर विचार करने के लिए ही हस्ब-
उल्-हुक्म भेजकर आमन्त्रित किया था । (इ० डा०, बयाने वाकई, खण्ड ८,
पृ० १३३) डा० टिक्कीवाल (पृ० ११७) का यह कथन भ्रमात्मक है कि वजीर ने
माधोसिंह से आग्रह किया था कि वह बलराम को प्रभावित करने तथा जाविद
खां के निर्देश न मानने के लिए सूरजमल पर अपना प्रभाव डालने का प्रयास
करे और सूरजमल ने माधोसिंह के निर्देश की पालना में बलराम को अस्थाई
सन्धि मानने के लिए बाध्य कर दिया था ।

२ – हिंगणे दफ्तर, खण्ड १, लेख ७६ (१६ अगस्त) ।

नवाब बहादुर जाविद खां ने भी सूरजमल के पास सूचना भेजी कि बिना आपकी सलाह के आगे साम्राज्य का बन्दोबस्त व प्रबन्ध संभव नहीं होगा।[1]

सफदर जंग ने २७ अगस्त को प्रातःकाल अपने प्रमुख चेला इस्माइल खां को उसे आमन्त्रित करने के लिए सूरजमल के डेरों पर रवाना किया। साथ ही साम्राज्य के प्रबन्ध व बन्दोबस्त की स्थिति पर विचार-विमर्श करने के लिए जाविद खां को अपनी हवेली पर भोजन का निमन्त्रण भेजा। उसी दिन वजीर ने अपनी हवेली के भीतर अति गुप्त रूप से अपने कुछ विश्वासी सैनिकों को तैनात कर दिया था। प्रातःकाल जाविद खां वजीर की हवेली पर पहुँचा। उसने अति उत्साह व सौहार्द भाव से उसका स्वागत किया और दोनों ने साथ-साथ भोजन किया। दोपहर के बाद सूरजमल अपने विश्वासपात्र व चतुर अंगरक्षकों के साथ वजीर की हवेली पर समझौता की शर्तों पर वार्ता करने पहुँचा और काफी देर तक उन दोनों से बातचीत होती रही। इस्माइल खां मुलाकाती कमरे के द्वार पर खड़ा था और उसने सूरजमल व नवाब बहादुर दोनों के साथियों को भीतर जाने से रोक दिया। कुछ समय बाद वजीर सूरजमल द्वारा प्रस्तुत शर्तों पर एकान्त में विचार विमर्श करने के बहाने अपने प्रतिद्वन्द्वी को हाथ में हाथ डालकर अपने मकान की बुर्ज के नीचे बने एक कमरे (खिलवत खाना) में ले गया और वहां कुछ समय बातचीत की। वजीर ने उस पर एक-दो लांछन लगाये और कर्कश स्वर में राजकार्य में सीधा हस्तक्षेप करने का आरोप लगाया, किन्तु वार्ता में अति कटुता आने से पूर्व ही वह अन्तःपुर में जाने के लिए तैयार होकर चलने लगा। इसी समय मुहम्मद अली जार्जी, अन्य लौह कवचधारी मुगल सिपाहियों के साथ आ धमका। इनको देखकर वजीर शीघ्र ही खड़ा हो गया। "अपनी नमकहरामी का फल भोगो" इन शब्दों के साथ मुहम्मद अली बेग खां जार्जी ने जाविद खां पर पीछे से प्रहार किया। उसके पेट में अपनी कटार भोंक दी। उसके मुगल साथियों ने क्षण भर में अपनी तलवार से उसका शिर काटकर हवेली के नीचे फाटक पर फेंक दिया, जहां उसके अनुचर (सेवक) बैठे हुये थे। उसका धड़ यमुना के रेतीले किनारे पर फेंक दिया गया। इसी समय यह भी अफवाह फैल गई थी कि वजीर ने जाट सरदार सूरजमल की भी हत्या करवा दी है। इससे दिल्ली में उपस्थित जाट अंगरक्षकों ने वजीर का मकान घेर लिया और वहां कोलाहल व उपद्रव शुरू हो गया। सूरजमल शीघ्र ही बाहर निकला और अपने अंगरक्षकों से मिला, तभी जाट सैनिक वहां से हट सके। दिल्ली नगर में छः घण्टे तक भयंकर भागदौड़, आतंक तथा कोलाहल मचता रहा। मुगल सैनिक व शहर के गुण्डों ने जाविद खां के अनेक अनुजीवियों को पकड़ कर लूट लिया।

१—मीराते आफताबनुमा, पृ० ३५७, अहवाल-ए-खवातीन-ए-पुश्तरीन, पृ० ११६।

जाविद खाँ का सभी सामान भी लूट लिया गया।[1] जाविद खाँ की हत्या के बाद दुर्ग के बाहर व भीतर उसके सभी भंडार व खजानों को जब्त करने के लिए सीलबन्द कर दिया गया। उसके सभी दफ्तरों पर अधिकार कर लिया गया। इस प्रकार वजीर ने जाट सैनिकों के सहयोग से किले व हरम पर भी अपने अनुजीवियों को तैनात करके सम्राट की पूर्णत नाकेबन्दी कर ली थी।[2]

जाविद खाँ की हत्या एक राजनैतिक भूल थी। निःसन्देह सूरजमल को वजीर के इस षडयन्त्र का आभास नहीं मिल सका। अनुभवहीन वजीर अव्यवहारिक सत्ता का उपभोग व तूरानी पक्ष को निर्बल करना चाहता था। वह यह नहीं सोच सका कि इस हत्या का सम्राट अहमदशाह व उसकी माता ऊधमबाई पर क्या प्रभाव पड़ेगा? अन्त में असमर्थ सम्राट २३ सितम्बर को अपनी माता ऊधमबाई के साथ वजीर को हवेली पर पहुँचा और उसने वजीर को अपनी कृपा व समर्थन का पूर्ण विश्वास दिलाया। उसने यह भी वचन दिया कि आगे वजीर की अभिलाषा के बिना किसी भी पद पर किसी की भी नियुक्ति नहीं करेगा। इसके बाद वजीर ने अपने सहयोगी व कृपा पात्रों को महत्वपूर्ण पद व स्थानों पर नियुक्त किया। जागीर देकर सम्मानित किया।[3] सूरजमल को भी इसका लाभ मिला। किन्तु वह वजीर के साथ एक बार भारी विपत्ति में फंस गया, जिससे वह अपने चातुर्य्य, धैर्य व सैनिक बल से निकल सका।

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ४० ब-४१ अ, शाकिर, पृ० ७१, ता० मुजफ्फरी, पृ० ६१-३, दे० कॉनी, पृ० ३८, सियार जि० ३, पृ० ३२८, बहार, पृ० ४०८ अ हिंगणे खंड १, लेख ७६, अवध, पृ० २१७-८, सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० २३८-९।

२ – ता० अहमदशाही पृ० ४१ अ-ब, इ०डा०(बयाने वाकई), खण्ड ८, पृ० १३३।

३ – ता० अहमदशाही, पृ० ४२ अ-ब।

अध्याय ५

कुंवर बहादुर 'राजेन्द्र' सूरजमल का मुगल मराठों से युद्ध व संधियां १७५२-४ ई०

१-- सूरजमल का विशिष्ट सम्मान, अक्तूबर, १७५२ ई०

सफदर जग तथा जाविद खा के सत्तात्मक सघर्ष मे व्यवहारिक शक्ति व सत्ता के उपभोग के लिए सूरजमल ने वजीर का साथ देकर शाही परम्परा व वजीर पद की गरिमा के स्थायित्व मे अति निर्भीक भूमिका निभाई थी और अन्त में सम्राट को बाध्य होकर वजीर के साथ समझौता करना पडा था। इसके शीघ्र बाद ही अक्तूबर के प्रारम्भ मे सर्वत्र यह चर्चा जोर पकडने लगी थी कि मराठा सरदार ग्वालियर, भदावर, कालपी तथा आगरा के ताल्लुकेदारो से मिलकर निजाम उल्मुल्क के नायब के रूप मे आगरा तथा मथुरा के जिलो से जाटों के थानों को उठाकर स्वय निजामत कायम करने का प्रयास करेंगे। फलत शाही दरबार मे काफी हलचल मचने लगी थी। सूरजमल इस समय वजीर के साथ राजधानी में उपस्थित था। उसको भी भारी परेशानी थी। १८ अक्तूबर को दशहरा का सास्कृतिक पर्व था। सूरजमल ने इस पर्व से पूर्व ही कालिका पहाडी शिविर से राव बलराम चौधरी को उसकी सैनिक टुकडियो सहित मराठो की गतिविधि को अकुशित करने के लिए रवाना कर दिया था। मराठो के भय से आशकित सम्राट तथा वजीर को शीघ्र ही जाटो की प्रस्तावित मागो पर विचार करके सूरजमल को सन्तुष्ट करना पडा। निश्चित निर्णय होने पर २० अक्तूबर को सूरजमल न स्वय वजीर के साथ शाही दरबार मे उपस्थित होकर सम्राट अहमदशाह से भेंट की और वजीर की अभिशंपा पर उसने राव बदनसिंह को 'महेन्द्र' और सूरजमल को 'कुंवर बहादुर राजेन्द्र' के विरुद से सम्मानित किया।[१] २२ अक्तूबर को अताजी के नेतृत्व में

१-(अ)-सूदन ने बदनसिंह के लिए व्रजराज' तथा 'महेन्द्र' दोनों उपाधियों का प्रयोग किया है (पृ० ५)। इसी प्रकार श्री कृष्ण कलानिधि ने 'पद्य मुक्तावली' में बदनसिंह को 'महेन्द्रास्पदे' लिखा है। &

तीन-चार सहस्र मराठा सवार होडल-पलवल होकर दिल्ली पहुँच चुके थे और उन्होंने तालकटोरा मैदान में अपना डेरा डाल दिया था। मराठों ने क्रुद्ध होकर सूरजमल के साथ चल रही वार्ताओं का विरोध किया और सम्राट को प्रभावित करने के लिए धमकी भी दी कि वह सूरजमल को आगरा प्रांत में परगने प्रदान नहीं करें। अस्तु विदाई की औपचारिकता के बाद भी सूरजमल को कुछ दिन के लिए दिल्ली में रोक लिया गया।[1]

इसी बीच में अहमदशाह दुर्रानी के जलालाबाद (नवम्बर) तक आ जाने के समाचारों से लाहौर तथा राजधानी में आतंक छा गया था। इस भयाक्रांत स्थिति में नवाब वजीर के अनुमोदन पर सम्राट ने सूरजमल को मथुरा का फौजदार नियुक्त करने का फरमान व खिलअत प्रदान की। फिर दिसम्बर के द्वितीय सप्ताह में नवाब वजीर ने सूरजमल के नाम शाही वजारत से उन सभी शाही परगनों का पट्टा करवा दिया था, जिनके लिए इससे पूर्व उसके नाम स्वीकृति हो चुकी थी, किन्तु मराठों के विरोध के कारण आज्ञा प्रसारित नहीं हो सके थे। इस प्रकार सूरजमल ने शाही दरबार में अपना विशिष्ट तथा महत्वपूर्ण स्थान बना लिया था। इसके बाद १४ दिसम्बर को उसे दिल्ली से विदाई की विधिवत खिलअत दी गई।[2] सूरजमल ने अपने देश में लौटकर मथुरा की फौजदारी व अन्य परगनों का विधिवत प्रबन्ध सम्भाल लिया था। इस शाही सम्मान पर फरवरी २७ १७५३ ई० को सवाई माधोसिंह ने सूरजमल के पास जरी का सरपेच तथा तीन वस्त्रों का सिरोपाव

※(ब)-वेण्डल पाद टिप्पणी में लिखता है कि विधिपूर्वक राजा बनाये जाने पर सूरजमल ने जसवन्तसिंह की उपाधि धारण कर ली थी, किन्तु उसने आवश्यक अवसरों के अलावा इस विरुद का प्रयोग नहीं किया था। आम लोगों में बचपन से ही उसका उपनाम प्रचलित था किन्तु उसकी मुहर में 'जसवन्तसिंह' का नाम अंकित था, इस बात को कुछ ही लोग जानते थे।

तारीखे अहमदशाही तथा अन्य इतिवृत्तों से वेण्डल के कथन की पुष्टि नहीं होती है। सूदन सूरजमल का उपनाम सुजान लिखता है और यह नाम जन साधारण में प्रचलित था। इसी प्रकार महंत लालदास प्रलेख में सुजानसिंह का प्रयोग मिलता है। अतः वेण्डल का कथन अविश्वसनीय है।

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ४३ ब, प० द० स० जि० २१ लेख ४८ (१३ दिसम्बर)।

२ – उपरोक्त पृ० ४५ अ-ब।

भेजकर अपनी मित्रता का परिचय दिया।[1] अन्य पड़ोसी शासकों ने भी अपनी बधाईयां भेजी थीं।

इस प्रकार वेण्डल[2] ने सिनसिनवार जाटों के अभ्युदय के बारे में लिखा—

"निःसन्देह जाट शक्ति के उत्कर्ष में यह पहला कदम था और उनके भाग्योदय व राजनैतिक उत्कर्ष की चर्चाएं सर्वत्र होने लगी थीं। यद्यपि इससे पूर्व ही उनके नियन्त्रण में पर्याप्त देश व बहुल सम्पत्ति आ चुकी थी और वे हिन्दुस्तान के राजनैतिक क्षितिज पर चमकने लगे थे, किन्तु उपाधि, पद व अधिकारों ने उनको व्यवहारिक शक्तियों का प्रयोग करने तथा सत्ता के उपभोग के लिए वैधानिकता प्रदान कर दी थी। यह सत्य है कि आमेर नरेश सवाई जयसिंह ने बदनसिंह को गौरव प्रदान किया था और उसके देश में भी उसका समादर या सम्मान था; पुनश्चः जाट मुल्क (जटवाड़ा) के बाहर इस सत्ता व सम्मान का व्यापक प्रसार नहीं हो सका था। अब मुगल सम्राट, जिसके जयसिंह तथा अन्य जमींदार और साम्राज्य के प्रतिष्ठित अमीर पद व भूमि के अनुरूप प्रदत्त उपाधियों के लिए अनुग्रही थे, ने स्वयं उनके (जाटों के) मुखिया को उन ही की भांति राजा बना दिया था।"

२ – ठेनुआ जाट कुटुम्ब—कबीलों का विस्तार व प्रभाव

सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में ठेनुआ जाट कुटुम्ब—कबीलों ने काश्तकार व पशुपालन के रूप मे वर्तमान जिला अलीगढ व मथुरा के मध्य भाग मे प्रवेश किया था और अर्द्ध शताब्दी मे इन परिवारो ने सामूहिक प्रयास से अधिकांश भू भाग पर अपनी जमीदारिया स्थापित कर ली थी। फिर उन्होंने अन्यान्य जाट पालों के साथ रिश्तेदारियां करके सामाजिक एकता व संगठन को मजबूत करने का प्रयास किया। १६६० ई० मे सम्राट औरंगजेब ने नन्दराम को तोछीगढ का फौजदार नियुक्त करके जाट संगठन को राजनैतिक इकाई के रूप में मान्यता प्रदान कर दी थी।[3] ठाकुर नन्दराम के चौदह पुत्र थे, जिनमे से (१) जुलकरन सिंह (२) जयसिंह, (३) भूरेसिंह, (४) चूड़ामन, (५) जसवन्तसिंह, (६) अधिकरन और (७) विजयसिंह नामक सात पुत्रो के बारे में विवरण उपलब्ध हैं।[4] जावरा गढ़ी के पतन के बाद नन्दराम का तृतीय पुत्र भूरेसिंह अपने दोनो पुत्र दयाराम तथा भूपसिंह के नेतृत्व में एक सदी

---

१ – इ० कौ०, जि० ७, पृ० ५६५।

२ – वेण्डल; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ३१४।

३ – ठेनुआ जाटों के विस्तार, सामाजिक व राजनैतिक घटनाओं के लिए द्रष्टव्य— लेखक कृत "जाटों का नवीन इतिहास"।

४ – नेविले, पृ० ६१; वेशराज, पृ० ५६०।

सवारो के साथ राव चूड़ामन सिनसिनवार की सेना मे आकर भरती हो गया था। उसके चौथे पुत्र चूडामन ने सोछीगढ, पाचवें पुत्र जसवतसिंह ने वहरामगढ़ी, छठवें पुत्र अधिकरन ने श्रीनगर तथा सातवें पुत्र विजयसिंह ने हरमपुर नामक गावों की जमींदारिया प्राप्त कर ली थीं। सैय्यद बधुओ ने भूरेसिंह को जावरा तथा टप्पा के आसपास कुछ गाव तथा क्षेत्रीय परगनों की फौजदारी प्रदान की थी। १७५० ई० मे भूरेसिंह की मृत्यु हो गई थी। उसने अपने जीवनकाल में ही जावरा व टप्पा का एक भाग अपने ज्येष्ठ भ्राता जयसिंह को सौंप दिया था।[१]

नन्दराम के ज्येष्ठ पुत्र खुलकरन का अपने पिता के जीवनकाल मे ही स्वगवास हो चुका था। उसका पुत्र खुशालसिंह अति समझदार व मिलनसार सरदार था। भूरेसिंह ने उसको राहतपुर तथा मकरोल गाव की जमीदारी सौंप दी थी। उसने सआदत खा की अनुकम्पा से दयालपुर, मुरसान, गोपी पुर्लैनी, अहरी तथा ताल्लुका बारामई प्राप्त कर लिया था और मुरसान में नवीन दुर्ग का निर्माण कराया। दुर्ग की रक्षा के लिए तोपखाना व सवार सैनिकों की एक सुव्यवस्थित सेना का भी गठन कर लिया था। खुशालसिंह के पुत्र पहुपसिंह (पुपसिंह) ने १७४८ ई० मे राजा की पदवी धारण कर ली थी।[२] ठेनुआ परिवार ने सूरजमल के साथ मित्रता कर ली थी और उसको हर सम्भव सहायता प्रदान की थी। सूरजमल के आग्रह पर १७५२ ई० के अ त मे वजीर सफदर जग ने भूरेसिंह के पौत्र सदनसिंह को हाथरस तथा उसके आसपास के कई गावो की जमींदारियां प्रदान कर दी थी। इस प्रकार सूरजमल ने इस क्षेत्र मे ठेनुआ सरदारों की शक्ति को बढाने में योग देकर क्षत्रीय पौरच, पु डीर राजपूतो को दबाने के लिए एक शक्तिशाली जागीर का सूत्रपात किया और अपना प्रभाव कोइल की ओर पूरी तरह बढ़ाया।

सूरजमल ने मध्य दोआब में आगरा के पूव मे जलेसर, मावा मूँह, इनके दक्षिण में हू डला, फिरोजाबाद तथा यमुना नदी पर आबाद बटेश्वर तथा उत्तर मे टप्पल व खुर्जा पर अधिकार कर लिया था। आगरा के दक्षिण-पूर्व मे उटगन तथा चम्बल नदी के मध्य भाग मे आवाद सिकरवाटी (राजाखेड़ा, पिनाहट बाह) पर सिकरवार गूजर व राजपूतों का अधिकार था। भारी दबाव में आकर इन सरदारो ने सूरजमल की अधीनता स्वीकार कर ली थी।[३]

---

१ – नेविले, गजे० आगरा व अवध, भाग २, पृ० ९३, देशराज, पृ० ५६०, ५६८, इमाद, पृ० ५५।

२ – सरकार (मुगल), खण्ड ४, पृ० ९०।

३ – सूदन, पृ० १२८।

३– घासहरा (घासेडा) का घेरा तथा विजय :
जनवरी-अप्रेल १७५३ ई०

घासेडा (घासहरा)[1] का राव बहादुरसिंह बडगूजर राजपूत जाविद खां का पक्षधर था। *जाविद खां के परामर्श पर सम्राट मुहम्मदशाह ने, नवाब फतेहअली* को चकला कोइल की फौजदारी से पदच्युत करके सितम्बर ७, १७५१ ई० में राव बहादुरसिंह बडगूजर को फौजदारी प्रदान कर दी थी। उसको तीन वस्त्रों की खिलअत व एक तलवार से सम्मानित किया गया। बडगूजर ने चकला कोइल की

---

१ – दिल्ली के द० प० में ६४ किमी० तथा पलवल के पश्चिम में २४ किमी० परगना सोहना के अन्तर्गत।

—राव बहादुर सिंह बडगूजर छापामार सरदार हठी सिंह का वंशज था। औरंगजेब के शासनकाल में बहना गाव' जो आगे चलकर बादशाहपुर कहलाने लगा, के हठी सिंह ने अपने जाति बान्धवों के सहयोग से एक लुटेरा दल गठित कर लिया था और ठाकुर चूडामन के साथ मिलकर शाही–राहों में लूटमार करके पर्याप्त धन व शक्ति संचित कर ली थी। औरंगजेब ने रेवाडी के चौधरी शाहबाज सिंह अहीर को इस लुटेरा दल के दमन के लिए नियुक्त किया, किन्तु एक मुठभेड में वह खेत रहा। तब उसके ज्येष्ठ पुत्र नन्दराम ने रेवाडी का चौधरी पद प्राप्त कर लिया। उसने रेवाडी के समीप नन्दराम पुरा व घारुहेडा नामक कस्बा आबाद किए और फिर बोलनी (रेवाडी के द० पू० में १२ किमी०) की गढी को छोडकर रेवाडी को प्रशासनिक केन्द्र बनाया। चौधरी नन्दराम व उसका लघु भ्राता ग्यानसिंह हठीसिंह के उत्कर्ष को सहन नहीं कर सके। इससे ग्यान सिंह ने उसको आगरा के समीप छलपूर्वक मारकर अपने पिता की मृत्यु का बदला लिया। (आभीर कुल दीपिका पृ० १०६–८)

सम्राट मुहम्मदशाह के शासनकाल में वजीर खां मेवाती ने छापामार दल संगठित करके मेवात तथा दिल्ली के आस-पास भारी उपद्रव खडे कर दिये थे। *फलत सम्राट ने लगभग १७३० ई० में बहादुरसिंह बडगूजर को* उसके दमन के लिए नियुक्त किया। वजीर खां जब लूट के माल के साथ यमुना नदी पार करके अलवर की ओर जा रहा था, तब बहादुर सिंह ने अपने साथियों के साथ उसको घेर कर मार डाला। सम्राट ने प्रसन्न होकर बहादुर सिंह को लूट का सभी माल प्रदान कर दिया और उसे राव की उपाधि से सम्मानित किया। उनने घासहरा (घासेडा) में एक विशाल दुर्ग का निर्माण कराया। (हेमचन्द्र राय, पृ० २०६–८)।

फौजदारी के एवज मे चार लाख रुपया वार्षिक भुगतान करना स्वीकार कर लिया था।[1] बंगश पठान युद्ध (अगस्त–सितम्बर, १७५०) में राव बहादुरसिंह ने वजीर के साथ विश्वासघात किया। इसमे सफदर जंग राव बहादुरसिंह की शक्ति को कुचलना चाहता था जबकि सूरजमल मध्य दोआब के परगनों पर अपना अधिकार करने के लिए प्रयत्नशील था और इस दिग्विजय मे राव बहादुरसिंह एक प्रबल रोडा था। समकालीन इतिहास वृतो से ज्ञात होता है कि घासहरा अभियान के निम्न मुख्य कारण थे —

(१) सूरजमल को मथुरा, जलेसर, चौमुंहा, महावन मांढौली, टप्पल, सादाबाद आदि परगनो की फौजदारी प्राप्त हो चुकी थी। उत्तर पूर्व म ये परगने राव बहादुरसिंह की जागीर के सीमान्त परगने थे। सूरजमल अपने राज्य का विस्तार उत्तर मे मेवात तथा उत्तर–पूर्व म चकला कोइल क शाही परगनो पर भी करना चाहता था। सम्भवत सितम्बर, १७५२ ई० म सूरजमल ने राव बहादुरसिंह से सीमान्त क्षेत्र के बारे म बातचीत की थी। पलवल मे इन दोनो सरदारों मे आपसी वातचीत भी हुई थी, किन्तु बडगूजर की दृढता तथा हठधर्मी से वार्तायें दृढ विवाद म बदल गई और सूरजमल ने बडगूजर के विरुद्ध संघर्ष छेडने का इरादा कर लिया था।[2]

(२) फतेहअली-असद खा युद्ध (नवम्बर, १७४५) मे राव बहादुरसिंह ने असद खा का पक्ष स्वीकार करके जाटो के विरुद्ध युद्ध किया था।

(३) राव बहादुर सिंह का श्वसुर जाट शासक की ओर से नीमराना का हाकिम था। इसी काल में रेवाडी का राव गूजरमल[3] भी नीमराना के हाकिम

---

१ – डे० क्रॉनो०, पृ० ३३, हिंगणे दफ्तर, खड १, लेख ६० (२६ सितम्बर)।

२ – हेम चन्द्र राय, पृ० २०८।

३ – अनुमानत आठवीं शताब्दी में तिजारा (अलवर के उ० प० में ५४ किमी०) मे अहीरों (आभीरों) का राज्य था। रुडा सिंह अहीर सरदार ने सूर वंश के विरुद्ध सम्राट हुमायू को सहायता की थी। इससे प्रसन्न होकर हुमायू ने उसको रेवाडी के आसपास के गांव इनाम मे प्रदान कर दिए थे। (आभीर कुल दीपिका, पृ० १०५; खेडकर, पृ० १९२–३, कृष्णानन्द, पृ० ७०) रुडा सिंह ने रवाडी के समीप बोलनी नामक गांव आबाद किया और अहीरों ने यहां आबाद होकर जमींदारी अधिकार प्राप्त कर लिये। उसके पुत्र रामसिंह ने बोलनी मे गढ़ी का निर्माण कराकर जमींदाराना फौज संगठित की। उसने दो लुटेरा मेवातियों को पकडकर सम्राट अकबर के दरबार में प्रस्तुत किया। इससे अकबर ने उसको परगना रेवाडी की फौजदारी प्रदान करके सम्मानित

तथा जाटों का सहयोगी था, किन्तु बहादुर सिंह फर्रुखनगर व झज्झर का नवाब और सवाई माधो सिंह राव गूजरमल के शत्रु थे और वे अहीरों की शक्ति को कुचल कर रेवाड़ी तथा समीपवर्ती परगनों पर अधिकार करने का षडयन्त्र रच रहे थे। नादिरशाह आक्रमण के बाद सम्राट मुहम्मद शाह ने गूजरमल को राव बहादुर की उपाधि तथा पांच हजार जात का मनसब प्रदान कर दिया था और जिला नारनौल व हिसार में क्रमशः ५२, ५२ गांव जागीर में दिये थे। इस प्रकार उसकी जागीर में रेवाड़ी, झज्झर, दादरी, हांसी, हिसार, कानौद तथा नारनौल के प्रमुख नगर शामिल थे।[1] १७४३ ई० में राव गूजरमल ने २००,५७८ दाम (५००१६ रु०) के अन्य देहात इजारे में प्राप्त करके अपनी जागीर में शामिल कर लिए थे।[2] गुड़गांव जिला गजेटियर के अनुसार, सूरजमल के समय में राव परिवार का शक्ति सर्वोच्च सोपान पर पहुँच चुकी थी।[3] १७५० ई० में नीमराना के हाकिम ने अपने दामाद के आग्रह पर राव टोडरमल को अपनी हवेली पर आमन्त्रित करके हत्या करवा दी।[4] उसका पुत्र भवानी सिंह सुस्त तथा कर्तव्य पालना के प्रति उदासीन था। उसने अपने पिता के खून का बदला लेने के लिए सूरजमल से आग्रह किया।[5]

---

* किया। (आभीर, पृ० १०५-६, खेड़कर, पृ० १६३; कृष्णानन्द, पृ० ७०) राम सिंह का पुत्र शाहबाज सिंह तथा प्रपौत्र नन्दराम था। नन्दराम की मृत्यु (१७१३ ई०) के बाद उसके ज्येष्ठ पुत्र बाल किशन ने उत्तराधिकार प्राप्त किया। बाल किशन औरंगजेब की सेवा में था। नवम्बर २६, १७०१ ई० (रज्जब ६, हि० ११११) को सम्राट ने उसको २००० जात/१००० सवार का मनसब प्रदान करके रावराजा की उपाधि प्रदान की थी। (फरमान) सम्राट मुहम्मदशाह ने उसको 'शेर बच्चा समशेर बहादुर' की उपाधि से सम्मानित किया था। करनाल युद्ध में उसने वीरगति प्राप्त की। (आभीर, पृ० १०६-११०; कृष्णानन्द, पृ० ७२, खेड़कर, पृ० १६३; गुड़गांवा जिला गजे०, पृ० २०) फिर सम्राट मुहम्मदशाह ने उसके भ्राता गूजरमल को उत्तराधिकार प्रदान किया।

१ – आभीर कुल दीपिका पृ० ११०; खेड़कर, पृ० १६३।
२ – सनद।
३ – गुड़गांवा जिला गजेटियर, पृ० २१।
४ – आभीर कु[ल] दीपिका, पृ० ११०।
५ – रा० हि० रि० ज०, खण्ड २, अंक १, पृ० २३।
—१७५८ ई० में कारिंदा तुलसीराम ने भवानीसिंह को मरवा कर समस्त जागीर पर अधिकार कर लिया था।

इस प्रकार सम्भवतः सूरजमल अपनी विस्तारवादी योजना के लिए लालायित हो उठा था।

(४) बलदेव सिंह सूर्यद्विज का मत है कि, "घासेड़ा के मीणा सूरजमल के ऊँटों को चुराकर ले गये थे। मांग करने पर राव बहादुर सिंह ने न तो ऊँटों को वापिस लौटाया और न लुटेरों को ही दण्ड दिया।[1] फलतः दो शक्तियों में शक्ति परीक्षण आवश्यक था।

राव बहादुर सिंह के विरुद्ध सूरजमल की नियुक्ति

वजीर सफदर जंग ने राव बहादुर सिंह की शक्ति को कुचलने तथा मन्ताजी के विरोध को नगण्य करने के लिए सूरजमल को आगरा प्रान्त के प्रमुख परगना प्रदान करने का प्रलोभन देकर मार्च १७५२ में दिल्ली बुलाया। जॉन कोहन के अनुसार वजीर ने सूरजमल के नाम परगना कोइल, खुर्जा, जिनकी वार्षिक आय एक करोड़ दाम थी, का पट्टा करवा दिया[2] और सम्राट अहमदशाह से आदेश प्राप्त करके सूरजमल को उसे दबाने के लिए नियुक्त किया। वजीर ने सूरजमल को एक शमशेर, ढाल, एक हाथी, घोड़ा तथा खिलअत प्रदान करके दिल्ली से विदाई दी। इस समय राव बहादुर सिंह गंगा स्नान के लिए गया था और वह ससैन्य कोइल के दुर्ग में रुक रहा था। सूरजमल ने उसको कोइल से निकाल कर घासेड़ा में घेरने की योजना पर विचार किया। फिर उसने ससैन्य कालिन्दी नदी पार करके समौगर में अपना पड़ाव डाला। राव बदनसिंह ने सूरजमल के आग्रह पर देशस्थ सेना के साथ कुंवर जवाहर सिंह को कोइल की ओर रवाना कर दिया। इस सेना ने यमुना नदी पार करके गोपाचल (गोकुल) में पडाव डाला। सूरजमल स्वयं समौगर से जावरा पहुँच गया। यह समाचार मिलते ही राव बहादुर सिंह कोइल दुर्ग को खाली करके बंगश तथा रामपुर के रुहेला सरदारों की सहायता प्राप्त करने की आशा से गंगापारी इलाके में चला गया। सूरजमल ने शीघ्र ही कूंच करके कोइल नगर पर अधिकार कर लिया और बहादुर सिंह को घेरने के लिए गंगा के प्रमुख घाटों पर घेराबन्दी की। फलतः बहादुरसिंह ने दिल्ली मार्ग से घासेड़ा को और कूच किया और वह सकुशल घासेड़ा पहुँच गया।[3]

प्रथम मुठभेड़

घासेड़ा का पक्का मजबूत दुर्ग तीन वर्ग किमी० की परिधि में बना था।

---

१ – बलदेव सिंह, पृ० ६०; वाक्या राज०, खण्ड २, पृ० ५७।

२ – जॉन कोहन, पृ० २१ ब; पे० द० स०, जि० २१, लेख ५७; ऐति० पत्र० व्यवहार, लेख ८६।

३ – सूदन, पृ० १०६–११०; बलदेव सिंह, पृ० ६०, वाक्या राज०, खड २, पृ० ५७।

इसके चारों ओर जल-प्लावित खाई थी। प्रत्येक बुर्ज-प्राचीर पर तोपें लगी थीं। दुर्ग मे गोला-बारूद तथा खाद्यान्नों का भारी जमाव (जखीरा) था और आठ सहस्र सैनिक थे। सूरजमल ने जवाहरसिंह को उत्तर दिशा से घेरा डालने को रवाना किया और स्वयं ने पूर्व दिशा की ओर से आक्रमण कर दिया। बहादुरसिंह ने अपने मामा को दक्षिण की ओर और जालिमसिंह (सुपेहल) को जवाहरसिंह के विरुद्ध तैनात किया। हाथीराम को पश्चिम की ओर, अपने मन्त्री को पूर्व की ओर भेजकर स्वयं ने तोपखाना का सचालन सभाल लिया था। भयकर गोलाबारी के बाद राव ने युद्ध की पोशाक धारण की। उसके साथ सात सौ सवार व चार सौ लडाकू पैदल थे। जब वह पूर्वी द्वार से बाहर निकला, तब मीर पनाह ने उसका सामना किया। भयकर मुठभेड के बाद राजपूतों ने भागकर दुर्ग में शरण ली। अब बहादुरसिंह का पुत्र अजीतसिंह आगे बढ़ा और राव ने तीक्ष्ण बाण-वर्षा की। जालिमसिंह का रामचन्द्र तोमर ने जमकर सामना किया। भयकर मुठभेड मे अजीतसिंह, जालिमसिंह तथा स्वयं राव बहादुरसिंह घायल हो गया। उनके पुत्र तथा बन्धु-बान्धव खेत रहे। हताश होकर राव किले मे लौट गया। इस प्रथम आक्रमण में बख्शीराम व सूरजमल के मामा सुखराम ने विजय प्राप्त की। इसी प्रकार तोपों की गडगडाहट के बीच आगे बढकर जवाहरसिंह के सैनिको ने गढ द्वार को घेरकर राव के अनेक मोर्चों को ध्वस्त कर दिया। सूरजमल ने साडनी सवार भेजकर अपने पुत्र को निर्देश दिये कि वह विवेक से काम ले। जो सैनिक जहा तक पहुँच सकें, वे वहीं रुके रहे। दिन में परिघा देकर मोर्चा बनायें और रात्रि को खदको मे रुक कर अपनी रक्षा करें। राव ने दुर्ग रक्षकों को दिन रात चौकन्ना रहने का निर्देश दिया। दुर्ग-प्राचीर से सारी रात गोला चलते रहे। जवाहरसिंह ने दुर्ग के समीप खदक खोदने के लिए बेलदार रवाना किये और सैनिकों की सुरक्षा के लिए परिघा बनवाये। इस प्रकार पन्द्रह दिन तक दुर्ग का घेरा चलता रहा।[1]

द्वितीय आक्रमण

प्रथम आक्रमण के बाद जाट सेनानायको ने मैदान बदल लिये। अब सूरजमल ने पश्चिम में तथा जवाहरसिंह ने दक्षिण में मोर्चाबन्दी की। उसने दुर्ग के पूर्वी द्वार पर हरलाल, दल्ला मेवाती, राव रतनसिंह (मेडू), पुहुपसिंह (जावरा) आदि और मीर महमद पनाह, मामा सुखराम व हरिनारायण को पाच सौ सवारो के साथ तैनात किया। जवाहरसिंह के नेतृत्व मे बख्शी मोहनराम, साहिबसिंह चौहान, राजा अजीतसिंह, चमूपाल हरवल (बैर), सेनपाल सूरतिराम, राव भवानीसिंह (रेवाडी) आदि प्रमुख सेनानायक तैनात थे। इन्होने दुर्ग को मुस्तैदी के साथ घेर

---

१ – सूदन, पृ० १११–११६।

लिया। जवाहरसिंह स्वयं अपने चाचाओं तथा अन्य भाई-बन्धुओं के साथ पृष्ठ भाग में मौजूद था और गुरु महन्त रामकिशन अपनी नागा जमात के साथ पृष्ठ भाग में था। इस प्रकार जाट सेनाओं ने कड़ी घेराबन्दी करके राव को समझौता वार्ता करने के लिए बाध्य कर दिया था।[1]

अन्त में राव बहादुरसिंह ने अपने भाई जालिमसिंह को समझौता-वार्ता करने के लिए सूरजमल की छावनी में रवाना किया। सूरजमल ने दूत का भारी सम्मान किया और युद्ध क्षतिपूर्ति के दस लाख रुपया नकद व समस्त तोप-रहकला समर्पित करने की माग की। राव ने बारह लाख रुपया नकद भुगतान करना स्वीकार किया, किन्तु उसने युद्ध-प्रसाधनों सहित समर्पण करने से मना कर दिया। यह निर्णय सुनकर जालिमसिंह ने रात्रि में आत्म हत्या कर ली।[2] फलत. सूरजमल के पास राव का निर्णय नहीं पहुँच सका। अन्त में सूरजमल ने मक्का के पुत्र अमरसिंह चाहर को राव बहादुरसिंह के पास वार्ता करने तथा आन्तरिक दुर्ग की व्यवस्था का भेद लेने के लिए रवाना किया। राव ने जाट वकील के समझाने पर जाटों को दस लाख रुपया इस शर्त पर भुगतान करना स्वीकार कर लिया कि उसके माल-असबाब को सुरक्षित दिल्ली पहुँचा दिया जावेगा ताकि वह इस माल को गिरवी (रहन) रखकर हुंडी प्राप्त कर सके। सूरजमल ने राव की इस शर्त को मान लिया और उसने खिदानन्द की देखरेख में बेशकीमती माल राव के पुत्र के पास दिल्ली पहुँचा दिया। बहादुरसिंह ने अपने पुत्र फतेहसिंह को लिखा कि वह पोद्दार (पोतेदार) से समस्त जिस सभाल ले और मराठा वकील बाबूराम से वार्ता करा दें। बाबूराम ने खिदानन्द को दस लाख रुपया भुगतान का वचन दिया, किन्तु यह राव बहादुरसिंह का एक कपट मात्र था।[3] जाटों ने अंतिम समय तक दुर्ग का घेरा नहीं उठाया।

अन्तिम आक्रमण तथा विजय, अप्रेल २३, १७५३ ई०

दीर्घकालीन घेराबन्दी से राव बहादुरसिंह के सेनानायक तथा सैनिक काफी परेशान हो चुके थे। अमरसिंह चाहर[4] ने अपने प्रयास से धाकेडा के सादुल्ला सहार मेवाती को वचन देकर अपनी ओर तोड लिया था। इससे राव की सैनिक शक्ति काफी कमजोर हो गई थी। अप्रेल २३, १७५३ ई०(वैशाख वदि ६, स० १८१०) को

---

१ – सूदन पृ० १२०–४, बलदेवसिंह, पृ० ६२-३।

२ – सूदन, पृ० १२५–७, बलदेवसिंह, पृ० ६४; वाक्या राज०, खण्ड २, पृ० ५८।

३ – सूदन, पृ० १२८–१३१।

४ – तहसील किरावली, जगनेर (जिला आगरा) का इलाका चाहरवाटी कहलाता है। सूर्यमल्ल मिश्रण ने चाहरवाटी को "सिदगिरि वाले जट्ट" लिखा है। (वंश भास्कर, पृ० २८८६) चाहर पाल मे हरिमोहन ने जन्म लिया था।

इसके चारों ओर जल-प्लावित खाई थी। प्रत्येक बुर्ज-प्राचीर पर तोपें लगी थीं। दुर्ग मे गोला-बारूद तथा खाद्यान्नो का भारी जमाव (जखीरा) था और आठ सहस्र सैनिक थे। सूरजमल ने जवाहरसिंह को उत्तर दिशा से घेरा डालने को रवाना किया और स्वयं ने पूर्व दिशा की ओर से आक्रमण कर दिया। बहादुरसिंह ने अपने मामा को दक्षिण की ओर और जालिमसिंह (सुपेहल) को जवाहरसिंह के विरुद्ध तैनात किया। हाथीराम को पश्चिम की ओर, अपने मंत्री को पूर्व की ओर भेजकर स्वय ने तोपखाना का सचालन सभाल लिया था। भयकर गोलाबारी के बाद राव ने युद्ध की पोशाक धारण की। उसके साथ सात सौ सवार व चार सौ लडाकू पैदल थे। जब वह पूर्वी द्वार से बाहर निकला, तब मीर पनाह ने उसका सामना किया। भयकर मुठभेड़ के बाद राजपूतों ने भागकर दुर्ग में शरण ली। अब बहादुरसिंह का पुत्र अजीतसिंह आगे बढ़ा और राव ने तीक्ष्ण बाण-वर्षा की। जालिमसिंह का रामचन्द्र तोमर ने जमकर सामना किया। भयंकर मुठभेड मे अजीतसिंह, जालिमसिंह तथा स्वय राव बहादुरसिंह घायल हो गया। उनके पुत्र तथा बन्धु-बान्धव खेत रहे। हताश होकर राव किले मे लौट गया। इस प्रथम आक्रमण में बख्शीराम व सूरजमल के मामा सुखराम ने विजय प्राप्त की। इसी प्रकार तोपो की गडगडाहट के बीच आगे बढकर जवाहरसिंह के सैनिको ने गढ़ द्वार को घेरकर राव के अनेक मोर्चों को ध्वस्त कर दिया। सूरजमल ने साडनी सवार भेजकर अपने पुत्र को निर्देश दिये कि वह विवेक से काम ले। जो सैनिक जहां तक पहुँच सकें, वे वहीं रुके रहें। दिन में परिघा देकर मोर्चा बनायें और रात्रि को खदकों मे रुक कर अपनी रक्षा करें। राव ने दुर्ग रक्षकों को दिन रात चौकन्ना रहने का निर्देश दिया। दुर्ग-प्राचीर से सारी रात गोला चलते रहे। जवाहरसिंह ने दुर्ग के समीप खंदक खोदने के लिए बेलदार रवाना किये और सैनिकों की सुरक्षा के लिए परिघा बनवाये। इस प्रकार पन्द्रह दिन तक दुर्ग का घेरा चलता रहा।[1]

द्वितीय आक्रमण

प्रथम आक्रमण के बाद आठ सेनानायको ने मैदान बदल लिये। अब सूरजमल ने पश्चिम मे तथा जवाहरसिंह ने दक्षिण में मोर्चाबन्दी की। उसने दुर्ग के पूर्वी द्वार पर हरनागर, दल्ला मेवाती, राव रतनसिंह (मेंढू), पुहुपसिंह (जावरा) आदि और मीर महमद पनाह, मामा सुखराम व हरिनारायण को पाच सौ सवारों के साथ तैनात किया। जवाहरसिंह के नेतृत्व में बख्शी मोहनराम, साहिबसिंह चौहान, राजा अजीतसिंह, चमूपाल हरबल (वैर), सैनपाल सूरतिराम, राव भवानीसिंह (रेवाड़ी) आदि प्रमुख सेनानायक तैनात थे। इन्होने दुर्ग को मुस्तैदी के साथ घेर

---

१ – सूदन, पृ० १११-११६।

लिया। जवाहरसिंह स्वयं अपने चाचाओं तथा अन्य भाई-बन्धुओं के साथ पृष्ठ भाग में मौजूद था और गुरु महन्त रामकिशन अपनी नागा जमात के साथ पृष्ठ भाग में था। इस प्रकार जाट सेनाओं ने कड़ी घेराबन्दी करके राव को समझौता वार्ता करने के लिए बाध्य कर दिया था।[1]

अन्त में राव बहादुरसिंह ने अपने भाई जालिमसिंह को समझौता-वार्ता करने के लिए सूरजमल की छावनी में रवाना किया। सूरजमल ने दूत का भारी सम्मान किया और युद्ध क्षतिपूर्ति के दस लाख रुपया नकद व समस्त तोप-रहकला समर्पित करने की माग की। राव ने बारह लाख रुपया नकद भुगतान करना स्वीकार किया, किन्तु उसने युद्ध-प्रसाधनों सहित समर्पण करने से मना कर दिया। यह निर्णय सुनकर जालिमसिंह ने रात्रि में आत्म हत्या कर ली।[2] फलतः सूरजमल के पास राव का निर्णय नहीं पहुँच सका। अन्त में सूरजमल ने मंझा के पुत्र अमरसिंह चाहर को राव बहादुरसिंह के पास वार्ता करने तथा आन्तरिक दुर्ग की व्यवस्था का भेद लेने के लिए रवाना किया। राव ने जाट वकील के समझाने पर जाटों को दस लाख रुपया इस शर्त पर भुगतान करना स्वीकार कर लिया कि उसके माल-असबाब को सुरक्षित दिल्ली पहुँचा दिया जावेगा ताकि वह इस माल को गिरवी (रहन) रखकर हुंडी प्राप्त कर सके। सूरजमल ने राव की इस शर्त को मान लिया और उसने चिदानन्द की देखरेख में बेशकीमती माल राव के पुत्र के पास दिल्ली पहुँचा दिया। बहादुरसिंह ने अपने पुत्र फतेहसिंह को लिखा कि वह पोद्दार (पोतेदार) से समस्त जिस संभाल ले और मराठा वकील बाबूराम से वार्ता करा दें। बाबूराम ने चिदानन्द को दस लाख रुपया भुगतान का वचन दिया, किन्तु यह राव बहादुरसिंह का एक कपट मात्र था।[3] जाटों ने अंतिम समय तक दुर्ग का घेरा नहीं उठाया।

अन्तिम आक्रमण तथा विजय, अप्रेल २३, १७५३ ई०

दीर्घकालीन घेराबन्दी से राव बहादुरसिंह के सेनानायक तथा सैनिक काफी परेशान हो चुके थे। अमरसिंह चाहर[4] ने अपने प्रयास से घासेड़ा के सादुल्ला सहार मेवाती को वचन देकर अपनी ओर तोड़ लिया था। इससे राव की सैनिक शक्ति काफी कमजोर हो गई थी। अप्रेल २३, १७५३ ई०(वैशाख वदि ६, सं० १८१०) को

---

१ – सूदन, पृ० १२०–४; बलदेवसिंह, पृ० ६२–३।

२ – सूदन, पृ० १२५–७; बलदेवसिंह, पृ० ६४; वाक्या राज०, खण्ड २, पृ० ५८।

३ – सूदन, पृ० १२८–१३१।

४ – तहसील किरावली, अछनेर (जिला आगरा) का इलाका चाहरवाटी कहलाता है। सूर्यमल्ल मिश्रण ने चाहरवाटी को "सिदगिरि वाले अट्ट" लिखा है। (वंश भास्कर, पृ० २८८६) चाहर पाल में हरिमोहन ने जन्म लिया था।

जाट कुंवर सूरजमल ने रात्रि के अन्तिम प्रहर (सूर्योदय से दो घण्टा पूर्व) में दुर्ग पर पूर्ण वेग, तत्परता तथा सावधानी से आक्रमण कर दिया। पदाति सैनिकों के नायक सैय्यद हमीद ने अपने भाई-बन्धुओं के साथ श्याम ध्वजा लेकर खाई पार कर ली और वह परकोटा पर चढ़ने में सफल रहा। सूरतराम, रूढिया गूजर, दौलतराम, सदाराम, ठाकुरदास आदि हाडी, हुक्का, बाण, बारूद की पोटली का सामना करते हुए हमीद के पीछे चल दिये। यद्यपि हमीद परकोट पर चढ़कर खेत रहा, किन्तु जाट सैनिकों ने दुर्ग प्राचीर को तोड़कर परकोट पर अधिकार करने में सफलता प्राप्त कर ली। अब जाट सैनिकों ने नगर में प्रवेश किया। वहां भारी हलचल, भगदड़ मच गई। प्रजा ने जाट शिविर में पहुँचकर प्राण रक्षा की। राव बहादुरसिंह के पास आन्तरिक दुर्ग में पांच सौ सैनिक शेष रह गये थे। बड़गूजर की दो पत्नियां जौहर कुण्ड में सती हो गई। मध्याह्न के बाद, राव दुर्ग से बाहर निकल पड़ा। उसके अनेक सैनिक खेत रहे या भाग गये। जब राव के साथ सौ सैनिक शेष रहे, तब शिवसिंह ने राव पर गोली चलाई और पृथ्वीसिंह ने बाण छोड़े। अन्त में राव पच्चीस (सूदन के अनुसार पांच) अंगरक्षकों के साथ खाई पार करने में सफल रहा। दल्ला मेवाती ने राव बहादुरसिंह को घेर लिया और उसका शिर उतारकर सूरजमल को प्रस्तुत किया।[1]

---

* इसके (१) मभा, (२) भोलाराम तथा (३) जसवन्त नामक तीन पुत्र थे। मभा अपनी नवयुवक टोली के साथ डीग तथा अन्य दोनों भाई कुम्हेर में आकर बस गये थे। मभा ने डीग के द० पू० में मऊ के समीप नगला बाहर आबाद किया जहां अभी तक उसके वंशज आबाद हैं। घासहरा युद्ध के बारे में अभी तक यह कहा जाता है कि—

'मभा के पूत भये, गढ़ में डाली फूट,
सात साक ते लौ दिये कोइल के रजपूत।'

बदनसिंह ने मभा को चौधरी की उपाधि प्रदान की थी।

—मेवाती लोकवार्ता से पता चलता है कि राव बहादुरसिंह ने सादुल्ला सहार से पूछा कि 'सहार, बोल गढ़ टूटेगा या नहीं।' सादुल्ला ने कहा कि साहब यह टूटेगा। राव ने उसको अनेक यातनायें दीं, फिर भी मेवाती सरदार अपनी बात पर जमा रहा और अन्त में गुस्से में मर कर कहा कि 'इस गढ़ में गीदड़ बोलेंगे'। (मरु भारती, वर्ष १७, अंक ३, पृ० ४६) वास्तव में अमरसिंह बाहर ने सादुल्ला सहार व उसके साथियों को आश्वासन देकर जाट पक्ष की ओर मिला लिया था।

१ – सूदन, पृ० १३१-१४१, बलदेवसिंह पृ० ६५।

— घासहरा अभियान, सतियो की गाथा अनेक काव्य तथा मेवाती लोकगीतों मे प्रतिध्वनित होती हैं। दरबारी इतिहासकार के शब्दो में, "सूरजमल ने बहादुरसिंह बड़गूजर व पैतृक गढ का तीन महीने तक घेरा डाला और दुर्ग पर अधिकार कर लिया। यहा पर जमकर युद्ध हुआ। दुर्ग प्राचीरो से छोडे गये गोनो मे एक हजार पाच सौ जाट सैनिक खेत रहे। अन्त में २३ अप्रेल को राव ने निराश होकर अपनी सभी पत्नियो को मार डाला। दुर्ग के द्वार खोल दिये और सादृश पच्चीस वीर लडाकू साथियो क साथ शत्रु पर टूट पडा। एक-एक करके सभी सैनिक काम आये।"[1] राव बहादुरसिंह का पुत्र फतेहसिंह दिल्ली मे था। इससे वह इस विनाशकारी युद्ध से बच गया और उसन मीर बख्शी इमादुल्मुल्क से मित्रता कर ली। आगे चलकर उसने इस मित्रता से लाभ उठाया। सूरजमल ने अमरसिंह चाहर को घासहरा का किलेदार तथा प्रबन्धक (हाकिम) नियुक्त किया तथा अन्य सेनानायको को पुरस्कृत किया। इसी बीच मे दिल्ली मे सम्राट तथा वजीर सफदर जग के बीच राजनैतिक मतभेद बढ चुके थे और वजीर सूरजमल को अपनी सहायता के लिए आमन्त्रित कर रहा था। इससे सूरजमल ने अपनी सेनाओ सहित दिल्ली की ओर प्रस्थान किया और १ मई को वजीर से मुलाकात की।[2]

४ – गृह युद्ध मे जाटो का योग, मार्च–नवम्बर १७५३ ई०

जाविद खा की हत्या के बाद वजीर सफदर जग का आचरण एक स्वार्थी तानाशाह की भाति हो चुका था। दुर्ग व शाही महलों में अपने अनुजीवियों को तैनात करके उसने सम्राट अहमदशाह को वन्दी बनाकर अपने नियन्त्रण म रखने का प्रयास किया।[3] राजनैतिक अधिकार अधिग्रहीत करन के लिए उसने तूरानी (मध्य-एशिया से आने वाले सुन्नी सरदार व परिवार) अमीर फीरोज जग, इन्तिजामुद्दौला तथा अन्य तूरानी सरदारों को पैतृक जागीरों का अपहरण करके अपना विरोधी बना लिया था।[4] देश की आन्तरिक व बाह्य आक्रान्ताओ से रक्षा के प्रति वजीर की उदासीनता व असमर्थता जन साधारण के लिए असन्तोष का कारण थी। राजधानी के आसपास मराठा दल लूटमार करते थे।[5]

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ४७ अ, ५२ ब, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २६४।
२ – ता० अहमदशाही, पृ० ५१ अ, सूदन, पृ० १५२, बलदेवसिंह, पृ० ६६।
३ – ता० अहमदशाही, पृ० ४२ ब, दे० कॉनो०, पृ० ३८।
४ – ता० अहमदशाही, पृ० १६ अ, ता० मुजफ्फरी, पृ० ६४।
५ – ता० अहमदशाही, पृ० ४४ अ-ब, ४५ अ, शाकिर, पृ० ३४-५।
—अक्तूबर २२, १७५२ ई० को ३५०० मराठा सैनिक दिल्ली पहुच गये थे। फरवरी, ६, १७५३ ई० को अन्ताजी माणकेश्वर चार सहस्र मराठा सवारों

नादिरशाह आक्रमण के समय सम्रादत खा तथा आसफजहा निजामुल्मुल्क के नेतृत्व में ईरानी–तूरानियो (सिया-सुन्नी) का दलगत साम्प्रदायिक झगड़ा विद्यमान था। अब दुर्रानी आक्रमण काल मे यह पुन. पनप उठा था। राजमाता उधमबाई अति निपुण थी। उसने षडयन्त्र रचकर इन्तिजामुद्दौला (मीर बख्शी), नवयुवक इमादुल्मुल्क, हिसाम खा, समसामुद्दौला, अकीबत महमूद खा तथा अन्य असन्तुष्ट अमीरो को संगठित करके वजीर विरोधी दल की स्थापना की। उधमबाई ने सफदर जग के लिए पदच्युत करके बलात् राजधानी से निकालने की सलाह सम्राट को दी। १८ मार्च को बादशाह ने अपनी अनुकम्पा प्रगट करने की भावना से वजीर को अपनी पगडी उतारकर भेंट की और वजीर ने पद छोडकर अवध जाने का प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया। फलतः २५ मार्च को सम्राट तथा राजमाता उधमबाई ने उसको बिदा की विधिवत रस्म के लिए व्यवहारिक खिलअत तथा भेंट भेजकर बिदा कर दिया था। [1]

बादशाह तथा वजीर सफदर जग के बीच छिडे गृह युद्ध तथा उसमे जाटों का योगदान का अध्ययन तीन प्रकरणो मे किया जा सकता है।

(क) २६ मार्च से ८ मई तक– जब उभय पक्ष अपने मित्र व साथियो को अपनी ओर मिलाने का प्रयास करते रहे।

(ख) ९ मई से ४ जून तक– वजीर के समथन मे सूरजमल का घटनास्थल पर पहुँचना और उभय पक्षो मे सशस्त्र सघर्ष।

(ग) ५ जून से ७ नवम्बर तक— युद्ध विभीषिका तथा सन्धि।

(क) प्रारम्भिक उपक्रम, २६ मार्च से ८ मई

अपनी सम्पत्ति व सामान के साथ वजीर सफदर जग ने अपना प्रथम पडाव

---

* के साथ आ गया था और उसने कालिका पहाडी पर डेरा डाल दिया था। तब बादशाह ने अन्ताजी को सन्तुष्ट करके अपने पक्ष मे कर लिया। इस पर सफदर जग ने शाही दरबार में नियुक्त मराठा राजदूत हिंगणे को धमकी दी कि यदि मराठा उसका विरोध करेंगे तो वह अकबराबाद (आगरा) प्रान्त का प्रबन्ध सूरजमल को सौंप देगा और उसकी सहायता से जमकर सामना करेगा अन्यथा उसका सहयोग करने की स्थिति में वह उनको दस लाख की जागीरें प्रदान कर देगा। अन्ताजी को हिंगणे के निर्देश पर सफदर जग का साथ देना पडा। (एति० लेख सग्रह, जि० १, लेख ८६)।

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ४६ अ ब, ता० मुजफ्फरी, पृ० ६५–६; हरिचरन, पृ० ४०८ ब, ४०९ अ, दे० क्रॉनी०, पृ० ४१; बयाने वाकई, पृ० १०९ ब, शाकिर, पृ० ७२।

तकिया मजनूं पर और फिर दिल्ली के उत्तर-पश्चिम मे नौ किमी० इस्माइल खां बाग मे डाला। वह कई सप्ताह तक इस आशा से घूमता रहा कि शायद सम्राट उसको पुन: बुला लेगा। इसी बीच मे तूरानी सरदार इन्तिजामुद्दौला व इमादुल्मुल्क दोनों ने ही सफदर जंग को अपना शत्रु घोषित करके दिल्ली मे सशस्त्र संघर्ष की तैयारियां प्रारम्भ कर दी।

नवयुवक इमादुल्मुल्क मे उत्कृष्ट संगठन क्षमता, अत्यन्त तीक्ष्ण-बुद्धि तथा लौह इच्छा शक्ति थी। इमाद ने मल्हार राव को बुलाने के लिए अपने वकील को पत्र के साथ रवाना किया, किन्तु पलवल व होडल के बीच मे सूरजमल के सैनिकों ने उसको लूट लिया और घायल करके बन्दी बना लिया। २६ अप्रल को इमाद ने मराठा वकील राव बापूराव महादेव हिंगणे से बातचीत करके अन्ताजी सहित चार सहस्र मराठा सैनिकों को अपने पक्ष मे शामिल कर लिया। रूहेला अफगान सरदारों को भी बादशाह की सहायता के लिए दिल्ली आने के लिए पत्र लिखे गये। दिल्ली के आसपास के सहस्रों जाट सिपाही भी अपने भाग्य की परख के लिए आकर भरती हो गये और उनको नियमित शाही सेना मे रखकर नगर व शाही दुर्ग की रक्षा का भार सौंपा गया। अधिकाश छोटे-बडे अमीर पच्चीस सहस्र सैनिकों के साथ उससे आकर मिल गये। ३० अप्रेल को वजीर सफदर जंग ने इन्तिजामुद्दौला, इमाद तथा अकीबत महमूद को गोली से उड़ाने का असफल प्रयास किया। इससे उभय पक्षों मे खुली शत्रुता प्रगट हो गई।[१]

सफदर जंग योग्य सेनानायक, जन्मजात नेता नहीं था। उसकी वीरता, जल्दबाजी तथा बुद्धिमानो की सलाह मूल्यहीन थी। वह दूरदर्शी योजना बनाने में कमजोर था। राजनयिक दूरदर्शिता तथा कूटनीतिज्ञ बुद्धिमत्ता का उसमे अभाव था। वजीर ने दिल्ली से निकलने के बाद अति संकट काल में सूरजमल को अपनी सहायता के लिए आमन्त्रित किया और सूरजमल के आने की आशा में उसने एक माह से अधिक का समय व्यर्थ ही बिता दिया। अनुदिष्ट परिभ्रमण के बाद उसने राजधानी के दक्षिण मे दस किमी० खिज्राबाद के समीप २२ अप्रेल को अपना शिविर डाला[२]।

---

१ – ता० अहमदशाही ५२ अ–ब; ता० मुजफ्फरी, पृ० ७०; ऐति०-पत्र व्यवहार, खंड २, लेख ८५; एति० लेख सग्रह, खण्ड १, पत्र ८६; हिंगणे, खंड २, पत्र २३।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० ५१ ब; मीराते आफताबनुमा, पृ०३५८, इ० डा० (बयाने वाकई), खण्ड ८, पृ० १३४।

नादिरशाह आक्रमण के समय सआदत खाँ तथा आसफजहा निजामुलमुल्क के नेतृत्व मे ईरानी–तूरानियो (सिया-सुन्नी) का दलगत साम्प्रदायिक झगडा विद्यमान था। अब दुर्रानी आक्रमण काल मे यह पुन. पनप उठा था। राजमाता उधमबाई अति निपुण थी। उसने षडयन्त्र रचकर इन्तिजामुद्दौला (मीर बख्शी), नवयुवक इमादुल्मुल्क, हिसाम खा, समसामुद्दौला, अकीवत महमूद खा तथा अन्य असन्तुष्ट अमीरो को संगठित करके वजीर विरोधी दल की स्थापना की। उधमबाई ने सफदर जग के लिए पदच्युत करके बलात् राजधानी से निकालने की सलाह सम्राट को दी। १८ मार्च को बादशाह ने अपनी अनुकम्पा प्रगट करने की भावना से वजीर को अपनी पगडी उतारकर भेंट की और वजीर ने पद छोडकर अवध जाने का प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया। फलत: २५ मार्च को सम्राट तथा राजमाता उधमबाई ने उसको विदा की विधिवत रस्म क लिए व्यवहारिक खिलअत तथा भेंट भेजकर विदा कर दिया था। [१]

बादशाह तथा वजीर सफदर जग के बीच छिडे गृह युद्ध तथा उसमे जाटों का योगदान का अध्ययन तीन प्रकरणो मे किया जा सकता है।

(क) २६ मार्च से ८ मई तक– जब उभय पक्ष अपने मित्र व साथियों को अपनी ओर मिलाने का प्रयास करते रहे।

(ख) ६ मई से ४ जून तक– वजीर के समर्थन मे सूरजमल का घटनास्थल पर पहुँचना और उभय पक्षो मे सशस्त्र सघर्ष।

(ग) ५ जून से ७ नवम्बर तक— युद्ध विभीषिका तथा सन्धि।

(क) प्रारम्भिक उपक्रम, २६ मार्च से ८ मई

अपनी सम्पत्ति व सामान के साथ वजीर सफदर जग ने अपना प्रथम पडाव

● के साथ आ गया था और उसने कालिका पहाडी पर डेरा डाल दिया था। तब बादशाह ने अन्ताजी को सन्तुष्ट करके अपने पक्ष मे कर लिया। इस पर सफदर जग ने शाही दरबार मे नियुक्त मराठा राजदूत हिंगणे को धमकी दी कि यदि मराठा उसका विरोध करेंगे तो वह अकबराबाद (आगरा) प्रान्त का प्रबन्ध सूरजमल को सौंप देगा और उसकी सहायता से जमकर सामना करेगा अन्यथा उसका सहयोग करने की स्थिति में वह उनको दस लाख की जागीरें प्रदान कर देगा। अन्ताजी को हिंगणे के निर्देश पर सफदर जग का साथ देना पडा। (एति० लेख सग्रह, जि० १, लेख ८६)।

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ४६ अ ब, ता० मुजफ्फरी, पृ० ६५–६, हरिचरन, पृ० ४०८ ब, ४०६ अ, दे० फ्रॉनी०, पृ० ४१; बयाने वाकई, पृ० १०६ ब, शाकिर, पृ० ७२।

तक्रिया मजनूं पर और फिर दिल्ली के उत्तर-पश्चिम मे नौ किमी० इस्माइल खां बाग मे डाला। वह कई सप्ताह तक इस आशा से घूमता रहा कि शायद सम्राट उसको पुन: बुला लेगा। इसी बीच मे तूरानी सरदार इन्तिजामुद्दौला व इमादुल्मुल्क दोनो ने ही सफदर जग को अपना शत्रु घोषित करके दिल्ली मे सशस्त्र संघर्ष की तैयारियां प्रारम्भ कर दीं।

नवयुवक इमादुल्मुल्क मे उत्कृष्ट सगठन क्षमता, अत्यन्त तीक्ष्ण-बुद्धि तथा लौह इच्छा शक्ति थी। इमाद ने मल्हार राव को बुलाने के लिए अपने वकील को पत्र के साथ रवाना किया, किन्तु पलवल व होडल के बीच मे सूरजमल के सैनिको ने उसको लूट लिया और घायल करके बन्दी बना लिया। २६ अप्रेल को इमाद ने मराठा वकील राव बापूराव महादेव हिंगणे से बातचीत करके अन्ताजी सहित चार सहस्र मराठा सैनिकों को अपने पक्ष में शामिल कर लिया। रूहेला अफगान सरदारों को भी बादशाह की सहायता के लिए दिल्ली आने के लिए पत्र लिखे गये। दिल्ली के आसपास के सहस्रों जाट सिपाही भी अपने भाग्य की परख के लिए आकर भरती हो गये और उनको नियमित शाही सेना में रखकर नगर व शाही दुर्ग की रक्षा का भार सौंपा गया। अधिकाश छोटे-बड़े अमीर पच्चीस सहस्र सैनिको के साथ उससे आकर मिल गये। ३० अप्रेल को वजीर सफदर जग ने इन्तिजामुद्दौला, इमाद तथा अकीबत महमूद को गोली से उडाने का असफल प्रयास किया। इससे उभय पक्षों मे खुली शत्रुता प्रगट हो गई। [१]

सफदर जग योग्य सेनानायक, जन्मजात नेता नहीं था। उसकी वीरता, जल्दबाजी तथा बुद्धिमानो की सलाह मूल्यहीन थी। वह दूरदर्शी योजना बनाने में कमजोर था। राजनयिक दूरदर्शिता तथा कूटनीतिज्ञ बुद्धिमत्ता का उसमे अभाव था। वजीर ने दिल्ली से निकलने के बाद प्रति संकट काल में सूरजमल को अपनी सहायता के लिए आमन्त्रित किया और सूरजमल के आने की आशा में उसने एक माह से अधिक का समय व्यर्थ ही बिता दिया। अनुदिष्ट परिभ्रमण के बाद उसने राजधानी के दक्षिण मे दस किमी० खिज्राबाद के समीप २२ अप्रेल को अपना शिविर डाला [२]।

---

१ – ता० अहमदशाही ५२ अ-ब; ता० मुजफ्फरी, पृ० ७०; ऐति०-पत्र व्यवहार, खंड २, लेख ८५; एति० लेख संग्रह, खण्ड १, पत्र ८१; हिंगणे, खंड २, पत्र २३।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० ५१ ब; मीराते आफताबनुमा, पृ०३५८, इ० डा० (बयाने वाकई), खण्ड ८, पृ० १३४।

जावे। मुझको पांच खिलअत भेज दी जावें, ताकि मै जिनको देना चाहू प्रदान कर सकूं। अन्यथा कल में अवश्य ही उनकी हवेलियों पर आक्रमण करूंगा। शाही किला भी मेरी दृष्टि में है।"[१] अब सशस्त्र संघर्ष तथा खुली मुठभेडो को नही टाला जा सकता था। अत. रुष्ट बादशाह ने ८ मई को समसामुद्दौला को मीर आतिश (दरोगा तोपखाना), ख्वाजा अहमद अनगा को किलेदार पद की खिलअत प्रदान कर दी। उसने मीर आतिश तथा इमाद को यमुना नदी की रेती मे लगी शाही अग्नि भित्तियो को आगे बढाने तथा रक्षा परिखा को शीघ्र ही पूरी करने का आदेश दिया। शाही शस्त्रागार से विभिन्न आकार-प्रकार की बन्दूकें निकालकर उनको सम्हलवा दी गई। फिर भी वजीर ने नागरिको के हित को देखकर आक्रमणकारियो पर खुले आक्रमण की आज्ञा नही दी।[२]

(ख) जटवाडा सिपाहियो द्वारा पुरानी दिल्ली की लूट (जाट गर्दी)

विगत सात सौ वर्ष तक जटवाडा (काठेड) व ब्रजमण्डल का सास्कृतिक विकास अवरुद्ध रहा और जनता ने अत्याचार, आर्थिक शोषण को सहन करके सामाजिक परम्परा तथा सस्कृति को बनाये रखा। मुस्लिम व मुगल जागीरदारो ने मदान्धता के साथ इस क्षेत्र मे भारी बरबादी की थी। सूरजमल हिन्दू धर्म और भारतीय सस्कृति का रक्षक था। उसके नेतृत्व मे सामाजिक एकता, सास्कृतिक विकास, राजनैतिक जागरूकता, प्रतिशोध की भावना ने जोर पकड लिया था। जाटो के राजनैतिक विकास तथा जाट राज्य के सस्थापन मे सभी क्षेत्रीय जाति, सस्था तथा संगठनो ने जाति, सम्प्रदायगत भेदभावो को भुलाकर भाग लिया था। सूरजमल का निर्देश मिलते ही हाथो मे लाठी, तलवार, भाले, बल्लम, फर्सा लेकर हजारो घारो ने दिल्ली अभियान मे भाग लेकर राजधानी मे भय, आतंक पैदा कर कर दिया था। उभय पक्षो मे बिना विराम तथा विश्राम के अनेक सशस्त्र मुठभेड हुई।

८ मई को दिल्ली मे पद-परिवर्तनो की सूचना मिलते ही वजीर सफदर जग ने सूरजमल तथा राजेन्द्र गिरि गुसाईं को पुरानी दिल्ली, लाल दरवाजा को लूटने का निर्देश दिया। पुरानी दिल्ली की इन बाहरी बस्तियो के खण्डहरो मे निर्धन परिवार आबाद थे। ९ मई को प्रातःकाल जवाहरसिंह के नेतृत्व में जटवाडा के वीर सैनिको, लूट के मोह से एकत्रित ब्रजवासियो ने लाल दरवाजा के समीप शहर के पूर्वी भाग, अनाज मण्डी तथा घरो को बुरी तरह लूट लिया। मजदूर, कारीगर, श्रमिक तथा

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ५३ अ, ब, दे० क्रॉनी० पृ० ४१।
२ – ता० अहमदशाही, पृ० ५४ ब; दे० क्रॉनी०, पृ० ४२, बयाने वाकई, पृ० ११० अ, (इ० डा०, खण्ड ८ पृ० १३५।

निर्धनों ने लुटने तथा घरो के बरबाद हो जाने के बाद शाहजहानाबाद मे शरण ली। १० मई को जाट लुटेरा दल पुनः सक्रिय हो गये और उन्होने पुरानी दिल्ली के बारह पुराम्रो (बस्तियों) को अपना लक्ष्य बनाया। सैय्यदवाड़ा, बीजल मस्जिद, पचकुई, तारकगज, जयसिहपुरा के समीप अब्दुल्ला नगर आदि बस्तियो को बुरी तरह लूटकर आतक फैला दिया था। इन क्षेत्रो में अधिकाश सम्पन्न तथा मध्यवर्गीय परिवार रहते थे। इन परिवारो ने अपनी सम्पत्ति, स्त्री तथा बालको की रक्षा मे हथियार उठाकर जाट लुटेरो का कडा विरोध किया, किन्तु लुटेरो की भारी भीड के कारण नागरिक उनको हटाने मे विफल रहे। तीसरे पहर साढे तीन बजे अन्ताजी माणकेश्वर तथा शादिल खा ने मराठा व बख्शी सैनिको के साथ शाही रक्षा पक्ति से यमुना तट पर राजेन्द्र गिरि गुसाईं पर आक्रमण किया। उभय पक्ष मे एक झडप हुई। शाही तोपखाना ने राजेन्द्र गिरि को पीछे हटने के लिए बाध्य कर दिया। इस प्रथम मुठभेड मे उसके बहुत से साथी काम आये। चार दिन तक लूट व विनाश का क्रम जारी रहा और महापराक्रमी जाट धारो ने पुराने शहर पर नियमित धावे बोले। जाटो के लोभ, निर्मम लूट के शिकार लाखो व्यक्ति शाहजहानाबाद के बाजार तथा गलियो मे झुण्डो मे घूमते थे। बादशाह ने साहिबाबाद चादनी चौक, तीस हजारी बाग तथा अन्य सरकारी उद्यान व विशाल मकानो को खोलकर इनकी सुरक्षा के अल्पकालिक प्रबन्ध किये।[1]

जाटों की इस लूट तथा बरबादी से बादशाह तथा वजीर के मध्य विद्यमान आपसी सम्बन्ध टूट गये। उस समय राजधानी मे सूफी सन्त, दार्शनिक, तत्वज्ञानी तथा विचारक शाह वली उल्लाह खा (१७०३–१७६२) ने एक "सियासी मकतब" की स्थापना कर ली थी और उसने "मुस्लिम धर्म, मुस्लिम समाज व मुस्लिम सस्कृति खतरे मे" का नारा बुलन्द किया। शाह वलीउल्लाह का दिल्ली तथा समीपस्थ मुस्लिम जनता तथा मुस्लिम वर्ग पर अधिक प्रभाव था और वह उनका धर्म गुरु था। उसने सम्राट पर भी प्रभाव जमा लिया था। सम्राट तथा राजमाता उधमबाई स्वय उसकी कुटिया पर गई। वहा उन्होंने प्रार्थना की, प्रसाद ग्रहण किया और सत्सग मे कुछ घटे व्यतीत किये।[2] इस सकट काल मे उसने सम्राट को आलस्य त्यागने, सेना में सुधार करके उसे शक्तिशाली बनाने, जाटो की जडों को उखाडने तथा बदमाशो (वजीर सफदर जग) का दमन करके एक उदाहरण प्रस्तुत करने की सलाह दी थी, ताकि अन्य अमीर धृष्टता या नीचता नहीं दिखला सकें। उसने कहा कि इससे इस्लाम की सेवा होगी तथा धर्म का प्रसार होगा। सच्चे मुसलमानो को

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ५३ ब०, ५४ ब; चहार, पृ० ४१० ब।
२ – सियासी मकतूबात, पत्र सं० १० पृ० ६८–६।

संरक्षण मिल सकेगा[१]। उसने इमादुल्मुल्क को भी संघर्ष छेड़ने की सलाह दी थी। साथ ही उसने अमीर तथा प्रमुख नागरिकों के पास भी कर्तव्य पालन करने के सन्देश भेजे।[२]

१३ मई को बादशाह ने सफदर जंग को प्रधान मन्त्री (वजीर) पद से च्युत करके इन्तिजामुद्दौला को कमरुद्दीन बहादुर, इतिमादुद्दौला की उपाधियों के साथ विधि पूर्वक वजीर नियुक्त किया और उसे सिरोपाव शमशेर की खिलअत दी। मीर बख्शी इमादुल्मुल्क को निजामुल्मुल्क आसफजहा की उपाधियां प्रदान करके सम्मानित किया गया। उसी दिन सम्राट ने वजीर सफदरजंग को राजद्रोही, स्वधर्म भ्रष्ट नमकहराम घोषित करके पड़ोसी जमींदार, ग्रामिल, राव-राजा, रुहेला-पठान, मेवाती, बारहा के सैय्यद तथा लुटेरा गूजरों के सरदारों को सगठित होकर युद्ध करने का निमन्त्रण भेजा। इमाद तथा उसके सलाहकार (व्यवस्थापक) अकीवत महमूद ने शाही सुरक्षा के साधन उपलब्ध कर लिये। ३० रुपये की अपेक्षा ५० रुपये अग्रिम वेतन तथा पचास रुपया प्रतिमाह वेतन, हाथी-घोड़ा, वस्त्र, हीरा-जवाहरात पुरस्कार में देने का प्रलोभन देकर मुगलिया तथा बदख्शी सैनिकों को अपने पक्ष मे भर्ती करके जिहाद (धर्मयुद्ध) की घोषणा कर दी।[३]

उसी दिन सफदर जंग ने भी लगभग तरह वर्षीय सुन्दर आकृति के एक नपुंसक (नादिर), जिसके वंश का भी पता नही था और जिसको कुछ समय पूर्व शुजा ने मोल लिया था,[४] को गद्दी पर आसीन किया। उसकी उपाधि 'अकबर आदिल शाह'' घोषित की गई और उसको कामबख्श का पोता बतलाया गया।[५] सफदर जंग स्वयं उसका वजीर बना। सआदत खां को मीर बख्शी नियुक्त किया गया और अन्य पद कृपापात्रों में बांटे गये। अकबर शाह के नेतृत्व मे सफदर जंग उसी दिन हाथी पर सवार हुआ। उसके आगे राजेन्द्रगिरि गुसाई तथा इस्माइल खां बारह सहस्र सवारों के साथ पंक्तिबद्ध खड़े थे। उनके आगे जवाहरसिंह के नेतृत्व में पंद्रह सहस्र सवार व हजारों पैदल धारें थीं। राजनैतिक तथा सैनिक दबाव डालने के लिए नवाब वजीर

१— सियासी मक्तूबात, पृ० ११५-६, हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेंट, भाग १, पृ० ५२२।

२— हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेन्ट, भाग १, पृ० ४६५।

३— ता० अहमदशाही, पृ० ५४ ब, ता० मुजफ्फरी, पृ० १५८, इमाद, पृ० ६०; सियार, खंड ३, पृ० ३३२, इ० डा० (बयाने वाकई), खण्ड ८, पृ० १३६।

४— ता० अहमदशाही, पृ० ५५ अ, सियार, खंड ३, पृ० ३२२; इ० डा०, खण्ड ८, पृ० १३५।

५— ता० अहमदशाही, पृ० ५५ अ; ता० आली, पृ० १५४ ब, सूदन, पृ० १६२।

ने राजधानी के बाहरी पुरों को पूरी तरह लूटने व बरबाद करने का जाट धारों को आदेश दिया। इनमे वजीर के तुर्की (क्जिलवाश) सैनिक भी शामिल थे। इस सेना तथा जाट धारों ने राजधानी के बारह पुरों को चारों ओर स घेर लिया। जाट सैनिक शहर के दरवाजो तक पहुँच गये और उन्होंने अरब सराय के समीप मुगल सैनिको को भगाकर शाही तोपखाना व शाही सामान को लूट लिया। अन्त मे वजीर ने क्रोधित होकर जाटो को दिल्ली की ईट से ईट बजाने, लूटने तथा बरबाद करने की खुली छूट दे दी।[१] पुरानी दिल्ली की इन बस्तियो की जनसख्या शाहजहानाबाद की बराबर या कुछ अधिक थी।[२] करोड़ो की सम्पत्ति लूटी गई। रात्रि मे ज्वाल-पुज भडकती थी। दिन मे लूटमार करके मकानो को बरबाद किया जाता था। समस्तपुरा, चूरानिया तथा धकीलपुरा को पूरी तरह बरबाद कर दिया गया। इन स्थानो पर एक दीपक भी नहीं जलता था।[३]

राजधानी की इस लूट, अग्निपात का लोमहर्षक, किन्तु अतिश्योक्ति पूर्ण वर्णन सुजान चरित मे मिलता है — "सोना-चादी, आभूषण, हथियार, मेवा, रग मसाले, वस्त्र, घोडा-ऊट, रथ-पालकी सभी वस्तुयें पूरी तरह लूट ली गई।"[४] जन जीवन, उनकी सम्पत्ति, महिलाओ का शील भी नही बच सका। दरवेशो के मकान भी जाट रामदल की लूट के शिकार बन गये थे। सफ्दर जग के आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शक शाह महमद जफर के पुत्र व उत्तराधिकारी ख्वाजा (शाह) मुहम्मद बासीन के यहा भी शरणागत सकुशल नही रह सके।[५] जाटो की इस विनाशक लूट, अत्याचार की लोक-कथायें दिल्ली निवासियो की स्मृति मे अन्य दो लूट अहमदशाह दुर्रानी की "शाहगर्दी" तथा पानीपत से पूर्व मराठो की 'भाऊगर्दी" के साथ "जाटगर्दी" उन्नीसवी शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों तक ताजा रही, जब सैय्यद गुलाम अली अपने ऐतिहासिक ग्रन्थ "इमादुस्सआदात" के लिए तथ्य सकलित कर रहा था।[६] इस प्रकार एक सप्ताह तक यह उपक्रम नियमित रूप से चला। अन्त मे वजीर ने सूरजमल को लूटमार बन्द करने का आदेश दिया और जवाहरसिंह के प्रयास से सभी लुटेरा 'रामदल" धारें छावनी मे लौट आई।[७]

---

१ – सूदन पृ० १६३, १६६; बयाने वाकई, पृ० २७८।
२ – सियार खण्ड ३, पृ० ३३४।
३ – ता० अहमदशाही, पृ० ५५ ब, चहार, पृ० ४१० अ; बयाने वाकई, पृ० २७८।
४ – सूदन, पृ० १६६–१७६।
५ – सियार, खण्ड ३, पृ० ३३४।
६ – इमाद, पृ० ६३ (जाटगर्दी शोहरत दारद)।
७ – सूदन पृ० १८१।

(ग) सफदर जंग के आक्रामक प्रयास : कोहटीला (कोटला फीरोजशाह) खाली करना

मीर बख्शी इमादुल्मुल्क ने अपनी सैनिक दृढता के लिए सफदर जंग को शिया तथा काफिर (खलीफा विरोधी, अधर्मी) प्रचारित करके सुन्नी सम्प्रदाय की कट्टरता से लाभ उठाया। उसने दिल्ली तथा देश के अन्य सुन्नी (प्रथम तीन खलीफाओं में विश्वास शील) मुस्लिमों का समर्थन व सहानुभूति प्राप्त कर ली थी। जिन परिवारों की सफदर जंग के प्रति सहानुभूति थी उनको शहरी गुण्डों ने लूटकर बरबाद कर दिया। दिल्ली में साहूकारों की हवेलियां जब्त कर ली गईं।[1] इस महान संकट काल में सफदर जंग की सम्पूर्ण सफलता की आशायें, अटूट विश्वास सूरजमल पर केन्द्रित था। इस घड़ी में शाही कोप की उपेक्षा करके जाटों ने अपनी अनन्य भक्ति, दृढ मित्रता तथा विश्वास को अन्तिम क्षण तक निभाया।[2]

अब सफदर जंग ने दिल्ली विजय की सैनिक योजना तैयार की और उसने अपनी अपार सम्पत्ति व परिवार को सूरजमल के एक सुरक्षित किले में भेज दिया। इसके बाद दिल्ली नगर, उसकी सड़कें सैनिक संघर्ष, रक्तपात का केन्द्र बन गईं।[3] अब जमकर युद्ध शुरू हो गया। १७ मई को जाट टुकड़ियों की सहायता से वजीर की सेना ने काबुली दरवाजे से पुरान शहर में प्रवेश किया और नई दिल्ली के दक्षिण में पांच किमी० कोटला फीरोजशाह में तैनात शाही सेना के बालाशाही दस्तों की मदद से प्रवेश पा लिया। मीर आतिश समसामुद्दौला के आदेश पर शीघ्र ही सादल खां व देवीदत्त ने अन्य गलियों से निकलकर उन पर धावा बोल दिया। सूर्यास्त तक जमकर युद्ध हुआ, जिसमें उभय पक्ष को भारी हानि हुई। सफदर जंग ने रात्रि में आक्रमण करके कोटला फीरोजशाह पर अधिकार कर लिया और इस्माइल खां ने कोटला की एक ऊंची बुर्ज पर तोपें चढ़ाकर उसके नीचे खंदकों में तैनात शाही सैनिकों पर गोला व गुब्बारे फेंके। कुछ गोले शाही दुर्ग व नगर में भी जाकर गिरे। दूसरी ओर नगर के दक्षिणी भाग में दिल्ली दरवाजे पर लगी विशाल शाही तोपों से खानजादा सैनिकों ने कोटला पर मार की। इन गोलों से कोटला की अनेक बुर्जियां, वप्र तथा प्राकार टूटकर गिरने लगे।[4] तोप युद्ध तथा दैनिक झड़पों के कुछ दिन बाद इस्माइल खां ने जाट सैनिकों की मदद से अपनी रक्षा पांत व खाईयों

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ५६ अ।

२ – कानूनगो पृ० ८५।

३ – सियार, जि० ३, पृ० ३३२।

४ – ता० अहमदशाही, पृ० ५५ ब, सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० ३१२, अवध, पृ० २४४।

को आगे बढ़ा लिया। उसने वजीर इन्तिजामुद्दौला की हवेली, जो दक्षिणी परकोटा के समीप एक कोण—बुर्ज से लगी हुई थी, पर अधिकार करने का विचार किया। शीघ्र ही परकोटा में नीत बुर्ज के निकट तक एक मकान से सुरग लगाकर बारूद बिछा दी गई। इसी बीच म बादशाह तथा इमाद के आमन्त्रण पर अपने भाग्य को सैनिक कसौटी पर कसने के विचार से नजीब खां रुहेला पठान दो सहस्र सवार व सात आठ सहस्र पैदल रुहेलो के साथ शाहजहानाबाद की ओर चल दिया था। मार्ग मे उसके साथ सहस्रो सैनिक आकर मिल गये थे। इस प्रकार पन्द्रह सहस्र सवार व पैदल सैनिको के साथ नजीब खा दो जून को शाहजहानाबाद पहुँच गया। इसी दिन दो सहस्र सवारो सहित जेता गूजर भी दिल्ली आ गया।[1]

बादशाह न नजीब खा का स्वागत किया और उसको नजीबुद्दौला का विरुद तथा पाच हजारी मनसब प्रदान करके शाही सेवा मे भरती कर लिया।[2] ५ जून को इस्माइल खा ने नगर की दक्षिणी प्राचीर पर धावा बोल दिया और प्रात काल सुरग म आग लगाई गई। बारूदी सुरग से प्राचीर बुर्ज का एक भाग तथा वजीर इन्तिजामुद्दौला की हवेली के समीप का एक मकान उड गया और दो सौ शाही सैनिक, इमाद के सेवक तथा बेलदार मलबे मे दबकर मर गये। इसी समय यमुना नदी की रेती से जवाहरसिंह के नेतृत्व मे जाट सैनिकों ने आक्रमण किया, जिसका

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ५६ ब; सियार, जि० ३, पृ० ३३२; नजीबुद्दौला पृ० ३६–४० ।

–१७०८ ई० के आसपास यूसफजई रुहेला अफगान वश में पेशावर से ८० किमी० दूर मनरी नामक ग्राम मे नजीब का जन्म हुआ था। वह भारत मे जीविकोपार्जन के लिए पदाति सैनिक के रूप मे आया और १७४३ ई० से पूर्व अली मुहम्मद खां रुहेला ने उसको अपनी सेना मे भरती कर लिया। एक वर्ष बाद ही पांच रुपया प्रतिमाह वेतन पर उसको जमादार बनाया गया। १७४५ ई० में रुहेला युद्ध में शाही सेना ने उसको बन्दी बना लिया। अपनी प्रथम पत्नी की मृत्यु के बाद नजीब ने डुण्डी खा युसुफजई रुहेला सरदार की पुत्री के साथ शादी कर ली थी और १७४८ ई० मे डुण्डी खां ने उसको रहेर के चौदह परगनों का प्रबन्ध स्थायी रूप से सौंप दिया। उसने अपनी विलक्षण कूट चातुर्य्य से शाही आमिलों से मिलकर सहारनपुर के आसपास अनेक गावों पर अधिकार कर लिया। १७५१ ई० मे उसने बगश—सफदर जग युद्ध मे भाग लिया। इसके बाद सादुल्ला खा ने उसको एक सहस्र सैनिको की कमान सौंप दी थी। गृह-युद्ध मे नजीब का भाग्य चमक उठा और आगे चलकर वह हिन्दुस्तान की राजनीति का सितारा बन गया (ता० मुजफ्फरी, पृ० ७३, नजीबुद्दौला, पृ० ३७–३९)।

२ – नजीबुद्दौला, पृ० ४०।

इन्तिजामुद्दौला की हवेली के मैदान से चार सहस्र तुर्की सैनिकों ने सामना किया और समीपस्थ शाही खाइयो मे आक्रमणकारियो पर गोलिया चलाईं। शीघ्र ही इमादुल्मुल्क, हाफिज बख्तावर खा, नजीब खा रुहेला तथा अन्य शाही मोर्चे पर आ धमके। नजीब के रुहेला सैनिको ने खाईयो से आगे बढ़ कर सफदर की सेना से जमकर भयकर संघर्ष किया। इससे सफदर के सैनिको को अपनी तोपें छोडकर पीछे हटना पडा, किन्तु इसी समय जवाहरसिंह के नेतृत्व में जाट व किजिलबाशो की सहायक कुमुक पहुँच गई। रामचन्द्र ने अग्र पक्ति का सचालन किया। इससे युद्ध मे तीव्रता आ गई और युद्ध भडक उठा। ठीक इसी समय शाही सेना की नई कुमुक पहुँच गई। रामचन्द्र गोलो का शिकार बन गया और उसका स्थान सूरतिराम ने सभाल लिया, किंतु वह भी गोली लगने से खेत रहा। जाटो ने अति बहादुरी से सामना करके वीरगति प्राप्त की। अन्त मे जवाहर स्वय आगे बढा और उसके करारे प्रहारो से रुहेला कमान ढीली पड गई। नजीब खा तथा उसका भाई गोली से घायल हो गये और तीन चार सौ रुहेला खेत रहे। सूर्यास्त से चार घडी शेष रहने पर युद्ध समाप्त हो गया और दोनो पक्ष अपनी-अपनी छावनी मे लौट गये। जाट शिविर म घायलो की देखभाल की गई और मृतको का सैनिक सम्मान के साथ यमुना तट पर सस्कार किया गया। सारी रात उभय पक्ष की ओर से तोप तथा गुब्बारे चलते रहे, किन्तु ६ जून को सूर्योदय से दो घन्टा (पाच घड़ी) पूर्व इस्माइल खा ने कोटला खाली कर दिया और वह अपने सैनिको सहित छावनी मे लौट आया। बख्शी बख्तावर खा के सैनिको ने कोटला फीरोजशाह तथा उस एक बडी तोप पर अधिकार कर लिया, जिसको इस्माइल खा अपने साथ नही ले जा सका। तब शाही सैनिको ने अपनी खाइयों व सुरक्षा परिखा को आगे बढाया और पुराने किले पर भी अधिकार कर लिया। यहा से उन्होंने सफदर जग शिविर पर गोला-बारी शुरु की। यह देखकर सूरजमल ने छावनी को पीछे हटाने की सलाह दी, ताकि शत्रु खुले मैदान मे आकर युद्ध कर सकें। फलत सफदर जग ने यमुना नदी के समीप से अपनी छावनी उठाकर दिल्ली के दक्षिण म ६ किमी० तालकटोरा पर डाली।[१]

ईदगाह युद्ध, १२ जून

कोटला फीरोजशाह युद्ध मे शाही सेनाओ की विजय नजीब खा रुहेला के

---

२ – ता० अहमदशाही, पृ० ५६ ब–५७ ब, बयानें वाक्ई, पृ० २७९–८०, (इ०डा०, खण्ड ८, पृ० १३८), सूदन, पृ० १८५–६, नूरुद्दीन पृ० ७–८, बलदेव सिंह पृ० ६६, वाक्या राज०, खण्ड २, पृ० ६१; सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० ३१३; अवध, पृ० २४५।

कुशल संचालन का परिणाम थी। अब सफदर जग ने तालकटोरा छावनी मे अनिश्चित दीर्घ संघर्ष की भूमिका पर विचार किया और इस्माइल खा, राजेन्द्र गिरि गुसाईं को हरावल की कमान सौंपी। सूरजमल ने अपने सेनानायक सूरतिराम गौड तथा पडित हरसुख (वैर) को जाट टुकडियो की कमान सौंप दी। नागा, बदख्शी तथा जाटो की एक-एक सहस्र की अनेक टुकडिया सगठित की गई और उनको शाही सैनिको को भडकाकर खुले मैदान में लाने के लिए नगर के अन्य पुरो व शाही भित्तिओ पर आक्रमण करने के लिए रवाना किया गया। उभय पक्षो मे स्थान स्थान पर अनेक मुठभेडें हुई। राजेन्द्र गिरि अपने वीर नागाओं के साथ शाही तोप भित्तिओ पर अचानक आक्रमण करता था। उसके वीर नागा शाही तोपचियो को तलवार के घाट उतार कर अपने स्थान पर लौट आते थे। इन दैनिक मुठभेडो मे सफदर जग के कुछ सैनिक नित्यश काम आते थे और जहा युद्ध होता, वहा अधिक हानि उठानी पडती थी। इस प्रकार सूरजमल का मित्र व सहयोगी मीर मुन्शी व करोरा गज याह्या खा ईदगाह को खाइयो पर तैनात था। उसने सूरजमल को ईदगाह पर आक्रमण करने के लिए भडकाया। १२ जून को सायकाल जाटो ने धौंसा बजाकर ईदगाह पर आक्रमण कर दिया, जहा जाट तथा शाही सैनिको मे जमकर मुठभेड हुई। इसमे जाटो को भारी हानि उठानी पडी। १३ जून को मीर बख्शी इमाद ने याह्या खा को गिरफ्तार करके उसकी हवेली के सामान को जब्त कर लिया।[1] इससे सूरजमल का एक मित्र कम हो गया।

राजेन्द्र गिरि की मृत्यु से सफदर जग को आघात, १४-१५ जून

१४ जून को प्रात. ६-३० बजे सफदर जग व शाही सेनाओ मे जमकर युद्ध हुआ। सफदर जग ने हाथी पर सवार होकर इसका सचालन किया। सूर्यास्त से ढाई घण्टा पूर्व जाट व किजिलबाश (टोपधारी) सवारो ने शाही खन्दको पर भारी हमला किया जिसका बदख्शी व मराठो ने जमकर मुकाबला किया। उनको भारी हानि उठानी पडी। इसी घोर सग्राम की अवधि में इमाद स्वय ईदगाह की रक्षा परिखा से नई कुमुक लेकर पहुँच गया और दोनो ओर से बन्दूकची युद्ध चला। जाट सेनापति सूरतिराम गौड गोली लगने से घायल हो गया। पडित हरसुख ने अपने सैनिकों को आगे बढाकर सघर्ष किया। अन्त मे अन्धकार बढते ही शाही सैनिक पीछे हट गये और जाटों के हाथ सफलता लगी। राजेन्द्र गिरि ने काली पहाडी पर धावा बोल दिया था। उसके अचानक गोली से घातक घाव लगा और दूसरे दिन

---

१ – तारीखे अहमदशाही, पृ० ५८ अ, सूदन, पृ० १६०।

(१५ जून) प्रातः उसकी मृत्यु हो गई।[१] इसका सफदर को भारी आघात लगा और उसने दस दिन तक युद्ध स्थगित करके शोक मनाया। फिर सफदर जंग ने उसके पट्ट शिष्य उमराव गिर को घोड़ा व सिरोपाव प्रदान करके नागा बैठक पर आसीन किया।[२]

सफदर जंग की सैनिक शक्ति का ह्रास

युद्ध स्थगन (१५–२५ जून) का समय नवाब सफदर जंग की सैनिक शक्ति के ह्रास का प्रतीक था। नवाब के अनेक फौजी अफसर व रिश्तेदार उसका पक्ष त्यागकर दिल्ली चले गये। २७ जून को मीर बख्शी सलावत खां का भतीजा शेर जंग भी शिविर को छोड़कर बादशाह के दरबार में चला गया और उसने बादशाह तथा वजीर इन्तिजामुद्दौला को सूचित किया कि "सफदर जंग की सेना हतोत्साहित निश्चेष्ट व निष्प्राण हो चुकी है। इस समय सूरजमल के अलावा अन्य कोई शक्तिशाली उमराव उसके शिविर में नहीं रहा है और वह भी शांति समझौता वार्ता के लिए उत्सुक है। सूरजमल की यह शर्त है कि उसको लिखित पत्र द्वारा क्षमा प्रदान कर दी जावे और अधिकृत सभी प्रदेश उसके प्रबन्ध में यथावत रहने दिये जावें।" निःसन्देह जाट सरदार सूरजमल नवाब की आर्थिक व सैनिक स्थिति को समझता था। समीपस्थ किसी अन्य राजा, जमींदार या नवाब से किसी भी प्रकार की सहायता मिलना असम्भव था। इसी से सूरजमल ने युद्ध की धमकी के साथ वजीर इन्तिजामुद्दौला के पास शांति समझौता का सामयिक प्रस्ताव भेजा था और वजीर ने भी काफी सोच विचार के बाद सावधानी के साथ समझौता वार्ता प्रारम्भ कर दी थी। २७ जून को सम्राट ने राजा देवीदत्त को छ हजारी का पद तथा माही मरातिब प्रदान करके सम्मानित किया। फिर सम्राट के निर्देश पर देवीदत्त ने सूरजमल से समझौता वार्ता की शर्तों पर बातचीत करने के लिए मथुरा के भूतपूर्व नायब फौजदार को जाट छावनी में भेजा। उसने रात्रि में सूरजमल से वार्ता की और प्रातःकाल उसके पत्र के साथ राजा देवीदत्त के डेरो पर लौट गया। एक मात्र इमादुल्मुल्क शांति समझौता की अपेक्षा युद्ध से अंतिम निर्णय के पक्ष में था। सम्राट अहमदशाह साहसहीन था और वह मीर बख्शी इमादुल्मुल्क से वैर मोल नहीं

---

१ – सूदन, पृ० १६०–१, ता० अहमदशाही, पृ० ५८ ब; ता० मुजफ्फरी, पृ० १५७ ब, सियार, खण्ड ३, पृ० ३३३, दे० क्रॉनो०, पृ० ७८।

—इमाद के अनुसार, "इस्माइल खां के भड़काने पर एक आदमी ने गोली चलाई (पृ० ६४), जबकि गुलिस्ताने रहमत (पृ० ४६) के अनुसार इस युद्ध में नजीब खा को गोली लगी।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० ५६ ब, सूदन पृ० १६१।

ले सकता था। फलत: बादशाह व वजीर ने सूरजमल के प्रस्ताव पर विचार करना बंद कर दिया।[१]

बख्शी गोकुलराम गौड का प्राणोत्सर्ग, १ जुलाई

उभय पक्ष के सैनिकों मे निरयशः झड़पें होती रहती थीं। १ जुलाई को नवाब सफदर जंग ने नागा महन्त उमराव गिर व अनूप गिर गुसाईं को नागा जमात के साथ युद्ध लडने के लिए रवाना किया। ईदगाह युद्ध मे बख्शी गोकुल राम गौड का भ्राता सूरतिराम गौड अधिक घायल हो गया था, इससे वह बदला लेने के लिए अति उत्सुक था। सूरजमल ने उसको जाट सैनिकों के साथ शाही सैनिकों पर हमला करने की आज्ञा प्रदान कर दी थी। शाही सेना ने अपनी तोपों की रक्षा पंक्ति की छाया मे जाटो का सामना किया। अन्त मे जाटो की करारी मार से उनके पैर उखड गये। जाटो ने उनका निरन्तर पीछा किया। इस भागदौड में अचानक ही जाट बख्शी गोकुलराम गौड गोली का शिकार हो गया। प्राण विसर्जन से पूर्व उसने कहा, "यहा तो भाडा फूट रहा है, शत्रु की अर्गलि रोकना सम्भव नही है।" इसके बाद मेघराज जाट बख्शी के पार्थिव शरीर को घोडे पर लादकर शिविर में ले आया। सूरजमल भी काफी उदास हो गया।[२] जाट बख्शी की मृत्यु ने सफदर जंग को बाध्य कर दिया कि वह अपनी छावनी को अब सुरक्षित स्थान की ओर ले जावे।

तिलपत की ओर प्रस्थान

सफदर जंग सूरजमल के डेरों पर बातचीत करने पहुँचा। सूरजमल ने कहा "शत्रु को शहर व किलो की सुरक्षा मे शक्ति मिल रही है और उसे इन स्थानो पर पराजित करना कठिन हो गया है। हमारे शिविर मे खाद्यान्न, हरी सब्जी, उपलब्ध नहीं हो रही है। शत्रु को मैदान मे लाने के लिए यहा से पीछे हटना ही उचित रहेगा।" सफदर जंग ने सूरजमल की सलाह को मानकर रक्षा परिखा छोड दी और चिरागे दिल्ली मार्ग से एक-दो पडाव डालते हुए १९ जुलाई को तिलपत (दिल्ली के द०पू० में २६ किमी०) की ओर कूच कर दिया। उसने इसी दिन बदरपुर तथा फरीदाबाद के बीच अपना शिविर डाला।[३] शाही सैनिकों को रोकने के लिए सूरजमल ने अपनी जाट टुकडिया दिल्ली की ओर रवाना कर दी थीं। समकालीन दरबारी इतिहासकार के शब्दो में— "प्रात काल उभय पक्ष की सेनायें आमने-सामने

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ५८ अ, ५९ ब, पृ० ६० अ–ब, ६३ अ–६४ ब; सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० ३११; अवध, पृ० २४७।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० ६१ अ, ब, सूदन, पृ० १६२–३; अवध, पृ० २४७।

३ – उपरोक्त, पृ० ६६ ब, सूदन पृ० १६४।

खड़ी हो जाती थीं और उनमें साधारण झड़पें होती थीं। शाम तक गोलाबारी चलती थी। अन्धकार बढ़ते ही दोनो ओर के सैनिक अपने डेरों मे लौट पडते थे। सफदर जग क्रमश. पीछे हटता जा रहा था और मराठा सवार उसके पृष्ठ भाग में लूटमार कर रहे थे। इस प्रकार युद्ध लम्बा होता चला गया। [1] राजधानी मे सैनिक क्षमता निरंतर बढ रही थी। इस समय राजधानी में तेईस सहस्र बदख्शी मुगल सवारो के अलावा सत्तावन सहस्र अन्य सहयोगियो की सेनायें एकत्रित हो चुकी थीं। कुल मिलाकर शाही सेना की सैनिक शक्ति अस्सी सहस्र के आसपास थी। [2] जबकि सफदर जग मुख्यत सूरजमल की सैनिक क्षमता पर निर्भर था।

इमाद व नजीब खा दोनो खुला आक्रमण करना चाहते थे, किन्तु सम्राट उसको टालता ही रहा। इन्तिजामुद्दौला साहसी सैनिक, सैन्य सचालक नही था और उसको यह आभास होने लगा था कि इमाद उसको सैनिक बल से दबा देगा। इमाद ने आगे बढकर सफदर जग द्वारा खाली की गई भूमि पर कब्जा कर लिया था। अब खिज्राबाद तथा कालिका देवी पहाडी पर भी उनका अधिकार हो गया था। शाही सैनिक अब लूटमार करने लगे थे। इससे ११ जुलाई को नजीब खा व बहादुर खा बलूच ने सम्राट से खुला युद्ध करने का आग्रह किया। १६ जुलाई आक्रमण की तिथि निश्चित की गई। सम्राट से इस तिथि को भी टाल दिया। इससे निराश होकर रुहेला, बगश व बलूचो ने मिल कर सूरजमल की छावनी के निकट मैदान गढी का घेरा डाला और उस पर अधिकार करने का प्रयास किया। समाचार मिलते ही सूरजमल ने अर्द्ध रात्रि को राव बल्लू चौधरी को अपने डेरो पर बुलवाया और जवाहरसिंह के नेतृत्व मे रात्रि के अन्तिम पहर मे रुहेलो पर आक्रमण करने का आदेश दिया। फलत २५ जुलाई को बीस जाट सरदारो ने पाच छ सहस्र जाट सैनिको के साथ मैदान गढी के समीप रुहेलो पर अचानक हमला कर दिया। दिन निकलने के बाद सूरजमल स्वय पीछे से पहुँच गया और उसने कहा, "आज शत्रु जीवित मैदान छोडकर नही जाने पावें।" कई घण्टो तक जमकर युद्ध होता रहा, किन्तु किसी भी पक्ष ने यथान या पराजय स्वीकार नही की। युद्ध मे ठाकुर दास सेंगर खेत रहा और श्यामसिंह की जाघ मे घाव लगा। हरिनारायन ने सवारो के झुण्ड मे प्रवेश कर भयकर युद्ध किया। जाटों ने गोलियो तथा तीरो की अचूक

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ६१ ब।

२ – उपरोक्त, पृ० ६३ ब–६२ ब, ६४ ब, ६५ ब, सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० ३१५ पा० टि०, पृ० ३२४।
—डा० आशीर्वादीलाल का अनुमान है कि शाही सैनिको की सख्या एक लाख थी। (अवध, पृ० २४७), खतूत, जोधराज के अनुसार सम्राट के पास डेढ़ लाख सवार एकत्रित हो गये थे, स० ३६७/३६०, जुलाई २१, १७५३।

निशानेबाजी से रुहेलो को मैदान छोडकर भागने के लिए बाध्य कर दिया और उनकी तोपों, रहकला तथा हथियारो पर अधिकार कर लिया। २६ जुलाई को सूरजमल ने विजयी सैनिकों को पुरस्कृत करके सम्मानित किया। इसी दिन इमाद ने रणक्षेत्र से भागकर बादशाह से जमकर युद्ध करने का आग्रह किया, किन्तु उसे इस बार भी निराश होना पडा। [१]

सफदर जग के आमन्त्रण पर माधोसिह २६ मई को दिल्ली की ओर प्रस्थान करना चाहता था, किन्तु संघर्ष की स्थिति का समाचार मिलने पर वह रुक गया था। फिर १६ जुलाई को उनकी ओर से बाल मुकुन्द साहूकार ने सम्राट से भेट की। इसी समय सूरजमल ने कुवर जवाहरसिह को सीहमल वकील के साथ कछवाहा नरेश से बातचीत करने जयपुर रवाना कर दिया था। ७ अगस्त को उनकी माधोसिह से भेट हुई और आपसी वार्ता के बाद ११ अगस्त को उनकी विदाई दी गई। [२]

तुगलकाबाद से यमुना तट तक संघर्ष

दिल्ली मे शाही सैनिकों ने अपने बकाया वेतन के लिए काफी शोरगुल मचा रखा था, फिर भी कोई निष्कर्ष नही निकल सका। ३० जुलाई को किजिलबाश तथा नागा सेना बदरपुर की नहर तक जा धमकी और साधारण भडप के बाद शिविर मे लौट आई। उन्नीस दिन तक आपसी भडपें पुनः रुक गईं। तब जाट गुप्तचरो ने सूरजमल को शाही सैनिको की अग्र पंक्ति की स्थिति की पूर्ण जानकारी दी। शीघ्र ही सफदर जग ने अपने सैनिको को व्यवस्थित किया और सूरजमल ने अपने जाट सैनिको को तुगलकाबाद से यमुना तट तथा कालिका पहाडियों तक लगभग ६ किमी० से अधिक लम्बी पट्टी तक फैला कर १६ अगस्त को दिन के तीसरे पहर में अचानक आक्रमण कर दिया। स्थान-स्थान पर जमकर युद्ध हुआ। नजीब खा रुहेला-पठान व जाटो ने अपने जातीय गुणों के अनुसार लडकर ख्याति प्राप्त की। एक स्थान पर जाट-मराठो मे भारी सघर्ष हुआ, जिसमे घमण्डी राम पुरोहित घायल हो गया। फिर भी उसने जमकर लोहा लिया। सूरजमल ने जब इस ओर ध्यान दिया, तो वह स्वय नई कुमुक के साथ आ धमका और मराठा सैनिक मैदान से हट गये। सूरजमल अपने पुरोहित घमण्डीराम को लेकर सूर्यास्त के समय अपने डेरो पर लौट आया। इस प्रकार इस दिन के युद्ध मे कोई निश्चित निर्णय

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ६६ अ, ब, ७० अ; सुदन, पृ० १६४–६, सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० ३१६, अवध, पृ० २४८।

२ – द्रा० खरीता व परवाना, ब० ५, सेरा ७०३; द० कौ०, जि० ७, पृ० ३७८, ५६८।

नहीं हो सका। अन्ताजी माणकेश्वर के अनुसार इस युद्ध में अग्र पंक्तियों में तैनात मराठों की शूरवीरता से मीर बख्शी को विजय मिली परन्तु सूरजमल के सैनिकों ने भी अदम्य उत्साह व वीरता दिखलाई। सूरजमल के बर्छी का एक घाव लगा और अन्त में शत्रु पक्ष पीछे हट गया।[1]

२० अगस्त को प्रातःकाल सफदर जंग ने फरीदाबाद से अपनी छावनी उठा ली और सूरजमल के परामर्श पर ३० अगस्त को सिकरी से १४ किमी० दूर (बल्लमगढ के दक्षिण में ५ किमी०) अपनी छावनी डाली। यहां जाटों ने खदकें खोद ली तथा रक्षा परिधा तैयार की। मीर बख्शी इमाद ने सादिल खां, नजीब खां, बहादुर खां बलूच व जेता गूजर को बीस सहस्र सेना सहित बदरपुर की ओर जाने का निर्देश दिया।[2] खाली स्थानों पर अधिकार करके इमाद ने बल्लमगढ़ पर अधिकार करने की योजना बनाई।

शाही सैनिको का विद्रोह : सूरज सफदर के कूट प्रयास, सितम्बर १७५३

चार माह के दीर्घकालिक गृह–संघर्ष मे शाही पक्ष को आशातीत सफलता नहीं मिल सकी। दैनिक व्यय के लिए सैनिक खाइयो मे निकल कर लूटमार करते थे। वजीर इन्तिजामुद्दौला व मीर बख्शी इमादुलमुल्क मे घातक ईर्ष्या फूट पडी थी। पारस्परिक सहयोग, सद्भाव की अपेक्षा एक दूसरे को नीचा दिखलाने की भावना, कूटनीतिक प्रवंचना बढ चुकी थी। वास्तव मे सूरजमल ने अपने कूट प्रयासो से दो मन्त्रियों मे अलगाव पैदा कर दिया था। प्रायः दोनो वरिष्ठतम मन्त्री बादशाह को अलग-अलग राय देते थे। सम्राट विद्रोही सरदारो तथा उनके सैनिकों को प्रायः सतुष्ट करने का प्रयास करता था।[3] दरबारी इतिहासकार के अनुसार सम्भवतः इसी समय इमाद ने अपनी सेनाओ के व्यय के लिए सम्राट से बल्लमगढ़ का परगना भी प्राप्त करने का आश्वासन प्राप्त कर लिया था। इस पर जाटों का नियन्त्रण व अधिकार था।[4] २६ अगस्त को इमाद ने खिज्राबाद से प्रस्थान किया और किसनदास तालाब (दिल्ली के दक्षिण मे १६ किमी०) पर डेरा डाला। २७ को बदरपुर और १ सितम्बर को फरीदाबाद के उत्तर में आ धमका। जब वह अपनी सेना से तीन किमी० दूर था, तब उसके अग्र दस्तो ने फरीदाबाद नगर में लूटमार

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ६७–६; बै० कॉमी.पृ० ४१; सूदन, पृ० २००–२०६; भा० इ० स० मडल पत्रिका, खण्ड ३ (१६२४), लेख २–४; म०ए० पत्रे वगैरा, बाबूराव बाबा के नाम अन्तजी का पत्र, भाद्रपद वदि एकादशी।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० ७० अ; सूदन, पृ० २०७।

३ – उपरोक्त, पृ० ७२ ब, ७३ ब, ७४ ब।

४ – उपरोक्त, पृ० १०३ ब।

शुरू की। उन्होने सभी नागरिकों को बुरी तरह लूटा। इन सैनिको ने इमाद के निर्देशो की खुली अवहेलना की। नागरिक प्राण रक्षा के लिए भाग निकले। उनको मार्ग मे शाही व जाट सैनिकों ने लूट लिया। रुहेला, अफगान व गूजर सैनिक भी खाद्यान्न की कमी के कारण भूखो मर रहे थे। इससे नजीब, बलूच तथा गूजर सरदारों ने भी विद्रोह कर दिया और वे बारापुला पहुँच गये। नजीब ने इमाद के अस्तबल को लूट लिया तथा सम्राट मुहम्मदशाह के सर्व श्रेष्ठ व प्रिय हाथी "कोह-ए-रवान" पर अपना अधिकार कर लिया।[१] दूसरे दिन (२ सितम्बर) को शाही तोपची भी खदको को खाली करके इन लुटेरो मे शामिल हो गये और उन्होने बारापुला नगर में लूटमार की।[२]

इस सैनिक विद्रोह तथा अराजकता का समाचार मिलने पर ६ सितम्बर को सूरजमल ने अपने सेनानायकों के साथ पाच-छ सहस्र जाट सैनिको को आक्रमण करने के लिए रवाना किया और उन्होंने १३ किमी० तक फैलकर शत्रु की खदको पर साहसिक आक्रमण किया, किन्तु इसी समय इमाद अपने बीस सहस्र सैनिको के साथ शीघ्र ही आगे बढ़ आया। बैरीसाल के पुत्र मोहकमसिंह ने गोल में प्रवेश करके भयकर युद्ध किया किन्तु वह गोली का शिकार बन गया। उसके सैनिक पीछे हटने लगे, तब बलराम ने वहा पहुँचकर स्थिति को सम्भाल लिया। अन्धकार होते ही बलराम नाहरवार मोहकम के पार्थिव शरीर के साथ डेरों पर लौट गया। इसी समय मराठा सवारो ने जाट प्रदेश में घुसकर लूटमार की, किन्तु उनको निराश होकर पीछे हटना पड़ा।[३] तब सूरजमल ने शाही सेना के लिए जाने वाले खाद्यान्न को रोकने के लिए अपने सैनिकों को भेजा। इन सैनिको ने अन्न के व्यापारियो, खाद्यान्न काफिलों को लूट लिया। जाट सैनिकों ने दिल्ली से १८ किमी० दूर तक धावे मारकर लूटमार की। दूसरे दिन (६ सितम्बर) भी यही क्रम रहा। इससे खन्दको में तैनात शाही सैनिको को रसद व कुमुक नहीं पहुँच सकी। फलत इमाद को निराश होकर ११ सितम्बर को दिल्ली की ओर प्रस्थान करना पड़ा और उसने दूसरे दिन (१२ सितम्बर) सम्राट से भेट की।[४]

---

१ — नजीबुद्दौला, पृ० ४०, ४२, दे० फ्रॉनी०, पृ० ४२।

२ — ता० अहमदशाही, पृ० ७० ब।

३ — ता० अहमदशाही, पृ० ७२ अ-ब, दे० क्रॉनी, पृ० ४३; सूदन, पृ० २०८-११; ऐति० पत्र व्यवहार, खण्ड २, पृ० ८६ (बाबूराव के नाम अन्ताजी का पत्र), मलय, पृ० २४६-५०।

४ — ता० अहमदशाही, पृ० ७२ ब-७३ अ, दे० फ्रॉनी० पृ० ४३, पे० द० जि० २७, लेख ८०।

समझौता विफल : इमाद की सैनिक तैयारिया।

सफदर और सूरजमल दोनो आर्थिक सकट व सैनिक दवाब से काफी परेशान हो चुके थे और सैनिक सघर्ष का परिणाम सदिग्ध था। सैनिक सघर्ष के साथ ही सूरजमल शाति समझौता का कूटनैतिक प्रयास कर रहा था और उसने उचित अवसर देखकर वजीर इन्तिजामुद्दौला को एक लाख रुपया भेंट करने के प्रस्ताव के साथ अपने वकील को गुप्त समझौता वार्ता करने के लिए दिल्ली भेजा। १२ सितम्बर को जाट वकील ने वजीर से भेंट की और उसने पेशकश के बारह लाख रुपया जमा कराने का आश्वासन दिया। इसी दिन मीर बख्शी इमाद ने सम्राट से मिलकर धन व कुमुक भेजने का आग्रह किया। तीन घण्टे तक विचार–विमर्श चलता रहा। अन्त मे वजीर के हस्तक्षेप के कारण वह निराश हो गया। मीर बख्शी ने खुले आम वजीर पर ताना मारते हुए कहा, "वह सम्राट के साथ कायरतापूर्वक दिल्ली नगर के परकोटा मे छिपा रहता है और युद्ध का भार उस पर व उसके सैनिकों पर डाल रखा हैं।" *यह कहकर वह निराश मन से अपनी हवेली पर चला गया।* [१]

सफदर जग के साथ बढ़ते तनाव के समय ही सम्राट ने अपने फरमान मे मराठा राज्य मंडल के प्रतिनिधि के पास अवध व इलाहाबाद सूबो की फौजदारी प्रदान करने का प्रस्ताव भेजा था। पेशवा ने इस प्रस्ताव का उचित उत्तर न भेजकर अपने दिल्ली प्रतिनिधि बापूजी महादेव हिंगणे को स्थिति पर निगाह रखने तथा उभय पक्षो से मिलकर सामयिक लाभ उठाने का निर्देश भेजा। दिल्ली मे छः सहस्र मराठा सवार शाही खजाने से नियमित मासिक वेतन प्राप्त करते रहे थे और वे सक्रिय होकर भी प्रायः निष्क्रिय रहे। मीर बख्शी सफदर जग व सूरजमल दोनो की शक्ति व कीर्ति को पूर्णत: नष्ट करना चाहता था। इससे उसने पुन. मल्हारराव होल्कर तथा जयप्पा सिंधिया के नाम शीघ्र ही दिल्ली पहुँचने का आग्रह पत्र भेजा और इस कार्य मे सहायता करने पर पेशवा को एक करोड रुपया तथा अवध व इलाहाबाद प्रान्त सौपने का आश्वासन पत्र भी लिखा था। कायर व शक्तिहीन सम्राट तथा चतुर वजीर इन्तिजाम इमाद की महत्वाकाक्षा से भयभीत होने लगे थे और वे सोचने लगे थे कि कही सफदर के पतन के बाद मीर बख्शी दूसरा सफदर नही बन जावे। इमाद सफदर को बरबाद करके अवध व इलाहाबाद प्रान्त पर अधिकार करना चाहता था और उसने इनका अपहरण करने के लिए जाली फरमान व खिलअत भी धारण कर ली थी। [२]

सम्राट व वजीर का विश्वास था कि तानाशाह इमाद से केवल सूरजमल

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ७२–७३; पे० द०, जि० २१, लेख ५५।
२ – ता० अहमदशाही, पृ० ८७ ब।

ही उनको मुक्त करा सकता था। सफदर जंग का सहयोग भी आवश्यक था। असहाय सम्राट ने इसी समय सवाई माधोसिंह कछवाहा से दिल्ली आकर संघर्ष को समाप्त कराने, साम्राज्य के विघटन को रोक कर उसकी रक्षा करने का आग्रह किया और वजीर ने सूरजमल के शांति समझौता प्रस्तावों पर विचार करना आवश्यक समझा। उसने १४ सितम्बर को अपने विश्वासपात्र मुख्य कारिन्दा लुत्फुल्ला बेग को सफदर–सूरजमल की छावनी मे शांति प्रस्तावो पर विचार करने के लिए रवाना किया। दोनों सरदार बल्लमगढ के पश्चिम में १३ किमी० बादशाहपुर मे छावनी डाल कर पडे थे। लुत्फुल्ला बेग ने दिल्ली से प्रस्थान किया और सिकरी के समीप अपना पडाव डाला, जहा सूरजमल ने पहुँचकर उसकी अगवानी की। फिर वह उसको नवाब सफदर जग के डेरों पर लेकर पहुँचा। समझौता वार्ता के लिए सैनिक बल से गतिशील बनाने के प्रलोभन मे आकर सूरजमल ने इसी दिन ससैन्य फरीदाबाद के उत्तर मे कूँच कर दिया। मीर बख्शी इमाद ने सराय ख्वाजा बख्तावर, बदरपुर तथा अन्य स्थानो पर अपने सैनिक तैनात कर दिये थे। जाट सैनिको ने इसी दिन इन खाइयो पर हमला किया और शाही सैनिक पराजित होकर पीछे हट गये। वे अन्न से लदे भारकसो, लद्दू जानवरो व अन्य शाही सामान को उठाकर अपनी छावनी म ले आये। इससे इमाद ने दिल्ली के प्रतिष्ठित नागरिकों को भडका दिया और उन्होंने वजीर को गालियां दीं तथा व्यंग कसा।[1]

सफदर–सूरजमल शिविर मे लुत्फुल्ला बेग के साथ एक सप्ताह तक शांति समझौता के प्रस्तावो पर गम्भीरता से विचार चलता रहा। २० सितम्बर को सफदर जग के वकील राजा लक्ष्मी नारायण, राजा जुगलकिशोर, मकरन्द किशोर तथा सूरजमल के वकील बिसन नाथ के पुत्र भीमनाथ ने बेग के साथ दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। सूरजमल ने उनको बदरपुर तक सकुशल पहुँचा दिया और ये सभी दिल्ली पहुँच गये। इसी बीच मे नजीब खां रुहेला ने मीर बख्शी पर बकाया वेतन भुगतान के लिए भारी दबाव डाला। १६ सितम्बर को नजीब खा ने बादशाह से उसको छ वस्त्रो की खिलअत तथा "माही–ओ–मरातिब"-का निशान दिलाकर सम्मानित किया। अब वह अग्र मोर्चों पर जाने के लिए तैयार हो गया।[2] देहली क्रॉनीकल से पता चलता है कि मात्र नजीब खा को सन्तुष्ट करने से राजधानी मे फौजी उपद्रव शांत नहीं हो सके। २० सितम्बर को दुर्ग के शाही रक्षको ने बकाया वेतन के भुगतान के लिए उपद्रव किया। इसी दिन दिल्ली मे सूरज–सफदर जग के वकीलो के साथ बातचीत की गई। शाम को दिल्ली मे लौटते समय जाट सवारों ने दिल्ली की ओर से तथा सूरजमल के सवारों ने फरीदाबाद के दक्षिण मे ख्वाजा बख्तावर की

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ७३ ब, दे० क्रॉनी०, पृ० ४३, अवध, पृ० २५१।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० ६७ ब, दे०क्रॉनी०, पृ० ४३, नजीबुद्दौला पृ० [illegible]।

खाइयो पर हमला कर दिया। शाही सैनिक जब अपनी पराजय स्वीकार करने ही वाले थे, तभी मराठा, लाहौर तथा बीकानेर के सैनिक वहा आ गये। सफदर जग व जाटो की इसी अविश्वासी नीति से दरबार मे भारी रोष व आतक का वातावरण बन गया और २२ सितम्बर को समझौता वार्ता भी विफल हो गई।[१]

जवाहरसिंह का कोइल दुर्ग तथा दोआब पर अधिकार

घासेडा अभियान के बाद सूरजमल का विचार कोइल दुर्ग तथा दोआब के परगनो पर अधिकार करने का था, किन्तु उसको अचानक ही ससैन्य दिल्ली आना पडा था। सम्राट तथा मीर बख्शी इमाद गृह–सघर्ष मे व्यस्त थे। इससे दोआब के परगनो पर अधिकार करने में किसी भी प्रकार की अडचन नही थी। माधोसिंह से बातचीत करने के बाद जवाहरसिंह अपने वरिष्ठो की सेना के साथ दोआब की ओर चल दिया और उसने अगस्त के अन्त मे कोइल दुर्ग का घेरा डाला। किलेदार इस दुर्ग को खाली करके भाग गया। इसके बाद जाट सेनाओ ने गगा तट तक के अन्य शाही परगनो मे प्रवेश किया और जलेसर, चदेरी, परना आदि पर अधिकार करके जाट प्रबन्धक व हाकिम नियुक्त किये। स्थान स्थान पर उसने चौकी व थाने स्थापित किये। फिर वह गगा स्नान करके वृन्दावन पहुँचा और यहा से गृह–युद्ध मे भाग लेने के लिए सिकरी छावनी मे लौट आया।[२]

अन्तिम महान युद्ध, २६ सितम्बर

सूरजमल व सफदर जग को मराठा सेनापतियो के हिन्दुस्तान की ओर प्रस्थान करने, जयपुर से सवाई माधोसिंह के रवाना होने, नजीब खा तथा अन्य अवसरवादी सरदारो व उनके सैनिको को सन्तुष्ट करने का समाचार मिला। दिल्ली मे इमाद ने सहयोगी सेनानायको के साथ अपनी खाइयों पर आने की तैयारिया कर ली थी। उसने २४ सितम्बर को नजीब खा व मराठा सवारो को फरीदाबाद के समीप खाइयो पर तैनात कर दिया था और दुर्ग से गोला बारूद रवाना कर दिया था। इस प्रकार प्रचुर सैन्य शक्ति, गोला बारूद प्राप्त करके उसने दिल्ली से कूच किया और २८ सितम्बर की रात्रि उसने नजीब खा की बारापुला छावनी मे बिताई. शाही सेनाए पूर्ण व्यवस्था के साथ आक्रमण करें, इससे पूर्व ही सफदर-सूरज ने उन पर आक्रमण करने के लिए रात्रि मे ही अपनी सेनायें व्यवस्थित कर ली थी। जवाहरसिंह भी जाट छावनी म ससैन्य आ गया था। २६ सितम्बर को प्रात काल सफदर जग व सूरजमल ने पूर्ण वेग व शक्ति के साथ आक्रमण किया। सूरजमल स्वय विशाल सेना सहित बाई ओर खडा था। जाट सैनिक छोटी-बडी तोपें, जज्जैल,

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ७३ ब, ७४ अ, दे० ऑनो०, पृ० ४३, शाकिर, पृ० ७५।
२ – सूदन, पृ० २१३, माधव ज्पति, पृ० ४ अ।

गजनाल से सज्जित शाही रक्षा परिखा के सामने जाकर जम गये और उन्होंने शाही सेना के दक्षिण भाग में तैनात-मराठा दलों पर आक्रमण किया। मराठों के पास बड़ी तोपों का अभाव था, फिर भी उन्होंने जमकर सामना किया। अनेक मराठा खेत रहे। अबू तुराब खां, हमीदुद्दौला, हाफिज बख्तावर खां व जमीलुद्दीन खां नई कुमुक के साथ मराठों की सहायता के लिए आ धमके। इससे बराबरी का युद्ध चलता रहा। जाट दीवान घोड़े पर सवार होकर सूरजमल के पास पहुँचा और उसने कहा कि शत्रु भयंकर तोप प्रहार कर रहे हैं। इससे नर संहार हो रहा है। अतः बचने के लिए आप चार ऊंचे मचान तैयार करायें। इसी बीच में सफदर जंग का मीर बख्शी इस्माइल खां बर्छे से घायल हो गया और वह प्राण बचाकर पीछे हट गया। सूरजमल ने उसको काफी धिक्कारा। किन्तु उसके रिक्त स्थान पर पावरमल ने पहुँच कर स्थिति को संभाल लिया। इमाद व नजीब खां ने स्वयं रणक्षेत्र में उतर कर भयंकर आक्रमण किया। फरीदाबाद तालाब के पास घोर संग्राम छिड़ गया। इमाद निर्भीकता से अपने हाथी को बढ़ाकर सफदर की सेना के बीच में पहुँचा। उसके एक हाथी पर झण्डा फहरा रहा था, हाथी के माथे पर गोला गिरा और वह मारा गया। गोला लगने से इमाद के हाथी के दांत टूट गये। इससे उसने घोड़ा पर सवार होकर अपने सैनिकों में साहस फूंका। युद्ध में जाट सेना तितर-बितर हो गई। उभय पक्ष के काफी सैनिक काम आये। इमाद ने छ: किमी० तक उनका पीछा किया और सूर्यास्त के समय वह अपनी छावनी में लौट गया।[1]

दूसरे दिन (३० सितम्बर) इमाद ने अपनी छाइयां बल्लभगढ़ के उत्तर में दो किमी० मजेसर गांव तक बढ़ाकर दुर्ग पर गोले बरसाये। नजीब खां ने बल्लभगढ़ छावनी में इमाद के प्रति निष्ठा व स्वामिभक्ति को शपथ ग्रहण की और फिर मजेसर से दो किमी० पूर्व सीही नामक गांव पर आक्रमण किया। उसने इस गांव पर अधिकार कर लिया। बल्लू चौधरी, छतरपाल, रामबल, जोरसिंह, पावरमल ने मिलकर इमाद का सामना किया और भयंकर संघर्ष के बाद शाही सेना को पीछे हटने के लिए बाध्य कर दिया।[2] अब रुहेला व मराठों ने जाट प्रदेश में प्रवेश करके लूटमार शुरू कर दी।

सवाई माधोसिंह का दिल्ली आगमन तथा सन्धि, अक्तूबर-नवम्बर, १७५३ ई०

सम्राट के आमन्त्रण पर सवाई माधोसिंह ने दस सहस्र[3] राजपूत सैनिकों

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ७५ अ, ७६ अ, दे० क्रॉनो, पृ० ४४; शाकिर, पृ० ४३; सूदन, पृ० २१२-२२१; सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० ३१७-८; अवध, पृ० २५२; हिंगणे, खण्ड १, लेख ८३।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० ७७ ब; सूदन, पृ० २२१-२; नूरुद्दीन, पृ० १४।

३ – सूदन, पृ० २२२; याद्या राजा०, जि० २, पृ० ६३।

के साथ जयपुर से दिल्ली की ओर प्रस्थान किया और १७ सितम्बर को रेवाडी पहुँचकर [1] उसने राव भवानीसिंह, जो इस समय ससैन्य दिल्ली मे मौजूद था, पर पचास लाख रुपया भुगतान का दबाव डालने के लिए गावो मे भारी लूट व बरबादी शुरू कर दी थी। सम्राट ने माधोसिंह के लिए अपने निजी पत्र के साथ एक पगडी भेजकर लूटमार बन्द करने का आग्रह किया। तब माधोसिंह ने फौज खर्च की व्यवस्था के लिए अपने दूतो को शाही दरबार मे भेजा और स्वय ने रेवाडी तथा पटौडी की बीच मे अपनी छावनी डाली। जाट वकील प्राणनाथ खत्री ने कछवाहा शिविर में पहुँचकर माधोसिंह को सूरजमल के समझौता प्रस्तावो पर हुई प्रगति तथा मीर बख्शी इमाद की विरोधी भावना से अवगत कराकर २६ सितम्बर को बिदाई[2] ली। फिर माधोसिंह ने सराय अलीवर्दी खा मे अपना पडाव डालकर दिल्ली से आये अधिकारियो से भेट की। इन अधिकारियो के पीछे ही मीर बख्शी इमाद ने माधोसिंह को अपने पक्ष मे शामिल करने तथा शाही दरबार मे उसकी नीतियो का समर्थन करने के आग्रह पत्र के साथ महमूद खा तथा मराठा प्रतिनिधि बापूराव पडित को उसकी छावनी में भेजा। अन्त मे एक अक्तूबर को इमाद तथा माधोसिंह में समझौता [3] सम्पन्न हो गया। मीर बख्शी ने राव भवानीसिंह से प्राप्त चार लाख रुपया भुगतान का वचन पत्र अपनी मुद्रा से प्रमाणित करके माधोसिंह के पास भेज दिया। [4]

इसी बीच मे माधोसिंह गढी हरसौली के समीप पहुँच चुका था। सूरजमल ने इस गढी की व्यवस्था के लिए अपने साले कृपाराम को किलेदार तथा उसके भाई दानीराम को थानेदार नियुक्त कर दिया था। उभय भ्राताओ ने उसकी अगवानी की। सम्राट के निर्देश पर ८ अक्तूबर को वजीर इन्तिजाम ने माधोसिंह के प्रति अपनी प्रगाढ मित्रता व वचनबद्धता के लिए पदच्युत दीवाने खालसा राजा नागरमल के साथ एक रुक्का भेजा। थानेदार दानीराम के संरक्षण में राजा नागरमल अपने दोनो पुत्रो बहादुरसिंह तथा किसनसिंह के साथ जब गढी के समीप पहुँचा, तब

※—१ सवाई माधोसिह ने ५ जून, १७५३ को जयपुर से दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। ड्राफ्ट खरीता स० ११ (५/७०३), असाढ़ वदि ७, स० १८१०; डा० टिक्कीवाल के अनुसार उसके साथ मे १२–१५ हजार सैनिकों ने कूंच किया था। (पृ० १२०)

१ – राव इन्द्रसिह दतिया के नाम खरीता, बडल ५, स० २४।

२ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५८३।

३ – ड्रा० ख०, बंडल ५, स० ७००।

४ – ता० अह्मदशाही, पृ० ७७ अ; हिंगणे, जि० १, लेख ८१।

दीवान हरगोविन्द नाटाणी तथा पेमसिंह ने दो किमी० आगे बढ़कर उसकी अगवानी की और दरबार मे मुलाकात के समय माधोसिंह ने दानीराम को सिरोपाव प्रदान किया। फिर दूसरे दिन जाट किलेदार कृपाराम को गद्दी मे ही सान्त्वना का सिरोपाव भेजकर कछवाहो ने नागरमल के साथ दिल्ली की ओर प्रस्थान किया।[1]

९ अक्तूबर को वजीर इन्तिजामुद्दौला ने मुहरम नगर (दिल्ली के दक्षिण मे १० किमी०) मे माधोसिंह की अगवानी की। दोनो ओर से बधाईयो की औपचारिकता के बाद दोनो सरदार एक ही हाथी पर सवार होकर खिज्राबाद (मौजा मगला, दिल्ली के दक्षिण मे ६ किमी०) पहुँचे, जहा बातचीतो के बाद सम्राट के साथ मुलाकात के लिए गुरुवार का दिन निश्चित किया गया। पूर्वकालिक परम्पराओ के आधार पर माधोसिंह ने शाही दरबार मे सम्राट से मुलाकात के लिए मीर बख्शी की अगवानी मे पहुँचने का प्रस्ताव रखा, जिसे वजीर ने स्वीकार नहीं किया। १३ अक्तूबर को माधोसिंह ने महावत खा की रेती मे अपना शिविर डालकर यमुना स्नान किया और इसी दिन मीर बख्शी ने उससे भेट की। इससे १५ अक्तूबर को वजीर सम्राट को भ्रमण के बहाने दिल्ली से बाहर ले गया और उसने माधोसिंह के पास जाविद खा के बाग मे सर–ये–सवारी के समय सम्राट से भेट करने का निर्देश भेजा। तीसरे पहर माधोसिंह ने अपने दीवान हर गोविन्द नाटाणी, पेमसिंह, गदाधर, गणपत, हरनारायण, उस्मान खा करोला आदि के साथ महावत खा की रेती से प्रस्थान किया। नवाब बहादुर के बाग मे उसने सम्राट को नौ मोहर, एक सहस्र रुपयो की थैली नजर की और सम्राट ने उसको सिरोपाव, एक मोती की माला, एक कलगी, एक सरपेच तथा हाथी प्रदान करके अनुग्रह प्रगट किया। फिर दीवान–इ–खास मे पहुँच कर सम्राट ने उसको एक सुसज्जित पालकी तथा 'माही–ओ–मरातिब' के शाही चिह्न से सम्मानित करके अपने डेरो के लिए विदा किया।[2] इसके बाद १८ अक्तूबर को सम्राट व माधोसिंह की दीवान-इ-खास में पुन मुलाकात हुई। इस दिन बादशाह ने कछवाहा सरदारो को ताजीमी सिरोपाव प्रदान किये।[3]

इसी समय सम्राट ने मीर बख्शी को सन्तुष्ट करने के लिए शाही अमीरो को युद्ध की स्थिति में चढाई लाने तथा प्रतिरोध को कडा करने का आदेश दिया।

---

१ – ता०अ०शा०, पृ०७७अ; द०कौ०, जि० १८, पृ० १३७, जि० ७, पृ० ३६७, ५८६।

२ – ता० अ० शा०, पृ० ७७ ब, ७८-७६ अ, दे० कॉ०, पृ० ४४; हिंगणे, जि० १, लेख ८१, द० कौ०, जि० १८, पृ० ६८–६६, सूदन, पृ० २२२।

३ – ता० अ० शा०, पृ० ७६ अ; द० कौ०, जि० १८, पृ० १०१।

उसने शत्रु से समझौता न करने के दृढ निश्चय को भी दोहराया। सूरजमल, वजीर, राजमाता उधमबाई तथा माधोसिंह ने अपने अपने तौर-तरीके से समझौता करने का प्रयास किया। इमाद को मराठा सेना के शीघ्र ही दिल्ली पहुँचने की आशा थी। यह सूरजमल की कठिन परीक्षा का समय था। इससे वह इमाद को अपने कूट जाल में फँसाने तथा उसे कूट प्रबन्धों से सन्तुष्ट करने में तत्परता से लग गया था। अक्तूबर के मध्य म उसने इमाद क पास वार्ता करने के लिए अपना वकील भेजा। वकील ने प्रस्ताव म कहा, 'सूरजमल के अधीन अब तक जितना शाही इलाका आ चुका है, उसको स्थायी तौर पर उसक अधीन स्वीकार कर लिया जावे।" इस शर्त को स्वीकार करने पर उसने शाही खजाने म कुछ लाख रुपया पेशकश क रूप मे देने का वचन दिया। किन्तु इमाद की इच्छा थी कि जाटो के अधिकार मे केवल वे ही परगने छोड दिये जावें, जिन पर बदनसिंह का पहिले से अधिकार था। अन्य जबरन हडप किये शाही परगनो को सूरजमल वापिस लौटा दे।" इससे आपसी वार्ता समाप्त हो गई [1] और यह भी स्पष्ट हो गया था कि मीर बख्शी इमाद जाट प्रदेश को हडपना चाहता था।

सम्राट स्वय नही चाहता था कि समझौता इमाद की मध्यस्थता से सफल हो। इससे २३ अक्तूबर को सम्राट के बुलाने पर माधोसिंह पुन: दुर्ग में गया और उसने सम्राट तथा राजमाता उधमबाई से एकान्त मे बैठकर बातचीत की। बादशाह ने शाही तख्त के प्रति उसके पूर्वजों की निष्ठाभावी सेवाओ की सराहना की और कष्ट भरे शब्दो म साम्राज्य के तीनों (सफदर, इन्तिजाम व इमाद) विघटनकारी तत्वो की शिकायत की। अहमद शाह ने उससे सफदर जग के प्रमुख सहायक सूरजमल के साथ शान्ति-समझौता कराने की सलाह दी, ताकि इस धरा पर नाम व कीर्ति की धूल रह सके। चतुर राजा के नेत्र सजल हो गये और उसने समझौता कराकर ताज के प्रति निष्ठा भाव प्रगट कराने का आश्वासन देकर बादशाह को सान्त्वना दी। सन्तुष्ट होकर बादशाह ने रत्न जडित सिरपेच सहित अपनी पगडी उतार कर राजा को पहनाई। फिर माधोसिंह वजीर से मिलने के बाद अन्ताजी माणकेश्वर के पास पहुँचा और वहा दो घडी रुककर बातचीत की। [2]

इधर सम्राट तथा माधोसिंह मे गुप्त वार्ताए हो रही थी, तभी सफदर जग ने इमाद के प्रमुख सलाहकार व प्रधान सेनापति अकीबत महमूद को वजीर के माध्यम से प्राप्त सम्राट व राजमाता उधमबाई के पत्रो की प्रतिलिपिया सौंपकर

---

१ – ता० अ० शा०, पृ० ७८ अ।

२ – ता० अ० शा० पृ० ७६ अ, दे० क्रॉ०, पृ० ४४, पे० द०, जि० २७, लेख ८३, अवध, पृ० २५४, द० कौ०, जि० ६, पृ० १।

उनको आपस मे लड़ाने का प्रयास किया। अकीवत ने ये पत्र इमाद को और उसने धमकी के साथ सम्राट के पास भेज दिये थे। मजबूर होकर सम्राट ने इमाद को लिखा कि यह सभी कुछ सफदर जंग का जाल है। उसका विचार साम्राज्य के शत्रु से समझौता करने का नही है। इमाद इस धोखे मे नही आ सका और उसने स्वयं सूरजमल से समझौता वार्ता शुरू कर दी।[1]

माधोसिंह को पूर्ण विश्वास था कि सूरजमल गृह युद्ध को समाप्त कराकर शांति समझौता के प्रस्तावो पर उसकी अवश्य मदद करेगा। अब रघुनाथ राव ने ससैन्य उत्तर की ओर कूच कर दिया था। इससे माधोसिंह को भय था कि यदि मराठो ने इमाद की सहायता से सफदर जंग को पराजित कर दिया, तब जाट व कछवाहा राज्य भी बरबाद हो जावेंगे। इससे इसने सर्वप्रथम सूरजमल पर और फिर सफदर जंग पर समझौता करने का दबाव डाला।[2] सूरजमल ने स्पष्ट शब्दो मे मांग की और माधोसिंह ने निम्न दोनो प्रस्तावो को स्वीकार करने का आश्वासन दिया।

(अ) गृह युद्ध से पूर्व जाटो के अधीन जो शाही प्रान्त व परगने आ चुके हैं, उन पर यथावत उनका अधिकार स्वीकार कर लिया जावे।

(ब) जब तक नवाब सफदर जंग को अवध व इलाहाबाद प्रान्त का राज्यपाल पद पुन. प्रदान नही किया जावेगा, तब तक जाट अपनी तलवार म्यान म नही डालेंगे, अन्यथा वे फिर उसके लिए वजारत की भी माग करेंगे।

चतुर वजीर ने सम्राट को खिज्राबाद बाग मे भ्रमण के लिए राजी कर लिया था। उधर माधोसिंह ने सूरजमल को उसके कृत्यो का प्रायश्चित कराने तथा क्षमा याचना के लिए सम्राट के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रबंध कर लिया था। सूरजमल अधिक चतुर था, उसने स्वयं उपस्थित होकर सम्राट से क्षमा याचना करना स्वीकार नही किया और उसने माधोसिंह की छावनी मे सफदर जंग के वकील नरसिंह दास, राजा देवीदत्त को अपने वकील के साथ रवाना कर दिया था। दादा सूरतराम सभी प्रबन्ध करके दिल्ली से कछवाहा छावनी मे लौटा और अब छावनी मे सूरजमल के स्वयं उपस्थित होकर सम्राट स मिलने की चर्चा जोर पकड़ चुकी थी। २५ अक्तूबर को अहमदशाह विनोद भ्रमण के लिए खिज्राबाद बाग की ओर निकला। मार्ग मे वजीर भी उसके साथ लग गया और दोनो माधोसिंह के शिविर की ओर चल

---

१ – ता० अ० शाही, पृ० ८१ ब–८२ अ।

२ – ता० मुज़फ्फरी (इ० डा०, जि० ८, पृ० ३२०); हदीकात उल अकालिम पृ० १७६

दिये। मार्ग में कछवाहा फौज ने सम्राट को सलामी दी। सम्राट ने सदासिव भट्ट व पेमसिंह को उपाधिया प्रदान की। माधोसिंह तथा दीवान हरगोविन्द ने सम्राट को दो हाथी, नौ घोडा, चार जवाहरात की कनी, नौ तोरा, व बागे भेंट किये। उसने सूरजमल के वकील का सम्राट से परिचय कराया और वकील ने जाट सरदार की ओर से सम्राट की सेवा मे मूल्यवान भेंट अर्पित की तथा नरसिंह दास खत्री, राजा देवीदत्त सहित सूरजमल को क्षमा करने व उस पर अनुग्रह करने की याचना भी की। क्षमा याचना वास्तव मे एक प्रस्तावना मात्र थी, फिर भी इससे वजीर को भारी सन्तोष हुआ कि इमाद के माध्यम से समझौता नही हो सका। सम्राट दुर्ग मे वापिस लौट गया। दूसरे दिन (२६ अक्तूबर) वजीर तथा अन्य शाही अमीर-उमराव सूरजमल स मिलने के लिए तुगलकाबाद पहुँचे और वहा रुककर उसकी प्रतीक्षा की। सूरजमल अपनी वल्लमगढ छावनी से कुछ अगरक्षको क साथ वहा पहुचा। मार्ग मे अकीवत महमूद ने उसकी अगवानी की। शिविर मे सूरजमल ने वजीर से भेंट की। इस प्रकार अब उसका सम्राट से विधिवत समझौता हो गया था। सायकाल वजीर अपनी हवेली पर चला गया, परन्तु सूरजमल तथा अकीवत महमूद उस रात्रि तथा अगले पाच दिन (१ नवम्बर) तक तुगलकाबाद शिविर म ही रहे। १ नवम्बर (कार्तिक सुदि ६, स० १८१०) को माधोसिंह ने सूरजमल को खासा सिरोपाव, सरपेच, जरी, तुर्रा, मोपूसेला प्रदान करके विदाई दी।[1] सूरजमल की यह भेंट-वार्ता गृह युद्ध की विधिवत समाप्ति की उद्घोषणा थी।

निःसदेह सूरजमल के महान प्रयास, सैनिक प्रतिरोध तथा कूटनैतिक प्रयासो से ही नवाब सफदर जग का सम्मान व कीर्ति स्थिर रह सकी और मुगल साम्राज्य विघटन तथा विनाश से बच गया। १ नवम्बर को वजीर ने राजा जुगल किशोर से बातचीत की और वह पुन दरबार मे पहुँचा। इसी दिन अकीवत महमूद तथा हरगोविन्द नाटाणी ने भी सम्राट से भेंट की। ५ नवम्बर को सवाई माधोसिंह का का अति विश्वासपात्र वकील फतेहसिंह सम्राट की ओर से सफदर जग की छावनी मे एक शाही फरमान, छ वस्त्रों की खिलअत, एक रत्नजडित सरपेच, एक पछेवडी, एक मुक्ताहार तथा एक घोडा लेकर उपस्थित हुआ। सफदर जग ने शाही परम्परा-नुसार उचित सम्मान के साथ फरमानवारी डेरो मे खिलअत धारण की। समाचार मिलते ही मीर बख्शी इमाद ने सम्राट से विरोध प्रगट किया, परन्तु सम्राट व वजीर

---

१ – ता० अ० शा०, पृ० ८१ ब–८३ अ, खतूत अह०, सं० ३६८/३६१, ३६६/३६२, सूरजमल का पत्र पेमसिंह के नाम, आसोज वदि ११, सं० १८०६; दे० कॉ०, पृ० ४४, अवध, पृ० २५५।

दोनों ने अज्ञानता प्रगट करके माधोसिंह पर इसकी जिम्मेदारी डाल दी थी।[१] ६ नवम्बर को सूरजमल माधोसिंह से मिलने के लिए तुगलकाबाद पहुँचा और वजीर ने उसको क्षमा करके अपनी सेवा मे ले लिया। दस्तूर कौमवार[२] मे हमको इसका विवरण इस प्रकार मिलता है—

"मुकाम तुगलकाबाद : सूरजमल को लिवाकर लाने के लिए पेमसिंह, भट्ट सदासिव, दिवान हरगोविन्द तथा एक अन्य ताजीमी उमराव को भेजा। जब वे सूरजमल के साथ तुगलकाबाद छावनी मे आये, तब श्री जी आम दरबार मे आकर विराजे। सूरजमल ने आकर तस्लीम की और श्री जी ने उसको ताजीम दी। तत्पश्चात सूरजमल उनके पैर छूने को झुका, तब श्री जी ने उसको अपने हाथो से ऊंचा उठाकर छाती से लगाया। फिर सूरजमल ने अकीबत महमूद से भेट की। माधोसिंह की दाईं ओर सूरजमल, बाईं ओर बख्शी अकीबत महमूद चादनी पर आसीन हुये। एक घडी वहां रुककर खिलवत खाना मे पधारे, तभी दो घडी बाद वहा वजीर इन्तिजाम के पधारने की सूचना मिली। इससे सूरजमल को वहीं रोककर श्री जी दरबार म आकर विराजे और उसने ड्योढ़ी पर उसकी पेशवाई की। बगलगीरी करके मसनद पर आसीन किया। दो घडी रुककर वहा से राजा नागरमल व लुत्फुल्ला बेग को खिलवतखाने में रवाना किया, पीछे से जसवन्तसिंह, सरदारसिंह, जोधसिंह, नवलसिंह, पृथ्वीसिंह हाडा के पुत्र को वहा भेजा गया। फिर एक घडी बाद श्री जी वजीर के साथ डेरा खास के अन्दर पधारे और वहा सूरजमल को भी बुला लिया गया। सूरजमल ने वजीर की चाकरी स्वीकार कर ली। फिर श्री जी, अकीबत महमूद, राजा नागरमल आदि सभी ने मिलकर सूरजमल की भूलें माफ करवा दी। दो घडी बाद प्रथम वजीर को और फिर सूरजमल को डेरा खास से विदा किया गया। इसी समय छावनी मे डेरा खडा करवाया गया, जिसम सूरजमल व अकीबत महमूद ने रात्रि विश्राम किया।"

७ नवम्बर को राजा नागरमल ने भी माधोसिंह की छावनी में पहुँचकर अपना डेरा लगा लिया था। इस प्रकार अब दोनों विरोधी सरदारो के साथ सम्राट का विधिवत समझौता हो चुका था और उनकी मागें विधिवत स्वीकार हो चुकी थी। इससे १० नवम्बर को माधोसिंह मीर बख्शी इमाद को समझाने के लिए दिल्ली पहुँचा और उसके आग्रह पर इमाद ने सघर्ष को समाप्त करना स्वीकार करके उसकी

१—ता० अ० शा०, पृ० ८३अ–८४ ब, दे० कॉ०, पृ० ४५; हरिचरन, पृ० २१२अ; सियार, खण्ड ३, पृ० ३३५; ता० मुजफ्फरी, पृ० ७५; सूदन, पृ० २२२; ड्रा० ख०, स० ५/१२७।

२ द० कौ०, जि० ७, पृ० ५६६।

पगडी अपने सिर पर धारण कर भ्रातृ भाव प्रगट किया। इधर नवाब सफदरजंग ने सिकरी गाव से अपनी छावनी उठाकर पलवल की ओर कूंच (७ नवम्बर) कर दिया था। १३ नवम्बर को वह मथुरा पहुँचा, जहा पाच दिन रुककर उसने सूरजमल का आतिथ्य सत्कार ग्रहण किया तथा सूरजमल के लिए उसने दिल्ली लूट मे प्राप्त सभी सम्पत्ति हीरा जवाहरात तथा अन्य वस्तुयें सौंप दी थी। १७ नवम्बर को उसने यमुना नदी पार की ओर अवध की ओर मुड गया।[१] सफदर जंग अपने सूबों में अवश्य चला गया, परन्तु सूरजमल को एक प्रबल शत्रु के हाथो मे छोड गया था, जिसके हाथो में साम्राज्य की सम्पूर्ण सत्ता, सैनिक शक्ति समाहित होने वाली थी। सूरजमल को वास्तव मे मीर बख्शी इमादुलमुल्क की प्रबल शत्रुता का कडा सामना करना पडा था।

कुंवर बहादुर सूरजमल ने मथुरा मे नवाब सफदर जंग से बिदाई ली और वह शीघ्र हो गोवर्द्धन पहुँचा, जहा उसने भारी उत्साह के साथ श्री गिरिराज जी व हरिदेव जी का पूजन किया और सेना तथा जनता के साथ मिलकर सोल्लास मानसी गंगा के तट पर दीपोत्सव मनाया। १६ दिसम्बर को सम्राट ने सवाई माधोसिंह को उसकी सेवाओ के एवज में रणथम्भोर का दुर्ग, वहा का तोपखाना तथा साज सामान इनाम मे प्रदान करके सम्मानित किया। इसी समय उसको रघुनाथ राव के नेतृत्व में विशाल मराठा सेनाओ के आने का समाचार मिला। अत. कार्य-सम्पादन पर सन्तुष्ट होकर उसने बिदाई की। औपचारिकता के बिना ही दिल्ली से जटवाडा की ओर प्रस्थान कर दिया और १४ नवम्बर को वह बल्लमगढ़ पहुँचा, जहा राव बलराम तथा उसके पुत्र किसनसिंह ने उसकी अगवानी की। होडल मे जवाहरसिंह ने उसका स्वागत किया। यहा से वे दोनो १६ नवम्बर को बरसाना (होडल के दक्षिण में २७ किमी०) पहुंचे, जहां माधोसिंह ने श्री लाडली जी के दर्शन किये और भारी उपहार भेंट किये। इसके उपलक्ष म राव हेमराज कटारा को एक चचल गज, झूल, महोला प्रदान किया गया।[२] फिर वह कामा (बरसाना के पश्चिम मे ११ किमी०) होकर अपनी रानी सहित डीग पहुँचा।

२० नवम्बर को व्रजराज बदनसिंह 'महेन्द्र' के डेरो पर पधारने पर राजधानी डीग मे उसका भव्य स्वागत सत्कार किया गया। समस्त सेना की भोजन

---

१ – ता० अ० शा०, पृ० ८६ अ-८७ अ, ८८ अ, ८६ अ; अवध, पृ० २५६-७, २६१ ; जॉन कोहन, पृ० २१ ब।

२ – ता० अ० शा०, पृ० ८५ अ; दे० क्रॉ०, पृ० ४५; सियार, खण्ड ३, पृ० ३३५; ता० मुजफ्फरी, पृ० ७६; द० कौ०, जि० १, पृ० ६२७, ८८७, जि० ७, पृ० ६०३; कपड़ द्वारा, सं० २६४।

व्यवस्था तथा घोडो को दाना-घास की व्यवस्था की गई। इसी दिन उसको सूरज-मल का भरतपुर पधारने का आमन्त्रण-पत्र मिला। इससे २१ नवम्बर को डीग दुर्ग का निरीक्षण व भोजन करने के बाद माधोसिह ने डीग डेरो पर ही बदनसिंह को खासगी जरी का फरुखशाही, कुवर बहादुरसिंह, कुवर जवाहरसिंह तथा कुवर रतनसिह को खासगी सिरोपाव प्रदान किये। २२ नवम्बर को घोडे पर सवार होकर सूरजमल के पास भरतपुर पहुँचा, जहा सूरजमल ने उसको एक हाथी, घोडा, पोशाक, जवाहरात तथा नौ मोहरें भेंट की और उसने खासगी जरी का सिरोपाव प्रदान किया। यहा २५ नवम्बर तक शिविर में रुक कर दुर्ग का निरीक्षण किया और मराठा समस्या पर बातचीत की। इसके बाद २६ नवम्बर को ससैन्य जयपुर पहुँच गया।[१]

जाट कछवाहो मे मराठा विरोधी सहायक सधि

समस्त राजस्थान मराठो से परेशान व रुष्ट था और यह सम्भावना प्रगट हो चुकी थी कि सभवत राजस्थान मे मराठो से पुन सघर्ष छिड जावे। इधर खाण्डेराव होलकर ससैन्य दिल्ली के समीप पहुँच चुका था और वह व इमाद आपस में मिल रहे थे। फलत २४-२५ नवम्बर को काफी विचार विमर्श के बाद सूरजमल माधोसिह मे मराठा विरोधी एक समझौता हुआ, जिसके अनुसार माधोसिह ने आश्वासन दिया कि वह जाट शासन का पक्ष लेकर मराठो को जाट राज्य पर आक्रमण न करने म सहयोग करेगा। इसी प्रकार सूरजमल ने भी आश्वासन दिया कि यदि मराठो ने जयपुर राज्य में गडबडी की तो वहा से मराठो को निकालने मे वह योग देगा।[२] परन्तु यह समझौता नैतिक था। इसी समय नवाब सफदर जग ने भी अपना वकील नरसिंह दास खत्री जयपुर की ओर रवाना कर दिया था। ३० नवम्बर को माधोसिह ने उससे अनेक बातें की और अपने पत्र के साथ उसको मल्हार राव के डेरों की ओर रवाना कर दिया था।[३] सम्भवत सूरजमल ने इसी बीच म बयाना के शाही दुर्ग तथा परगना पर अपना स्थायी अधिकार[४] करके दक्षिणी भाग मे अपनी सेनायें तैनात कर दी थी।

---

१ – ता० अ० शा०, पृ० ८६ ब, सूदन, पृ० २२२-३, हिंगणें, खण्ड १, लेख, ८५; बलदेवसिह, पृ० ७५, वाक्या राज०, खण्ड २, पृ० ६३, द० कौ०, जि० ७, पृ० ५६७, ४८०, ४८२, ३७८, ५०५।

२ – सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० ३३१।

३ – ड्रा० ख०, जि० ५, स० ७३७।

४ – सियासी मक्तूबात, पत्र स० २।

अध्याय ६

इमाद तथा मराठों से संघर्ष : राज्य विस्तार १७५४–५६ ई०

१ – मराठों का उत्तर भारत की ओर प्रस्थान

जयप्पा सिन्धिया तथा मल्हार राव होल्कर के अथक परिश्रम, कूट प्रबन्ध तथा सैनिक प्रयासों से ही हिन्दुस्तान में मराठा राज्य को राजनैतिक उपलब्धिया तथा आर्थिक लाभ होते थे और ये दोनों सरदार ही हिन्दुस्तान में पेशवा का प्रतिनिधित्व तथा उसकी नीतियो का प्रसार करते थे। किन्तु इन दोनो घरानों मे राजनैतिक प्रभुत्व, सैनिक शक्ति, तथा आर्थिक लाभ के लिए आपसी प्रतिद्वन्दिता थी। वे एक दूसरे के परस्पर विरोधी थे। पन्त प्रधान (पेशवा) बालाजी राव स्वय कुशल सैन्य सचालक, साहसी सैनिक नही था। इससे वह इन दोनो के बीच में मध्यस्थ बनकर व्यक्तिगत मतभेद, प्रतिस्पर्धा, राजनैतिक तनाव को दूर करने में असमर्थ था। वह किसी एक का पक्ष लेकर अन्य सरदार को विरोधी बना कर मराठा राज्य का अहित भी नही करना चाहता था। पेश्वा का अठारह वर्षीय नवयुवक भ्राता रघुनाथ राव (दादा) गम्भीर परिस्थितियो का समाधान करने, परस्पर विरोधी सरदारो की भावनाओ पर नियन्त्रण रखने मे सक्षम नही था, लेकिन अहमदाबाद विजय मे उसने प्रतिष्ठा, सम्मान व यश उपार्जित किया था। इससे सम्राट तथा मीर बख्शी इमाद के साग्रह अह्वान पर बालाजी राव पेशवा ने पूना से रघुनाथ राव के नेतृत्व में इन दोनों सरदारो को रवाना किया था। इस अभियान मे रघुनाथ राव के साथ नव पीढ़ी के उदीयमान सरदार सखाराम बापू, चिन्तोजी विट्ठल, महीपतराय चिटनिस, शमशेर बहादुर, त्र्यम्बक राव पेठे, रामचन्द्र गणेश, कृष्णराव काले, नारोशंकर, विट्ठल शिवदेव तथा बाबूजी नायक आदि शामिल थे। मार्ग में मल्हार राव तथा बुन्देलखण्ड से गोविन्द पंत बुन्देला भी आकर शामिल हो गया था। इस प्रकार मराठो की विशाल सेना ने ३० अक्तूबर को कोटा राज्य मे

प्रवेश किया। ६ नवम्बर को मराठा सेना जयपुर राज्य में पहुँची। जहा १५ जनवरी तक रुकी और उसने राजपूत नरेशों से दो वर्ष की बकाया खडनी (चौथ) वसूल करने का प्रयास किया। पेशवा ने इतनी विशाल सना को उत्तर भारत में जिस प्रयोजन से रवाना किया था, वह प्रयोजन उसके आने से पूर्व ही पूर्ण हो चुका था। इसम अब मराठो की उपस्थिति सम्राट के लिए कटकपूर्ण थी और इतनी विशाल सेना की कोई आवश्यकता भी नही रह गई थी। भाऊ बखर के अनुसार—"जबकि मराठा राज्य के शासक के रूप मे बालाजी राव पेशवा की ख्याति द्वितीया के चन्द्रमा की भांति वर्द्धमान थी, तब उसके अनिष्टकारी ग्रहो ने उसे रघुनाथ राव को अपना प्रथम अनुभव प्राप्त करने के लिए उत्तर भारत मे भेजने की गलत प्रेरणा दी।"[१] वास्तव मे पेशवा का यह कदम अति विनाशकारी प्रमाणित हुआ।

२ – जाट मराठा सघर्ष के मौलिक कारण

अब तक जाट तथा मराठो में जटवाडा राज्य की सीमाओ में सीधा सघर्ष नही हुआ था। इस बार मीर बख्शी इमादुलमुल्क के परामर्श पर मराठा सरदारो ने जाटो के अजेय दुर्ग कुम्हेर पर सीधा आक्रमण करने का निश्चय कर लिया था। यह दो उदीयमान शक्तियों के बीच मे सीधा सघर्ष था, जिसमे राजनैतिक, आर्थिक तथा राज्य विस्तार का उद्देश्य निहित था। समकालीन अभिलेखो के आधार पर जाट-मराठा सघर्ष के तीन प्रमुख कारण थे :—

(१) १७५२ ई० की पारस्परिक रक्षा सन्धि[२] के अन्तर्गत मराठो की प्रबल इच्छा आगरा तथा अजमेर प्रान्त, मथुरा तथा अन्य परगनों और नारनौल की फौजदारी पर वास्तविक अधिकार करने की थी और इसके लिए उन्होंने शाही आमन्त्रण को सरल बहाना ढूंढ लिया था। परन्तु आगरा प्रान्त के अधिकाश जिलो तथा परगनो पर सुयोग्य राव बहादुर सूरजमल का अधिकार था और उसको मथुरा की फौजदारी भी प्रदान की जा चुकी थी। शेष पडोसी शाही परगनो पर भी उसकी आख लगी हुई थी। इससे जाट-मराठो में राजनैतिक प्रभुत्व के लिए सघर्ष अनिवार्य था।

(२) गृह युद्ध मे सूरजमल ने सफदर जग का प्रबल समर्थन किया था। सम्राट द्वारा विधिवत् क्षमा करने के बाद भी दिल्ली दरबार के कुछ विरोधी सरदार अपनी जागीरों पर पुन अधिकार करने के लिए प्रयत्नशील थे। मीर बख्शी इमादुलमुल्क अपनी नैतिक पराजय के कारण सूरजमल के प्रति ईर्ष्यालु था और वह जाट परगनों पर अपना अधिकार करने के लिए लालायित था। इमाद ने सम्राट से

---

१ – भाऊ बखर, पृ० ४; सरदेसाई, खण्ड २, पृ० ४८३-८४।

२ – द्रष्टव्य, अ० ४, अनु० ६ तथा १०।

के शब्दों में उलाहना देते हुये कहा था— "आपने बिना मेरे अनुमोदन या सूचित किये ही सूरजमल व सफदर जंग को उस समय क्षमा कर दिया, जब विजय उसके कदम चूमने को थी।" इस प्रकार इमाद ने मराठों की सहायता से सूरजमल को उसकी धृष्टता का दण्ड देने का निश्चय कर लिया था।[१]

(३) मराठा सरदारों ने जाट राज्य के पूर्व में बंगश-अफगानों को परास्त करके अनेक परगनों पर अधिकार कर लिया था और वहां उनके अमावलिदार नियुक्त थे। इसी प्रकार पश्चिम में बूंदी, जयपुर जोधपुर राज्यों के उत्तराधिकार युद्धों में भाग लेकर मराठा ने अपने सहायकों को गद्दी पर आसीन करा कर अथवा उत्तराधिकारियों का पक्ष ग्रहण करके उनसे एकनी (चौथ) के वचन-पत्र प्राप्त कर लिये थे। परन्तु अभी तक जाटवाड़ा उनके राजनैतिक प्रभाव, सैनिक हस्तक्षेप तथा अन्तर्नीतियों से विमुक्त था। मराठा सरदारों का विश्वास था कि सूरजमल ने दिल्ली के आसपास के प्रदेश तथा शाही परगनों को लूटकर कई करोड़ रुपये की धनराशि एकत्रित कर ली है। इस लोभ में आकर सम्पन्न, समृद्ध, आर्थिक दृष्टि से सशक्त जाट राज्य को लूटने में मराठा का स्वार्थ था,[२] जो अभी तक उनकी लूट, बरबादी, आर्थिक शोषण तथा राजनैतिक प्रभाव व हस्तक्षेप से पूर्णतः मुक्त था।

३ – खाडेराव होल्कर का दिल्ली प्रस्थान मराठों की निश्चित नीति

सम्राट अहमदशाह व वजीर इन्तिजामुद्दौला की अपेक्षा मीर बख्शी इमादुल्मुल्क से परामर्श करके भावी युद्ध योजना व नीति पर विचार करने के लिए मल्हार राव होल्कर ने अपने पुत्र खाण्डेराव (खड्डूजी) को अपने विश्वसपात्र दीवान (सेनापति) गंगाधर तातिया तथा चार सहस्र मराठा सैनिकों के साथ जयपुर छावनी से दिल्ली रवाना कर दिया था। नवम्बर, २१, १७५३ ई० को इस मराठा सेना ने किसन दास तालाब पर अपना पड़ाव डाला। पूर्व ईर्ष्यालु इमाद ने सूरजमल से प्रतिशोध लेने का दृढ़ संकल्प कर लिया था, जबकि सम्राट व वजीर एक शक्ति शाली मन्त्री की तानाशाही को रोकने साम्राज्य की विघटनकारी शक्तियों से सुरक्षित करने देश को स्थिरता, सुदृढ़ता की निहित भावना से साम्राज्य के निकटतम पड़ोसी व सहयोगी सूरजमल को मराठा विनाश से बचाकर जाट शक्ति को दृढ़ करना चाहते थे। इमाद की तानाशाही प्रवृति पर यह अपरोक्ष अंकुश था। इसके अलावा सम्राट हिन्दुस्तान तथा दिल्ली को मराठा की आर्थिक लूट, बरबादी से बचाने के

---

१ – इमाद, पृ० १७३, इ० डा० (ता० मुजफ्फरी) खण्ड ८, पृ० ३२१, फ्रेंकलिन, पृ० ३, सरदेसाई खण्ड २, पृ० ४८५।

२ – कानूनगो, पृ० ८७, सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० ३३१।

लिए उनको दक्षिण की ओर पुनः वापिस लौटाना चाहता था। "तारीखे मुजफ्फरी" के लेखक मुहम्मद अली खां के अनुसार "सूरजमल ने शाही क्षमा-प्रतीकार के रूप में वजीर इन्तिजामुद्दौला को शाही खजाने में पचास लाख रुपया पेशकश की रकम जमा कराने का वचन दिया था। वजीर सूरजमल से यह रकम प्राप्त करके शाही सैनिकों के बकाया वेतन का भुगतान करके शाही सैन्य शक्ति को अधिक सशक्त करना चाहता था। इसी से उसने मीर बख्शी इमाद के प्रस्ताव को टालने के लिए जाट दमन की योजना को अगले वर्ष तक स्थगित करने की सलाह दी थी। किन्तु इमाद अपनी सैनिक शक्ति के घमण्ड में चूर मराठा मित्रों की सहायता से जाटों के दमन के लिए उतावला था।" [१]

-आपसी विरोधी नीतियों के क्रियान्वयन के लिए साम्राज्य के दो वरिष्ठतम मन्त्रियों के बीच में एक नवीन -संघर्ष का सूत्रपात हुआ और दोनों पक्षों ने मराठा सरदारों को अपने पक्ष में शामिल करने का भारी प्रयास किया। २२ नवम्बर को इमाद ने खाडेराव से मुलाकात की। दूसरी ओर सम्राट तथा वजीर ने भी प्रयास किया और वजीर ने राजा जुगलकिशोर को उसकी छावनी में भेजा। किन्तु खाण्डेराव ने कहा—" मल्हारजी ने मुझको मीर बख्शी के पास भेजा है। मुझे किसी अन्य से नहीं मिलना है।" फलतः १ दिसम्बर को सम्राट ने मराठा वकील बापूराव हिंगणे, अन्ताजी तथा मराठा प्रतिनिधियों को वार्तालाप के लिए बुलाया। वजीर ने स्पष्ट शब्दों में कहा, "मराठा सरदारों को वजीर के आदेशानुसार कार्य करना चाहिये और उनको मीर बख्शी से नहीं मिलना चाहिये। परन्तु दक्षिण में निजाम परिवार से मराठों के राजकीय हित सम्बद्ध थे। हिन्दुस्तान में वे इमाद को रुष्ट नहीं कर सकते थे। इससे उन्होंने इन सुझावों को टाल कर कहा— "रघुनाथ राव तथा मल्हार राव जैसा उचित समझेंगे, वे उसी के अनुरूप कार्य करेंगे।" फिर भी वजीर ने सूरजमल के साथ होने वाले मराठा संघर्ष को टालने का हर सभव प्रयास किया। [२] १० दिसम्बर को वजीर के परामर्श पर सम्राट ने खाण्डेराव की छावनी में छः वस्त्रों की खिलअत, कलगी सहित एक जडाऊ सरपेच, एक तलवार व एक हाथी, २२ अशर्फियां तथा अन्य कुछ भेंटें भेजी, परन्तु इमाद के परामर्श पर खाण्डेराव ने इन खिलअतों को यह कह कर लौटा दिया—"मैं बादशाह का सेवक नहीं हूं, जो मुझे खिलअत प्रदान करे। मैं यहां अपने पिताजी की आज्ञा से सूरजमल के विरुद्ध युद्ध मन्त्रणा, भावी योजना व कार्यक्रम पर विचार करने के लिए मीर बख्शी की सहायतार्थ आया हूं। मल्हार जी यहां कुछ दिन बाद आवेंगे। आपको जो कुछ भी कहना है, उनसे कहें और जो कुछ भी देना है, उनको दें।" अब सम्राट ने मीर बख्शी इमाद से आग्रह

१ – ता० मुजफ्फरी, पृ० ८३।

तथा अन्य नौ जाट अंगरक्षकों को भी यदरशी सैनिकों ने मार गिराया। अन्य सैनिक वहा से भाग निकले।[१]

दु:खद समाचार सुनकर बल्लमगढ के तोपची अर्द्ध रात्रि तक निरन्तर गोलाबारी करते रहे। अन्त मे उन्होंने रात्रि के अन्धकार में चौधरी बलराम के अन्य पुत्र किसनसिंह तथा बिसनसिंह, परिवार तथा कीम्ती सामान के साथ दुर्ग खाली कर दिया। अकीबत महमूद के सैनिको ने खाली दुर्ग, तोप, रहकला, जज्जैल, शस्त्रागार तथा अन्न, घी आदि भंडारो पर अधिकार कर लिया। सिपाहियों ने कस्बे में भारी लूटमार की। इस प्रकार सूरजमल के उत्तरी सीमात दुर्ग पर मीर बख्शी का अधिकार हो गया। चौधरी बलराम के कानो मे दो मोती के कुण्डल थे। वे जमादार ख्वाजा आफताब खां को पुरस्कार मे दे दिये गये। इस भूखण्ड मे आतंक फैलाने के लिए बलराम के शिर को फरीदाबाद के समीप सडक के किनारे एक खम्भे पर लटकाया गया। सम्राट ने यह समाचार सुनकर इमाद तथा अकीबत को भारी पुरस्कार भेजे और इस जिले का प्रबन्ध इमाद को सौंप दिया। इससे वजीर काफी नाराज हुआ।[२] चौधरी बलराम के पुत्र, कुटुम्ब तथा सिपाही भागकर बरसाना पहुँच गये।[३] अब इमाद ने अपनी उपाधि निजामुल्मुल्क आसफजहा के नाम पर बल्लमगढ का नाम "निजामगढ़"[४] रखा।

फिर दिसम्बर के प्रथम सप्ताह मे अकीबत महमूद ने अन्य जाट गढ़ियो पर आक्रमण करने के लिए कूंच किया। इस सेना ने पलवल से ११ किमी० दक्षिण तथा दक्षिण पश्चिम मे मैत्रोल तथा हथीन गढियो को घेर लिया। यहा के जाट कृषकों ने शाही सेनाओं का दिन भर जमकर सामना किया और रात्रि के अन्धकार मे अपनी गढिया खाली कर दी। खाली गढियो पर अधिकार करके शाही सेना ने अन्न भण्डार तथा सामान को लूट लिया। इसके बाद उसने पलवल के आसपास लगान की माग के साथ अन्य जाट प्रधान गढियो पर आक्रमण किया और उन पर अधिकार करने मे सफल रहा। फिर १७ दिसम्बर को अपनी सेनाओं को विजित प्रदेश मे छोड़कर अकीबत स्वयं पलवल छावनी से दिल्ली चला गया, जहा उसने सम्राट से भेंट की।[५]

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ८६ अ, ६२ अ, ६८अ; सूदन, पृ० २२५–६; दे० क्रॉनी०, पृ० ४५; कानूनगो, पृ० ८०; सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० ३२६–७।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० ६२ ब, ६८ ब; दे० क्रॉ० पृ० ४५।

३ – सूदन, पृ० २२६।

४ – ता० अहमदशाही; पृ० १०६ ब।

५ – उपरोक्त, पृ० ६३ ब–६४ ब; दे० क्रॉनी०, पृ० ४५।

२६ नवम्बर की अर्द्ध रात्रि को चौधरी बलराम को धोका देकर मारने का समाचार सूरजमल के लिए मिला। उसको यह भी समाचार मिला कि इमाद अपनी सेनाओं सहित आगे बढ़ रहा है। सूरजमल ने शीघ्र ही अपने साले फौजदार (बख्शी) बलराम को जवाहरसिंह के पास डीग रवाना किया। जवाहरसिंह राव वदनसिंह के पास पहुँचा और आवश्यक निर्देश प्राप्त करके उसने अपनी समस्त सेना के साथ बरसाना की ओर प्रस्थान कर दिया। यहा से उसने शत्रु की गतिविधि को आकने के लिए अपने विश्वास पात्र सन्देशक भेजे और समीपस्थ इलाकों की सुरक्षार्थ अपने सैनिक अग्र मोर्चों पर रवाना कर दिये।[1]

५ – ठाकुर मोहकम सिंह की दावेदारी : मराठों द्वारा लूट व बरबादी

उपयुक्त राजनैतिक अवसर देखकर राव चूडामन के पुत्र जुलकरन तथा मोहकम सिंह ने अकीबत महमूद की अनुकम्पा वरण करके राव वदनसिंह को अधिकारों से च्युत करके अपनी जमीदारी पर पुन: बहाल करने की अभ्यर्थना की। इस प्रकार मीर बख्शी ने सूरजमल के विरुद्ध जाट राज्य के दावेदार को खडा करके एक राजनैतिक प्रवचनात्मक नाटक का सूत्रपात किया। मध्यस्थो की प्रारम्भिक वार्ता के बाद मोहकमसिंह स्वय ग्राम तानकी, परगना अकबरपुर से दिल्ली पहुँचा। १० दिसम्बर को उसने अकीबत महमूद से भेट की। दूसरे दिन (११ दिसम्बर) यह समाचार सम्राट के समक्ष प्रस्तुत किया गया। २१ दिसम्बर को मीर बख्शी इमाद पटपरगज से दिल्ली वापिस लौटा और उसने सम्राट से भेंट की। उसी दिन सम्राट ने उसको अकबराबाद तथा इलाहाबाद प्रान्त का राज्यपाल नियुक्त कर दिया। मीर बख्शी ने ठाकुर मोहकमसिंह को सरक्षण में रखकर जाट प्रदेश पर आक्रमण करके अधिकार करने की नीति पर जोर डाला। २५ दिसम्बर को मोहकमसिंह ने भी उसकी हवेली पर पहुँच कर भेट की और मीर बख्शी के सामने काठेड़ जमीदारी का विधिवत दावा प्रस्तुत किया।[2]

२७ दिसम्बर को खाण्डेराव होल्कर ने अकीबत महमूद के मार्ग दर्शन में अपने चार सहस्र मराठा सैनिको के साथ दिल्ली से फरीदाबाद होकर पलवल की ओर प्रस्थान कर दिया था, किन्तु मार्ग में मुगल तोपची तथा बन्दूकची सवारों ने अकीबत के निर्देशो की अवहेलना की और उन्होने अपने पन्द्रह माह के बकाया वेतन के भुगतान की माग के साथ विद्रोह कर दिया। इससे अकीबत महमूद मीर बख्शी

---

१ – सुजन, पृ० २२६।

२ – पे० द०, खण्ड, २७, लेख ७६; ता० अहमदशाही, पृ० ६४ ब, ६८ ब।

की जागीर फरीदाबाद तथा पलवल पर व्यवहारिक नियन्त्रण रखने में विफल रहा। इस सैनिक विद्रोह का लाभ उठाकर जाट जमींदारों ने शीघ्र ही मित्रोल, हथीन तथा अन्य जाट प्रधान ग्राम्य गढ़ियों में तैनात शाही थानों पर आक्रमण करके अपना अधिकार कर लिया। हताश होकर अकीबत महमूद इमाद के पास लौट आया और उसने बादशाह की स्वीकृति प्राप्त करके इमाद से स्वयं प्रस्थान करने का अनुरोध किया। दरबार में इमाद व अकीबत पर सैनिक विद्रोह का आरोप लगाया गया। सम्राट ने कहा—"आपके पास शाही कोषागार के पन्द्रह लाख रुपया जमा हैं। उस रकम से तोपखाना के बन्दूकची सैनिकों का और बल्लमगढ़ जिले की आय से बदख्शी रिसालों के शेष वेतन का चुकारा कर देना चाहिये। मैंने आपको यह जिले सौंप दिये हैं और आप पर समस्त अधिकार छोड़ दिये हैं। कम से कम अब आपको मुझ पर अत्याचार नहीं करने चाहियें।"[1] किन्तु इमाद ने सम्राट से आग्रह किया कि 'आप स्वयं फरीदाबाद की ओर कूच करें, ताकि बल्लमगढ़ जिले से माल-ओ-जवात वसूल किया जा सके। सूरजमल ने जिन शाही जिलों व परगनों पर अधिकार कर लिया है, उनको पुनः प्राप्त करके जटवाड़ा प्रदेश की जमींदारी मोहकमसिंह को सौंपी जा सके। इसके एवज में मोहकमसिंह ने दो करोड़ रुपया भुगतान का आश्वासन दिया है और वह अभी तक मेरे यहां रुक रहा है। मैं आपको चार दिन में एक करोड़ रुपया अग्रिम भुगतान की व्यवस्था करने को तैयार हूँ और इस रकम से आप अपने शाही सेवक तथा कारखाना के बकाया भुगतान के हिसाब को साफ कर सकते हैं। किन्तु आपने मेरे इस प्रस्ताव को भी ठुकरा दिया है।. आप शाही व्यवस्था का भार मेरे ऊपर छोड़ दें और मेरे विरुद्ध किसी अन्य की बात नहीं सुनें। मैं असन्तुष्ट सैनिकों को विद्रोही जिलों पर अधिकार करने के लिए रवाना कर दूंगा और उन विजित जिलों की आय से उनका शेष वेतन भुगतान करके उन्हें सन्तुष्ट कर दूंगा।"

सम्राट तथा वजीर इमाद को खुला युद्ध करने की आज्ञा देकर जाट सरदार सूरजमल की शक्ति का पतन स्वीकार नहीं कर सकते थे। इसी भावना से अहमद शाह ने इमाद से कहा, "मोहकमसिंह ने मेरे सामने प्रार्थना-पत्र प्रस्तुत किया है और उसने पांच करोड़ रुपया भेंट करने का वचन दिया है। साथ ही उसने खालसा व शाही खजाने में नालबन्दी के रूप में सात आना प्रति रुपया जमा कराने और शाही चाकरी में रहने का भी वायदा किया है।"[2] मोहकमसिंह ने इसी समय

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० १०२ ब, १०३ ब, १०४ ब, १०५ अ; सरकार (मुगल), खण्ड १ पृ० ३२७।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० १०३ अ।

मराठों से भी बातचीत करने का प्रयास किया और उसके वकील ने मराठों से सहायता देने का आग्रह किया। उसने अपने पत्र में मल्हार राव आदि मराठा सरदारों से भी भेंट करने की इच्छा प्रगट की थी। मराठों ने एक पत्र ठाकुर मोहकमसिंह को तथा अन्य पत्र उसके भाई जुलकरन को लिखकर यह स्पष्ट माग की कि उनको ये जिले सहायता के एवज में भेंट करने पड़ेंगे।[1] किन्तु इन वार्ताओं से कोई निश्चित परिणाम नहीं निकल सका। जॉन कोहन का कथन है कि मोहकमसिंह मल्हार राव की सेवा में जाकर उपस्थित हुआ और अपनी सेवाओं से उसकी अनुकम्पा प्राप्त कर ली। अन्त में उसने मराठा सेना के संरक्षण में थून के समीप पड़ाव डाला और हाथियों से थून की विध्वंस गढ़ी को जोतकर वहां से कीमती मोती निकाल लिये।[2] किन्तु इस कथन की अन्य अभिलेखों से पुष्टि नहीं होती है। अन्त में मीर बख्शी ने शाही आदेश प्राप्त करके रात्रि में खिज्राबाद होकर प्रस्थान किया और प्रातःकाल आठ बजे बल्लभगढ़ आ धमका।[3]

खाण्डे राव होल्कर ने होडल में अपनी छावनी डालकर जाट प्रान्त के मेवाती जिलों में लूटपाट करने के लिए अपनी मराठा टुकड़िया रवाना कर दी थीं। मल्हार राव ने भी अपने पुत्र को मेवात में आतंक पैदा करने तथा मथुरा पर्यन्त लूटमार करने के निर्देश भेजे। इन सैनिकों ने पहाड़ तथा जंगलों में शरण लेकर जाटों पर आक्रमण कर दिया और हथीन, जोरु आदि गढ़ियों पर अधिकार कर लिया। इस समय जवाहरसिंह बरसाना में मौजूद था। फिर मराठों ने होडल के दक्षिण में क्रमशः १९.२७ किमी० नदगाव बरसाना तक छापे मारे। इस प्रदेश में भारी लूटमार, आगजनी तथा बरबादी की। सूरजमल वास्तव में शाही मीरबख्शी तथा मराठों के विरुद्ध एक महान युद्ध तथा दीर्घ संघर्ष की तैयारी कर रहा था। इससे उसने अपने पुत्र जवाहर सिंह के पास युवक खाण्डे राव से झगड़ा न करने का सन्देश भेजा। सूरजमल यह भली-भांति समझता था कि इन साधारण झड़पों तथा संघर्षों से कोई निश्चित परिणाम नहीं निकलेगा। इससे जवाहर सिंह जिला बरसाना को खाली करके डीग लौट गया। दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में खाण्डे राव ने जाट सैनिक शून्य जिलों पर अपना अधिकार कर लिया और वहां थाने स्थापित करके होडल लौट गया। इस प्रकार मराठों ने बिना विरोध के पच्चीस किमी० की परिधि में जटवाड़ा प्रान्त के गांव व कस्बों में लूटमार व बरबादी की।[4]

---

१ – पे० द०, खण्ड २७, लेख ८३।
२ – जॉन कोहन, पृ० १६ ब।
३ – ता० अहमदशाही, पृ० १०४ ब–१०५ अ।
४ – उपरोक्त, पृ० १०४ ब–१०५ अ, सूदन, पृ० २३७–६।

२७ दिसम्बर को शाही दरबार में समाचार मिला कि खाण्डेराव के दक्षिणी सवारों ने शिकोहाबाद में पहुँच कर वहा से जाट थानो को उठा दिया है। इस समय चकला कोइल का प्रबन्ध जाटो के हाथ मे था। इमाद ने फतेहअली खां को चकला कोइल का प्रबन्धक नियुक्त किया और उसने नौ–दस सहस्र सवार व पैदलो को इकट्ठा करके उधर प्रस्थान किया। इस समाचार को सुनकर कोइल से जाट सैनिक भाग गए। मराठा आतंक का लाभ उठाकर जनवरी ५, १७५४ ई० को प्रधान सेनापति अकीवत महमूद ने द० प० मे १४ किमी० गंगूला नामक जाट गढी पर आक्रमण कर दिया। बलराम के भाई ने शाही सेनापति का सामना किया, जिससे वह घायल हो गया। अन्त मे रात्रि के अन्धकार मे उसने गढ़ी खाली कर दी। अकीवत ने गढी मे लूटमार की और छ व्यक्तियो को बन्दी बना लिया। उसने वहा थाना तथा आसपास कई चौकिया स्थापित की। ८ जनवरी को इमाद ने निजामगढ (बल्लमगढ) से पलवल की ओर प्रस्थान किया और मोहकम सिंह को खाण्डेराव की छावनी होडल की ओर रवाना कर दिया। खाण्डेराव होडल शिविर मे करीब पन्द्रह दिन तक रुका और उसने मेवात मे भारी लूटमार व बरबादी की। जनवरी के मध्य मे वह अपने पिता के पास पहुँच गया, जो कुम्हेर दुर्ग पर घेरा डालने की योजना बना रहा था।[1]

६ – घासेड़ा (घासहरा) पर राव फतेहसिंह बड़गूजर का अधिकार, जनवरी, १७५४ ई०

घासेडा अभियान के समय राव बहादुर सिंह का पुत्र फतेहसिंह दिल्ली में था और उसने मराठा वकील से मिलकर अपनी पैतृक गढ़ी पर अधिकार करने का भारी प्रयास किया, किन्तु सूरज मल की शक्ति के कारण वह सफल नहीं हो सका। इसमे निराश होकर वह सोनपत चला गया। गृह–युद्ध छिड़ने पर वह वजीर की सेवा मे आकर उपस्थित हो गया, किन्तु वजीर को सूरजमल के पक्ष मे देखकर अपनी पैतृक गढी मिलने की आशा से इमाद के पक्ष मे जाकर शामिल हो गया था। उसने गृह युद्ध मे इमाद के पक्ष मे जाटों से संघर्ष किया। मराठा सरदारो के आग्रह पर मीर बख्शी इमादुलमुल्क ने राव फतेहसिंह को घासेडा की गढी जागीर में प्रदान कर दी और पलवल छावनी से घासेडा (पलवल से २४ किमी. पश्चिम) पर अधिकार करने के लिए अभियान जारी किया। फतेहसिंह ने मराठा टुकड़ियों के साथ गढ़ी पर आक्रमण कर दिया। अमर सिंह बाहर ने दो-तीन दिन तक गढ़ की रक्षा की। सूरजमल उसकी सहायता के लिए नई कुमुक नहीं भेजना चाहता था। फलत. अमर सिंह ने अपने सैनिको सहित रात्रि के अन्धकार में गढी को खाली कर दिया। इस प्रकार नौ माह के बाद राव फतेहसिंह बडगूजर ने घासेडा गढ़ी पर अधिकार करने

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० १०५ ब–१०६ ब; सूदन, पृ० २३६ (मेवात की लूट)।

में सफलता प्राप्त कर ली। अब इमाद ने राव फतेहसिंह को समीपवर्ती गाव व कस्बो पर आक्रमण करके मालगुजारी वसूल करने का आदेश दिया।[१]

१३ जनवरी को इमाद ने अकीवत महमूद को अन्य अनेक सेनानायको, वदख्शी तथा मेवातियो की एक विशाल सेना सहित मेवात की ओर तथा उसके भाई सैफुल्ला खां को प्रशासन-प्रबन्ध जमाने और किसानो को आश्वस्त करके अपने गावो में लौटाकर बसाने के लिए कोइल जलेसर की ओर रवाना किया। जनवरी के मध्य मे रघुनाथ राव ने जाटो के प्रमुख दुर्ग कुम्हेर का घेरा डाल दिया था और जाट शासक व सेनायें वहां व्यस्त हो गई थी। इसी बीच मे इमाद ने २३ जनवरी को अकीबत महमूद को रेवाडी के जमीदारो से लगान वसूल करने के लिए रवाना कर दिया, रेवाडी महाल सर्फ-इ-खास मे शामिल थी। सम्राट ने शीघ्र ही लूटमार रोकने के आदेश इमाद को दिए। रेवाडी विशन सिंह की जागीर मे शामिल था और वह इस समय दरबार मे मौजूद था। सम्राट ने उसको अविलम्ब ही दिल्ली से रवाना कर दिया। फलतः अकीवत ने लूटमार व अत्याचार करके वहा से पचास लाख रुपया वसूल करके अन्य परगनों की ओर कूच कर दिया। फिर उसने मेवात स्थित किशनगढ पर आक्रमण कर दिया। इस गढी के चारों ओर मिट्टी का परकोटा था और गढी की सुरक्षा व्यवस्था के लिए जाट तथा मेवाती सैनिक तैनात थे। इससे यहा जमकर संघर्ष हुआ। जाटो ने अकीवत को वहा से हटने के लिए बाध्य कर दिया। सैफुल्ला खा ने यमुना पार के जाट गावो से जबरन कर वसूल कर लिया। एक अन्य सेनानायक ने परगना जलेसर के गावो में प्रवेश किया। जाट प्रबन्धक तथा सिपाही इस क्षेत्र को खाली करके पीछे हट गये। इस प्रकार इमाद ने इन परगनो पर कुछ समय के लिए अधिकार करने मे सफलता प्राप्त कर ली और वहा अपने अधिकारी नियुक्त कर दिये।[२]

७ – रूपराम कटारा की विफल समझौता वार्ता, दिसम्बर, १७५३ ई०

मराठा सेनाओं के साथ रघुनाथ राव ढाई महीने तक जयपुर राज्य मे पडाव डाले पड़ा रहा। ४ दिसम्बर को मराठा सैनिकों ने जयपुर के समीप अपना शिविर डाला। अपने राज्य को मराठों की लूट व बरबादी से बचाने के लिए सवाई माधो-

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० १०६ ब–१०७ अ; सरकार (मुगल), खंड १, पृ० ३२८, खंड २, पृ० २६४ पा० टि०।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० १०७ अ, १०६ ब; सरकार (मुगल), खंड १, पृ० ३२८, ३३५।

के अथक प्रयास, सैनिक योग्यता, कूटनैतिक प्रयत्नो से जाट राज्य की वैधानिक सीमायें पूर्व मे इटावा, पश्चिम मे नीमराना, उत्तर मे हरियाणा, रामगढ़ (अलीगढ), गढ़मुक्तेश्वर और दक्षिण मे कल्याणपुरी [1] तक फैल चुकी थी। राव बदनसिंह ने दरबार में अति स्पष्ट शब्दो मे कहा— "समस्त देश भाई-बन्धुओं से भरा है। मल्हार राव का आक्रमण हमारी वीरता, पौरुष तथा एकता की कसौटी है। इस संघर्ष से द्वेष भावना का पता चल जावेगा।" राव बहादुर सूरजमल की प्रेरणा से सभी उपस्थित-जनों ने एक स्वर से मराठो की अनैतिक माग का विरोध करके शीघ्र ही नव-निर्मित विशाल दुर्गों मे सुरक्षात्मक प्रबन्ध करने का निर्णय लिया। मोहन राम मोदी न दो वर्ष तक चार लाख सैनिको की रसद व्यवस्था करने का और दुर्ग दीवान चौधरी भज्जू सिंह ने यथा समय यथा स्थान पर्याप्त गोला बारूद तथा अन्य शस्त्रास्त्र भेजने का वचन दिया। [2] जाट राज्य व्यक्तिगत आन्तरिक प्रतिद्वन्दिता आपसी कलह से मुक्त था और प्रत्येक जाट दुर्ग अनेक वर्षों के लिए खाद्यान्न तथा शस्त्रास्त्रों में पूर्णत आत्म निर्भर था। इस प्रकार के संगठित, आत्म निर्भर तथा सम्पन्न राज्य से टक्कर लेना सरल कार्य नही था। जनवरी, १७५४ ई० के प्रारम्भ मे अपने विश्वास पात्र मन्त्री (वकील) रूपराम कटारा के परामर्श पर सूरजमल न रघुनाथ राव दादा को अपने पत्र मे लिखा— "सम्राट को निश्चित पेशकश भुगतान के अलावा वह शाति-समझौता के एवज मे मराठो को चार लाख रुपया (कुल ४० लाख) भुगतान के लिए तैयार है, अन्यथा जाट राज्य आपके आक्रमण की चुनौती को स्वीकर करने मे नही हिचकेगा।" उसने इसी समय अपने पत्र के साथ एक थैली मे पाच गोला तथा बारूद भेजकर रण-यात्रा प्रयोजन का साग्रह स्वागत [3] किया।

९ — जाट दुर्गों मे सामरिक व्यवस्था

सूरजमल ने अपने विशाल दुर्ग डीग, कुम्हेर, नव निर्मित भरतपुर तथा वैर को आक्रामकों की ताकत से लोहा लेने के लिए खाद्यान्न, घास दाना तथा शस्त्रास्त्रों

---

१ — सूदन, पृ० २३६; वाक्या राज०, खण्ड २, पृ० ६४।

२ — सूदन, पृ० २४१-२४३।

३ — भाऊ बखर, ३; कानूनगो, पृ० ८८, सरदेसाई, खण्ड २, पृ० २८६; सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० ३३१।

—११ जनवरी १७५४ ई० को मराठो की जनूयर छावनी से जाट प्रतिनिधि मोहनसिंह ने हरगोविन्द नाटाणी को लिखा कि सूरजमल की इच्छा ५० लाख रुपया तक देने की है, किन्तु मराठा अधिक चाहते हैं। इससे युद्ध सम्भव है। (आमेर रिकार्ड)।

से पूर्णतः सुसज्जित कर लिया था। राज्य में इधर उधर तैनात सभी फौज तथा सेनानायक राजधानी में लौट आये थे। जाट राज्य के नागरिकों में जागरुकता, समाज व सगठनो में चेतना, सैनिकों में एकता, भ्रातृत्व भावना तथा राज्य रक्षा की प्रबल भावना थी। जाट राज्य के सैनिकों को अभिमान था कि उन्होंने अब तक किसी भी मैदान मे पराजय स्वीकार नहीं की थी। कुवर जवाहर सिंह ने अपने पितामह राव बदनसिंह को कमान मे डीग राजधानी की सुरक्षा व्यवस्था संभाली। जयपुर दरवाजे पर गजसिंह चौहान के सगोत्री भाई बन्धु, पहाडताल दरवाजे पर कुंवर दलेलसिंह तथा सुल्तानसिंह को नैऋत्य (दक्षिण–पश्चिम) दिशा मे टीकैतों का निवास था, उनको कुवर वीर नारायण के साथ उसी स्थान पर, अचल दरवाजे पर कुवर खुशालसिंह, वरई बघा पर मेवाती, लालजी गौड तथा कुवर भवानीसिंह, कामां दरवाजे पर चौधरी बलराम के पुत्र विसनसिंह व किसनसिंह तथा राम सेवक, वायव्य (पश्चिमोत्तर) दिशा की बुर्जों पर जाट, मेव तथा गूजर, उत्तर मे बरसाना या दिल्ली द्वार पर गदाल गूजर को उसके पुत्रो के साथ, पण्डित रूपराम कटारा के पुत्र मसाराम व सूरतराम, ईशान (पूर्वोत्तर) दिशा में अनेक सेनानायक, पूर्व दिशा में गोवर्द्धन द्वार पर मुरसान के राजा दयाराम के पुत्र, मिश्र अटल बिहारी, बहज द्वार पर ठाकुर फौंदासिंह के पुत्र जैतसिंह, थून द्वार पर अमरसिंह चाहर को तैनात किया गया। बदनसिंह ने डीग तथा कुम्हेर के सम्पर्क द्वार अऊ की ओर विशेष ध्यान दिया और यहा की व्यवस्था जवाहर सिंह को सौंपी। उसने दक्षिण-पूर्वी मरहला पर जमवन्तसिंह, अऊ मरहला पर चौधरी जीवाराम बचारी, नौलखा मरहला पर उधमसिंह अवारिया को नियुक्त किया। समस्त दुर्ग प्राचीर तथा बुर्जों पर छोटी बडी तोपें, उनके समीप जज्जैल, बान चलाने वाली छोटी तोपें लगाई गई। दरवाजो की सुरक्षा के लिए खाई के पार दो–दो सहस्र सवार नियुक्त किये गये। इस प्रकार डीग दुर्ग मे एक लाख कलनी वन्दूकची सैनिक तैनात थे।[१]

सूरजमल घोड़े पर सवार होकर डीग से भरतपुर पहुंचा, जहां तब नवीन राजधानी का निर्माण कार्य प्रगति पर था। दुर्ग के चारो ओर सुजान गगा बन चुकी थी और किशनगढ वास आबाद हो चुका था। सूरजमल ने इसी वास मे अपने इष्टदेव श्री हरिदेव जी का मदिर तथा अन्य हवेलियां बनवाई थीं। केवल नगर प्राचीर बुर्ज तथा बाहरी खाई का काम शेष था। खाण्डे राव ने मेवात, उत्तरी व्रज मण्डल मे भीषण लूटमार, आगजनी तथा बरबादी शुरू कर दी थी। इससे पीडित रैय्यत ने भाग कर जाट राज्य की नवीन राजधानी में शरण ली, जिसको सूरजमल ने बीहड जगलों क बीच में अटवी, बुर्जें आदि बनवा कर बसाया। इस जगल को

---

१ – सूदन पृ० २४३–४५।

दुर्ग की ओर कूंच किया, परन्तु प्राचीर तोपो की धूआधार गोलावारी से व्यथित होकर उसको पीछे हटना पडा। स्थान-स्थान पर जाट सवारो ने उनके मार्ग मे प्रतिरोध पैदा किया। डीग के समीप मैदान में जमकर एक भीषण मुठभेड हुई, जिसमें उभय पक्ष के अनेक सैनिक काम आये और उनको भारी क्षति उठानी पडी। खुले मैदान मे हुए सघर्ष ने सूरजमल को स्पष्ट कर दिया था कि इस विशाल शत्रु सेना का कडा प्रतिरोध वह केवल अपने दुर्ग मे रह कर ही कर सकता है।[१]

रघुनाथराव तथा मीर बख्शी इमादुल्मुल्क सूरजमल के प्राणो के शत्रु थे और जाट साम्राज्य का विस्तारक सूरजमल कुम्हेर दुर्ग मे बैठ कर युद्ध संचालन कर रहा था। २८ जनवरी को रघुनाथ राव ने पंघोर छावनी से कूंच किया और वह कुम्हेर दुर्ग के आस-पास मैदान मे अपनी सेनाओ के साथ पहुँच गया।[२] जनवरी के प्रारम्भ से ही मल्हार राव का इकलौता तीस वर्षीय युवक पुत्र तथा सुप्रसिद्ध अहिल्याबाई का पति खाण्डे राव होल्कर अपनी चार सहस्र मराठा सेना के साथ होडल छावनी मे पडा था। अब मल्हार राव ने उसको भी कुम्हेर दुर्ग के घेरा में शामिल होने का आदेश भेजा। वह जाट राज्य के मेवाती गावो को लूटता हुआ शीघ्र ही होडल से १६ जनवरी को मराठा छावनी मे आ गया। २७ जनवरी को सम्राट ने रघुनाथ राव, मल्हार राव, जयप्पा सिंधिया तथा अन्य मराठा सरदारों के सम्मान में वस्त्र[३] भेजे। रघुनाथ राव ने कुम्हेर के समीप आकर जब अपनी वक्र भृकुटी तानकर दैत्याकार तोपो से सुसज्जित उस दुर्ग को ओर देखा, तब उसका शीघ्र भ्रम जाल पसीना-पसीना हो गया। लालच मे पडकर उसको जाट राज्य की विजय का लक्ष्य भारी पड गया और अन्यायिक कठोर माग के लिए उसको लज्जित होना पडा था।[४] एक ओर मराठा सेनायें कुम्हेर दुर्ग का घेरा डाल रही थीं, दूसरी ओर मीर बख्शी जाट जिलो तथा परगनों पर अधिकार करने मे व्यस्त था। सूरजमल ने अपनी सैनिक शक्ति को चार शक्तिशाली दुर्गों तक सीमित कर लिया था। इससे मराठा फौजो ने जाट राज्य मे फैलकर लूटमार शुरू कर दी थी। ३ फरवरी को दिल्ली मे समाचार मिला की दखनीयो ने आगरा नगर पर अधिकार कर लिया है और जाट मुत्सदियो (अधिकारियो) को भगाकर वहाँ अपने आदमी तैनात कर दिये हैं।[५] इधर १ फरवरी को सम्राट ने राजा देवीदत्त को पाच वस्त्रो की

---

१ – ता० अहमद शाही, पृ० १०६ ब।
२ – पे० द०, खण्ड २१, लेख, ६०, खण्ड २७, लेख ७६।
३ – ता० अहमदशाही, पृ० ११० अ।
४ – कानूनगो, पृ० ६८।
५ – ता० अहमदशाही, पृ० १११ ब।

खिलग्रत प्रदान करके कोइल तथा सिकन्दराबाद की फौजदारी प्रदान कर दी थी। देवीदत्त के अन्य साथियो को चार वस्त्रो की खिलग्रत प्रदान करके इन परगनों का इमाद के व्यक्तियो से कार्य भार संभालने के लिए रवाना कर दिया गया था।[1]

मल्हार राव के आग्रह पर ६ फरवरी को इमाद ने शाही रिसाला तथा बदख्शी सैनिकों के साथ पलवल छावनी से होडल की ओर प्रस्थान किया। उसका विचार आगरा पहुँचने का था। यहा से उसने कोइल तथा सिकन्दराबाद जिलों का प्रशासनिक प्रबन्ध संभालने के लिए अपने रिसालदारों को भेजा। फिर ८ फरवरी को इमाद ने द्रुतगति से एक दिन में ३५ किमी० का मार्ग तय किया और वह होडल से मथुरा के समीप आ धमका। यहां उसने कुछ दिन अपना शिविर लगाया। उसके अनेक बदख्शी तथा अन्य सैनिकों ने मथुरा के नागरिको का दमन शुरू कर दिया था। मथुरा हिन्दुओं का एक सांस्कृतिक तथा धार्मिक नगर है। इससे मल्हार के आग्रह पर इमाद ने अपने सैनिकों को अत्याचार तथा लूटमार न करने का कडा आदेश दिया। उसने मल्हार की प्रसन्नता के लिए ब्राह्मण तथा वैरागियों को कुछ रुपया भी दान दिया। अन्त मे उसने शाही रिसाला तथा तोपखाना के साथ २४ फरवरी (१ जमादि प्रथम) को मथुरा से कुम्हेर की ओर कूंच किया और मराठों से कुछ किमी० दूर अपनी छावनी डाली। इसी समय मेवात मे लूटमार तथा बरबादी करके अकीवत महमूद भी अपनी सैनिक टुकडियों सहित कुम्हेर की छावनी में आ गया।[2]

इस प्रकार उस समय के सर्वश्रेष्ठ व प्रवीण योद्धाओ के नेतृत्व में अस्सी सहस्र मराठा, कछवाहा तथा शाही सैनिकों ने भारी उत्साह, अति तत्परता व कड़ाई के साथ कुम्हेर का घेरा डाला और फिर मराठो ने अपनी खन्दकों व परिखाओं को आगे बढ़ाना शुरू कर दिया। फिर भी वेण्डल लिखता है— "यह पूर्णतः सत्य है कि कुछ समय पूर्व सुसज्जित शाही सेनायें आक्रामक ग्रामीण जाटो को व्यस्त रखने में विफल रही थीं। यद्यपि इस बार यह सेना उनको अपने बचाव के लिए मजबूर कर सकती थी, लेकिन जैसी आशा थी, इतनी विशाल सेना न तो सूरजमल के अनुपम साहस को डिगा सकती थी और न उसको अपने चरणों में झुकाने के लिए पर्याप्त थी।"

कुम्हेर दुर्ग की उन्नत प्राचीरों से दिन रात भयंकर अपलक होने वाली कच्चे लोहे की गोलाबारी ने शत्रु सेनाओ को दुर्ग से दूर रहने के लिए बाध्य कर दिया। इन तोपो की मार से बचने के लिए शत्रु सेना को छः किमी० दूर अपनी रक्षा-परिखा

---

१ – बे० क्रॉनो, पृ० ४७।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० १११ ब; पृ० ११४ अ; बे क्रॉनी०, पृ ४७; वेण्डल।

तैयार करनी पड़ी और अधिकांश सेना गागरसोली तथा गोलवा बुर्ज के बीच मैदान मे पड़ी रही, जबकि मीर बख्शी इमादुलमुल्क ने शाही रिसालो के साथ पंचोर के चामुण्डा टीले की सुरक्षा मे डेरा डाला। डीग–कुम्हेर दुर्ग के मध्य में मराठा सवार नियमित गश्त करते रहे, फिर भी वे इन दोनों दुर्गों के मध्य जाट किसानो के आवागमन को रोकने म विफल रहे। जाटो के भीमकाय दुर्गों पर दीर्घकाल तक कड़ाई से घेरा डालकर, दुर्गों मे दुर्भिक्ष की स्थिति पैदा करके या लम्बी मार करने वाली गढ भजक विशाल तोपो के प्रयोग से ही अधिकार करना सम्भव था। इसलिए अब उपयुक्त शाही तोपें प्राप्त करने का प्रयास किया गया।

सूरजमल का कूटनैतिक युद्ध मराठो की विफलता

दीवान गगाधर तातिया ने जाट दुर्गों को धूल–धूसरित करने के लिए इन्दौर मे नियुक्त मुजफ्फर खा गार्दी के पास साडनी सवार भेजकर मालवा से बारह सेर का गोला फेंकने वाली चार तोपें, दस सेर का गोला फेंकने वाली पाच तोपें, पाच सेर व दो सेर का गोला फेंकने वाले गजनाल तथा गोलाबारूद मगाने का सुझाव दिया।[1] मराठो की इन तापो को मालवा से अति शीघ्रता से लाना असम्भव था। इससे मल्हार ने इमाद पर कुछ जम्बूरक, रहकला जर्जेलें आदि शाही तोपें उधार प्राप्त करने का दबाव डाला और उसने सम्राट से दिल्ली तथा आगरा के शाही शस्त्रागारा स विशाल तोप तथा गोला–बारूद उधार देने का आग्रह किया।[2]

इसी समय सूरजमल ने भी सम्राट तथा वजीर के नाम पत्र भेजे। "यदि मीर बख्शी इमादुलमुल्क की महत्वाकाक्षी योजना को इस समय निष्फल नही किया गया तो वह सफलता से पागल हो जाएगा और मराठा के सहयोग से दुर्घर्ष शक्ति प्राप्त करके वजीर पद ग्रहण कर लेगा। वह अपने कल्पनातीत स्वप्निल विचारो के अनुसार साम्राज्य को तानाशाही ढाचे मे ढालने के लिए सरकार का तख्त भी उलट देगा।" अत उसने अपने पत्र मे सुझाव दिया 'इसलिए मल्हार राव तथा इमाद को हमारे विरूद्ध प्रयोग क लिए शाही शस्त्रागार से लम्बी मार करने वाली बडी तोपें नही दी जावें।' साथ ही उसने लिखा, "नवाब सफदर जग तथा राजपूत राजाओं को भी उत्तर भारत से मराठो का निकालने के लिए आमन्त्रित किया जावे।' 'वजीर इन्तिजाम धूर्त राजनयिक था। वह समझता था कि ज्योही मराठा व इमाद जाट दुर्ग व उनकी अपार सम्पत्ति पर अधिकार कर लेंगे, वे शीघ्र ही दिल्ली लौटेंगे और सफलता के मद में चूर होकर मित्र व शत्रु किसी को भी बरबाद करने मे आगा पीछा नही करेंगे। मात्र एक सूरजमल ही आपत्काल मे उनका सहयागी हो सकता था।

---

१ – पे० द०, जि० २१, लेख ५६।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० १०६ ब, मियार खण्ड ३, पृ० ३३५।

इससे उसने सूरजमल के सुझाव को मानकर सम्राट को शाही तोपखाना न देने का परामर्श दिया।[१]

फरवरी के अन्त मे इन्दौर से मराठा छावनी मे कई गाडी गोला-बारूद तथा सीसा पहुँच गया था। मार्च के आरम्भ मे मीर बख्शी ने आगरा के किलेदार से बडी व लम्बी मारें करने वाली तोपें प्राप्त करने के लिए अपना कारिन्दा रवाना किया। मल्हार राव ने आगरा नगर मे तैनात बाजीराव को आगरा के किलेदार से दो तोपें प्राप्त करके शीघ्र ही भेजने के लिए पत्र लिखा। उसने पत्र मे यह भी लिखा कि इन तोपो के लिए चौदह सौ रूपया सयुक्त रूप से भुगतान करने को भेजा जा रहा है। किलेदार ने मीर बख्शी को स्पष्ट शब्दो मे लिखा कि पाच से अधिक तोपें भेजने के लिए सम्राट के आदेश अपेक्षित हैं। इस प्रकार उसने मीर बख्शी को बडी तोपें उधार न देकर जाटो का पक्ष लिया।[२] तब मीर बख्शी ने सम्राट तथा वजीर को आगरा तथा दिल्ली से बडी-बडी धूमधानी, किलाकुशा, अलम सिनानी, धूमक आदि तोपें रवाना करने का आग्रह किया। इसके उत्तर मे सम्राट ने मल्हार तथा इमाद को लिखा कि शाही सैनिक तथा तोपचियो को दो वर्ष से वेतन नहीं मिल सका है। गृह युद्ध मे कारखानो का काफी गोला-बारूद भी बरबाद हो चुका है। इससे शाही शस्त्रागार में भारी कमी आ गई है।[३] इस प्रकार उसने आग्रह को टालकर सूरजमल का पक्ष लिया।

सम्राट का उत्तर मिलने से पूर्व ही मार्च के द्वितीय सप्ताह मे इमादुल्मुल्क ने अपने प्रधान सेनापति अकीबत महमूद को बदख्शी सवारो के साथ सम्राट से मिलकर बातचीत करने तथा शाही तोपखाना उधार लाने के लिए दिल्ली भेजा। उसके साथ उस समय एक मराठा टुकडी भी थी, ताकि मार्ग में तोपों को जाट नही लूट सकें। इस प्रयोजन को निष्फल करने के लिए सम्राट ने सलाहकार परिषद् बुलाई और वजीर ने प्रभावी कदम उठाये। अनियन्त्रित विद्रोही सैनिको के कारण नगर मे पूर्ण अव्यवस्था फैल रही थी और सम्राट व वजीर इनके घेरे में थे। १६ मार्च को अकीबत ने फरीदाबाद से कूच करके मीर मुशरिफ बाग मे पडाव डाला। उसकी धूर्तता तथा मराठों की शक्ति को देखकर भूखो मरते शाही सैनिक पीछे हट गये। २० से २३ मार्च तक अकीबत ने शहर में लूटमार की। २४ मार्च को बदख्शी रिसालो ने शाही इलाको मे लूटमार की। दिल्ली के बाजारों मे सैनिक दगल होने लगा। अन्त में

---

१ – सियार, खड ३, पृ० ३३६, पे० द०, जि० २१, लेख ६०; कानूनगो, पृ० ९२; अवध, पृ० २५६।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० ११४ ब; होल्कर शाही, खड १, लेख १०७-१०६।

३ – ता० अहमदशाही, पृ० ११५ ब, सियार, भाग ३, पृ० ३३६, शाकिर, पृ० ७६।

६ अप्रेल को शाही सेनाओं ने अकीबत महमूद को वहा से भागने के लिए बाध्य कर दिया । [१]

खाण्डेराव का गोलोकवास, १५ मार्च, १७५४ ई०

वेण्डल के अनुसार— "फिर भी जाटो ने शत्रुओं की परवाह न करके अपनी तोपखाना पंक्ति की सुरक्षा मे किलो से बाहर निकल कर अनेक साहसिक मुठभेड़ो मे भाग लिया। परिणामतः बाहर पडी शत्रु सेना जाट आक्रामक दस्तों से सदैव भय-भीत रहती थी। वे अपने इलाके से भली भाति परिचित थे और उनका कोई भी आक्रमण व्यर्थ नहीं जाता था, क्योकि वे रसद काफिलो पर अचानक आक्रमण करते थे। यदा-कदा उनको पीछे भी हटना पड़ता था, फिर भी शत्रु की रसद पर अधिकार कर लेते थे।"

मराठा अभिलेखो से ज्ञात होता है कि मार्च के प्रथम सप्ताह के अन्त में विट्ठल शिवदेव के नेतृत्व मे मराठा-राजपूतो ने जाट टुकड़ियो के मार्ग मे गतिरोधात्मक मोर्चाबन्दी की। जाट सैनिको ने इस गतिरोध को निष्फल करने के लिए आक्रमण कर दिया। इससे मराठा-राजपूतो को पीछे हटकर एक गाव मे शरण लेनी पड़ी। एक अन्य मराठा लेख से ज्ञात होता है कि नारो शकर के नेतृत्व में मराठा सवारो को डीग दुर्ग पर आक्रमण करने के लिए भेजा गया था। दुर्ग के बाहर उभय पक्षो मे जमकर संघर्ष हुआ। जाटो ने अपने अनुपम साहस से नारो शकर तथा उसके सैनिको को मैदान छोड़कर भागने के लिए बाध्य कर दिया। जाट सवारों ने कुछ दूरी तक उनका पीछा किया। इससे मराठा सवारो ने अति तेजी से मथुरा की ओर भागकर प्राण बचाये। इस समय मराठा सरदारों को यह विश्वास होने लगा था कि हर गोविन्द नाटाणी जाटो से मिलकर घेरे को विफल कराने की चेष्टा कर रहा है। इससे जाट दुर्गों पर अधिकार करने की सफलता के लिए रघुनाथ राव ने युद्ध स्थल के समीपवर्ती ग्रामों में घमकर लूटमार करने की एक योजना बनाई। १५ मार्च को इमादुल्मुल्क को प्रोत्साहित करने के लिए एक लिखित अनुबंध किया गया कि जाट राज्य के संचित कोष तथा नागरिको की लूट में जो भी धन, चल सम्पत्ति प्राप्त होगी, उसका एक चौथाई इमादुल्मुल्क को दे दिया जावेगा। [२] किन्तु तेजधावक जमींदारो ने इन प्रयासो को विफल कर दिया।

१—फ्रेंकलिन, पृ० ३; ता० अहमदशाही, पृ० ११५ ब-११६ अ, ११६-१२० अ, १२२-१२३; ता० मुजफ्फरी, पृ० ८५-६; दे० ऑनी, पृ० ४८।

२—पे० द०, खण्ड २७, लेख, ६४, ६६, १०४।

मराठों ने दुर्ग विध्वंसक तोपों की प्रतीक्षा में दुर्ग का नियमित घेरा रखा और खाण्डेराव के कुशल निरीक्षण मे साबात (ढकी रक्षा पंक्ति) के सहारे मराठा सिपाही नगर-प्राचीर के समीप पहुँचने मे सफल हो गये। दिल्ली मे पहुँचे समाचारों में यह आशा व्यक्त की गई कि मराठा व इमाद अब कुम्हेर दुर्ग पर भीषण आक्रमण करने का उचित अवसर देख रहे हैं। [1] डेढ़ माह तक रुक रुककर नियमित युद्ध चलता रहा। एक दिन (१५ मार्च) खाण्डेराव होल्कर भोजनोपरान्त पालकी मे सवार साबातों का निरीक्षण करता हुआ अग्र मोर्चों तक निकल गया था। इसी समय दुर्ग-प्राचीर से जाट तोपचियो ने गोला फेंकना शुरू कर दिया। दैवयोग से अचानक ही चूल पर घूमने वाली छोटी तोप (जज्जेल) द्वारा इधर-उधर छितराने वाले गोले से उसका प्राणान्त हो गया। कुम्हेर के उत्तर में पांच किमी० गागरसोली नामक गाव के समीप मैदान में खाण्डेराव की स्मृति में एक छतरी तथा संगमरमर की प्रतिमा अभी तक इस युद्ध की याद ताजा बनाये हुये है। इस मन्दिर मे नियमित सेवा-पूजा होती थी और इन्दौर राज्य की ओर से प्रतिवर्ष खर्चा भेजा जाता था। सभवतः इसी स्थान पर उसका प्राणान्त हुआ था। मल्हारराव होल्कर कुम्हेर छावनी से मथुरा पहुँचा और यहां उसने अपने प्रिय पुत्र का अन्तिम संस्कार तथा श्राद्ध किया। खाण्डेराव की तीन पत्नियां तथा सात गायक पासवानों ने सतीत्व व्रत धारण किया और वे उसके साथ सती हो गईं। मल्हार राव के विशेष अनुनय पर उसकी एकमात्र सुप्रसिद्ध वीरांगना पत्नी अहिल्या बाई, गर्भवती होने के कारण, सती नहीं हो सकी। इसने मालेराव को जन्म दिया, जिसका १७६७ ई० मे देहान्त हो गया। [2] आगे

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ११७ अ।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० ११७ ब; ता० मुजफ्फरी, पृ० ८३; राजवाड़े, खण्ड १, लेख ३३; हिंगणे, खण्ड २, लेख ४०; शिन्देशाही, भाग १, लेख, ११२, भाग ३, लेख १२२; सरकार (मुगल), खण्ड १, पृ० ३१३।

— सरदेसाई (खण्ड २, पृ० ४८६) की गणना के अनुसार खाण्डोजी की मृत्यु १७ मार्च को हुई थी। भाऊ बखर (पृ० ४) के अनुसार "घेरा लगने के लगभग डेढ़ माह बाद"। डा० कानूनगो (पृ० ८६) २७ फरवरी मानते हैं। दे० क्रॉनो० (पृ० ४८) के अनुसार दिल्ली में यह समाचार १६ मार्च को मिला था।

— इस घटना के बारे मे अभी तक यह किंवदन्ती प्रसिद्ध है—

"मैं आई कछु और कू, यहा हो गई कछु और।
अंगिया फाडो गाठ की, देखि सती पंघोर।"

हर गोविन्द नाटाणी ने मातमपुरसी का सिरोपाव, हाथी, महोला दिया और २४ मार्च को माधोसिंह ने अपने पत्र में सम्वेदना प्रगट की थी। द० कौ०, ६/१०७; द्रा० ख०, ५/७६४।

समझकर अहिल्या बाई ने इन्दौर राज्य का शासन अति योग्यता से चलाया।

कछवाहा दीवान हर गोविन्द नाटाणी मराठा शिविर से बीस किमी० दूर अपने डेरो मे था। अब उसने अपने डेरे रघुनाथ राव के समीप लगाकर विचार-विमर्श किया। ३० मार्च को उसने मीर बख्शी इमाद से भी मुलाकात की। एक अप्रेल की रात्रि को सूरजमल कुम्हेर दुर्ग से निकलकर हर गोविन्द नाटाणी के डेरों पर बातचीत करने पहुंचा और सकुशल दुर्ग मे लौट आया। फिर उसने मराठा सरदार के पास अपना वकील भेजकर खाण्डराव की असामयिक मृत्यु के प्रति हार्दिक खेद तथा संवेदना प्रगट की और मल्हार राव के लिए शोक सूचक वस्त्र भेजे। इमाद ने गहरी सम्वेदना प्रगट करते हुए मल्हार राव से कहा कि "आगे आप मुझको खाडो जी की तरह अपना पुत्र समझें।" ६ अप्रेल को सम्राट ने मराठा प्रतिनिधि बाबूराव हिंगणे के साथ मल्हार राव के पास सम्वेदना-सूचक वस्त्र, खाण्डेराव के पुत्र को हीरा जवाहरात और अहिल्या बाई को आभूषण रवाना किये। पूना दरबार ने अन्त्येष्टि संस्कार के लिए दस सहस्र रुपयो की स्वीकृति प्रदान की। मल्हार राव ने शास्त्री सूर्यनारायण पोण्डरीक को इस कर्म सम्पादन हेतु सरकार कोइल, परगना शाहबाद मे पछावरा नामक गाव उदक जागीर मे प्रदान किया।[1]

रानी हंसिया के कूटनयिक प्रयास तथा सूरजमल की सफलता

खाण्डेराव का क्रिया कर्म श्राद्ध सम्पन्न करके ४ अप्रेल को मल्हार राव मथुरा से कुम्हेर छावनी में लौटा।[2] वृद्धावस्था मे इकलौते युवक पुत्र की मृत्यु से व्यथित, मानसिक संताप से क्रुद्ध मल्हार राव की प्रतिहिंसा भडक उठी और इस समय उसने दांत पीसते हुए क्रोधाभिभूत होकर घोर प्रतिशोध की प्रतिज्ञा की। उसने कहा— "समझौता स्वीकार न करके मैं कुम्हेर दुर्ग की दीवारो को धूल-धूसरित कर दूंगा। इसकी मिट्टी को यमुना में बहा दूंगा और सूरजमल का सिर काट डालूंगा। केवल इसके बाद ही मै अपने जीवन को धन्य समझूंगा। यदि मै विफल रहा, तो प्राणोत्सर्ग कर दूंगा।"[3] इस प्रकार अब उभय पक्ष की भावनाओ मे उफान आ रहा था।[4]— मराठो ने अपने प्राणो को हथेली पर रखकर भारी उत्साह से कुम्हेर पर भीषण आक्रमण किये। इस प्रकार घेरे को तीन माह निकल चुके थे। इससे मराठा छावनी में पड़ोसी परगनो से आने वाली रसद पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ने लगा था और

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ११७ ब, १२१ ब, होल्कर शाही, खण्ड १, लेख ११२, ११४, ११७।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० १२२ अ।

३ – भाऊ बखर, अनु० ५, पृ० ४।

४ – सरदेसाई भाग २, पृ० ४८६।

जटवाड़ा की अर्थ-व्यवस्था असन्तुलित होने लगी थी। फसल उजड रही थी। अब सूरजमल मराठों की प्रतिहिंसात्मक भावना, बल प्रयोग की गम्भीरता को भली प्रकार महसूस करने लगा था, फिर भी प्रत्येक प्रभात उसके लिए शुभकर प्रतीत होता था। यह समय की बात थी कि जिन जाटो ने महान आपत्काल मे सम्राट, उसके प्रधान मन्त्री सफदर जग तथा राजपूतो की सैनिक सेवायें की थीं, आज उस हिन्दुस्तान मे मराठों के भय से कोई भी शक्ति खुलकर जाटो की सहायता करने के लिए उद्यमशील नही थी। राजस्थान मे मराठो ने राजपूत शासको तथा उनके सामन्तो के ऐश्वर्य को प्राय छीन लिया था और वे प्रतिवर्ष उनकी सम्पदा तथा वैभव को घोडो की टापो के नीचे कुचलते थे।[१] हिन्दुस्तान का सम्राट इस संघर्ष मे विरोधी होकर भी बलहीन था। यहाँ तक कि अवध का नवाब सफदर जग स्वयं मराठो के भालो से भयभीत था और वह अकेला अपने अभिन्न सहयोगी की सहायता के लिये भी नही आ सकता था। यह सम्भावना व्यक्त की गई कि सूरजमल की बरबादी से हिन्दुस्तान के मानचित्र से जाट साम्राज्य का राजनैतिक पतन सन्निकट था। डा० कानूनगो के शब्दों में—"यद्यपि राजपूतानी की अपेक्षा सासारिक जीवन का विशद ज्ञान मानवीय चरित्र के सूक्ष्म गूढ तथ्यों को पहचानकर एक जाटनी स्वच्छन्द वातावरण मे पलती है, रहती है। वह अधिक आशावादी और शक्ति का विन्दु होती है। परन्तु अब राजपूतो की भाति जाट भी शाति के साथ उस हृदय विदारक घडी की प्रतीक्षा करने लगे, जबकि राजमहलो (ड्योढी) से उठती जौहर की उत्ताल शिखायें नभ मण्डल को छूने लगती और इससे प्रेरित होकर जाट सैनिक अपनी कीर्ति, अटल विश्वास को सजोये अपनी तलवार सूतकर बाहर निकल पडते।"[२]

सूरजमल के वकील ने उसको मल्हार राव होल्कर की घोर प्रतिज्ञा से अवगत कराया, तब वह स्तब्ध रह गया। महान संकटकाल में सूरजमल अपनी चतुर विदुषी ज्येष्ठा रानी हसिया[३] से सदैव सलाह लिया करता था। उसने शीघ्र ही अपनी पत्नी रानी हसिया को याद किया। हसिया भयकर युद्ध तथा उसके परिणाम को भली भाति समझती थी। उसने पति की उदासीनता को तोडते हुए आश्वासन दिया

---

१ – ता० मुजफ्फरी, पृ० ८८।

२ – कानूनगो पृ० ९०।

३ – डा० कानूनगो का मत है कि हसिया का अर्थ मुस्कराता चेहरा है और यह रानी किशोरी के लिए प्रयुक्त किया गया है। (पृ० ९०) उनके अनुसार रानी किशोरी ही हसिया थी। डा० यदुनाथ सरकार, सरदेसाई आदि आधुनिक लेखकों ने कानूनगो का अनुसरण किया है। भाऊ बखर में किसी रानी का नाम अंकित नहीं किया गया है। सम्पादक ने पाद टिप्पणी मे भी किसी नाम का उल्लेख नहीं किया है। (पृ० ५, पा० टि० १७)।

कि—"आप अपनी अकर्मण्यता, उदासीनता को भूलकर मेरे ऊपर विश्वास करें। विजय हमारी ही होगी।" इसके बाद हसिया ने रूपराम कटारा से विचार-विमर्श किया। रानी को मल्हार राव होल्कर तथा जयप्पा सिंधिया के बीच विद्यमान आपसी राजनैतिक ईर्ष्या तथा कटुता का पूर्ण ज्ञान था।[1] रघुनाथ राव की छावनी मे केवल जयप्पा अति उदारमना, स्पष्टवादी, आत्मविश्वासी तथा अपने वचनों का दृढ़पालक था। रानी ने शीघ्र ही इस सकट से उभरने का एक रास्ता खोजकर मन्त्री प्रवर पुरोहित रूपराम से कहा— "इस समय हमारे सामने केवल एक ही मार्ग है, अन्य नही। आपमे और जयप्पा मे पारस्परिक प्रगाढ़ मित्रता है और जयप्पा अपने वचनो का पक्का है। आप ही केवल उसको हमारे पक्ष मे मोडकर (हमको) बचा सकते हैं। इसके अतिरिक्त मैं अन्य कोई सरल उपाय नही सोच सकती।" अप्रेल के मध्य में एक रात्रि को कुम्हेर दुर्ग से निकल कर तेजराम कटारिया राजपूत सिंधिया की छावनी में पहुँचा। वह अपने साथ मराठा छावनी मे दलगत राजनीति का अखाडा तैयार करने, जयप्पा का सरक्षण वरण करने तथा "पगडी बदल भ्रातृत्व मैत्री" के लिए सूरजमल का एक अति सम्वेदनशील पत्र तथा उसकी पगडी भी छिपाकर ले गया था।[2] इस समय जयप्पा सिंधिया अपने शिविर मे ज्वर से पीडित था और उसकी इस ज्वर-पीडा से छावनी के सरदार अति चिन्तित व परेशान थे। शुभचिन्तक शीघ्र लाभ की मगल कामना कर रहे थे। जाट वकील तेजराम कटारिया ने सम्वेदना के स्वरो[3] मे जयप्पा से निवेदन किया, 'इस समय आप मेरे (सूरजमल) ज्येष्ठ भ्राता हो और मैं (सूरजमल) आपका लघु भ्राता हू। जिस प्रकार आप उचित समझें मेरी (सूरजमल) रक्षा करें।" इसके बाद तेजराम ने सिंधिया के सिर पर सूरजमल की पगडी रख दी और स्वयं ने सूरजमल के लिए सिंधिया की पगडी ग्रहण की। उसने राज्य की प्रतिष्ठा, मानवीय सम्मान को चिरस्थाई बनाने की पुन प्रार्थना की। इस प्रकार सिंधिया स्वय गहन चिंतन में लीन हो गया। उसने विचार किया कि यदि वह सूरजमल का पक्ष लेगा तो वह अपने स्वामी के प्रति विश्वासघात करेगा। यदि वह इस प्रश्न को नही सुलझा सका तो अपने मित्र तथा पगडी बदल भ्राता के साथ धोखा करेगा इससे उसने इस महान विपत्ति के समय अपने गोपनीय सलाहकारो से मत्रणा करक निश्चय किया कि वह शरणागत की रक्षा करगा। जयप्पा न सूरजमल के पत्र तथा भेंट का मानवीय व नैतिक उत्तर दिया। उसने सूरजमल को सशपथ हार्दिक मित्रता का वचन दिया और

---

१ – शिन्देशाही, खण्ड १, लेख १२२।
२ – भाऊ बखर, सख्या ६ व ७, पृ० ५।
३ – शिन्देशाही, खण्ड १, लेख १२२, (सिंधिया लगभग डेढ़ माह तक ज्वर से पीड़ित रहा)

प्रगाढ मित्रता के रूप मे अपने पत्र तथा पगडी के साथ अपने इष्टदेव की पूजा मे से सयता सूचक विल्वपत्र भी भेजा। इससे सूरजमल को शम्भु छावनी म भारी मदद मिल गई।[१]

निःसन्देह रानी हसिया एक शक्ति के रूप मे उभरी। उसने अपनी चतुरता, धार्मिक विचार, भारी उपहार तथा मित्रता की कामना स जयप्पा सिंधिया से बचन ले लिया था।[२] सिंधिया के सरक्षण तथा वचनो का समाचार पाकर मल्हार राव को अपनी घोर प्रतिज्ञा पूर्ण न होने की स्थिति से भारी वदना हुई। निराश मन से बडबडाता अपने डेरो पर लौट आया और घोर प्रतिवादी बन गया। इसके बाद रघुनाथराव तथा सखाराम बापू न आपस मे मत्रणा की। सखाराम को यह विश्वास नहीं हो सका कि सिंधिया किसी भी समय तथा किसी भी प्रकार अपने स्वामि के प्रति विश्वासघात कर सकेगा। उसे मल्हार के आरोपो पर विश्वास नही हुआ और सिंधिया के पक्षधरों स यथार्थ स्थिति तथा कारणो की जाच करन का सुझाव दिया।[३]

अपनी विदुषी पत्नी हसिया की सत्प्रेरणा से सूरजमल स्वय उद्यमी बन गया और इसी समय उसने सम्राट तथा वजीर के साथ मिलकर एक नवीन षडयन्त्र की रचना कर डाली। वजीर अभी तक लोकाचार के नाते इमाद से रिश्तेदारी निभा रहा था। किन्तु अब सूरजमल व वजीर ने मिलकर इमाद तथा मराठो के विरुद्ध फूट जाल फैलाने का प्रयास किया। सम्राट एक तांत्रिक के वशीकरण मत्र मे फस गया और उस पर प्रेतात्मा का प्रभाव लक्षित होने लगा। शाही दरबार से शाही मुहर से महाराजा माधोसिंह, महाराजा विजयसिंह राठौड तथा नवाव सफदर जग के नाम भेजे गये पत्रो का दिल्ली मे उचित उत्तर पहुँच गया था। इन सभी ने शाही झण्डे के नीचे सगठित होकर विद्रोही मराठा तथा अपहर्ताओं को उत्तर भारत से बाहर निकालने के लिए एक सघ बनाने के सुझाव को स्वीकार कर लिया था। परन्तु इन सभी शक्तियों ने अपने पत्रो मे आक्रामक योजना की रूपरेखायें बनाने की जुम्मेदारी चतुर सूरजमल पर डाल दी थी। तब सूरजमल ने सम्राट को साम्राज्य के कल्याण तथा उसकी सुरक्षा के बारे मे पत्र में सुझाव प्रस्तुत किया, "क्या इन परिस्थितियो म यह उपयुक्त नही होगा कि जहापनाह अपने वजीर व शाही सैनिको के साथ दोआव के शाही परगनो का प्रबन्ध करने अथवा सैर सपाटे के बहाने कोइल तक प्रस्थान करें और वहा उस समय तक रुके रहें, जब तक सफदर जग उनसे आकर नही मिल जावे। फिर अवध की सेनाओ सहित आगरा की ओर

---

१ – भाऊ बखर, अनु० ७, पृ० ५-६; कानूनगो, पृ० ६१, गुल १८०, १, पत्र २१२, २२७

२ – उपरोक्त, सरदेसाई, खण्ड २, पृ० ४८६।

३ – भाऊ बखर, अनु० ७, पृ० ६।

कूँच किया जावे, जहा कछवाहा तथा राठौड़ नरेश भी अपनी सेनाओं के साथ आकर मिल जावेंगे।" सूरजमल की यह योजना स्थान-स्थान पर चम्बल नदी के घाटो को रोककर मराठों के सभी रास्ते बन्द करने की थी। उसने स्पष्ट कर दिया "यदि मराठा कुम्हेर का घेरा उठाकर आगरा की ओर प्रस्थान करेंगे तो वह स्वय उनके पीछे पीछे चलकर आगरा मे शाही सेनाओं स आकर मिल जावेगा।[1] सम्राट ने सूरजमल की इस नीति तथा योजना को मान लिया और इसी समय उसने इमाद को एक अति उत्तजनात्मक पत्र लिखा, जबकि वास्तव में यह पत्र सूरजमल को लिखा गया था, "वह दिल्ली स अपनी सेनाओ के साथ तुम्हारे विरुद्ध कूच कर रहा है और वह जाटो (अपनी) की पृष्ठ भागीय सेनाओ पर आक्रमण करेगा। इस बीच मे जाट अपने किला से, जिनमे वे घिर रहे हैं, स्वतन्त्रता पूर्वक निकल कर आक्रमण कर सकते हैं।" लेकिन यह पत्र सूरजमल के पास न पहुँचकर इमाद के हाथ लग गया और उसने यह पत्र घमण्ड के साथ सम्राट के पास वापिस भेज दिया।[2] सूरजमल की प्रस्तुत महान योजना की सफलता साम्राज्य के अमीरो के साहस तथा कौशल पर निर्भर थी। सम्राट स्वय विलासिता में डूबा रहता था। राजमाता उधमबाई मे क्रियाहठ तथा ओछापन था। इससे वह नवाब सफदर जग से मित्रता करने का विरोध कर रही थी।[3] इस प्रकार वजीर इस योजना को क्रियान्वित करने मे विफल रहा और इसका दुष्परिणाम मुगल साम्राज्य को भुगतना पडा।

सूरजमल ने जयप्पा से अति विनम्र शब्दो मे पुन. आग्रह किया और उसको भारी भेंट व उपहार भेजे। सूरजमल के इस विनम्र आग्रह तथा विनय पर सिंधिया ने पुनः अपने सलाहकारों से विचार किया और अब उसने अपने स्वामी की अवज्ञा करके भी "पगडी बदल भ्राता" को समर्थन देने का दृढ निश्चय दोहराया। फिर वह रघुनाथराव को अपने पक्ष मे करने के लिए उसके डेरो पर गया और उसने प्रार्थना की— "सूरजमल इस समय जो कुछ भी खडनी देने को तैयार है, उसे स्वीकार कर लिया जावे और निरथक युद्ध को समाप्त करके आगे प्रस्थान किया जावे, क्योंकि कुम्हेर दुर्ग का विध्वस तथा जाट गढियो पर अधिकार बिना लम्बी मार करने वाली बडी तोपो के सम्भव नही है और यह तोपें सम्राट के अधिकार में हैं। उसने इन तोपो को उधार देने से मना कर दिया है।" इसी समय उसने इमाद की कुटिलता

---

१ – सियार, खण्ड ३, पृ० ३३६, ता० मुजफ्फरी, पृ० ८८–९, (इ० डा०, खड ८, पृ० ३२१), पे० द०, जि० २१ लेख ९०, कानूनगो, पृ० ९२–३, अवध पृ० २५९।

२ – कीन, फॉल ऑफ दि मुगल एम्पायर, पृ० ४८।

३ – सियार, खड ३, पृ० ३३७, सरकार (मुगल), खड २, पृ० ३३९।

तथा उसके सहयोग की विफलता का भी पर्दाफाश किया। उसने आगे कहा, "यदि हम (घेरा उठाकर) प्रस्थान करने मे विलम्ब करेंगे, तो हमको सेना की व्यवस्था करना, उसको नियन्त्रित (रोकना) रखना कठिन हो जावेगा।" इसको सुनकर दादा साहब काफी परेशान होकर दुविधा मे पड गये। उसने सोचा, यदि वह जाटो से समझौता करता है, तो होल्कर उसके हाथो से निकलता है और यदि इस मामले को शीघ्र ही तय नही करता है, तो मराठो के हित में अलाभकारी होगा।" इसलिये उसने जयप्पा को कुछ समय बाद अपने निर्णय से अवगत कराने का वायदा किया।[1]

२७ अप्रेल को वजीर इन्तिजामुद्दौला तथा समसामुद्दौला अहमदशाह, उसकी माता उधमबाई, शाही सेवक व चाकरो को लेकर दिल्ली से दस कि०मी० पूर्वोत्तर यमुना नदी के किनारे लूनी पहुँचे। नवाब सफदर जंग भी कन्नौज के नीचे गंगा के किनारे मेंहदी घाट पर पहुँचकर बादशाह के कोइल पहुँचने की प्रतीक्षा करता रहा। तभी अकीवत लूनी से १६ कि०मी० दक्षिण-पूर्व मे गाजियाबाद पहुँच गया और उसने मार्ग मे काफिलों व खाद्यान्न से लदी गाडियो को लूट लिया। इधर उधर भटकते हुए सम्राट ने ८ मई को लूनी से प्रस्थान किया और १७ मई को सिकन्दराबाद से ५-६ कि०मी० आगे लगे डेरों मे प्रवेश किया। यहा पर सम्राट को सूरजमल का मराठा तथा इमाद के साथ शाति समझौता का समाचार मिला। इससे छावनी मे भारी हलचल मच गई। निश्चित योजना के अनुसार सम्राट कोइल नहीं पहुँच सका और उसको अपनी अकर्मण्यता तथा देरी का दुष्परिणाम भुगतना पडा।[2]

मराठा अभिलेखो से पता चलता है कि जाट अपनी योजना की सफलता के लिए तत्परता से प्रयत्नशील थे। त्र्यम्बक राव पेठे, विट्ठल शिवदेव, शिवाजी रगराव आदि सेनानायकों की कमान मे मराठा सैनिक किसी स्थान से रुपया लेकर आ रहे थे। जाट सैनिकों को इसका पता लग गया और उन्होंने आक्रमण करके इकतालीस घोडों पर लदा सभी खजाना लूट लिया। अन्य लेख के अनुसार अप्रेल मे विट्ठल शिवदेव की कमान मे खजाना लाया जा रहा था, उसको भी जाटों ने छापामार कर मार्ग मे लूट लिया।[3] इस प्रकार जाट दुर्गों के बाहर भी जाटो का संघर्ष नियमित

---

१ – भाऊ बखर, अनु० ६, पृ० ६-७, सरदेसाई, जि० २, पृ० ४८६।

२ – ता० मुजफ्फरी, पृ० ८६, ८८-८६, ता० अहमदशाही, पृ० १२७ ब, दे० क्रॉनी०, पृ० ४६, सियार खंड ३, पृ० ३३७, पे० द०, खंड २१, लेख ६०, सरकार (मुगल), खंड १, पृ० ३४०।

३ – पे० द०, खण्ड २७, लेख ८१ (३० अप्रेल)।

रूप से चलता रहा। आसपास के परगनों से मराठा छावनी में आने वाले खाद्यान्न पर भी भारी असर पड़ा और मराठा अब रसद की तंगी भुगतने लगे थे। फादर वण्डल लिखता है—"कुम्हेर के घेरा को अब चौथा महीना चल रहा था और दुर्ग में घिरे लोगों को इसके अतिरिक्त कोई हानि नहीं हुई थी जितनी बाहर पड़ी सेना को। उसने बाहरी भूखण्ड को खूंद डाला था। शत्रु जब भी दिन में भारी प्रयास से अपनी तोपों से नगर प्राचीर में कोई खन्दक कर लेता था, तभी सूरजमल व जाट किसानों के अथक प्रयास से रात्रि में उसे अति तीव्रता से भर दिया जाता था। इससे दूसरे दिन प्रातःकाल खन्दक का पता लगाना कठिन था। फलतः जब घेरा उठाया गया, तब नगर प्राचीर काफी सुदृढ़ और चौड़ी हो चुकी थी। अब मल्हार व इमाद दोनों ही आक्रमण की मन्द गति से काफी क्लान्त दिखलाई देने लगे थे और अनुभव करने लगे थे कि वे इस घेरे के शीघ्र ही समाप्त होने पर एक दूसरे को आपस में बधाईयां नहीं दे सकेंगे। इधर ग्रीष्म आने वाला था। सूर्यताप से सैनिकों को आवश्यक रूप से पीड़ा होती। इसके साथ ही पेय जल की न्यूनता से काफी परेशानी थी।"[1] फलतः मराठा शिविर में रघुनाथ राव पर जाटों के साथ समझौता करने के लिए भारी दबाव डाला जाने लगा था। सम्राट के दिल्ली से प्रस्थान के बाद इमाद ने इस संकट पर गम्भीरता से विचार किया और उसने मल्हार के सहयोग से सम्राट तथा वजीर को पूर्णतः बरबाद करने का निश्चय कर लिया था। मल्हार राव ने भी इमाद को अपना "धर्मपुत्र" घोषित करके हर सम्भव सहायता का वचन दिया और इमाद भी पुत्रवत उसकी आज्ञा पालन के लिए तैयार हो गया।[2] इस प्रकार मल्हार तथा इमाद दोनों ने मिलकर सम्भवतः मई के द्वितीय सप्ताह में दिल्ली पर आक्रमण करके अहमदशाह को पदच्युत करने तथा अन्य किसी शाहजादा को मुगल गद्दी पर बिठलाने का निर्णय लिया।[3] इसके लिए यह आवश्यक था कि सूरजमल के साथ यथा शीघ्र सम्मानजनक शर्तों पर समझौता कर लिया जावे। मराठा छावनी में शाही कूटनीतिज्ञ ईर्ष्यालु इमाद के विरुद्ध नियमित विष वमन तथा अनर्गल प्रलाप कर रहे थे। छावनी में यह चर्चा जोर पकड़ रही थी कि सम्राट ने मीर बख्शी को पदच्युत कर दिया है और उसके स्थान पर नवाब सफदर जंग की नियुक्ति की जा रही है। इन अफवाहों से इमाद स्वयं परेशान था और उसने अकीबत महमूद को सम्राट से मिलने का आदेश[4] दिया था।

---

१ – वेण्डल।
२ – फ्रेंकलिन, पृ० ३।
३ – सरदेसाई, खण्ड २, पृ० ४८७।
४ – ता० मुजफ्फरी, पृ० ८६।

राठौड नरेश राम सिंह का वकील चेतराम जयप्पा पर राम सिंह के पक्ष में मारवाड पर आक्रमण करने का साग्रह दबाव डाल रहा था। आश्वासन देकर भी रघुनाथ राव जयप्पा सिंधिया को जाटो के बारे मे अपने निर्णय से अवगत नही करा सका। इससे सिंधिया ने दादा साहब को मारवाड की ओर प्रस्थान करने की धमकी दी।[१] राजनैतिक तथा आर्थिक परिस्थितियों ने मराठा सरदारो के आन्तरिक विवाद को सुलझाने में पूर्णतः विफल रघुनाथ राव को सूरजमल के साथ समझौता करके मराठा यश की रक्षा के लिए बाध्य कर दिया। वह शीघ्र ही मल्हार राव के डेरों पर गया और उसके सामने जयप्पा की समस्या तथा मांग प्रगट की। इसको सुनकर मल्हार गुस्से मे भर गया तथा बाध्य होकर दादा साहब के समझौता प्रस्ताव को स्वीकार करना पड़ा।[२]

जाट-मराठो में स्थाई शांति-समझौता, मई, १७५४ ई०

मल्हार राव चतुर सूरजमल के कूट प्रयत्नों के कारण अपनी घोर प्रतिज्ञा पूर्ण नही कर सका और जयप्पा सिंधिया के नियमित प्रयास तथा धमकी की सफलता से जाट-मराठा संघर्ष समाप्त हो गया। सिंधिया तथा जाट परिवार सदैव के लिए एक दूसरे के निकट आ गये। बख्शी हरनाथ सिंह को अपना विशिष्ट वकील बनाकर सूरजमल ने उसे मराठा छावनी मे रवाना किया और उसने मराठा सरदारों तथा मीर बख्शी इमादुल्मुल्क से भेंट की। अन्त में चार महीने की दीर्घकालिक घेराबन्दी के बाद १७ मई को उभय पक्षो मे समझौता हो गया। गृहयुद्ध के समय सूरजमल ने सम्राट को दो करोड रुपया पेशकश भुगतान का वायदा किया था। अब उसने यही रकम सम्राट की अपेक्षा मराठा तथा इमाद को भुगतान करना स्वीकार कर लिया। यह रकम मराठा खडनी की माग से काफी अधिक थी।[३] इसके अलावा उसने मराठों के साथ खडनी की अपेक्षा युद्ध-क्षतिपूर्ति के रूप मे तीन वार्षिक किश्तो मे तीस लाख एक रुपया भुगतान का लिखित अनुबन्ध किया।[४] इसके साथ ही उभय पक्षो ने अपनी खन्दको से सैनिकों को वापिस बुला लिया। इमाद की पूर्व योजनानुसार मल्हार राव होलकर निराशा के साथ अपने पाच सहस्र सवारो सहित १८ मई

---

१ – शिन्देशाही, खण्ड १, पृ० १०३ (पा० टि०, १३८)।

२ – भाऊ बखर, अनु० ११, पृ० १०।

३ – ता० अहमदशाही, पृ० १२८ अ।

४ – पे० द०, खड २७, लेख ८१ (पृ० ६४); ता० अहमदशाही, पृ० १२८ अ; शिन्देशाही, भाग १, लेख ११२, भाग ३, लेख १२२; पेशवा डायरी, खण्ड ३; —डा० कानूनगो (पृ० ६६) का मत है कि जाट राजा ने क्षतिपूर्ति के रूप में साठ लाख रुपया भुगतान करने की शर्त पर समझौता किया था।

को मथुरा पहुँच गया और उसके प्रस्थान के साथ ही स्वभावत: कुम्हेर का घेरा समाप्त हो गया। इसके बाद अनेक टुकड़ियो मे विभक्त होकर मराठा सैनिक तथा सेनानायक भी कुम्हेर छावनी को छोड़कर चल दिये। रघुनाथराव ने स्वय २२ मई को पेघोर से कूच किया और २३ मई को मथुरा पहुँच गया, जहां २४ मई को जाटो ने उसको आठ लाख पाच हजार रुपया का नकद भुगतान किया। २५ को वृन्दाबन तथा २६–२७ मई को मांट (मथुरा के उत्तर में १६ कि०मि०, परगना महावन) मे पडाव डाला।[1] अब केवल जयप्पा सिंधिया ही कुछ दिन तक पेघोर छावनी मे रुका रहा। २६ मई, १७५४ (३ शावान, हि० ११६७) को मराठा तथा सूरजमल के बीच तीस लाख एक रुपया का करारनामा (पट्टा) लिखा गया। जाट शासक की ओर से राजगुरु रूपराम कटारा ने हस्ताक्षर किये।

इस समझौते का यथावत अनुवाद[2] निम्न प्रकार है—

(अ)	बैसाख आखिर तक के बारह महिनो के नकद दिये जाने	८,०५,०००/–
	डेढ माह बाद प्रतिमाह एक किश्त के रूप मे भुगतान करे	७,६५,०००/–
(ब)	आगे सम्वत् १८११ (१७५४–५५ ई०) के प्रतिमाह एक लाख रुपया भुगतान करेंगे	८,००,०००/–
(स)	तीसरे साल स० १८१२ (१७५५–५६ ई०) के प्रति दूसरे माह एक लाख की किश्त का भुगतान करना	६,००,००१/–
	कुल योग	३०,००,००१/–

समुचित अभिलेखो के अभाव में यह नही कहा जा सकता कि बाद मे सूरजमल ने इस पट्टे के आधार पर मराठो को छुकारा किया या नही? सम्भवत जाट शासक ने आगामी वर्षों मे इस पट्टे की शर्तों का पालन नही किया। 'इस प्रकार अपने ही समकक्ष दो सरदारो के साथ अपनी शर्तों पर सौदेबाजी करके सूरजमल ने महान सम्मान प्राप्त कर लिया था' और रानी हसिया की दृढ सूझबूझ, राव रूपराम कटारा की कूटनयिक सफलता से सूरजमल का भाग्य नक्षत्र प्रदीप्त हो उठा।

११ – सम्राट अहमद शाह का पतन, मई–जून, १७५४ ई०

सिकन्दराबाद छावनी मे अहमद शाह ने वजीर के परामर्श पर १७ मई को

---

१ – पे० द०, खण्ड २७, लेख ७१।

२ – पे० द०, खण्ड २७, लेख ८१, पृ० ६४।

नवाब सफदर जंग के दो प्रमुख सरदार राजा लक्ष्मी नारायण तथा राजा जुगल-किशोर की जब्त की गई सम्पत्ति उनको वापिस लौटाने की स्वीकृति दे दी थी। १८ मई को सूरजमल के साथ समझौता हो गया था। सम्राट की लापरवाही तथा राजमाता उधमबाई के विरोध के कारण आगामी योजनायें प्रायः निष्फल हो चुकी थी। शाही छावनी मे समाचार मिला कि मल्हार राव तथा इमाद मथुरा पहुँच गये थे और उनका विचार सम्राट या राजधानी पर आक्रमण करने का था। इससे वजीर ने सामयिक परिस्थितियों मे संघर्ष की अपेक्षा इमाद से समझौता करना हितकर समझा। इमाद के निर्देश पर अकीवत महमूद ने वजीर से भेंट करने का विचार किया और २२ मई को वह सराय घासी (सिकन्दरा से ७ किमी०) पहुँच गया। शुक्रवार, २४ मई को उसने सम्राट से भेंट की और सम्राट ने उसको क्षमा करके शाही सेवा मे ले लिया। इसके बाद वह खुरजा लौट गया।[1] २५ मई को अकीवत ने सम्राट तथा वजीर के पास समाचार भेजा कि मल्हार राव पचास सहस्र मराठा सेना के साथ दिल्ली की ओर बढ रहा है और उसका विचार सलीमगढ की शाही कैद से किसी शाहजादा को निकाल कर साम्राज्य की गद्दी पर आरूढ करने का है। असमर्थ अहमदशाह हतोत्साह हो गया। वह तेजधावक हथिनी पर सवार होकर शेराजपुर से दिल्ली भाग गया और २६ मई को उसने दोपहर के बाद महलो मे प्रवेश किया। २८ मई को वजीर, समसामुद्दौला (बख्शी तोपखाना) तथा अन्य अधिकारी दिल्ली पहुँचकर सम्राट से मिले उनके पीछे ही मल्हार राव तथा इमाद दोनो ही दिल्ली पहुँच गये।[2]

३० मई को मल्हार राव ने पत्र लिखकर सम्राट के सामने कुछ मागे प्रस्तुत कीं। फलतः एक जून को सम्राट ने वजीर को सभी पद तथा अधिकारो से मुक्त करके इमादुलमुल्क को वजारत की खिलअत तथा कलमदान प्रदान करके सभी अधिकार सौंप दिये।[3]

रविवार, २ जून को वजीर इमादुलमुल्क ने दीवान गगाधर तात्या, अकीवत महमूद आदि के साथ प्रातः नौ बजे शाही दरबार मे प्रवेश किया। उसने कुरान

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० १२७ ब, १२८ अ, दे० क्रॉनी०, पृ० ४६; ता० मुजफ्फरी, पृ० ६०।

२ – उपरोक्त, पृ० १२६ अ–१३१ अ; शाकिर, पृ० ७७, सियार, खण्ड ३, पृ० ३३७–८, ता० मुजफ्फरी, पृ० ६१–३; दे० क्रॉनी०, पृ० ५०; बयाने वाकई, पृ० २८३–४ (अविश्वसनीय), पे० द०, जि० २१, लेख, ६०।

३ – ता० अहमदशाही, पृ० १३१ ब–१३४ ब, ता० मुजफ्फरी, पृ० ६५; दे० क्रॉनी०, पृ० ५१।

की प्रति हाथ मे लेकर सम्राट के सामने "धोखा न देने" की शपथ ग्रहण की। इसके बाद अकीवत महमूद पचास बदख्शी सिपाहियो के साथ शाही शाहजादो के कैदखाने (ड्योढी-इ-सलातीन) पर पहुँचा और वहा से जहादारशाह के पचपन वर्षीय पुत्र मुहम्मद अजीजुद्दीन को लेकर लौटा। वजीर इमादुल्मुल्क ने एक दरबार आयोजित करके उसको शाही गद्दी पर आरूढ किया और उपस्थित दरबारियो का समर्थन [1] प्राप्त करके आलमगीर सानी (द्वितीय) के नाम से उसे मुगल सम्राट घोषित किया। फिर नवीन सम्राट के आदेश पर पदच्युत अहमदशाह तथा राजमाता उधमबाई को पकडवा कर कारागार मे डाल दिया गया। २४ जून को अहमदशाह की आखें निकाल ली गई और उसके साथ उधमबाई की भी हत्या करवाकर वजीर ने शाति की श्वास ली। [2]

पतन का उत्तरदायित्व किस पर ?

रघुनाथराव दादा द्वारा सचालित इस अभियान का मुख्य उद्देश्य मराठा सरकार के लिए आर्थिक साधन जुटाना था। इमाद ने अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए उनको प्रचुर धनराशि का आश्वासन देकर जाटो पर आक्रमण करने के लिए प्रेरित किया था। जबकि सूरजमल हिन्दुस्तान व साम्राज्य तथा अपने राज्य को इन अर्थ-शोषको से बचाने का प्रयास कर रहा था और उसने तत्कालीन विशेष सामर्थ्यवान राजनैतिक शक्तियो को शाही झण्ड के नीचे सगठित करने, सम्राट के प्रति अपनी निष्ठा, आस्था तथा विश्वास प्रगट करने का सुझाव दिया था। किन्तु सम्राट ने दिल्ली से प्रस्थान करने मे काफी विलम्ब कर दिया था। नि सन्देह सम्राट अशक्त था। वजीर डरपोक था और उसकी सैनिक शक्ति क्षीण हो गई थी। सम्राट तथा वजीर द्रुतगति से कोइल नही पहुँच सके और दोआब में शाही परगनों पर अधिकार करने की विफल चेष्टा मे उन्होंने एक माह (२७ अप्रेल-२६ मई) व्यर्थ ही गवा दिया था। इधर सफदर जग ससैन्य मेंहदी घाट शिविर मे सम्राट की प्रतीक्षा करता ही रहा। राजमाता ने उसका सहयोग प्राप्त करने में आनाकानी की, इससे वजीर इन्तिजामुद्दौला भी शकित हो गया था। [3] राजपूत नरेशो को सम्राट की अदूरदर्शिताजन्य सभावित विफलता का स्पष्ट आभास हो गया था और वे मराठो के प्रचण्ड क्रोध का शिकार बनने के लिए तैयार नहीं थे। सूरजमल के सुझाव तथा,

---

१ - कीन (मुगल), पृ० ४८।

२ - ता० अहमदशाही, पृ० १३५ अ-१३६ अ, दे० ऑनो०, पृ० ५१-५२, ५४, पे० द०, खण्ड २१, लेख ६०; सियार, खण्ड ३, पृ० ३३६; ता० आलमगीर सानी, पृ० २ ब, ८ अ, ता० मुजफ्फरी, पृ० ६६-६।

३ - सियार, खण्ड ३, पृ० ३३७।

सम्राट के प्रस्थान से 'मराठा तथा इमाद चौकन्ना हो गये और इमाद ने अपने सेनापति अकीबत महमूद को सम्राट के लिए भ्रम में डालने का निर्देश दिया। अविवेकी सम्राट ने अकीबत को क्षमा करके भारी भूल की। पुनश्च उसने सम्राट को मराठों के दिल्ली की ओर प्रस्थान करने की भ्रमित सूचना दी, तब भी सम्राट की तन्द्रा नहीं टूटी।[1] सूरजमल ने सैनिक संघर्ष, छापामार युद्ध के साथ ही कूटनयिक प्रस्तावों से मराठों को अपने जाल में फंसा रखा था। अतः मे उनको परिस्थितियों से बाध्य होकर शांति समझौता करना पड़ा। इसी बीच में इमाद ने मराठों को भारी धनराशि का लोभ देकर साम्राज्य पर अधिकार करने की सलाह दी। इससे मराठा आर्थिक लाभ के लालच मे बुरी तरह फस गये। वजीर दिल्ली पहुँच कर सूरजमल सफदर जंग तथा राजपूतों की तात्कालिक सहायता की आशा करता रहा। दिल्ली मे घटनायें इस तीव्र गति से घटित हुई कि सूरजमल इतनी तेजी से अपनी सेनाओं को व्यवस्थित करके दिल्ली नही पहुच सकता था। अन्तोगत्वा सूरजमल अपनी योजना म सफल रहा और उसने अपने ही समकक्ष दो सरदारों से अपनी ही अनुकूल शर्तों पर सौदेबाजी करके इमाद व मराठों को बिना किसी प्रतिष्ठा के हटने के लिए बाध्य कर दिया और उसने अपने राज्य को मल्हार की घोर प्रतिज्ञा तथा हठ से बचा लिया। 'सूरजमल ने अपने दुर्गों की जिस सयम, असाधारण योग्यता, साहस तथा वीरता से रक्षा की, इससे जाट राज्य की कीर्ति सर्वत्र फैल गई। ठाकुर मोहकम सिंह भी निराश होकर सूरजमल की शरण मे लौट आया। सूरजमल ने विद्रोही चाचा का अनुरूप सम्मान किया और उसको अपने वतन जागीर के गावों से एक रुपया नजराना वसूल करने का अधिकार दे दिया, मोहकम सिंह हाथी, घोड़ा या पालकी की सवारी से वंचित कर दिया गया और वह मात्र चारपाई पर बैठकर काठेड के गावों से नजराना वसूल[2] कर सकता था।' इस प्रकार जाट राज्य आन्तरिक शत्रुओं से भी मुक्त हो गया और मराठा सरदारों ने भी शत्रु भावना को छोड़कर सदैव जाटों की मित्रता से लाभ उठाने का प्रयास किया। मराठा को वास्तव में इस घेरा से केवल दो लाख रुपया का आर्थिक लाभ[3] हो सका। इस प्रकार मराठा अपने अभियान मे पूर्णतः विफल रहे और जाट राज्य एक भारतीय शक्ति के रूप मे राजनैतिक मंच पर चमक उठा।

---

१ – ता० मुजफ्फरी, पृ० ६६; सियार, खण्ड ३ पृ० ३३७।

२ – जॉन्ह कोहन, पृ० १६ ब।

३ – सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १३, पृ० ३२० पा०टि० २, सूरजमल ने मराठों को मासिक किश्तों मे चौदह लाख रुपया दिया था, परन्तु चार माह में मराठा सैनिकों के वेतन, रसद व्यवस्था पर बारह लाख रुपया व्यय हो चुका था।

१२ – रघुनाथ राव की आर्थिक विफलतायें १७५४–५५ ई०

महाराष्ट्र सरकार भारी ऋणभार से दबी थी। इससे बालाजी राव पेशवा ने अपने भ्राता रघुनाथ राव को दिल्ली सरकार से अधिकाधिक धन वसूल करने का निर्देश दिया था। पेशवा का अनुमान कम से कम पचास लाख और अधिक से अधिक पिचत्तर लाख रुपया अर्जित करने का था।[1] जाटों के साथ सम्पन्न संधि मे उनको अधिक आर्थिक लाभ नहीं हो सका। इसी प्रकार सिकन्दराबाद शिविर को लूटने पर मल्हार राव के कब्जे मे कुछ शाही हाथी ही आये।[2] रघुनाथ राव ने २६ मई को माट से प्रस्थान किया और १ जून को दिल्ली के दक्षिण पूर्व मे १० किमी० पटपरगज मे अपना शिविर डाला। इमाद ने वजीर पद पर आसीन कराने के एवज मे मल्हार राव को पच्चीस लाख रुपया नजराना का वचन दिया था, किन्तु रघुनाथ राव के लोभ के कारण यह समझौता सफल नही हो सका और उसको अन्त मे बयासी लाख प्रतिज्ञात कर के रूप मे भुगतान करने का वचन देना पडा था।[3] किन्तु शाही खजाना खाली था। इससे अक्टूबर में सम्राट आलमगीर सानी को ८२.५० लाख रुपया के एवज मे सहारनपुर परगना क बाईस गांव, मेरठ, सिकन्दराबाद, दासना, बाघपत तथा अन्य सात छोटे–छोटे महाल मराठो के हाथों मे सौंपने पड़े, जहा मराठो ने अपने कमाविसदार नियुक्त करके प्रबन्ध सम्भाल लिया था।[4]

२१ जून को वजीर के तोपचियो ने सेनापति अकीवत महमूद को पकड कर घसीटा और नगा करके अपमान किया। वजीर इमादुल्मुल्क ने उस पर भारी आरोप लगाये और २४ जून को सायकाल अफगान सेनानायको से उसको कत्ल करवा दिया।[5] मराठा सनिको ने भी दिल्ली के आसपास भारी लूटमार की। २३ जून को रघुनाथ राव ने जयप्पा सिंधिया को मारवाड अभियान के लिए विदा कर दिया और वह निजी सवार तथा पूना सरकार के चार सहस्र मराठा सवारो के

---

१ – सरकार (मुगल), खंड २, पृ० १४।

२ – ता० आलमगीर सानी, पृ० ६ अ; पे० द०, खड २१, लेख ६०, खड २७, लेख ६०।

३ – सरदेसाई, खड २, पृ० ४८६, सरकार (मुगल), खंड २, पृ० १४।

४ – ता० आलमगीर सानी, पृ० ६ ब, ११ ब १२ अ, १५ ब, १७ अ, १६ अ, २५ अ, २७ अ, दे० क्रॉनो, पे० द०, खड २७, पत्र ८६, ६०।

५ – उपरोक्त, पृ० ६अ, २० ब, २३अ–ब; दे० क्रॉनो०, पृ० ५३; ता० मुजफ्फरी, पृ० १०१।

साथ दिल्ली से नारनौल की ओर रवाना हो गया।[१] इससे अब रघुनाथ राव के पास दिल्ली मे अपर्याप्त मराठा शक्ति थी। सूरजमल ने इसका लाभ उठाया।

१३ – जाट मराठों में पारस्परिक अनाक्रामक समझौता, जुलाई–अगस्त, १७५४ ई०

जाट प्रान्त से मराठा सैनिको के हटते ही सूरजमल भी अपनी सभी सेनाओं को सगठित करके अपने दुर्ग से बाहर निकल पडा और उसने अपने अधीनस्थ परगनो की व्यवस्था संभालने के लिए अपने सरदार, राजस्व कर्मचारी तथा सिपाहियो को रवाना किया। इन्होंने अपने प्रयास से मेवाती परगनो पर अधिकार कर लिया और वहां के जागीरदार तथा जमींदारो से भू-राजस्व तथा अन्य कर वसूल करने मे सफलता प्राप्त की। राजधानी की अराजक स्थिति, शाही खजाने के खोखलापन तथा स्वय की आर्थिक कठिनाईयों से बाध्य होकर रघुनाथ राव ने मराठा सरकार के हितो की सुरक्षा तथा स्थायी मित्रता की भावना से जाटो के साथ स्थायी समझौता करना उचित समझा। वजीर इमादुल्मुल्क की विफलता तथा पराभव के बाद महान आपत्काल मे जाट राज्य ही मराठों का सहायक मित्र हो सकता था। फलतः जुलाई–अगस्त, १७५४ ई० मे रघुनाथ राव ने सूरजमल को यह लिखित आश्वासन दिया कि मराठा सरदार जाटो की वतन जागीर तथा मुगल सम्राटो द्वारा प्रदत्त प्रदान जिलों व परगनो की व्यवस्था मे कदापि हस्तक्षेप नही करेंगे। इसके बदले मे सूरजमल ने भी अपने प्रतिनिधि रूपराम कटारा के माध्यम से मराठा सेनापति को यह आश्वासन दिया कि वह हिन्दुस्तान के हित मे मराठो द्वारा केन्द्रीय सरकार के प्रबन्ध में या मराठो के विरुद्ध किसी युद्ध मे हस्तक्षेप नही करेगा और हिन्दुस्तान के किसी भाग मे जब भी मराठा सेनायें कूच करेंगी, वह उनके मार्ग मे किसी भी प्रकार का गतिरोध पैदा नहीं करेगा।[२] इस पारस्परिक अनाक्रामक समझौता के फलस्वरूप आगरा प्रान्त के जिन परगनों पर मराठो ने युद्धकाल मे अपना कब्जा कर लिया था, वे सभी परगने सूरजमल को सौंप दिये गये और शेष पर उसने इमादुल्मुल्क के सिपाहियों को भगाकर अधिकार करने का प्रबन्ध कर लिया।

---

१ – ऐति० पत्रे, १२२, १२४; ता० आलमगीर सानी, पृ० २१ अ; राजवाड़े, खड १, लेख ३७, ३६; शिन्देशाही, खण्ड १, लेख ६६–१२४।

२ – पे० द०, खण्ड २७, लेख ६०; वेण्डल, पृ० ७१; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २६५; हिंगणे, खण्ड १, लेख १७६।

१४ – पलवल तथा वल्लमगढ पर अधिकार, सितम्बर–अक्टूबर, १७५४ ई०

दिल्ली मे इमाद की सैनिक शक्ति पूर्णत. कमजोर हो चुकी थी और वजीर पद की मान-मर्यादा, उसकी सुरक्षा मराठो पर निर्भर थी। परगना फरीदाबाद तथा पलवल (दिल्ली के दक्षिण मे ५८ कि०मी०) पर अकीबत महमूद ने अधिकार कर लिया था और ये परगना (जिला) वजीर इमादुल्मुल्क की जागीर में शामिल कर लिये गये थे। नन्दगाव, बरसाना, सहार, कस्बा होडल तथा इसके आसपास के क्षेत्र पर सूरजमल के जाट प्रबन्धको का यथावत अधिकार बना रहा। २७ सितम्बर को जाट सेनाओ ने बल्लू चौधरी के पुत्रो की कमान मे अचानक कूच करके कस्बा पलवल को घेर लिया। पलवल के कानूनगो सतोपराय ने चौधरी बल्लू की हत्या के लिए अकीबत महमूद को भडकाया था। इससे जाट सिपाहियो ने उसको पकड कर मार डाला। उन्होंने काजी को भी पकड कर बाजारो मे बुरी तरह घसीटा, जिससे वह तडप-तडप कर मर गया। जाट सैनिको ने कस्बा पलवल तथा समस्त परगने से वजीर के थानों को उठाकर अपना पुन अधिकार कर लिया।

बदख्शी रिसाला का रिसालदार जाहिद बेग खां जाट सैनिकों के भय से भागकर २८ सितम्बर की रात्रि को दिल्ली पहुँच गया। यह समाचार मिलते ही वजीर इमादुल्मुल्क ने सूरजमल के विरुद्ध तत्काल ही कूच करने के लिए अपने पचास सवार, पैदल, तोपची, रहकला तथा बानेतो को एकत्रित होने का आदेश दिया और स्वय चार घडी रात होने पर मराठा सहायता प्राप्त करने के लिए मल्हार राव के डेरों पर पहुँचा। उसने मल्हार से जाटो पर आक्रमण करने का आग्रह किया। परन्तु अब मल्हार राव स्वय जाटो के विरुद्ध कोई निर्णय लेने वाला समक्ष अधिकारी नही था। इससे उसने इधर–उधर की बात करके वजीर को ठण्डा कर दिया। रघुनाथ राव का शिविर राजधानी के दक्षिण मे था और मराठा सैनिक तुगलकाबाद, किशन-दास तालाब, हुमायू मकबरा के पश्चिम मे पांच कि०मी० इस्लामपुर, महरौली, बारापूला तक लूटमार करने मे व्यस्त थे। आसपास के जाट भी लूटमार कर रहे थे।

२९ सितम्बर को अपराह्न मल्हार राव इमाद को अपने साथ लेकर रघुनाथ राव के डेरों पर पहुँचा। परन्तु मराठा सेनापति ने स्पष्ट शब्दों मे दोनो के सामने मत व्यक्त करते हुए कहा, 'हमने अब सूरजमल के साथ मित्रता का सम्बन्ध जोड लिया है और अब मैं अपने वचनों से नही डिग सकता। आप रुको, और विश्वास करो। मैं सूरजमल को सूचित करता हूँ कि वह आपकी (वजीर) जागीर के जिलो या परगनो से अपना दखल उठा ले।" इस प्रकार मराठा सेनापति के दृढ निश्चय से

वजीर जाटो के विरुद्ध अपनी सेनायें बढ़ाने मे विफल रहा।[1] इसके बाद जाट सेनाम्रो ने वल्लमगढ की ओर प्रस्थान किया और वहा से वजीर के प्रबन्धको तथा थानो को हटाकर दुर्ग तथा जिले पर पुन: अधिकार कर लिया। यद्यपि मुगलिया सैनिको के साथ उनकी अनेक स्थानो पर झडप भी हुईं, किन्तु हतप्रभ मुगलो को कोई सफलता नही मिल सकी। मूरजमल ने वलराम चौधरी के पुत्र किसन सिंह तथा विसन सिंह को क्रमश. जिले का किलेदार तथा नाजिम नियुक्त किया और ये दोनो १७७४ ई० तक इम अधिकार का उपभोग करते रहे।[2] फिर जाट सेनाम्रो ने फरीदाबाद पर भी अधिकार कर लिया। इसके बाद जाट सेनाम्रा ने मेवाती इलाको मे प्रवेश किया। अकीबत महमूद ने इन परागना पर जवरन अधिकार करके मुगल तथा बदख्शी रिसालदारो को मालगुजारी वसूल करने तथा लूटमार करके आतक पैदा करने के लिए तैनात कर दिया था। जाट दस्तो ने मेवात प्रान्त से भी मुगल दस्तों तथा रिसालदारो को मार कर भगा दिया और इन पर जाट शासन का ध्वज फहराने लगा। मुगल दस्तो ने भागकर दिल्ली मे शरण ली और ३ अक्तूबर को अपने शेष वेतन के लिए विद्रोह कर दिया।[3] इस प्रकार अक्तूबर, १७५४ ई० मे जाट सेनानायको ने अपनी ताकत कुशलता से वल्लमगढ तथा मेवात के सभी जिलो व परगनों पर अधिकार कर लिया। अभी कुछ परगने अवश्य शेष रहे, जिन पर अधिकार करने की योजना बनाई गई।

जाटो के मेवात अभियान का प्रभाव पडोसी कछवाहा परगनो पर भी पडा था और परगना कामा तथा खोहरी के जमीदारो व रैय्यत ने गडबड शुरू कर दी थी। कछवाहा दरबार ने ग्राम सीकरी (परगना खोहरी) सेठ धनसुर को इजारे पर दे दिया था, किन्तु राव सूरजमल ने इसमे हस्तक्षेप किया। कामा मे इतना अधिक उपद्रव मचा कि वहा राजा हरी सिंह को किले की मजबूती के निर्देश दिये गये। राजा हरी सिंह ने अकाता ग्राम के जमादारो को भी बन्दी बना लिया था। अन्त मे राजा हर गोविन्द नाटाणी को सूरजमल का सहयोग प्राप्त करना पडा और राव हेमराज के हस्तक्षेप के फलस्वरूप बन्दियो को मुक्त किया गया।[4]

१५ – यमुनापार (मध्य दोआव) परगनो पर अधिकार, सितम्बर–अप्रेल, १७५५ ई०

दिल्ली के चारो ओर मराठा सवार (जून–नवम्बर) गाव तथा कस्बो को

---

१ – ता० आलमगीर सानी०, पृ० १८ अ० १६ अ, २२ अ, दे० फ्रेंनी, पे० द०, खण्ड ०७, लेख ७६, सरकार (मुगल) खण्ड २, पृ० ११, २६५ पा०टि०।
२ – देहली गजेटियर पृ० २१३, कानूनगो पृ० ८० पा०टि०।
३ – ता० आलमगीर सानी, पृ० २२ ब।
४ – ड्रा० ल० प०, वेण्डल ५, स० ७६३, ८२३, ८१६, ७८२।

लूटकर अपना दैनिक खर्च चला रहे थे, जबकि शहर मे प्रतिमाह मुगल व बदख्शी सैनिक विद्रोह, लूटमार तथा उत्पात कर रहे थे और वहा के नागरिक महान आपत्तिया उठा रहे थे। व्यापार पूर्णत ठप्प हो चुका था। वजीर इमाद विद्रोही सैनिक तथा उनके तुर्क सवारो को आश्वासन देकर अथवा प्रमुख सरदारों को दिल्ली के आसपास खालसा तथा सफ-ए-खास (शाही जेब खच)की भूमियां जागीर मे दकर सन्तुष्ट करने का प्रयास कर रहा था।[१] पदच्युत वजीर इन्तिजामुद्दौला अभी तक दिल्ली मे अपनी हवेली में मौजूद था और उसने दरबार से अनुपस्थित रहकर अपनी अप्रसन्नता व्यक्त की। वह इमाद के विरुद्ध जब-तब असन्तुष्ट सैनिकों को भडका कर विरोधी षडयन्त्र रचने में व्यस्त था। ४ अक्टूबर को दीवान गगाधर तातियाँ ने इन्तजाम व इमाद मे समझौता कराने का भी प्रयास किया, किन्तु वह अपने प्रयास मे विफल रहा। रघुनाथ राव स्वय यह आशका करने लगा था कि इमाद ने जिस धन राशि भुगतान का वचन दिया है वह उसको पूरा नही कर सकेगा। इससे उसने सूरजमल के प्रस्ताव पर दिल्ली मे स्थाई शाति समझौता पर विचार किया। रघुनाथ राव के आमन्त्रण पर जाट मन्त्री रूपराम कटारा जयसिंहपुरा की मराठा छावनी मे पहुँचा, जहा इमाद भी आ गया था।

२१ अक्टूबर को उसने दीवान गगाधर तातिया से सूरजमल तथा इन्तिजाम की ओर से इमाद से शाति वार्ता के बारे मे बातचीत की। फिर दोनो ने मिलकर इमाद के सामने प्रस्ताव रखा—'"आप सूरजमल को यथा पूव जिना बल्लभगढ की व्यवस्था सौंप दें। वजीर शाही दुर्ग से अपने सभी सैनिको को हटाकर वहां की पूरी व्यवस्था सम्राट के सैनिको को सौंप दे, तब इन्तिजाम दुर्ग मे पुन प्रवेश करे और सम्राट के समक्ष झुककर शाही चाकरी करे। दरोगा-इ-तोपखाना तथा दरोगा इ-गुसलखाना पद इन्तिजाम तथा इमाद से असम्बद्ध अन्य किन्ही सरदारो को सौंप दिये जावें।'' रूपराम व गगाधर की ये शर्तें इमाद को शक्तिहीन बनाने की योजना का एक प्रारूप मात्र थी। इमाद ने इन पर विचार किया और इन शर्तों को अस्वीकार करके जयसिहपुरा छावनी से प्रस्थान कर दिया। इससे दूसरे दिन (२२ अक्टूबर) गगाधर रघुनाथ राव तथा मल्हार की छावनी में पहुँचा और उन्हें इमाद के निर्णय से अवगत कराया। इसको सुनकर मराठा सरदार स्वार्थी इमाद से काफी असन्तुष्ट हो गये। अब मराठो ने इमाद की सहायता न करने का निश्चय कर लिया और उन्होंने यमुना पार कूच करने की घोषणा कर दी। इससे अन्त में इमाद को झुकना पडा और १७ नवम्बर को बापूजी पडित की मध्यस्थता में सूरजमल के सतत् प्रयास से पदच्युत वजीर इन्तिजाम के साथ शाति समझौता करना पडा।[२] परन्तु यह

१ – ता० आ० सानी० पृ० ११ ब, २० ब, २५ ब, पृ० २६ अ-ब, २३ अ-ब।
२ – ता० आ० सानी पृ० २६ अ-ब, २७ अ, पृ० ३४ अ, ब।

समझौता अधिक स्थाई नहीं रह सका।

दिल्ली के दक्षिणी परगनों पर अधिकार करने के बाद सूरजमल ने मथुरा तथा बल्लमगढ़ से यमुना नदी पार इलाकों में शासन व्यवस्था स्थापित करने के लिए अपनी सेनायें रवाना कर दी। जाट प्रबन्धकों ने मथुरा तथा आगरा सरकार के सभी परगनों का प्रबन्ध संभाल लिया। वजीर इमाद ने जिला सिकन्दराबाद का प्रबन्ध अपने जमादार शादिल खां अफगान को सौंप दिया था। दिसम्बर के प्रारम्भ में जाट टुकड़ियों ने पलवल होकर यमुना नदी पार की और वह टप्पल पहुँच गईं। यहां से इन टुकड़ियों ने खुरजा पर आक्रमण किया। शादिल (शाहदिल) खां ने अपने थानों की रक्षा का विफल प्रयास किया। अन्त में दोनों में भयंकर युद्ध हुआ, जिसमें दोनों ओर के दो-तीन सहस्र सैनिक घायल हो गये या काम आये। इस प्रकार जाट सैनिकों के प्रत्याक्रमणों से बरबाद होकर शादिल खां ने १४ दिसम्बर को दिल्ली की ओर कूच कर दिया। मार्ग में उसको मराठों ने घेर लिया। इस प्रकार बरबाद होकर वह दिल्ली पहुँच गया और जाटों ने खुरजा तथा सिकन्दराबाद के कुछ गांवों पर अपना अधिकार कर लिया।[1] फिर १७५५ ई० के प्रारम्भ में सूरजमल ने चकला कोइल की अनेक मुहालों पर अधिकार कर लिया। अनेक स्थानों पर भारी मुठभेड़ भी हुई, जिनमें जाटों को भारी क्षति उठानी पड़ी। सूरजमल ने फिर कोइल पर भी अपना कब्जा कर लिया। उसका विचार रुहेला अफगानों की कीमत पर रामगढ़ (कोइल) को आधार बनाकर उपरि दोआब तथा गंगापारी रुहेलखण्ड पर अपना प्रशासन स्थापित करने का था।[2] इससे उसने इस बार रामगढ़ को दूसरा अजेय दुर्ग कुम्हेर बनाने में सफलता प्राप्त कर ली।[3] फिर उसने अपने सैनिकों को मराठों के पीछे पीछे आगे रवाना किया। अन्ताजी ने यहां संघर्ष से बचने का प्रयास किया और जाट दोआब, अनेक परगनों पर अधिकार करने में सफल रहे। इस प्रकार जाट सैनिक गंगापार तक के इलाकों तक पहुँच गये।

आर्थिक संकट से विपन्न मराठा सरदार रघुनाथ राव तथा मल्हार राव ६ दिसम्बर को दिल्ली नगर के दक्षिणी भाग को छोड़कर यमुना नदी के पार जीतपुर (बदरपुर से ३ किमी०) चले गये थे। २१ दिसम्बर को मल्हार राव तथा अन्य मराठा सरदारों को दिल्ली से प्रस्थान करने के लिए विदाई की खिलअतें दी गईं। फिर उसने गाजियाबाद में रघुनाथ राव से भेंट की। वहां से वह ससैन्य

---

१ – ता० आ० सानी, पृ० ३६ अ।

२ – हिंगणे भाग १, लेख, १५६, १७८, १७६; होलकर, पृ० ६०, ६०; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १७२।

३ – ता० आलमगीर सानी, पृ० २२ अ।

जनवरी के प्रथम सप्ताह मे रेवाडी तथा पटौडी मे पहुँच गया। रघुनाथ राव भी दामना होकर २७ दिसम्बर को गढमुक्तेश्वर पहुँचा, जहा उसने पौष पूर्णिमा (३० दिसम्बर) से मकर सक्रान्ति (जनवरी १४, १७५५ ई०) तक गंगा स्नान करके धार्मिक व सास्कृतिक पर्व मनाये। यहा हाफिज रहमत खा ने कुछ रकम नकद तथा शेष के लिए लिखित वचन देकर उससे समझौता कर लिया। इसके बाद वह बदरपुर (१४ फरवरी) होकर शीघ्रता से झज्झर कानौड, नारनौल सिंघाना, साभर मार्ग से ३ मार्च को पुष्कर पहुँच गया।[1] इस प्रकार फरवरी के मध्य मे उत्तर भारत से मराठा भय पूर्णत. समाप्त हो चुका था। अब राजनैतिक मच पर जाट तथा इमाद संघर्ष के लिए पूर्णत: मुक्त थे।

जाविद खा–सफदर जग प्रशासन मे मुगल सम्राट अहमदशाह ने परगना सिकन्दराबाद सूरजमल को सौपने का आदेश दे दिया था, परन्तु अभी तक यह जिला उसको विधिवत हस्तातरित नही किया गया था। रघुनाथ राव ने अपने वचनो की पालना मे उत्तर भारत से कूँच करने मे पूर्व सिकन्दराबाद का दुर्ग तथा जिला का प्रबन्ध सूरजमल को सौप दिया था।[2] मराठो के शीघ्र प्रस्थान के बाद अप्रेल, १७५५ ई० मे जाट सैनिको ने सिकन्दराबाद पर्यन्त समस्त मध्य दोआब पर अधिकार करने मे सफलता प्राप्त की। फिर उन्होने शेष अन्य शाही परगनो पर अधिकार करने का प्रयास किया। इसी बीच मे रूपराम कटारा ने एक दो दिन सवाई माधोसिंह से बात की और फिर वह जनको जी सिंधिया के पास पुष्कर पहुँचा। हेमराज कटारा ने जयपुर मे रुककर करौली के राजा व सरदार सिंह नरूका आदि से विचार विमर्श किया। इसके बाद उन्होने मराठा सरदारो को कुछ धन देकर सन्तुष्ट किया और वे सभी अपने वतन को लौट गये।[3] इस प्रकार जाटो ने मराठो के साथ स्थायी समझौता करके अच्छा लाभ उठाया।

१६– वजीर इमादुलमुल्क विरोधी विल षड्यन्त्र, मार्च–जुलाई १७५५ ई०

सम्राट आलमगीर सानी ने अपना समस्त जीवन ड्योढी–इ–सलातीन (शाहजादो की कारागार) मे व्यतीत किया था। उसमे चरित्र बल, नेतृत्व शक्ति तथा शासन सचालन की शिक्षा का अभाव था। इससे वह सदैव वजीर इमादुलमुल्क के

---

१ – ता० आ० सानी, पृ० २७ अ ब, ४१ अ, दे० फॉनी; पे० द०, खण्ड २७, लेख ७६, १०६।

२ – उपरोक्त, पृ० ५८; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २६६।

३ – हिंगणे, खण्ड १, लेख १८६ (१० मार्च)।

समर्थन में प्रस्तुत रहकर पर्दे के पीछे उसका विरोध करता रहता था। उसके सिंहासनासीन होने पर मुगल साम्राज्य की सीमायें वास्तव में पूर्व में उत्तरी दोआब या, मेरठ सरकार, पश्चिम मे रोहतक, गुडगांवा तक शेष रह गई थीं। खालसा तथा शाही जेब खर्च के अधिकांश जिलों व परगनों पर योद्धा सरदारो ने अधिकार कर लिया था। सहारनपुर पर नजीब खां रुहेला, निजामगढ़ (जिला सहारनपुर) पर औलिया खा बलूच ने अधिकार कर लिया था। दिल्ली के दक्षिण, दक्षिण-पूर्व में जाट तथा गूजरों ने कई परगने दबा लिये थे। करनाल, रोहतक पर अफगान बलूची सरदारो का आधिपत्य था। पश्चिम में फर्रुखनगर के शाही फौजदार कामदार खां बलूच (१७४७-६० ई०) ने वर्तमान हिसार, रोहतक, गुड़गावां, जींद, पटियाला के कुछ भाग दबा लिये थे और बहादुर खां बलूच, जो पहले कामगार खां बलूच की सेना में रह चुका था और बाद में उसने इमाद की सैनिक सेवा की थी, ने दिल्ली के पश्चिम में ३२ किमी० बहादुरगढ़ की जागीर हड़प ली थी। अन्य छोटे-छोटे रुहेला सरदार-हसन अली खां (भतीजा कामगार खां) ने झज्झर, असदुल्ला खां ने रेवाड़ी के पूर्व में २६ किमी० तौरु पर अधिकार कर लिया था। नारनौल तथा अन्य समीपवर्ती परगनों पर सवाई माधोसिंह का अधिकार था। राव भवानीसिंह की अकर्मण्यता से उसकी-रेवाड़ी जागीर के अनेक परगना उसके हाथ से निकल चुके थे।[1] इस तरह दिल्ली के उत्तर तथा पश्चिम मे ९६ किमी० के अर्द्ध वृत्ताकार भूभाग में अनेक योद्धा सरदारों ने अनेक गढ़ियां बना ली थी और अन्त में वे इन जागीरो का स्वच्छन्द उपभोग करने लगे थे।

शाह वल्ली उल्लाह ने अपने पत्रों मे साम्राज्य की आर्थिक व सैनिक स्थिति तथा मुस्लिम जनता की सामाजिक स्थिति का विश्लेषण करते हुए लिखा, "हिन्दुस्तान की वार्षिक आय (हासिल-वसूली) आठ करोड़ रुपया से कम नहीं थी। परन्तु प्रशासनिक कमजोरी व गड़बड़ के कारण एक कौड़ी भी वसूल करना कठिन था। जाटों ने एक करोड़ रुपया वार्षिक आय के शाही इलाकों पर अनाधिकृत अधिकार कर लिया है। राजस्थान पेशकश के रूप मे शाही खजाने में दो करोड़ वार्षिक जमा कराता था। मुहम्मदशाह के शासन काल में बंगाल से प्रतिवर्ष एक करोड़ रुपया भेजा जाता था। अवध की वार्षिक आय दो करोड़ थी और वहां का राज्यपाल एक करोड़ रुपया केन्द्रीय खजाने मे जमा कराता था।" अब यह सभी बन्द हो गया था। सैनिक स्थिति के बारे मे उसने लिखा— "एक समय मुगल साम्राज्य में एक लाख से अधिक सेना थी। कुछ सरदारों को सैनिक जागीरें मिली थीं और

---

१ – रोहतक जिला गजे०, १८८३ ई०, पृ० १८-१९; सरकार (मुगल), खंड २, पृ० २५।

कुछ को नकद वेतन मिलता था। जिनको जागीर मिली थी, वह उनके हाथों से निकल गई और वेतन भोगी सैनिकों को भी समय से वेतन नही मिला है। इस प्रकार मुगल साम्राज्य राजनैतिक तथा आर्थिक-दोनों तरह से बरबाद हो चुका है और वह छाया मात्र शेष है।" [१] साम्राज्य के इस राजनैतिक तथा आर्थिक विघटन का मुस्लिम जनता की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा था। लूटमार तथा गृहयुद्ध से दिल्ली की मुस्लिम जनता काफी बरबाद हो चुकी थी। इसके बाद उन पर दुर्भिक्ष का भारी प्रभाव पडा। राजधानी मे व्याप्त अराजकता से बेरोजगारी, भुखमरी फैल रही थी। व्यापार उद्योग पूर्णतः ठप्प था और दिल्ली की जनता निराश, भयभीत, परेशान तथा चिन्तित थी। हिन्दुस्तान में इस जाति की समृद्धि, सम्पन्नता तथा धर्म की व्यापकता सम्राट तथा अमीरो के संरक्षण पर निर्भर थी। इससे उसने साम्राज्य की एकता, सत्ता की दृढता व प्रभाव के विस्तार के लिए राजनैतिक तथा धार्मिक क्रान्तिकारी जिहाद (धर्मयुद्ध-धार्मिक आन्दोलन) छेड दिया था। उसने मुस्लिम अमीरो के नाम बार-बार पत्र लिख कर चेतावनी देकर जाट तथा मराठों के विरुद्ध "एक दृढ संगठन तथा शासन" स्थापित करने के लिए प्रेरित किया। [२] किन्तु तत्वज्ञानी वजीर इमादुलमुल्क को अधिक प्रभावित नही कर सका।

जाटों के कौमी संगठन, जाट राज्य की वैधानिक स्थिरता, आर्थिक सम्पन्नता, विस्तार तथा हिन्दू धर्म व संस्कृति की सुरक्षा व विकास के लिए यह अनिवार्य था कि केन्द्रीय सत्ता तथा सम्राट को वजीर इमादुलमुल्क के एकाधिकार तथा तानाशाही से मुक्त कराया जावे। केन्द्रीय सरकार व सत्ता मे अब हिन्दू सरदारो तथा जाट राज्य का कोई हितैषी नही था और नवोदित राज्य के विकास तथा विस्तार, जाटों के हितो की रक्षा के लिए किसी प्रभावी मन्त्री का पदासीन होना आवश्यक था। जाट राज्य के हितैषी नवाब सफदर जंग के प्राणान्त (अक्तूबर ५, १७५४) के बाद सम्राट ने इमाद के परामर्श पर ११ अक्तूबर को उसके बाईस वर्षीय नवयुवक पुत्र शुजाउद्दौला को अवध व इलाहाबाद का राज्यपाल पद प्रदान कर दिया था। [३] युवक शुजा मे अपने प्रतिद्वन्दी इमाद को मैदान मे जमकर परास्त करने का साहस नही था। उसने सूरजमल की सहायता से गुप्त षड्यन्त्र तथा प्रतिघाती अस्त्र का

---

१ – अहमदशाह दुर्रानी के नाम शाह वली उल्लाह का पत्र, सियासी मकतूबात, पत्र संख्या २, पृ० ४५-४८, उर्दू अनु०, पृ० ९७-११४।

२ – सियासी मकतूबात, पत्र सं० २२, पृ० ८३-८४; हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेन्ट, खण्ड १, पृ० ४६५, ५१२-३, ५३६; हरीराम, पृ० ११८-२१।

३ – ता० आलमगीर सानी, पृ० २५ ब; दे० कॉनी०।

प्रयोग किया। सम्भवतः आन्तरिक षडयन्त्र काफी समय पूर्व प्रारम्भ हो चुका था। केवल आलमगीर सानी के दरबारी इतिहासकार ने इस षडयन्त्र का सामान्य उल्लेख किया है। फर्रुखाबाद का नवाब अहमद खां बंगश कतिपय कारणों से इमाद का प्रतिपक्षी था। शुजा ने अपने विश्वासपात्र वकील अली कुली खां दागिस्तानी को सूरजमल तथा अहमद खां बगश के पास हार्दिक सहानुभूति वरण करने तथा गुप्त योजना में योग प्राप्त करने के लिए भेजा। इन दोनों की आन्तरिक प्रेरणा से अली कुली खां दागिस्तानी ने दिल्ली पहुँचकर इमाद के विरुद्ध षडयन्त्री सरदारों के घटक का सगठन कर लिया। उसने दीवान-इ-खास के नायब दरोगा सैफुद्दीन मुहम्मद खां तथा दफ्तर हिसाब (लेखा) के उच्चाधिकारी किसनचन्द सूद का विश्वास प्राप्त कर लिया और इनकी सहायता से नपुंसक तथा निर्धन सम्राट ने भी अपनी हार्दिक सहानुभूति प्रगट करके षडयन्त्रकारियों को प्रोत्साहन दिया। वास्तव में सूरजमल शुजाउद्दौला को वजीर पद पर आसीन कराने का इच्छुक था। इमाद को किसी प्रकार इस षडयन्त्र का सूत्र मिल गया था। उसने सतर्क होकर षडयन्त्रकारियों से बदला लेने का निश्चय किया। ६ जून को उसने अपनी हवेली पर ही दरबार किया और इसी दिन योजनाबद्ध रुहेला व बगश सरदारों की मदद से किसनचन्द सूद के मकान को घेर लिया। उनकी सम्पत्ति को लूट लिया। सूद ने अपने मकान के पिछ-वाड़े से निकलकर अपने प्राणों की रक्षा की। सैफुद्दीन मुहम्मद खां को षडयन्त्र का आरोप लगाकर पदच्युत कर दिया गया और इसके बाद वजीर ने बाहरी शक्तियों से बदला लेने का विचार किया।[१] इनमे निकटतम तथा प्रमुख व्यक्ति सूरजमल था। किन्तु शक्ति सम्पन्न जाटों को झुकाना सरल व सुगम नहीं था।

१७ – दासना संधि, जुलाई २६, १७५५ ई०

जाट सैनिकों ने दोआब मे शाही परगनों पर अधिकार करने का क्रमिक क्रम जारी रखा। सिकन्दराबाद के आसपास अधिकार करने के बाद जाटों ने बुलन्दशहर पर कब्जा कर लिया था। फिर उन्होंने गढ मुक्तेश्वर की ओर कूंच किया। इमाद ने राजधानी के षडयन्त्र को कुचलकर सूरजमल विरोधी अभियान की योजना बना ली। ७ जून को सम्राट ने दरबार किया, जिसमें उसने वजीर इमादुलमुल्क के प्रस्ताव पर नजीब खां रुहेला को छः वस्त्रों की खिलअत, सिरपेच, जडाऊ तेगा, तलवार माही–ओ–मरातिब प्रदान करके सम्मानित किया। इसी दिन शादिल खां, सादत खां आदि को भी सिकन्दराबाद, कोइल तथा मध्य दोआब के अन्य शाही परगना, जिन पर सूरजमल के जाट सैनिकों ने शाही थानों को उठाकर अधिकार कर लिया था, पर पुनर्धिकार करने के लिए विदाई की खिलअतें दी गई। वजीर

---

१ – ता० आ० सानी, पृ० ५४ ब, शुजाउद्दौला, जि० १ पृ० २१।

इमादुलमुल्क ने इस अभियान की बागडोर नजीब खा को सौपी और उसे इन जिलो पर शाही अमल व दखल करने की विदाई दी। किन्तु यह निर्विवाद सत्यता थी कि नजीब खा रुहेला-बलूचो की पूरी शक्ति से भी जाटो को पराजित नही कर सकता था। इससे दिल्ली में इस समस्या पर निरथंक विचार चलता रहा। दीवान-इ-खालसा राजा नागरमल सूरजमल का मित्र तथा सहयोगी था। उसने युवक वजीर तथा साम्राज्य के सैनिक अपयश तथा कीर्ति की रक्षा का प्रयास किया और मन्त्री परिषद की सलाह से सुजान सिंह ब्राह्मण को अपना सन्देशक दूत बनाकर नजीब खा के वकील मेघराज के साथ वजीर को पेशकश भुगतान करके आपसी समझौता के प्रस्ताव के साथ सूरजमल के पास रवाना किया। उसने इस प्रस्ताव पर विचार करने के लिए सूरजमल के वकील का भी दिल्ली म आमन्त्रित किया। फलत सूरजमल ने रूपराम कटारा के पुत्र को नागरमल के पास दिल्ली रवाना कर दिया, जहा कुछ दिन तक वजीर, नजीब, मराठा वकील महादेव पडित हिंगणे आदि के साथ बातचीत चलती रही। अन्त मे इन प्रस्तावो पर विचार करके सूरजमल ने स्पष्ट शब्दो मे कहा, "अनेक वर्ष पूर्व सम्राट ने दोआब के इन अठारह लाख जमा के परगनो को जाटो के सुपुर्द करने की स्वीकृति प्रदान कर दी थी, किन्तु अभी तक इन परगना के हस्तान्तरण का विधि सम्मत आदेश नही हो सका। जिन परगनों पर उसने अपना अमल व दखल जमा लिया है, यदि उन सभी को यथावत उसके अधिकार मे छोड दिया जाये, तो वह पाच लाख रुपया पेशकश भुगतान के लिए प्रस्तुत है।" सूरजमल के इस कडे रूख से समझौता वार्ता विफल हो गई।[1]

१७ जून को इमाद के आदेश पर नजीब खा ने शकरपुर से गाजीउद्दीन नगर की ओर प्रस्थान कर दिया। कुछ दिन बाद उसको समाचार मिला कि सूरजमल दनकौर मे आ गया है और उसने दनकौर तथा खुर्जा से सिकन्दराबाद की ओर सेनायें रवाना कर दी हैं। दुर्ग सिकन्दराबाद मे दकनी (मराठा) सवार थे। सूरजमल के आग्रह पर दकनियो ने यह किला खाली करके सूरजमल के सेनानायको को सौंप दिया है। जाटो ने दुर्ग पर कब्जा करने के बाद नगर पर भी अपना पूर्ण नियन्त्रण कर लिया। फिर उन्होंने परगना ताल-बेगमपुर में प्रवेश करके वहा भारी लूटमार तथा बरबादी की।[2] २६ जून को नजीब खां ने यमुना नदी पार की और ३० जून को हिंडन नदी के समीप पडाव डाला। उसकी सेनाओ ने आगे बढकर मध्य

---

१ – ता० आलमगीरसानी, पृ० ५५ अ-५७ अ, हिंगणे दफ्तर, खण्ड १, लेख, १७६।

२ – उपरोक्त, पृ० ५७ अ-ब।

दोआब के परगनो पर आक्रमण कर दिया। उभय पक्षो मे कई मुठभेड़ें हुईं और संघर्ष तनावपूर्ण हो गया। फिर भी उसको जाट सैनिको को हटाने मे सफलता नही मिल सकी।

२ जुलाई को आलमगीर सानी कुदसिया बाग में आ गया था। इमाद ने उससे जाटो के विरुद्ध कूंच करने का आग्रह किया। इसी समय उसने फौजदार कामगार खा बलूच, सरहिन्द के फौजदार तसदीक बेग खां, तथा अन्य सरदारो को ससैन्य दिल्ली आमन्त्रित किया। मीर बख्शी, समसामुद्दौला, सादुद्दीन खां खानखाना, सैय्यद नियाज खा, मीर आतिश, जलालुद्दीन खा तथा अन्य छोटे बड़े सरदार भी इमाद के आदेश पर कुदसिया बाग मे आकर एकत्रित हो गये। बातचीत करने के बाद यह निश्चय किया कि शाहजादा मुहम्मद अली गौहर तथा वजीर अन्य सरदारो सहित जाटों को दबाने के लिए कूच करें और सम्राट लौटकर किले मे चला जावे।[२] अब इमाद ने जाट विरोधी अभियान की विधिवत तयारियां की। राजा नागरमल वजीर तथा शाही सेना की स्थिति को समझता था और वह नित्यश वजीर को कूच न करने की सलाह दे रहा था। अन्त मे उसने एक बार पुन सूरज-इमाद का समझौता कराने का प्रयास किया। ५ जुलाई को उसने यमुना नदी पार[३] की और ७ जुलाई को वह वजीर के प्रधान कारिन्दा मुहम्मद आशिक तथा हकीम इबादुल्लाह सहित नजीब से मिलने चल दिया। इस दिन नजीब खा पन्द्रह-बीस हजार फौज के साथ गाजीउद्दीन नगर से दासना पहुँच गया था। ८ जुलाई को राजा नागरमल ने दासना मे नजीब से भेंट की। सूरजमल ने भी कोइल की ओर से कूच करके दासना से दस किमी० दूर पहुँचकर अपना शिविर डाल दिया था और उसके सैनिक दासना के आसपास गावो में लूटमार कर रहे थे। नजीब खां ने सहारनपुर तथा रुहेलखण्ड से नई कुमुक बुला ली था। नागरमल ने नजीब खा तथा सूरजमल के मध्य शान्ति-समझौता कराने का प्रयास किया और १० जुलाई को सम्भावित संघर्ष को टालने मे सफल हो गया। २३ जुलाई को दासना के समीप दोनो पक्षों में दीर्घ वार्ता के बाद निम्न शर्तों[४] पर समझौता हो गया—

(१) सिकन्दराबाद म आने से पूर्व कोइल आदि के वे शाही जिले, जिन पर सूरजमल ने पहले ही अमल व दखल कर लिया था, यथावत जाटों के अधिकार में रहेंगे।

---

१ – दे. फ्रॅ नी०, पृ० ६८।

२ – ता० आलमगीर सानी, पृ० ५७ ब।

३ – दे० फ्रॅानी०, पृ० ६८।

४ – ता० आलमगीर सानी, पृ० ५८ अ–५६ ब।

(२) इन अधिकृत परगनो की जमा छब्बीस लाख रुपया आकी गई और इनको सूरजमल के लिए इजारे पर देना स्वीकार किया गया। जाविद खा तथा सफदर जग ने इन शाही परगनो में जाटो के लिए अठारह लाख रुपया की जागीर प्रदान कर दी थी, किन्तु शाही कागजातो में इन जागीरो का नामान्तरण कही किया गया था। अतः प्रस्तावित इजारे की राशि से वेतन जागीर के रूप में अब अठारह लाख रुपया कम (मुजरा) कर दिया गया।

(३) सूरजमल शाही खजाने मे शेष आठ लाख रुपया जमा करायेगा।

(४) सूरजमल सिकन्दराबाद दुर्ग व जिला, जिसको मराठा प्रबन्धको ने उसे सभाल दिया था, खाली करके शाही प्रबन्धको को सौंप देगा।

इस समझौता के अन्तर्गत सूरजमल ने दो लाख रुपया तत्काल जमा करा दिया और शेष रकम के लिए पचास हजार प्रति माह भुगतान का अनुबन्ध किया गया।

इसके बाद सूरजमल ने अपना शिविर दासना से २०-२५ किमी० पीछे हटा लिया। २६ जुलाई को राजा नागरमल वजीर के पास दिल्ली लौटा और उसने शाति समझौता की शर्तों से वजीर को अवगत कराया। इससे वजीर काफी प्रसन्न हो उठा। अब उसने नजीब खा को दासना से दिल्ली वापिस बुला लिया। नजीब तीन दिन तक वजीर की हवेली पर रुका। फिर उसको अपने डेरो पर जाने की बिदाई दी गई।[1] अब जाटो ने कोइल दुर्ग व प्रान्त आदि पर अपना पूर्ण अमल व दखल कर लिया। अब तक सौरो, गंगेरी आदि गगा तटवर्ती परगनों में मराठा थाना तैनात थे। यहां से भी इन थानो को उठा लिया गया।[2] दासना सधि वजीर इमाद की अपेक्षा जाट शासन के लिए राजनैतिक तथा आर्थिक दृष्टि से अधिक लाभप्रद थी। *निःसन्देह इमादुलमुल्क एक बार पुनः सूरजमल को झुकाने में विफल रहा।*

१८ — मराठा निरोधक संघ की विफलता, सितम्बर, १७५५ ई०

जयप्पा की हत्या (जुलाई २५, १७५५ ई०) के बाद महाराजा विजयसिंह ने मराठों को उत्तर भारत से बाहर निकालने के विचार से मराठा विरोधी एक सघ बनाने का निश्चय किया। अगस्त मे उसने महाराजा माधोसिंह कछवाहा, राव बहादुर सूरजमल, सम्राट तथा रुहेला सरदारों का एक सघ बनाने का प्रस्ताव किया और अपने एक कारिन्दा को शाही दरबार मे भेजकर पाच लाख रुपया सम्राट को भेंट करके मराठा निरोधक अभियान का नेतृत्व सभालने की प्रार्थना की। राठौड प्रतिनिधि ने वजीर को यह आश्वासन दिया कि शाही सेनाओ के प्रस्थान के लिए

१ — ता० आ० सानी, पृ० ५८ अ, ब; हिंगणे दफ्तर, खण्ड १, लेख १५६, १७०; बे० आँनो, पृ० ६८।

२ — हिंगणे, खण्ड १, लेख १७८।

मारवाड नरेश दस सहस्र रुपया प्रतिदिन प्रदान करेगा और स्वजातीय राठौड बन्धु-बान्धव सम्राट का साथ देंगे। निर्बल सम्राट तथा वजीर इमाद ने शीघ्र ही शाही झडे के नीचे संगठित होने के लिए समस्त अमीरों के नाम फरमान मात्र भेजकर सन्तोष कर लिया। इसी समय भीषण वर्षा से नदियो मे बाढ आ गई थी और २३ अगस्त से २२ सितम्बर तक बाढ़ का भयकर प्रकोप [1] बना रहा। विजयसिंह का वकील सूरजमल के पास भी उसका आग्रह-पत्र लेकर आया। उसने भी मुगलो की भाति विजयसिंह को प्रोत्साहित उत्तर भेजकर सतोष कर लिया। सूरजमल यह भली भांति समझता था कि यह सघ नही बन सकेगा और न इससे किसी भी प्रकार का लाभ ही होगा। सवाई माधोसिंह अवश्य अपने देश मे मराठो को निकालने के लिए तैयार हो गया था। उसने मालवा में नई सेना की भरती की और बुन्देलखण्ड के राजाओ को भी इस सघ मे शामिल होने के लिए पत्र लिखे थे। सितम्बर, १७५५ ई० मे उसने अपने राज्य से मराठा कमाविशदार गोविन्द तिमाजी को निकाल दिया। विजयसिंह ने उसका घर घेर लिया और उसे अपमानित करने की धमकी दी, जिससे उसने विषपान कर लिया। [2] इस समय अन्ताजी माणकेश्वर गोहद पर आक्रमण कर रहा था। गोहद का जाट राणा सूरजमल के राजनैतिक प्रभाव मे था। इससे सूरजमल ने राणा भीमसिंह के पास जुलाई मे एक रिसाला (१५० सवार) टुकडी रवाना कर दी थी। [3] जयप्पा की हत्या का समाचार सुनकर पेशवा ने मारवाड मे मराठो की प्रतिष्ठा को यथावत कायम रखने के लिए नवीन सहायक सेना भेजने का आदेश दिया। सर्व प्रथम गोहद आक्रमण को रोककर ४ सितम्बर को अन्ताजी माणकेश्वर ने दस सहस्र सैनिको के साथ मारवाड की ओर प्रस्थान किया। उसके साथ जाट तथा भदौरिया राजपूत सरदार व सवार भी थे। अन्त मे फरवरी, १७५६ ई० के अन्त मे सवाई माधोसिंह तथा विजयसिंह को हताश होकर मराठो के साथ समझौता करना पडा। [4]

१९–घासहरा (घासेड़ा) दुर्ग की पुनर्विजय, नवम्बर १७५५ ई०

जनवरी, १७५५ ई० मे इमाद तथा मराठो की सहायता से राव फतेहसिंह बडगूजर ने अपनी पैतृक गढी घासेडा पर अधिकार कर लिया था। इस समय सूरजमल जटवाडा राज्य के आन्तरिक दुर्गों में रुककर मराठा—इमाद की संयुक्त सेनाओ से रक्षा करने की तैयारी में व्यस्त था। अगस्त १७५५ ई० में मराठा

---

१ – दे कॉनो, पृ० ६९।

२ – पे० द०, खण्ड २७, लेख, ११७, ११२, ११९; खंड २१, लेख ७१, ७३, ७६, खंड २, लेख ४६, ५०, ५१; सरकार (जयपुर), पृ० १७७।

३ – पे० द०, खण्ड २, लेख ४५; खंड २६ लेख ६०।

४ – पे० द०, खण्ड २१, लेख, ७०, ८२, ८३, ८५; खण्ड २, लेख, ५९, ६२, ६३, *

सेनापति रघुनाथ राव ग्वालियर से पूना लौट गया था और अन्ताजी माणकेश्वर मारवाड़ की ओर कूंच कर चुका था। वजीर इमादुल्मुल्क पजाब की ओर प्रस्थान करने की तैयारी मे था। राव फतेहसिंह को किसी की भी मदद मिलना दुष्कर था। इससे सूरजमल ने अपने पुत्र जवाहर सिंह को नवम्बर के शुरू मे घासेडा दुर्ग पर आक्रमण करने के लिए रवाना किया। उसने बल्लमगढ़ दुर्ग को आक्रमण का केन्द्र बनाया। यहा स जवाहर सिंह ने जाट राज्य के मेवाती जिनो की ओर प्रस्थान किया और सर्वत्र यह चर्चा प्रसारित कर दी कि वह माधोसिंह से मिलने के लिए जयपुर की ओर जा रहा है। उसने मेवात सीमाओ से अचानक मुडकर घासेडा दुर्ग का घेरा डाला और एक महीने से कम समय मे नवम्बर १७५५ ई० के अन्त में घासेडा तथा गढी हर-मरवर पर अधिकार कर लिया।

राव फतेहसिंह अपने परिवार के साथ दुर्ग को खाली करके कामगार खा बलूच के सरक्षण में फर्रुखनगर पहुँच गया। जाट सैनिको ने उसका पीछा किया और दिल्ली से ३८ किमी० दूर सराय अलीवर्दी खा तक लूटमार की। इस समय वजीर इमादुल्मुल्क शाहजादा अली गौहर के साथ कस्वा पालम मे डेरा डाले पडा था। समाचार मिलते ही उसने सम्राट से तोप, रहकला आदि शस्त्रास्त्र भेजने का आग्रह किया। सर्वत्र यह चर्चा जोर पकड गई थी कि इमाद जाटो के विरुद्ध कूच करने वाला है, किन्तु बाद मे पर्याप्त सेना के अभाव म उसको हताश होना पडा। वह जाट थानो को भी उठान मे विफल रहा। कुछ दिन बाद वह पालम से वजीराबाद और फिर वहा से लूनी की ओर चला गया।[१] राव फतेहसिंह को कामगार खा बलूच से भी पर्याप्त सहायता नहीं मिल सकी। कुछ माह बाद वह फार्रुखनगर से दिल्ली पहुँचा और वहा उसने मराठा वकील बापूजी पण्डित का संरक्षण प्राप्त कर लिया। इस समय मराठा प्रतिनिधि न उसको घासेडा जागीर पुन लौटवाने का आश्वासन भी दिया, परन्तु वह इसमे सफल नही हो सका।[२] सूरजमल ने घासेडा के प्रबन्ध के लिए किलेदार सैनिक तथा कर्मचारी नियुक्त किये और जमीदारो की मदद से मालगुजारी तथा अन्य कर वसूल किये। इस बार पुन: घासेडा जाट राज्य मे स्थाई रूप से शामिल कर लिया गया। इसी समय सूरजमल ने अलवर के उत्तर मे ३२ किमी० किशनगढ के दुर्ग की मरम्मत कराकर उसे मेवात मे जाट राज्य

---

* ६५, खण्ड २७, लेख १२८, ऐति० पत्रेन, लेख १४२; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १२५-६।

—राजा गोपाल सिंह के नाम माधोसिंह का खरीता, बंडल ५, लेख ११२, अक्तूबर, १६, १७५५ ई०।

१ - ता० आलमगीर सानी, पृ० ६१ अ, ब।

२ - पूना पारसनीस सग्रह, राप्ट ग्र १ (माच, १७५६ ई०)।

का सुदृढ दुर्ग बनाने का प्रयास किया।[1] यहा से वह नीमराना, घासेड़ा दुर्ग तथा मेवात प्रान्त की भली भाति रक्षा कर सकता था।

२० – अलवर के शाही दुर्ग तथा जिले पर अधिकार, मार्च २३, १७५६ ई०

सूरजमल ने पूर्वी, मध्य तथा उत्तरी मेवात के समस्त शाही परगनो पर अपना अधिकार कर लिया था, परन्तु मेवात का सुप्रसिद्ध दुर्ग अलवर तथा कुछ इलाका शाही अधिकार मे था। आईने अकबरी से पता चलता है कि जिला अलवर मे ४३ मुहाल शामिल थी और इस जिले का भू राजस्व ६,१५,८०५ रूपया वार्षिक था,[2] परन्तु सवाई जयसिंह ने अनेक परगनो को इजारे पर प्राप्त करके जयपुर राज्य मे मिला लिया था। अलवर का सुप्रसिद्ध पहाडी दुर्ग जयपुर–दिल्ली "शाह-राह" पर स्थित होने से अति महत्वपूर्ण था और अभी तक शाही किलेदार के प्रबन्ध में था। माधौसिंह इस महत्वपूर्ण दुर्ग पर अधिकार करने के लिए उत्सुक था। इधर सूरजमल भी मेवाती प्रदेश के इस प्रमुख दुर्ग को हस्तगत करना चाहता था। इस प्रकार दो पडोसी दावेदारो मे कूटनयिक तथा सैनिक सघर्ष अनिवार्य था। शाही किलेदार तथा सैनिको को कई वर्ष से वेतन नही मिला था और वे गरीबी तथा कष्ट में अपने दिन काट रहे थे। प्रारम्भ मे इसका लाभ उठाकर माधौसिंह ने किलेदार को पचास सहस्र रुपया देकर अपनी ओर मिला था और उचित अवसर देखकर किले पर अपना अधिकार करने के लिए पाच सौ सवार व पैदल सेना रवाना कर दी थी। जनवरी, १७५६ के अन्त मे सूरजमल ने अपने भाई दलेल सिंह तथा कृपाराम को माधौसिंह के पास भेजा था और २ फरवरी को उन्हें जयपुर से विदाई दी गई थी। सम्भवत इस समय इन दोनो को अलवर दुर्ग के बारे मे कछवाहा नीति का आभास हो गया था।[3] फलत सूरजमल ने शीघ्र ही दुर्ग पर अधिकार करने की योजना बनाई और कछवाहा फौज के अधिकार करने से पूर्व ही रूपराम कटारा की कमान मे पाच सहस्र सेना रवाना कर दी। इस सेना ने अलवर दुर्ग का कडाई से घेरा डाला।

फरवरी, १७५६ ई० के अन्त में विजयसिंह राठौड ने विवश होकर दत्ताजी सिंधिया के साथ समझौता कर लिया था और सवाई माधौसिंह ने भी इसी समय उसके सामने समर्पण कर दिया था। यह समाचार मिलने पर सूरजमल ने अलवर दुर्ग पर शीघ्र ही अधिकार कर लेने का क्रियात्मक निर्णय लिया और अपने पुत्र जवाहर सिंह को नई कुमुक के साथ रवाना किया। अब घेरा काफी कडा हो गया और दुर्ग मे पहुँचाने वाले रसद के मार्ग पूर्णतः बन्द हो गये। यह देखकर किलेदार

---

१ – सरकार (मुगल), खंड २, पृ० २६५, ३०२।
२ – आइने०, खण्ड २, पृ० २०२।
३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ३६६, ३२५।

व सैनिकों ने दुर्ग खाली करने का प्रस्ताव रखा। सूरजमल स्वयं घटनास्थल पर पहुंच गया और उसने गुप्तचरों को किलेदार से बातचीत करने के लिए भेजा। सूरजमल ने किलेदार तथा उसके सैनिकों को बकाया वेतन चुकाने तथा उनको अपनी राज सेवा में यथावत रखने का आश्वासन देकर सन्तुष्ट किया। इसी समय उसने कछवाहा सैनिकों, जो इस दुर्ग मे जाट सेनाओं के आने से पूर्व पहुँच चुके थे, को भी दुर्ग से सुरक्षित निकलकर जाने का वचन दिया। फलतः किलेदार ने बिना किसी संघर्ष के समर्पण कर दिया और जाट सैनिकों ने इस दुर्ग पर अधिकार करके प्रशासनिक प्रबन्ध संभाल लिया।[1] इस अधिकार के साथ ही जाट राज्य की सीमायें पश्चिम मे परगना बसवा के सीमान्त तक हो गई और जाट राज्य शेखावाटी की सीमाओं से मिल गया।

अलवर दुर्ग पर जाटों का अधिकार सवाई माधोसिंह को जीवन भर खटकता रहा और इधर कछवाहा राज्य का विकास सदैव के लिए रुक गया था। फिर भी राजस्थान मे सिंधिया परिवार की उपस्थिति तथा मराठों के साथ चल रहे संघर्ष के कारण उसने सूरजमल का विरोध नही किया। दस्तूर कौमवार तथा मराठा अभिलेखों से स्पष्ट आभास मिलता है कि सटवोजी तथा जनकोजी कछवाहा राज्य से मामलत की माग कर रहे थे, तब सूरजमल ने राव रूपराम कटारा को दखनियों से वार्ता करने और कछवाहा राज्य की मामलत तय करने के लिये भेजा। ६ अप्रेल, १७५६ ई० को रूपराम दरबार में जाकर उपस्थित हुआ। ७ अप्रेल को उसे एक घोडा मय साज प्रदान किया गया। रूपराम व दीवान कन्हीराम के प्रयास से सटवोजी के साथ कछवाहा राज्य की मामलत तय हो गई थी। इसके फलस्वरूप २२ अप्रेल को माधोसिंह ने राव हेमराज व रूपराम कटारा को परगना बहातरि मे रु० १३००/– की जमा का गाव गुढा तथा [illegible] उदक म प्रदान करने की सनद देकर सूरजमल के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रगट की थी।[2]

---

१ – पे० द०, खण्ड २७, लेख १२८; (नई), खंड १, लेख १८६; कानूनगो पृ० ३१२ पा० टि०; शेजवल्कर, पृ० ६१; सरकार (मुगल), खंड २, पृ० २६५।

— शाह वली उल्लाह (*सियासी मक्तूबात, पत्र स० २, पृ० ४५–५८, उर्दू अनु०, पृ० ६७–११४*) ने अपने पत्र में अलवर अधिकार का उल्लेख किया है।

— डा० मनोहर सिंह राणावत (पृ० १६) का कथन कि अलवर दुर्ग का किलेदार अनिरुद्ध सिंह था, असत्य है, क्योंकि अन्य मराठा अभिलेखों के अनुसार अनिरुद्ध सिंह खंगारोत को मराठों के विरुद्ध भेजा गया था।

२ – पे० द० (नई), खण्ड १, लेख १८१; डा० ख० प०, जि० ५; लेख ८७६; द० कौ०, जि० ७, पृ० ५६५; पोथी तीर्थ पुरोहिताई, लेख ६३।

अध्याय ७

ब्रजेन्द्र बहादुर राजा सूरजमल का राज्यारोहण : दुर्रानी से संघर्ष, १७५६–६० ई०

राव बदन सिंह के जीवन काल में ही उसके सरक्षण मे सूरजमल ने अपनी योग्यता, निपुणता, प्रतिभा व निष्ठा भाव से जाट राज्य का विस्तार करके एक सुदृढ सम्पन्न वैधानिक राज्य की स्थापना कर ली थी और काठेड जन–शक्ति को भारतीय शक्ति बना दिया था। उसने प्राचीन दुर्गों का जीर्णोद्धार कराया और सभी दुर्गों को नवीनतम अस्त्र–शस्त्रो से सुदृढ कर लिया था। राव बदन सिंह तथा सूरजमल की ललित कला, शिल्प कला व स्थापत्य कला के प्रति अद्भुत अभिरुचि थी। नवीन पक्के दुर्गों, बुर्ज सयुक्त नगर प्राचीरो, अति आकर्षक बाग–बगीचो, विशाल प्रासादों देवालयो, कुण्डो व घाटो के निर्माण के लिए दोना ने ही लगभग २०,००० शिल्पियो व मजदूरो को भरती कर लिया था और इन निर्माण कार्यों का निरीक्षण, लेखा–जोखा दीवान जीवाराम बँचारी को सौंप दिया था। बाँसी पहाड–पुर, रुपवास, बारैठा से वैर, भरतपुर, कुम्हेर, डीग, गोवर्द्धन, मथुरा, वृन्दावन, सहार, काँमर, किसनगढ, रामगढ आदि मे उत्कृष्ट श्रेणी का पत्थर पहुँचाने के लिए जाट राज्य मे १००० बैलगाडिया, २०० खच्चर गाडिया, १५०० ऊँट गाडिया, ५०० खच्चर सदैव तैयार रहने थे। भरतपुर के विशाल दुर्ग व नगर की स्थापना के बाद सूरजमल ने डीग के अति भव्य विशाल जल महलो का निर्माण कार्य प्रारम्भ किया किन्तु यह एक अति व्ययी परियोजना थी, जो उसके उत्तराधिकारियों के शासन म भी पूण नही हो सकी।

१ – सूरजमल का राज्यारोहण, जून ६, १७५६ ई०

जून ६,१७५६ ई० (ज्येष्ठ सुदि ११–१२, स० १८१३)' को सूरजमल ने जाट राज्य के मण्डप (गद्दी) मे आसीन होकर अपने सभी बन्धु–बान्धव, राज

सरदारो की पचायत की सलाह से राव बहादुर [1] का वैधानिक विरुद तथा राजसी चिह्न धारण किये। सवाई माधोसिह ने एक जुलाई को मातमपुरसी का टीका व तीन वस्त्रो का सिरोपाव भेजा और २ जुलाई को प्रधान दीवान स्योनाथ व दीवान कन्हीराम के साथ एक घोडा, टीका मे लक्ष्मण हथिनी तथा सरपेच तिलाई मीना मुरसाकारी भेजकर [2] जाट राज्य की इकाई व उत्तराधिकार को मान्यता प्रदान कर दी थी।

राज्यारोहण के तुरन्त बाद ही सूरजमल को अनेक महान सकट पूर्ण आन्तरिक तथा वाह्य आपत्तियो का सामना करना पडा था। सम्पन्न व समृद्ध जाट राज्य पर नवाब वजीर इमादुल्मुल्क, मराठा तथा अहमद शाह दुर्रानी की आँखें लग रही थी और पतनोन्मुख मुगल साम्राज्य का राजनतिक सघर्ष जटवाडा तक सीमित रह गया था। सूरजमल ने निर्भीकता और कुशलता से नवोदित राज्य व सगठन की रक्षा करके जाट राज्य को एक स्वाधीन इकाई मे परिवर्तित कर दिया था।

२ – वजीर इमादुल्मुल्क की कूटनीतिज्ञ पराजय तथा सूरज–इमाद समझौता की विफलता, अगस्त–दिसम्बर १७५६

मई, १७५६ ई० मे वजीर इमादुल्मुल्क ने अपने विरुद्ध रचे गये आन्तरिक षडयत्र को अवश्य विफल कर दिया था, परन्तु इस षडयत्र से शुजा तथा इमाद के बीच मे खुला सघर्ष का मार्ग खुल गया था। क्रोधित वजीर का विचार सूरजमल को दबाकर शुजा के विरुद्ध अहमद खा बगश को खडा करने का था, किन्तु दासना सधि सूरजमल के राजनैतिक हित मे अधिक लाभप्रद थी।

अस्तु, जुलाई के अन्त म इमाद ने सम्राट आलमगीर सानी के साथ लूनी मे पडाव डाला और यहा से उसने नवाब शुजा को इलाहाबाद की सूबेदारी से च्युत करने और उसके स्थान पर फर्रुखाबाद के नवाब अहमद खा बगश को नियुक्ति का परमान भेजकर उससे इलाहाबाद पर शीघ्र ही अधिकार करने का अनुरोध किया। किन्तु शुजा को इसका तुरन्त ही पता चल गया और वह एक विशाल सेना, तोपखाना

---

१ – जयपुर रिकार्ड मे प्राप्त ,खरीतों व अभिलेखों में इन वर्षों में 'राव बहादुर' विरुद का प्रयोग किया गया है।

— जॉन कोहन (पृ० २० अ) तथा बलदेव सिंह (पृ० २४) का अभिमत है कि सूरजमल ने इस समय 'राजा' का विरुद धारण कर लिया था। किन्तु ये दोनों ग्रन्थ एक शताब्दी बाद के हैं और अभिलेखो के आधार पर नहीं लिखे गये हैं।

२ – दं० कौ०, जि० ७ पृ० ५११, ५६७, ५६६।

तथा युद्ध प्रसाधनो के साथ अगस्त या सितम्बर मे बंगश के विरुद्ध अपने राज्य की सीमा पर आ धमका। इसी समय शुजा ने सूरजमल के पास अपना वकील भेजकर हार्दिक समर्थन तथा सहयोग की अपील की। सूरजमल ने राज्य हित मे अपने मित्र तथा सहयोगी नवाब की अपील का कूटनीतिज्ञ स्तर पर आदर किया और वह तीव्रता से अपने प्रयत्नो म लग गया। उसने दोआब में तैनात अपनी सैनिक टुकडियो को सजग रहने, इमाद की हरकतों पर निगाह रखने के निर्देश भेजे।

शुजा के सामयिक प्रयास तथा सैनिक शक्ति को देखकर बगश स्वय निराश हो गया और वह फर्रुखाबाद से बाहर निकलने का साहस नही कर सका। सैनिक विद्रोह के कारण इमाद स्वयं रुहेलखण्ड की ओर कूच करने में विफल रहा। इसी समय वजीर को नजीब खा के प्रति शका होने लगी थी। नजीब वास्तव मे अपने भाग्य निर्माण के प्रयास में था और उसने अहमदशाह दुर्रानी को दिल्ली आने का निमत्रण भेज दिया था। सितम्बर मे नजीब ने शाही सैनिको की मध्यस्थता करके उनको दस माह तथा कुछ दिन का वेतन दिलवाकर सहानुभूति प्राप्त कर ली थी।[१] फलत भयभीत वजीर ने नजीब खां से सहायता की याचना की, इस पर उसने वजीर से अपने सैनिको के तीन माह के बकाया वेतन की माग की। ३ नवम्बर को दोनों में कटु वाद-विवाद हो गया। ८ नवम्बर को नजीब ने एक बडी सेना के साथ वजीर छावनी की पाच-छ दुकान लूट ली।[२] इससे दोनो मे काफी तनाव बढ गया।

सूरजमल वास्तव म नवाब शुजा की आड में वजीर इमाद की शक्ति को पगु और उसके प्रबल समर्थक मराठा मित्रो से विमुख करना चाहता था। उस पर मराठो के विरोध में राजपूतो का भारी दबाव था। अक्तूबर, १७५६ ई० मे राव हेमराज कटारा ने कछवाहा दरबार को सभी घटनाओं से अवगत कराया और कछवाहों ने सूरजमल पर इमाद व मराठो मे अलगाव पैदा करने के लिए दबाव डाला था।[३] इसी बीच में सर्वत्र यह चर्चा फैल गई थी कि सूरजमल तथा शुजाउद्दौला मे कुछ शर्तें तय हो चुकी हैं और सूरजमल षडयन्त्रकारी अधिनायक वजीर से सघर्ष करने के लिये कूच करने की तैयारियां कर चुका है। इस सूचना से हतप्रभ होकर नजीब खा रुहेला तथा राजा नागरमल ने मिलकर सूरजमल से शुजा की सहायता

---

१ – ता० आ० सानी, पृ० ७६ ब–७८ अ (२३ जुलाई का उत्पात), पृ० ७८ अ–७९ अ (द्वितीय उत्पात व सूनी शिविर की स्थिति), पृ० ७९ ब (नजीब की मध्यस्थता)।

२ – उपरोक्त, पृ० ८१ अ, गडासिंह, पृ० १५३, सरकार (मुगल) खण्ड २ पृ० ४४।

के लिये कूच न करने की विनम्र प्रार्थना की। नजीब खा ने वजीर को भी अपने भय से प्रभावित किया और उसने शुजा को इलाहाबाद की सूबेदारी पर यथावत रखने की सलाह दी। इसी प्रकार बगश ने भी आदेशो को ठुकरा दिया। फलतः शुजा-बगश संघर्ष टल गया और शुजा अवध की ओर लौटने की तैयारिया करने लगा।[1]

अभी तक सूरजमल के दृष्टिकोण के प्रति शंकायें थीं। इससे राजा नागरमल ने सूरजमल के साथ मैत्रीपूर्ण समझौता करने के लिए वजीर पर दबाव डाला और इसी समय अपने विश्वासपात्र वकील मिश्र सुजान (पंडित) को सूरजमल के लिए समझाकर इमाद से मुलाकात कराने को साथ लेकर आने के लिए रवाना किया। सूरजमल ने वकील का भारी स्वागत सत्कार किया। फिर नवम्बर, १७५६ ई० के प्रथम सप्ताह मे सूरजमल ने डीग से प्रस्थान करके कस्बा तिलपत मे पडाव डाला।[2] इस समय महंत राम किसन वृन्दावन मे महंत सुन्दर दास का महोत्सव मनाने की तैयारियां कर रहा था। उसने तथा राव हेमराज कटारा आदि ने सर्वत्र निमंत्रण पत्र भेज दिये थे। महंत बालानन्द गोस्वामी, नागा महंत लालदास जयपुर राज्य से भरतपुर आ चुके थे। १० नवम्बर को सूरजमल ने माधोसिंह के पास आचार्य महन्त हरि सेवक (गलता जी) को इस महोत्सव मे भेजने के लिए अर्जदाश्त भेजी थी तथा जाट दरबार की ओर से समस्त वैष्णव, दादूपंथी व नागा महंतो व सन्यासियो को भी अपने शिष्यों व अखाडों के साथ वृन्दावन पधारने के लिए निमन्त्रण पत्र भेजे गये थे। सूरजमल ने सवाई माधोसिंह को महोत्सव के बाद अपने एक पुत्र को दरबार की सेवा में आवश्यक रूप से भेजने का भी आश्वासन दिया था।[3]

११ नवम्बर को राजा नागरमल (दीवान-ए-खालसा) ने यमुना नदी पार की ओर सूरजमल के तिलपत डेरो पर मिलने आया। दूसरे दिन (१२ नवम्बर) नजीब खा भी सूरजमल के डेरो पर मिलने आया।[4] अन्ताजी के अनुसार सूरजमल की भावना व दृष्टिकोण की परख के लिए इस बार नजीब खा ने उससे एकान्त मे निवेदन किया-"इमादुलमुल्क मल्हार राव का दत्तक पुत्र व दादा साहब (रघुनाथ राव) का पगडी बदल भाई है। उस पर विश्वास नही किया जा सकता है। उसने

---

१ - ता० आलमगीर सानी, पृ० ७६ ब-८३ अ, दे० श्रीवास्तव; ऑनी, शुजाउद्दौला, खण्ड १, पृ० ५४।
२ - उपरोक्त, पृ० ८३ ब; दे० ऑनी।
३ - भरतपुर-जयपुर दरीसा, स० १३/५६/२, ड्रा० ख० प०, जि० ५ लेख ८६७, ८८४।
४ - ता० आलमगीर सानी, पृ० ८३ ब।

वास्तव में सारी सल्तनत मराठो को गिरवी रख दी है और इससे साम्राज्य का सत्यानाश हो रहा है।" [१] राजा सूरजमल ने भी इस आपसी मित्रता का विरोध किया था। इस भेंट-वार्ता के बाद नजीब यमुना नदी के पार लौट गया। वजीर ने भी अपने विश्वासपात्र साथी मेंहदी कुली खा को नागरमल के साथ मिलकर सूरजमल से बातचीत करने के लिए भेज दिया था और उन दोनों ने सूरजमल से शांति समझौता की शर्तें पुन: पुष्ट कराने का आश्वासन दिया। [२] तब सूरजमल ने वजीर के दूत से कहा [३]—

"हम जमीदार हैं और बादशाह की सहायता से सुखी व सम्पन्न रह सकते हैं। अब मराठा सेनायें उत्तर भारत की ओर आ रही हैं। वे जनता के घर-बार तथा हम सभी की इज्जत को लूटती हैं। हम सभी छोटे-बड़े जमीदारो के अधिकार मे हस्तक्षेप करती हैं। जयपुर जोधपुर, मेड़ता तथा अन्य सभी राजाओ ने मिलकर तय कर लिया है कि मराठों को नर्बदा के उत्तर में आने से रोक दिया जावे और जिन प्रान्तो पर उन्होने अधिकार कर लिया है, वहा से उनको बेदखल कर दिया जावे, ताकि साम्राज्य के सभी प्रान्त सम्राट के सेवको के हाथों मे सुरक्षित रह सकें। मैं अपनी पुरानी वतन जमीदारी के अतिरिक्त अन्य शाही महालो को छोड़ने के लिए तैयार हू बशर्ते कि वजीर दखनी लुटेरों को खदेड़ने में हमारी सहायता करे। वह स्वयं आगरा की ओर कूच करे और मालवा व गुजरात प्रान्तो को मराठो से छीन ले। किन्तु वजीर नही चाहता कि मराठो के आवागमन को रोका जावे। इसी से वह हमारे इस प्रस्ताव की ओर ध्यान नही देता है।"

सूरजमल ने आगे कहा [४]— "मराठो को खदेड़ने के बाद फिर कमरुद्दीन की भाति जाट, राजपूत, रुहेला तथा अन्य पुराने अमीरों की मित्र सेना के साथ अफगान आक्रान्ता को खदेड़ने के लिए पंजाब की ओर कूच किया जावे।"

नवाब वजीर मराठा सरदारो की मित्रता को नही तोड़ सकता था। इससे दासना समझौता की शर्तों को पुनः पुष्ट [५] कराने के अलावा अन्य कोई लाभ नही हो

---

१ – पे० द०, खण्ड २१, लेख ६६ (जनवरी ३०, १७५७ ई०)।
२ – ता० आलमगीर सानी, पृ० ८३ ब।
३ – उपरोक्त, पृ० ८३ ब–८४ अ; दे० कॉनी।
४ – तज्किरा-इ-इमाद, पृ० १५८–६२; गडा सिंह, पृ० १५४, १७१।
५ – ठाकुर मोहकम सिंह को भांति सूरजमल ने ज्ञाति बन्धुओं की सलाह से 'ब्रजेन्द्र बहादुर राजा' का विरुद तथा राजसी चिन्ह धारण कर लिये थे, जबकि शाही परम्परानुसार उसको सम्राट से उत्तराधिकार का टीका व सनद प्राप्त करना आवश्यक था। इसके बाद ही वह शाही दरबार का वैधानिक सरदार हो सकता था। अत दासना सधि की पुष्टि ने वैधानिकता प्रदान कर दी थी।

सका। फिर भी उसको इस वैधानिक शर्त पर सन्तोष था। कहा जाता है कि सूरजमल को नजीब खा से हुई वार्ता मे कुछ सफलता अवश्य मिली थी, जिसके परिणामस्वरूप ही सूरजमल व इमाद के बीच चली वार्ता मे गतिरोध पैदा हो गया था। अन्त में सूरजमल निराशा के साथ नक्कारा बजाता हुआ अपने मुल्क की ओर लौट आया।[1] वास्तव मे अब सूरजमल जाट राज्य का सर्वमान्य वैधानिक स्वामी तथा जनता का प्रिय शासक था।

३ – अहमद शाह दुर्रानी को हिन्दुस्तान पर आक्रमण का निमन्त्रण (१७५६ ई०)

१७५६ ई० के प्रारम्भ मे वजीर इमादुल्मुल्क ने लाहौर तथा पजाब पर अधिकार कर लिया था। लाहौर के पदच्युत शासक तथा दुर्रानी के प्रतिनिधि ख्वाजा अब्दुल्ला ने भागकर दुर्रानी के पास शरण ले ली थी और उसने तथा मुगलानी बेगम (मीर मनु की पत्नि सुरैया या मुराद बेगम) ने दुर्रानी से सिरहिन्द तथा पजाब पर आक्रमण करने का आग्रह किया। सम्राट आलमगीर सानी स्वयं इमाद की अधिनायकवादी प्रवृत्ति तथा राजस्व अपहरण की नीति से परेशान था। अर्थ-सकट से पीडित सम्राट का परिवार भूखो मरने की स्थिति मे था। नजीब खा रुहेला इमाद की तानाशाही से ईर्ष्या करने लगा था और राजधानी मे अब दोनों में सैनिक सत्ता का झगड़ा शुरू हो चुका था। शाह वली उल्लाह ने अब स्पष्ट रूप से भाप लिया था कि वजीर इमाद मराठा तथा जाटो का साथ नही छोड सकेगा। तब उसने नजीब पर अपनी दृष्टि डाली और उसको मुस्लिम सघ का नेतृत्व ग्रहण करने की सलाह दी। साथ ही उसने इमाद पर भी अपनी निगाह गाड रखी थी और उसको भी अपने पजो मे जकडने का प्रयास किया।[2] इसके बाद उसने संभवतः सितम्बर या अक्टूबर, १७५६ ई० मे अहमद शाह दुर्रानी को दिल्ली की ओर कूच करने, मराठा तथा जाटो से देश को मुक्त कराने और देश मे प्रभावी मुस्लिम सत्ता स्थापित करके भारतीय मुसलमानो को शुभ आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए पत्र लिखा था। अहमद शाह दुर्रानी के नाम यह एक ऐतिहासिक, राजनैतिक किन्तु दुराग्रही प्रतिरजित पत्र था। इस पत्र से शाह वली उ लाह की एकांगी विचारधारा, साम्प्रदायिकता का स्पष्ट आभास होना है। उसमे मुस्लिम राष्ट्र तथा कट्टर मुस्लिम समाज की भावना प्रधान थी। उसने लिखा[3] था—

---

१ – ता० आलमगीर सानी, पृ० ८४ अ; दे० क्रॉनी।

२ – डा० आशीर्वादीलाल, स्टेडीज इन इण्डियन हिस्ट्री, पृ० १६६।

३ – सियासी मक्तूबात, पत्र स० २, पृ० ४५–५८, उर्दू अनु०, पृ० ६७–११४; हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेन्ट, खड १, पृ० ५३१–२, हरीराम, पृ० १२१।

"..... परन्तु उत्तर मुगल शासकों की उपेक्षा तथा सैनिक शक्ति की शिथिलता, मुख्यतः नादिरशाह के बर्बर व बरबादी पूर्ण आक्रमण, राजधानी की लूट तथा अत्याचार के कारण ही काफिरो (गैर-मुस्लिम) ने देश में अपना सिर उठाया और साम्राज्य के बड़े प्रान्तों का अपहरण कर लिया है। इन अपहर्ताओं में सर्व प्रथम मराठों ने अपना कदम बढ़ाया। ..... मराठा हिन्दुस्तान के लिए "एक दु खद सन्ताप (फितनाह) के द्योतक हैं। इस सकट के उन्मूलन में खुदा आपको (दुर्रानी) सहायता करे।" उसने जाटो की राजनैतिक व सामाजिक स्थिति पर प्रकाश डालते हुए लिखा— "मुस्लिम अमीरो के आपसी मतभेद तथा व्यक्तिगत ईर्ष्या का लाभ उठाकर जाट-जन शक्ति आगे बढ़ चुकी है। यदाकदा मन्त्रियो ने जाटो की सहायता प्राप्त की थी और इससे सूरजमल की शक्ति निरन्तर बढती गई। ..... उसके राज्य मे कोई भी मुस्लिम रीति-रिवाज या नियमो के अनुसार इबादत (प्रार्थना) के लिए अजान नहीं दे सकता है। ..... फिर भी जाटो को आसानी से कुचला जा सकता है, क्योकि जिन इलाकों का (जाटों ने) अपहरण कर लिया है, वे (इलाके) मुस्लिम अमीरो की जायदाद तथा मुस्लिम जागीरदारो के अंग हैं और वहा उनके परिवार अभी तक आबाद हैं। यदि उनको भली भाति सहयोग दिया गया तो वे निश्चित रूप से अपने पुराने अपहृत इलाकों पर अधिकार करना पसन्द करेंगे।"

उसने मुसलमानों की दशा का वर्णन करते हुए लिखा— "संक्षेप में मुस्लिम दया के पात्र हैं। शासन की बागडोर हिन्दुओ के हाथो मे निहित है। धन, सम्पदा तथा ऐश्वर्य उनके घरो में निवास करता है और मुसलमानों के भाग्य मे केवल निर्धनता, दीनता-हीनता है। ..... इस समय शहशाह के अलावा शक्ति-सम्पन्न, दूरदर्शी तथा युद्ध निपुण अन्य कोई नही है, जो शत्रुओ को परास्त करके बरबाद कर सके। इसलिये जाट-मराठो को परास्त करके बरबाद करने तथा दयार्द्र मुसलमानों को काफिरों से मुक्त कराने के लिए ही शहशाह का हिन्दुस्तान की ओर कूच करने का प्रमुख कर्तव्य होना चाहिये। अल्ला न करे कि ऐसा हो। यदि काफिरों की सत्ता इसी प्रकार बनी रही, तो मुसलमान इस्लाम धर्म भूल जावेंगे और कुछ समय मे ही मुस्लिम जाति उस स्थिति में पहुँच जावेगी, जबकि मुसलमान व काफिरो म कोई अन्तर नही रहेगा। केवल शहशाह के अलावा अन्य कोई (योद्धा) शेष नहीं है, जो इस महान सकट से उद्धार कर सके।"

तब शाह वली उल्लाह ने अल्ला व इस्लाम के खलीफाओ के नाम अहमद शाह दुर्रानी से अपील की— "वह शत्रुओ से लडने के लिए हिन्दुस्तान की ओर कूच करने का निश्चय करे।" उसने यह भी आश्वासन दिया था कि— "इस समय उसके हस्तक्षेप मे धर्म की कीर्ति बढेगी, उसको सम्मान मिलेगा और उसका नाम धर्म-योद्धाओ की सूची मे अंकित रहेगा। धार्मिक सुख अनुभूति प्राप्त करने के अलावा

गुप्त रूप से इमाद के विरुद्ध साहसिक षड्यन्त्र रच रहा था। फिर भी वजीर ने उससे सहयोग की अपील की। परन्तु वह सफल नहीं हो सका।

इस समय दिल्ली के समीप राजा सूरजमल के पास एक विशाल व सुदृढ़ सेना, साधन-सम्पन्न देश तथा मजबूत किले थे। अन्त में हताश होकर वजीर ने सूरजमल से सहायता की विनम्र प्रार्थना की। इमाद के विश्वासपात्र सलाहकार इबादुल्ला खां काश्मीरी ने मराठों को आमन्त्रित करने की सलाह दी। इस समय हिंदुस्तान में अन्ताजी माणकेश्वर के अधीन पांच सहस्र मराठा सवार थे। परन्तु ये सभी सम्राट के निजी सेवक थे। इसके अलावा अन्ताजी की जागीरों — फफूंद, शिकोहाबाद तथा इटावा में मराठा कमाविसदारों के पास कुछ मराठा सिपाही थे। *किन्तु अन्ताजी दिल्ली के दक्षिण-पूर्व २६६ किमी० इटावा में था। दिल्ली में केवल* तीर्थस्वरूप बापूजी महादेव पण्डित हिंगणे पेशवा की ओर से प्रतिनिधि था। उसकी जागीर-बुलन्दशहर तथा मेरठ में कुछ मराठा सैनिक थे, किन्तु ये सैनिक शाह दुर्रानी का सामना करने के लिये अपर्याप्त थे। इमाद स्वयं विशाल सेना खड़ी करने में असमर्थ था। इससे उसने यह प्रयास किया कि किसी भी प्रकार सूरजमल आगे बढ़ जावे ताकि युद्ध का सभी व्यय उसी को सहन करना पड़े। वजीर ने राजा नागरमल व इबादुल्ला खां की सलाह से १६ दिसम्बर, १७५६ ई० को राजा सूरजमल तथा अन्ताजी माणकेश्वर के पास शाही फरमान तथा स्वहस्तलिखित व्यक्तिगत पत्र [1] भेजे। वजीर ने इन पत्रों के साथ अन्ताजी के पास मुंशी गुलाब राय तथा महबूब सिंह को रवाना किया [2] और राजा नागरमल ने जाट नरेश से दिल्ली आने के लिये विशेष अनुरोध किया। सम्राट, वजीर तथा नागरमल के निमन्त्रण पर सूरजमल किसनदास तालाब पर पहुँचा और वहां बातचीत की। सूरजमल ने इस समय स्पष्टतः भांप लिया था कि वजीर से अन्य प्रश्नों पर आगे वार्ता करना व्यर्थ है। वह स्वयं अकेला ही आक्रान्ता के विरुद्ध सेनाओं पर धन-व्यय करने का साहस किस प्रकार कर सकता था? क्योंकि जाट साम्राज्य राजधानी के समीप था और आक्रान्ता इमाद की सलाह पर जाटों से संघर्ष मोल ले सकता था। फलतः दिसम्बर के तृतीय सप्ताह में चतुर सूरजमल वजीर को उसके भाग्य के भरोसे पर छोड़कर *ग्लानि के साथ अपने किलों की सुरक्षा व्यवस्था के लिए वापिस लौट आया।* इसके बावजूद भी उसने जवाहर सिंह को दिल्ली के समीप किसी भी आकस्मिक संघर्ष में भाग लेने के लिए तैनात किया। [3]

---

१ – दे० क्रॉनी०, पृ० ७४–७५।

२ – राजवाड़े, खण्ड ६ पृ० ४३७।

३ – तजकिरा-इ-इमाद, पृ० १६१–२, गण्डासिंह, पृ० १५४, १७१; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ५५–६१।

दिल्ली के अमीर व नागरिको का जाट राज्य में शरण लेना,[1] दिसम्बर–जनवरी, १७५७ ई०

२० दिसम्बर को दिल्ली मे समाचार आया कि अफगान सेनाओ ने बिना किसी रोकटोक के पजाब पर अधिकार कर लिया है और जहान खा के नेतृत्व में अफगान अग्रदल (कोतल) दिल्ली की ओर बढ रहे हैं। इससे दिल्ली में आतक छा गया और वहा के प्रतिष्ठित अमीर तथा नागरिको ने दुर्रानी क भय से स्व–परिवार तथा चल–सम्पत्ति को सूरजमल के इलाको मे मथुरा, आगरा तथा अन्य स्थानों की ओर रवाना कर दिया। इस प्रकार जाट नरेश का राज्य हिन्दुओ का शरण स्थल बन गया था।[1] २६ दिसम्बर को राजधानी मे पुन समाचार आया कि हसन खा के नेतृत्व मे अफगान कोतल दलो ने सरहिन्द पर अधिकार कर लिया है। इससे राजधानी मे भारी आतक छा गया और नागरिकों म भगदड मच गई। ३० दिसम्बर को राय खुशाल चन्द, राजा लक्ष्मीनारायण, राजा नागरमल, दिवाली सिंह, बाल गोविन्द साहूकार आदि उच्च वर्गीय अमीर, सर्राफ तथा साहूकारों के परिवार भी मथुरा की ओर शरण लने क लिए चल दिए। नगर के धनी–मानी लोग अपनी अमूल्य वस्तुओ के साथ देहातो म भाग गये। मुसलमान भी अपन आपको सुरक्षित नही समझ सके। वजीर इमादुलमुल्क ने अपने परिवार को राजपूताना की ओर भेज दिया।

३० दिसम्बर को अन्ताजी माणकेश्वर पाच सहस्र मराठा सवारो के साथ ग्वालियर से दिल्ली पहुँच गया। मराठो का यह केवल एक छोटा सा रिसाला था, जिसमे न तोप थी और न प्रचुर युद्ध–प्रसाधन। वजीर ने अन्ताजी को दिल्ली से भयभीत होकर भाग रहे नागरिको को रोकने का आदेश दिया और मराठा सवारो ने फरह बख्श बाग के समीप दिल्ली के दक्षिणी मार्ग को रोक लिया। इससे भाग्यहीन नागरिकों को भारी कष्ट उठाने पडे। इस टुकडी ने उनके माल तथा सामान को लूट कर दिल्ली वापिस लौट जाने क लिए बाध्य कर दिया। शाही मीर बख्शी जियाउद्दौला का परिवार भी भागकर जा रहा था, उसको भी मराठो ने पुराने किले में रोक लिया। इस लूट में अन्ताजी के सैनिकों को बहुत सा रुपया तथा आभूषण मिले।[2] इससे पूर्व जो नागरिक व परिवार दिल्ली स भाग निकले थ, उनमे से अधिकाश न मथुरा में शरण ली, क्योंकि नादिरशाह आक्रमण के समय जाटों की

---

१ – ता० आलमगीर सानी, पृ० ८५अ–ब, गडासिंह, पृ० १५४; सरकार (मुगल), खड २, पृ० ५६।

२ – ता० आलमगीर सानी, पृ० ८७ अ–ब, दे० अॅनो, पृ० ७५, पे० द०, जि० २१, लेख ५५, राजवाडे, खण्ड ६, पृ० ४३७।

सेनापति सरबर खां के नेतृत्व में चार सहस्र अफ़गान तथा नजीब के भारतीय अफ़-गान सवारों की एक टुकडी फरीदाबाद से २१ किमी० दक्षिण की ओर फरीदाबाद के नाकों को रोकने के लिए भेजी, जहां सर्वप्रथम इसी दिन (२१ जनवरी) अन्ताजी के नेतृत्व में जाट व मराठा सवारों ने मिलकर सरबर खा पर आक्रमण किया। इन सैनिकों ने तीन घण्टे के घोर युद्ध के बाद सरबर खा को बुरी तरह पराजित कर दिया। इस संघर्ष में चार सौ दुर्रानी सैनिक तथा लगभग इतने ही घोड़ा काम आये और चार सौ घोड़ा, निशान तथा नक्कारे छीन लिये गये। बचे हुए दुर्रानी सैनिकों ने भागकर बारापुला में शरण ली। आखिर अन्ताजी अकेला ही कब तक संघर्ष कर सकता था? फलत उसने इसी रात्रि को अपने सूबेदार त्रियबक मुकुन्द को जाट दुर्ग में रुकने का निर्देश देकर सूरजमल के पास अपने पत्र सहित रवाना किया। इसके बाद दस दिन तक किसी भी टुकड़ी ने दक्षिण की ओर कदम नहीं बढ़ाया।[1]

२७ जनवरी को शाह दुर्रानी ने इन्तिजामुद्दौला को वजीर पद की खिलअत प्रदान की और २८ जनवरी को प्रथम बार अफगान शाह अहमद शाह दुर्रानी ने राजधानी में प्रवेश किया। २९ जनवरी को दोनों सम्राट साथ-साथ मुगलिया राज-सिंहासन पर बैठे। इसी दिन दुर्रानी ने अपने नाम का सिक्का चलवाया। फिर दिल्ली नगर को बुरी तरह लूटा गया। हिन्दुओं को माथे पर तिलक लगाने का निर्देश दिया गया। प्रमुख अमीरों के मकानों को खोदा व तोड़ा गया। यह दुर्रानी की "शाहगर्दी" थी, जिसने दिल्ली नगर व शेष नागरिकों को बरबाद कर दिया। राजा सूरजमल की ओर से दिल्ली में राजा मोहन सिंह सूर्यद्विज वकील तैनात था और प्राय सभी राजनैतिक वार्ताएं उसके माध्यम से ही की जाती थी। शाह दुर्रानी ने राजधानी में प्रवेश करते ही शाही दरबार में तैनात साम्राज्य के सभी प्रान्तों के वकीलों को उसके प्रति निष्ठा-भक्ति प्रगट करने तथा पेशकश प्रस्तुत करने की माग को स्वीकार करने के लिए आमन्त्रित किया। इस संकट काल में जाट कछवाहा दरबार काफी निकट सम्पर्क में थे। २२ जनवरी को कछवाहा दरबार ने अपने बख्शी फतेह राम को और फिर २ फरवरी को राज सिंह के लिए अनेक आवश्यक समाचारों व विचारों के साथ बातचीत करने के लिए सूरजमल के पास भेजा और उन्होंने जाट दरबार में उपस्थित सभी सरदारों को राजपूत नरेशों की भावना व विचारों से अवगत कराया। तब दुर्रानी के आमन्त्रण व प्रस्ताव पर शमशेर बहादुर, नारोशकर, गोविन्द पंत बुन्देला (बुन्देलखण्ड में पेशवा का नियुक्त प्रतिनिधि) तथा

---

१ – दे० क्रॉनो०, पृ० ६८, पे० द०, खंड २१, लेख ६६, राजवाड़े, खण्ड १, लेख ६३; हरीराम, पृ० ६३, गंडासिह, पृ० १६०; एठल्ले दफ्तर, जि० १, लेख ३० (२१ जनवरी)।

उसके पुत्र आदि मराठा सरदारों ने राजा सूरजमल से परामर्श करने के बाद नजीब खा के दूत के हाथो यह प्रस्ताव भेजा कि आप (शाह दुर्रानी) जो भी सेवा बतलायेंगे, हम उसको करने के लिए सदैव प्रस्तुत हैं। [१] फ्रैंकलिन का मत है कि "केवल जाटो को छोड़कर अन्य सभी ने (दुर्रानी के) आमन्त्रण को स्वीकार कर लिया था। इससे दुर्रानी ने जाटो को सैनिक शक्ति से दबाने का निश्चय किया।" [२]

इसी बीच मे अन्ताजी माणकेश्वर ने दिल्ली के दक्षिण-पश्चिम तथा उत्तर-पश्चिम मे छापामार अभियान छेड़ दिया था। अन्त मे १ फरवरी को जहान खा ने बीस सहस्र चुनिंदा अफगानो की सेना के साथ फरीदाबाद पर आक्रमण कर दिया। इस सेना का मार्गदर्शन नजीब खा के रुहेला सिपाही कर रहे थे। जाट व मराठो ने इस सेना का जमकर मुकाबला किया, जिसमे मराठो के एक सहस्र पैदल व आठ सो घोड़े काम आये। इनमें दो सौ दक्ष मराठा सैनिक शामिल थे। घायल अन्ताजी अति कठिनाई से बचकर भाग निकला और उसने ४ फरवरी को मथुरा मे आकर शरण ली। विजेता दुर्रानी सैनिको ने फरीदाबाद कस्बे को लूट कर जला डाला और दूसरे दिन निःसहाय नागरिको के छः सौ सिर काटकर अपनी छावनी मे लौट गये, जिनको वहा उन्होने जाट तथा मराठो के सिर बतलाया। शाह ने उनको आठ रुपया प्रति सिर पुरस्कार देकर प्रोत्साहित किया। [३] यह अन्ताजी का अन्तिम साहसिक सघर्ष था और इसके बाद मराठों ने अफगानो के साथ शक्ति परीक्षण का साहस नही किया। १६ फरवरी को मराठा प्रतिनिधि बापूजी पंडित हिंगणे दिल्ली से भाग निकला और उसने व घायल अन्ताजी ने जाट नरेश के प्रमुख दुर्ग कुम्हेर में शरण ली। तब सूरजमल ने सवाई माधोसिंह के आग्रह पर विस्तृत वार्ता के लिए २६ फरवरी को राव हेमराज कटारा व बख्शी फतेहराम के साथ अपने पुत्र कुवर नवल सिंह को डीग से जयपुर रवाना किया। राव हेमराज निर्देश प्राप्त करके वापस लौट आया, किन्तु नवल सिंह २१ मार्च से ६ अगस्त तक जयपुर दरबार मे ही रुक गया था। [४]

---

१ – दे० अ्रॉनी पृ० ७६–८०, पे० द० खण्ड २१, लेख ६६, ड्रा० ख० प०, जि० ५, लेख ६०५, ६१२, ८७१।

२ – फ्रैंकलिन, शाहआलम, पृ० ६।

३ – दे० क्रॉनी०, पृ० ८१, तज्किरा-इ-इमाद, पृ० २०१–५, इण्डि० एन्टी० (१६०७ ई०), पृ० ४८–६, पे० द०, खण्ड २१, लेख ६६, १०५, हरीराम, पृ० ८३।

४ – पे० द०, खण्ड २१, लेख ६६, भरतपुर-जयपुर खरीता, स० १३/५६/४; द० कौ०, जि० ७, पृ० ४००–१।

राजा सूरजमल का कूटनीतिज्ञ समर्पण, फरवरी

दुर्रानी के इस आक्रमण के समय मुगल अमीरों का इतना नैतिक और सरकार का इतना सैनिक पतन हो चुका था कि साम्राज्य या नागरिकों की रक्षार्थ, अपने सम्मान तथा परिवार की सुरक्षार्थ किसी ने भी एक गोली नहीं चलाई। साम्राज्य की सीमाओं पर शाह दुर्रानी की महान विजेता शक्ति को चुनौती देने वाला केवल एक स्वतन्त्र जाट सरदार सूरजमल था। उसने अपनी कीर्ति, प्रतिष्ठा, यश तथा सम्मान को कायम रखा और शाह को चुनौती देकर यह स्पष्ट बतला दिया कि हिन्दुस्तान में स्वदेश व मातृभूमि की रक्षा के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग करने वाले वीर-योद्धा अभी मौजूद हैं। उसने वास्तव में शाह दुर्रानी के अभियान व आक्रमण को रोकने के लिए पर्याप्त प्रबन्ध कर लिये थे।

सत्यतः शाह दुर्रानी के दिल्ली के समीप आने पर सूरजमल ने उसके पास अपना दूत भेजकर अधीनता स्वीकार करने का पत्र भेजा था और जाट वकील ने समर्पण की शर्त पर जाटों को क्षमा करने की प्रार्थना की थी। किन्तु यह राजा सूरजमल का कूटनीतिज्ञ समर्पण मात्र था। उसने वजीर इमादुल्मुल्क के परम शत्रु नजीब खां रुहेला, इन्तजामुद्दौला, राजा नागरमल तथा अन्य अमीरों के उस माग पत्र पर भी हस्ताक्षर किए थे, जिसमें दुर्रानी से यह प्रार्थना की गई थी कि, "यदि वह मराठों को उत्तर भारत से बाहर निकाल कर उनके सह-मित्र वचनबद्ध (पगड़ी बदल) भाई इमाद को वजारत से हटाकर कन्धार में कैद रखे, तो ये भारतीय अमीर उमराव व जमींदार उसको पचास लाख रुपया एकत्रित करके नजराना पेश करने को तैयार हैं।[1]

फरीदाबाद युद्ध (१ फरवरी) में मराठों को भारी क्षति उठानी पड़ी, फिर भी सूरजमल ने ५५० सवारों के साथ मथुरा में अन्ताजी से भेट की। अन्ताजी माणकेश्वर ने उससे शमशेर बहादुर, नारोशंकर, बहादुर खां पठान की सैनिक टुकड़ियों को एकत्रित करके शाह दुर्रानी को रोकने के लिए दिल्ली की ओर कूच करने का अनुरोध किया था। किन्तु अब अहमदशाह दुर्रानी दिल्ली का व्यवहारिक स्वामी बन चुका था। सूरजमल अग्रसर होकर कोई खतरा मोल नहीं ले सकता था। इससे उसने मराठों के साथ मिलकर अफगानों के विरुद्ध युद्ध करने से स्पष्ट मना कर दिया था। उसने इस समय गर्व के साथ कहा, "अफगानिस्तान के बादशाह ने केवल पचास सहस्त्र सेना के साथ हिन्दुस्थान के बादशाह को बन्दी बना लिया और किसी ने भी उस पर एक गोली भी नहीं चलाई और न किसी अमीर ने अपने प्राणों की

१ – पे० द०, खण्ड २१, लेख ६९ (जनवरी ३०, १७५७ ई०), सामिन (हालाते अहमदशाह अब्दाली), पृ० १४; सरकार (मुगल), भाग २, पृ० ७६, नजीबुद्दौला, पृ० ४७।

ग्राहुति दी, फिर मै ग्रकेला ही क्या कर सकता हूँ ? [१] मथुरा नगर की नागरिक सुरक्षा व्यवस्था करने के बाद सूरजमल, हिंगणे तथा ग्रन्ताजी के साथ ग्रपने कुम्हेर के सुदृढ दुर्ग मे लौट ग्राया। इससे कुछ दिन बाद ही शाह दुर्रानी ने सूरजमल को ग्रपने दरबार मे ग्रामन्त्रित करते हुए पत्र मे लिखा—

(१) ग्रापने ग्रभी हाल मे जबरन जिन शाही प्रदेशो को दबा लिया है, उनका ग्राप शीघ्र ही समर्पण कर दें।

(२) ग्राप शीघ्र ही उपस्थित होकर खिराज ग्रदा करें।

(३) हमारे झण्डे के नीचे ग्राकर चाकरी (सेवा) करें।

यद्यपि इतनी विशाल सेना से युद्ध करना सूरजमल के लिए सम्भव नहीं था, परन्तु वह शाह दुर्रानी की सेवा मे भी उपस्थित नही होना चाहता था। यह सम्भावना व्यक्त की गई थी कि उसकी भी वजीर इमादुल्मुल्क जैसी दशा हो सकती है। इसलिये उसने ग्रान्ता की छावनी मे सन्धि की शर्तों पर विचार-विमर्श करने के लिए ग्रपना एक वकील भेजकर समय निकालने की नीति का ग्रनुसरण किया। साथ ही उसने समर्थन प्राप्त करने के लिए ग्रफगान वकील को दो लाख रुपया की गुप्त थैली भेजी थी। [२]

सूरजमल की हार्दिक ग्रभिलाषा दुर्रानी लुटेरा से सल्तनत तथा राष्ट्र की रक्षा करने तथा उसका सामना करने की थी। परन्तु वजीर इमादुल्मुल्क डरपोक था ग्रौर वह सैनिक भरती करने मे कंजूसी दिखला चुका था। नजीब खा रुहेला राष्ट्रघाती था ग्रौर उसके हृदय मे हिन्दुस्तान के प्रति मोह व प्रेम नही था। मराठो मे राष्ट्रीयता तथा हिन्दू-एकता की भावना का ग्रभाव था। उनम न सयम था ग्रौर न हिन्दुस्तान के बारे मे एक निश्चित सिद्धान्त था। राजपूताना के राजपूत शासक उनकी चौथ ग्रौर घडनी की माग से परेशान थे। मराठो की सिद्धातहीन नीति से व्यथित होकर ही कछवाहा, राठौड शासको ने शाह दुर्रानी की ग्रधीनता स्वीकार कर ली थी ग्रौर वे ग्रपने ग्रापको दुर्रानी का सेवक मानने लगे थे। ऐसा भी कहा जाता है कि उन्होने मराठो से मुक्ति पाने के लिए ही दुर्रानी को ग्रामन्त्रित किया ग्रौर उसके झण्डे के नीचे उपस्थित होकर लडने को तैयार हो गये थे। [३] नवाब शुजा ने भी पाच लाख

१-पे० द०, खण्ड २१, लेख ९६ (पेशवा के नाम ग्रन्ताजी का पत्र, १० फरवरी), राजवाडे, खण्ड १, लेख १६५-७०, खण्ड ६, ३६७, बेण्डल, पृ० ५१, कानूनगो, पृ० १०४-५, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ७६।

२-ता० ग्रालमगीर सानी, पृ० ८३ ग्र-८४ ग्र, सामीन, पृ० १४।

३ - उपरोक्त, पृ० ७८-९८; सामीन, पृ० १४।

रुपया पेशकश भेजकर समझौता कर लिया था।

इतने पर भी सूरजमल ने मराठा सरदारो के लिए राष्ट्रीय एकता तथा साम्राज्य के हित म सहयोग देने का आश्वासन दिया। यद्यपि सूरजमल मराठो की आर्थिक माग तथा दिल्ली साम्राज्य को विघटित करने की नीति से काफी असन्तुष्ट था। वह यह भी समझता था कि यदि उसने मराठो का साथ निभाने की चेष्टा की तो हिन्दुस्तान के सभी राजपूत शासक, मुस्लिम अमीर उमराव उसके विरोधी बन जावेंगे। अन्ताजी माणकेश्वर ने हिन्दुस्तान की राजनैतिक स्थिति के बारे मे पन्त प्रधान (पेशवा) को पूर्ण वृतान्त भेज दिया था। उसने अविलम्ब नवम्बर, १७५६ ई० मे रघुनाथराव दादा (राघोवा) तथा होल्कर को उत्तर भारत की ओर रवाना [1] भी कर दिया था। किन्तु उनकी गति काफी धीमी थी। इस समय सवाई माधोसिंह भी काफी सतर्क था और १५ फरवरी को उसने कामा के किलेदार राजा हरीसिंह नरुका को दुर्ग की मरम्मत कराने तथा उसकी सुरक्षा व्यवस्था के निर्देश भेज दिये थे। दूसरे दिन (१६ फरवरी) उसने मल्हार राव को अपने पत्र में लिखा— "अब्दाली ने दिल्ली नगर व किले पर अधिकार कर लिया है। श्री जी (जयसिंह) व बाजीराव पेशवा ने मिलकर एक मर्यादा बाध दी थी, यदि इस समय हम उस पर अमल करके आपस मे मिलजुल कर काम करें, सभी हिन्दू धर्म की मर्यादा स्थिर रह सकेगी अन्यथा भगवान की जैसी इच्छा होगी, वैसा ही होगा।" [2] किन्तु मल्हार राव हिन्दू सस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की अपेक्षा अपने स्वार्थ को ही सर्वोपरि समझता था और उसका विश्वास था कि जाट राज्य पददलित होकर उसके चगुल मे फस जावेगा।

इसी समय सूरजमल ने अफगान शाह की धमकी को विफल करने के लिए मराठा सरदारो को अपने सरक्षण मे रखकर अति चतुराई से बातचीत की। बापूजी महादेव ने रघुनाथ दादा, बाजीराव पेशवा को स्पष्ट शब्दो मे लिखा— "सूरजमल मनसा-वाचा-कर्मणा मराठो के प्रति स्नेही है। वह सभी के साथ मिलकर अफगानो को हिन्दुस्तान से खदेडना चाहता है।" [3] उसने इस समय अन्ताजी से कहा— "मुरादाबाद, सहारनपुर, सम्भल, बरेली, शाहजहापुर, लखनऊ पर्यन्त सभी रुहेला व अफगान, आमेर व जोधपुर पर्यन्त सभी राजपूत नरेशों ने शाह दुर्रानी के समक्ष समर्पण कर दिया है। समर्पण के लिए केवल एक जाट शासक शेष रहा है, लेकिन

---

१ – पे० द०, जि० ११, लेख, १०४, १०५, १०७, १०८, सरदेसाई, खंड २, पृ० ५०३।

२ – ड्रा० स०,प०, जि० ५, लेख ८७६।

३ – हिंगणे, जि० १, लेख १६५, पे० द०, जि० २, लेख ६६।

वह (सूरजमल) स्वय अकेला क्या कर सकेगा ? यदि कुछ सप्ताह मे हिन्दुस्तान की रक्षा के लिए मराठो की सेना आ जावे, तो वह धन-जन के सहित उनके साथ मिलकर दुर्रानी से युद्ध करने को तैयार है। अन्यथा वह अधीनता स्वीकार कर लेगा।"[१]

इसके बाद अन्ताजी ने रघुनाथ राव को लिखा— "सूरजमल ने ढाई माह से मुरसान मे मोर्चा लगा रखे हैं। हमने उसके साथ मित्रता बनाये रखने तथा सम्पर्क कायम रखने के लिए उसके किले मे अपने आदमी रख छोड़े हैं और (मेरा) सूबेदार भी उसके यहा मौजूद है। हमने जाटो से कह दिया है कि हम उसकी सरकार के सभी मामले तय कर देंगे। जब तक अब्दाली मौजूद है, तब तक वह (सूरजमल) आगे नही बढ सकेगा। उसके पास काफी पैसा है, इससे हिन्दू द्वेषी (दुर्रानी) उसे कभी नही छोडेगा।"... शुजा को यहा आने में एक माह लग जावेगा। शुजा व जाट अपने अपने स्थानो पर कम रहे हैं। यदि आपके आने से पूर्व दुर्रानी चला जावे, फिर भी आपको उसके पीछे से दिल्ली अवश्य आना चाहिये"। इसी प्रकार केशव राय ने अपने पत्र में लिखा— "अब सूरजमल खिराज अदा नही कर रहा है और न समर्पण करने को ही तैयार है। हम उससे मिल सकते हैं और एक माह तक (दुर्रानी से) सभी वार्ताएं स्थगित रख सकते हैं। यदि जाटो को अधिक धैर्य नही रहा और उन्होंने भी समर्पण कर दिया, तब उस समय हमारी सुरक्षा खतरे में पड जावेगी।" सूरजमल ने मराठा सरदारों को स्पष्ट कर दिया था कि 'अगर आप दक्षिण से मराठा सेना के शीघ्र आ जाने का भरोसा दिलावें, तब मैं कुछ समय निकाल सकता हूं।' इससे अन्ताजी ने अपने एक अन्य पत्र में पेशवा को लिखा, "यदि श्री मत राज श्री दादा साहब आदि यहा जल्दी नही पहुँचेंगे, तब सूरजमल अधीर होकर नजराना देकर अपने देश की रक्षा कर सकता है। सभी के मिल जाने से बडा अनर्थ हो जावेगा। फिर हमारी ताकत कब तक चलेगी ? हम उनको आखिर कितने समय तक रोक सकेंगे ?"[२]

इसी प्रकार २४ मार्च को माधोसिह ने मल्हार राव को ब्रजमण्डल मे मराठो के अत्याचारो से अवगत कराते हुये लिखा— "अब्दाली स्वय उधर (मथुरा) आ गया है। उसके आश्वासनों व वचनो का जरा भी विश्वास नही किया जा सकता है। पठानो की फौज आगरा पहुँच गई है। पीछे से और भी फौज भेजना जा रहा है। अत अब सभी हिन्दुओ की एकता से ही हिन्दू धर्म की मर्यादा रह सकेगी। आप सभी बातो को समझ सकते हैं। इस समय मन वचन कर्म से आपस मे एकता रखने

१—पें० द०, जि० २१, लेख ६६, १०१, १०५।
२—पें० द०,खण्ड २१, लेख ६६, १००।

से ही सभी की बात भारी दिखलाई देगी।"[१] मल्हार पर इस सुझाव का कोई भी असर नहीं पड सका और मराठा सरदारो को शीघ्र ही पेशवा व रघुनाथ राव से सन्तोषप्रद उत्तर नही मिल सका।

विलम्ब से जब दुर्रानी सेनायें जाट राज्य की सीमाम्रो से हटने लगी, तब रघुनाथ राव ने बापू महादेव हिंगणे, जो इस समय कुम्हेर मे था, को २८ मार्च को लिखा, "सूरजमल दुर्रानी के सामने दृढता पूर्वक जमा हुआ है, इस बात को जानकर हमे प्रसन्नता है। हमारा विचार जाट तथा अन्य राजपूतो के साथ मिलकर अफगान पठानो से मुकाबला करने का है। अभी भारी फौज एकत्रित होने मे एक माह लग सकता है। तब तक आप जाटो के साथ मिलकर उन्हे उत्साहित करें। .... अब हम जयपुर राज्य मे आ गये हैं।"[२] सूरजमल ने इन आश्वासनो से केवल सन्तोष ही किया और अपनी रक्षा स्वयं की।

सूरजमल ने जवाहर सिंह को बल्लभगढ व मथुरा की सुरक्षा-व्यवस्था के लिए तैनात किया और स्वय ने यमुना तट के पार आबाद मुरसान तक मोर्चाबन्दी सुदृढ़ कर ली थी। उसने दिल्ली से मथुरा मे भागकर आने वाले सेठ-साहूकारों को अपने दुर्गों मे शरण दी। ३१ जनवरी को दुर्रानी ने सूरजमल से कुछ प्रतिष्ठित सरदारो को सौंपने का प्रस्ताव रखा। नजीब खा ने अपना दूत सूरजमल के पास रवाना किया। राजा सूरजमल ने कूट भाषा मे उसको उत्तर देते हुए कहा– "जब देश के प्रमुख जमीदार शाह की सेवा मे आकर उपस्थित हो जावेंगे, तब यह सेवक भी शाह की देहलीज चूमेगा। राजा नागरमल तथा अन्य, जिन्होंने मेरे यहां आकर शरण ले ली है, उनको मैं दिल्ली जाने के लिए किस प्रकार बाध्य कर सकता हू?"[३] इस प्रकार उसने शरणागतों को नजीब के दूत के हाथो मे सौंपने से मना कर दिया और भारतीय परम्परागत शरणागतों की रक्षा की।

सिकन्दराबाद की तबाही

शाह दुर्रानी ने दिल्ली को अपनी फौजी कार्यवाही का केन्द्र बनाया। एक ओर वह राजा सूरजमल से समर्पण तथा सहयोग की बात कर रहा था, दूसरी ओर जाटो के दोआब क्षेत्रीय जिलो मे उसकी लुटेरा सेनायें लूटमार, नर-सहार व आगजनी करने मे व्यस्त थी। फरीदाबाद परगना भी उसके लुटेरा सैनिकों की टोलियो से भरा था। ८ फरवरी को एक यात्री आगरा से दिल्ली पहुँचा। उसने अपने सम-

---

१ – ऐ० म० प०, जि ६, लेख ६६०।

२ – हिंगणे, जि० १, लेख १६५।

३ – दे० क्रॉनो० पृ० ८१; ता० आलमगीर सानी, सामीन, पृ० १४; हरीराम, पृ० ८४, १३६।

रणो मे लिखा—"दिल्ली के सभी ग्रमीर व उमरावों ने भ्रागरा मे शरण ली, किन्तु दुर्रानी के भ्राने की अफवाह को सुनकर आगरा से अन्यत्र भाग गये। दिल्ली से फरीदाबाद तक कही भी किसी मकान व झोपडी में एक दीपक टिमटिमाता दिखलाई नही दिया। फरीदाबाद के पास मुर्दे भूमि पर नग्न पड़े थे।"[1] परगना सिकन्दराबाद (आधुनिक बुलन्द शहर) जाट तथा मराठों की जागीर मे शामिल था। फरवरी के मध्य में लुटेरा अफगान व हुलनडवाजो ने इस परगने मे भारी तवाही तथा सहार किया। गुलाम हुसन सामीन विलग्रामी इस समय फर्रुखावाद के नवाव ग्रहमद खा बगश से वार्ता कर रहा था और वह २६ फरवरी को दुर्रानी की फरीदावाद छावनी मे लौटा। उसने लिखा—"सिकन्दरावाद उस समय दिल्ली के ग्रासपास से भागकर आये नागरिको से ठसाठस भरा हुआ था। वहा से अनूप शहर तक चार दिन का रास्ता है, जिस भी गाव में होकर हम गये, वहा एक भी इन्सान दिखलाई नही देता था और सारा मार्ग मुर्दों से पटा था।"[2]

६ – जाटो से सघर्ष, फरवरी, १७५७ ई०

दिल्ली का प्रवन्ध करने के वाद २२ फरवरी को अपराह्न ग्रहमद शाह दुर्रानी ने जाट राज्य की ओर कूंच किया। मराठा टुकडी पराजित होकर अफगानो के मार्ग से पूर्णत हट चुकी थी। अब केवल निकटतम प्रतिरोधी सूरजमल जाट था। शाह दुर्रानी दो दिन (२३–२४ फरवरी) खिज्रावाद में रुका और २५ को उसने वदरपुर मे पडाव डाला। २६ फरवरी को दुर्रानी सेना ने बल्लमगढ़ के उत्तर मे १० किमी. दूर अपनी छावनी डाली। दुर्रानी का उद्देश्य जाट प्रधान दुर्ग डीग तथा कुम्हेर पर आक्रमण करने का था और उसने सीमान्त समीपस्थ दुर्ग बल्लमगढ़ की उपेक्षा की, जहा उसको सर्व प्रथम जाट सैनिकों के बल, उत्साह तथा वीरता का ज्ञान हो सका। यह दुर्ग दीर्घ घेराबन्दी के लिए प्रचुर युद्ध साधनो से सुरक्षित था और पर्याप्त दुर्ग रक्षक जाट तैनात थे।[3] दिल्ली से रवाना होने से पूर्व ही ग्रहमद शाह दुर्रानी ने अपनी काही (कोतल) दलों को जाटा के सीमान्त प्रदेश मे दानाघास की व्यवस्था करने तथा मार्ग निरीक्षण के लिए रवाना कर दिया था। कुंवर जवाहर सिंह सीमान्त दुर्ग व समीपस्थ इलाको की रक्षा के लिए अपनी सैनिक टुकडियो सहित काही दस्तो के प्रवेश से पूव ही मथुरा स बल्लमगढ पहुँच चुका था। पाव–

---

१ – डे० क्रॉनी ८३, पें० द० खण्ड २१, लेख ९१, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ७० ।

२ – सामीन (इण्डि० एण्टी, १९०७ ई०) पृ० १५–१६, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ७० ।

३ – इ० डा० (ता० इब्राहीम), खण्ड ८, पृ० २६५, डे० क्रॉनी, पृ० ८४, ८७ ।

छ सहस्र जाट रिसालो ने अफगानों के 'काही' दल पर अचानक आक्रमण कर दिया और बुरी तरह बरबाद करके पीछे खदेड दिया। फिर उनके लगभग एक सौ पचास घोडा लूटकर पीछे लौट आये।[1]

अब्दुस्समद खा का बल्लमगढ अभियान

'काही' दल की पराजय का समाचार सुनकर शाह अत्यधिक कुपित हो उठा और उसने उसी रात्रि को काफिरो (विधर्मियो) पर आक्रमण करने के लिए अब्दुस्समद खां मुहम्मदजई को रवाना किया। उसको यह निर्देश दिये गये कि वह पाच–छ किमी. दूर झाडियों में घात लगाकर बैठ जावे और सौ सवारो की एक टुकडी को शत्रु दल से सम्पर्क स्थापित करने के लिए आगे रवाना कर दे। फिर वह उनको इस फौजी पिंजडे मे फंसाकर परास्त करे। कुंवर जवाहर सिंह शत्रु की ताकत का अनुमान लगाये बिना ही अपने सैनिको सहित अफगानो के फौजी जाल म फँस गया। उसने शत्रु के सवारो का उत्साह से पीछा किया और वह उनके पीछे–पीछे फरीदाबाद के निकट तक चला गया, जहा दुर्रानी का मुख्य दल झाडियो में मोर्चा लगाये पडा था। सघर्ष में जवाहर के बहुत से सैनिक खेत रहे और पूर्व लूट का कुछ भाग दुर्रानी सैनिको के हाथ लग गया। परन्तु जवाहर सिंह इस फौजी जाल से बच कर निकलने म सफल हो गया और उसने पीछे लौटकर बल्लमगढ में शरण ली। अफगानो ने आगे बढकर अनेक गावो को लूटा व बरबाद किया। ग्रामीणो को तलवार के घाट उतारा और अपने तोबरो (थैला) मे पाच सौ सिर भरकर दिल्ली की ओर वापिस लौट गये।[2]

जाट सीमाओ मे तबाही

दोआब प्रान्त के धावो मे इमादुलमुल्क पर्याप्त माल तथा धन लूटकर वापिस लौटा, किन्तु अब तक जाटो पर हुआ धावा सफल नही हो सका था। कुंवर जवाहर सिंह बल्लमगढ दुर्ग मे दुर्रानी को फसाने के लिए तैयार था। उसके हृदय मे स्वाभिमान था और देशप्रेम की भावना जोर पकड चुकी थी। २४ फरवरी को अब्दुस्समद खा जाट अभियान का समाचार लेकर खिज्राबाद छावनी मे लौटा। उसने दुर्रानी को समाचार दिया कि जवाहर उसके पजो मे निकलकर चला गया है और उसने बल्लमगढ के दुर्ग में जाकर शरण ले ली है। इससे अहमदशाह का अपने निश्चय

---

१ – सामीन, पृ० १६; ता० मुजफ्फरी, पृ० ५४२, पे० द०, खण्ड २, लेख ७७, ता० आलमगीर सानी, पृ० १०३ ब, ता० हुसैन शाही, पृ० ३०–३१, कानूनगो, पृ० ६६, दे० ऑनो, पृ० ८८, गण्डासिंह, पृ० १७३।

१ – सामीन, पृ० १६, ता० आलमगीर सानी, पृ० १०३ ब, कानूनगो, पृ० ६६, हरीराम, पृ० ८४।

तया युद्धनीति मे परिवर्तन करना पडा। अब तक उसने वल्लमगढ़ दुर्ग पर आक्रमण करने की कोई योजना नही बनाई थी, क्योकि सैनिक अभियान की दृष्टि से यह दुर्ग अधिक महत्व का नहीं था। फिर भी इस दुर्ग के सम्भावित पतन से साहसी जाटों को दुर्रानी की असीम ताकत का आभास मिल सकता था।

अहमद शाह ने स्वय बल्लमगढ अभियान का सचालन करने का निश्चय किया और २५ फरवरी को उसने बदरपुर से कूच करके बल्लमगढ़ के उत्तर मे १० किमी. पर अपना पडाव डाला। २६ फरवरी की रात्रि को अपने प्रसिद्ध सेनापति जहान खा तथा नजीब खा की बीस सहस्त्र अफगान सेना के साथ यह निर्देश देकर जाट राज्य पर आक्रमण करने के लिए भेजा, "आप विरोधी जाटों की सीमाओ में प्रवेश कर और उनके प्रत्येक गाव, कस्बा तथा नगर को बुरी तरह बरबाद करें। माल लूटकर उनको रौंद डालें, मथुरा नगर हिन्दुओं का पवित्र तीर्थ स्थान है। मैंने सुना है कि सूरजमल वहा है। इस नगर को तलवार के घाट उतारकर पूरी तरह बरबाद कर दें। उस राज्य तथा उसकी राजधानी तक बढ जाओ और आगरा तक इतनी बुरी तरह बरबादी कर दो कि उपजाऊ भूमि पर एक भी पेड-पौधा दिखलाई नहीं दे।" शाह ने अपने नक्सचियो द्वारा सेना में यह घोषणा करवा दी थी कि, "जहाँ भी वे पहुँचे, लूटमार व करले-आम का ताडव मचा दें। लूट मे जो भी माल-ओ-सामान उनके हाथ लगेगा, वह उनका ही समझा जावेगा। जो भी सैनिक काफिरो का शिर काट कर लावे, उसको प्रधानमन्त्री के डेरो के सामने लाकर डाल दे जहा उनकी एक मीनार बनाई जाए। सरकारी खजाने से उनको प्रत्येक शिर की कीमत पाच रुपया पुरस्कार में दी जावेगी।"[1] यह दुर्रानी का सैनिक अभियान नही था, बल्कि मानवता, सभ्यता व संस्कृति के विनाश की एक वृहद योजना थी और एक धार्मिक जिहाद था। परन्तु मुस्लिम जनता भी इस प्रमाद का शिकार बन गई थी।

चौमुहा युद्ध, २८ फरवरी

विदेशी आक्रान्ता का प्रधान सेनापति जहान खा भाग्य निर्माता नजीब खा रुहेला के निर्देशन में शाह पथ पर आगे बढ़ता चला गया और उसने मार्ग मे अपने निर्दयी स्वामी के आदेशो का अक्षरश पालन किया। दुर्रानी तथा रुहेलो की लगभग एक लाख लुटेरा व विध्वसक सेना ने सब प्रथम मथुरा पर आक्रमण किया। परन्तु इस श्रीकृष्ण की पावन नगरी का पतन सैनिक सघर्ष के बिना सम्भव नही हो सका। "यह कटु सत्य है कि दिल्ली, आगरा तथा दोआब प्रान्त का तीन वर्ष तक आर्थिक शोषण

---

१ – सामिन (इण्डि० एण्टी०), पृ० ५१, कानूनगो, पृ० ६६–१००, सरकार (मुगल) खण्ड २ पृ० ७८, सरदेसाई, खण्ड २, पृ० ५०४।

करने के बाद मराठा दक्षिण की ओर वापिस चले गये थे। पवित्र वैष्णव मन्दिरो की रक्षार्थ उन्होंने रक्त की एक बूंद भी नही बहाई थी और न इन तीर्थस्थानो की सुरक्षा-व्यवस्था का कोई पक्का प्रबन्ध ही किया गया था। वे केवल हिन्दू पद पादशाही व हिन्दू सस्कृति का ढिंढोरा पीटते थे और शायद उनमें धर्म रक्षा का सैद्धांतिक समावेश नही था।" इधर "जाटो ने यह दृढ निश्चय कर लिया था कि क्रूर आततायी, मदान्ध लुटेरे उनकी ल्हासो पर होकर ही पवित्र नगरी मे प्रवेश करेंगे।" २८ फरवरी से ६ मार्च तक होली का महान सास्कृतिक हिन्दू पर्व था। नागरिक वसन्त पर्व मे उल्लसित, आल्हादित तथा प्रमुदित थे। सम्भवतः उनको बीभत्स काड या दुर्दिन की लेशमात्र भी आशका नही थी। मथुरा किले की सुदृढ दीवार (परकोटा) तथा गहरी खाई रहित नगर था, जहा लुटेरा चारो ओर से बिना किसी रोक टोक के प्रवेश कर सकते थे। सूरजमल ने जवाहर सिंह की कमान में इस नगर तथा नागरिको की रक्षार्थ पाच सहस्र साहसी सैनिक तैनात कर दिये थे और ब्रजवासी इसकी रक्षा के लिए दृढ संकल्पित थे।

अफगान-रुहेलो ने एक साथ अचानक ही विलक्षण आक्रमण कर दिया था, जिसका जटवाडा राज्य की सेना ने प्राण-पण से सामना किया। २८ फरवरी को जवाहर सिंह दुर्रानी सेनाओ को मार्ग मे रोकने के लिए स-सैन्य निकल पडा और उसने मथुरा के उत्तर मे १३ किमी० चौमुहा गाव के बाहर आक्रान्ता का जमकर मुकाबला किया। सूर्योदय होते ही घमासान युद्ध प्रारम्भ हो गया और नौ घण्टा तक भीषण सग्राम चलता रहा। अन्त मे "दोनो पक्षो के दस-बारह हजार सैनिक खेत रहे। आहतो की तो कोई गणना ही नहीं थी। विशाल अफगान-रुहेला फौज के दबाव के कारण ही शेष जाट सेना रणक्षेत्र से हट गई।" मराठा लेखो के अनुसार इस सग्राम मे तीन हजार जाटो ने वीरगति प्राप्त की और दो हजार जाट मैदान छोडकर पीछे हट गये। अफगान विजेताओ ने मथुरा की ओर कूंच किया और जवाहर सिंह ने अपने प्राणो की परवाह न करके बल्लमगढ़ की ओर प्रस्थान किया।[1] जबकि अन्य जाट टुकडियो ने अफगानो का सामना करने के लिए डीग की ओर कूंच कर दिया।[2] अब मथुरा की पावन नगरी सैनिक सुरक्षा रहित थी।

बल्लमगढ दुर्ग पर अहमदशाह दुर्रानी का अधिकार, ३ मार्च

विलियम फ्रैंकलिन का मत है कि—"इमादुलमुल्क ने अहमदशाह दुर्रानी के

---

१ – ता० आलमगीर सानी, पृ० १०६ अ; तज्किरा-इ-इमाद, पृ० २४०, तारीखे भाऊ-ओ-जनको (अली इब्राहीम), पृ० १६; राजवाडे, जि० १, लेख ६३, कानूनगो, पृ० १०२, गण्डासिंह, पृ० १७७।

२ – राजवाडे, खण्ड १, लेख ६३।

सामने यह प्रार्थना की थी कि यदि आप मुझको सेना का नेतृत्व करने के लिए मुक्त कर दें, तो मैं अपने प्राणों पर खेल कर विजय प्राप्त करके' उत्तर दूंगा। कहा जाता है कि शाह ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और इमाद ने अपने आश्वासन के अनुसार जाटों पर सफलतापूर्वक आक्रमण किया। इसी प्रकार इमाद के प्रस्ताव पर ही शाह ने वल्लमगढ़ दुर्ग की ओर कूच किया, जहां चौमुंहा युद्ध के बाद जवाहर सिंह, मराठा सरदार शमशेर बहादुर तथा अन्ताजी माणकेश्वर दुर्ग की रक्षा में तत्पर थे। २७ फरवरी को दुर्रानी तोपखाना का प्रधान दो सौ मुगल सवारों के साथ दिल्ली के शाही महलों की सुरक्षा के लिए लगी बड़े मुंहवाली चार तोपें लेने के लिए पहुँचा। तोपों को शाही छावनी तक खींचकर लाने के लिए लोगों के घरों से रस्सा, लट्ठे तथा बैल छीनकर प्राप्त किये गये, जबकि इन विशाल तोपों व भारी गोला-बारूद की आवश्यकता नहीं थी। लम्बी मार करने वाली ये तोपें दिल्ली दरवाजे तक ही पहुच पाई थी कि इससे पूर्व ही बल्लमगढ का पतन हो चुका था। शाह ने स्वयं उस आक्रमण का संचालन किया।

दो दिन तक इस दुर्ग पर भयंकर आक्रमण होता रहा और जाटों ने वीरता व साहस से गढ की रक्षा की। दुर्रानी की पांच विशेष प्रकार की तोपों (मोर्टार) ने गोलाबारी शुरु की। लोहे के दो अर्द्ध गोले आपस में ढले हुए थे, जो भूमि पर गिरते ही खुल जाते थे। इन पांचों तोपों के कोण चूलों पर निरन्तर बदले जाते थे। इसमें दुर्ग पर इतनी विध्वंसक अग्नि वर्षा हुई कि कुछ ही घंटों में उस स्थान की रक्षा करना कठिन हो गया। दुर्ग-प्राचीर से जो बन्दूक तथा जम्बूरे चलाये जाते थे, उनको इन तोपों ने पूरी तरह दबा दिया था। ३ मार्च को निस्तब्ध रात्रि में कुंवर जवाहर सिंह, शमशेर बहादुर तथा अन्ताजी माणकेश्वर अपने कुछ अंगरक्षकों के साथ किजलबाश (फारसी वेषभूषा) वर्दी में खाई के नीचे बने भूमिगत मार्ग से यमुना नदी की ओर निकल गये। मार्ग में उन्होंने पीछा करने वाले अफगान सैनिकों को रोकने के लिए सैनिक चौकियां बनाईं। इस रात्रि को दुर्ग में कुछ दुर्गरक्षक सैनिक ही शेष रह गये थे। प्रातःकाल अफगानों ने दुर्ग-द्वार को तोड़कर दुर्गरक्षकों को तलवार के घाट उतार दिया। इस गढ़ी की लूट में दुर्रानी को बारह हजार रुपया नकद, स्वर्ण रजत पात्र, धातु की प्रतिमायें, चौदह घोड़ा, ग्यारह ऊंट तथा विपुल अन्न-भण्डार व वस्त्र प्राप्त हुये। शाह ने भगोड़ा सरदारों की तलाश में अनेक सैनिक टुकड़ियां भेजी, किन्तु वे निराश होकर वापिस लौट आईं। जाट-मराठा सरदारों ने दो दिन व दो रात यमुना की कछारों में छिपकर निकाली, यहां तक कि वे भय से यमुना नदी पर जल पीने भी नहीं गये। अहमद शाह ने यहां पर दो दिन विश्राम किया। दिल्ली में ४ मार्च को वल्लमगढ़ विजय का समाचार पहुँचा और

सम्राट ने खुशी के बाजे (शादियाने) बजाने का आदेश दिया।[१]

७ – मथुरा तथा वृज के अन्य नगरों में नर संहार व लूटमार

हिन्दुओं का बेथलेहम अफगान रुहेला लुटेरों के लिए नि:सहाय था। होली के पावन–पर्व पर प्रत्येक हिन्दू परिवार मे एक अजीब उल्लास व मस्ती होती है। रग-गुलाल व अबीर से अम्बर लाल व चमकीला हो जाता है नृत्य, गायन-वादन व स्वाग की मस्ती मे हिन्दू अपने दुखो को भूल जाते हैं। मथुरा में आस–पास व दूर–दराज के यात्री प्रतिवर्ष होली का आनन्द लेने के लिए आते हैं। इस सास्कृतिक पर्व पर सम्राट तथा उसका वजीर भी खुशिया मनाया करते थे। "परन्तु इस वर्ष किसी भी व्यक्ति ने खुशी नहीं मनाई, क्योकि सभी लोग दु ख तथा दीनता में फसे हुए थे।" मथुरा व वृन्दाबन मे होली अवश्य खेली गई, किन्तु रंग गुलाल व अबीर की नही, रक्त रंजित होली खेली गई।

। एक मार्च को प्रात काल एक लाख अफगान रुहेला सवारो ने अरक्षित मथुरा नगरी मे प्रवेश किया। जहान खा ने किसी भी वर्ण, वर्ग व सम्प्रदाय के साथ दया या सहानुभूति नही दिखलाई और अपने स्वामी के "लूटो, मारो व उजाडो" निर्देश का अक्षरश पालन किया। उसने नर–सहार का आदेश दिया। निरन्तर चार घण्टा तक हिन्दुओं का सहार व बलात्कार चलता रहा। नागरिको मे प्रतिरोध की शक्ति नही थी। उनमे कोई लडाकू नही था। प्राय: सभी ब्राह्मण, पण्डा–पुरोहित वर्ग तथा दिल्ली मे भागकर आने वाले निवासी थे। मुसलमानो ने पाजामा उतारकर अपनी रक्षा का विफल प्रयास किया। लुटेरो ने विशाल, भव्य व आकर्षक प्रतिमाओ को तोड़ डाला और उनको पोलो की गेंद की भाति ठोकरो से इधर से उधर उछाला। लूट की तलाश मे मकानो को तोडा गया, फर्शों को खोदा गया और इसके बाद चारो ओर अग्निपात किया गया। इस प्रकार तीन हजार व्यक्तियो के रक्त से तृप्त होकर जहान खा ने नागरिको पर एक लाख रुपया का कर लगाया और आग की लपटो मे दहकती नगरी को छोडकर उसी रात्रि को उसने आगे कूच किया।[२]

---

१ – ता० आलमगीर सानी, पृ० १०३ ब–१०५ ब, सामीन (इ०ए०), पृ० ५८–६, दे० क्रॉनी०, पृ० ८८; तज्किरा–इ–इमाद, पृ० २४०, शाहनामा-इ-अहमदिया, पृ० २०३–४; ता० हुसैनशाही, पृ० ३०–३१; ता० मुज्फ्फरी, पृ० ५४२, सियार, भाग ३ पृ० ३५२, फ्रेंकलिन, पृ० ७, कानूनगो, पृ० १००–१।

२ – ता० आलमगीर सानी, पृ० १०५ अ–१०६ अ, सामीन, पृ० २४, तज्किरा-इ-इमाद, पृ० २४१–२; ता० हुसैनशाही, पृ० ३०, गुलाम अली (शाह आलमनामा), पृ० २८; शाहनामा-इ-अहमदिया, पृ० २०१–२; पे० द०, खण्ड २१, लेख १०७, खण्ड २७, लेख १४२; राजवाडे खण्ड १, लेख ६३, कानूनगो, पृ० १०३।

जहान खा नजीब की कमान म रुहेला गीदडो को शेष नर सहार के लिए मथुरा मे ही छोड गया था। नजीब खा मथुरा में तीन दिन रुका। सैयिद नूरुद्दीन के अनुसार— "मथुरा के इस विनाश तथा नर संहार के लिए *नजीबुद्दौला को भी अन्य* सरदारो के साथ तैनात किया गया था और उसने खुले दिल से अपनी स्वामि-भक्ति तथा निष्ठा का परिचय दिया।" मथुरा मे अहमद खा बगश के वकील मीर साहब ने उससे पूछा, "आप अपने भोजन तथा जल को किस प्रकार शुद्ध कर सकते हो।" उसने कहा– "मैं क्या कर सकता हूँ? मैं इस समय शाह के आदेशो का पालन कर रहा हूँ। उसके आदेशो की अवहेलना करके मैं अ यत्र शरण नही ले सकता।" [1] नि सन्देह उसने एक विदेशी आक्रान्ता को प्रसन्न करने के लिए अपनी ईमानदारी व निष्ठा-भक्ति का परिचय दिया। सम्भवत उसको नागरिको से एक लाख रुपया वसूल करने के लिए छोडा गया था। उसकी कमान मे पाच सहस्र पैदल रुहेला थे।

रुहेलों ने सेठ-साहूकारो का भूमिगत खजाना लूटा और बहुत सी लावण्य-शील युवतियो को बन्दी बनाकर ले गये। [2] इन रुहेला सैनिको न तीन दिन तक भयकर नर-सहार किया। निरापराध परदेशी भक्त रक्त-पिपासु सेना के आखेट बन गये। माता तथा बालको के दारुण-चीत्कार से अग्नि-शिखाओ से प्रदीप्त नगरी की वीथिया गूज उठी। भरतपुर दरवाजे के समीप शीतलाघाटी की गली मे थी मथुरा देवी के मन्दिर में एक गुफा थी। प्राण-रक्षा के लिए एक समूह इस गुफा मे जा घुसा, किन्तु नर समूह यहा भी नही बच सका। इस नर-सहार में बूढोंआ तथा जौनमाने चतुर्वेदियो का अधिक वध हुआ। उनक वशज अब भी प्रतिवर्ष फाल्गुन शुक्ला ११-१३ को "कत्ल का श्राद्ध' करते हैं। छाता बाजार मे प्रासाद तुल्य भवन पर भी आक्रमण किया गया, उसको भी नष्ट कर दिया गया। असख्य महिलाओ ने यमुना नदी मे कूद कर अपने सतीत्व की रक्षा की। कुछ ने अपने घर के कुओ में कूद कर आत्म हत्या कर ली। एक दशक के शब्दा मे– 'यमुना की नीलधारा सात दिन तक रक्तवर्णा हो गई और अगले सात दिन तक पीत धारा बहने लगी। कुलाचार भ्रष्ट वैष्णव वैरागी नदी के पार पर्णशालाओ मे रहते थे। उनको दैविक शक्ति का भरोसा था और हृदय मे बासुरी का अन्तर्नाद ध्वनित हो रहा था। उनको भी अनुरूप प्रतिकार मिला। उन निहत्थे साधुओं के ओष्ठ पर्णकुटियो मे ही काट डाले गये।" [3]

---

१ – नूरुद्दीन, पृ० १५ ब (४३२)।

२ – नूरुद्दीन, पृ० १५ ब सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ७६।

३ – भाऊ बखर पृ० ३४।

पन्द्रह दिन के बाद सामीन लिखता है, "बाजार तथा बीथियो मे जिधर देखो, मानव धड़ दिखलाई देते थे। समस्त नगर होलिका-दहन तुल्य जल रहा था और मकान धूलि-धूसरित हो रहे थे। यमुना जल पीत-वर्ण होकर बह रहा था। तट के समीप मैंने विरक्त (वैरागी) तथा सन्यासियो की पर्णशालायें देखी। प्रत्येक कुटिया मे एक नरमुण्ड और उनके मुह के पास गऊ का सिर रखा था। दोनो का मुँह रस्से से बाध दिया गया था।" लुटेरो ने नगर के स्वधर्मी मुसलमानो के साथ भी अभद्र व्यवहार किया। यद्यपि उन्होंने अपने प्राणो को उनके क्रूर हाथों से बचा लिया, परन्तु अपने धन तथा सम्मान की रक्षा नही कर सके। सामीन लिखता है— "नरसहार के चौदह दिन बाद खण्डहरो के बीच से एक नग्न हृष्ट-पुष्ट आत्मा निकली और मेरे (मीर साहब) सामने आकर भोजन की याचना करने लगी। उस बलिष्ठ आत्मा ने कहा, "मैं मुसलमान हू। हीरा-जवाहरात का व्यापारी हू। मेरी दुकान सबसे बडी है। नरसहार के दिन एक अश्वारोही हाथ मे नगी तलवार लेकर मेरे सामने आया और मुझे मारने का प्रयास करने लगा। मैंने उससे कहा कि मैं मुसलमान हू।" उसने कहा, 'अपनी मुसलमानी का चिह्न दिखाओ।' मैंने अपने वस्त्र उतार दिये। उसने आगे कहा, "आपके पास जो भी नकदी हो, वह अपनी जिन्दगी के बदले मुझको सौप दें। मैंने उसको अपने पास उपलब्ध चार हजार रुपया सौंप दिये। फिर एक दूसरा हत्यारा आया और उसने मेरे पेट मे तलवार ठूस दी। मैं भागा और एक कोने म छिप गया।" [१] गोस्वामी मथुराधीश की प्रतिमा लेकर डीग आ गये थे। इसी प्रकार भक्त कवि वृन्दावन दास भरतपुर पहुँच गये थे। उन्होंने अपने काव्य 'हरि कला वेलि' मे ब्रज के इस भीषण सहार का उल्लेख किया है।

वृन्दावन मे विध्वंस, ६ मार्च

जहान खा ने मथुरा के उत्तर मे १० किमी. वृन्दावन मे भी ६ मार्च को "आग व कत्ल" का ताडव किया। यहा के देवालयो मे अपार धन सम्पत्ति जमा थी। यहा भी निरापराध वैष्णव भक्तजनो का सहार हुआ। गुलाम हुसैन सामीन के शब्दो मे— "जिधर आपकी दृष्टि जावे, आपको मृतको का ढेर दिखलाई देगा। रक्त की नदी तथा मृतको के ढेर के कारण मार्ग मे कठिनाई से निकल सकते थे। एक स्थान पर हमने दो सौ मृतक बच्चा का ढेर देखा। एक भी बालक के शरीर पर सिर नही था।" वायु मे दुर्गन्ध इस प्रकार मिश्रित थी कि श्वास भी नही ली जा सकती

---

१ — सामीन (इ० ए०, १९०७), पृ० ६२, नूरुद्दीन (इहवाले नजीबुद्दौला), पृ० १५ ब, गुलाम अली (शाह आलमनामा) पृ० २८; भाऊ बखर, पृ० ३४ कानूनगो पृ० १०३-४।

थी और न मुख ही खोला जा सकता था।" [1]

जाट प्रदेश मे नर हत्या व लूट का निर्देश

वल्लभगढ़ अधिकार के बाद शाह दुर्रानी ने अपनी छावनी मे कत्ले आम, लूटमार तथा फसल को नष्ट करने का व्यापक आदेश प्रसारित किया। उसने अपने सैनिकों को यह भी विश्वास दिलाया कि लूट मे जो कुछ मिलेगा, वह वस्तु उसी के पास रहेगी और जो शत्रु का सिर काट लावेगा, उसको प्रति सिर पाच रुपया पुरस्कार में दिया जावेगा। इस घोषणा के बाद जाट प्रान्त में लूट, नर-हत्या का ताडव मच उठा। सामीन के अनुसार- "मध्य रात्रि का समय था, तब अफगान सैनिक आक्रमण के लिए छावनी से निकले। आक्रमण व्यवस्था के अनुसार एक सैनिक घोडे पर सवार था और उसकी पूंछ के पीछे एक पक्ति मे ऊंटो के काफिले की भाति दस से बीस घोडे बाध दिये गये थे। अरुणोदय के एक घडी बाद मैंने उनको छावनी मे वापिस लौटते देखा। प्रत्येक सवार अपने घोडो पर लूट की अपार सम्पत्ति लाद कर ला रहा था और सामान के ऊपर अपहृत लडकिया तथा दास सवार थे। उनके सिरों पर अन्न की बोरियो की भाति कम्बल की गठरियो मे मनुष्यो के कटे हुए मुण्ड थे। फिर ये मुण्ड भालो मे टागे गये और प्रधान मन्त्री के द्वार पर पुरस्कारार्थ प्रस्तुत किये गये। यह एक असाधारण प्रदर्शन था। इसी भाति लूटमार, नर हत्या का दैनिक कार्य-क्रम चलता रहा। रात्रि मे अबलाओ के साथ बलात्कार किया जाता था। उन अबलाओ के करुण क्रन्दन, चीत्कार व विलाप से लोगों के कान के पर्दे फट जाते थे। नर-मुण्डो की एक ऊंची मीनार बनाई गई थी, उनसे चक्किया पिसवाई गई। इस प्रकार स्त्री-पुरुष की पहचान करके उनके सिरो को भी तलवार से उतार डाला गया। यही क्रम अकबराबाद तक के समस्त मार्गों मे चलता रहा। जाट प्रान्त का पूर्वी तथा उत्तरी भाग (आततायी के अमानवीय अत्याचारो की) बुरी तरह चपेट मे आ गया था। अफगान सेना मे पाच हजार रुहेला पैदल भी आकर शामिल हो गये थे। प्रत्येक रुहेला तीस-चालीस भैंस लूटकर ले आया, इन पर लूट के हीरा-जवाहरात, आभूषण, वस्त्र आदि लदे हुए थे। उन्होंने छावनी के समीप ही अपना बाजार लगा लिया और इन वस्तुओ को सस्ते भावो मे बेचा। तांबे-पीतल के बर्तनो को तोड डाला गया और ये सेना के मार्ग मे दोनो ओर बिखरे पडे थे। उनको उठाने के लिए कोई भी सैनिक नही झुका। सोना व चादी के अतिरिक्त किसी ने अन्य वस्तु नही उठाई।" [2]

---

१ – सामीन (इ० ए०, १६०७), पृ० ६२; कानूनगो, पृ० १०४-५; पे० द०, जि० २, लेख ७१; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ८०।

२ – सामीन (इ० एण्टी०), पृ० ६०, कानूनगो, पृ० १०१-२; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ८२-३।

किन्तु शाह इस प्रस्ताव के अनुसार व्रजमण्डल की बरबादी को नहीं रोक सका और न उसने कूच करना ही स्वीकारा। फलत. सूरजमल इस अमानवीय कृत्य से अधिक दृढ हो गया और उसने रूपराम कटारा तथा अन्य सलाहकारो से बातचीत करके रूक्ष शब्दो मे लिखा, "पेशकश के रूप मे मैं अब आपको दस लाख से अधिक अदा नहीं कर सकता। क्या आगे आपके व हमारे बीच मे मित्रता व शत्रुता की भावना स्थिर रहेगी? इस बारे मे आपका विचार ही निर्णायक होगा। मित्रता के अभाव में निश्चित रूप से इसी प्रकार आपस मे सघर्ष चलता रहेगा।" [1] सूरजमल के इस प्रतिरोधात्मक आचरण से शाह असमजस मे अवश्य पड गया, परन्तु उसने हठ व प्रयास को नही छोडा।

जहान खा द्वारा आगरा मे लूटमार, २१–२३ मार्च

नजीब खा के परामर्श पर अहमद शाह दुर्रानी ने विचार किया कि आगरा दुर्ग पर कब्जा करने के बाद इसको जाट विरोधी अभियान का केन्द्र बनाया जावे। आगरा मे इस समय दिल्ली के अनेक सेठ–साहूकार, प्रतिष्ठित नागरिको ने आश्रय ले रखा था और शमशेर बहादुर, नारोशकर तथा अन्ताजी भागकर आगरा चले गये थे। इससे शाह ने जहान खा तथा नजीब खा को लूट व नरसहार अभियान से वापिस बुला लिया और उनको आगरा दुर्ग व नगर पर अधिकार करके वहा से धन वसूली का आदेश दिया। २१ मार्च को प्रात काल पन्द्रह सहस्र सवारो के साथ जहान खा आगरा पहुँचा और उसने शहर में प्रवेश किया। जब अफगान सेनायें आगरा पहुच गईं, तब शमशेर बहादुर, नारोशकर वहा से भाग गये और उन्होने भगोडा नागरिको से अट्ठाईस लाख का सामान भी लूट लिया। [2] इससे नागरिको का मराठों से विश्वास हट गया। अप्रेल २०, १७५६ ई० को आगरा के शाही खानदानी किलेदार फाजिल खा की मृत्यु [3] हो गई थी और वहा उसका पुत्र मिर्जा सैफुल्ला बेग किलेदार था। जहान खा की माग पर "मिर्जा सैफुल्ला बग ने दुर्ग का समर्पण करने से मना कर दिया और दुर्ग–प्राचीर पर लगी तोपो से गोलाबारी करके दुर्ग की रक्षा की।" जहान खां शाही दुग पर अधिकार करने मे विफल रहा। फिर उसके आदेश पर अफगान तथा रुहेलो ने शहर मे भारी लूटमार व नर सहार किया। अन्ताजी के अनुसार "सरवर खा की कमान में एक टुकडी धौलपुर (धवलपुरी) की ओर भेजी गई।" यह स्थिति देखकर आगरा के किलेदार मिर्जा सैफुल्ला बेग,

---

१ – भाऊ बखर, पृ० ३८; पे० द०, जि० २, लेख ७२, कानूनगो, पृ० १०६। सरदेसाई, जि० २, पृ० ४०५, सरकार (मुगल) खण्ड २, पृ० २६८।
२ – राजवाडे, जि० १, लेख ६३, पे० द०, जि० २, लेख १०७।
३ – दे० क्रॅनी०, पृ० ७३।

कोतवाल दराम बेग तथा सैय्यद खानजहाँ ने बंगाल के सेठ का व्यक्ति से एक लाख रुपया उधार लेकर जहान खा को नजर किया। २३ मार्च के दिन जहान खा को मथुरा छावनी मे लौटने का आदेश मिल गया था। इसमे वह २४ मार्च को अपनी समस्त अफगान सेना सहित आगरा से वापिस लौट गया।[१] इस घटना के दस वर्ष बाद फादर वेण्डल लिखता है कि— "सूरजमल ने दूर रहकर अपने ब्रज देश की इस महान विपत्ति को सहन किया। दुर्रानी तथा रुहेलों ने मिलकर पाशविकता दिखलाई और मथुरा को जलाकर राख तथा रक्त–रंजित कर दिया। उन्होंने किसी पर भी दया नहीं दिखलाई। इस समय आगरा शहर तथा समीपवर्ती स्थान इस प्रकार नष्ट किये गये थे, जिस प्रकार इससे पूर्व कभी नहीं हुये। इस मनहूस घटना के चिह्न अब भी दिखलाई देते हैं।"[२] जबकि अन्ताजी माणकेश्वर के शब्दो मे– "दिल्ली से आगरा तक किसी भी गाव मे एक भी व्यक्ति जीवित दिखलाई नही देता था। जिस मार्ग से दुर्रानी आया तथा लौटा, उस मार्ग मे दो सेर अन्न या घास भी नही मिल सकी।" दीर्घकालिक वार्ता के बाद भी हठी व साहसी सूरजमल ने दुर्रानी के सामने समर्पण नही किया। अन्ताजी के शब्दो मे—"अन्त में राजा सूरजमल ने राजा जुगल किशोर तथा अन्य दूतो के द्वारा शाह को पाच लाख रुपया खिराज तथा उसके प्रधानमन्त्री को दो लाख रुपया घूंस देने का वचन दिया।"[३] फिर भी वार्ता का दौर नियमित चलता रहा।

शाह की वापिसी के मुख्य कारण

अहमद शाह दुर्रानी मथुरा-वृन्दावन की लूट-बरबादी के बाद दिल्ली वापिस क्यो लौट गया था? अन्य कारणों के साथ ही आलमगीर सानी का दरबारी इतिहासकार लिखता है, "सूरजमल के पास चार अति सुदृढ पक्के (पुख्ता) दुर्ग हैं और उनका कच्चा परकोटा काफी ऊचा तथा चौडा है। इनके चारो ओर खाईया इतनी गहरी खोदी गई थी कि भूमि से पानी निकलने लगा था। इन चारो दुर्गों को एक दूसरे से सम्बद्ध रखने के लिए अन्य कच्ची गढियों का निर्माण कराया गया था। नगर प्राचीरो के बाहर ३ किमी. की दूरी पर मरहला (मंजिले पडाव) तैयार किये

---

१ – ता० आलमगीर सानी, पृ० १०६ अ, सियार, खण्ड ३, पृ० ३५२, ता० मुजफ्फरी, पृ० १२१, सामीन, (इ० ए०), पृ० ६४–५, राजवाडे, जि० १, लेख ६३, पें० द०, जि० २१, लेख १११, जि० २७, लेख १४६, १५२, १५५; कानूनगो, पृ० १०५।

२ – वेण्डल, पृ० ७५, पें० द०, जि० २, लेख ७२, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ८२ (पा० टि०)।

३ – पें० द०, खण्ड २१, लेख १११, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ८३।

गये थे। इन मरहलो पर रहकला, सामान ताने ले जाने वाले बेलदार, श्रमिक तथा बन्दूकची सवार तैनात थे। सूरजमल ने दुर्गों में गल्ला, घृत, तेल आदि खाद्यान्न, दाना–घास तथा दैनिक उपयोगी वस्तुयें एकत्रित कर ली थी, ताकि कुछ वर्ष तक दुर्भिक्ष का सामना किया जा सके। दुर्गों की रक्षा के लिए युद्ध प्रसाधन, छोटी–बडी तोपें, रहकला, बाण, गोला–बारूद, सीसा आदि का प्रचुर भडार जमा था। अनेक वर्षों के नियमित तथा मुस्तैद घेरा के बाद भी इन दुर्गों का समर्पण कराना या अधिकार करना सरल कार्य नही था।" [१] इस स्थिति को देखकर अहमद शाह दुर्रानी ने सोचा कि इन दुर्गों पर अधिकार करने मे अनेक वर्ष लगेगे। इससे उसने ब्रज-मण्डल (जटवाडा) से प्रयाण करने का निश्चय कर लिया था।

अब मधुमास समाप्त हो रहा था और ग्रीष्म अपनी प्रचण्ड उष्मा के साथ प्रारम्भ होने वाली थी। शाह तथा उसके सैनिक गर्मी सहन नही कर सकते थे। सर यदुनाथ सरकार के अनुसार—"यमुना का पानी भी सूखने लगा था। नदी म मारे गये या आत्मघात करके मरने वाले लोगो की कच्ची व अधजली लहासें भरी हुई थी। इससे नदी का पेयजल दूषित हो गया था। प्रकृति ने अपना प्रकोप दिखलाया। तीन सप्ताह मे सूर्य की प्रचण्डता से स्थिति और भी गम्भीर हो गई। वृन्दाबन, मथुरा तथा अन्य स्थानो का रक्त–रजित नदी का जल दुर्रानी के डेरो तक पहुँच गया, जिनको उसने अपने आदेश से वध गृह बना दिया था।"[२] फलत पेय जल की अशुद्धता तथा चतुर्दिक फैली दूषित वायु से दुर्रानी की महावन छावनी म हैजा फैल गया और इस महामारी से नित्यश. एक सौ पचास सैनिक मरने लगे। 'इस समय न कोई औषधि थी और न अन्य कोई उपचार। कहा जाता है कि इस महामारी को रोकने के लिये इमली का पानी बतलाया गया, परन्तु इमली का भाव भी सौ रुपया सेर हो गया।" अफगान सेना घोडो का मास खाने लग गई थी। इसमे घोडो की कमी होने लगी। जो सैनिक शेष रहे, उन्होने घर वापिस लौटने के लिये कोलाहल मचा दिया था। इससे दुर्रानी विवश हो गया। उसने २६ मार्च को अपने राजदूत कलन्दर खा को मुगल सम्राट के पास अपना पत्र लेकर दिल्ली (२८ मार्च) भेजा कि "उसने जाट अभियान का विचार छोड दिया है और वह दिल्ली की ओर वापिस लौट रहा है।" साथ ही उसने आगरा से जहान खा व नजीब खा को वापिस बुलाने के लिये तीव्र धावक सवार भेजे। उसने वृन्दावन से ६ मार्च को किये गये वायदे की धनराशि वसूल करने का विफल प्रयास किया। २८ मार्च को अफगान सेना न महावन स कूच किया और मथुरा के उत्तर म ३० किमी. कस्बा शेरगढ म

---

१ – ता० आलमगीर सानी, पृ० ११४ अ।
२ – सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० –३।

पहुँच कर सूरजमल से यथा सम्भव पेशकश की राशि प्राप्त करने का प्रयास किया।[1]

सूरजमल का शाह दुर्रानी को अन्तिम उत्तर

शाह दुर्रानी ने शेरगढ शिविर से राजा जुगल किशोर के साथ अपने एक अफगान अधिकारी को इस कडाई तथा धमकी भरे पत्र के साथ सूरजमल के पास भेजा, "यदि वह खिराज की रकम भुगतान करने मे टालमटोल करेगा, तो उसके तीनो दुर्ग तोड कर धूल मे मिला दिये जावेंगे और उसके दश तथा उसके साथ जो कुछ भी होगा, उसके लिये वह स्वय उत्तरदायी होगा।" सूरजमल एक पारदर्शी राजनयिक व्यक्ति था। इस समय दुर्रानी को अपनी राजधानी से निकले पाच माह हो चुके थे। महामारी ने उसके पैर तोड दिये थे और उसके सैनिक वापिस लौटने के लिये पुकार रहे थे। सत्यत. अफगान सैनिक जमकर युद्ध करने के लिये नही निकले थे। उनके पास भारी तोपखाना नही था और बिना भारी तोपखाना तथा दीर्घकालिक घेराबन्दी के जाट दुर्गों का पतन सम्भव नही था। सूरजमल शाह दुर्रानी की इस मूल्यहीन धमकी से भयभीत नही हुआ और उसने शाह दुर्रानी के पास विनम्र तथा कठोर उत्तर भेजा।

"मैं हिन्दुस्तान के साम्राज्य मे कोई महत्वपूर्ण स्थिति तथा शक्ति नही रखता हू। मैं तो रेगिस्तान (मैदान) मे रहने वाले जमीदारो में से एक (व्यक्ति) हू। मेरी अयोग्यता के कारण ही (वर्तमान) युग के किसी भी बादशाह ने मेरे कार्यों मे हस्तक्षेप करना उचित नहीं समझा। अब आप सदृश शक्ति–सम्पन्न शाह ने रणक्षेत्र में आमने सामने अडकर उलझने का संकल्प किया है। इस तुच्छ व्यक्ति के विरूद्ध आप फौजकशी करेंगे, तो इससे शाह के ऐश्वर्य तथा महानता को ही अपयश मिलेगा। इससे मेरा सम्मान बढेगा और इस विनीत के लिये गर्व का विषय होगा। संसार यह कहेगा कि ईरान व तूरान के शाह ने अत्यधिक भयभीत होकर एक निर्धन घुमक्कड के विरुद्ध फौजकशी की। ताज प्रदान करने वाले शाह के लिये केवल ये शब्द ही अत्यधिक शर्मनाक होगे। इससे इतर परिणाम भी पूर्णतः अनिश्चित ही है। महान शक्ति तथा साधनों से सम्पन्न यदि आप मुझ जैसे शक्तिहीन को बरबाद करने में सफल होते है, तो फिर आपको इसमे कितना श्रेय मिलेगा? यह कहा जायेगा कि "उस गरीब की क्या शक्ति तथा स्थिति थी?" काश। अदृश्य (प्रभू) की प्रेरणा, जिसका किसी को भी ज्ञान नही है, से यदि विजय दूसरी ओर मोड ले लेगी, तब इसका क्या परिणाम होगा? अपने वीर सैनिको के बल से आपने जो महान शक्ति

---

१ – ता० आलमगीर सानी०, पृ० १०६ ब, ११४ ब, सानीन, पृ० ३६; सियार, खण्ड ३, पृ० ३५७, पे० द०, जि० २१, लेख १११, कानूनगो, पृ० १०५।

तथा ऐश्वर्य ग्यारह वर्ष में अर्जित किया है, वह एक क्षण मे ही तिरोहित हो जावेगा।

"यह आश्चर्य की बात है कि आप सदृश विशाल-गम्भीर हृदय ने इस छोटी सी बात पर विचार नही किया और आपने पूरी भीड-भाड तथा विशाल सेना के साथ इस साधारण तथा महत्वहीन अभियान का भार तथा कष्ट अपने ऊपर ले लिया है। जहाँ तक आपने नर-हत्या तथा विनाश का भयप्रद तथा तीव्र आदेश भेजा है, वीरो को इस दुखः से भय नही होता। यह सभी समझते हैं कि कोई भी बुद्धि-वादी नश्वर जीवन म आस्था नही रखता। जहा तक मेरा सवाल है, मैं अपनी आयु के पचास वर्ष पार कर चुका हू और शेष के बारे मे कुछ नही समझता। मेरे लिये इससे अधिक और क्या सौभाग्य की बात होगी कि मैं वीरगति का अमृतपान करू, जो मुझे वीरो के अखाडे में और रणक्षेत्र मे वीर-सैनिकों के साथ पीना है। ताकि मेरा तथा मेरे पूवजो का नाम युग के पृष्ठो पर याद किया जा सके कि एक अशक्त किसान ने महान तथा शक्तिशाली शहशाह के साथ, जिसने बडे-बडे सम्पन्न सम्राटो को समर्पण के लिये बाध्य कर दिया था, समानता मानकर युद्ध किया और वीरगति प्राप्त की। मेरे स्वामी भक्त योद्धा तथा साथियो के हृदय मे भी यह पुनीत विचार है। यदि मैं आपके स्वर्ग से भी अति रमणीक दरबार की दहलीज पर उपस्थित होने का विचार करू तो मेरे साथियो का सम्मान मुझे इस प्रकार उपस्थित होने के लिये आज्ञा नही देगा। इन परिस्थितियो मे यदि आप, जो न्याय के स्रोत हैं, मुझे जो कि तिनके की भाति निर्बल हू, क्षमा करेंगे और अपना ध्यान किसी अन्य महत्वपूर्ण अभियान की ओर देंगे, तो आपकी प्रतिष्ठा व ऐश्वर्य को कोई हानि नही पहुँचेगी।

"जहा तक तीन किलो की सत्यता है, जिन पर आपका क्रोध है और जिनको आपके सरदार मकडी के जाले की भाति कमजोर समझते हैं, वास्तविक युद्ध के बाद ही पता चल सकेगा। यदि ईश्वर ने चाहा तो ये सिकन्दर की बुर्ज के समान अजेय सिद्ध होंगे।" [१]

जाम-इ-जहान नामा का लेखक सूरजमल तथा अहमदशाह दुर्रानी के बीच हुई सधि के बारे मे लिखता है— "सम्पन्न खजाना, शक्तिशाली दुर्ग, बहुत सी सेना तथा विशाल युद्ध-प्रसाधनो से सम्पन्न होने पर भी सूरजमल ने अपने स्थान (दुर्ग) को नहीं छोडा और वह स्वय दुर्रानी से युद्ध करने को तैयार था। उसने शाह के दूतो ने कहा— "आपने अभी तक हिन्दुस्थान पर विजय प्राप्त नही की है। यदि आपने एक अनुभवहीन बालक (इमादुलमुल्क), जिसके नियन्त्रण मे दिल्ली है, को अपने वश मे कर लिया है, तो इसम (गर्व की) क्या (बात) है ? यदि आप मे कोई अभिमान है

---

१ – तजिकरा-इ-इमादुलमुल्क, पृ० २४३-४, भाऊ बखर, पृ० ३८, कुदरतुल्ला, भाग १, पृ० ५०३, भाग २, पृ० ११८, ग डासिंह, पृ० १८१-१८३

तो (मुझ पर आक्रमण करने में) देरी क्यों ? फिर शाह सुलह करने के लिये जितना अधिक दबने लगा, तब जाट का गर्व तथा उद्दण्डता उतनी ही बढती गई और उसने कहा मैंने इन किलों पर अपार धन राशि खर्च की है। मुझसे युद्ध करने में शाह की कृपा ही होगी। ताकि भावी दुनिया यह याद रखेगी कि विलायत से एक बादशाह आया था, जिसने दिल्ली जीत ली, परन्तु एक साधारण जमींदार के सामने बेबस हो गया।'' जाट दुर्गों की दृढ़ता से भयभीत होकर शाह वापिस लौट गया। उसने दिल्ली मे स्वय सम्राट मुहम्मदशाह की पुत्री से और अपने पुत्र का आलमगीर सानी की पुत्री से निकाह किया और इसके बाद वह कंधार चला गया।[1]

अहमद शाह दुर्रानी ने ३० मार्च को फरीदाबाद और ३१ मार्च को दिल्ली के समीप सराय बसन्त खा तथा सराय सुहैल के पास शाही छावनी डाली। उसने इस बार राजधानी मे प्रवेश नही किया और एक अप्रेल को वजीराबाद तथा बादली मे शिविर डाला, जहा वह तीन दिन रुका। अभी तक दुर्रानी के वास्तविक विचार व उद्देश्य स्पष्ट नहीं थे। इससे सूरजमल के दूत मुशी यहया खा तथा राजा मोहन सिंह सूर्यद्विज[2] उसके साथ बातचीत करते तथा शाह को पाच लाख रुपया पेशकश व उसके वजीर को दो लाख रुपया रिश्वत मे देने का आश्वासन देते हुए दिल्ली के उत्तरी-पश्चिमी मोहल्लों तक चले गये थे। यहा पर जब उनको निश्चित हो गया कि वास्तव मे शाह अपने देश को वापस लौट रहा है, तब तेज धावक सुतर-सवारो ने यह सूचना[3] सूरजमल के पास आकर दी। सरदेसाई के अनुसार— ''दुर्रानी को युद्ध की ललकार जाट राजा की वाकपटुता तथा सफलता का प्रतीक है।'' फादर वेण्डल के अनुसार-''उसका (जाट राजा का) सौभाग्य नक्षत्र चमक रहा था और उसको वायदे की रकम मे से एक कोडी भी अदा नही करनी थी। सूचना मिलते ही उसने खिराज की बातचीत तय करने के लिये आये दुर्रानी के दूतों को अपने दुर्ग से निकाल दिया। इस प्रकार उसने नि सदेह विदेशी आक्रान्ता को एक कोडी भी अदा नही की।''[4] अहमदशाह की उत्तेजित करने की नीति पूर्णत. विफल रही और सूरजमल की सैनिक शक्ति पर कोई भी प्रभाव नहीं पडा। इस प्रकार जाटो के विरुद्ध शाह दुर्रानी का प्रथम सैनिक अभियान पूर्णत. विफल[5] रहा।

---

१ -कुदरतुल्ला, भाग १, पृ० ५०३, भाग २, पृ० ११८, गण्डा सिंह, पृ० १८३ पा० टि०।

२ – वाक्या राज० जि० २ पृ० ६५।

३ – पे० द०, जि० २, लेख ७२।

४ – वेण्डल, पृ० ७८, पे० द०, खण्ड २, लेख ७२; जि० २१, लेख १११; भाऊ बखर, पृ० ३७–८, कानूनगो, पृ० १०६–७, सरदेसाई, खण्ड २, पृ० ५०५।

५ – पे० द०, खण्ड २, लेख ७२, भाऊ बखर, पृ० ३७–८।

६ – अहमद शाह दुर्रानी की हिन्दुस्तान से वापिसी, अप्रेल, १७५७ ई०

२६, जनवरी को अपनी प्रथम भेंट मे सम्राट आलमगीर सानी ने शाह दुर्रानी से वजीर इमादुलमुल्क के रूक्ष तथा कठोर व्यवहार व आचरण की शिकायत की थी। उसने कहा– 'या तो शाह इसको मौत के घाट उतार दे या बन्दी बनाकर कारागृह में डाल दे अथवा अपने साथ अफगानिस्तान ले जावे।'[1] इमाद की एकाधिकार नीति के विरुद्ध राजा सूरजमल, नजीबुद्दौला तथा राजा नागरमल ने भी इसी आशय का एक गोपनीय प्रार्थना–पत्र प्रस्तुत किया था। इस समय इमादुलमुल्क आगरा में था। शाह ने प्रस्थान करते समय नजीब खा को नजीबुद्दौला का विरुद प्रदान करके मीर–बख्शी (अमीर–उल–उमरा) का पद प्रदान किया और साम्राज्य का सर्वोच्च सत्ताधारी वकील–इ–मुतलक नियुक्त किया। उसको दिल्ली नगर का रक्षक, प्रशासनिक प्रवन्धक तथा सम्राट की निजी–रक्षा का भार सौंपा गया। साथ ही उसने उसको अफगानिस्तान का प्रतिनिधित्व करने के लिये आलमगीर सानी के दरबार में अपना मुख्तयार नियुक्त किया।[2]

दिल्ली प्रवेश से पूर्व ही शाह दुर्रानी ने २० जनवरी को नरेला पडाव मे भूतपूर्व वजीर इन्तिजामुद्दौला को वजारत की सनद प्रदान कर दी थी, किन्तु इमाद ने वजारत प्राप्त करने की लालसा से शाह को लूटमार करने तथा उसकी सेनाओं का मार्ग–दर्शक बनकर स्वामि भक्ति प्रगट की थी। फलतः ३ अप्रेल को दुर्रानी के आग्रह पर सम्राट ने इमाद को वजारत की पगडी तथा कलमदान पुनः प्रदान करके वजीर पद प्रदान कर दिया था।[3] अन्त में शाह १० अप्रेल को सोनपत से पजाब की ओर रवाना हो गया। वह अपने साथ शाही महल की कई बेगमे व दासियो को ले गया। साथ ही करोडो की सम्पत्ति व लूट का अपार सामान ले गया।[4]

बृज मण्डल तथा हरियाणा की बरबादी के मुख्य कारण

(१) सूफी सन्त शाह वली उल्लाह का सम्भवतः यह विश्वास था कि नव मुस्लिम

---

१ – ता० आलमगीर सानी, पृ० ९६ ब; सियार, खण्ड ३, पृ० ३५२; तज्किरा–इ–इमाद, पृ० २१२।

२ – नजीबुद्दौला, पृ० १५ ब।

३ – दे० क्रॉनी०, पृ० ९२।

४ – पे० द०, खण्ड २, लेख ७१; राजवाडे, जि० १, लेख ६३; बीन, पृ० ५१–३; फ्रेंकलिन, पृ० ७।

तथा मुगलों की भांति एक नवीन तथा अति बलशाली वंश का संस्थापक महमद शाह दुर्रानी हिन्दुस्तान की राजधानी व मुगल सिंहासन पर अधिकार कर लेगा। वह हिन्दुस्तान में रह कर एक नवीन सशक्त मुस्लिम प्रधान सरकार तथा प्रशासन को गठित करेगा और इसी धरती पर प्राण त्याग देगा।[१] यह उसकी भूल मात्र थी। दुर्रानी का हिन्दुस्तान की राजधानी तथा उसके आसपास प्रथम आक्रमण 'काफिरों के विरुद्ध जिहाद' की भूमिका नहीं थी और न वह जाट–मराठों को ही परास्त करके हिन्दुस्तान में स्थाई तौर से ही बसना चाहता था। वह वास्तव में लूट तथा बरबादी करके हिन्दुस्तान को आर्थिक दृष्टि से कमजोर तथा सैनिक शक्ति को पंगु करना चाहता था, ताकि पंजाब तथा सरहिन्द प्रान्तों पर उसका दीर्घकालिक अधिकार रह सके।

सत्यतः ब्रजमण्डल के प्रमुख धार्मिक नगर व कस्बा दुर्ग–प्राचीरों से अरक्षित थे। शाह के रोमांचकारी अत्याचार, लूट तथा बरबादी धार्मिक जिहाद या काफिरों (जाटों) की शक्ति का दमन के कारण नहीं था। यह भी सत्य है कि विवेकी सूरजमल ने उसके सामने समर्पण करके अधीनता स्वीकार नहीं की थी। परन्तु सात माह (अक्तूबर, १७५६–अप्रेल, १७५७ ई०) तक दुर्रानी ने देश तथा राजधानी में सूफी सन्त के स्पष्ट उपदेशों के बाद भी जो लूट, बरबादी, कत्ल तथा बलात्कार किये, उनके विरुद्ध किसी भी मुस्लिम सरदार व उलेमा ने अपनी ऊंगली नहीं उठाई। यह कष्ट मुस्लिम सरदार, जनता तथा सूफी फकीर ने आत्मग्लानि के साथ सहन कर लिया था।

जाट अभियान की योजना में शाह वली उल्लाह का मिथ्या स्वप्निल अर्न्तनाद के साथ ही वजीर इमाद तथा नजीब खां का परामर्श था और दोनों ने दुर्रानी की अनुकम्पा वरण करने के लिये शाह का पथ–प्रदर्शन किया था। नजीब खां का मुख्य बिन्दु इमाद की सैनिक शक्ति, वंशानुगत प्रभाव व प्रतिष्ठा को खोखला करना था और इमाद मराठों की सैनिक शक्ति पर निर्भर था। सूरजमल, राजपूत राजा, शुजा, बंगश तथा नजीब सभी मराठा लूट व बरबादी के विरोधी थे। इसके अलावा सूरजमल इमाद के शत्रु शुजा का पुराना मित्र था। उसने इमाद का अभी तक साथ नहीं दिया था। इमाद ने वजारत पुनः प्राप्त करने तथा अपने आपको जाटों की शक्ति से सुरक्षित करने के लिये दुर्रानी को जाटों के विरुद्ध उकसाया था। इस प्रकार सर यदुनाथ सरकार का मत है कि दिल्ली, मथुरा तथा आगरा की जनता को इस अफगान आक्रमण के कारण जो यातनायें भोगनी पड़ी, उसका उत्तरदायित्व नजीब पर कितना था और इमाद पर कितना, इसका निर्णय करना इतिहासकार के लिये असम्भव नहीं है।

---

१ – मक्तूबात, लेख १३, पृ० ७२, उर्दू अनु० पृ० १०३।

आगरा नगर का प्रबन्ध संभाल लिया और शाहजादा हिदायत बख्श की ओर से सैय्यद खानजहा को आगरा प्रान्त का नायब नियुक्त करके एक कोतवाल, एक दरोगा अदालत तैनात किया। यहा से शाहजादा ने २५ मार्च को यमुना नदी पार कर ली। २८ मार्च को फिरोजाबाद पहुँच गया और ३१ मार्च को मैनपुरी मे पडाव डाला, जहा ४ अप्रेल को मुहम्मद खा बगश ने उससे मुलाकात की। फिर हिदायत बख्श ने इटावा से मराठा कमाविसदारों को हटाने के लिये प्रस्थान किया और मिर्जा बाबा ने कादिरगज मे डेरा डाला। इस प्रकार दुर्रानी के प्रस्थान के साथ ही आगरा नगर व प्रान्त से मुगल शाहजादों का भय भी समाप्त हो चुका था।

अब राजा सूरजमल ने सोभाराम (रूहाराम ?) को आगरा का सूबेदार नियुक्त करके जाट सेनाओ के साथ रवाना किया। उसने शीघ्र ही आगरा नगर पर अप्रेल मे अधिकार कर लिया। शाही अधिकारी सैय्यद खानजहा, रुस्तम बेग तथा इस्लाम खा जाट शिविरो मे आकर उपस्थित हुए। उनको बन्दी बना लिया गया तथा अन्य शाही अधिकारियो को मार कर भगा दिया। फिर जाटो ने पूर्ववत यमुना नदी के पूर्वी तटवर्ती शाही परगनो में अपने थाने स्थापित कर लिये।[१]

हिन्दुस्तान मे नजीबुद्दौला दुर्रानी का प्रमुख प्रतिनिधि था, परन्तु वह इमाद से भी अधिक पतित तथा अशिष्ट व्यक्ति था। सम्राट ने राजधानी के आस पास के समस्त जिलो का प्रबन्ध उसको सौंप दिया था। उसने बादशाह तथा राष्ट्र हित की उपेक्षा करके शाही खजाने का अधिकाश भाग अपने व्यक्तिगत स्वार्थ में व्यय करके अपनी शक्ति तथा आर्थिक सम्पन्नता की ओर विशेष ध्यान दिया। यहा तक कि शाहजादो की जागीरो से वसूल की गई राशि को भी हडप कर गया और जो कुछ भी भूमिकर मिला, उसका केवल एक–चौथाई या पाचवा अश मालिको को दिया। ११ मई को उसने एक सम्पन्न तथा महत्वपूर्ण प्रदेश की सैर करके केवल पच्चीस हजार रुपया शाही खजाने मे जमा किया था।[२] उसने दोआब मे मराठो की जागीर तथा अधिकाश शाही परगनो पर अपना अधिकार कर लिया था। सम्राट के प्रति उसका व्यवहार काफी कठोर तथा आचरण अप्रिय था, इससे दिल्ली में उसके प्रति उपेक्षा की भावना उभरने लगी थी।

अब राजा सूरजमल ने केन्द्रीय सरकार व दरबार की राजनीति, शासन व्यवस्था मे खुलकर हस्तक्षेप किया। दुर्रानी की पीठ मुडते ही सूरजमल तथा मराठा

---

१ – ता० आ० सा०, पृ० ११७ ब–११८ अ, ता० मुजफरी, पृ० १२३, पे० द० जि० २, लेख ७२।

२ – ता० आलमगीर सानी, पृ० १२० अ, दे० क्रॉनो० (११ मई)।

सरदार पुन सक्रिय हो गये। जाटो के लिये अब मैदान साफ था। सूरजमल शीघ्र ही अपनी माद (दुर्ग) से निकला और उसने जाट राज्य के अधिकृत परगनो की व्यवस्था सभालने, थाना व चौकी स्थापित करने के लिये अपने अधिकारी, कर्मचारी तथा सैनिको को रवाना कर दिया। जाट सैनिको ने पूर्व तथा उत्तर मे दोआब की पश्चिमी सीमा पर दनकौर, यमुना के पूर्वी तट पर दोआब मे किनारे-किनारे चलकर पठानो को पराजित किया और अपने पुराने थानो पर अधिकार कर लिया। आगरा नगर के अलावा बल्लमगढ, रेवाडी पर्यन्त समस्त मेवात व अहीरवाटी के परगनो पर जाटो का पूर्ववत दखल था। [१]

दुर्रानी ने जाट राज्य के जिलो व परगना म भीषण लूट व बरबादी की थी। दिल्ली तथा उसके आसपास के इलाको म किसी के पास बन्दूक क्या, एक तलवार भी नही छोडी। वह जाट दुर्गों को जीतने के लिये अपने साथ जो तोपें लाया था, उनको परिवहन साधनो के अभाव म दिल्ली के आसपास जाट सीमाओ मे ही छोड गया था। मई के प्रथम सप्ताह में जाटो ने विजयोल्लास के साथ उनको अपने अधिकार म ले लिया और उनको उठाकर अपने दुर्गों मे ले आये। [२]

११ – जाट–मराठा समझौता, मई–जून १७५७ ई०

अहमद शाह दुर्रानी के अमानवीय कृत्यो का प्रतिशोध लेने तथा मुस्लिम सगठन व मुस्लिम तानाशाही की धमकी के विरुद्ध दक्षिण से मराठा तूफान पुन उठा, जिसका अन्तिम बिन्दु हिमालय की तराई तथा पश्चिम में सिन्धु नदी का तट था। यह 'जिहाद' के विरुद्ध प्रतिरोधात्मक चुनौती थी ताकि अफगानिस्तान के शाह को यह अनुभव हो सके कि हिन्दुस्तान मे अभी तक एक राष्ट्र या साम्राज्य की रक्षक शक्ति मौजूद है और वह विदेशी आक्रान्ता को देश की सीमाओ क बाहर खदेडने मे समर्थ है।

बालाजी बाजीराव पेशवा मल्हार राव की दुर्भावना को भली भाति समझना

---

१ – पे० द०, खड २, लेख ७९ (अन्ताजी का पत्र "अन्तरवेदीत पेऊन आपला आमल वसाविला), खड २१ लेख ११८ (२३ अप्रेल)।

– २७ जुलाई को शमशेर बहादुर रेवाडी पहुच गया था। यहा उसको पता चला कि केवल कुछ गाव कामगार खा बलूच और कलियाना की विधवा सत्तभामा के कारिन्दा सीताराम के पास हैं। बाकी आस पास के परगनों पर सर्वत्र जाटों का नियन्त्रण है (पे० द०, खण्ड २७ लेख १६३ १ ७, १६८)।

२ – पे० द०, खण्ड २ लेख ७१, राजवाडे जि० १, लेख ६३, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ८६।

था और उसने रघुनाथ राव को स्पष्ट निर्देश दिया था कि जाट प्रान्त मे वह इस बार जाटो से झगड़ा मोल नही ले। उसने लिखा— "यदि जाट आपके साथ लड़ाई भी करता है, तब भी उस पर आप सभी प्रकार की कृपा करते रहे। मल्हार राव व जाटों के दिल साफ नही हैं। युद्ध का विचार रखने से भी कुछ परिणाम नही निकलेगा। इस वर्ष जहा तक सम्भव हो सके जाटो से झगडा नहीं करें।" [1] स्पष्टत. मल्हार राव की दुर्भावना के कारण ही रघुनाथ राव यथा शीघ्र जाट प्रदेश मे नही पहुँच सका। अर्थ सकट [2] से ग्रस्त रघुनाथ राव बीस सहस्र मराठा सैनिकों के साथ सवाई माधोसिंह स मामलत की रकम वसूल करने के उद्देश्य से चौथ का बरवाडा (रणथम्भोर के पश्चिम मे ३२ किमी०) घेरा मे उलझ गया था। उसने जयपुर राज्य से बकाया वसूल करने मे चार माह (अप्रेल–जुलाई) निकाल दिये थे।

अप्रेल के द्वितीय सप्ताह मे सूरजमल ने राव हेमराज कटारा को बातचीत करने के लिए जयपुर भेजा। माधोसिंह ने सूरजमल को आश्वासन दिया कि आप इस ओर से किसी भी बात म सन्देह व अलगाव नही समझें। आपने जो भी विचार किया है, उसी के अनुरूप अमल किया जावेगा। इस समय अन्ताजी कामा पहुँच गया था और उसने इस मुहाल मे लूटमार शुरू कर दी थी। फलत. राजा हरसाय व दीवान नद लाल ने सगी हरचद के हाथो अन्ताजी के लिए सिरोपाव भेजा और २ मई को नवल सिंह कल्याणोत न उसको यह सिरोपाव प्रदान किया। [3]

मई के मध्य मे रघुनाथ राव ने सखाराम बापू (रघुजी का दीवान) के नेतृत्व मे २०,००० सेना का एक अग्र (कोतल) दल आगरा की ओर रवाना किया। उसके साथ मे विट्ठल शिवदेव, दीवान गगाधर, तात्या, अन्ताजी माणकेश्वर तथा रघुनाथराव के निजी सैनिक भी शामिल थे। पेशवा ने आगरा का राज्यपाल पद होल्कर को प्रदान कर दिया था। अत. २७ मई को मल्हार राव ने विट्ठल शिवदेव को अपनी ओर से आगरा का नायब राज्यपाल नियुक्त करके सूरजमल से सघर्ष का मार्ग खोल दिया था। मराठा सेनानायक तथा सैनिको ने चौथ का बरवाडा से प्रस्थान करके जाट राज्य की सीमा पर वैर दुर्ग के समीप अपना पडाव डाला। यहा रुककर उन्होने राजा सूरजमल से बकाया रकम तथा खडनी की माग [4] की। फलत सूरजमल ने मराठा प्रबन्धको से बातचीत करने के लिए राव रूपराम कटारा को वैर भेजा

---

१ – पे० द०, जि० २, लेख ८०।

२ – राजवाडे, जि० १, लेख, ५२, ६७, ७०, ७१।

३ – ड्राफ्ट ख० प०, जि० ६, लेख १०६४, ११२१।

४ – ता० आलमगीर सानी, पृ० १२४ अ, राजवाडे भाग १, लेख ६०।

और उसने आगरा प्रान्त मे पेशवा की सूबेदारी तथा मराठा हस्तक्षेप का विरोध किया।

सूरजमल के सामने इस समय दो विकल्प थे। (१) या तो वह अहमद शाह दुर्रानी के मनोनीत प्रतिनिधि नजीबुद्दौला का साथ दे अथवा (२) संदिग्ध स्वधर्मी मराठो की सहायता करें। शाह दुर्रानी तथा भारतीय अफगानो की एकता सूरजमल के दिग्विजय मे एक अटकाव था। नजीब का उद्देश्य रुहेलो की कीमत पर अपने साम्राज्य को गंगापारी रुहेल खंड के सीमान्त प्रदेश तक फैलाने का था। जाटो ने दोआब मे फैलकर अनेको नवीन बस्तियां बसा ली थी और इस क्षेत्र के जमींदार सूरजमल की सहायता प्राप्त करने के लिए समुत्सुक थे। अत. शेजवल्कर के अनुसार— "सूरजमल के लिए यह आवश्यक था कि वह नजीबुद्दौला की महत्वाकाक्षा तथा भारतीय अफगानो के विरुद्ध मराठो द्वारा छेड़े जाने वाले गुरिल्ला युद्ध मे मराठो की सहायता करे।" [१]

"यद्यपि मराठा सरदारों के आचरण मे जाटों का न्यूनतम विश्वास था। वे उनकी धूर्त-चालो के प्रति सजग थे। फिर भी सूरजमल ने भारतीयत्व की भावना से प्रेरित होकर मराठा सरदारो का साथ देने का निश्चय किया था। यह सूरजमल की महानता तथा उच्च नीतिज्ञ होने का प्रमाण था। उसने एक महान भारतीय शक्ति से संधि करके अपने राज्य को बरबाद होने से बचा लिया और उसकी सैनिक शक्ति पर भी किसी प्रकार की आंच नही आई। उसने मराठो को हिन्दुस्तान के अभियानो में सफलतापूर्वक धन तथा फौजी सहायता प्रदान करने का आश्वासन दिया।" [२] इसमे मल्हारराव होल्कर ने आगरा पर अपना अधिकार बनाये रखने की भावना से कुम्हेर अभियान के समय की गई अपनी घोर प्रतिज्ञा तथा खांडेराव की मृत्यु के दु.ख को भुलाकर राजा सूरजमल के साथ मित्रता करना उचित समझा। [३]

इस समय मराठों का दिल्ली स्थित स्थाई वकील पंडित बापूजी महादेव हिंगणे कुम्हेर में मौजूद था। उसके सतत् प्रयासो से सूरजमल ने मराठो को वचन दिया कि १७५४ ई० की युद्ध क्षति की शेष राशि का भुगतान कर दिया जावेगा। मराठा सरदार जाट वकीलो के साथ समझौता-वार्ता करते हुऐ वैर से आगरा तक पहुँच गये, जहां जून के प्रारम्भ मे महादेव हिंगणे तथा अन्ताजी माणकेश्वर के प्रयासो से जाट-मराठो मे एक बार पुनः स्वस्थ मैत्री समझौता सम्पन्न हुआ। इस बार मराठो

---

१ – शेजवल्कर, (पानीपत), पृ० ६०।
२ – कानूनगो, पृ० १०८।
३ – पे० द०, खण्ड २१, लेख १२१।

ने सूरजमल को वचन [1] दिया—

(१) आगरा प्रान्त तथा दोआब की सीमाओं पर स्थित इनके और परगना जिन परगनों पर जाटों ने अपना अधिकार (दखल) कर लिया है, उन पर जाटों का यथा पूर्व निश्चित अधिकार बना रहेगा। इन परगनों की व्यवस्था में वे किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेंगे।

(२) आगरा नगर पर भी जाटों का अधिकार मान लिया गया और सूरजमल ने इसके बदले में मराठों को चौथ देने का वचन दिया।

इस पारस्परिक सहयोगी समझौता के बाद विट्ठल शिवदेव को आगरा में छोड़ कर [2] सखाराम बापू ने अन्ताजी माणकेश्वर, त्र्यम्बक मुकुन्द और गोपाल राव गणेश की कमान में मराठा सैनिकों को तीन भागों में बांट कर दिल्ली, फर्रूखाबाद तथा अवध की ओर रवाना करने का निश्चय किया। इसके बाद जून के द्वितीय सप्ताह में मराठा सैनिकों ने आगरा के समीप यमुना नदी पार करके १७ जून को कासगंज में पड़ाव डाला। [3] राजा सूरजमल ने मराठा सरदारों को दोआब में पूर्वाधिकारित सहारनपुर, मेरठ, शामली, सिकन्दराबाद, फिरोजाबाद, फफूंद, इटावा आदि परगनों तथा पुराने मराठा थानों से नजीबुद्दौला के अधिकारियों को निकाल कर अधिकार कराने में फौजी सहायता प्रदान की और १५ जुलाई तक मराठों ने रुहेला प्रशासकों को हटा कर दोआब के परगनों पर पुनः अधिकार कर लिया। [4]

१२—सम्राट तथा वजीर के साथ समझौता : दिल्ली पर आक्रमण, जून–अगस्त १७५७ ई०

वजीर इमादुलमुल्क स्वयं सत्ता का भूखा था और वह फर्रूखाबाद के नवाब अहमद खां बंगश के यहां रह कर नजीबुद्दौला से प्रतिकार की ज्वाला में जल रहा था। इधर नजीब के अशिष्ट व्यवहार व आचरण, शाही, राजस्व तथा खालसा परगनों की आय हड़पने के कुकृत्यों के कारण सम्राट को इमादुलमुल्क के पुराने बन्धन

1 — पे० द०, खण्ड २, लेख ७८–७९ (पेशवा के नाम अन्ताजी का पत्र) खण्ड २१, लेख ६१, १२६, खण्ड २७, लेख १६३, १६७, १६८; राजवाडे खण्ड १, लेख १३४, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ६२, ६५।

2 — पे० द०, जि० २७, लेख १४८।

3 — पे० द०, जि० २१, लेख १३०, जि० २, लेख ७६।

4 — ता० आलमगीर सानी, पृ० १२४ ब–१२५ ब, दे० कॉनी, राजवाडे, जि० १ लेख १३४।

हो अच्छे लगने लगे थे। इस प्रकार सम्राट तथा इमाद दोनों ही नजीब को दिल्ली से
निष्कासन के लिये प्रयत्न
पुत्र था और उसने दूर
को सांत्वना-पत्र भेजा
उनसे मिल कर सैनिक
महादेव हिंगणे को दि
नारायण को बापूजी
था। इसी बीच में मर
मराठा विरोधी संघ का [illegible] बापूजी महादेव
हिंगणे अपने [illegible] १५ जून को
सम्राट ने उन [illegible] हजारी पात से
सम्मानित किया।[1] १० जून को जयपुर छावनी से रघुनाथ राव ने नजीब से मराठा परगनों की चौथ तथा बकाया रकम भुगतान की माँग की। इसी समय वजीर इमाद ने अपने दीवान राजा नागरमल को मराठा सरदारों से संधि की शर्तें तय करने के लिये अनूप शहर छावनी में भेजा।[2]

दार्शनिक शाह वली उल्लाह को दुर्रानी की लूट, अमानवीय अत्याचार तथा देश की बरबादी से भारी सन्ताप हुआ और वह अपनी कल्पना का नवीन मुस्लिम राष्ट्र तथा मुस्लिम समाज की स्थापना का स्वप्न साकार नहीं कर सका, फिर भी वह आशावादी था। उसने नजीबुद्दौला को उपदेशात्मक स्वरों में कहा—' उसे निराश नहीं होना चाहिये। निरन्तर प्रयत्नशील होकर एक बार पुनः मराठा तथा अन्य काफिर (हिन्दू) शत्रुओं से संघर्ष के लिए तैयार रहना चाहिये।" उसने अपने पत्र में उसको विजय-लाभ का आश्वासन दिया। उसने लिखा, " 'इससे निराश नहीं होना [illegible] पड़ती है। निरन्तर धैर्य [illegible] आपकी विजय के लिए इबादत कर रहा हूँ और भावी घटनाओं में भाग्य आपका अवश्य साथ देगा।[3]

शाह वली उल्लाह से कठिन समय में नजीबुद्दौला को अति प्रेरणा मिली और उसने मराठों की शर्त को अस्वीकार करके रुहेल खण्ड से अपने सैनिकों को

---

१ — द० कॉनी० पृ० ६४, प० द०, खण्ड २१, लेख १२०।
२ — ता० आलमगीर सानी पृ० १२० अ; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ६२ ६४ ६५।
— सियासी मक्तूबात, पत्र सं० ४, पृ० ५८।

बुलाकर दिल्ली की रक्षा करने का विफल प्रयास किया। फर्रुखाबाद से इमाद मराठा सेनानायकों के पास आ गया और मराठों ने अहमद खां बंगश को साम्राज्य का मीरबख्शी पद प्रदान करने का आश्वासन देकर अपना सहयोगी बना लिया। रघुनाथ राव के दीवान सखाराम बापू तथा दीवान गंगाधर तात्या ने इमाद तथा बंगश के साथ १४ जुलाई को पटपरगंज में पड़ाव डाला। ११ अगस्त को रघुनाथ राव तथा होल्कर भी मराठा सैनिकों के साथ खिज्राबाद पहुँच गये। ३१ अगस्त को रुहेला तथा मराठों में अन्तिम भयंकर युद्ध हुआ। अन्त में नजीब ने मल्हार के सामने समर्पण कर दिया। १ व २ सितम्बर को नजीब के वकील मेघराज तथा अब्दुल अहमद खां (मज्दुद्दौला) ने मल्हारराव के शिविर में पहुँचकर नजीब खां की ओर से शांति-समझौता वार्ता शुरू की और एक चार-सूत्री प्रस्ताव रखा।[1]

१३ – राजा सूरजमल के नजीब खां तथा इमाद के बारे में पारदर्शी सुझाव

राजा सूरजमल ने मराठों के साथ सहायक समझौता करके "अपने साधनों से उनका साथ देकर विवेक का परिचय दिया। इससे उसके साधन सीमित अवश्य हो गये और उसके मुस्लिम पड़ोसी भी शत्रु हो गये थे, फिर भी उसने सहधर्मी मराठों का साथ दिया और उनको अनेक अवसरों पर अपने सामयिक राजनैतिक सुझावों से भी अवगत कराया।" जाट-मराठा समझौता केवल विदेशी आक्रामक के विरुद्ध विशुद्ध आन्तरिक रक्षा कवच था। इससे वास्तव में जाटों को विशेष लाभ नहीं मिला, फिर भी उन्होंने मराठों की आर्थिक तथा फौजी सहायता की। नजीबुद्दौला के साथ चल रही संधि वार्ता के समय उसने हठी, चंचलवृति रघुनाथ राव के सामने अपने सर्वश्रेष्ठ सुझाव भी रखे थे। सूरजमल के प्रस्ताव राष्ट्रहित में अत्यधिक सराहनीय थे। प्रारम्भ में रघुनाथ राव तथा साबाजी सिंधिया ने इन प्रस्तावों की सराहना की, परन्तु मल्हार राव की कुटिल नीति के आगे उनको झुकना पड़ा। यदि मराठा सरदारों ने सूरजमल के प्रस्तावों पर आचरण किया होता, तो हिन्दुस्तान में उनकी व्यवहारिक प्रभु सत्ता दीर्घ काल तक नहीं हिल सकती थी।[2] मराठा सरदारों में व्यक्तिगत कटुता, प्रतिस्पर्धा, विचारों में मतभेद तथा नीतियों में अहंभाव था। उन्होंने सूरजमल के पारदर्शी विचारों की उपेक्षा करके हिन्दुस्तान में अपनी शक्ति, तथा साधनों को कमजोर कर लिया था।

---

१ – पें० द०, जि० २, लेख ७७, खण्ड २७, लेख १६४, १६८, १६९, खण्ड २१ लेख १३६, डे० क्रॉनो०, नूरुद्दीन, नजीबुद्दौला, पृ० ४९-५१ (संधि की शर्तें), इमाद, पृ० ३३।

२ – कानूनगो, पृ० १०८।

नजीबुद्दौला के चरित्र तथा स्वभाव से हिन्दुस्तान के सभी हिन्दू-मुस्लिम अमीर-उमराव तथा मराठा भली प्रकार परिचित थे। वह विश्वासघाती तथा राष्ट्रद्रोही रुहेला सरदार था। दुर्रानी के भारत प्रवेश में रुहेला अफगान सहायक मित्र थे और हिन्दुस्तान में वे शाह दुर्रानी के राजनैतिक गुप्तचर तथा मार्ग-दर्शक थे और उसकी मदद से हिन्दुस्तान में पठान राज्य की कल्पना को साकार रूप देना चाहते थे। यद्यपि जाट-मराठा सहयोग से नवाब सफदर जंग ने इन कबीलों की कमर तोड़ने का प्रयास किया था, किन्तु केन्द्रीय राजनैतिक झंझटों तथा मतभेदों के कारण वह सफल नहीं हो सका। इन कबीलों ने अनेक संघर्षों के बाद एकता तथा उत्साह प्राप्त कर लिया था। हिन्दुस्तान की भावी प्रशासनिक व्यवस्था, राष्ट्रहित तथा राजनैतिक परिवर्तन में इनका राजनैतिक सामाजिक तथा आर्थिक पतन सामयिक था। इससे विदेशी आक्रान्ता को राष्ट्रद्रोहियों की सहायता नहीं मिल सकती थी और भविष्य में अहमद शाह दुर्रानी आक्रमण करने की हिम्मत भी नहीं कर सकता था। इसी से दिल्ली में नजीब के साथ चल रही समझौता वार्ता के समय सूरजमल ने उसके पूर्ण पतन पर अधिक जोर दिया। उसने कहा—"अहमदशाह दुर्रानी को रुहेलों की सहायतार्थ आने का अवसर मिल सके, उससे पूर्व ही रुहेलों के नवीन उपनिवेशों को पूर्णतः कुचल दिया जावे और अफगान आक्रान्ता के मार्ग को बन्द कर दिया जावे।"[१]

रघुनाथ राव, दत्ताजी सिंधिया तथा हिन्दुस्तान की राजनीति से परिचित समस्त मराठा सरदारों ने सूरजमल के इन विचारों का समर्थन किया और उसकी भावना का आदर किया। समझौता वार्ता के समय विट्ठल शिवदेव ने नजीब को उसके सभी मित्र तथा अनुचरों के साथ गिरफ्तार भी कर लिया था। इससे प्रसन्न होकर सम्राट ने शिवदेव को खिलअत तथा आभूषणों से पुरस्कृत किया और उसको उमदतुलमुल्क के विरुद से सम्मानित किया।[२] रघुनाथराव बन्दी नजीब के जीवन का अन्त कर सकता था या दक्षिण की किसी कारागार में रख सकता था, लेकिन उसकी इस उदारता का मराठा राष्ट्र को भारी अपमान सहन करना पड़ा। अब्दुल अहद खां (मज्दुद्दौला) ने नजीब खां की ओर से मल्हार राव के पास पहुंच कर विनम्र

०— माधो सिंह ने भी अपने विचार व्यक्त करते हुये सूरजमल को लिखा—"आप समर्थ हैं। आपने समय पर उचित सलाह देकर काफी चतुराई का काम किया है। यह सब झगड़ा करने का नहीं था।" ड्रा० ख० प०, जि० ६, लेख १०६८ (२ सितम्बर, १७५७ ई०)।

१ – कानूनगो पृ० १०८।

२ – सरदेसाई, खण्ड २, पृ० ५१५।

कर दिया था। उसके साथ वजीर इमाद भी था। रघुनाथ राव २० जून को फर्रुखनगर होकर रेवाडी पहुँच गया था। २४ जून को वजीर ने रेवाडी में मल्हार से विदाई ली। इनके साथ में जाट शासक की ओर से रूपराम का पुत्र सूरतराम कटारा भी चल रहा था। जून के अन्त में रघुनाथ राव व मल्हार राव से विदाई लेकर वह ५ जुलाई को जयपुर पहुँच गया था। उसने कछवाहा दरबार को सभी बातचीतों से अवगत कराकर बिदाई ली। १६ सितम्बर को रघुनाथ राव पूना वापिस लौट गया।[1]

१४ – शाहजादा अलीगौहर (शाहआलम सानी) की सहायता, मई–जून १७५८ ई०

वजीर इमादुल्मुल्क ने अपने अमिट कलकों को चातुर्यपूर्ण आचरणों से धोने का प्रयास किया। उसने अपने शत्रुओं से रक्षा के लिए मराठों की एक सवैतनिक सेना दिल्ली में रख ली थी। उसने नजीब खां को दबाने का विफल प्रयास किया। ३० मार्च को अपने चाचा खानखाना इन्तिजामुद्दौला को बन्दी बना लिया और विरोधी सरदारों को परगनों की व्यवस्था से हटाकर अपने पक्षधरों को वहां नियुक्त किया। अंत में साम्राज्य के उत्तराधिकारी अली गौहर (शाहआलम सानी) पर भी हाथ डाला।

सम्राट आलमगीर सानी का ज्येष्ठ पुत्र तथा उत्तराधिकारी अली गौहर इस समय बीस वर्ष का नवयुवक था और उसमें शासन प्रबन्ध संभालने की योग्यता थी। फरवरी १६, १७५७ ई० को शाह दुर्रानी ने उसको साम्राज्य का नायब (मुख्त्यार) पद[2] प्रदान कर दिया था और सम्राट आलमगीर सानी ने नजीब के परामर्श पर शाहजादा के जेब खर्च के लिए झज्झर, हांसी, चरखी, दादरी, हिसार आदि बलूची महाल प्रदान कर दिये थे।[3] अलीगौहर ने मार्च, १७५८ ई० में अपनी निजी सुरक्षा तथा जागीरों से भू-राजस्व वसूल करने के लिए एक फौज तैयार कर ली थी और झज्झर, रोहतक तथा मेवात के बलूची परगनों से खिराज वसूल करने का प्रयास किया।

---

१ – ता० आलमगीर सानी, पृ० १८३ ब, दे० क्रॉनी०, पृ० १०६, शेजवलकर (हिं०) पृ० २६–२८; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ४५–६३, द० कौ० जि० ७, पृ० ५९८।

२ – ता० आलमगीर सानी, पृ० १०६ ब, दे० क्रॉनी०।

३ – उपरोक्त पृ० १०२ अ, ता० मुजफ्फरी, पृ० १२४, दे० क्रॉनी०।

वजीर इमाद को स्वार्थी आकांक्षा थी कि किसी भी शाहज़ादा को किसी भी प्रान्त की पुनर्विजय से धन, बल तथा यश की प्राप्ति नही हो सके। इससे उसने शाहज़ादा के नाम अनुज्ञा-पत्र भेजकर उसको वापिस बुलवा लिया था। वह बरबाद होकर १६ मार्च को नजफगढ वापिस लौट आया। [१] २६ मार्च को अली गौहर ने विट्ठल शिवदेव से मित्रता कर ली थी। इससे इमाद को यह भय हो गया था कि कही मराठो की सहायता से अली गौहर दिल्ली दुर्ग पर अधिकार नही कर ले। इससे उसने विट्ठल शिवदेव को आश्वासन देकर उससे अलग कर दिया और १० मई को एक शाही अनुज्ञा-पत्र द्वारा नजीब के स्थान पर विट्ठल शिवदेव को सहारनपुर का फौजदार नियुक्त किया। १४ मई को अली गौहर भी वजीर के वकीलो की शपथ तथा वचन प्राप्त करके दिल्ली लौट आया और अली मरदान की हवेली मे रहने लगा। [२]

१६ मई को वजीर के सिपाहियो ने अली गौहर की हवेली पर आक्रमण कर दिया, किन्तु वह भागकर विट्ठल शिवदेव की छावनी मे सुरक्षित पहुँच गया। यहा से शाहज़ादा ने विट्ठल शिवदेव के साथ दक्षिण-पश्चिम म बलूच सरदारों के प्रदेश मे कूंच किया और ३० मई को मिर्जा खा तथा फौजदार मुसावी खा बलूच के अन्य रिश्तेदारो को फर्रुखनगर प्रान्त मे परास्त करके भगा दिया। इसके बाद वह बलूच सरदारो से दो लाख साठ हज़ार रुपया का वचन लेकर जाट राज्य मे स्थित पटौदी पहुँचा।

इस समय सूरजमल स्वय चार-पाच सहस्र सेना के साथ मेवात मे पडाव डाले पडा था और वह वजीर इमादुलमुल्क के इस कठोर व्यवहार को देख रहा था। इधर जवाहर सिंह भी सूरजमल से बिगड रहा था। जब शाहज़ादा विट्ठल शिवदेव के संरक्षण मे पटौडी में था, तब सूरजमल ने अपने पुत्र कुंवर रतन सिंह को अनेक बहुमूल्य भेंट तथा सामान के साथ उसके पास भेजा। ३१ मई को कुवर रतन सिंह ने १०१ रुपया नकद, महमानदारी हेतु ऊंट तथा गाडियो मे लदा आटा, चावल, घी आदि खाद्यान्न तथा बकरिया प्रस्तुत कीं और एक हाथी, सात घोडा तथा पाच थान खीनखाप के नजर किये। इस समाचार को सुनकर वजीर इमादुलमुल्क घबडा गया। उसने १ जून को उबैदुल्ला खा, दरोगा-दीवान-इ-खास को सम्राट के पास भेजकर कहलवाया कि यह उचित ही होगा कि जीनत महल स्वय शाहज़ादा को समझा-बुझाकर शाही दरबार मे लिवा लावे। असहाय सम्राट इमाद की बात को नही टाल सका और उसन उसी दिन जीनत महल को शाहज़ादा के लिए

---

१ - ता० आ० हानो, पृ० १५२ ब-१५४ अ, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १०८।
२ - उपरोक्त, पृ० १५४ ब- १६० अ।

हरियाणा प्रान्त से दिल्ली वापिस लाने के लिए रवाना कर दिया। [१]

वजीर वास्तव मे विट्ठल शिवदेव तथा राजा सूरजमल को अली गौहर से पृथक् करके उसको बन्दी बनाकर अपने नियन्त्रण में रखना चाहता था। सम्भवतः इस आपत्काल मे शाहजादा ने सूरजमल से सहायता की याचना की थी। इमाद को स्पष्टतः यह भय हो गया था कि शायद अली गौहर सूरजमल की सहायता से दिल्ली नगर व दुर्ग पर अधिकार कर ले। इससे २ जून को उसने राजा नागरमल से कहा कि वह सूरजमल से "अली गौहर की सहायता" न करने की प्रार्थना करे। राजा नागरमल शीघ्र ही तैयार हो गया। फिर इसी समय वजीर शीघ्र ही सम्राट के पास गया और उसने सूरजमल के पास राजा नागरमल तथा अन्य सरदारो को भेजने की अनुमति प्राप्त कर ली। तब सम्राट व नवाब वजीर की ओर से राजा नागरमल का एक पुत्र, नवाब जलालुद्दौला तथा राधा किशन खजाची सूरजमल से बातचीत करने तथा अपने साथ उसको लिवाकर ले जाने के लिए जाट दरबार मे पहुँचे। वजीर ने एक जडाऊ सरपेच तथा छ खीनखाप के वस्त्र देकर राजा नागरमल तथा राजा दलेल सिंह को रवाना किया। ३ मई को राजा नागरमल ने सूरजमल से पलवल में भेंट की और उसे वजीर की भावनाओं से अवगत कराया। [२] फिर राजा नागरमल तथा राजा दलेल सिंह ने विट्ठल शिवदेव तथा राजा सूरजमल से एक साथ मिलकर बातचीत की। विट्ठल शिवदेव ने वजीर के दूतो के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया और उसने शाहजादा की मदद से अपना हाथ नही खीचा। [३]

सम्भवतः सूरजमल ने शाहजादा की सहायता न करने का आश्वासन देकर वजीर को सन्तुष्ट कर दिया था, किन्तु उसने स्वयं दिल्ली जाना उचित नही समझा और अपने प्रतिनिधि कुँवर नाहर सिंह को कुछ सैनिको के साथ बरसाना से दिल्ली रवाना कर दिया था और स्वय डीग लौट आया था। ६ जून को कुँवर नाहर सिंह ने खिज्राबाद के समीप डेरा डाला। नागरमल ने वजीर को सूरजमल के साथ हुई बातचीतों से अवगत कराया। ८ जून (शव्वाल, ईदुलफितर) को जीनत महल ने अली गौहर से मुलाकात की। किन्तु उसने दिल्ली लौटने से मना कर दिया। वास्तव मे विट्ठल शिवदेव की मदद से अली गौहर ने १५ जून तक फर्रुखनगर, रेवाडी, नाहरा, दादरी परगनो के गावो से यथा-सम्भव खिराज वसूल किया। रघुनाथ राव के पजाब से लौटने के पर इमाद ने उससे शाहजादा का साथ न देने का आग्रह किया। फलत

---

१ — ता० आ०सा०, पृ० १७५ ब, १७६ अ, पे० द०, जि० २७, लेख २२७।
२ — ता० आलमगीर सानी, पृ० १७६ ब, ड्राफ्ट ख० प०, जि० ६, लेख ६६५।
३ — पे० द०, जि० २१, लेख १६०।

१६ जून को विन्टल शिवदेव दादरी में उससे अलग हो गया। अली गौहर ने भी २० अगस्त को नजीब खा के यहा शरण ली और यहा से जनवरी २, १७५९ ई० (३ जमादि अव्वल) को शुजाउद्दौला के पास अवध पहुँच गया। [१] दिल्ली प्रवास काल म कुंवर नाहर सिंह ने कछवाहा वकील दीवान नन्द लाल से भेंट की और किसी जुम्मेदार कछवाहा सरदार के साथ स्वय कछवाहा दरबार मे उपस्थित होने का विचार व्यक्त किया। [२] साथ ही उसने वजीर व मराठा सरदारो के साथ भी समझौता वार्ता में भाग लिया।

१५ – जवाहर सिंह का विद्रोह, मई–अक्तूबर १७५८ ई०[३]

जवाहर सिंह सूरजमल का ज्येष्ठ पुत्र होने पर भी उसका जन्म, मातृ पक्ष तथा युवराज पद विवादास्पद [४] था। वह अति पराक्रमी, निडर योद्धा होकर भी

---

१ – ता० आ० सानी, पृ० १६२–७, १७५ अ, १८२ अ, दे० फ्रांनी (जून, १७५८ ई०), पे० द०, खण्ड २, लेख ६५, खण्ड २१, लेख १६०, खण्ड २७, लेख २२०, २२४, २२५, सियार, खण्ड ३, पृ० ६०–६१, ता० मुज०, पृ० १६०–२, इमाद, पृ० ४३, ५३; शाकिर, पृ० ६३–४, फ्रेंकलिन, पृ० ६, शाह आलमनामा (गुलाम अली), जि० १, पृ० ६४, ६६।

२ – ड्रा० ख०, जि० ६, लेख ११८७।

३ – कानूनगो ने बिना किसी सन्दर्भ के जवाहर सिंह विद्रोह का समय अहमद शाह दुर्रानी के आक्रमण से पूर्व १७५५ ई० निर्धारित किया है। (जाट्स, पृ० १६४ पा० टि०) परवर्त्ती लेखकों ने इसी का अनुसरण किया है।

४ – मीर गुलाम अली का कथन है कि जवाहर सिंह की मा राजपूत थी। उसके जन्म के बारे में कुछ कहते हैं कि वह मा के पेट मे आया था, कुछ कहते हैं कि वह मा के साथ आया था और कुछ कहते हैं कि वह सूरजमल का पुत्र था। (इमाद, पृ० ५६)।

— कर्नल टॉड का मत है कि जवाहर की मां कूर्म जाति की थी। (खण्ड २, पृ० ३००) अधिकाश लेखकों ने कूर्म (कूरम) शब्द को कूरमी समझकर इतिहास मे भ्रांति पैदा कर दी है। 'कूर्म' कछवाहा जाति का द्योतक है।

सम्भवत 'भारतवीर' (वर्ष १, अक १, पृ० ५) तथा 'जाट जगत' (पृ० १८) पत्रिकाओं ने टॉड का ही अनुकरण किया है। इनमे जवाहर की माता का नाम गगा लिखा है और उसको कछवाहा राजपूतों की पुत्री माना है। इसी प्रकार गगा सिंह (यदुवश, पृ० २५७, २५८) ने लिखा है कि रानी गगा घीमसरी (जिला मथुरा) निवासी बैरीसाल कछवाहा राजपूत की पुत्री थी।

✿

दुराचारी, अदूरदर्शी, विलासी, तथा अतिव्ययी था। मुगल दरबार तथा अभिजात्य वर्ग की शान शौकत, वैभव, मुगलिया तड़क-भड़क, खानपान, रहन-सहन, पहनाव व दरबारी तौर-तरीकों का उस पर प्रबल प्रभाव था।[१] अपने पिता की अपेक्षा उसको प्रपिता-बदन सिंह का सरक्षण तथा प्यार प्राप्त था और बदन सिंह ने अपने पौत्र को अपने पास रख लिया था।[२]

इतिवृतो से ज्ञात होता है कि सूरजमल तथा जवाहर सिंह के आपसी मतभेदों का मूल कारण दो उदीयमान प्रौढ व युवक व्यक्तित्वो की प्रतिकूल मानवीय प्रवृतियां, आर्थिक सम्पन्नता तथा विपन्नता, भिन्न विचार धारा व भावनायें थी।[३] सूरजमल

---

* — वेण्डल का विचार है कि उसकी माता सूरजमल की सह-पत्नी थी और यह गौर (गौड़) वश (जाति) की थी। जवाहर का विवाह भी उसी जाति में हुआ था। (पृ० १०७) दस्तूर कौमवार के अनुसार जवाहर की शादी नवम्बर, १७४३ ई० मे हुई थी। (जि० ७, पृ० ७७६) डा० कानूनगो ने वेण्डल के आधार पर उसकी माता को गोरया राजपूतों की पुत्री मान कर अपुष्ट धारणा व्यक्त की हैं। (जाट्स, पृ० १५६ पा० टि० २)।
— जॉन कोहन का मत है कि जवाहर की माता का नाम गौरी था और वह आम्हों के गौर (गौड़) राजपूत जाति की थी। (पृ० २२ ब) दान साह जवाहर का मौसेरा भाई था। (पृ० २५ ब) दान साह ने अपनी पुत्री का विवाह बुन्देल ख ड के राजपूत परिवार में किया था। (पे० द०, जि० २९, लेख १६५, २०८, नई सिरीज, खण्ड ३ लेख १६०)।
— मराठा अभिलेखो के अनुसार विजैराम जवाहर का साला था और यह परिवार निबगाव (निकट गोवरधन) मे आकर बस गया था। (पे० द०, खण्ड २९, लेख १६५)।
विस्तृत अध्ययन के लिए द्रष्टव्य-लेखक कृत 'पृथ्वींद्र सवाई जवाहर सिंह और उत्तराधिकारी' (१७६३-७६ ई०)।

१ — वेण्डल, पृ० ७३।
— सूरजमल यह नहीं भूल सकता था कि वह एक जमींदार का पुत्र है और जवाहर भी यह नहीं भूल सकता था कि वह एक राजा का पुत्र है। [सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २९६]।
— सोमनाथ कृत 'माधव जयति' ग्रन्थ से भी इस संघर्ष का पता चलता है। लोक कथाओं तथा जयपुर रेकार्ड से भी इसका सम्यक आभास मिलता है।

२ — वेण्डल, पृ० ७३।

३ — उपरोक्त; कानूनगो, पृ० १६०; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २९६।

स्वाभिमानी कुशल योद्धा, चतुर राजनीतिज्ञ तथा कोष्याधिपति होने पर भी कंजूस था। वह राज्य तथा जनता की सुरक्षा, प्रशासन की प्रतिष्ठा, सम्प्रदायों की एकता, कौमी संगठन की प्रबलता के लिए संचित राजकोष का महत्व समझता था। यद्यपि उसकी प्रारम्भिक परिस्थितियां बदल चुकी थी। वह एक प्रभावशाली जमींदार का पुत्र होने पर भी निःसन्देह जन शक्ति प्रधान कृषक राज्य का व्यवहारिक सर्व-सत्ता-सम्पन्न स्वामी, मध्य देश की जनता का, भारतीय संस्कृति व मानवता का रक्षक था। उसने करोडो की सम्पत्ति संकलित कर ली थी और इस धन का राज्य के वैभव, विस्तार तथा दृढता मे उपयोग किया था। उसने अपने मौलिक जातिगत स्वभाव तथा गुणो को नही छोडा और शक्ति, बुद्धि तथा मितव्ययता से संचित राजकोष को राज्य, प्रजा तथा उत्तराधिकारियो की प्रतिष्ठा व सम्पन्नता का द्योतक समझा।

जवाहर सिंह शाही मनसबदार होकर भी सम्पन्न राजा का पुत्र था। बदन सिंह ने उसके शान शौकत के साथ रहने के लिए समुचित व्यवस्था कर दी थी, किन्तु उसका निजी खर्च असीमित था और वह अपने पिता से बार-बार धन की मांग किया करता था। इसके लिए झगडा करता था। वास्तव मे उसको अनुभवहीन, स्वार्थी व चाटुकार युवको की मित्र मण्डली ने घेर लिया था और उसकी दुर्बलताओ से लाभ उठाने के लिए ही मित्र मण्डली ने जाट शासन मे विद्रोह का बीजारोपण कर दिया था। फलतः सूरजमल के राज्यारोहण के तुरन्त बाद ही राज परिवार मे तीन घटक उभर कर राजनैतिक मंच पर आ गये थे।

आन्तरिक घटक

प्रशासन, राज्य नीति मे हस्तक्षेप करने वाले अति शक्तिशाली, सम्पन्न तथा प्रभावी तीन घटक विद्यमान थे। (१) राजा सूरजमल, उसका साला दफ्शी (चौधरी) बलराम नाहरवार घराना, मोहनराम बरसानिया घराना,[1] कुंवर नाहर सिंह, राजा बहादुर सिंह, (वैर), अन्य प्रतिष्ठित चौधरी घराने व सरदार और राज्य के उच्चाधिकारी, (२) कुंवर जवाहर सिंह, रानी गौरी व उसके सम्बन्धी, गौड राजपूत, ठाकुर अजीत सिंह (पथैना), राजा पुहुप सिंह टैनुआ आदि और (३) रानी हंसिया के नेतृत्व में तटस्थ घटक, जिसमें राव रूपराम, ठाकुर सोभाराम (सभाराम, हसनपुर), ठाकुर अखैसिंह, दीवान (चौधरी) जीवा राम बंचारी (सूरजमल का साला) आदि शान्ति प्रिय व्यक्ति शामिल थे। अन्य व्यक्तियो या सरदारो की अपेक्षा नाहर-

---

१ - वेण्डल (बलराम का राजनैतिक प्रभुत्व); कागजात बल्लमगढ जागीर तथा कागजात मोहन राम घराना (लेखक संग्रह); द्रष्टव्य-लेखक कृत 'फौजदार मोहनराम बरसानिया घराना'; प्रो० रा० हि० कां०, खण्ड ८, १९७५, पृ० ४७।

वार तथा बरसानिया घरानो के हाथो मे राज्य की समस्त सैनिक शक्तिया तथा अधिकाश किलेदारियां केन्द्रित थी। अस्तु, इन घरानो से राजघराने से सम्बद्ध अनेक सरदार, भाई, बन्धु, जमींदार व चौधरी परिवार असन्तुष्ट थे।

डीग की व्यवस्था सौपना

'युवक जवाहर मे अपरिमित साहस था। युद्ध करने मे उसको अपार हर्ष होता था और उसमें नेतृत्व शक्ति थी। सद्गुणो के साथ उसम असीमित अधैर्य, अन्ध दुराग्रह था। आत्म सयम तथा दूरदर्शिता का सर्वथा अभाव था।' सूरजमल ने अपने जिद्दी तथा महत्वाकाक्षी पुत्र के जेब खर्च के लिए जिला डीग का कुछ इलाका जागीर मे प्रदान करके डीग शहर का प्रबन्ध सौंप दिया था। इससे जवाहर की आमदनी बढ गई थी। किन्तु उसके निरंकुश. बढते खर्चों की पूर्ति के लिए यह आय भी अपर्याप्त थी। वह नम्रतापूर्वक इन्द्रिय सुख, भोग विलास तथा व्यसनो म फसता गया और अति मदिरापान से उसका मानसिक सन्तुलन बिगडने लगा।[१] डीग म उसने वैभवशाली दरबार स्थापित कर लिया और निजी फौज का गठन किया। किन्तु सीमित आर्थिक साधनों के कारण दरबार व सेना को व्यवस्थित रखने मे असफल रहा।

गन्ना बेगम का घेराव

१७५६ ई० मे नवाब शुजाउद्दौला ने वजीर इमादुल्मुल्क से समझौता वार्ता करने के लिए अली कुली खा के नेतृत्व मे एक प्रतिनिधि मडल दिल्ली भेजा था, जहा ३१ मार्च को अली कुली खां ने एक प्रतिष्ठित कवियित्री, जिसने अपना जीवन नर्तकी तथा गायिका से प्रारम्भ किया था, के साथ विवाह कर लिया था। इनकी पुत्री गन्ना बेगम मे अपने माता-पिता की काव्य-प्रतिभा, कलात्मक सस्कृति और माता के समान सौन्दर्य था। देश के बडे-बडे अमीर-उमराव उसके रूप-सौन्दर्य के प्रति मोहित थे। नवाब शुजाउद्दौला तथा इमादुल्मुल्क दोनो ही उससे निकाह करना चाहते थे।

अली कुली खा की मृत्यु के बाद शुजा की ओर से शेर अन्दाज खां ने गन्ना बेगम तथा उसकी माता के सामने निकाह का प्रस्ताव रखा। इसको स्वीकार करके शेर अन्दाज खा के साथ माता तथा उसकी पुत्री गन्ना बेगम ने दिल्ली से आगरा होकर लखनऊ की ओर प्रस्थान किया। जब वे आगरा पहुँचे, जवाहर सिंह उसके रूप-सौन्दर्य तथा प्रतिभा को सुनकर आसक्त हो उठा और उसने गन्ना को अपने रनिवास म रखने के विचार से किसी भी प्रकार उसको उठा कर लाने के लिए अपने साथियो को आगरा भेजा। कटरा वजीर खा मे जाट अश्वारोहियो ने इस कारवा

---

१ – माधव जयति, पृ० ४ अ, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २६६।

को घेर लिया, किन्तु शेर अन्दाज खा के सेवको से उनको संघर्ष करना पड़ा। फिर यह कारवा अपनी युक्ति तथा प्रयास से जाट सवारो के चंगुल से बचने मे सफल हो गया और मा–बेटी दोनो ही बचकर फर्रुखाबाद के नवाब अहमद खा बंगश की शरण मे पहुँचने मे सफल हो गई। यह समाचार मिलने पर इमाद ने अहमद खा पर गन्ना बेगम को अपने हरम मे भेजने का दबाव डाला। अहमद खा ने वजीर की राजनैतिक अनुकम्पा वरण करने में सफलता प्राप्त कर ली और गन्ना बेगम ने इमाद के साथ शादी कर ली।[1]

ठाकुर अजीत सिंह का पलायन, नवम्बर १७५६ ई०

राज्य मे बलराम घटक जवाहर सिंह का एक उत्तराधिकारी के अनुरूप सम्मान नही करता था। इससे जवाहर को कुछ सन्देह हो गया था। गन्ना बेगम काण्ड राजनैतिक घटना पर प्रभाव डालने का एक प्रश्न चिह्न था। इसी समय ठाकुर अजीत सिंह (पर्थना) के नेतृत्व मे गठित युवक घटक ने चौधरी बलराम तथा मोहन राम के विरुद्ध जवाहर की भावनाओं को उभारने का प्रयास किया। उन्होंने स्पष्ट घोषणा कर दी थी कि 'बलराम तथा उसके अनुजीवी जवाहर की शक्ति के विरोधी हैं और वे उसके पिताजी (दाऊजी) की भावना तथा विचारो को उसके विरुद्ध उभार रहे हैं।'' सूरजमल ने अपने पुत्र को कई बार समझाया व धमकाया। असन्तुष्ट व चाटुकार युवक मण्डली से सचेत किया। यद्यपि जवाहर की सफलता, मानसिक चेतना व सम्मान के लिए सूरजमल के साधु वचन कल्याण पथ मे साधक थे, किन्तु जवाहर के मानसिक असन्तुलन ने मनमुटाव की खाई खोदने मे योग दिया।

अस्तु, सूरजमल को कठोर कदम उठाना पड़ा। अन्यत्र रहने वाले युवको के परिवारो को यातनायें देना शुरु किया और उनकी जमीन व जागीरो को खालसा कर लिया। कुछ परिवारो को सैनिक नियन्त्रण मे रखा गया और उनसे उनके पुत्रो तथा पतियो पर जवाहर की सेवा त्यागने का दबाव डलवाया। फलत ठाकुर अजीतसिंह (पर्थना) अलीपुर चला गया और यहा से अपने परिवार मी सवार व पैदलो सहित खानजादा धीरज सिंह के यहा शरण ली। जाट राज्य मे कुछ समय के लिए शान्ति हो गई।

दिसम्बर २६, १७५६ ई० को खानजादा ने कछवाहा दरबार को लिखा—''अजीत आपकी चाकरी मे आना चाहता है। उसके साथ काठेड के अन्य कुछ व्यक्ति भी हैं। आप अच्छे सवारो व सिपाहियो की फौज रखना चाहते हैं। इससे इनको अपनी सेना मे रखने से अनेक लाभ होंगे।'' फलत दरबार की स्वीकृति मिलने पर ३ जनवरी को अजीत ने किशोर सिंह जाट (महुआ) के साथ जयपुर

---

१ – ता० मुजफ्फरी, पृ० १३१–२।

पहुँचकर माधोसिंह से भेंट की। कुछ समय बाद उसको ग्राम मालाघाटन (परगना उदेही) की जागीर प्रदान की गई और सितम्बर २, १७५६ ई० को वहा गढी निमाण कराने व बस्ती बसाने की स्वीकृति दे दी गई। साथ ही क्षेत्रीय रैय्यत की सुरक्षा व खुशहाली का भी निर्देश दिया गया।[1]

चाचा सोभाराम की सहायता

बदन सिंह ने अपने पुत्र सोभाराम को हसनपुर गाव की जागीर प्रदान कर दी थी, किन्तु वह सपरिवार डीग तथा कुम्हेर मे रहता था। परगना कुम्हेर का राजस्व प्रबन्ध सोभाराम के हाथो मे और दुर्ग की रक्षा का भार व ड्योढियो की देखभाल सूरजमल के हाथों में थी। सोभाराम ने नमक का व्यापार करके पर्याप्त धन कमाया और राज्य की व्यापारिक मण्डियो पर उसकी धाक थी। स्वार्थी चाटुकार युवको ने जवाहर सिंह को अपने पिता के विरुद्ध भडकाते हुए कहा— "आपके पिता आपके सुख-ऐश्वर्य तथा व्यक्तिवादी स्वतन्त्रता मे बाधक हैं।" पिता-पुत्र मे काफी वाद-विवाद भी हुआ। सूरजमल ने एक बार आवेश मे आकर अपने पुत्र को फटकारा और कहा— "चले जाओ, अपना मुंख फिर मत दिखलाना।" क्रोधित जवाहर अपने पिता के पास से चला गया और आवश्यकता पडने पर उसने अपने चाचा सोभाराम से रुपया देने का आग्रह किया। ठाकुर सोभाराम ने जवाहर की विनय पर उसके जेब-खर्च के लिए सात लाख रुपया अवश्य दे दिया, किन्तु इससे दोनो भाई सूरजमल तथा सोभाराम मे काफी कटुता बढ गई। सोभाराम ने जेब खर्च की बात को छुपाकर कहा—"मैंने जवाहर के पास अपने पुत्रो को भेजने के अलावा अन्य किसी प्रकार का सहयोग नहीं किया है। भाई का भाई की सहायता करना ही धर्म है। आगे आपकी जैसी भी आज्ञा होगी, पालन करुंगा।"[2]

आन्तरिक तनाव

मई, १७५८ ई० के प्रारम्भ मे पिता-पुत्र मे काफी तनाव बढ गया था। जवाहर की उपेक्षा करके सूरजमल ने अब अन्य पुत्रो मुख्यत. कुंवर नाहर सिंह को राजकाज की व्यवस्था मे प्रतिनिधित्व करने का अवसर दिया। इस बार जवाहर ने अपने स्वार्थी युवको के परामर्श पर अपने आपको डीग का स्वतन्त्र शासक घोषित करने का विचार किया और उसने बन्दूकची सवार व पैदलो की सख्या बढाकर डीग नगर की प्राचीरो पर तोपखाना व्यवस्थित कर लिया। यह देखकर सूरजमल ने अपने पुत्र को समझाने के लिए अनेक समझदार व्यक्तियों को भेजा, किन्तु दुराग्रही

---

१ – ड्रा० ख० प०, बण्डल ५, लेख ८७०; बण्डल ७, लेख १४१६; द० कौ०, जि० ७, पृ० ८०८, ३२५।

२ – दीक्षित, पृ० ६८-६।

ने किसी की सलाह नहीं मानी।

ज्येष्ठ पुत्र का विद्रोह राज्य म भयकर बारूद का काम करता। राव चूडामन तथा उसके पुत्र मोहकम की जिद तथा विवाद से बदन सिंह ने लाभ उठाया था। अस्तु, यह इतिहास की पुनरावृत्ति भी हो सकती थी। इसमे सूरज मल ने पारदर्शिता व समझदारी से काम लिया और पुन एक बार जवाहर की युवक मण्डली को कमजोर करने के लिए प्रभावी कदम उठाये। इसी समय उसने राजा पुहुप सिंह के विरुद्ध अपनी सेनायें भेज दी।

राजा पुहुप सिंह का दमन, अगस्त-सितम्बर, १७५८ ई०

राजा पहुप सिंह (पूफ सिंह) क पास मुरसान की एक स्वतन्त्र जागीर, सेना तथा सुदृढ दुर्ग था। युवक राजा अति महत्वाकांक्षी सरदार था और इस बार उसने गृह कलह को उकसाने मे जवाहर को अपना समर्थन दिया था। मई, १७५८ ई० मे कृष्ण राव बल्लाल ने रघुनाथ राव को अपने पत्र में लिखा—

"सूरजमल दिल्ली से ८० किमी० दूर मेवात (मेरठ ?) प्रान्त मे पहुच गया है और अपने मुल्क की व्यवस्था करने म व्यस्त है। उसके साथ चार-पाच सहस्र सना है। दिल्ली मे काफी अराजकता फैल रही है और वहा सदिग्ध स्थिति बनी हुई है। सूरजमल का पुत्र जवाहर सिंह उससे बिगड रहा है।" [1]

सूरजमल मेवात म पडाव डालकर अली गौहर, विट्ठल शिवदेव तथा इमाद की गतिविधियो को देख रहा था, तब जवाहर उससे बिगड रहा था। सम्भवत पुहुप सिंह दोआब परगनो पर अधिकार करके स्वतन्त्र ठेनुआ राज्य की नीव डालने के लिए प्रयत्नशील था। अत सूरजमल ने मराठा सरदारो के प्रस्थान के बाद मुरसान दुग पर आक्रमण करने के लिए सेनायें भेजी। डेढ माह तक मुरसान का घेरा रहा। सघष के बाद पुहुप सिंह ने समर्पण कर दिया और मुरसान की गढी को खाली करके सासनी चला गया। [2] [illegible] ोर

---

१ – पे० द०, खण्ड २७, लेख २२६।

२ – सरकार का मत है कि सूरजमल [illegible] मुरसान क स्वतन्त्र जाट शासक का दमन किया था। (मुगल, खड २, पृ० ३००) जबकि बलदेव सिंह ने इस घटना का उल्लख १७५८ ई० मे किया है।

— देशराज का यह विचार पूणत अपुष्ट है कि सूरजमल ने पुहुप सिंह की शक्ति को अनेक बार कुचला था। (पृ० ५६०) इसी प्रकार वाक्या राज, (खण्ड २, पृ० ६५) मे उल्लेख मिलता है कि सूरजमल ने भूरेसिंह का दमन किया था। भूरेसिंह की मृत्यु १७५४ ई० मे होने से यह कथन असत्य है।

ठेनुआ घराने ने अधीनस्थ के रूप में सेवा स्वीकार कर ली।

पीली पोखर युद्ध, अक्तूबर, १७५८ ई०

पीली पोखर युद्ध के बारे में एक मात्र फादर वेण्डल ने लिखा है कि "यद्यपि यह सत्य है कि जवाहर सिंह अपनी आंतरिक भावना से इस निन्दनीय कृत्य की की ओर अग्रसर हुआ, फिर भी उन सलाहकारों का भी कुछ दोष था जो परम हितैषी बन कर उसको घेरे रहते थे। यह भी निश्चित बात है कि सूरजमल की उदासीनता ने पुत्र की भावनाओं को उभारा। अपने पिता की कृपणता के कारण पुत्र को अनेक अवसरों पर अपने साथियों से बिछुड़ना पड़ा और वह "जेब-खर्च" की कमी से हीनता की भावना से ग्रसित होने लगा था। इसके अलावा वे व्यक्ति भी दोषी हैं जो राजकोष से उसको जेब-खर्च देने में शिथिलता करते थे। इन्हीं कारणों से वह अन्तिम संघर्ष के लिए विवश हो गया था।" [१]

जवाहर ने अपने पिता के पास अनेक अनुरोधात्मक पत्र भेजे, किन्तु उसने अपने पिता की नीति के सामने समर्पण नहीं किया। हसिया अपने दत्तक पुत्र की वीरता तथा साहस पर मुग्ध थी और उसने अपने पति से उसके प्राणों की भीख मांगी। उसने नम्रतापूर्वक सैनिक कार्यवाही को भी स्थगित करने की प्रार्थना की, किन्तु राजद्रोही को दबाना आवश्यक था।

अस्तु, सूरजमल तथा बख्शी (चौधरी) बलराम नाहरवार ने डीग नगर-प्राचीर का घेरा डाल दिया। जवाहर स्वयं अपनी टुकड़ी के साथ अऊ द्वार के बाहर मैदान में निकल आया और उसने अपने पिता की सेना पर आक्रमण कर दिया। पीली पोखर मैदान में एक भयंकर युद्ध हुआ। जवाहर के कुछ सरदार रणक्षेत्र में काम रहे और उसके अग्र पंक्ति के सैनिक मैदान छोड़कर भाग गये। जहां घमासान युद्ध चल रहा था, वहां जवाहर स्वयं घुस गया और उसने अनेक सैनिकों को धराशायी किया। उसके शरीर पर तलवार व बर्छी के तीन घाव तथा पैर में बन्दूक की गोली लगी और वह घायल होकर रणक्षेत्र में ही गिर पड़ा। इस हृदय विदारक घटना को देखकर सूरजमल के दिल में पुत्र-स्नेह जाग उठा और उसने अपने साहसी पुत्र को खोने की अपेक्षा डीग नगर का अधिकार छोड़ना उचित समझा। वह शीघ्र ही सैनिक दलों को चीरकर आगे बढ़ा और उसने घायल पुत्र को देखा। जवाहर ने अपना मुख ढक कर अपने पिता से कहा— "यह भी मैंने आपकी आज्ञानुसार ही किया है।" सूरजमल ने जवाहर को डीग दुर्ग में भेज दिया, जहां महलों में उसका उपचार किया गया। उसका जीवन अवश्य बच गया किन्तु तीन जख्मों से उसकी

---

१ — वेण्डल, पृ० ७३, कानूनगो, पृ० १६४।

दाई भुजा कमजोर हो गई और कुछ दिन बाद उसमे लच पड गई। पैर मे गोली लगने से वह सदैव के लिये लगडा हो गया।[1]

इस प्रकार अक्तूबर, १७५८ के अन्त मे जवाहर का आन्तरिक विद्रोह व गृह कलह समाप्त हो गया, परन्तु जवाहर घायल अवस्था मे अलवर की ओर चला गया। सूरजमल ने राव हेमराज के माध्यम से जयपुर दरबार को लिखा कि जवाहर को समझा कर मेरे पास भेजने की व्यवस्था करें। २ नवम्बर को कछवाहा दरबार ने देवी सिंह खगारोत को निर्देश दिया कि वह जवाहर को समझाये, ताकि वह स्वस्थ होकर अपने पिताजी के पास लौट जावे।[2] परन्तु इस प्रयास में सफलता नही मिल सकी।

अन्त मे रानी हसिया तथा सोभाराम के समझाने पर जवाहर ने अपना हठ छोड दिया। परन्तु आत्मीयता का अभाव जीवन भर बना रहा। अपने पिता के जीवन काल में वह जाट राजधानी मे नहीं लौट सका और स्वय अपने भाग्य निर्माण के प्रयासो में मेवात में इधर–उधर भटकता रहा।

१६ – जनकोजी सिंधिया का आगमन . सूरजमल को निमन्त्रण, अगस्त–नवम्बर, १७५८ ई०

जून में रघुनाथ राव व मल्हार राव ने पूर्वी राजस्थान से मालवा होकर दक्षिण की ओर प्रस्थान किया। इसी समय मई, १७५८ ई० मे दत्ताजी सिंधिया पूना से उत्तर की ओर चल दिया था। जुलाई में रघुनाथ राव व दत्ताजी मे उज्जैन में मुलाकात हुई और दोनो ने हिन्दुस्तान के प्रबन्ध के बारे मे विचार विमर्ष किया। होल्कर की अदूरदर्शी नीतियो के कारण नवाब वजीर इमादुलमुल्क, नजीब खा, राजा सूरजमल व शुजाउद्दौला मराठा विरोधी नीति की ओर अग्रसर होने लगे थे और इमाद ने राजधानी पर एकाधिकार जमाने का प्रयास किया था। नजीब खा उसका दत्तक पुत्र बन गया था। इस भारी भूल से मराठो को दोआब मे अति क्षति उठानी पडी थी।

---

१ – वेण्डल, कानूनगो, पृ० १६३–४।
— वेण्डल लिखता है कि बदन सिंह ने जवाहर को भूमिगत खजाने की सूची बनाकर दी थी। जब जवाहर के जख्म ला–इलाज लगने लगे, तब सूरजमल ने यह कागज का टुकडा उसके हवाले करने का अनुरोध किया। (पृ० ७३) वेण्डल के इस कथन को अधिकाश इतिहासकारों ने असत्य माना है और यह काल्पनिक विवरण है।

२ – ड्रा० ख०, जि० ६, लेख ११६८ (कार्तिक सुदि १ स० १८१५)।

अली गौहर ने रुहेल खण्ड में संरक्षण प्राप्त करने के बाद हाफिज़ रहमत खा, डुण्डी खा आदि रुहेला सरदारों, राजा सूरजमल, माधो सिंह तथा शुजा के पास अपनी सहायता तथा सम्राट को इमाद तथा मराठों के चंगुल से मुक्त कराने के लिए पत्र लिखे। किन्तु मराठो से सीधा सघर्ष छिड़ने के भय से इन सरदारो ने अली गौहर की योजना को स्वीकार नही किया।[१]

जनकोजी सिंधिया के जयपुर राज्य मे प्रवेश[२] करने के बाद ३० सितम्बर को सवाई माधो सिंह ने सूरजमल को दशहरा (१२ अक्तूबर) पर आमन्त्रित किया और उसने इस आमन्त्रण को स्वीकार भी कर लिया था, किन्तु जवाहर के विद्रोह के कारण सूरजमल ने स्वय जयपुर जाने का कार्यक्रम निरस्त करके अपने पुत्र कुंवर नवल सिंह को राव हेमराज कटारा के साथ नाना विषयो पर वार्ता करने डीग से जयपुर रवाना किया। उसके साथ मे अनदराम, मामा दानीराम (थानेदार हरसोली) और उसका धाभाई देवी सिंह भी शामिल था। ३ नवम्बर को नवल सिंह ने माधो सिंह से भेंट की और सभी स्थितियो व विचारो से माधो सिंह को अवगत कराया। ४ नवम्बर को माधो सिंह ने नवल सिंह को विदा मे पूर्ण साज सामान के साथ एक घोडा, सरपेच व सोने के कडो की जोडी प्रदान की और सूरजमल के लिए दशहरा का सिरोपाव भेजा।[३]

१३ दिसम्बर को माधो सिंह ने दीवान गज सिंह चौहान के नाम और १८ दिसम्बर को सूरजमल व हेमराज के नाम पत्र भेजकर लिखा कि चौधरी कुशल सिंह, बाल किसन साहूकार को समाचारो से साथ भेजा जा रहा है और उन्होंने सयुक्त रूप से भावी योजना पर विचार किया। इसके बाद माधो सिंह ने २१ दिसम्बर को भूप सिंह कल्याणोत (लूणहरा) व श्री किसन को समाचारो के साथ रवाना किया। इधर ६ जनवरी को सूरजमल का उत्तर लेकर साडिया सवार जयपुर पहुँचा।[४] इस प्रकार मराठा विरोधी सघ व मराठा नीति पर विचार करने मे तत्परता से कायक्रम बनाया गया।

---

१ – फ्रेंकलिन, पृ० ६।

२ – पे० द०, खड २, लेख ६५–९६, १०१; खण्ड २७, लेख २३०, २३६; फलके, लेख १६६, २१२।

३ – ड्राफ्ट ख० प०, जि० ६, लेख ६६५, १२५७; द० कौ०, जि० ७, पृ० ४०३, ३०८, ३६७, ५८२, ५७०।

४ – ड्राफ्ट ख० प०, जि० ६, लेख, १२५७, ११६१, १२५८; द० कौ०, जि० ७, पृ० ५८५।

दत्ताजी सिंधिया व इमाद मे समझौता

दिसम्बर २६, १७५८ ई० को दत्ताजी सिंधिया अपने भतीजे जनकोजी सिंधिया के साथ नजफगढ़ पहुँच गया था। उसके हिन्दुस्तान मे आते ही मराठा नीति में परिवर्तन होने लगा। सिंधिया घराना स्पष्ट भाषी था। उनके स्वभाव मे शत्रु तथा मित्र के साथ कृत्रिम वाणी तथा धोखा देने का अभाव था। वे यथा सम्भव पेशवा की आज्ञाओं का कठोरता के साथ पालन करना अपना धर्म मानते थे और विश्वासपात्र होकर कठिनाई से मुख मोडना भी पसन्द नही करते थे। दत्ताजी सिंधिया का स्वभाव कठोर था। उसमे अधीरता तथा जल्दबाजी थी और उसको मल्हार राव के दत्तक पुत्र नजीब खा को कुचलने का आदेश था। इस समय होल्कर के प्रत्येक मित्र पर सन्देह किया जाने लगा था और यह अनुमान लगाया गया कि उसके प्रबन्ध की कमियों के कारण ही मराठो को खडनी की रकम नही मिल पाती है।[1] फलतः दत्ताजी ने दिल्ली पहुँचने से पूर्व ही वजीर इमादुलमुल्क के पास पत्र भेजा कि पेशवा ने मल्हार राव के स्थान पर मुझको आगरा का राज्यपाल नियुक्त कर दिया है। अब स आज्ञ को मुझे खडनी की रकम का भुगतान करना चाहिये। अन्त में दिल्ली स्थित मराठा सरदारो के हस्तक्षेप से जनवरी ३०, १७५९ ई० को उभय पक्षो मे समझौता हो गया और १ फरवरी को दत्ताजी ने पजाब की ओर प्रस्थान कर दिया।[2]

१७ – मराठा विरोधी सघ : सूरमल का सम्मान, फरवरी–अप्रेल, १७५९ ई०

राजस्थान मे सभी राजपूत शासक मराठो की चौथ तथा खडनी की माग से व्याकुल थे और वहा सवाई माधो सिंह के नेतृत्व में बार-बार 'मराठा विरोधी संयुक्त रक्षा संघ' बन रहे थे। फरवरी मे सिंधिया सरदार दिल्ली से पजाब की ओर चले गये थे, तब राजपूत तथा अन्य शासक निश्चित थे। सूरजमल ने माधोसिंह के प्रस्तावो पर विचार करने के लिए जयपुर जाने का कार्यक्रम निर्धारित कर लिया था। तब महाराजा विजय सिंह राठौड ने माधो सिंह को अपने खरीता में लिखा— "दखनी दिन प्रतिदिन जोर पकडते जा रहे हैं। इसका उपाय सोचना चाहिये।" १० फरवरी को माधो सिंह ने उसको लिखा— "जनकोजी ने भी लाहौर की ओर प्रस्थान कर दिया है। यह फुरसत का समय है। सूरजमल ने भी यहा आने की सूचना दी है।

---

१ – ता० आ० साकी, पृ० १९२–८; एनि० पर्रेन, १६६, १६७; ..रुद्दीन, पृ० ३० अ, शेजवलकर (हि०) पृ० ५७, सरकार (मुगल), खण्ड -, पृ० १३३।

२ – ता० आ० सा॰, पृ० १९७ ब–१९८ अ।

हम सभी यहा मिल कर उपाय सोचेंगे। पीछे कठिनाई होगी।" [१]

वजीर इमादुल्मुल्क भी सूरजमल तथा राजपूत नरेशो के निर्णय के प्रति उत्सुक था, किन्तु वह मराठो से संघर्ष की अपेक्षा कछवाहा व मराठो के बीच में सहयोगी समझौता कराना चाहता था। वह मराठो के साथ मिल कर नजीब खा व शुजा को दबाना चाहता था। ठीक इसी समय शाहजादा अली गौहर (शाह आलम सानी) शुजा को छोडकर पटना की ओर बढ़ रहा था, तब नवाब वजीर को भारी चिन्ता हुई और उसके प्रस्ताव पर सम्राट ने शाहजादा हिदायत बख्श को पटना का राज्य-पाल (मार्च, १७५६ ई०) नियुक्त करके वहा जाने की आज्ञा प्रदान कर दी। इमाद की योजना थी कि शाहजादा सीधा आगरा जावे और वहा से राजा सूरजमल, जिसके पास अपार द्रव्य व बहुत बडी सेना थी, की सहायता लेकर पटना की ओर कूच करे। इससे मार्च मे इमाद ने दिल्ली से जाट वकील राजा मोहन सिंह सूर्यद्विज तथा नागरमल के वकील मिश्र सुजान को सूरजमल के पास शाहजादा हिदायत बख्श, कछवाहा-मराठा मित्रता तथा दोआब म नजीब खा के विरुद्ध उसका सहयोग आदि अनेक जटिल प्रश्नो पर बातचीत करने के लिए भरतपुर भेजा। उन दोनो ने राजा सूरजमल तथा राव रूपराम कटारा से बातचीत की। इस बार दो लाख रुपया की हुण्डी देने की शर्त पर सूरजमल को सिकन्दराबाद की सनद भेजने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया। सूरजमल को सिकन्दराबाद की व्यवस्था सौप दी गई। किन्तु सूरजमल के जयपुर चले जाने के कारण वजीर हिदायत बख्श को आगरा भेजने में विफल रहा और १६ मार्च को शाहजादा का दिल्ली से सम्भावित प्रस्थान भी स्थगित हो गया। [२]

सूरजमल-माधो सिंह मिलन, ब्रजेन्द्र बहादुर राजा का विरुद

सवाई माधो सिंह ने सूरजमल को अपने साथ लिवाकर लाने के लिए भट राजा सदा शिव तथा भोपत राम चारण को जयपुर से डीग रवाना किया। इधर इमाद के साथ दोआब परगनो का समझौता करने के बाद मार्च के द्वितीय सप्ताह में सूरजमल ने जयपुर की ओर प्रस्थान कर दिया था। इस समय राजा तारा सिंह, राजा मोहन सिंह सूर्यद्विज, मिश्र सुजान, मीर इकराम, भवानी राम, खुस्याल (खुशाल) सिंह, हेमराज कटारा आदि प्रमुख वकील व राजनीतिज्ञ भी उसके साथ थे। भट राजा ने उनकी परगना बहाओ मे अगवानी की। २४ मार्च को सभी जयपुर पहुँच

---

१ – ड्रा० ख०, जि० ६, लेख १०७।

२ – ता० आ० सानी, पृ० २०२ ब, राजवाडे, खड ६, लेख ३६८ (१० मार्च, महादेव हिंगणे का पत्र), ड्रा० ख० प०, जि० ६, लेख ११२७।

गये और सूरजमल ने लूणकरण नाटानी के बाग में अपना डेरा डाला। सूरजमल-माधोसिंह की वार्ता के निष्कर्ष की दिल्ली में भारी उत्सुकता बनी हुई थी और इस वार्ता के दूरगामी परिणाम निकलने की सम्भावना व्यक्त की गई थी। इस बार सूरजमल जयपुर में २० दिन (२४ मार्च – १२ अप्रेल) तक रुका और माधो सिंह ने उसको 'ब्रजेन्द्र बहादुर राजा' का विरुद प्रदान करके सम्मानित किया। दस्तूर कौमवार में इस भेंट का विवरण [1] निम्न प्रकार मिलता है—

"मार्च २४, १७५६ ई० (चैत्र वदि १०, सं० १८१५), स्थान जयपुरः श्री जी ने जसवन्त सिंह राजावत, जोध सिंह नाथावत, सूरत राम स्योब्रह्मपोत, चांद सिंह कुम्भाणी, दलेल सिंह राजावत को सूरजमल की पेशवाई के लिए रवाना किया और स्वयं दरबार खास में आकर विराजे। लूणकरण नाटानी के बाग से सूरजमल सवार होकर आया और फकीर के तकिया पर कछवाहा पंच सरदारों से गले मिला। फिर पंच सरदार आगे आगे चले और सूरजमल व भट राजा सदाशिव हाथी पर आसपास बैठे। उनके पीछे हेमराज कटारा खवासी में सवार हुआ। स्योपोल होकर सभी राज चौक में हाथी से उतरे और ड्योढ़ी खास मार्ग से अन्दर पहुँचे। सभा निवास की सीढ़ियों से चढ़कर चौक में खड़े होकर सूरजमल ने तस्लीमात की, तब श्री जी ने उसको ताजीम दी। फिर आगे बढ़कर तस्लीमात की और नौ मोहर नजर करके झुककर नमस्कार किया। श्री जी ने अपने हाथों से उठाकर नजर स्वीकार की और सूरजमल को चांदनी के अगले वास के समीप अपनी बाईं ओर और भट राजा सदा शिव को दाईं ओर आसीन किया। फिर माधो सिंह ने सूरजमल को विरुद प्रदान करने की आज्ञा दी। तब राजा हरसाय ने सूरजमल को 'ब्रजेन्द्र बहादुर राजा सूरजमल' का विरुद [2] प्रदान करने की घोषणा की। खरीता नजर किया और श्री जी ने जरी का खासगी सिरोपाव भेंट किया। फिर माधो सिंह ने अपने हाथ से सूरजमल के खासगी चीरा बांधा और जरी का फरुखशाही सिरोपाव पहनाया। उसके खस व इत्र लगाया और बीड़ा प्रदान करके सम्मानित किया। तब उसको सभा भवन से विदाई दी गई। २५ मार्च को उसकी महमानी की गई। २६ मार्च को सूरजमल माधो सिंह से बातचीत करने पहुँचा, तब माधो सिंह ने उसको मोती के दो नग भेंट किये।

"२७ मार्च को श्री जी सवार होकर राजचौक, हथरई के समीप से निकल कर सूरजमल से मिलने लूणकरण नाटानी के बाग में पधारे। सूरजमल ने बाग के

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५७०–८; ड्रा० ख० प०, जि० ६, लेख ११२७, (२१ मार्च); ता० आ० सानी, पृ० २०२ अ (सूरजमल का जयपुर पधारना)।
२ – ड्रा० खरीता, जि० ६, लेख, १२५६ (२४ मार्च)।

प्रवेश द्वार पर पैरो मे झुक कर उनका अभिवदन किया व अगवानी की। फिर श्री जी अन्दर बाग मे पधारे और मसनद पर बिराजे। सूरजमल ने मोहर व रुपया न्यौछावर किया और नजर की। चार घडी वहा रुक कर माधो सिह सवार होकर महलों मे लौट आया।"

१३ मार्च को सूरजमल तथा अन्यो को गणगौर के सिरोपाव प्रदान किये गये। ६ अप्रेल को भट राजा सदा शिव के माध्यम से विदा मे एक घोडा तथा २४ अन्य वस्तुयें प्रदान की गई। १० अप्रेल को सूरजमल विदा होने पहुँचा, तब उसको जडाऊ सरपेच तथा पन्द्रह सिरोपाव और चौधरी कुशल सिह व बाल किसन साहूकार के माध्यम मे सूरजमल के सेवको को चौदह सिरोपाव डेरो पर भेजे गये। ११ अप्रेल को एक चीता मय पिंजड़ा तथा १२ अप्रेल को राम प्रसाद नामक हाथी भेजकर सम्मानित किया गया।[१]

सूरजमल वास्तव मे राज्य विस्तार की योजना मे व्यस्त था और वह मराठों से सघर्ष नही करना चाहता था, किन्तु इमाद की अपेक्षा शुजा को वजीर पद प्रदान करने का इच्छुक था। अभिलेखो के अभाव मे यह नही कहा जा सकता कि इस समय दोनो सरदारो ने क्या निर्णय लिये ? फिर भी डा० सरकार का अनुमान है— "सम्भवतः दोनों ने मिल कर संयुक्त रक्षा सघ बनाया।"[२] परन्तु यह स्थिति अधिक समय तक नहीं रह सकी।

सूरजमल जब मार्ग मे ही था, तभी माधो सिह ने राव हेमराज के पुत्र हर-सुख को जयपुर बुलाया। १३ अप्रेल को उसे रवाना किया गया। जबकि ५ अप्रेल को कछवाहा दरबार ने राजा हरी सिंह के पास चिम्ना देव सिंह को दीवान नंद लाल व राजा हरसाय के साथ ससैन्य रवाना करने के आदेश भेजे।[३]

१८ — दत्ताजी सिंधिया का शुकरताल अभियान मई–नवम्बर, १७५६ ई०

पेशवा आर्थिक सकट से घिर रहा था और उत्तर भारत से उसको आर्थिक लाभ नही मिल सका था। इससे पेशवा ने २३ फरवरी को रामाजी अनन्त के नाम अपने पत्र में लिखा— *"वजीर (इमादुल्मुल्क) के दिल मे स्वामि भक्ति या कृतज्ञता* नही है। यदि शुजाउद्दौला को वजीर पद दे दिया जावे, तो वह पचास लाख रुपया भुगतान करने को तैयार है। यदि मै आपको इस परिवर्तन का आदेश भेजू, तो

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५८१, ५६३, ५७८, ५६५, ५६६, ६०८, ५८५, ५८७।

२ – सरकार (मुगल), खड २, पृ० १३०।

३ – भरतपुर–जयपुर खरीता, स० १३/५६/५; ड्रा० ख० प०, जि० ६, लेख १२७१।

आप लाहौर से लौटने के बाद इस परिवर्तन को क्रियान्वित करने का प्रयास करना।" [1] इस प्रकार पेशवा ने दत्ताजी को यह अधिकार प्रदान कर दिया था कि यदि शुजा मराठों के दावों को स्वीकार कर ले और नकद रुपया देने को तैयार हो जावे, तो उसे इमाद के स्थान पर वजीर पद प्रदान कर दिया जावे। [2]

इसी समय सूरजमल ने इस प्रस्ताव पर अधिक जोर दिया कि केवल शुजाउद्दौला ही साम्राज्य की रक्षा करने मे सक्षम है और इससे मराठा हित भी सुरक्षित रहेंगे। किन्तु मराठा दरबार में यह उलझन पैदा हो गई थी कि सूरजमल तथा शुजाउद्दौला दोनों सहयोगी मित्र हैं और दोनो के आपसी हितो मे भी टकराव नही है। यदि दोनो राजनैतिक इकाईयां आपस मे मिल गईं तो उत्तर भारत मे मराठो को अपने स्थाई प्रभाव के प्रसार के लिए भारी मूल्य चुकाना होगा। इससे उन्होंने इमादुलमुल्क को हर सम्भव कीमत पर समर्थन प्रदान करना उचित समझा। [3] बाद मे मराठा सरकार को इस प्रश्न पर पुन विचार करना पडा और पेशवा इस परिवर्तन को तैयार हो गया।

इसी प्रकार २१ मार्च को पेशवा ने जनकोजी व दत्ताजी को नजीब खा के बारे मे लिखा था— "वह मक्कार है और विश्वासघाती है। यदि उसको दिल्ली प्रवेश का अवसर दिया गया तो यह मानना होगा कि भारत मे शाह दुर्रानी की चौकी स्थापित हो गई है ...... उसको जीवन दान करना सर्प को दूध पिलाने जैसा है। अवसर मिलते ही आपको (दत्ताजी) उसकी शक्ति को कुचलना ही उचित होगा।" [4] मई मे पजाब व सरहिन्द की व्यवस्था करके दत्ताजी जब वापिस लौटे, तब उसने पेशवा के इन निर्देशों का कडाई से पालन किया। बाघपत मे शिविर डाल कर १ जून को दत्ताजी ने अन्ताजी माणकेश्वर तथा अब्दुल अहद खा के माध्यम से वजीर इमादुलमुल्क पर आरोप लगा कर माग की कि "साम्राज्य का शासन प्रबन्ध करने मे वह अयोग्य है और उसके साथी घूसखोर हैं। अत वह अपना पद त्याग कर दिल्ली की व्यवस्था मराठो को सुपुर्द कर दे।" इस पर दिल्ली मे समझौता वार्ता प्रारम्भ की गई। तब राजनैतिक स्थिति पर नियन्त्रण करने के लिए सूरजमल ने राव रूपराम कटारा को जून के प्रथम सप्ताह में जनकोजी सिंधिया से वार्ता करने रवाना किया और सवाई माधौसिंह ने भी कछवाहा हित मे बातचीत करने के लिए रूपराम को अधिकृत कर दिया था। इधर इमाद की ओर से राजा नागर मल

---

१ – शिंदेशाही, खण्ड ३, लेख ६६, १०१, १०२।

२ – एतिः पत्रेन, लेख १६६, १६७, शेजवलकर, पृ० ५६।

३ – शेजवलकर, पृ० ५६।

४ – ऐति० पत्रेन, लेख १६७, नजीबुद्दौला, पृ० ५४।

जनकोजी से शांति-समझौता वार्ता करने पहुँचा और सम्भवतः ३० जून को समझौता करके दिल्ली लौट आया। फिर इमाद ने मराठो के नाम इकरारनामा लिख कर दिया, तब दत्ताजी ने हिण्डन नदी पार की।[१]

अब दत्ताजी सिंधिया ने नजीब खा रुहेला से दोआब परगनो के स्थाई प्रबन्ध के बारे में बातचीत शुरु की। नजीब खा दोआब प्रान्त मे मराठा परगनो को अपना समझता था। फिर भी दत्ताजी के साथ शर्तों पर वार्ता करने के लिए नजीब खा को मराठा शिविर मे लाया गया। इस भेंट-वार्ता के बारे मे भाऊ बखर का लेखक लिखता है कि जनकोजी, नारोशकर, अन्ताजी तथा अन्य सरदार इस बार नजीब खा को बन्दी बनाना चाहते थे, परन्तु गोविन्द पन्त बुन्देला की सलाह से दत्ताजी ने उनको इस प्रकार की मुगलाई कावा (विश्वासघात पूर्ण गिरफ्तारी) से रोक दिया, क्योकि दत्ताजी मुगलई मस्लत (हत्या) मे विश्वास नही करता था। जबकि पेशवा ने २ मई को अपने पत्र मे रामाजी अनन्त को लिखा— "नजीब खा विश्वासघाती तथा आधा दुर्रानी है।"[२] फलतः उभय पक्ष मे वार्ता अवरुद्ध हो गई और नजीब खा सामली से सहारनपुर होकर मुजफ्फरनगर से २६ किमी० पूर्व गगा नदी के पश्चिमी किनारे पर अपनी शुकरताल छावनी मे चला गया। दत्ताजी ने भी जुलाई मे शुकरताल से ४ किमी० दूर मीरानपुर मे अपना शिविर लगाया और सारी बरसात इसी छावनी मे निकाली।[३]

इसी समय शाह वली उल्लाह ने भयभीत त्रस्त तथा व्यग्र नजीब खा को सान्त्वना देते हुये उत्साही मार्ग दर्शन कराया और मराठो के विरुद्ध साहस तथा दृढता के साथ नियमित मोर्चा लेने के लिए उत्साहित किया। उसने नजीब को अपने पत्र मे लिखा— "दिल्ली के मुस्लिम नागरिको की असहनीय लूट, बरबादी और कारुणिक यातनाओ से सतप्त आहो के कारण ही अल्लाह की इच्छित-भावना की सफलता में अधिक विलम्ब हुआ।" उसने एक बार पुनः सघर्ष पर जोर दिया और मुसलमानो की जीवन-रक्षा तथा उनकी सम्पदा की सुरक्षा की भी आशा व्यक्त की। उसने नजीब खा के कल्याण की कामना और विजय की अभिलाषा प्रगट करते हुए लिखा— "अनन्त के दरबार में मराठो का सर्वनाश हो चुका है और जाटो की बरबादी का प्रबन्ध हो रहा है। ज्योही तत्वज्ञानी शेरो की दहाड होगी, मराठो की सत्ता का मिथ्या स्वप्न अनन्त मे विलीन हो जावेगा।"[४]

---

१ — ड्रा० ख० प०, जि० ७, लेख १४५२ (२० जून); दे० क्रॉनी, पृ० १०६।

२ — ऐति० पत्रेन, लेख १७१; होजबलकर (हि०) पृ० ४१।

३ — ता० आलमगीर सानी, पृ० २१० अ; दे० क्रॉनी, पृ० १०६।

४ — मकतूबात, पत्र स० ५, पृ० ६०।

सूफी दार्शनिक ने अपने एक अन्य पत्र मे नजीब खां को विश्वास दिलाया कि "अविलम्ब ही उसको मराठो पर विजय मिलेगी और इसके लिए वह अल्लाह से प्रार्थना कर रहा है। इस समय देश मे तीन (मराठा, जाट तथा सिख) शत्रु जातियां हैं। जब तक इनकी जडें खोखली नही होगी, तब तक सम्राट, अमीर-उमराव तथा जनता को सुख शान्ति नही मिल सकेगी। अतः यह समय की माग है कि मराठों को परास्त करने के बाद आपको जाटो के विरुद्ध और फिर सिखो से संघर्ष करना पड़ेगा। इस संघर्ष काल में आगे आपको यह निश्चित रूप से ध्यान रखना होगा कि मुसलमानो को नही लूटा जावे, न सताया जावे और न उनको यातनायें दी जावें। यदि आपने मेरे इस सुझाव को नही स्वीकारा, तो मुझे हार्दिक दुख: है कि कार्य-सिद्ध नही हो सकेगा।" [१]

इस प्रकार शाह वली उल्लाह एक मुस्लिम राष्ट्र, मुस्लिम समाज तथा सशक्त मुस्लिम राज्य की कल्पना को साकार रूप देने के लिए भारतीय शक्तियों के विरुद्ध प्रयत्नशील था। उसने भारतीय अफगानो के अन्य कुल, बलूची सरदार तथा मध्य दोआब मे आबाद अन्य पठान सरदारो को एकता सूत्र में पिरोने के लिए, उन पर अपना प्रभाव जमाने के लिए ही मौलाना सैय्यद अहमद को भी प्रभावित करने का प्रयास किया। [२] वास्तव में उसने तत्वज्ञान, अन्ध-विश्वास का जाल फैलाकर नजीब खां को बुरी तरह जकड लिया और वह मराठो के विरुद्ध अधिक सक्रिय हो गया।

नजीब खां दत्ताजी को शुकरताल मे व्यस्त रखकर परास्त व बरबाद करना चाहता था। उसने सवाई माधोसिंह, राजा सूरजमल, शुजाउद्दौला, अहमद खां बगश, अपने रिश्तेदार हाफिज रहमत खां, सादुल्ला खां, डुण्डी खां पठान के पास अपनी सहायता की अपील के साथ दूत रवाना कर दिये थे। ३ सितम्बर को माधोसिंह ने भटजी राजा सदा शिव को मराठा विरोधी नीति व नजीब को सहायता देने की अपील पर विचार करने के लिए सूरजमल व हेमराज के पास रवाना किया। [३]

वह डीग मे सूरजमल से छड़ी सवारी मिला और उसको पक्का करने की बातचीत की। इसी समय इमाद व राजा नागर मल की ओर से राजा मोहन सिंह

---

१ – मकतूबात, पत्र सं० ६, पृ० ६१-६२।

२ – उपरोक्त, रुहेलखण्ड के मौलाना सैय्यद अहमद के नाम पत्र, पत्र सं० १६ पृ० ७६।

३ – इा० स० प०, जि० ७, लेख १३०६।

सूर्यद्विज व मिश्र सुजान डीग पहुँचे और उन्होने मराठों का साथ देने के प्रस्ताव पर विचार किया। २२ सितम्बर को दीवान नन्दलाल ने राजा नागर मल के साथ वजीर इमाद के यहां पहुँच कर बातचीत की। तब वजीर ने उसको सुझाव दिया कि माधो सिंह अन्ताजी के सहयोग व प्रभाव मे मराठों के साथ बातचीत करे और अपना एक प्रतिनिधि अन्ताजी के साथ पेशवा दरबार मे रवाना कर दे। राजा नागर मल ने सूरजमल तथा माधो सिंह से आपस मे मिलकर बातचीत करने की सलाह दी, ताकि दखनियों के सहयोग से नजीब खा को दबाया जा सके।

२४ सितम्बर को सूरजमल ने नन्दलाल को लिखा— 'आपने नवाब वजीर से जो बातें तय की हैं, उसके अनुरूप उपाय किया जाना उचित होगा। फिर समय निकलने के बाद सभी कुछ व्यर्थ होगा।' सूरजमल वास्तव म सभी प्रस्तावो पर सहमत हो गया था और यह निर्णय लिया गया कि माधो सिंह स्वय ससैन्य दिल्ली की ओर प्रस्थान करके सूरजमल से बातचीत करे। इसी समय २७ सितम्बर को दीवान नन्दलाल ने भटराजा सदा शिव को लिखा कि अब शुजाउद्दौला ने भी सभी रुहेलों से मिलन के लिए शीघ्र ही जलालाबाद के घाट पर आने का वचन दिया है। दुण्डी खा का यह समाचार मेरे पास आया है और रुहेलो ने सूरजमल के पास भी शीघ्र ही आने के लिए पत्र लिखा है। अत आप सूरजमल के पास जाकर तुरन्त ही विचार करना।[1]

सितम्बर व अक्टूबर मे माधो सिंह नजीब खा तथा शुजा के निकट सम्पर्क में था और उसने नजीब को अहमद शाह दुर्रानी को हिन्दुस्तान मे मराठो के विरुद्ध आमंत्रित करने की सलाह[2] दी थी। इधर सूरजमल से वार्ता करके सूरतराम व भगवन्त सिंह भाट एक अक्टूबर को जयपुर पहुँचे और पीछे से १२ अक्टूबर को कुवर नवल सिंह अपने धाभाई देवी सिंह, मथुबन दास धूमर, हरसुख के साथ जयपुर गया और वहा एक सप्ताह तक बातचीत चलती रही,[3] किन्तु ठोस निष्कर्ष नहीं निकल सका। इसी समय मराठा सदस्यो ने सूरजमल पर सहायता के लिए भारी दबाव डाला। सूरजमल नजीब की नीति व चरित्र को भली भाति समझता था। इससे उसने जनकोजी के पक्ष मे नजीब की अपील को ठुकरा दिया, जबकि शुजाउद्दौला तथा अहमद खा बगश नजीब की सहायता के लिए पहुँच चुके थे।

२१ अक्टूबर को गोविन्द पन्त बुन्देला ने नजीबाबाद पर आक्रमण करके

---

१ – ड्रा० रा० प०, जि० ७, लेख, १४१०, १४०६, १४५६।
२ – कपड द्वारा (अहमदशाह–माधो सिंह)।
३ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ५८४, ६००, ४०४, ५६४, ५८२, ६०६।

हाफिज रहमत खा आदि अफगानो को पीछे ढकेल दिया।[१] अक्टूबर के अन्त मे उमराव गिर तथा अनूपगिर गुसाई की कमान मे शुजा की सेनायें शुकरताल मे पहुँच गई और नवम्बर ३, १७५६ ई० के आसपास इस सेना ने चादपुर के समीप गोविन्द पन्त को परास्त करके पीछे खदेड दिया।[२] इसी समय अहमद शाह दुर्रानी की सेनाओ ने लाहौर पर आक्रमण कर दिया था। यह देखकर दत्ताजी ने रुहेलो को परास्त करने के लिए नवीन भारतीय शक्तियो की तलाश शुरू की और उसने राजा सूरजमल से फौजी सहायता भेजने की याचना की। ८ नवम्बर को रूपराम कटारा के नेतृत्व मे पाच सहस्र जाट सैनिको ने शुकरताल अभियान में शामिल होकर भाग लिया।

इस समय मल्हार राव होल्कर राजपूताना मे मौजूद था और उसको बुलाने के लिए द्रुतगामी ऊट (शुतुर सवार) रवाना किये गये। वजीर इमादुल्मुल्क के पास भी वकील भेजे गये। दत्ताजी ने उसको लिखा— "आप किस गफलत की नीद मे सो रहे हो।"......"मैं आपकी प्रार्थना पर यहा युद्ध मे व्यस्त हू और आप भागकर भरतपुर मे शरण लेने की योजना बना रहे हो।" लेकिन इमाद स्वय निश्चित समय तक शुकरताल नहीं पहुँच सका। ६ नवम्बर को दत्ताजी ने युद्ध सलाहकार परिषद की बैठक आयोजित की, जिसमे शिविर तथा सामान को २६ किमी० पीछे सुरक्षित भेजने और सेनानायको को ससैन्य घेरे की अग्रिम पंक्ति मे तैनात करने का निर्णय लिया गया। किन्तु ८ दिसम्बर को मराठो ने घेरा उठा लिया।[३]

१६ – शाह दुर्रानी को आमंत्रण तथा उसका सरहिंद में प्रवेश, १७५६ ई०

शाहजादा अली गौहर ने वजीर इमादुल्मुल्क के विरुद्ध भारतीय नवाबो तथा नरेशों से सहायता प्राप्त करने का हर-सम्भव प्रयास किया था। उसने दिल्ली को

---

१ – पे० द०, जि० २१ लेख ५६; ता० मुजफ्फरी पृ० १७१-२; नूरुद्दीन, पृ० ३० अ-ब, ता० आलमगीर सानी, पृ० २०८, २१०-३; राजवाडे, जि० १, लेख १४२-६, शाकीर, पृ० ६६, शेजवलकर (हि०) पृ० ४७।

२ – राजवाडे, जि० १, लेख १४०-१४३, पे० द०, जि० ११, लेख १२६; ता० आलमगीर सानी, पृ० २१० ब, शाकीर, पृ० ६९, नजीबुद्दौला पृ० ५५-६, ता० मुजफ्फरी, पृ० १७१-३, खजानहे अमीराह, पृ० ८८-६; शुजाउद्दौला, जि० १, पृ० ७१-७२; हरीराम, पृ० ११६।

३ – ता० आ० सानी, पृ० २१२ ब, ता० मुज०, पृ० १६७ अ, इमाद, पृ० ६६; नजीबुद्दौला, पृ० ५६।

दुर्दशा, वजीर इमाद की तानाशाही का वर्णन दुर्रानी के पास लिख कर भेजा और उससे सहायता की याचना की। वह बार-बार दुर्रानी को हिन्दुस्तान मे आने के लिए उत्साहित करता रहा। सम्राट आलमगीर सानी को इमाद की तानाशाही असह्य थी। वह विपक्षी सरदारो से भी बातचीत करने मे असमर्थ था। उसने शाह दुर्रानी को अपने पत्र मे लिखा— 'इमादुलमुल्क मेरी हत्या का विचार कर रहा है। आपके यहा पधारने से ही इस क्रूर आततायी के हाथो से मेरे जीवन की रक्षा हो सकेगी, अन्यथा मेरे तथा मेरे पुत्रों की सुरक्षा की सम्भावना नही है।'' [1]

नजीब ने ''घेरा लम्बा करो व समय निकालो'' नीति अपनाकर दत्ताजी को फंसा रखा था और उसने ''धर्म तथा अफगान कबीलो की रक्षा'' के नाम पर अफगान-रुहेला पठानो को सगठित कर लिया था। उसने इस्लाम की रक्षा तथा मूर्तिपूजको के दमन के लिए व्यथा भरी कहानी के साथ शाह दुर्रानी के लिए हिन्दुस्तान मे आने का निमन्त्रण दिया। शुकरताल घेरा में व्यस्त रहकर भी वह दुर्रानी के पास प्रतिमाह अपना सन्देश लेकर दूत भेजता रहा। सम्राट ने भी इमाद से परेशान होकर नजीब को सहयोग प्रदान किया। [2] यद्यपि शुजाउद्दौला शाह दुर्रानी के आमत्रण का समाचार सुनकर नजीब खा की सहायता से मुक्त हो गया था और वह रुहेल खण्ड को छोड़कर अवध वापिस चला गया। किन्तु राजपूत नरेशो ने दुर्रानी को हिन्दुस्तान मे बुलाने की पहल की और सवाई माधो सिंह तथा महाराजा विजयसिंह राठौड़ ने उसके पास भारत पर आक्रमण करके मराठो से मुक्त कराने के लिए पत्र भेजे। [3] फलतः सम्राट, नजीब तथा राजपूत नरेशो के आमत्रण पर दुर्रानी ने अक्तूबर २५, १७५९ ई० को सिन्ध नदी पार की। ८ नवम्बर को साबाजी शुकरताल आ गया। अब पजाब मे दुर्रानी का ध्वज पुनः फहराने लगा। [4] नवम्बर के

१ – तारीख-ये-आद नादिरिया, पृ० १२४; हरीराम, पृ० १२३।

२ – ता० मुजफ्फरी, पृ० १७५; नजीबुद्दौला, पृ० ५५, खजानहे अमीराह, पृ० १०१; कानूनगो, पृ० १११; हरीराम, पृ० १२२।

३ – खजाने अमीराह, पृ० १०१; ता० मुजफ्फरी, पृ० १७५; इ० हि० कांग्रेस प्रो, १९४५, पृ० २५६; हरीराम, पृ० १२३; आमत्रण-राजवाडे, खड १, लेख १३८; पे० द०, खड २, लेख ८४, खड २१, लेख १७६; ता० हुसैन शाही, पृ० ३८; डाउ, हिस्ट्री ऑफ इन्डिया, खंड २, पृ० ३६२; गंडासिह, पृ० २२५।

४ – ता० आलमगीर सानी, पृ० २११ ब, २१३ ब, दे० ऑर्नो; पे० द०, जि० २, लेख ११६; राजवाडे, जि० १, लेख १४२, १४६; खड ६, लेख ३७८, कानूनगो, पृ० १११ पा० टि० मालिसन, हिस्ट्री ऑफ अफगानिस्तान, पृ० २८७; गंडा सिंह पृ० २२६।

प्रथम सप्ताह में शाह दुर्रानी का दूत याकूब अली खा नजीब, सवाई माधोसिंह, राजा विजय सिंह राठोड आदि सरदारो के नाम शाह के पत्र लेकर दिल्ली पहुँचा। इन पत्रो मे इन राजनैतिक इकाईयो से मराठों के विरुद्ध अपनी फौज तैयार करने का आग्रह किया गया था।[१]

अहमदशाह दुर्रानी के सरहिन्द प्रवेश (२७ नवम्बर) और साबाजी पटेल को पराजय का समाचार सुनकर वजीर इमादुल्मुल्क उद्विग्न हो उठा। इसी समय उसने दुर्रानी तथा शुजाउद्दौला के नाम लिखे सम्राट के कुछ पत्र और उनको लाने ले जाने वाले हरकारों को पकड़ लिया। इससे उसकी क्रोधाग्नि भडक उठी। २९ नवम्बर को वजीर सम्राट आलमगीर सानी को धोका देकर फीरोह कोहतिना ले गया, जहा सेनापति बालाबाश खा ने उसकी हत्या कर दी। दूसरे दिन (३० नवम्बर) इमाद ने काम बख्श के पौत्र मुहि उल-मिल्लत को शाहजहा सानी की उपाधि से मुगल सम्राट घोषित किया और भूतपूर्व वजीर इन्तिजामुद्दौला तथा मिर्जा लुतफुल्ला बेग का भी वध करवा दिया। इसके बाद वह दनाजो को सहायता के लिए दिल्ली से निकला। किन्तु इस समय मराठो ने शुक्रताल का घेरा उठा लिया था।[२]

२० – तरावडी युद्ध मे मराठो की पराजय, २२ दिसम्बर १७५९ ई०

इस बार अहमदशाह दुर्रानी का विचार सरहिन्द से आगे कूँच करने का नही था, किन्तु सरहिन्द म उसको तीन दिन बाद (३ दिसम्बर) आलमगीर सानी की हत्या का समाचार मिला और उसने क्रोधित होकर बदमास अपराधी इमादुल्मुल्क तथा मराठो को पराजित करने तथा इनसे हत्या का बदला लेने के लिए दिल्ली की ओर कूच किया। यह देखकर दत्ताजी ने ८ दिसम्बर को शुक्रताल का घेरा उठा लिया और मुजफ्फरनगर तथा बराह सैय्यदो के प्रदेश मे होकर जाट-मराठा सेनायें यमुना तट पर पहुँच गईं। इस समय जनकोजी मराठा तोपखाना पंक्ति तथा इमाद की सेना के साथ यथा समय अग्र मोर्चों पर कुमुक भेजने के लिए दत्ताजी से ३२ किमी० पीछे था। उसके साथ गोविन्द पन्त बुन्देला (बल्लाल) भी उपस्थित था। रूपराम कटारा ने गोविन्द पन्त तथा जनकोजी आदि को सलाह दी कि यदि शाह

---

१ – पे० द०, जि० २, लेख १०६।

२ – ता० आलमगीर सानी, पृ० २१४ अ–२१५ अ, दे० अ'नी०, पृ० ११०; मुरसलात–ये–अहमदशाह, पत्र स० १, मिसकिन, पृ० २००–२; ता० हुसैन-शाही, पृ० ४६, सियार खण्ड ३, पृ० ३७४–५, राजवाडे, जि० १ लेख १६५; पे० द०, खड २, लेख ४६।

दुर्रानी को पीछे खदेड़ने मे सफलता नहीं मिल सके तो मराठा तोपखाना, अलडाकू परिवार व भारी साज–सामान को गोविन्द पन्त जाट सेनाओं के सरक्षण मे दिल्ली होकर जाट राज्य मे पीछे हटा ले। १८ दिसम्बर को दत्ताजी ने कुञ्जपुरा के दक्षिण में रामरा घाट पर यमुना नदी पार की और कुञ्जपुरा पहुँचकर अगले दो दिनो में अपनी योजना निश्चित कर ली। २२ दिसम्बर को तरावड़ी के मैदान मे दुर्रानी के कोतल दलो से मराठो की दो घण्टे तक भयकर मुठभेड़ हुई। यद्यपि इस युद्ध मे मराठो के चार सौ सैनिक खेत रहे, किन्तु उन्होंने दुर्रानी को मैदान छोड़कर दोआब की ओर जाने के लिए बाध्य कर दिया और शाह दुर्रानी उसी रात्रि को यमुना नदी पार करके नजीब खा के पास चला गया।[१]

२१ – बरारी घाट युद्ध मे दत्ताजी का प्राणोत्सर्ग

तरावड़ी युद्ध के बाद अफगान दूहला आक्रमण से दिल्ली की रक्षा करने के लिए दत्ताजी ५ जनवरी को दिल्ली आ गया। राव रूपराम कटारा पाच सहस्र जाट सवारों सहित मराठा सरदारों की छावनी मे उपस्थित था। उसने मराठा परिवारों को जाट राज्य की सीमाओं मे रवाना करने का पुन. सत्परामर्श दिया, किन्तु दत्ताजी ने रूपराम तथा अपने दीवान अनन्त दाभोलकर के सरक्षण मे ६ जनवरी को समुचित रक्षा प्रबन्ध के साथ मराठा छावनी का भारी साज–सामान, साल भर की लूट का माल, बाजार, अलडाकू दल, गर्भवती पत्नी भागीरथी बाई तथा मराठा परिवारों को डीग की ओर रवाना कर दिया। इसी प्रकार ५ जनवरी को गोविन्द पन्त ने अपने सैनिको तथा साज–सामान के साथ दिल्ली से जाट राज्य मे प्रवेश किया और मथुरा के समीप यमुना पार करके उनको सकुशल चम्बल पार रवाना कर दिया।

पेशवा ने मल्हार राव को सिंधिया की सहायता के लिए उचित आदेश दिये थे और दत्ताजी ने भी उसको नई कुमुक के साथ आने का समाचार भेजा। परन्तु वह बरवाडा का घेरा डाल कर सवाई माधोसिंह से चौथ वसूल करने में व्यस्त था। फिर दत्ताजी ने मराठा तथा पाच सहस्र जाट सवारो के साथ दिल्ली के उत्तर में १५ किमी० यमुना के बरारी घाट पर मोर्चा लगाया। शाह दुर्रानी लूनी के समीप डेरा डाल चुका था। १० जनवरी को नजीब ने प्रात काल साबाजी पटेल पर एकाएक आक्रमण करके भयकर युद्ध छेड़ दिया। दत्ताजी स्वय अग्र पक्ति में तैनात सैनिको की सहायता के लिए आ गया। उसकी आत (पसली) मे अफगान जज्जैल की एक गोली आकर लगी, जिससे वह रणक्षेत्र मे खेत रहा। मिया कुतुबशाह उसके सिर

१ – पे० द०, खण्ड २, लेख १०६, १११, ११२, ११७; खण्ड २१, लेख १७८, राजवाडे, जि० १ लेख १४७, १५०; ता० हुसैन शाही पृ० ४९–५०; नजीबुद्दौला, पृ० ४६–४७, बिहारीलाल, पृ० ५, इ० हि० काग्रेस प्रो०, १९४५, पृ० २६४; सैजवल्कर, पृ० ४६–५०; हरीराम, पृ० १२६।

को काटकर शाह दुर्रानी के पास ले गया और जाट सवार उसके रुण्ड को उठाकर ले आये। जनकोजी भी भुजा के उपरि भाग में गोली लगने से घायल हो गया और जाट सैनिक उसको भी घसीट कर रणभूमि से बाहर ले आये। इस युद्ध में दस सहस्र मराठा-जाट सैनिक काम आये। मराठों की कमर टूट गई और वे रणक्षेत्र छोड़कर भाग गये।

घायल जनकोजी को जाट-मराठा उठाकर द्रुतगति से रेवाड़ी की ओर ले गये। शिविर में भागीरथी बाई ने शांति तथा बुद्धिमता का परिचय दिया, किन्तु भयभीत मराठा छावनी छोड़कर भाग गये। रूपराम कटारा ने सुझाव दिया कि पीछा कर रहे दुर्रानी सैनिकों को भ्रम में डालने तथा उनको मार्गभ्रष्ट करने के लिए रामाजी पंत के साथ जनकोजी तथा महिलाओं को अव्यवस्थित मराठा शिविर से निकालकर गुप्त वेश में कुम्हेर की ओर भेजना उचित होगा। "कठिन काल में जाट विश्वासघात न कर बैठे" इस भय से जनकोजी की पत्नी काशीबाई ने इस सुझाव को न मानकर कोटपुतली की ओर प्रस्थान कर दिया, जहां १५ जनवरी को मल्हार राव इनकी रक्षार्थ आ गया था। [१] यह सिंधिया शक्ति की भयंकर पराजय थी।

---

१ — पे० द०, खण्ड २, लेख ११४, ११७; खंड २१, लेख १८१, १८२, १८५; खण्ड २७, लेख २४७; राजवाडे, खण्ड १, लेख १४७, १५३, १५६, १६५, खण्ड २, लेख १५४, खंड ३, लेख ५१६; ता० मुजफ्फरी, पृ० १७६-७, शाकीर, पृ० ६६; ता० हुसैन शाही, पृ० ५०-१; नजीबुद्दौला, पृ० ६७; सियार, खंड ३, पृ० ३८०; मिसकिन, पृ० २०२-३; ग्रांट डफ, भाग १, पृ० ६०४; नूरुद्दीन, पृ० ३० ब-३१ अ।

— शेजवल्कर का मत है कि दत्ताजी का सिर काटने की कहानी नाटकीय है। (पृ० ५४)।

अध्याय ८

दुर्रानी का द्वितीय आक्रमण : पानीपत संग्राम में तटस्थता, १७६०–६१ ई०

मराठो की पराजय पर हिन्दुस्तान में राजपूत नरेशों तथा दोग्राब के हिन्दूग्रो ने उल्लासपूर्ण विजयोत्सव मनाये। उन्होंने ग्राततायी खूख्वार ग्रफगानों की भाति इस देश की सम्पदा तथा श्रम को बरबाद नही किया था। भारतीय ललनाग्रो के सतीत्व को नही लूटा ग्रौर हिन्दू-मुसलमानो पर धार्मिक ग्रत्याचार भी नही किये थे। फिर भी मराठो के चरित्र तथा ग्राचरणो के प्रति उत्तर भारत के नागरिको में सन्देह था। दक्षिण से उनका तूफान ग्राधी की भाति उठता था ग्रौर लूटमार के बाद पानी की तरह बह जाता था। विशेषत राजस्थान के शासको ने ग्रहमदशाह दुर्रानी की सफलता पर विशेष प्रसन्नता प्रगट की। ठीक इसी प्रकार ४३ वर्ष बाद (१८०३ ई०) लसवाडी युद्ध मे जनरल लेक की सफलता पर राजपूत प्रसन्न हो उठे ग्रौर राजपूत शासकों ने मराठा शक्ति के विरुद्ध ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी से समझौता कर लिया था।

१ – राजा सूरज मल की नीति

जाट राजा सूरजमल मराठो के क्रूर हाथो से मुक्त नही हो सका। जाटो ने उनसे भयकर युद्ध भी लडा ग्रौर ग्रार्थिक सधिया भी की, फिर भी सहधर्मी मराठो की पराजय से जाटो को कोई विशेष प्रसन्नता नही हो सकी। राजा सूरजमल ने एक पारदर्शी राजनयिक की भाति राजनैतिक परिणामो से लाभ उठाने का विचार किया। हिन्दुस्तान मे "मराठा भाग्योदय काल" म यद्यपि जाटो न सदैव "सन्देहास्पद तटस्थ नीति" को प्राथमिकता दी थी। दिल्ली प्रस्तावो की उपेक्षा के बाद भी जाट टुकडिया ने सिधिया घराने के सहयोगी ग्रामत्रण को स्वीकार करके उनका साथ दिया। फिर भी सूरजमल ने हिन्दुस्तान की दलगत राजनीति मे सक्रिय भाग

नही लिया। इसका मुख्य कारण सूरजमल का राष्ट्रहित में अपनी निजी व्यापक नीति थी। वह वास्तव मे नवीन शक्ति सम्पन्न शासक तथा तानाशाह वजीर का विरोधी था। वह एक विदेशी आक्रान्ता के आगे आत्मसमर्पण करके कलक का भागीदार नहीं बनना चाहता था। आखिर शाह दुर्रानी भी एक क्रूर आततायी लुटेरा था। वह भारतीय धन, सम्पत्ति तथा श्रम को लूटकर अपने देश को वापिस लौट जाता था। इसी से सूरजमल ने मराठा शक्ति के औचित्य, उनकी चौथ की माग के साथ ही भारतीय शक्ति की स्थिरता को स्वीकार कर लिया था और एक "अति उदार राजनैतिक माग" का पथ-प्रदर्शन किया था। इस सिद्धान्त के आधार पर ही विदेशी आक्रान्ताओ से हिदुस्तान की रक्षा के लिए भारतीय हिन्दू तथा मुसलमान एक झडे के नीचे एकत्रित हो सकते थे और इससे राष्ट्रीय एकता तथा मित्रता की भावना सुदृढ हो सकती थी।

इस समय मुगल साम्राज्य का व्यवहारिक रूप मे विघटन हो चुका था और सर्वत्र अराजकता, गडबड फैल रही थी। साम्राज्य के भिन्न भिन्न छोटे-बडे अशक्त तथा बलशाली अमीर शक्ति तथा सम्पत्ति के लिए सामान्यत: आपस मे कलहरत थे। साम्राज्य के सगठन, एकता तथा सिद्धान्तो की दृष्टि से विचार करने की ओर किसी ने भी ध्यान नही दिया था। पेशवा स्वय हिन्दुस्तान (मुगल भारत या उत्तर भारत) की राजनैतिक परिस्थितियो से अपरिचित था और मराठो के लिए "भारतीय एकता तथा निष्ठा"[1] एक स्वप्न था। एक मात्र जाट शासक सूरजमल ने इस नीति की ओर ध्यान दिया और इस सिद्धान्त को साकार करने के लिए उसने भागीरथ प्रयास किया। सूरजमल सदा शिव राव भाऊ की भाति भावुक तथा अदूरदर्शी नही था। भाऊ केवल "हिन्दू स्वराज्य" की भावना को मराठा राज्य का प्रतीक मानता था। सूरजमल व्यवहारिक, विशिष्ट प्रतिभाशाली कुशल राजनयिक, जन-प्रिय शासक तथा जन-जन का नेता था और उसकी "पृथकत्व तथा असहनशील हिन्दू स्वराज्य" के सिद्धान्त मे आस्था नहीं थी। वह इन सिद्धान्तो की कमजोरी तथा दोषों को समझता था और भारतीय जन-जीवन पर इसके कुप्रभाव को भी भली भाति पहचानता था।

१८ वी शताब्दी के मध्यकाल मे इतना पारदर्शी, राजनैतिक औचित्य को परखने वाला कोई भी प्रतिभाशाली अमीर या शासक नही था। हिन्दुस्तान मे नवोदित हिन्दू तथा मुस्लिम राज्यो के बीच मे एकता की कडी केवल शाही सिंहासन ही एक आदर्श तथा व्यवहारिक चिह्न था, इससे वह मुगल तख्त की प्रतिष्ठा तथा मुगल साम्राज्य के महत्व को स्थायित्व प्रदान करना चाहता था। केन्द्रीय शासन

१– सेजवलकर, पृ० ७८।

तथा नवोदित राज्य या साहसिक सरदारो के बीच मे एकता तथा सानिध्य स्थापित कराने मे केवल जाट राज्य की शक्ति सक्षम थी। सूरजमल ने अपनी नैतिकता, उदारता, सूझबूझ तथा पारदर्शी सुझावो व सिद्धान्तो से अपने पडोसी राज्य जयपुर, फर्रुखाबाद, अवध, मराठा तथा केन्द्रीय मुगल शासन को एक कडी मे जकड रखा था। वह इन पड़ोसी राज्यों की स्थिरता के लिए सदैव सहयोग व सहायता के लिए तत्पर रहा।

सूरजमल का सिद्धान्त मुगल व मुसलमानो के "मुस्लिम साम्राज्य," क्षत्रपति शिवाजी महान की "हिन्दू पद-पादशाही," और सदाशिव भाऊ के "हिन्दू स्वराज्य' से सर्वथा भिन्न था। मराठा तथा अफगान दोनो ही हिन्दुस्तान मे अपने प्रभुत्व तथा प्रभाव के लिए संघर्षशील थे और मुगल साम्राज्य के शोषक थे। इसी से मराठो को नर्मदा अथवा चम्बल पार और दुर्रानी को सिन्धु नदी के तट पर रोकने के लिए सूरजमल मुगल सम्राट के नेतृत्व मे विभिन्न छोटे बडे 'व्यवहारिक प्रजातान्त्रिक राज्यों का एक संघ" बनाना चाहता था। वह अंग्रजो की भाति "फूट डालो, राज्य करो" की नीति की अपेक्षा "प्रजातान्त्रिक या लोकतान्त्रिक राज्यो का निर्माण तथा केन्द्रीय सघ शासन" की उदार नीति का समर्थक था। इस सघात्मक हिन्दुस्तान का अर्थ किसी विशेष राज्य के साथ उपकार या किसी शासक को पराधीन रखना नही था, बल्कि किसी "सामान्य भय" से राष्ट्र की सुरक्षा के लिए एक निश्चित तथा सर्व-मान्य सिद्धान्त को स्वीकार करने के बाद शाही निशान के नीचे समस्त राजनैतिक शक्तियो को लाकर खडा करना था। इस प्रकार राजा सूरजमल निःसन्देह "मुस्लिम-सिद्धान्त पर गठित मुगल साम्राज्य" को नवीन जीवन प्रदान करके "सघात्मक लोकतन्त्री" सिद्धान्त पर गठित करना चाहता था। केन्द्रीय सरकार सैनिक बल प्राप्त करके निरकुश, तानाशाह या साम्राज्यवाद की स्थापना नही कर सके या सैनिक बल से नवाब तथा भारतीय नरेशो की मौलिक शक्ति, नागरिको के मौलिक अधिकारो को नही कुचल सके, इसके लिए उसका स्पष्ट मत तथा सुझाव था कि राज्यो की सैनिक शक्ति को सुदृढ किया जावे और आवश्यकता आने पर सघ सरकार राज्य तथा प्रान्तो के शासको से सैनिक प्राप्त करे।

इस उदार "एकता तथा निष्ठा" की नीति के आधार पर सम्राट केवल सम्माननीय साम्राज्य का शीर्षस्थ शासक होता। राज्य सचालन, नीति निर्धारण, प्रशासनिक व्यवस्था के अधिकार वजीर (प्रधान मन्त्री) को सौप दिये जाते। सघ राज्य के सभी सरदार या शासक अपने प्रान्त या राज्यो के स्वाधीन शासक होते। वजीर तानाशाह होकर सम्राटो की हत्या, उनको बार-बार गद्दी से पदच्युत नही कर सके, इससे वजीर के हाथों मे सैनिक शक्ति न रहकर राज्य इकाईयों के पास सुरक्षित रहती। इसी से "भारत-भारतीयो के लिए" सिद्धान्त भी सफल हो सकता

था। इसी भावना तथा दृष्टि से सूरजमल ने चतुर तथा सहनशील अवध के नवाब शुजाउद्दौला को वजीर पद पर नियुक्त करने का प्रस्ताव रखा था। वह सब साम्राज्य का वैधानिक प्रधान मन्त्री होता। इस प्रकार जाट शासक सैनिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण करना चाहता था। किन्तु अपने व्यक्तिगत राजनैतिक स्वार्थ के कारण किसी ने भी इन सुझावो को स्वीकार नही किया।[1] इसी का परिणाम था भारत मे अंग्रेजी राज्य की स्थापना!

२ – वजीर इमाद, अधिकारी तथा नागरिको का शरण लेना

अहमदशाह दुर्रानी के पाचवें आक्रमण के समाचार मिलते ही राजधानी तथा आसपास के नागरिको मे भारी व्याकुलता व भय का भूचाल आ गया था और सम्पन्न राजधानी एक बार पुन उजडने लगी थी। जिन नागरिको को अपना जीवन, धन, मान–मर्यादा प्रिय थी, वे अपने परिवार व सम्पत्ति के साथ दक्षिण की ओर भागने लगे। जाट साम्राज्य के सम्पन्न नगर पुन हिन्दू-मुस्लिम नागरिको के लिए "पुनीत आतिथ्यालय" बन गये थे। मराठा सरदारो ने भी अपने परिवारो को नि सकोच शरण लेने के लिए जाट राज्य मे भेज दिया था। इस महान् विपत्ति के समय वजीर इमादुल्मुल्क ने भी उदार-स्वभाव शत्रु के सरक्षण तथा राज्य मे अपने हरम को भेजकर अपने सम्मान व प्रतिष्ठा के बारे म शका नही की। सूरजमल ने भी सभी वर्ग–सम्प्रदाय के नागरिको को अपने राज्य मे शरण दी और प्रतिष्ठित परिवारो का उनके पद व प्रतिष्ठा के अनुरूप यथोचित सम्मान[2] करके सुरक्षा प्रदान की। सूरजमल अहमदशाह दुर्रानी की क्रूरता, हिंसा तथा प्रतिशोध की नीति से पूर्णत परिचित था, फिर भी विचलित नही हुआ। उसने शीघ्र ही राजधानी तथा वहा के शेष नागरिको की रक्षार्थ पाच सहस्र जाट सवार भेजकर वजीर इमादुल्मुल्क को सन्तोष तथा धैर्य प्रदान किया और भगोडा नागरिको को शरण तथा सुरक्षा प्रदान करके भारतीयत्व की उदार भावना का परिचय दिया।

दत्ताजी सिंधिया की मृत्यु तथा मराठो की पराजय का समाचार देश मे दावानल की तरह फैल चुका था। स्वाधीन सता का भूखा, महान पाखण्डी इमाद दिल्ली की रक्षा नही कर सका और उसने अपनी चल सम्पत्ति जाट राज्य की ओर रवाना कर दी थी। उसको पूर्ण विश्वास था कि खूख्वार दुर्रानी के आतक के

---

१ - पे० द०, जि० २, लेख ११८, खण्ड २१, लेख १८२, १८६; खण्ड २७, लेख २५१; राजवाडे, जि० १, लेख १६५–७०; दे० ऑनी; इमाद, पृ० ७३; वेण्डल, पृ० ५१; कानूनगो, पृ० ११६–७।

२ – इ० डा० (हरसुखराय), खण्ड ८, पृ० ३६२।

कारण इस समय उसको अन्यत्र शरण नहीं मिल सकेगी। अतः वह स्वयं सूरजमल के रनिवास–कुम्हेर के द्वारो पर शरणागत के वेश मे आकर खडा हो गया। यह वही वजीर इमादुलमुल्क था, जिसने १७५४ ई० मे जाट शासन के अस्तित्व को मिटाने का विफल प्रयास किया था और अब उसी फौलादी दुर्ग की दीवारो के सामने खड़ा होकर प्राण तथा सम्मान रक्षा की अभ्यर्थना कर रहा था। उसके आगमन की सूचना मिलते ही राजा सूरजमल ने दुर्ग–द्वार पर उसका प्रसन्नता के साथ पद व प्रतिष्ठा के अनुरूप अभिनन्दन किया। उसने अपनी सर्व श्रेष्ठ हवेली आमोद–प्रमोद की अमूल्य वस्तुओ से सजाकर वजीर तथा उसके परिवार को ठहरने के लिए खोल दी। सूरजमल ने वजीर तथा उसके परिवार की सुरक्षा का यथेष्ठ प्रवन्ध किया और सेवक के द्वार पर निरीक्षण के लिए पधारे स्वामी की भांति स्वागत–सत्कार के साथ सेवा की।[1] इसके शीघ्र बाद जाट सैनिक भी दिल्ली छोडकर अपने राज्य की सीमाओ मे लौट आये। कछवाहा वकील नद लाल कामा आने की अपेक्षा अपने अग-रक्षको के साथ जयपुर चला गया। जौहरी साह हीरानद परसोत्तम दास को मराठा पठान युद्ध के परिणाम का समाचार मथुरा में ११ जनवरी को प्रात काल मिल गया था, इससे उसने १२५ साहूकारा गाडियो के साथ मथुरा से गोवर्द्धन होकर कुम्हेर मे शरण ली। यहा पर उसको नदलाल के पलायन तथा दुर्रानी फौजो का जाट व मेवात प्रान्त मे प्रवेश करके लूटमार करने का समाचार मिला। फलतः वह २३ जनवरी को सभी भारकसो के साथ वैर पहुँच गया और वहा चार दिन विश्राम करने के बाद जाटो के सरक्षण मे कछवाहा राज्य की सीमाओं मे सकुशल पहुँचा।[2]

३ – दिल्ली का प्रबन्ध ; सम्राट शाह आलम सानी की प्रार्थना, जनवरी, १७६० ई०

बरारी घाट विजय के बाद शाह दुर्रानी कुछ दिन लूनी मे रुका। हिन्दुस्तान की राजधानी सम्राट तथा वजीर से खाली थी। शहर सूना था और शाही कोषागार रिक्त था। नजीब खा रुहेला ने शाह से हिन्दुस्तान मे कुछ दिन रुकने की प्रार्थना की। शाह ने सुनसान नगर मे न घुसकर १४ जनवरी को खिजराबाद मे पडाव डाला। डा० सरकार के शब्दो मे— "नवीन सम्राट पूर्वाधिकारी सम्राटो से भी अधिक दुर्बल और नाममात्रेण बादशाह था।"

---

१ – सियार, खण्ड ३ पृ० ३७५–६, ता० मुजफ्फरी, पृ० १७७; इमाद पृ० ७३; देण्डल, पृ० ५१, कानूनगो, पृ० ११४, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १५०; गण्डा सिंह, पृ० २३२।

२ – ड्राफ्ट ख० प०, जि० ७, लेख, १४०६।

'३१ जनवरी को शाह दुर्रानी ने अपने वजीर के चचेरे भाई याकूब अली खा को दिल्ली का राज्यपाल नियुक्त किया और शहर मे पुलिस नियन्त्रण पुनः स्थापित करने के लिए अपना ही कोतवाल नियुक्त करके राजधानी का प्रबन्ध सभाल लिया था।[1] इसी बीच में बिहार से प्रवासी सम्राट शाह आलम सानी (द्वितीय) का एक पत्र शाह दुर्रानी के पास पहुँचा, जिसमें उसने शाह से हिन्दुस्तान का ताज तथा सिंहासन प्रदान करने की प्रार्थना की थी। उसने लिखा— "अन्यथा इमादुल्मुल्क और जाट राजा सूरजमल मिलकर किसी को भी छायामात्र सम्राट बना लेंगे और पूर्वापेक्षा राजधानी तथा साम्राज्य को और भी अधिक बरबाद कर देंगे। दखनी भी अपनी शक्ति को सहस्र गुणा बढा लेंगे और देश के नागरिको की दशा को करुणापूर्ण बना देंगे।" उसने शाह से प्रार्थना की थी कि वह स्वय आगरा की ओर प्रस्थान करे और खानखाना (मृतक) तथा नजीब खा को मेरे पास रवाना कर दे। इसके बाद हिन्दुस्तान के अमीर उसके दरबार म आकर उपस्थित हो जावेंगे। मालवा तथा गुजरात प्रान्त उसके अधिकार मे आ जावेंगे। या तो मराठा समर्पण कर देंगे अथवा हम सभी मिलकर उनको बरबाद कर देंगे।

उसने जाट शासक सूरजमल के बारे मे लिखा— "आपके सामने हिन्दुस्तान के नागरिक जाटो को देश का रक्षक बतलाते हैं। आखिर कब से इतने शक्तिशानी हो गये ? ताकि वह (सूरजमल) "रक्षक" मान लिया जावे। यह सब कुछ नागरमल का जाल (पैवन्द बस्ता-ये) है। साम्राज्य के दुर्भाग्यपूर्ण दिनो मे इन लोगो ने बादशाह की गुजर-बसर के लिए सुरक्षित खालसा परगनो की आय का अपहरण किया है और शाही कोषागार को बरबाद किया है। (इस प्रकार) वह (सूरजमल) एक सरदार के पद पर पहुँच गया। चूहो को पकडने के लिए बिल्ली पाली गई और वह बिल्ली व्याघ्र बन गई। किन्तु अभी तक एक चूहा शेष है, जो व्याघ्र (बिल्ली) से अड रहा है। हम ज्यो ही आकर अपने देश के प्रशासन की ओर ध्यान देंगे। वह हमको भारी पेशकश (कर) अदा करेगा और अनाधिकृत लाखो की जमा वाले परगनो को छोडकर हमारी सेवा म आकर उपस्थित हो जावेगा। उपेक्षा करने पर अपनी बरबादी का रास्ता नापेगा।"[2] शाह दुर्रानी ने शाह आलम सानी के इस पत्र की ओर विशेष ध्यान नही दिया, किन्तु उसने राजा सूरजमल को दण्ड देने का निर्णय अवश्य कर लिया था।

---

१ – दे० क्रॉनो०, मीराते आफताबनुमा, पृ० ३७०; सरकार)मुगल), खण्ड २, पृ० १५१, १६८।

२ – मुरासलात-ये-अहमदशाह दुर्रानी, पत्र स० २१, (अहमदशाह दुर्रानी के नाम शाह आलम शानी का पत्र), गडासिंह, पृ० २३२–३।

४ – शाह द्वारा सूरजमल से एक करोड़ खिराज की मांग

खिज्राबाद मे छावनी (१४ जनवरी) डालने के बाद अहमदशाह दुर्रानी ने जाट राजा सूरजमल, माधोसिंह कछवाहा, विजयसिंह राठौड तथा नवाब शुजाउद्दौला के पास खिराज लेकर स्वय उपस्थित होने और उसके निशान के नीचे एकत्रित होकर सेवा करने का फरमान लिखकर अपने विशेष दूतो के साथ रवाना किया। सूरजमल हिन्दुस्तान मे मराठो का एक मात्र सहयोगी व रक्षक सरदार था। दुर्रानी ने उसको बडे धमकी भरे कई पत्र लिखकर अपने वकील को उसके दरबार मे रवाना किया। उसने सूरजमल को लिखा— "आप स्वय खिराज की राशि के साथ आकर उपस्थित हो, ताकि आप और हम दोनो मिलकर मराठा सरदारों को उत्तर से निकाल कर दक्षिण की ओर रवाना कर सकें।" अन्य राजपूत नरेशो ने दुर्रानी के दूतो को खिराज अदा नही किया, परन्तु उन्होने स्पष्ट मना भी नहीं किया और वे टालमटोल करते रहे। सूरजमल पर राजद्रोह का आरोप लगाकर दुर्रानी ने उससे एक करोड खिराज भुगतान की माग की।

इस समय सूरजमल भी अन्य शासको की भाति टालमटोल उत्तर या आश्वासन देकर दुर्रानी को सन्तुष्ट कर सकता था। परन्तु उसने पडोसी शासको की इस नीति तथा समर्पण की भावना को श्रेयस्कर नही समझा और उसने इस मांग पर अपने मन्त्री परिषद तथा सलाहकारो की सभा मे बैठकर गम्भीरता से विचार किया। परिषद का विचार था— "पहले यह देखा जावे कि होल्कर व दुर्रानी आपस मे क्या फैसला करते हैं ? फिर भी एक विदेशी आक्रान्ता को खिराज भुगतान करके भी राज्य को उसके क्रूर हाथो से नही बचाया जा सकेगा। इस विपुल धनराशि से अफगान शाह अपनी फौजी शक्ति को सुदृढ करेगा और वह हमको भयभीत समझ कर निहत्थे नागरिको पर भीषण अत्याचार, नरसंहार तथा देश मे लूटमार करेगा। इसके बाद दुर्रानी की अन्य दुराग्रही माग अतिथि वजीर इमादुल्मुल्क को वापिस सौंपने तथा मराठो का साथ न देने की होगी।" फलतः सूरजमल ने आक्रान्ता को खिराज भुगतान करके समर्पण की नीति को स्वीकार नही किया और इस द्रव्य से राज्य, अतिथि, प्रजा की रक्षा करने और युद्ध को रोकने के लिए व्यय करना उचित समझा। यह निर्णय जाट परिषद तथा शासक की दूरदर्शिता तथा कुशलता का प्रमाण था। उसने दुर्रानी के वकील को नम्रतापूर्वक उत्तर देते हुए लिखा— "मैं एक साधारण जमींदार हू। यदि आपके सुरक्षा वचनो पर विश्वास हो सके, तो सभी शासक प्रसन्नतापूर्वक आपकी सेवा मे उपस्थित हो सकते हैं। मैं भी उनका अनुसरण करूँगा। मै दिल्ली की वैधानिक सरकार को निश्चित समय पर निश्चित पेशकश भुगतान करने के लिए सदैव तैयार हूँ। यदि आप पहले मराठो को दिल्ली से निकाल दें और स्वय हिन्दुस्तान मे रुक कर राज सिंहासन ग्रहण कर ले, तो मैं

आपको अपना स्वामी स्वीकार करने को तैयार हूं। मराठा तथा अफगानो के निरन्तर आवागमन तथा लूटमार से यह प्रदेश बरबाद हो चुका है, इससे मेरे पास इस समय खिराज भुगतान के लिए पर्याप्त रुपया नही रहा है।'' [१]

५ – डीग दुर्ग पर दुर्रानी का आक्रमण और मल्हार राव की सक्रियता, फरवरी १७६० ई०

अहमदशाह दुर्रानी का दूत डीग से निराश होकर वापिस चला गया। सूरजमल ने भी मराठा सरदारो से बातचीत की और दुर्रानी के सम्भावित आक्रमण से अपने सभी दुर्गों मे पूर्ण तैयारी कर ली थी। सूरजमल तथा मन्त्री परिषद का पूर्ण विश्वास था कि वजीर इमादुल्मुल्क ने उसके यहा शरण ले ली है। अत: उसके शत्रु तथा प्रतिद्वन्दी नजीबुद्दौला की प्रार्थना पर दुशाह दुर्रानी इस बार उसके राज्य के आन्तरिक दुर्गों पर अवश्य आक्रमण करेगा। कुछ ही दिनो में दिल्ली का प्रबन्ध करके दुर्रानी ने अपने निकटतम प्रतिद्वन्दी को कुचलने के लिए तीन भिन्न मार्गों से अपनी सैनिक टुकडिया रवाना कीं। अलवर के मेवाती दुर्ग की ओर बढने के विचार से कुछ पठान टुकडियों मे फिरोजपुर भिरका मे पडाव डाला। एक तोप लवाण की ओर और एक टुकडी रेवाडी की ओर रवाना की गई। २७ जनवरी को दुर्रानी स्वय अपनी अफगान सेना, नजीब खा के रुहेला दलों के साथ खिच्चाबाद छावनी से रवाना हुआ और ४ फरवरी को मथुरा के उत्तर में ३२ किमी० शेरगढ में पडाव डाला। यहा से उसने राज्यपाल तथा जिलेदारो की नियुक्ति करके आगरा ? की ओर रवाना किया। फिर उसने ६ फरवरी को डीग दुर्ग की ओर कूच किया और दूसरे दिन (७ फरवरी) प्रधान सेनापति जहान खा के नेतृत्व मे अफगान सेनाओं ने डीग दुर्ग का घेरा डाल दिया। मराठो की पराजय का समाचार मिलने से पूर्व ही कछवाहा दरबार ने कामा के किलेदार राजा हरी सिंह नरूका के लिए १२ जनवरी को ही सचेत कर दिया था कि पठान समीप आ चुका है, इससे किले की मरम्मत करा कर सुरक्षा व्यवस्था मजबूत कर ली जावे। सीमान्त दुर्ग की सुरक्षार्थ माधौ सिंह अधिक फौज भेजने मे असमर्थ था। इससे पठानो के डीग आने पर ११ फरवरी को उसने बाकावत व कल्याणोत ठाकुरो को शीघ्र ही अपनी टुकडी के साथ कामा [२] पहुँचने के निर्देश दिये।

---

१ – पे० द०, खड २, लेख ११८, खड २१, लेख १८६–१८७; राजवाडे, खड १ लेख १६५–७०।
— वेण्डल, पृ० ५१; इमाद, पृ० ७३; दे० क्रॉनी०; कानूनगो, पृ० ११४; सरकार (मुगल), खड २, पृ० १५२, शेजवलकर, पृ० ७२; हरीराम, पृ० १३८।
२ – ड्रा० ख० प०, जि० ७, लेख १३८१, १३८२, १४००।

खिज्राबाद से दुर्रानी के प्रस्थान करने से पूर्व ही सूरजमल ने अति साहस तथा उद्यम से विदेशी आक्रान्ता का सामना करने का भावात्मक प्रयास किया और उसने निर्णायक युद्ध की अपेक्षा जाट-मराठों की पुरानी छापामार युद्ध-शैली को अपनाया। १५ जनवरी को मल्हार राव होल्कर भिलारा से चलकर कोटपुतली पहुँच गया था और दत्ताजी के क्रिया कर्म संस्कार मे निवृत होकर उसने २३ जनवरी को गोविन्द पन्त बुन्देला के संरक्षण मे मराठा परिवार, बाजार तथा भारी सामान को करौली के मित्र राजा के राज्य मे होकर ग्वालियर की ओर रवाना कर दिया था। २४ जनवरी को दीवान गंगाधर व सम्भाजी बावले ने दौलत राम को मिश्र श्री किसन के पास जयपुर भेजा और 'पठानो के साथ संघर्ष शुरू होन से पूर्व ही अच्छी फौज के *साथ अति शीघ्र हो माधो सिंह को अपने साथ लाने का आग्रह'* [१] *किया।* इधर इसी बीच म मल्हार राव स्वयं रूपराम व जनकोजी सिंधिया सहित सूरजमल के पास वार्तालाप करने पहुच गया। सूरजमल स्वयं शाह दुर्रानी को परास्त करके पीठ मोडकर पीछे भागने क लिए बाध्य करना चाहता था। मल्हार राव के लिए हिन्दुस्तान म सक्रिय रहने के लिए जाट शासक का आश्रय आवश्यक था। उसने सूरजमल से "दुर्रानी के विरुद्ध एक अन्य सशक्त अभियान मे सहायता देने की याचना" की। राजा सूरजमल होलकर की रीति-नीति का भली प्रकार समझता था। उसका कोई निश्चित सिद्धान्त नही था। वह अवसरवादी था। इसीलिये सूरजमल ने उसको सामयिक सलाह दी— "जब तक दक्षिण से पर्याप्त सैनिक सहायता नही मिले, तब तक आपको छापामार युद्ध जारी रखना चाहिये।" मल्हार राव ने सूरजमल के सामने स्वयं इस युद्ध मे शामिल होने का प्रस्ताव रखा। इस पर उसने कडे रुख के साथ स्पष्ट कहा— "जहा तक मेरी स्थिति का प्रश्न है, मेरे पास जमकर निर्णायक युद्ध के लिए पर्याप्त सैनिक क्षमता का अभाव है। मे छापामार झडपो मे भाग लेने के लिए अपने देश की सीमाओ से बाहर भी नही जा सकता। यदि इतने पर भी शाह ने मेरे ऊपर आक्रमण किया तो मे अपने दुर्गों क भीतर ही रहकर यथा साध्य अपनी रक्षा करने का प्रयास करूगा।" [२]

मल्हार राव छापामार युद्ध मे सिद्धहस्त था। उसको तथा जनकोजी को पूर्ण विश्वास था कि व दुर्रानी को मात देकर पीछे हटा सकते हैं। २४ जनवरी को वह दिल्ली की ओर बढकर कानोड पहुँचा और दिल्ली पर आक्रमण करने की अपेक्षा दुर्रानी के पृष्ठभाग म पहुँचकर लूटमार करने, उसकी योजना को विफल करने के

---

१ – डा० ख० प०, जि० ७, लेख, १४१३।

२ – सियार खण्ड ३, पृ० ३८०, ता० मुजफ्फरी, पृ० १७७, इ० डा० (तारीखे इब्राहीम), खड ८, पृ० २७२, दे० कॉली, पृ० ११२, मीराते अहमदी, पृ० ६०६।

लिए गुरिल्ला युद्ध की एक योजना तैयार कर ली। २५ जनवरी को रूपराम कटारा के लश्कर से सूरजमल के पास समाचार आया कि गनीमा ने आगे कूंच करके मार्ग बन्द कर दिया है और वह लूटमार करता चला आ रहा है। मराठों की सैनिक टुकडिया पठानो से काफी भयभीत थी और भयभीत होल्कर बीस सहस्र सेना के साथ डीग से ५६ किमी० दूर पहुँच गया था। बापू महादेव हिंगणे ने १ फरवरी को मराठा शिविर से अपने पत्र मे इस सेना की घवडाहट के बारे म लिखा— "होल्कर के नेतृत्व मे बीस सहस्र सेना है किन्तु उसमें से केवल आठ-दस सहस्र ही अच्छे लडाकू सैनिक हैं, किन्तु वे सभी दुर्रानी के भय से भयभीत हैं और हिम्मतपस्त हैं। वे दुर्रानी के सामने जाने से कापते हैं। पठान इनको थका-थका कर चम्बल के पार खदेडना चाहते हैं और ये घवडाहट म इधर उधर भाग रहे हैं।" [1] यहा से ३ फरवरी को मल्हार राव ने अपनी सेना के कुछ अलडाकू सवारा व परिवारो को चम्बल पार भेज दिया और बापूजी महादेव हिंगणे, नाना साहब, गणपत राव आदि मराठा सरदार डीग आ गये।

३ फरवरी को पठानो ने फिरोजपुर-झिरका में डेरा डाल दिया था, तब यह समाचार सुनकर मल्हार राव के डेरो म भारी खलबली मच गई, उसको बाध्य होकर ७ किमी० पीछे हटकर अपनी छावनी डालनी पडी (४ फरवरी)। [2] जब दुर्रानी की सेनाओ ने डीग दुर्ग का घेरा डाला, उसी समय मराठा सैनिकों ने मेवात में भयकर लूटमार करके आतक फैला दिया था। दुर्रानी डीग की अभेद्य प्राचीरो के आगे नही टिक सका और न वह जाट शासक पर ही कोई प्रभाव डालने मे सफल रहा। अब उसने डीग पर सीधा आक्रमण करने की अपेक्षा घेरा डालकर इस छावनी को अपनी अग्र-सैनिक कार्यवाहियों का आधार बनाया। उसने शीघ्र ही दिल्ली के दक्षिण-पश्चिम तथा मेवात से मराठा टुकडियो को बाहर निकालने के लिए अब्दु-स्समद खा तथा नजीब के भाई सुल्तान खा की कमान मे अपनी सेना का एक अंग रवाना किया। इस सेना के साथ नवाब मलिक जमानी (मुख्तयार-ये-सल्तनत), अब्दुल अहद खा नायब भी शामिल था। द्रुतगति से कूच करके इस टुकडी ने ११ फरवरी की रात्रि को आक्रमण करके मराठा टुकडी को पीछे खदेड दिया। [3]

इस समय मल्हार, जनकोजी, नारोशकर आदि नारनौल मे थे। नजीब खा, हुण्डी खा के नतृत्व म रहेला सैनिको की एक अन्य टुकडी ने नारनौल होकर मेवात

---

१ —ड्राफ्ट ख० प०, जि० ७, लेख १४०६; हिंगणें, भाग १, लेख ४२।
२ —ड्रा० ख० प०, जि० ७, लेख १४१७ (बछ गाव से राज सिंह का पत्र मिश्र श्री किसन के नाम, ५ फरवरी)।
३ — दे० क्रॉनी० प० ११३।

(प्रान्त अलवर) मे प्रवेश किया, परन्तु मराठा सैनिक उनके आने का समाचार मिलते ही यहा से उत्तर की ओर भाग गये। इन विषम सैनिक परिस्थितियो मे शाह दुर्रानी को बाध्य होकर १५ फरवरी को डीग दुर्ग का घेरा उठाने का निर्णय करना पडा। इसी बीच मे १८ फरवरी को शाह तथा वजीर इमाद मे भी आपसी शाति-समझौता हो गया और शाह ने उसको वजीर पद की खिलअत प्रदान कर दी और दूसरे दिन (१९ फरवरी) शाह स्वय रेवाडी पहुँच गया। इस समय कुछ मराठा दल [illegible]वसवा, महुआ, मण्डावर मे मौजूद थे। इसस दुर्रानी सेनाओ ने जयपुर राज्य के दक्षिण-पूर्व मे प्रवेश करके भारी लूटमार की। कटाके तथा खोवारी (कुके व खोबारी ?) के जमीदारो ने लूटमार न करने का आश्वासन मिलने पर दुर्रानी सेना को धन देकर अपने गावो को बचा लिया। शाह दुर्रानी का विचार सवाई माधोसिंह के पास जाकर विचार-विमर्श करने का था। कुछ मराठा सावत सिंह कल्याणोत की गढ़ी उदरेणी व खेडली मे मौजूद थे। इससे मार्ग मे उसके सैनिको न महवा (महुआ), उदरेणी की रैय्यत को कत्ल करके गाव को बरबाद कर दिया था, किन्तु वसवा (बादीकुई के उत्तर में १६ किमी०) परगना के जमीदारो ने अफगानो को भारी रकम देकर अपने गावो को लूट से बचा लिया।[१] यहा पर दुर्रानी को समाचार मिला कि मराठा दल दिल्ली के पश्चिमी परगनो मे लूटमार कर रहे हैं और उन्होने कानोड से चौथ मे दस सहस्र रुपया वसूल कर लिया है। इसी से बाध्य होकर दुर्रानी को मेवात मार्ग से पीछे की ओर हटना पडा और शीघ्र ही रेवाडी पहुँचा। यहाँ से उसने २२ फरवरी को अज्ञानवश दिल्ली की ओर १३ किमी० प्रस्थान किया, परन्तु मराठो के पलायनवादी सवार उसके हाथ से निकल गये। २३ फरवरी को मल्हार राव रेवाडी से ९४ किमी० उत्तर तथा दिल्ली से २२ किमी० पश्चिम में बहादुर गढ मे था। २४ फरवरी को मराठा टुकडिया कालिका देवी के पास दिखलाई दी और २६-२७ फरवरी को मल्हार अपनी टुकडियो सहित यमुना नदी के पार दोआब मे चला गया। शाह दुर्रानी भी उसका पीछा करता हुआ २७ फरवरी को दिल्ली के दक्षिण-पश्चिम में ३२ किमी० धनकोट, २८ को खिजाबाद पहुँचा और दूसरे दिन जहान खा को दोआब की ओर रवाना कर दिया।[२] इस स्थिति को देखकर २६ फरवरी को माधो सिंह ने महाराजा सावत सिंह को अपने खरीता म लिखा—"पठान भारी है।

---

१ — दे० कॉनो०, पे० द०, खड २, लेख ११८, खरे खण्ड १ लेख २१, शेजवलकर, पृ० ६१, ड्रा० ख० प०, जि० ७, लेख १३८३।

२ — पे० द०, खण्ड २, लेख ११८, १२१, खण्ड २१, लेख १८२, १८६; खण्ड २७, लेख २५१; फलके, खड १, लेख २२०, खरे, खड १, लेख ३२-३४; हिंगणे, जि० २, लेख ४२; राजवाडे जि० १, लेख ६१२, दे० कॉनो० पृ० ११३-११४, काननगो, पृ० ११७; गडासिंह, पृ० २३८; शेजवलकर, पृ० ५८, ६०-६१।

दखनी इसके मुकाबिले नही हो सकने। वे आगे आगे चलते जा रहे हैं और पठान उनके पीछे पीछे दबाव देते जाते हैं। इससे अभी दोनो रकाबो मे पैर रखना है। दखनी अभी हाल में चरखी, दादरी के समीप हैं और दोनो का बराबर कूंच होता जा रहा है।" १ इस प्रकार जाट–मराठा कज्जकाना अभियान के कारण दुर्रानी का डीग अभियान कौशल युद्ध मात्र ही सिद्ध हो सका और वह सूरजमल को सैनिक शक्ति से दबाने में विफल रहा।

६ – मल्हार राव की सिकन्दराबाद के निकट पराजय, ४ मार्च

मराठो की पलायनवादी टुकडिया जब मेवात मे घूम रही थी, तब जाट टुकडियो ने दोआब में प्रवेश किया और उन्होने परगना कोइल से आगे बढकर शाही परगनों में लूटमार शुरु कर दी थी। इससे दुर्रानी को भय हो गया था कि कही जाट सैनिक पीछे से उसकी रसद–व्यवस्था को भंग नही कर दें, इससे उसको हताश होकर डीग का घेरा उठाना पडा। मल्हार राव ने २८ फरवरी को सम्पन्न तथा समृद्ध नगर सिकन्दराबाद को बुरी तरह लूटा। यद्यपि मल्हार को गुरिल्ला युद्ध नियमो के अनुसार लूट के बाद शीघ्र ही यह नगर छोड देना चाहिये था, किन्तु दोआब (अन्तर्वेद) के जाट सरदारों के माध्यम मे उसको यहा समाचार मिला कि अफगानो के सरक्षण में नजीब की गगा–पारी जागीरो से दस लाख रुपया का खजाना शाह की छावनी के लिए आ रहा है और इस समय यह काफिला अनूपशहर के आसपास चल रहा है। इस लालच मे आकर वह उस खजाने पर झपटा। मल्हार का यह समाचार मिलते ही दुर्रानी ने बिना किसी व्यवधान के तोपखाना तथा शिविर सामग्री रहित पैंतीस सहस्र अफगान सवारों को जहान खा व नजीब खां के नेतृत्व मे दो भागो मे विभक्त किया। राजा सूरजमल को दुर्रानी की इस योजना का शीघ्र ही पता लग गया और उसने उसी समय दीवान गंगाधर तात्या को दुर्रानी के इस आकस्मिक आक्रमण की सूचना भेज दी। फलत. मराठो की पलायनवादी टुकडिया भी दो दलो मे विभाजित हो गईं। कृष्णाजी श्यामराव लिखता है— 'इसी समय एक दिन सूरजमल के शुतुर सवार ने जनकोजी को यह समाचार दिया कि दुर्रानी की सेना इधर आ रही है। अतः आप यह स्थान तत्क्षण छोड दें। मल्हार राव स्वय घबडा गया और उसने रूपराम कटारा को बुलाकर जख्मी जनकोजी की रक्षा करने की प्रार्थना की। तब रूपराम ने कहा— "इनकी जान से पहिले हमारी जान है, चिन्ता न करें।" फलत· रूपराम कटारा, जनकोजी तथा उसके सैनिको के साथ मथुरा–आगरा की ओर वापिस लौटने लगा। इस प्रकार मल्हार तथा जनकोजी की सेनायें आपस

---

१ — डूपट खरीता, जि० ७, लेख १३६२।

तें अलग-अलग हो गई थी। मल्हार ने अपने दीवान को दुर्रानी की गति को रोकने का आदेश दिया। इसी बीच में अहमद शाह ने शाह पसन्द खां, कलन्दर खां तथा जहान खां की कमान में पन्द्रह सहस्र सवारों की एक सुदृढ़ सेना मल्हार को बरबाद करने के लिए रवाना की। इस सेना ने २४ घंटों में ११२ किमी० का मार्ग तय करके दिल्ली में पड़ाव डाला और यहां से मध्य रात्रि के बाद यमुना नदी पार की। ४ मार्च को प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व ही अफगान सवार सिकन्दराबाद पहुंच गये और दीवान गंगाधर की चौकी पर आकस्मिक धावा बोल दिया। असावधान मराठा अफगानों का सामना करने में विफल रहे। खड़बड़ाहट में होल्कर को कुछ नहीं सूझा और वह अपने सामान व शिविर को लुटेरों के हाथ में छोड़कर बिना काठी के घोड़े की पीठ पर सवार होकर भाग निकला। तीन सौ अन्य मराठा सवारों ने भी उसका अनुसरण किया। तीन प्रमुख मराठा सरदार आनन्द राव जादव, शम्भाजी खराड़े, उनका पुत्र फकीरजी तथा अन्य बहुत से साधारण सैनिक झड़प में खेत रहे। अफगानों ने मराठा शिविर, उनके घरेलू सामान, साधन तथा घोड़ों पर अपना अधिकार कर लिया। मल्हार राव स्वयं नंगे पैर बिना काठी तथा जीन के घोड़े पर सवार दिन रात भागता रहा। १२९ किमी० चलकर उसने यमुना पार की और आगरा में शरण ली। इसी समय उसके पीछे दीवान गंगाधर मथुरा पहुंच गया। जहान खां ने उसका मथुरा के समीप यमुना पार तक पीछा किया और बाद में उसको हताश होकर जाटों के भय से पीछे लौटना पड़ा। इस प्रकार राजा सूरजमल की निश्चित सूचना ने जनकोजी तथा मल्हार को भयंकर विनाश से बचाकर मित्रता का परिचय दिया। लेकिन अब मराठों का कुजकाना अभियान भी विफल हो गया। जब मल्हार राव भरतपुर से ४८ किमी० दूर आ गया, तब सूरजमल स्वयं उससे मिलने पहुँचा। इन कठिन परिस्थितियों से बाध्य होकर मराठा सरदारों को राजा सूरजमल के साथ अब तक सम्पन्न सभी समझौतों को निरस्त करके नवीन समझौता करना पड़ा। मल्हार राव ने इस समय बेल भंडार तथा गंगाजल हाथ में लेकर पारस्परिक मित्रता की शपथ ली और वचन दिया कि पूर्व में हमारे साथ जो-जो क़रार हुये हैं, उन पर वह स्वेच्छा से निर्णय करेगा। इसके बाद जाट शासक ने सम्मान सूचक पोशाक भेंट करके उससे विदा ली और भरतपुर लौट आया। मल्हार कूच करके बयाना के दक्षिण-पश्चिम में १९ किमी० दूर सूरौठ पहुँच गया।[1]

---

१ – पे० द० खण्ड २, लेख १०२, १२१, खण्ड २१, लेख १८७, १८८, राजवाड़े, जि० १, लेख १८७, जि० ६ लेख ४०३, होल्कर कैफीयत, पृ० २३, भाऊ बखर, पृ० ७७-८१ ९८-१००, खरे, जि० १ लेख १७, २०, होल्कर शाही, जि० १, लेख १५२, ता० मुजफ्फरी, पृ० १७८, दे० क्रॉनो० पृ० ११४, सियार, जि० २, पृ० ३८१, नूरुद्दीन पृ० ५७, इ० डा, खण्ड ८, पृ० २७२, ग्रांट डफ, खण्ड १, पृ० ६०४-५, शाकीर, पृ० १०६, कानूनगो पृ० ११६।

दुर्रानी के डीग आने पर सूरजमल ने राव हेमराज को माधो सिंह के पास जाकर बातचीत करने का सुझाव दिया था और १४ फरवरी को कछवाहा दरबार ने उसको आने की स्वीकृति भी प्रदान करा दी थी, किन्तु अचानक अस्वस्थता के कारण फरवरी के तीसरे सप्ताह मे उसका परलोकवास हो गया था। फलतः मार्च में सूरजमल ने अपने पुत्र कुंवर नाहर सिंह को जयपुर भेजने की इच्छा व्यक्त की। तब २ अप्रेल को माधो सिंह ने उसको अविलम्ब ही आमन्त्रित किया। इधर १९ अप्रेल को पंडित गोविन्द राव ने माधो सिंह को आश्वस्त किया कि सूबेदार जी (मल्हार) आपसे किसी भी प्रकार अलग नहीं है। इस प्रकार सूरजमल तथा मराठा नियमित रूप से कछवाहों से सम्पर्क बनाये हुये थे।[1]

७ – दुर्रानी का रामगढ़ तथा दोआब के परगनों पर अधिकार, मार्च, १७६० ई०

दोआब मे मराठों की पराजय तथा विनाश ने सूरजमल के लिए एक नवीन उलझन तथा समस्या पैदा कर दी थी। अफगान सैनिकों ने दोआब में जाट शासक के परगनों मे प्रवेश करके लूटमार शुरू की। दुर्रानी स्वयं नारनौल से दिल्ली पहुँच गया और वहां से उसने मध्य दोआब की ओर प्रस्थान किया। इस समय दीवान गंगाधर फतेहाबाद में था। जब जहान खां दीवान गंगाधर का पीछा करता हुआ मथुरा की ओर बढ़ा, तब दुर्रानी भी पीछे-पीछे चल दिया और ५ मार्च को वह जाट शासक के प्रमुख गढ़ रामगढ़ पहुँच गया। उसने २६ मार्च को रामगढ़ नगर को लूटकर बुरी तरह बरबाद कर दिया। सूरजमल ने रामगढ़ की मरम्मत पर काफी द्रव्य व्यय किया था और इसके चारों ओर खाई खोदकर सुदृढ़ कर लिया था। १७५५ ई० से इस दुर्ग का किलेदार तथा जिला प्रशासक बिजौली का जाट सरदार दुर्जनसिंह था। जाट शासक ने उसके पुत्रों सावंत सिंह तथा खुशहाल सिंह को एक लाख की जागीर प्रदान कर दी थी। १७५७ ई० में दुर्जन सिंह ने छर्रा तथा भामोरी से सरवानी पठानों को निकाल कर वहां गढ़ियों का निर्माण कराया और अपने आपको सशक्त कर लिया था। रामगढ़ का दुर्ग तोप, गोला-बारूद, अन्न भण्डार तथा अन्य साधनों से पूर्ण सुरक्षित था। इस दुर्ग मे जाट लड़ाकू सैनिकों की कमी थी, फिर भी सूरजमल को आशा थी कि दुर्जनसिंह दुर्रानी आक्रमण से इसकी रक्षा कर सकेगा।

दुर्रानी के लुटेरा दलों ने परगना बुलन्दशहर मे यमुना के पूर्वी तट पर तैनात

---

१ – इ० स० प०, जि० ७, लेख १३६२ (२९ फरवरी), १४७४ (४ मार्च), १२९३ (१. अप्रेल), १४८१ (११ अप्रेल)।

समस्त जाट थानो को उखाड दिया और उपरि दोआब पर रुहेला दलो ने लूटमार करके अपना अधिकार कर लिया। इसी समय अफगानो ने दक्षिण मे शिकोहाबाद तथा इटावा परगनो के मराठा थानो को भी घेर लिया था। रामगढ तथा डीग के बीच म ९८ किमी० की दूरी थी और इनके बीच मे यमुना नदी एक रुकावट थी। अफगानो के प्रयास से रामगढ का जाट राजधानी से सम्बन्ध विच्छेद हो चुका था और दुर्जनसिह को तात्कालिक फौजी मदद मिलना कठिन था, फिर भी उसने करीब पन्द्रह दिन तक दुर्रानी सेना का बहादुरी से सामना किया। समीपस्थ ठेनुआं सरदारों का उसको हार्दिक सहयोग नही मिल सका। इससे हताश होकर २६ अप्रैल को दुर्ग रक्षको ने समर्पण कर दिया। दुर्जनसिह रामगढ दुर्ग से सकुशल निकलने मे सफल रहा। नजीब खा ने इस दुर्ग पर अधिकार कर लिया और इसका नाम "अलीगढ" रखा।[१] फिर उसका जलेसर पर भी कब्जा हो गया। शाह दुर्रानी का विचार अपने देश को वापिस लौटने का था, किन्तु नजीब खा के आग्रह पर उसने हिन्दू शक्तियो को दबाने के लिए ग्रीष्मकाल मे रामगढ में ही अपना डेरा डाल दिया। इसी समय समाचार आ रहे थे कि सदाशिव राव भाऊ विशाल सेना के साथ हिन्दुस्तान की ओर कूच कर रहा है।[२]

८ – सूरजमल व मल्हार की दुर्रानी से समझौता–वार्ता, अप्रेल–मई, १७६० ई०

रामगढ दुर्ग तथा परगना जलेसर के आकस्मिक पतन से सूरजमल का उत्साह मन्द पड गया था। ३१ मार्च को फर्रुखाबाद का नवाब अहमद खा बगश भी दुर्रानी की सेवा मे आकर उपस्थित हो गया था। सवाई माधोसिह का वकील राय हर प्रसाद उसकी छावनी मे मौजूद था। मराठा सरदार भी उससे वार्ता करने को तैयार थे। गगापारी सभी रुहेला तथा अफगानों के नजीब खा के साथ अच्छे सम्बन्ध नही थे। मुख्यत. हाफिज रहमत खा उसका विरोधी था और वह शाह दुर्रानी के हिन्दुस्तान से वापस लौट जाने के पक्ष मे था। जाट राजा सूरजमल तथा मराठा सरदारो के प्रयास के बाद वह नजीब खा के विरुद्ध शांति–समझौता वार्ता कराने के लिए तैयार हो गया था। फलत: हाफिज रहमत खा के वकील, पुरुषोत्तम महादेव हिंगणे, गगाधर पन्त, नवाब वजीर इमादुल्मुल्क ने डीग मे एकत्रित होकर आपस मे विचार विमर्श किया।

---

१ – ता० हुसैन शाही, पृ० ५२–३; इमाद, पृ० ७६–७७; नूरुद्दीन, पृ० ३२ ब, मिसकिन, पृ० २१०, दे० फ्रांनो, वेण्डल, पृ० ७६–८०, हरीराम, पृ० १३२।

२ – पे० द०, खण्ड २, लेख १२१; नूरुद्दीन, पृ० ३३ ब, मिसकिन, पृ० २१०, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १५४।

१२ मार्च को पुरुषोत्तम महादेव हिंगणे ने अपने पत्र मे लिखा—"हाफिज रहमत खा हमारे सरदार से आकर मिलना चाहता है और उसका कहना है कि वह दुर्रानी को वापिस कर देगा। फिर वह नजीब खा की शक्ति का दमन करने के लिए अपनी सेना के साथ हमसे आकर मिलने को तैयार है। वह इस बात की प्रतिज्ञा करता है कि आगे फिर नजीब की सहायता नहीं करेगा। हमारे सरदार इस बात पर सहमत हो गये हैं कि वे उसके मार्ग मे कभी विघ्न नही डालेंगे और उसके गगापारी प्रदेश में प्रवेश करके आगे उपद्रव नही करेंगे और न अधिकार ही करने का प्रयास करेंगे। इस विषय मे दोनो ओर से सपथ ले ली गई है।" दूसरी ओर दुर्रानी तथा मल्हार दोनो ही अपने कूटनयिक प्रयत्नो में सूरजमल को मध्यस्थ के रूप मे प्रयुक्त कर रहे थे।[1] अत. यह निश्चित ही था कि सूरजमल के सतत् प्रयास तथा मध्यस्थता से मल्हार राव की शाह दुर्रानी पक्ष से शाति–समझौता वार्ता चल चुकी थी।

मल्हार राव ने जाट राज्य मे आश्रय प्राप्त करके हाफिज रहमत खा के दूत को बातचीत के लिए बुलवाया और इस दूत ने मल्हार तथा दीवान गंगाधर तात्या से बातचीत की। इस वार्ता मे यह निश्चय किया गया कि हाफिज रहमत खा स्वय आकर बातचीत करे। सूरजमल को यह विश्वास हो चुका था कि मल्हार राव की मित्रता के बाद भी शाह दुर्रानी हिन्दुस्तान से निकट भविष्य मे वापिस नहीं लौटेगा। वजीर इमादुलमुल्क सेना, साधन तथा धनहीन था। तब सूरजमल ने उसको भी दुर्रानी से सीधी बातचीत करने के लिए मुक्त कर दिया था। उसने रुहेला सरदारो के पास अपना वकील भेजा, ताकि उनकी मध्यस्थता से शाह दुर्रानी के साथ समझौता हो सके। हाफिज रहमत खा ही एकमात्र प्रभावी रुहेला सरदार था, जिसके प्रयास से दोनो मे बातचीत चल सकती थीं। रुहेलो ने इस प्रस्ताव को स्वीकार करके हाफिज रहमत खां को इमाद से वार्ता करने के लिए नियुक्त किया। सूरजमल ने समझौता वार्ता की शर्तें तय करने के लिए २६ अप्रेल को दुर्रानी की रामगढ़ छावनी मे अपना दूत रवाना किया। इस समय दुर्रानी ने सूरजमल से पेंतीस लाख रुपया खिराज की माग की।[2] साथ ही उसने वजीर इमादुलमुल्क से दो करोड रुपया भुगतान की माग की। यद्यपि वजीर ने इस माग को स्वीकार कर

---

१ – पे० द०, खण्ड २, लेख १२१, भाऊ बखर, पृ० ७७–८१, होलकर, पृ० ६३, ७२।

२ – मुइद्दीन, पृ० ५७; वेण्डल, पृ० ८०; इमाद, पृ० ७७; दे० क्रॉनी० ११६; ता० हुसैन शाही, पृ० ५२–३; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १८३; हरीराम, पृ० १३८।

लिया था, परन्तु उसने तीस लाख रुपया नकद भुगतान और शेष रकम के बदले में शाही परगने हस्तांतरित करने का प्रस्ताव रखा। इसी बीच में मल्हार पड़ गया और उसने इमाद को वजीर पद का आश्वासन दिया। इससे यह समझौता विफल हो गया और इमाद को सूरजमल के संरक्षण में रखना पड़ा।[1]

अब दुर्रानी ने सूरजमल को मराठों की मित्रता से विमुख करने का विचार किया और इस कार्य के लिए उसने हाफिज रहमत खां की मध्यस्थता को स्वीकारा। उसने हाफिज को आपसी मित्रता का संदेश लेकर जाट तथा मराठों से अलग-अलग वार्ता करने के लिए मथुरा भेजा।[2] १६ मई को रमजान का पवित्र महीना व्यतीत हो गया था। ईद मनाने के बाद हाफिज रहमत खां, सूरजमल तथा मल्हार राव से शांति-समझौता वार्ता करने के लिए दुर्रानी की छावनी से मथुरा पहुँचा। सूरजमल, इमाद तथा दीवान गंगाधर यशवंत तात्या ने उससे मथुरा पहुँच कर मुलाकात की और फिर वे उसको भरतपुर ले आये जहां लगभग एक माह (२१ शव्वाल=१७ मई-८ जून) तक बातचीत चलती रही। इस समय भाऊ द्रुतगति से उत्तर की ओर बढ़ रहा था और उसने चम्बल नदी पार करके जाट राज्य में प्रवेश कर लिया था। फलतः मराठों के दुराग्रह तथा शाह दुर्रानी की क्षतिपूर्ति की बढ़ती मांग के कारण सूरजमल के साथ होने वाले समझौते का प्रयास ८ जून को विफल हो गया और २० जून को हाफिज रहमत खां निराश होकर अपने स्वामी के पास कोइल वापिस लौट गया।[3]

१७६० ई० का वर्ष हिन्दुस्तान में प्रमुख घटना प्रधान था। विदेशी आक्रान्ता शाह अफगान तथा मराठों ने राजनैतिक क्षितिज को युद्ध के काले भयंकर बादलों से घना कर दिया था। जाट नरेश के लिये प्रथम छः महीने सर्वाधिक कष्टप्रद थे। वह स्वयं शाह दुर्रानी के साथ अन्तिम निर्णायक युद्ध में नहीं फंसना चाहता था। उसका विचार शाह को हिन्दुस्तान से खाली हाथ लौटने के लिये विवश करना था। नजीब खां के आग्रह पर शाह दुर्रानी मुगल साम्राज्य के शव पर अफगान रुहेलों की शक्ति को पुनः जीवित करने के लिये युद्ध करना चाहता था और वह साम्राज्य के हितों को विरुद्ध धकेलकर धर्म के नाम पर युद्ध की ज्वाला भड़का रहा

---

१ – फ्रैंकलिन, पृ० १६।

२ – देहली क्रॉनी० पृ० १९६, ता० हुसैन शाही, पृ० ४९, शाकिर, पृ० १००।

३ – पे० द०, जि० २ लेख १२४ १२७, राजवाडे जि० १ लेख १८६ १९१-१९६, १९८-२००, २०४, २०९, २१२, २१५, २१७ जि० २१ लेख ५०९, ता० हुसैन शाही पृ० ५३, दे क्रानी, पृ० १९६ १९९, हयाते हाफिज पृ० ८८ ९, शाकिर, पृ० १००, कानूनगो, पृ० १२०, हरीराम, पृ० १३८, १४२।

था। पतनोन्मुख मुगल साम्राज्य के खण्डहरो पर दिल्ली मे अफगान वंश की पुनर्स्थापना सम्पूर्ण भारतीय शक्तियों की आँखो मे कांटे की तरह चुभने वाली थी। शुजा स्वयं हिन्दुस्तान मे दुर्रानी शक्ति की स्थापना को स्वीकार नही कर सकता था। सूरजमल ने शुजा से इस समय तटस्थ रहने का अनुरोध किया था। किन्तु मराठो की भूल, एक देशीय सकुचित दृष्टिकोण ने उसको हाथो से निकाल दिया और वह १८ जुलाई को दुर्रानी की छावनी में पहुँच गया।[1]

६—सदाशिव राव भाऊ का प्रस्थान

बाजीराव पेशवा को दत्ताजी की मृत्यु का समाचार फरवरी १५, १७६० ई० को अहमदनगर शिविर मे मिला। उसने अतरंग परिषद की सलाह पर अपने चचेरे भाई सदाशिव राव भाऊ को विशाल तथा समुचित युद्ध प्रसाधनो के साथ हिन्दुस्तान के अभियान का नेतृत्व सभालने की आज्ञा प्रदान की। उस पर निश्चित अकुश रखने के लिये पेशवा ने अपने प्रतिनिधि के रूप मे अपने सत्तरह वर्षीय पुत्र विश्वास राव को प्रधान सेनापति का पद व अधिकार प्रदान किया। सुप्रसिद्ध मुस्लिम तोपची इब्राहीम खा गार्दी की कमान मे दक्षिण भारत का सर्वश्रेष्ठ तोपखाना था, जिसमे ८१९४ छोटी-बडी, भारी व हल्की तोपें, फ्रांसीसी युद्ध नियमो मे दक्ष आठ सहस्र तोपची, ८०० मन बारूद, १५० मन सीसा, ९९१५० बन्दूको के लिये चकमक थे।

हिन्दुस्तान विजय का पूर्ण साज-सामान तथा निराले ठाटबाट के साथ भाऊ के नेतृत्व मे मराठा सेना ने कूच किया। पेशवा ने भाऊ को मराठा कोषागार से एक करोड रुपया नकद; बाईस सहस्र मराठा सैनिक (दस सहस्र खास पगा हुजरात तथा बारह सहस्र अधीनस्थ सेनापतियो की सेना) साथ मे दिये। इनके अतिरिक्त तेईस सहस्र अस्थाई पलायनवादी लुटेरा सेवक, बारबरदार, हाली-मवाली दुकानदार साथ थे। सदाशिव राव भाऊ यद्यपि योग्य, अनुभवी, तथा साहसी सेनापति था। परन्तु उसका स्वभाव उग्र तथा उद्गिर विजयोन्माद के कारण अभिमानी था। उसको हिन्दुस्तान मे प्रथम बार अनुभव प्राप्त करना था। रघुनाथ राव दादा तथा भाऊ के पारस्परिक विरोध ने मराठो की दुर्बलता में योग दिया और वे हिन्दुस्तान मे

१—राजवाडे, जि० १, लेख १६१, २०४, २१७ अ, २१९, २२२, २२६, २३३ २३६, ता० हुसैनशाही, पृ० ४२; ता० मुज्जफरी, पृ० १७९, काशीराज, पृ० ५, १० ११, पे० द०, खड २१, लेख १८६; इमाद, पृ० ७५, ७९—८१; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १६४, गण्डासिह, पृ० २४०—४१; हरीराम, पृ० १३५।

प्रचलित युद्ध शैली के अनुभवों से वंचित हो गये थे।[1]

मराठों का यह अभियान शिवाजी महान तथा पेशवा बाजीराव प्रथम की गुरिल्ला युद्ध शैली के विपरीत मुगल सम्राटों की भड़कीली तथा विशाल सैन्य प्रदर्शन युद्ध कला का अंग था। विशाल सेना तथा वैभव को देखकर ही बाजीराव द्वितीय ने भाऊ के प्रस्थान के साथ ही विजय-नाम का विश्वास कर लिया था। उसने उनको विदाई देते समय कहा—"आप अपने इस भतीजे को अपने साथ हिन्दुस्तान में ले जावें और अफगानी के शत्रु मुगल सम्राट तथा उसके पड़ौसी सरदारों को अपने पक्ष में मिलाने का प्रयत्न करना। मैं स्वयं निकट भविष्य में अन्य शक्ति-सम्पन्न प्रबल सेना के साथ आपके पीछे आ रहा हूँ। भवानी जी की कृपा से मैं कंधार को प्राणी शून्य कर दूंगा और पृथ्वी से अफगान वंश के अंकुर को भी नष्ट कर दूंगा। इसके बाद केवल शुजाउद्दौला तथा नवाब जाफर अली खां (नवाब बंगाल, मीरजाफर) आदि एक-दो मुसलमान ही मेरे सामने युद्ध करने को शेष रहेंगे। यदि उन्होंने मेरे साथ तलवार उठाने का प्रयत्न किया तो उनका अस्तित्व ही समाप्त कर दूंगा और यदि उन्होंने आत्म-समर्पण कर दिया, तो वह परकैंच कबूतरों की भांति रहेंगे। फिर विश्वासराव को दिल्ली की गद्दी पर आसीन करके मैं तीर्थाटन को चला जाऊंगा।" पेशवा की यह गर्वोक्ति मराठा उत्कर्ष, दिग्विजय तथा मराठा राष्ट्र की भावी नीति को स्पष्ट करती है। परन्तु भाऊ की हठधर्मी ने इस पर तुषारापात कर दिया और मराठों के प्रतिवर्ष होने वाले आक्रमणों से हिन्दुस्तान के शासक तथा नागरिकों को कुछ वर्षों के लिए शांति मिल गई।[2]

मराठों की इस विशाल सेना ने २५ मार्च को सिंध खेड़ा से कूंच किया। और ३० मई को ग्वालियर में पड़ाव डाला। ग्वालियर से आगरा केवल ११२ किमी० था। यहां रुककर सदाशिव राव भाऊ ने आक्रमण की योजना तैयार की। उसने बरसाती नदियों को पार करने के लिए गोविन्द पंत बुन्देला को विशाल व भारी नावों का बेड़ा तैयार कराने का निर्देश दिया, किन्तु वर्षा से नदियों में भीषण बाढ़ आने लगी थी। प्राकृतिक प्रकोप, दलदल तथा मार्गों की रुकावट के कारण उसको अपनी योजना स्थगित करनी पड़ी। २ जून को ग्वालियर से रवाना होकर ४ जून को मराठा सेनापति ने कुंवारी नदी और मल्हार के मार्गदर्शन में ८ जून को

---

१ – पे० द०, खण्ड २, लेख १२२, खरे, जि० १, लेख १४, राजवाड़े, जि० १, लेख १६७, १६८, ग्रांट डफ, खंड १, पृ० ६०६-७, ५८६, मैकडोनल्ड, पृ० ४-५, सरकार (मुगल), खण्ड २. पृ० १६०-१६१।

२ – इमाद पृ० ७७, आशीर्वादीलाल, मुगलकालीन भारत, पृ० ५१०, विद्यावाचस्पति पृ० १५६-६०।

धौलपुर के दक्षिण में १६ किमी० चम्बल नदी पार की। अब वह जाट राज्य की सीमाओं में था और यहा पर वह एक माह से अधिक १२ जुलाई तक पड़ा रहा।[१]

१० — मराठो की निराशायें

इस समय उत्तर भारत मे राजा सूरजमल जाट, शुजाउद्दौला, अहमद खा बगस, राजपूत और सिख ये पाच महान राजनैतिक शक्तिया थी। फर्रुखाबाद का नवाब अहमद खा बगश मराठो का सहयोगी मित्र था और सूरजमल की सत्सलाह से नवाब शुजाउद्दौला भी उनके प्रति सहानुभूति तथा मैत्री–भावना रखता था। सूरजमल इनसे मिलकर आसानी से समझौता करा सकता था। अहमद शाह दुर्रानी को हिन्दुस्तान मे राजपूत शासको तथा जमीदारो से मदद नही मिल सकी और अन्त में हताश होकर उसने "मुस्लिम धर्म तथा शासन" के नाम पर भारतीय मुस्लिम शक्तियो को सगठित किया। राजधानी मे शाह वली उल्लाह भी मुसलमानों को सगठित कर रहा था और उसने भारत मे "मुस्लिम धर्म, मुस्लिम समाज तथा सुदृढ मुस्लिम शासन" की स्थापना का प्रचार शुरू कर दिया था। राजधानी मे नित्यश नई–नई अफवाहे, निराशाजनक समाचार फैलते थे। मुख्यत. इनका सम्राट तथा मुगल अमीरो पर अधिक प्रभाव था। शाह वली उल्लाह ने अमीरो को आश्वस्त करने का जी तोड प्रयास किया। दिल्ली मे खालसा व तन विभाग का दीवान मज्दुद्दौला (अब्दुल अहद खाँ या अब्दुल मजीद खा) प्रभावशाली सरदार था। शाह वली उल्लाह ने उसको लिखा — "वे कायर तथा लम्पट व्यक्तियो द्वारा फैलाई अफवाहो पर ध्यान नही दें। उनको जाट तथा मराठो के विनाश मे विश्वासी होना चाहिये, क्योकि यह बात फरिश्तो की दुनिया मे तय हो चुकी है। यदि उस बदमाश (भाऊ), जो तैमूरी राजवश की जडों को उखाडने के लिए कृत सकल्प है, के आगमन का समाचार सत्य है, तो मेरे पास इष्ट–फलदायक उपाय है।"[२]

इसी समय मराठा सरदारो ने सहधर्मी, सम्पन्न जागीरदारो को इस्लामी शासन के दासत्व से मुक्त कराने के लिए शाह दुर्रानी के विरुद्ध सहयोग देने की अपील की। भाऊ ने सवाई माधोसिंह, विजयसिंह राठौड, कोटा–बूदी के महाराव, महाराणा उदयपुर, बुन्देलखण्ड के राजपूत शासको के पास अपने वकीलों के साथ पत्र भेजे और उनको "हिन्दू स्वराज्य" की स्थापना मे सहयोग देने के लिए आम-

---

१ — राजवाडे, खण्ड १, लेख १६५–६, १६६, २०२; सरदेसाई, खण्ड २, पृ० ४१७, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १६२।

२ — सियासी मक्तूबात, पत्र संख्या २४, पृ० ८७।

न्वित किया। परन्तु मराठों की चौथ, सइनी की माग की स्पष्टता के कारण भाऊ के वकीलों को राजपूत दरबारों से सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिल सका। राजपूत नरेशों ने कहा, "यदि वह दुर्रानी अथवा मुगल सत्ता को उखाड़ने में सफल हो गये, तब सर्वोच्च सत्ता मराठों मे केन्द्रित हो जावेगी। मराठा शासन अधिक कष्टप्रद होगा। फिर उनके भाग्य का क्या होगा?" इस समय किसी भी वकील ने इन शासकों को मराठों की भावी नीति या सिद्धान्त की रूपरेखाओं मे अवगत नही कराया और न सुरक्षा का आश्वासन ही दिया। दिल्ली के समीप सर्वाधिक साधन-सम्पन्न चतुर, कुशल, तथा योग्य जमीदार सूरजमल था, जिसको दोनो पक्षो ने अपनी ओर मिलाने का प्रयास किया। दुर्रानी ने अन्तिम समय तक उसको मराठों से पृथक् करने का प्रयास किया। किन्तु सूरजमल ने राष्ट्रीय हित तथा लोक-हित मे दुर्रानी का पक्ष स्वीकार नहीं किया और भारतीय सहिष्णुता तथा साम्प्रदायिक मतभेदों के कारण अपनी स्वाधीनता को उनके हाथो मे नहीं सौंपा। फिर भी उसने जनकोजी सिंधिया तथा मल्हार राव से सुरक्षा का आश्वासन न मिलने से पूर्व स्वयं भाऊ की छावनी मे जाकर उपस्थित होना उचित नही समझा।[१]

मराठों का आश्वासन, जून, १७६० ई०

राजा सूरजमल हिन्दुओं में अति निपुण, योग्य व चतुर सरदार था। बाजी राव पेशवा की यह सामयिक नीति थी कि शाह दुर्रानी को पराजित करने के लिए जाट सूरजमल को किसी भी प्रकार मराठा पक्ष मे रखा जावे। उसने सदाशिव राव भाऊ को यह सलाह दी थी कि वह सूरजमल से १७५४ ई० की बकाया क्षति-पूर्ति की शेष रकम के लिए अधिक जोर नहीं डाले।[२] फलतः भाऊ ने चम्बल नदी पार करने से पूर्व ही सूरजमल के नाम नम्रता प्रगट करते हुए एक पत्र लिखा, जिसमे "हिन्दू स्वराज्य तथा हिन्दू धर्म की रक्षा" के नाम पर हिन्दुस्थान मे मराठा शिविर की सर्व प्रकार की व्यवस्था करने, एकता तथा मित्रता की प्रार्थना की। उसने अपने पत्र मे लिखा "सभी भारतीय अफगान एक दिल हो गये हैं। उन्होंने अहमदशाह दुर्रानी को विलायत से बुलाकर उससे प्रार्थना की है और इच्छा प्रगट की है कि हिन्दुस्तान से हिन्दुओं की सत्ता को समाप्त कर दिया जावे। हमने भी इस मुकाबले के लिए हिम्मत करके कमर बाध ली है। इस अवसर पर यह आव-

---

१ – राजवाडे, जि० १ लेख १७४; पे० द०, खण्ड २६, लेख ४१; शिन्देशाही, जि० २ लेख १०; इमाद पृ० १७६; इ० हि० का० प्रो, १९४५ ई०, पृ० २५८-५६, शेजवलकर, पृ० ७३; महाराजकुमार, पृ० ३८; कानूनगो, पृ० १२२-३।

२ – पे० द०, खण्ड २, लेख १२६, खण्ड २७, लेख २५५; पानीपत प्रकरण, पृ० १६०।

श्यक है कि आप अपनी भलाई चाहते हुए हमारे साथ में रहें। आपने हमारी मित्रता से हिन्दुस्थान में नाम कमाया है और आप मुसलमानों की ओट में अकेले हैं। आपने नजीब खां से शत्रुता मोल लेकर पेशवा सरकार के प्रश्रय (संरक्षण) में यश व प्रतिष्ठा प्राप्त की है। अतः यह आपका उत्तरदायित्व है कि आप इस पत्र के मिलते ही शीघ्रातिशीघ्र हमारी छावनी में आकर उपस्थित हों और जो फौज घिरी हुई है, उसको अपने साथ में रखें।" [१]

भाऊ का वकील बापूराव (नाना फड़नीस का चाचा) सूरजमल की छावनी में आया, जहां उसका हार्दिक स्वागत व सत्कार किया गया। इस समय मल्हार राव तथा जनकोजी सिंधिया अपनी मराठा टुकड़ियों के साथ जाट-मुल्क में आतिथ्य ग्रहण कर रहे थे और अहमदशाह दुर्रानी का वकील हाफिज रहमत खां मथुरा में रुककर शांति-समझौता वार्ता करने में व्यस्त था। मल्हार राव ने सूरजमल से भाऊ को सहयोग देने तथा उसकी छावनी में चलकर मिलने का आग्रह किया। यद्यपि सूरजमल ने उसके अनुरोध को स्वीकार कर लिया था, परन्तु इस समय सन्देह निवारणार्थ कतिपय सुरक्षा-व्यवस्थात्मक आश्वासन प्राप्त करने का सफल प्रयास किया। उसने भाऊ के वकील से मांग की—

(१) जाट-मुल्क की सीमाओं में किसी प्रकार के उपद्रव नहीं किये जावें और न गावों को ही उजाड़ा जावे।

(२) उससे बकाया खड़नी या नजराना की मांग नहीं की जावे।

इन मांगों के बदले में उसने भाऊ के वकील को आश्वासन दिया, "वह दस सहस्र जाट हरावल फौज के साथ स्वेच्छानुसार अपने मुल्क में मराठों की सहायता करेगा और उनके परिवार तथा अलड़ाकू सैनिकों को अपने सुरक्षित दुर्गों में शरण देगा।" भाऊ ने सूरजमल की इन शर्तों को मानकर चम्बल नदी पार करने से पूर्व ही अपने सत्तर-अस्सी सहस्र सैनिकों को कठोर आदेश दिया कि जाट-मुल्क में किसी भी प्रकार की लूटमार नहीं की जावे और न ग्रामीणों को ही तंग किया जावे। [२] सूरजमल ने अपने राज्य में मराठा शिविर के लिए आवश्यक साज-सामान तथा परगनों से अन्न, घी, नमक का प्रबन्ध किया। भरतपुर, कुम्हेर तथा अन्य परगनों से सामान तथा खाद्यान्न सुरक्षित पहुँचाने और मार्गों की सुरक्षा के लिए

---

१ – इमाद, पृ० ७६।

२ – पे० द०, खंड २, लेख १२६, खण्ड २१ लेख १६०, खण्ड २७, लेख २५५; इमाद, पृ० १७८; सियार, जि० ३, पृ० ३८३; कानूनगो, पृ० १२२; सरदेसाई खण्ड २, पृ० ५४६।

झांसी राज्य के संस्थापक नारो शंकर को तैनात किया गया। धौलपुर के समीप पडाव डालकर मराठो ने मुचकुण्ड तथा अन्य तीर्थों मे स्नान किया।[१] मराठा इतिहास में यह प्रथम अवसर था जबकि मराठा सरदारो ने बिना खडनी की माग के इस समय किसी भारतीय शासक से समझौता किया और जाट शासक ने भी दुर्रानी के प्रतिनिधि को मथुरा से लौटाकर "हिन्दू स्वराज्य तथा धर्मरक्षा" के नाम पर मराठों को सहयोग देने का निश्चय किया। किन्तु भाऊ की हठधर्मी तथा अज्ञानता के कारण यह समझौता अन्तिम समय तक स्थिर नही रह सका।

११ – सूरजमल तथा मराठा सरदारो का भाऊ से साक्षात्कार, जून, १७६० ई०

सदाशिव राव भाऊ को नदियो की भीषण बाढ के कारण एक माह से अधिक (८ जून–१३ जुलाई) चम्बल तथा उटगन (गम्भीर-घोडा पछाड) नदी के बीच मे रुकना पडा। यहा से आगरा केवल ३२ किमी० उत्तर मे था, परन्तु उटगन नदी ने बीच मे उसके मार्ग को रोक लिया था। भरतपुर से रवाना होकर १५ जून को होल्कर का दीवान गगाधर यशवन्त भाऊ की छावनी मे जाकर उपस्थित हुआ और फिर १७ जून को मल्हार राव तथा जनकोजी ने भेंट की। ढाई महिने के निरन्तर कूच के बाद मराठा सैनिको ने जाट देश मे यथेष्ठ आराम किया और जाट शासक ने खाद्य–सामग्री का पूर्ण प्रबन्ध करके मराठों का स्वागत किया। अब भाऊ तथा मल्हार राव मे आगामी कार्यक्रम पर विचार विमर्श शुरू हुआ और मल्हार ने सूरजमल के साथ मिलकर स्वय युद्ध सचालन का मत प्रगट किया। सूरजमल के दिल मे अभी तक शका थी। वह वास्तव मे धनहीन तथा शक्तिहीन अपने आश्रित वजीर इमादुलमुल्क को वजारत का वचन दे चुका था और राष्ट्रहित मे वह उसको अपने सरक्षण (न्यास) मे रखना चाहता था। भाऊ स्वयं सूरजमल से मिलकर समझौता करना चाहता था। उसने चम्बल शिविर म अपना अन्तरग नागरिक अधिकारी बलवन्त गणेश मेहेण्डेले को भेजा। सूरजमल ने उत्तर में भाऊ से निवेदन किया, "मराठो से उसकी समझौता-वार्ता सदैव मल्हारजी तथा पटेल (सिंधिया) की मध्यस्थता से सम्पन्न होती रही है। यदि इस समय वे स्वय आकर उपस्थित हो सकें, तो वह आपकी छावनी में उपस्थित होकर सेवा करने को तैयार है" यद्यपि सूरजमल का यह निवेदन नवयुवक भाऊ के लिए नीति सगत नहीं था, फिर भी उसने समय की गति के अनुरूप होल्कर तथा सिंधिया को सूरजमल के पास

---

१ – पे० द०, खण्ड २, लेख १२३, १२६; पुरन्दरे दफ्तर, खण्ड १, लेख ३८७, राजवाडे, खण्ड १, लेख १९६; शेजवल्कर, पृ० ८०।

पहुँच कर मध्यस्य व जामिन बनने का आदेश दिया। फलत: दोनों सरदार शीघ्र ही सूरजमल के पास कुम्हेर लौटे और मल्हार ने सूरजमल को विश्वास दिलाते हुये कहा — "आप मेरे भाई हैं। मैं सभी प्रकार से आपका ही हू। ईश्वर साक्षी है, मैं मरू या मारू, आप जो कुछ कहेंगे, उसको पूरा करूगा। आप चिन्ता न करें।" इस भाति मल्हार राव ने स्वय दो दिन की वार्ता के बाद सशपथ आश्वासन देकर सूरजमल के सन्देह का निवारण किया तथा भाऊ की छावनी मे चलकर मिलने का आग्रह किया। ३० जून को सूरजमल ने मल्हार राव तथा जनकोजी के साथ जाकर नवयुवक मराठा सेनापति से भेट की। एक प्रतिभाशाली तथा सम्पन्न राजनीतिज्ञ का स्वागत करने के लिए सदाशिव राव भाऊ स्वय अपने अन्य सरदारो के साथ छावनी से तीन किमी० आगे बढकर आया और उसने सम्मानपूर्वक स्वागत किया। छावनी में प्रवेश करने से पूर्व मल्हार राव व जनकोजी ने पुन सशपथ सूरजमल को उसकी सुरक्षा का पक्का वचन दिया। तब छावनी मे पहुँच कर दरबार मे दोनो सरदारो ने उसका भाऊ से औपचारिक परिचय कराया और सूरजमल ने सौजन्यता प्रगट करते हुये भाऊ को परिधान तथा उपहार भेंट किये। फिर १ जुलाई को जाट शासक ने मल्हार राव की मध्यस्थता से मराठा सेनापति को हार्दिक सहयोग देने का विधिवत समझौता करके ८,००० जाट सैनिक मराठो के साथ तैनात किये।[1]

दोआब योजना की विफलता

भाऊ के साथ अपनी प्रथम भेंट मे सूरजमल ने मराठा सलाहकार परिषद के सामने सुझाव रखते हुए कहा— "मराठा सेना का एक भाग पूर्व मे दोआब प्रदेश और दूसरा लाहौर की ओर भेज दिया जावे, ताकि ये टुकडिया इन मुल्को मे शत्रु के प्रमुख रसद-मार्गों को रोक लें।" मराठा सलाहकारो ने सूरजमल के अफगान-रुहेला बन्धुत्व सघ के विरुद्ध इस खाद्यान्न-नाकाबन्दी सुझाव को स्वीकारा।[2] उन्होने शाह दुर्रानी के परम शत्रु पजाब के सिख सरदारो के साथ पत्र व्यवहार शुरु किया और उनको सगठित करने तथा शाह दुर्रानी के रसद-मार्गों को रोकने के प्रस्तावो के साथ अपने मराठा दूत रवाना किये। अप्रैल २८, १७६० ई० को मध्य

---

१ – पुरन्दरे दफ्तर, खण्ड १, लेख ३८७, राजवाडे, खण्ड १, लेख २१६, १२७ अ, पे० द०, खण्ड २, लेख ११६, १२१, १२२, १२७, भाऊ बखर, पृ० ६५, भाऊ साहिबाची कैफियत, पृ० ८, काशीराज, पृ० ६, सियार, खण्ड ३, पृ० ३८३, ता० मुजफ्फरी, पृ० १८०, इमाद, पृ० १७९; इ० डा० (तारीखे इब्राहीम), खण्ड ८, पृ० २७४, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १६४, १६६।

२ – इमाद, पृ० १७९।

मालवा में प्रवेश करने से पूर्व ही भाऊ ने शुजाउद्दौला को अपने पक्ष में मिलाने के लिए इटावा के कमाविसदार गोविन्द पंत बुन्देला के नाम एक पत्र लिखा था। उसने अपने पत्र में शुजा को विश्वास दिलाया था कि विजय के बाद वे दोनो ही मिलकर मुगल साम्राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था करेंगे।[1] भाऊ ने चम्बल नदी पार करते ही शाह आलम सानी (अली गौहर) को मुगल सम्राट तथा शुजा को वजीर पद प्रदान करने की माग भी स्वीकार कर ली थी, परन्तु इसी बीच मे जहान खा तथा नजीब खा शुजा की बिठूर छावनी में उपस्थित हो चुके थे और २७ जून को भाऊ की छावनी मे यह समाचार पहुँच चुका था कि नजीब व जहान खा शुजाउद्दौला को अपने पक्ष मे शामिल करने मे सफल हो चुके हैं। फिर भी शुजा ने अब सन्देहास्पद स्थिति पैदा कर दी थी।[2] अभी तक यह स्पष्ट नही हो सका था कि शुजा दुर्रानी का सहयोग देगा या नही ? सूरजमल पूर्णत: सजग व चौकन्ना था और वह स्वय शुजा से सम्पर्क स्थापित करने मे व्यस्त था। जुलाई के प्रारम्भ मे शुजा की सन्देहास्पद स्थिति को समझ कर सूरजमल ने मराठों के लिए एक अन्य सुझाव दिया कि अवध प्रान्त के पूर्वी सीमान्त पर बनारस के राजा बलवन्त सिंह को इस बात के लिए राजी कर लिया जावे कि यदि शुजा शाह दुर्रानी के पक्ष को स्वीकार कर ले, तो वह उसके राज्य पर आक्रमण करके, दुर्रानी की छावनी मे पहुँचने वाली रसद-सामग्री को मार्ग मे लूट ले। दूसरी ओर इटावा से सूबेदार गोविन्द पंत मराठा टुकडियों सहित उपरि दोआब म प्रवेश करे। परन्तु सदाशिव राव भाऊ की अदूरदर्शिता के कारण यह योजना सफल नही हो सकी। अन्त मे नारो शकर तथा जनकोजी के दीवान रामजी अनन्त के प्रभावशाली कूटनयिक प्रयासो के बाद भी नवाब शुजाउद्दौला ४ जुलाई को अन्तिम रूप मे शाह दुर्रानी के पक्ष मे चला गया।[3]

१४ जुलाई को सदाशिव राव भाऊ मराठा छावनी के साथ आगरा पहुचा, जहा सूरजमल के माध्यम से वजीर इमादुलमुल्क ने उससे भेट करके बातचीत की।

---

१ – राजवाडे, खण्ड १, लेख १८६, १६६, १६६, काशीराज, पृ० ५; इमाद, पृ० १७८-६; शुजाउद्दौला, खण्ड १, पृ० ७८-६।

२ – राजवाडे, खण्ड, १, लेख १६६, इमाद, पृ० १७६, शुजाउद्दौला, खण्ड १, पृ० ७६।

३ – राजवाडे, खण्ड १, लेख, १७६, १८७, १८६, १६१, २१५, २१६, २२०, २३६; पे० द०, खण्ड २, लेख १२७, इमाद, पृ० १७५, १७६-८१; ता० मुजफ्फरी, पृ० १७१; मुजमिल-उल-तवारीख बाद नादिरिया, पृ० १२७, ता० हुसैनशाही, पृ० ५३; पुरन्दरे दफ्तर, जि० १, लेख २०८; कानूनगो, पृ० १२८; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १६५, १८५-८७।

फिर भाऊ ने सिकन्दरा के उत्तर-पूर्व मे गऊ घाट पर सूरजमल के साथ यमुना नदी के वेग तथा विशाल पाट का निरीक्षण किया। इस समय सूरजमल के पास आगरा मे तीस सहस्र सैनिको का जमाव था। भाऊ की प्रारम्भिक योजना यमुना नदी पार करके दोआब मे एक शक्तिशाली सेना भेजने की थी। जुलाई के प्रारम्भ मे दो सहस्र जाट सवारो ने सम्भवत एक या दो नावों से यमुना नदी पार कर ली थी और उन्होंने आगरा से मथुरा तक नदी के पूर्वी किनारे पर अपनी चौकी तथा थाने पुन: स्थापित कर लिये थे। अब बाढ़ के कारण ये जाट सैनिक यमुना पारी इलाको मे ही रह गये और मथुरा मे एकत्रित अन्य जाट सैनिक उनकी सहायता के लिए नहीं पहुँच सके। इस विषम स्थिति मे एक भी मराठा सरदार जाटो का अनुसरण करके गोविन्द पत की सहायता के लिए भी नही जा सका और न गोविन्द पंत ही अपने मराठा दलो के साथ उपरि दोआब की ओर बढ़ने में सफल रहा। फलतः भाऊ को अपनी दोआब योजना स्थगित करनी पड़ी।[1]

१२ – अभियान गोष्ठी मे सूरजमल की पारदर्शी सलाह

अब तक सूरजमल तथा मराठा सरदारो का समय अति प्रेम व सौहार्द वातावरण मे निकल चुका था, लेकिन दुर्रानी विरोधी अभियान पर विचार करते समय दोनों मे अचानक शीतल विरोधाभास पैदा हो गया। सदाशिव राव भाऊ ने उद्गीर मे विजय प्राप्त करके मराठा राष्ट्रमण्डल मे ख्याति प्राप्त कर ली थी। इसी से इस बार रघुनाथ राव (दादा) की अपेक्षा हिन्दुस्थान मे मराठा कीर्ति पुन. स्थापित करने के लिए भाऊ को उपयुक्त समझा गया था। भाऊ की उत्तर भारत में यह प्रथम अभियान यात्रा थी, इससे उसको देश की भौगोलिक स्थिति, क्षेत्रीय जलवायु, निवासी व उनके शिष्टाचार व व्यवहार, सरदारो की गरिमा, युद्ध नीति व शैली तथा राजनैतिक विषमताओं का ज्ञान नही था। मल्हार राव तथा सिंधिया का अधिकाश जीवन उत्तरभारत म ही निकला था और वे इस क्षेत्र की हर स्थिति को समझते थे। सूरजमल इस समय अति योग्य तथा निपुण हिन्दू सरदार था। वह मल्हार राव की युद्ध-कला तथा राजनीति को भली भांति समझता था। इसी से प्राय दोनो ही अनुभवी सरदारों का एक ही मत था। नवयुवक भाऊ ने आगरा पहुँच कर भावी योजना निर्धारण के लिए सरदारो की एक गोष्ठी का आयोजन किया, जिसम सूरजमल ने भी भाग लिया। इस अवसर पर सूरजमल ने विनम्र शब्दो में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा–

---

१ – राजवाडे, खण्ड १, लेख २१५–२१७, २२३; पुरन्दरे, खण्ड १, लेख ३८७; काशीराज, पृ० ६; भाऊ बखर पृ० ९०।

"आप हिन्दुस्तान के स्वामी हैं। आपके पास सभी साधन उपलब्ध है और मै एक साधारण जमीदार हू। प्रत्येक व्यक्ति अपनी बुद्धि, शक्ति तथा सामर्थ्य के अनुसार योजना बनाकर काम करता है। फिर भी मैं अपने अनुभव तथा विचार अपनी सुच्छ बुद्धि के अनुसार आपकी सेवार्थ प्रस्तुत करता हू। हमारी लडाई एक शक्तिशाली मुस्लिम जगत के शाह से है, जिसकी सभी मुस्लिम अमीर साथ दे रहे हैं। यद्यपि शाह हिन्दुस्थान मे एक मुसाफिर है, परन्तु उसके सभी सहयोगी इस देश के निवासी हैं और विशाल जागीरो के स्वामी हैं। यदि आप चतुर हैं, तो शत्रु आपसे अधिक चालाक तथा तीव्र है। यदि आपके घोडे पवन से तेज दौडने वाले हैं, तो उसके घोडे भी आपसे अधिक धावक हैं। नि सन्देह यह स्पष्ट है कि आप अत्यधिक सावधानी, चिन्तन तथा विचार के बाद इस युद्ध का सचालन करेंगे। यदि विजयी श्वास की वायु का झकोरा गाय की पूंछ (आपकी) की ओर होगा, तो विजय की गौरव गाथा सौभाग्य रूपी कलम से आपके देदीप्यमान ललाट पर लिखी जावेगी। फिर भी युद्ध घटना चक्र का खेल है। यह दो सरदारो का युद्ध है ... चतुराई इसी मे है कि हम दीघ विश्वास तथा महान सघर्ष से दूर रहे। यह उचित ही होगा कि यदि आप अपने परिवार, अनावश्यक भारी साज–सामान, विशाल तोपखाना, जो इस युद्ध मे अधिक उपयोगी नही होगा। आदि को चम्बल नदी के पार ग्वालियर या झासी के सुरक्षित किलो मे वापस भेज दें और स्वय हल्के हथियारो से सुरक्षित योद्धा–दलो के साथ शत्रु का सिपाईयाना मुकाबिला करें। विजय लाभ के क्षणो मे शत्रु मैदान छोडकर भाग निकलेगा। हमारे हाथ म लूट का विशाल खजाना व सामान आ जावेगा। यदि दुर्भाग्य से हमको सफलता नही मिली, तो परिवार तथा भारी सामान न होने के कारण पीछे हटने तथा भागने मे सुगमता रहेगी।

"यदि आप सामान तथा परिवारो को इतनी अधिक दूरी पर भेजना ठीक नही समझें या कष्टप्रद समझें, तो मैं थोडी सी समतल भूमि पर बने अपने छोट से फौलादी चार किलो जिन पर मेरा कब्जा है, मे से किसी एक को आपकी इच्छा–नुसार खाली करने को तैयार हू, जहा आप अपना सभी सामान, माल, जखीरा (खाद्यान्न) तथा परिवारो को सुरक्षित रख सकते हैं। मैं इनम से किसी एक किले को आपके कर्मचारियो के हाथो सौंपने को तैयार हू। इस किले को आप खाद्य–पदार्थों से भी सुरक्षित कर लें, ताकि निर्णायक युद्ध के बाद आपको किसी प्रकार का कष्ट नही उठाना पडे और कठिन काल म महिलाओ के गौरव को अक्षुण्य रखने के लिए बन्धन मुक्त हो सकें। अन्न लाने के लिए सभी मार्गों को खुला रखा जावे, ताकि अन्नाभाव तथा चारे की कमी से सैनिक तथा जानवरो को भूखा नही मरना पडे। मे पीछे से अपनी रिसाला टुकडियो के साथ आपकी सहायता के लिए सदैव प्रस्तुत रहूगा। मेरा देश शत्रु सेना की लूटमार से सुरक्षित है और यहा

से आपको समुचित मात्रा में खाद्यान्न-पदार्थ, दाना घास प्राप्त हो सकता है।"

"उचित यही रहेगा कि शक्ति सम्पन्न शाह तथा शासकों की भांति 'जगे सुल्तानी' (एक स्थान पर जमकर युद्ध करना) की अपेक्षा शत्रु के साथ दो-तीन माह तक (जाटों व मल्हार राव के नेतृत्व मे) "जगे कज्जकाना' (गनीमी कावा) की जावे। इस युद्ध मे हमारी फौजो को इस क्षेत्र मे अधिक कष्ट नही होगा। बरसात के कारण दोनो ओर की फौजें जमकर आक्रमण नही कर सकती। इस समय दुर्रानी हममे अधिक सुरक्षित तथा उचित स्थान पर नही है और वह स्वय हमारे विरुद्ध कूंच नही कर सकेगा। वह कज्जकाना युद्ध से परेशान हो जावेगा और निराश होकर अपने मुल्क को वापिस कूच कर देगा। निरुत्साही रुहेला अफगान सरदार भी आपकी शक्ति के आगे आत्म समर्पण कर इधर-उधर बिखर जावेंगे और ईश्वर की दी हुई दौलत आपको मिल जावेगी।" १

सूरजमल की इस प्रस्तुत योजना तथा युद्ध-विधि की मल्हार राव तथा अन्य मराठा सलाहकारो ने अति सराहना की और उन्होंने समवेत स्वरो मे 'उनकी भी यही राय है' कहा। "विशाल तोपखाना पक्ति शाही सेनाओं के लिए उपयुक्त साधन है, जबकि मराठा की युद्ध शैली कज्जकाना (गुरिल्ला) ही रही है और इस ढग से हमारे देश जाति तथा धर्म पर भी कलक नही लगेगा। यदि हम इस तौर-तरीके से सफल नही हो सकें, तो पुन आक्रमण करने से हमारी भी अपकीर्ति नही होगी। यदि शत्रु पर कपट नीति से विजय प्राप्त करने मे सफलता नही मिल सके तो अपने आपको कठिन स्थिति तथा विनाश के चगुल मे फसाने म भी चतुराई नही है।" २

समकालीन लेखक काशीराज पडित के शब्दो में, "सूरजमल के विचार अति श्लाघनीय थे और जिस योजना को उसने प्रस्तुत किया था, उससे

---

१ – भाऊ बखर, पृ० ११४-११७, तारीखे-भाऊ-व-जनको, पृ० २८, इमाद, पृ० १७९-८०, काशीराज ६,७ (ब०), इ० डा० (तारीखे इब्राहीम), खण्ड ८, पृ० २७५, कानूनगो पृ० १२५-७, भाऊ बखर (दूसरी, सीतामऊ प्रति), पृ० ८-१०।

— बयाने वाकी का लेखक इस कथन से सहमत है। उसके अनुसार "सूरजमल की यह सलाह थी कि हिन्दुस्तान के सभी अमीर दुर्रानी के पक्ष मे हैं। अत उसकी सेना से जमकर युद्ध नहीं किया जावे। उसने यह भी राय दी थी कि वह अपना सामान आगरा मे छोड दे।" पृ० २८९।

२ – इमाद, पृ० १८०-८१।

शत्रु अवश्य ही मैदान छोड़ देता, क्योंकि उसकी हिन्दुस्तान मे कहीं भी जड नही थी। वास्तव मे बरसात के बाद दुर्रानी हताश होकर अपने वतन की ओर चला जाता।" [1] भाऊ समय की चालाकियो से अनभिज्ञ था। वह घमण्ड की शराब म डूबा हुआ था और आसमान की कुटिल चालो को नही समझता था। अपनी सैनिक शक्ति, बहादुरी तथा योग्यता को देखकर भाऊ ने इस प्रकार के युद्ध को अपने अनुरूप नही समझा। जबकि उसके अधीनस्थ सरदारो ने अपने तरीको से सैनिक यश तथा प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली थी और केन्द्रीय सत्ता पर दृढतापूर्वक अधिकार कर लिया था।

आचार्य त्र्यम्बक शकर शेजवल्कर के अनुसार, "यह प्रस्ताव राष्ट्र की प्रतिष्ठा तथा प्रधान सनापति, उसके प्रधान सहायको को लाछनो से बचाने का एक महती प्रयास था। इसम सत्य का गूढ अश था।" [2] परन्तु सदाशिव राव के समर्थको ने इस सलाह को सन्देह की दृष्टि से आंका। अन्त म इन विचारो को वृद्ध होल्कर तथा निरुत्साही सरदारो की भावुकता और जाट शासक की अज्ञानता समझ कर टाल दिया। शेजवल्कर का यह विश्वास उचित प्रतीत नही होता कि सम्भवत भाऊ ने पेशवा की पूर्ण सहमति प्राप्त करके पैदल सेना की युक्तियो पर आधारित युद्ध के नवीन ढग का अनुसरण करने का निश्चय कर लिया था। [3] "पेशवा की पूर्ण सहमति" नही, बल्कि मराठा सलाहकार परिषद मे एक दूसरे के प्रति डाह था। उनमे व्यक्तिगत, राजनैतिक तथा आर्थिक परिलाभो के लिए प्रतिद्वन्दिता थी। नाना फडनीस ने भाऊ की इस नीति के बारे मे अपने पत्र मे लिखा— "मैं अभी तक एक अल्हड नवयुवक था। यद्यपि महाराज (भाऊ साहब) अन्य सभी अवसरो पर अति बुद्धिमानी से काम करते थे, परन्तु इस समय उन्होने भी चतुराई खो दी। मेरे मामा बलवन्त राव मेहेन्डेले और नाना त्र्यम्बक सदाशिव पुरन्दरे भाऊ साहब के नागरिक सलाहकार थे। उनको भी इस समय अलग कर दिया गया और भवानीशकर तथा शाह नवाज खा उनके अतरग सलाहकार बन गये। परिणामस्वरूप उन्होने हमारी परम्परागत युद्ध शैली को छोडकर शत्रु की युद्ध कला को अपनाया।" [4]

भाऊ न इस गोष्ठी मे कहा— "जब कभी हम या हमारे दूत इस मुल्क मे आये, तब उन्होने युद्ध का यह तरीका अपनाया होगा। सूरजमल एक जमीदार है। उसके विचार मेरे जैसे सक्षम व्यक्ति क लिए नही हैं। उसके समकक्ष तथा सदृश क्षमता वालो के लिए उचित हैं। गवांर तथा जमीदार विकसित वैज्ञानिक युद्ध-कला

---

१ – काशीराज पृ० ७–८।
२ – शेजवल्कर पृ० ७६।
३ – उपरोक्त पृ० ८२।
४ – मेकडॉनल्ड नाना फडनीस पृ० १६८, हरीराम पृ० २१३।

से अनभिज्ञ हैं। हम इन सभी के सरदार हैं। कज्जकाना युद्ध करना, भागने की विधि अपनाकर अपने आपको भगोडा विख्यात करने से मेरा मुल्क व फौज मेरी नासमझी व पागलपन पर हँसेगी।" भाऊ की इस विचारधारा से सूरजमल का मराठा मित्रो के प्रति उत्साह कुछ ठडा हो गया। केवल अन्य मराठा सरदारो के प्रयास से ही मतभेद दूर हो सका।

मल्हार राव रामचन्द्र सेनवी का शत्रु था। उसने भी इस योजना को व्यक्तिगत डाह के कारण सूरजमल व मल्हार को ओछा दिलवाला व नासमझ कहकर कल्पनातीत जाल बतलाया। इससे चतुर तथा अनुभवी सरदारो को आश्चर्य हुआ और उनकी अप्रत्यक्ष रूप से अवज्ञा हुई। इससे वास्तव मे होल्कर जैसे अनुभवी सहायक का अपमान हुआ, जिससे उसका सेना तथा जनता मे सम्मान गिर गया। वे आपस मे यह कहते हुए बाहर निकले कि "भाऊ के उग्र स्वभाव तथा उतावली भावना के कारण उन पर अवश्य कोई भयकर विपत्ति आने वाली है' और वे अपने सरदार की विचारधारा के प्रति अत्यधिक जागरुक होकर अन्दरुनी तौर से खिच गये। उनके माथे पर बल पड गये। वह आपस मे आँख-निकाल-निकाल कर कहने लगे कि यह लडका हमारी बात न समझकर घमण्ड मे चूर हो गया है। अपनी करनी का फल स्वय भोगेगा। इससे कुछ कहना या सफाई करना व्यर्थ है। इससे हमारी प्रतिष्ठा ही गिरती है। "अच्छा हो, एक बार यह ब्राह्मण रणक्षेत्र मे पराजित होकर अपयश प्राप्त कर ले।" मल्हार ने क्रोधित होकर यहा तक कह डाला कि 'यदि पूना के दम्भी ब्राह्मणो को शत्रु ने नही कुचला तो ये उससे तथा मराठा जाति के अन्य सेनानायको से अपने मैले वस्त्र धुलवायेंगे।" [1]

सूरजमल ने यह भली भाति भाप लिया था कि मराठा शक्ति शाह दुर्रानी को हिन्दुस्तान से नही खदेड सकेगी और उसने विनम्र सरदार के संरक्षण को त्यागकर वापस हटना उचित समझा। उसकी कल्पना व नीति का "भारत निर्माण तथा व्यवस्था" सम्भव नही थी। अत मराठा सरदारो ने सदाशिव राव भाऊ को यह उचित सलाह दी "कि वह जाट शासक की उपस्थिति तथा उसके पारदर्शी विचारो से लाभ उठाये।" उन्होने विजय लाभ तथा उत्साह प्राप्त करने के लिए उसकी आवश्यकता को महसूस किया। मल्हार तथा अन्य सरदारो ने सूरजमल को सलाह दी कि वह शीघ्रता न करके परिस्थितियो के अनुकूल चले और इस समय भाऊ के

---

१ – इमाद, पृ० १८०–१; काशीराज, पृ० ७–८, तारीखे जनको-ओ-भाऊ, पृ० २८; मेक्डोनल्ड, पृ० ५; ग्राट डफ, खण्ड १, पृ० ६०७, कीन, पृ० ३८; कानूनगो, पृ० १२७ ८, हरीराम, पृ० १५३, २१३; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १७३।

सन्तोष के लिए शिविर मे ही रुके। फलत सूरजमल ने आगरा शिविर को छोडकर भरतपुर लौटना उचित नही समझा। तब भाऊ ने अपने हाथ मे यमुना जल लेकर सूरजमल के उचित परामर्श पर ध्यान देने का वचन दिया।[1]

१३– मथुरा शिविर मे सूरजमल का उत्तर, १६ जुलाई

सदाशिव राव भाऊ ने आगरा से कूच करके १६ जुलाई को महान सास्कृतिक नगरी मथुरा में पडाव डाला। सूरजमल भी उसके साथ मराठा छावनी म था। मथुरा नगर के मध्य म अब्दुल नबी खा की विशाल मस्जिद को देखकर भाऊ की क्रोधाग्नि भडक उठी और उसन सूरजमल की ओर देखकर कहा— "अफसोस, आप हिन्दू होने का दावा करत हैं। अभी तक शहर के बीचो बीच मस्जिद खडी है।" सूरजमल ने नम्रतापूर्वक निवदन किया, "अभी तक हिन्दुस्तान का शाही भाग्य एक वेश्या की भाति अस्थिर रहा है। रात्रि को वह किसी एक व्यक्ति के साथ थी और अन्य दिन उसने दूसरे का आलिगन किया। यदि मुझको यह विश्वास हो जाता कि मैं उम्र भर इन परगनो का स्वामी रहूँगा, तब मैं इस मस्जिद को तोड़ डालता। आखिर इससे क्या लाभ होता ? आज मैं इस मस्जिद को तोड डालता और दूसरी बार मुसलमान आकर उन विशाल देवालयों को मिट्टी मे मिला देते तथा इस एक के स्थान पर अन्य चार मस्जिद खडी कर देते। श्रीमन्त ! अब आप स्वय इन जिलों में पधारे हैं और आपके हाथ मे गतिविधियो का सचालन है। आप इस कार्य को पूरा कर सकते हैं।" यह सुनकर भाऊ ने कहा— "इन अफगानो को परास्त करने के बाद मैं मस्जिदो के खण्डहरो पर सर्वत्र मन्दिरो का निर्माण कराऊगा।"[2] लेकिन भाऊ ने दिल्ली पर अधिकार करने के बाद १० अगस्त को यमुना नदी के निगम बोध घाट पर श्रावणी स्नान किया, उस समय उसका गुस्सा ठण्डा हो गया। उसने स्नान के बाद ब्राह्मणो को दान दिया और दिल्ली की शाही जामा मस्जिद के फकीरो को खैरात बाटकर हिन्दू–मुस्लिम एकता तथा धार्मिक सहिष्णुता की भावना प्रगट की।[3]

१४ – मराठो का दिल्ली पर अधिकार, जुलाई १७६० ई०

२१ जुलाई को भाऊ ने मथुरा से मल्हार राव होल्कर, जनकोजी सिंधिया,

---

१ – काशीराज, पृ० ८, कानूनगो, पृ० १२६।

२ – इमाद, पृ० ७८, दे० क्रॉनी०, कानूनगो, पृ० १२४–५।

३ – पे० द०, खण्ड २७, लेख २४७, दे० क्रॉनी, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १७८।

और बलवन्त गणेश मेहेण्डेले के नेतृत्व मे एक शक्तिशाली मराठा अग्रदल दिल्ली पर आक्रमण तथा अधिकार करने के लिए रवाना किया, जिसमे ब्रजेन्द्र बहादुर राजा सूरजमल भी आठ सहस्र सवारो के साथ शामिल था और वजीर इमादुलमुल्क हरावल का पथ-प्रदर्शक था। २२ जुलाई को प्रात काल कोतल दल ने नगर द्वारों पर आक्रमण किया, जिसका सचालन वजीर इमादुलमुल्क तथा सूरजमल के हाथों में था। शाह दुर्रानी द्वारा नियुक्त याकूब अली खा पर्याप्त युद्ध प्रसाधन, सामान तथा योग्य सैनिको की कमी के कारण जाट-मराठो का प्रतिरोध करने मे विफल रहा और वह दुर्ग के अन्दर चला गया। इमाद ने दिल्ली नगर में एक विजेता की भाति प्रवेश किया और अपनी हवेली पर रात्रि बिताई। मराठो ने नगर पर अधिकार कर लिया और दुर्ग प्राचीरो पर चढकर शाही महलो को लूटा। सरदेसाई के अनुसार— "मराठा सरदार तथा सैनिको को नगर की लूट मे इतना अधिक माल हाथ लगा कि कोई भी सरदार अथवा सैनिक गरीब नही रह सका।"[२] २६ जुलाई को भाऊ स्वयं दिल्ली पहुचा और उसने कालिकाजी के समीप छावनी डाली। अब याकूब अली खा की खाद्य-सामग्री समाप्त हो चुकी थी और उसको अपने स्वामी से सहायता मिलने की आशा नही थी। अतः उसने सूरजमल व इमाद की मध्यस्थता मे भाऊ से समझौता करके ३१ जुलाई को दुर्ग खाली कर दिया और दूसरे दिन (१ अगस्त) को मराठो ने शाही दुर्ग पर अधिकार कर लिया।[१]

१५ – शुजा के प्रस्ताव : सूरजमल का इमाद पक्ष

शाह दुर्रानी लगभग दो माह तक कोइल (रामगढ़-अलीगढ) शिविर में रुका, लेकिन जुलाई मे अधिक वर्षा होने के कारण वह रामगढ छावनी को छोडकर अनूपशहर के निकट गगा के पश्चिमी तट पर चला गया और वहा अफगानों ने अपनी छावनी डाली। समीपस्थ परगनो में खाद्यान्न तथा चारे की कमी को रोकने के लिए उसने अगस्त तथा सितम्बर-दो महिनो के लिए रुहेला सैनिको को अपने गंगापारी घरों को वापिस चले जाने की आज्ञा दे दी। यद्यपि शाह दुर्रानी तथा नजीब खा के

---

१ – राजवाडे, जि० १, लेख २२२-४; चन्द्रचूड़ खण्ड, १, लेख ५१; भाऊ बखर, पृ० ६२; पे० द०, जि० ३७, लेख २५८; भाऊ साहेबांची कैफीयत, पृ० ८-६; दे० कॉनो; पृ० ११७-१८; नूरुद्दीन, पृ० ३३ अ-ब, सियार, जि० ३, पृ० ३८३; ता० मुजफ्फरी, पृ० १८०-८२; काशीराज, पृ० ६; मिसकिन, पृ० २२५; इमाद, पृ० १८१; खजाने अमीराह, पृ० १०४-६; ता० हुसैनशाही, पृ० ४४, इ० डा०, खण्ड ८, पृ० १४७; मीराते आफताबनुमा, पृ० ३७० कानूनगो, पृ० १२६; सरदेसाई, पानीपत प्रकरण, पृ० १६२; मैकडोनल्ड, पृ० ६; हरीराम, पृ० १५४; मीराते अहमदी, पृ० ६०७।

आकर्षक आश्वासनों के बाद अवध का नवाब शुजाउद्दौला "मुस्लिम भ्रातृत्व संघ" में शामिल हो गया था और वह १८ जुलाई को सात सहस्र चुनीदा सवार, स्वामि-भक्त गोसाईयो की सेना तथा तोपों के साथ दुर्रानी के पास अनूपशहर छावनी में पहुँच चुका था, परन्तु यहां आने के बाद उसको धनहरण की धमकी तथा अस्वस्थ जलवायु के कारण आत्मसन्तोष नही हो सका और वह नजीबुद्दौला के जाल से निकलने का प्रयास करने लगा।[1]

आगरा आने से पूर्व ही मराठो ने शुजा को "मुस्लिम भ्रातृत्व संघ" से और अहमद शाह दुर्रानी ने सूरजमल तथा इमाद को मराठो से अलग करने के अटूट प्रयास किये थे। इस कार्य के लिए दुर्रानी ने शुजा पर भारी दबाव डाला और इस ओर सतत् कूट-प्रयास किये गये। औरंगाबाद निवासी भवानी शकर पंडित नवाब शुजाउद्दौला के दरबार मे मराठा वकील था। २८ जुलाई को भाऊ ने कतिपय शर्तों के एक पत्र के साथ उसको गगा नदी की पूर्वी तट छावनी मे शुजा से वार्तालाप करने के लिए भेजा। इस पत्र के उत्तर में भाऊ से समझौता वार्ता करने के लिए शुजा ने अपनी छावनी से दिल्ली निवासी लाला सन्तराम के पुत्र राजा देवीदत्त को राव काशीराज पंडित के साथ भाऊ से वार्ता जारी रखने के लिए रवाना किया।[2] जुलाई के अन्त मे ये वार्तायें प्रारम्भ की गईं और दो माह तक नियमित चलती रही। नवाब शुजा का प्रस्ताव था कि नजीबुद्दौला की मध्यस्थता से पेशवा तथा दुर्रानी मे एक स्थाई शाति-समझौता करा दिया जावे। समझौते की शर्तों के अनुसार—

(१) प्रवासी शाहआलम सानी को मुगल साम्राज्य का सम्राट मान लिया जावे और उसके बिहार प्रवासकाल मे उसके ज्येष्ठ पुत्र जवानबख्त को दिल्ली सरकार का वली अह्द (उत्तराधिकारी) नियुक्त किया जावे।

(२) नवाब शुजाउद्दौला को साम्राज्य का वजीर पद प्रदान कर दिया जावे।

(३) शाह दुर्रानी को पजाब तथा सरहिन्द के प्रान्त स्थाई रूप से सौंप दिये जावें।

---

१ — राजवाडे, जि० १, लेख २४६, २४७, २३६, २३७ २४४, काशीराज, पृ० ६–११; ता० मुजफ्फरी, पृ० ५६५–६, दे० क्रॉनो०; पृ० ११७, सरकार(मुगल), खण्ड २, पृ० १८७–८६।

२ — काशीराज, पृ० १३, गाई, पृ० ८–६, सतारा, खड २, लेख २६७, राजवाडे, खंड १, लेख २२२; इमाद, पृ० १८४–८; होजवल्कर, पृ० ६४; शुजाउद्दौला, खण्ड १, पृ० ८८।

(४) फिर मराठा हिन्दुस्तान (उत्तर भारत) से दक्षिण को तथा अहमद-शाह दुर्रानी अपने देश को वापिस चले जावें।

भाऊ ने अपने शिविर मे शुजाउद्दौला के इन प्रस्तावो को यथासाध्य राजा सूरजमल तथा वजीर इमादुल्मुल्क से गुप्त रखने का प्रयास किया, परन्तु ये प्रस्ताव तथा शिविर-वार्तायें दोनो से नही छिप सकी। नजीब भाऊ तथा शुजा के बीच मे चल रही वार्ताओ से विज्ञ था और उसने इन प्रस्तावो को विफल करने मे यथा-सभव अडगेबाजी की।[१] वास्तव मे नजीबुद्दौला यह स्वीकार नही कर सकता था कि युद्ध को टालने के लिए शुजाउद्दौला के प्रस्तावित शाति-समझौता प्रस्ताव किसी प्रकार सफल हो जावें, क्योकि वह दृढता के साथ जाट तथा मराठो के विनाश का इच्छुक था और शाह दुर्रानी ने उसकी सलाह को प्राथमिकता दी थी।[२]

ग्राट डफ के अनुसार—"भाऊ दिल्ली की गद्दी पर पेशवा के उत्तराधिकारी विश्वास राव को पदासीन करना चाहता था।" परन्तु जाट तथा मराठा सरदारो ने शाह दुर्रानी के हिन्दुस्तान से वापिस लौटने तक इन विचारो को गुप्त रखने की कडाई के साथ प्रार्थना की थी।[३] समस्त मराठा सरदार तथा दिल्ली की रैयत को पूर्ण विश्वास था कि इमाद पुनः इस बार भी वजारत का कार्य भार सभालेगा। निःसन्देह दिल्ली पर अधिकार करने के बाद सूरजमल ने यह प्रस्ताव रखा था कि दिल्ली का प्रबन्ध इमादुल्मुल्क को सौप दिया जावे, परन्तु भाऊ तथा उसके सलाहकारो का अनुमान था कि इमाद की आड मे सूरजमल राजधानी की व्यवस्था पर अपना एकाधिकार करना चाहता है। इसी से उन्होने एक अगस्त को इस प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिया था।[४]

आचार्य शेजवल्कर इस सदिग्ध विचार को स्वीकारते हुए आगे लिखते हैं, "लेकिन प्रवासी शाहआलम, शुजाउद्दौला, नजीब खा तथा अन्य प्रभावशाली मुस्लिम सरदार इमाद के विरुद्ध घृणास्पद हत्याओ के कारण प्रचार कर रहे थे। इस सम्भावित प्रचार को निरस्त करने के लिए ही भाऊ ने सूरजमल के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया था।"[५] वास्तव मे अप्रभावित मुसलमानो को आश्वस्त करने के लिए इमाद को वजीर पद प्रदान करने की तात्कालिक आवश्यकता थी। इसी से साम्प्रदायिक एकता तथा सद्भावना प्रबल होती। इमाद का संरक्षक

---

१ – काशीराज, पृ० १४–१५, दे० क्रॉनो०, पृ० ११८।
२ – नजीबुद्दौला, पृ० ६२।
३ – ग्रांट डफ, खंड १, पृ० ६०८।
४ – भाऊ साहेबांची कैफीयत, पृ० १०; दे० क्रॉनो, पृ० ११८।
५ – शेजवल्कर, पृ० ८२-८३।

बनकर सूरजमल का दिल्ली पर अधिकार करने का विचार नहीं था। वह वास्तव मे मुगल साम्राज्य की प्रतिष्ठा तथा रक्षा को सर्वोपरि मानता था। भाऊ ने एक अगस्त को दिल्ली नगर तथा दुर्ग पर अधिकार करने के बाद पंडित नारो शंकर को राजे-बहादुर का विरुद प्रदान करके छ सहस्र सवार तथा पैदल सेना के साथ दिल्ली का किलेदार नियुक्त किया। अन्त मे १२ अगस्त को उसे दिल्ली का सूबेदार नियुक्त करके वजारत के सभी अधिकार भी सौंप दिये थे।[1]

राव काशीराज पंडित के अनुसार भाऊ ने राजा देवीदत्त की स्वामिभक्ति तथा कूट-प्रबन्धो के प्रति अविश्वास प्रगट किया और उसने भवानी शंकर पंडित के हाथों एक पत्र भेजकर शुजा से आग्रह किया कि वह किसी अन्य अन्तरग तथा विश्वासपात्र अधिकारी को वार्ता करने के लिए भेजने का कष्ट करे। यह स्मर्णव्य है कि इस समय राजा सूरजमल तथा मल्हार राव भी नवाब शुजाउद्दौला से सीधा सम्बन्ध स्थापित कर रहे थे और भावी नीति के विषय में उससे सलाह ले रहे थे। नवाब शुजाउद्दौला ने अपने प्रतिनिधि मुहम्मद याकूत खा को भाऊ के पास रवाना करके आग्रह किया था—"कि हिन्दुस्तान के सरदारो के नियमानुसार आपको युद्ध करना अभीष्ट नही है। आपको अपने सामर्थ्य के अनुसार कज्जकाना (गुरिल्ला) युद्ध करना चाहिये और अपने भारी (जंगी) तोपखाना तथा सामान को सुरक्षित स्थान पर भेज देना चाहिये।" इसी प्रकार शुजा ने दुर्रानी के वजीर शाह वली से परामर्श करने के बाद सूरजमल को अपने पत्र मे सलाह दी—"आप एक जमीदार (राजा) हैं। इस आपत्ति मे अपने आपको फसाने की क्या आवश्यकता? आपको जिस प्रकार भी सम्भव हो सके मराठा पक्ष को छोडकर अपने मुल्क की ओर वापस लौट जाना चाहिये।" सम्भवतः वजीर शाह वली ने सूरजमल की इस तटस्थता को पुरस्कृत करने के लिए कोइल (रामगढ), डिबाई तथा जलेसर परगना यथापूर्व सौंपने का भी वचन दिया था और सूरजमल ने शुजा की इस सलाह को मानने का आश्वासन देकर उसके वकील को विदा कर दिया था।[2] इस प्रकार शाह दुर्रानी ने शुजाउद्दौला के माध्यम से एकमात्र हिन्दू शासक को भी मराठो से तोडने का प्रयास किया, जिसका भाऊ को आभास भी नही हो सका।

इमाद शुजा का परम शत्रु था और वह सूरजमल के आश्वासन पर ही मराठा शिविर मे उपस्थित था। जब उसको शुजा के प्रस्तावो का पता चला, तब

---

१ – दे० कॉनो० पृ० ११८-११९, राजवाडे, खड १, लेख २२२,२२४,२२७; पुरन्दरे भाग १, लेख ३८९; होल्कर कैफीयत, पृ० २५, भाऊ बखर, पृ० ९३; भाऊ साहेबांची कैफीयत, पृ ९–१०; ग्राट डफ, खड १, पृ० ६०८।

२ – काशीराज पृ० १४–१५; गाई पृ० १०; नेजवलकर, पृ० ९५।

वह अत्यधिक क्रुद्ध हुआ। षड्यन्त्र तथा कपट योजना में इमाद पूर्ण चतुर था। होल्कर तथा सिंधिया ने उसको आश्वासन दिया था कि भाऊ राव भी नाना साहब का आदेश प्राप्त करेंगे। परन्तु इमाद को वजारत देने के प्रस्ताव का कोई समुचित उत्तर नहीं मिल सका। इससे इमाद ने राजा सूरजमल को मराठों के विरुद्ध भड़काया।[1] भाऊ के निर्णय से राजा सूरजमल को भी गहरा आघात पहुँचा और मराठा सरदारों ने अब तक उसको जो आश्वासन दिये थे, उन पर तुषारापात हो चुका था। सूरजमल ने इस समय भाऊ से कड़ाई के साथ कहा—"यह निर्णय न्याय तथा अधिकारों की उपेक्षा है।" उसने इमाद को वजीर पद पर नियुक्त करने की पुनः प्रार्थना की। अपने आश्वासनों के आधार पर मल्हार राव तथा जनकोजी ने भी जाट शासक के प्रस्ताव का कड़ाई के साथ अनुमोदन किया। भाऊ यथार्थ स्थिति को समझने की अपेक्षा केवल सिद्धान्त तथा नीति की दुनिया में विचरण करता था। इसी से सूरजमल उस पर विश्वास नहीं करता था। हठी तथा घमण्डी स्वभाव भाऊ पर सूरजमल के इस गूढ़ प्रस्ताव का कोई भी प्रभाव नहीं पड़ सका। फलतः इन असन्तुष्ट सरदारों ने दृढ़तापूर्वक भाऊ से कहा—"हिन्दुस्तान में हमारी प्रतिष्ठा भंग हो चुकी है। इस कर्तव्यनिष्ठा से हमको क्या लाभ?" अस्तु एक रात को सूरजमल तथा इमाद मराठा छावनी से निकलकर अपने तुगलकाबाद डेरे पर वापस लौट आये।

इस समय जाट शासक ने अपने अंतरंग कूटनीतिज्ञ पुरोहित राव कृपाराम कटारा से कहा, "भाऊ इमाद को वजारत देने का सामयिक तथा वैधानिक प्रस्ताव ठुकरा चुका है। अब यहाँ रहना व्यर्थ है। हमारे ऊपर कोई भी आपत्ति आ सकती है। अतः चतुराई इसी में है कि हम आने वाले संकट से पूर्व ही बाहर निकल जावें।" काशीराज पण्डित के शब्दों में—"सूरजमल मराठा छावनी को छोड़कर नहीं चला जावे, इस भय से भाऊ ने २ अगस्त को उसकी छावनी के पास अपनी एक सैनिक टुकड़ी तैनात कर दी थी। इससे सूरजमल अत्यधिक सशंकित हो गया था।" इस समय मल्हार तथा जनकोजी के डेरे भी जाट शासक के समीप थे और भाऊ की मराठा टुकड़ी तथा दोनों मराठा सरदारों के शिविरों को पार करके जाना कठिन था। इन दोनों मित्र सरदारों ने भी सूरजमल को हटने की सलाह दी, किन्तु सूरजमल की भाऊ के प्रति भावना कलुषित हो चुकी थी।[2]

१६ – मराठों की आर्थिक कठिनाईया और सूरजमल का पलायन

सदाशिव राव भाऊ लगभग एक लाख सैनिको के साथ दिल्ली तथा उसके आसपास दो महीने तक रुका। कुछ ही समय मे उसको भोजन, चारा तथा धन की कमी अनुभव होने लगी थी। प्रस्थान करते समय पेशवा से जो नकद रुपया मिला था, वह मार्ग मे ही खर्च हो चुका था। हिन्दुस्तान के धूर्त मराठा कमाविसदारो (कलेक्टरो) से उसको कुछ भी नही मिल सका। २६ जून को आगरा पहुँचने से पूर्व उसने पेशवा से आर्थिक सहायता करने की करुण प्रार्थना की थी। उसने लिखा—"मुझको कही से रुपया नही मिल रहा है। दोआव परगनो मे गडबडी चल रही है और अधीनस्थ सरदार टाल मटोल कर रहे हैं। इसलिये न राजस्व ही मिल रहा है और न खडनी की कुछ रकम। यदि दुर्रानी पर विजय प्राप्त करनी है, तो हमे तीस लाख सवारो की आवश्यकता है। सवारो को घोडा देने हैं। गत वर्ष मेरे सैनिको को बिदाई की बख्शीश (पुरस्कार) दी जानी थी, वह भी अभी तक नहीं दी गई है। जब मै उनको खाने के लिए पेट भर भोजन नही दे सकता, तो मैं उनको बकाया बिदाई, बख्शीश और नालबन्दी कैसे दे सकता हू? दिल्ली के चारो ओर गडबड चल रही है। यहा के सेठ-साहूकार भी इधर-उधर चले गये हैं। इससे यहा किसी से ऋण नही लिया जा सकता।" भाऊ ने पेशवा को इस प्रकार के कई पत्र लिखे थे, किन्तु पेशवा स्वय ऋण भार से दबा हुआ था। दिल्ली कूच से पूर्व ही भाऊ के सैनिको का वेतन दो माह से अधिक चढ चुका था और सैनिक वेतन भुगतान के लिए पुकार रहे थे। साथ ही शाही राजधानी की विजय से भी उसको कोई द्रव्य नही मिल सका था। अब शाही परिवार का सरक्षक बनने के बाद उसका एक लाख का अतिरिक्त खर्च बढ़ चुका था।[1]

दिल्ली मे दीवान-इ-आम की छत चादी तथा हीरा जवाहरातो से अति आकर्षक बनी थी। इमाद ने दिल्ली से भागने से पूर्व ही आधी छत को उतरवा दिया था। एक अगस्त को दुर्ग मे प्रवेश करने के बाद भाऊ ने इस छत को देखकर हृदय मे विचार किया—" यह छत है। इसको तुडवाकर अपने सैनिकों का वेतन चुकारा कर दू गा और इसकी जगह मे लकडी की दूसरी छत बनवा दू गा।" इस प्रकार हठी भाऊ ने दिल मे सकल्प करके सूरजमल होल्कर व सिंधिया को इस निश्चय के बारे मे अपने विचार व्यक्त करने के लिये बुलवाया। यद्यपि "सूरजमल

---

१ – पे० द० खण्ड २, लेख १३०, १३१, खण्ड २१, लेख १६३, खण्ड २७, लेख २५५, २५७, २५८; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १७५।

स्वभावत. विद्रोही तथा जाट लुटेरा था। वह अन्यो की भांति अपने को स्वाधीन समझकर भी मुगल साम्राज्य तथा सम्राट के प्रति वफादार था।" वह यह समझता था कि दिल्लीश्वर के वैभव (शान शौकत) का यह अंतिम अवशेष है। इससे मराठो को कोई विशेष यश नही मिलेगा।

उसने मुगल सम्राटो के इस अंतिम अवशेष को छोड देने के लिये भाऊ से नम्रतापूर्वक कहा—"भाऊ साहब! शाही सिंहासन का यह महल सम्मान तथा प्रतिष्ठा का प्रतीक है। यहां तक कि नादिरशाह तथा दुर्रानी ने शाही महलो की अमूल्य वस्तुओं का अपहरण कर लिया था, लेकिन उन्होंने इस छत को नही तोडा। साम्राज्य के अमीर आज आपके सामने विनम्रता के साथ खडे हैं। हम अपनी आखो से इस विनाश को नही देख सकते। इससे हमको शाही भक्ति के प्रति द्वेषात्मक भावना के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार का यश नही मिलेगा। आप आज मेरी इस विनम्र प्रार्थना पर सहृदयता से पुन विचार करें। यदि वास्तव मे आपके पास धनाभाव है, तो आप केवल मुझे आज्ञा दे सकते हैं। मैं इस छत के एवज म आपको पाच लाख रुपया की व्यवस्था कर सकता हूं।"

भाऊ का विश्वास था कि सम्भवत उसको अधिक धनराशि मिल सकती है। इसी से उसने सूरजमल की इस विनम्र प्रार्थना पर कोई ध्यान नहीं दिया। "आकर्षक व भव्य भवनो को नष्ट करन वाले हृदयहीन आदेशो के साथ ६ अगस्त को शेष छत भी उतार ली गई और उससे चादी के नौ लाख रुपया ढाले गये। इससे उसकी सेना, शाही परिवार तथा महल क सेवको का एक माह निर्वाह चल सका।" इस अंतिम प्रस्ताव के अस्वीकार होने से सूरजमल को सर्वाधिक सताप हुआ और वह अपने क्रोध को नही दबा सका। उसने कहा—'भाऊ साहब! आपने मुगल सिंहासन की पवित्रता का उपहास किया है। इसको कोई भी मुगल सरदार बरदाश्त नही कर सकता। मै आपके सामने उपस्थित हू और आप मेरे उपर द्वेषाग्नि वर्षा सकत हो। जब कभी मैंने किसी भी स्थिति पर विचार करने की आपसे प्रार्थना की, आपने उपेक्षापूर्वक उसका तिरस्कार किया। हमने आपको दिल से हिन्दू धर्म का रक्षक तथा पालक समझा और प्रत्येक कठिनाई मे सहयोग देने का आश्वासन दिया। आपने भी अपने हाथ में यमुना जल लेकर जाट मराठा मित्रता की प्रतिज्ञा की थी, लेकिन वास्तव म आप हमको धोका देते रहे।"

निःसन्देह सूरजमल लडखडाते मुगल साम्राज्य की रक्षा का हितैषी था। मुगल सम्राट के माध्यम से राजपूत, मुगल, रुहेला, पठान, जाट, सिख, गूजर आदि योद्धा जातिया एक सूत्र तथा एकता में आबद्ध होकर स्वदेश रक्षा की ठोस कडिया थी और सभी मिलकर विदेशी आक्रान्ता का सामना करने में सक्षम थे। परन्तु इस समय सूरजमल को भारी निराशा हुई। भाऊ ने कहा—"क्या मैं आपकी शक्ति के

भरोसे पर ही दक्षिण से यहा आया हू ? मैं जो चाहूगा, करूंगा। आप चाहें तो यहा रुक सकते हैं या अपने मुल्क मे जा सकते हैं। दुर्रानी को परास्त करने के बाद मैं आपसे हिसाब-किताब का लेखाजोखा लू गा।" भाऊ के इन कठोर शब्दों को सुनकर होल्कर तथा सिंधिया हताश शात तथा व्यथित होकर बैठे रहे और उन्होंने भाऊ को कोई उत्तर नही दिया।[1]

आचार्य ईजवल्कर के अनुसार— "दीवान इ खास की छत को उतारना राजनैतिक दृष्टि से विनाशकारी था। नजीबुद्दौला के मुस्लिम साथियो ने इस कार्य को मुगल सिंहासन का अपमान मानकर विरोधी प्रचार किया और इससे आस-पास की मुस्लिम जनता मराठो के विरुद्ध भडक उठी।"[2] सदाशिव राव भाऊ की हठवादिता से सूरजमल को अत्यधिक निराशा हो गई थी। उसने अपमान को सहन करके मंत्रणा सभा को त्याग दिया और एक अगस्त की रात्रि को अपने डेरो पर वापस लौट आया। उसको अब निश्चय हो गया था कि अज्ञानता के कारण मराठो का भविष्य उज्जवल नही रह सकेगा। यद्यपि उसकी छावनी दिल्ली से १६ किमी० तुगलकाबाद मे थी, फिर भी उसके डेरे मराठों के बीच मे थे और नि सन्देह वह मराठा बन्दी था।[3]

होल्कर तथा सिंधिया ने उसकी सुरक्षा, आत्म सम्मान का आश्वासन दिया था और उनके विश्वास तथा मैत्री-निष्ठा पर ही सूरजमल की जीवन सुरक्षा निर्भर थी। दोनो सरदारो ने आपस मे बैठकर मन्त्रणा की। "उसके सम्मान का आश्वासन देकर हम जाट शासक को यहा लेकर आये हैं। भाऊ की योजना व नीति असहनीय है। भाऊ तथा बलवन्त राव ने सूरजमल को बन्दी बनाकर कारागार में डालने तथा उसकी छावनी को लूटने की गुप्त योजना बना ली है। सूरजमल को किसी भी भाति छावनी से सुरक्षित निकालना आवश्यक है, ताकि हम पर विश्वासघात या कर्तव्य-च्युत होने का कलक नही लग सके। इस अपराध के बदले भाऊ साहब हमारे साथ जो भी करना चाहे, उसको हम भुगत लेंगे।" इस आपसी निर्णय के बाद उन्होंने २१ सितम्बर को सूरजमल के विदेश मन्त्री तथा राजनैतिक पुरोहित रूपराम कटारा को अपने डेरो पर बुलाकर सलाह दी, "आप किसी भी तरह इस स्थान से आज रात्रि को ही भाग निकलें। भाऊ की छावनी हमसे पर्याप्त दूरी पर है। उसको

१ – पे०, द०, खण्ड २७, लेख २५७, दे० क्रॉनो०, पृ० ११६; भाऊ बखर, पृ० ११४-७, सियार, जि० ३, पृ० ३८५-६; इ० डा० (तारीखे इब्राहीम), खड ८, पृ० २७६, ग्राट डफ, जि० १, पृ० ६०६; मैकडानल्ड, पृ० ७; कानूनगो, पृ० १३१-३; हरीराम, पृ० १५८, २०६।

२ – ईजवल्कर, पृ० ८८।

३ – काशीराज, पृ० ८।

इसका आभास भी नही होने पावे और आप नि शब्द यहा से कूच कर दें। आपके तथा हमारे बीच म सम्पन्न विश्वास वचनों का इस समय केवल यही योगदान है, ताकि आप आगे हमे कलंकित नही कर सकें।" यह वाक्य कह कर उन दोनो ने अपने कान पकडे और शाति से झुक कर निश्चय कर लिया कि वह फिर कभी अहकारी तथा कर्त्तव्यच्युत भाऊ के पीछे इस आपातकाल म अपने सम्मान का बलिदान नही करेंगे।[1]

रूपराम ने वापिस लौटकर सूरजमल को भाऊ की गुप्त योजना का ब्यौरा बतलाया। इस समय वास्तव म सूरजमल की स्थिति अति नाजुक थी। वह एक ओर मराठा और दूसरी ओर दुर्रानी के बीच जाल म फस रहा था। यह सुनकर वह स्तब्ध रह गया और रूपराम से बोला, 'यदि सौभाग्य से हम आज रात्रि मे यहा से निकलने मे सफल हो गये, तो हम भाऊ के कट्टर शत्रु बन जावेंगे। यदि भाऊ अहमदशाह दुर्रानी को परास्त करने मे सफल हो गया, तो मेरा विनाश अनिवार्य होगा। उसके अगुली उठाने पर मुझको कही भी शरण नही मिलेगी और न कोई शासक मेरी प्राण रक्षा का भार वहन करेगा। यदि मैं भविष्यत् भास से यहां रूकूंगा तो बन्दी बना लिया जाऊगा। इस समय मेरे लिये दोनो ही मार्ग कठिनाई के सूचक हैं। अत आप ही सोचिए, अब मुझे क्या करना चाहिये?" यह सुनकर रूपराम ने निवेदन किया, "आप यह जानते हैं कि किसी एक व्यक्ति के अशुभ नक्षत्रो की अन्य व्यक्ति की कुण्डली से सयुक्त मिलान करने के बाद बारह वर्ष के जीवन का आश्वासन दिया जा सकता है। भाऊ तथा दुर्रानी दोनों ही समान शक्ति सम्पन्न तथा निर्दयी शत्रु हैं। कौन कह सकता है कि दोनो मे से किसकी विजय होगी? उस समय तक हम अपने मुल्क में शाति से रह कर अपनी शक्ति का विस्तार करेंगे। आगे जो कुछ भी होगा, ईश्वर अच्छा ही करेगा। आप भविष्य की बात सोच कर अपने आपको क्यो सकट मे डालना चाहते हैं? आगे जो भी होगा, उसे भी देखेंगे। हमको आज रात्रि में यहां से निकल कर चलना आवश्यक है।" रूपराम के शाति तथा निश्चल परामर्श ने जाट राजा के जीवन में नवीन मार्ग प्रशस्त किया और वह भावी कठिनाइयो के प्रति सजग हो गया।

रात्रि म जाट छावनी मे तुगलकाबाद शिविर को छोडकर भागने की तैयारिया होनी लगी। सूरजमल का निकटतम दुर्ग बल्लमगढ़ दिल्ली के दक्षिण में ६५ किमी० दूर था। सूरजमल ने शीघ्र ही भाऊ की छावनी के समीप अपने डेरा ले जाने की घोषणा कर दी और अपने डेरा, सामान तथा छावनी के अलड्डाबू सैनिकों को अपन मुल्क की ओर रवाना कर दिया। जब उसको समाचार मिल

---

१ – भाऊ बखर, पृ० ११६।

गया कि वे अपने मार्ग में ३२ किमी० आगे निकल चुके हैं और अभी तीन प्रहर रात्रि शेष है, उस समय वह स्वयं तथा इमादुलमुल्क ने अपने पाँच सहस्र सैनिकों के साथ मराठा सरदारों की रोक-टोक की परवाह न करके समस्त साधन तथा सामान के साथ बल्लमगढ की ओर प्रस्थान कर दिया।[1]

मल्हारराव चतुर व चालाक सरदार था। वह अपने शिकारी कुत्तों के साथ खरगोश की तलाश में घूमने वाला था। एक ओर उसने सूरजमल को निकालकर अपने वचनों की रक्षा की, दूसरी ओर जब जाट सेनायें छावनी से १३ किमी० अधिक निकल चुकी थीं। तब उसने अपने दीवान गंगाधर को भाऊ के पास समाचार देने के लिए रवाना किया। गंगाधर ने भाऊ से निवेदन किया, "सूरजमल बिना सूचना दिए रात्रि को भाग गया। मल्हार तथा सिंधिया ने उसका पीछा करने के लिए अपनी सेनायें भेज दी हैं। आप भी अपनी सेनायें उसके विनाश के लिए रवाना करने की कृपा करें।" भाऊ ने इस समाचार पर अपनी हार्दिक व्यथा प्रगट नहीं की और तुरन्त कहा, "एक साधारण जमींदार से यही आशा थी। चलो, ठीक ही रहा। उसने हमको उस समय नहीं छोड़ा, जबकि हम उस पर विश्वास करके किसी सेवार्थ तैनात करते। विजय के बाद ही अब देखा जायेगा।"

२२ सितम्बर को प्रातःकाल सूरजमल शांतिपूर्वक सकुशल बल्लमगढ में पहुँच चुका था और उसके पीछे गये मराठा सवार कुछ बाजार को लूटकर वापस लौट आये। यह सुनकर भाऊ ने क्रोधित होकर अपने होंठ चबा लिये और उपस्थित सरदारों के बीच में चिल्ला कर कहने लगा,—"आगे ईश्वरेच्छा, यदि इस बार दुर्रानी मात खाकर वापस चला गया, तो इस जाट की क्या मजाल रहेगी? मैं उस निर्बल मुल्क तथा उसके सरदार का अन्त कर दूँगा।" राजवाड़कर के अनुसार "ऐसे गम्भीर समय पर सूरजमल के सहायता से हट जाने को भाऊ ने निश्चित रूप से अनुभव किया था। इसलिये उसे वापस लाने का प्रयास भी किया था। दूसरे दिन (२३ सितम्बर) भाऊ का दीवान महीपतराव, दीवान गंगाधर और सिंधिया का कारिंदा रामाजी अनन्त सूरजमल को शांत करने तथा वापस लौटाकर लाने के लिये भाऊ की छावनी से बल्लमगढ भी गये, किन्तु वास्तव में उनको सफलता नहीं मिल सकी।"[2]

---

१ – काशीराज पृ० १६; गाईं, पृ० १०, भाऊ बखर, पृ० ११६; ता० मुजफ्फरी, पृ० १८४; इ० डा० (ता० इब्राहीम), खण्ड ८, पृ० २७८; कानूनगो, पृ० १३८।

२ – भाऊ बखर (वार्तालाप का विशद विवरण), पृ० ११८–२१; भाऊ साहेबाची कैफीयत, पृ० १०; राजवाडे, जि० १, लेख २२२; पे० द०, खण्ड २१, लेख ६०; *

१७ – मतभेद के कारणों पर एक दृष्टि

राजा सूरजमल और सदाशिव राव भाऊ के बीच विद्यमान आन्तरिक मतभेदो पर आधुनिक इतिहासकारों ने अपनी-अपनी दृष्टि से भिन्न मत व्यक्त किये हैं। मराठा इतिहासकार गोविन्द सखाराम सरदेसाई के अनुसार—"नवाब शुजाउद्दौला तथा अहमदशाह दुर्रानी का मिलन मराठा पक्ष के लिये अति घातक सिद्ध हुआ। अन्य हानि सूरजमल के एकाएक साथ छोडकर दिल्ली से अपनी राजधानी भरतपुर को वापिस लौटने से उठानी पडी।" लेखक अपने मराठी ग्रन्थ के "पानीपत प्रकरण" मे काशी राज पंडित के आधार पर लिखता है—

(१) सूरजमल ने भाऊ को मराठा परिवार, विशाल तोपखाना तथा अतिरिक्त सामान को चम्बल पार अथवा जाट मुल्क मथुरा में छोडकर मराठो की नैसर्गिक गज्जकाना प्रणाली को अपनाने पर जोर दिया।

(२) सियार्-उल-मुताखरीन के आधार पर लिखता है कि भाऊ ने अपने सैनिकों के वेतन चुकाने के लिये दीवान-इ-खास की चादी की छत को तुडवा दिया।

(३) मीर गाजीउद्दीन (इमादुल्मुल्क) को दिल्ली साम्राज्य की वजारत पुनः प्रदान नही की।

(४) जाट राजा अपने राज्य के बाहर मराठा पक्ष मे अपनी सेवायें प्रदान करने के लिये तैयार नही हुआ। उसका (सूरजमल) कहना था कि जो कुछ भी बन पड़ेगा, वह अपने ही देश मे करेगा।

(५) दिल्ली पर अधिकार करने के बाद सूरजमल ने मांग प्रस्तुत की कि उसे दिल्ली का प्रबन्धक नियुक्त कर दिया जावे।

भाऊ साहब अन्तिम माग को स्वीकारने में असमर्थ थे। मराठा इतिहासकार ने इस कारण पर अधिक जोर दिया है। वह लिखता है कि इसके अलावा "ऐतिहासिक तथ्यों की कसोटी पर सूरजमल के रुष्ट होने का अन्य कारण अरक्ष्य तथा कल्पित है।"[१] इसी प्रकार आचार्य शेजवलकर लिखता है—"दिल्ली पर शासन करने

---

* खण्ड २७, लेख २७८; काशीराज (गाई),पृ० ११०; तारीखे भाऊ-ओ-जनको, पृ० २८; ता० मुजफ्फरी, पृ० १८४, दे० ग्रॉनो; इमाद, पृ० १८०; शेजवलकर, पृ० ६२; कानूनगो, पृ० १३३-६।

— वेण्डल (पृ० ८१), 'भाऊ ने सूरजमल का एक जमींदार कहकर अपमान किया था'।

१ – सरदेसाई, खण्ड २, पृ० ५४७; पानीपत प्रकरण, पृ० १६६।

की अपनी इच्छा की पूर्ति में स्वयं को असफल पाकर सूरजमल ने भाऊ की नीति पर क्रोध व्यक्त किया और चुपचाप भाऊ के शिविर से खिसक गया।" [1] इस तथ्य पर जोर डालना और सूरजमल की माग के बारे मे मत प्रकट करना मराठा राज्य के सेनापति भाऊ के हठ तथा दुराभिमान की रक्षा करना मात्र है, क्योंकि समकालीन, निकट समकालीन फारसी इतिहासकार सूरजमल की इस माग का उल्लेख नही करते हैं।

सरदेसाई का प्रथम कारण नि.सन्देह सत्य तथा परिपुष्ट है, परन्तु इसमें मराठा राज्य तथा मराठा नीति का हित समाहित था। दूसरे के बारे मे सियार का लेखक लिखता है—"जाट शासक को इससे इतना अधिक धक्का लगा कि मराठो ने जनता द्वारा सम्मानित पवित्र स्थानों की ओर ध्यान नही दिया। उन्होंने पवित्र समाधि स्थानों को अपवित्र करके उनके सोने चादी के बर्तनो का अपहरण किया। निजामुद्दीन औलिया के चैत्यालय को लूटा गया। मुहम्मद शाह का मकबरा भी उनकी लूट से नही बच सका और वे ठोस सोने की धूपदानी, दीवट तथा बर्तनो को उठाकर ले गये। इनको तोडकर उन्होने सिक्के ढाले। अन्त मे उन्होंने दीवान-इ-आम की चादी की छत को तुडवाकर सिक्का बनवाये। यह छत अति आकर्षक नक्काशी का नमूना थी। तीसरे मत के बारे मे 'इमादउस्सआदत' का लेखक लिखता है कि भाऊ ने सूरजमल से दो करोड की माग की थी और उसको सन्देहास्पद देखरेख में रखा। जाट राजा को मल्हार राव के अनुग्रह से मुक्ति मिली। इस प्रकार सरदेसाई तथा अन्य मराठा इतिहासकारो के बारे में कोई पुष्ट प्रमाण नही मिले हैं। [2] उनका मत भाऊ की रक्षा करने तक ही सीमित है। सूरजमल वास्तव में मुगल सम्मान तथा हित की स्थिरता, साम्प्रदायिक एकता तथा सद्भावना का आदर करता था।

डॉ० यदुनाथ सरकार का मत है—

(१) रामगढ तथा दोआब मे जाट शासक का अधिकार मराठो की महत्वाकाक्षा मे बाधक था। इसके ठीक दक्षिण की ओर मराठा सूबेदार (कमाविसदार) गोविन्द पत बुन्देला की योजना रामगढ दुर्ग पर अधिकार करके मराठा शासन मे शामिल [3] करने की थी।

(२) ज्यो ही दुर्रानी का खटका समाप्त होता, त्यो ही दक्षिणियो का

---

१ – शेजवल्कर, पृ० ६२।

२ – सियार, जि० ३, पृ० ३८५–६; इमाद, पृ० १८१; कानूनगो, पृ० १३६।

३ – राजवाडे, जि० १, लेख, १८७।

टिड्डी दल पुरानी बकाया के लिए उस (सूरजमल) पर टूट पड़ता। फिर भी मराठा तथा दुर्रानी के बीच में सूरजमल को मराठा अच्छे लगते। परन्तु उसी दशा में जब वे "जीओ और जीने दो" की नीति का अनुसरण करते और उनमे वचन पालना की ईमानदारी तथा निष्ठा विद्यमान रहती।

(३) उसने (भाऊ) जाट राजा का अपमान किया तथा उसे इतना भयभीत कर दिया कि वह मेल की बात नहीं सोच सकता था।[१]

ग्राट डफ के अनुसार "मराठा लेखो से यह स्पष्ट हो जाता है कि सूरजमल की घृणा का कारण भाऊ का असहनीय आचरण था।"[२] डा० हरीराम गुप्ता का मत है कि यद्यपि सूरजमल ने अफगान तथा रुहेलो की अपेक्षा मराठो को उचित समझा, परन्तु वह मराठों के सम्बन्धो से कभी भी प्रसन्न नही हो सकता था। वास्तव मे वह होने वाले झगडे (युद्ध) से अपने आपको दूर रखना चाहता था। उसको किसी भी पक्ष की पराजय से सन्तोष था। उसका दिल्ली मे भाऊ के साथ आने का कारण इमाद की सहायता से शाही राजधानी के क्रिया-कलापो को क्रियान्वित करना था, परन्तु भाऊ ने इस सुझाव को नहीं स्वीकारा। फलत वापस लौटने का अवसर देखने लगा और जब भाऊ ने शुजा के प्रस्तावों का पक्ष लिया तभी उसको मौका मिल गया।[३] मराठी लेखो के अनुसार शुजा ने मराठा तथा दुर्रानी के मध्य शाति समझौता कराने का प्रस्ताव[४] रखा था और उसके प्रस्तावानुसार मुगल सम्राट को सर्वोच्च मानकर उभय पक्ष अपने देश को लौट जाते।[५] अत डा० हरीराम का यह कथन उचित प्रतीत नहीं होता है कि सूरजमल "शुजा के प्रस्तावो का पक्ष" लेन के कारण वापिस लौट गया। यदि शुजा के प्रस्तावो को स्वीकार कर लिया जाता, तो नि सन्देह शुजा साम्राज्य का वजीर पद धारण करता और सूरजमल अपने अभिन्न मित्र का विरोध नही करता, क्योंकि वह स्वय भावी नीति के बारे मे शुजा से परामर्श ले रहा था।

---

१ – सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १७२।

२ – ग्राट डफ, खण्ड १, पृ० ६०६; मैक्डानल्ड, पृ० ७।

३ – हरीराम पानीपत, पृ० १५६।

४ – पे० द०, जि० २१, लेख १६०, खण्ड २७, लेख २५८; राजवाडे, जि० १, लेख २३२।

५ – पुरन्दरे, जि० १, लेख ३८६, भाऊ बखर, पृ० ९३, शुजाउद्दौला, खण्ड १, पृ० ८८।

इसी प्रकार आचार्य शेजवलकर लिखता है, "भाऊ का सूरजमल को अपमानित करने का इरादा नही था। न वह आश्वासनों द्वारा अपने पक्ष मे रखने की ओर ही असावधान था। परन्तु ऐसा लगता है कि भाऊ को विश्वास था कि सूरजमल पूर्णतः अवसरवादी तथा स्वार्थी व्यक्ति है। प्रत्यक्ष मे उसने भले ही विचार-मतभेदो के कारण जिद्द करके मराठा शिविर को छोडा हो, किन्तु वास्तव मे उसने मराठा सैनिको तथा पशुओ को भूख से त्रस्त दशा मे भाऊ की ओर से सभावित धन की माग तथा आग्रह से बचने के लिए छोडा था। सम्पूर्ण पानीपत अभियान के मध्य भाऊ ने जाट शासक के मराठो के प्रति विचारो पर कभी भी सन्देह नहीं किया था और न सूरजमल ने ही स्वय उनके हित मे कोई विरोधी कार्य किया। अतः भाऊ बखर मे वर्णित सूरजमल का नाटकीय काण्ड पूर्णत काल्पनिक और बाद का सूझबूझ है। हो सकता है कि दुर्रानी युद्ध योजना के विषय मे उसका व्यवहारिक मनोमालिन्य रहा हो, किन्तु भाऊ से बिना आज्ञा लिये अचानक दिल्ली छोडकर जाना उसकी निराशा के कारण हुआ होगा। इसमे सन्देह नही, वह चतुर और सावधान व्यक्ति था"" परन्तु वह व्यक्तिगत रूप मे बडा ही स्वार्थी था और विनम्रता के आवरण मे अपने स्वार्थों की सिद्धि करने के लिए सदा ही प्रयत्नशील रहता था। फिर भी उसने दुर्रानी तथा शुजा के प्रस्तावो को ठुकरा कर मराठो को अत्यधिक सहायता की और अपने मुल्क से उनके प्रसाधन, सामान व रकम को बिना किसी रुकावट तथा लूटमार के निकल कर जाने मे सहायता की।"[1]

यह सर्वमान्य सत्य है कि सूरजमल ने महान् आपातकाल मे मराठो का साथ दिया था और दिल्ली से वापस लौटने पर भी अपने सहधर्मियो की सेवा की थी। मराठा लेखो से स्पष्ट है कि मराठा छावनी को छोडकर सूरजमल का वापस लौटना भाऊ की अदूरदर्शिता, अनुभवहीनता, दुराभिमान तथा मनमानी का परिणाम था। जाट शासक सूरजमल मे सह-अस्तित्व की उदार भावना थी और वह हिन्दुस्तान मे विदेशी आक्रान्ताओ को सीमा प्रान्त में रोकने के लिए शक्तिशाली भारतीय शक्तियो का एक सघ बनाना चाहता था। भाऊ ने मदाध होकर सम्राट तथा साम्राज्य के उत्तराधिकारियो का यथेष्ठ सम्मान नही किया था। उसमें साम्प्रदायिक एकता तथा धार्मिक सहिष्णुता का अभाव था। उसने यह सन्देहास्पद स्थिति पैदा कर दी थी कि वह भारत मे मुगल सम्राट को प्रभुसत्ता प्राप्त करने मे योग देगा या नही ? यदि उसने प्रथम दिन ही सम्राट के प्रति आस्था प्रकट कर दी होती, तो शायद सूरजमल को हताश नही होना पडता। इसी से उसकी भावना तथा राष्ट्रीय एकता के विचारो को ठेस पहुँची और वह सन्देहास्पद स्थिति मे ही सहधर्मी मराठा

---

१ – शेजवलकर, पृ० ६२-३।

शिविर को छोड कर चला आया था तथा भाऊ को अपने ही सलाहकारो के मतभेद में उलझना पडा था।

१८ – दिल्ली प्रवास काल में मराठों की आर्थिक कठिनाईया

दिल्ली में मराठा २२ जुलाई से ११ अगस्त तक रुके। १२ अगस्त को भाऊ ने राजे बहादुर नारो शंकर को दुर्ग तथा नगर का सम्पूर्ण भार सौंप दिया था और स्वयं अफगानो को यमुना पार रोकने के लिए दिल्ली के उत्तर मे १० किमी. शालीमार (बादली के निकट) बाग मे चला गया था, जहा वह १० अक्टूबर तक पडाव डाले पडा रहा। इससे रुहेला अफगानो के लिए बरारी घाट का रास्ता बन्द हो चुका था। इन अस्सी दिनो मे धन तथा खाद्यान्न के अभाव मे मराठो की कठिनाइया अधिक उग्र हो गई थी। बादली का इलाका अनुपजाऊ तथा सूखा था और जाट मित्रो के उपजाऊ मुल्क से काफी दूरी पर था। फलत छावनी मे खाद्यान्न तथा चारे की कमी होने लगी। बरसात के कारण मनुष्य तथा जानवरो की तन्दुरुस्ती पर बुरा प्रभाव पडा। "उसके तोपखाना, गोला बारुद की गाडियो के बैल दुर्भिक्ष तथा बीमारी के कारण कमजोर होकर मरने लगे।" इसका सैनिका पर भी प्रभाव पडा, क्योकि यहा का जलवायु उनके प्रतिकूल था।[1] दिल्ली मे भाऊ का सात लाख रुपया मासिक व्यय था और वहा से उसको आर्थिक लाभ भी नही हो सका था।

५ अगस्त के पत्र से दिल्ली मे भाऊ छावनी की कठिनाईयो का पता चलता है। "इस समय हमारे पास केवल एक सप्ताह के लिए पगार (दैनिक मजदूरी) बाटने के लिए भी रुपया नही है। कही से ऋण नहीं मिल पाता। मेरे सिपाही व घोडे उपवास कर रहे हैं।" इसी प्रकार भाऊ ने १६ सितम्बर को अपने पत्र मे आर्थिक कठिनाईयो का ब्यौरा देते हुए लिखा, "हमारी सेना म बडे-बडे आदमियों को भी भोजन नही मिल रहा है। घोडा दाना खाना भूल से गये हैं। सैनिक बरबाद हो रह हैं। इससे पूर्व किसी ने ऐसा कठिन साल नही देखा था।"[2] इन दिनो भाऊ दुर्रानी आपस मे समझौता वार्ता करते रहे। दुर्रानी स्वय युद्ध की अपेक्षा मराठो से सन्धि का इच्छुक था और वह केवल पजाब तथा सरहिन्द प्रान्तो पर अपना अधिकार

---

१ – राजवाडे, जि० १, लेख २३१, २३७, पे० द०, खण्ड २, लेख १३०, १३१; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १७५, १७६, शेजवल्कर, पृ० ६८–६, हरीराम, पृ० १५०।

२ – पे० द०, खण्ड २७, लेख २५७, २५८; पुरन्दरे, भाग १, लेख ३८६।

चाहता था, परन्तु नजीबुद्दौला के भय तथा अज्ञानता ने इन प्रस्तावों को क्रियान्वित नही होने दिया ।[1]

१६ – सूरजमल की तटस्थ नीति तथा मराठो के प्रति झुकाव

बाजीराव पेशवा भारत मे "हिन्दू स्वराज्य" का स्वप्न देख रहा था, परन्तु दुर्रानी ने अपनी कुटिल तथा पारदर्शी चालो से पेशवा की नीति को विफल कर दिया था और भाऊ भी उसकी कूटनीति नही पहचान सका। हिन्दुस्तान में भाऊ को केवल *महान दूरदर्शी, विवेकी तथा क्रियाशील राजनयिक सूरजमल का सहयोग* मिला था और उसने अपना देश तथा सेनायें मराठो की सहायता के लिये समर्पित कर दी थी। परन्तु भाऊ ने "मराठा परिषद मे शामिल मराठा सरदारों मे विद्यमान आपसी आन्तरिक कटुता के कारण" उसके अस्तित्व, साधन तथा विचारो का महत्व नही समझा। सूरजमल के बल्लमगढ़ आ जाने के बाद भाऊ को दो माह तक "महान आर्थिक सकट तथा दुर्भिक्ष का सामना करना पडा।" इस सकट काल मे उसकी शक्ति तथा साधनो के महत्व को मराठा तथा दुर्रानी दोनो ने ही पहचाना और सितम्बर म दोनो ओर से जाट शक्ति को अपने पक्ष मे रखने के लिये प्रयत्न किये गये। अब जाट शासक के सुसुप्त ग्रह नक्षत्र पुन जगमगाने लगे।

शाह दुर्रानी ने भारत प्रवासकाल मे यह अनुभव कर लिया था कि जाटों के अजेय दुर्ग तथा जाट मुल्क पर अधिकार करने की अपेक्षा मराठो को परास्त करके दकन में खदेड़ना सरल है। मराठो के लिये जाट मुल्क से खाद्यान्न मिल सकता था और वे युद्ध की अपेक्षा दुर्भिक्ष की घेराबन्दी से परास्त हो सकते थे। अत अहमद शाह नवाब शुजा की मध्यस्थता से यह प्रयास करता रहा कि आगे जाट शासक भी राजपूतो का अनुकरण करके तटस्थ रहने का प्रयास करें, ताकि मराठों को उसका राजनैतिक व आर्थिक सहयोग नही मिल सके। सितम्बर के अंतिम सप्ताह मे दुर्रानी तथा शुजा दोनो ने बल्लमगढ दुर्ग मे राजा सूरजमल के पास "राजा देवीदत्त, अली बेग जार्जी तथा अन्य सरदारो को खिलअत तथा तटस्थता प्रस्ताव के साथ भेजा। जाट शासक ने शाह दुर्रानी तथा शुजा दोनो द्वारा भेजी गई खिलअत धारण कर ली और अनेक प्रकार की शपथ लेकर मराठो की सहायता न करने का आश्वासन दिया।"[2]

यह सूरजमल की सूक्ष्म विवेकता थी। वास्तव मे उसका अंत करण भारतीय शक्तियो के साथ था और वह दुर्रानी की अपेक्षा मराठो को अधिक उचित समझता

---

१ – राजवाडे, खण्ड ६, लेख ४०४, सरदेसाई, खण्ड २, पृ० ५५२–३।
२ – दे० क्रॉन० (२४ सितम्बर), पृ० ११६, काशीराज, पृ० १४–१५; कानूनगो पृ० १३६, शुजाउद्दौला खण्ड १, पृ० १८८, हरी राम पृ० १३८।

था। दुर्रानी व शुजा के दूतो का समाचार मिलने पर भाऊ को भारी चिन्ता हुई। उसने भी तत्क्षण एक हाथी तथा सिरोपाव के साथ अपना पत्र सूरजमल के पास भेजा। उसने अपने शत्रु शाह दुर्रानी का पक्ष ग्रहण न करने की अपील की और शत्रु पक्ष की ओर जाने वाले रसद मार्गों को अवरुद्ध करने की सलाह दी। इस प्रकार अक्तूबर के अन्त मे उभय पक्षो मे समझौता की बातचीत प्रारम्भ हुई और सूरजमल ने जवाहर सिंह के नेतृत्व मे मराठो के साथ सैनिक दल रवाना करने का भी आश्वासन दिया।[1]

भाऊ ने दिल्ली के उत्तर में ६५ किमी० यमुना नदी के समीप कुंजपुरा के दुर्ग पर, जहा पर्याप्त खाद्यान्न सकलित था, अधिकार करने का निश्चय कर लिया था। इस दुर्ग का स्वामी नजीब खा का कृपा पात्र निजावत खा रुहेला था और रक्षा के लिये सरहिन्द का सूबेदार अब्दुस्समद खा मुहम्मदजई और मिया कुतुबशाह दस सहस्र सेना के साथ तैनात थे। भाऊ ने कुंजपुरा अभियान के बारे मे सूरजमल से परामर्श किया, तब सूरजमल ने पुनः भाऊ को अपने सन्देश में कहा, "आप मुगल साम्राज्य का प्रबन्ध उसके उत्तराधिकारी के हाथो मे सौंप दे। ताकि स्थिति मे सुधार हो सके। अब तक आपने होल्कर, सिंधिया तथा मेरे सम्मान को जटिल कर दिया है। यदि आप अब भी हमारी विनम्र प्रार्थना पर विचार करें तो मैं अब भी अपने साधनो के साथ आपके साथ हूँ। मै खाद्यान्न, रसद आदि की प्रचुर मात्रा मे व्यवस्था करूंगा। इस समय आप दिल्ली को छोडकर आगे नही बढ़ें और यहीं रुक कर अपनी नीति तथा योजना को परिपक्व करें। कुंजपुरा के झगड़े मे फंसना उचित प्रतीत नही होता।"[2] मराठा छावनी मे पर्याप्त दुर्भिक्ष तथा अर्थाभाव ने भाऊ को कुंजपुरा के संचित कोष तथा रसद भण्डार पर अधिकार करने के लिये बाध्य कर दिया।[3] किन्तु उसने इस आकर्षण से जाट मुल्क तथा दिल्ली से दूर शत्रु के देश मे फंसकर महानतम भूल की और उसका अंतिम विनाशकारी परिणाम समस्त मराठा राज्य को भुगतना पडा।

कुंजपुरा की ओर प्रस्थान करने से पूर्व नाना पुरन्दरे और अप्पाजी जादवराज ने १० अक्टूबर को सम्राट शाहजहा सानी को तख्त से उतार कर प्रवासी अलीगौहर को शाहआलम सानी के नाम से मुगल सम्राट घोषित कर दिया था। उसके नाम के सिक्के जारी किये और मुहर काम में आने लगी। उसके ज्येष्ठ पुत्र मिर्जा जवान बख्त को उसका राज प्रतिनिधि (वली अहद) बनाया और शुजा के

---

१ – राजवाडे, जि० १, लेख २५६; होजवल्कर; पृ० ६३, १०१।
२ – भाऊ बखर; कानूनगो, पृ० १३३।

दुर्रानी पक्ष छोड देने की आशा से उसको दिल्ली का वजीर घोषित कर दिया ।[1] इसी समय भाऊ ने नारो शकर को दिल्ली का शासक व प्रबन्धक बनाया और उसकी कमान मे राजधानी की रक्षा के लिये सात सहस्र मराठा सवार तैनात किये ।[2] यह देखकर सूरजमल ने अपने राज्य मे होकर जाने वाली मराठा रसद तथा खजाने को बे-रोकटोक जाने का स्पष्ट आश्वासन दिया, किन्तु कुजपुरा अभियान मे उसने सहयोग देने से मना कर दिया और १६ अक्टूबर की शाम को भाऊ अपनी सेनाओ के साथ कुजपुरा पहुँच गया। १७ अक्टूबर को कुजपुरा पर उसका अधिकार हो गया। मराठों को यहां तीन हजार ऊट तथा घोडा, कितनी ही तोपें, विशाल शस्त्र भडार, दो लाख मन गेहू और साढे छ लाख रुपया नकद हा लगा ।[3] अब मराठा सेना दुर्रानी के व्यूह में बुरी तरह फस चुकी थी और इसको कहीं से भी किसी भी प्रकार की सहायता मिलना कठिन था।

२०—पानीपत का विनाशकारी सग्राम, जनवरी १४, १७६१ ई०

अक्टूबर के प्रथम सप्ताह मे अहमद शाह दुर्रानी ने दिल्ली के समीप शाहदरा मे पडाव डाला, लेकिन बाढ के कारण वह यमुना नदी पार नही कर सका। कुजपुरा पतन के समाचारो से उसको भारी दुख हुआ। २० अक्टूबर को उसने उत्तर की ओर कूच किया और २५ को गौरीपुर ग्राम के पास यमुना नदी पार करके २७ को सोनपत पहुँच गया। यमुना नदी पार करने का समाचार मिलने पर भाऊ भी २६ अक्टूबर को कुजपुरा से पानीपत के मैदान मे लौट आया और उसने दुर्रानी की सेना से ८ किमी० की दूरी पर अपनी छावनी डाली। अब दोनों ओर के कोलल दलो मे मुठभेड शुरु हो गई और दोनो ने एक दूसरे की रसद-भंग करने का उपक्रम जारी रखा।[4]

---

१ – दे० कॉनी, पृ० १२०, राजवाडे, खण्ड १, लेख २५८, २५९; सियार, खण्ड ३, पृ० ६७, शाह आलमनामा (मुन्नालाल), पृ० ७४-५, सरकार (मुगल), खण्ड २ पृ० १८०।

२ – ऐति० पत्र व्यवहार, ६७, शेजवलकर, पृ० १४५।

३ – राजवाडे, जि० १, लेख २२५, २५८–६०, २६५, खण्ड ६, लेख ४०५; पे० द०, खण्ड २१, लेख १६८, १६२, १६३, दे० कॉनी, नूरुद्दीन, पृ० ३४–५; काशीराज, पृ० ११, इमाद, पृ० १८६, पुरन्दरे, भाग १, लेख ३६१, भाऊ बखर, पृ० ६३, ६७, खजानेह अमीराह, पृ० १०६, शाकिर, पृ० १०१।

४ – काशीराज, पृ० १४, राजवाडे खण्ड १, लेख २६०–२६१, भाऊ बखर, पृ० ६६, पे० द०, खण्ड २१, लेख १६४, दे० कॉनी०, नूरुद्दीन, पृ० ३५–७, मुजमिल-उल-तवारीख बाद नादिरिया, पृ० १२६, इमाद, पृ० १८७–८, खजानहे अमीराह, पृ० १०६, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० १८६–६१।

पानीपत (कुरुक्षेत्र) के विशाल वक्षस्थल पर भारत के भाग्य का युगों से निर्णय होता आ रहा है। सम्राट बाबर ने मुल्तान इब्राहीम लोदी को परास्त (१५२६ ई०) करके भारत मे मुगल साम्राज्य की स्थापना की थी और नादिर शाह ने इसी मैदान मे मुगलो की कमर तोड दी थी। मराठा राज्य तथा उसके सिद्धान्तो का अन्तिम निर्णय यहा पर होने वाला था। पानीपत के मैदान मे दुर्रानी के पास पचास सहस्र अफगान सवार और चालीस सहस्र भारतीय सैनिक तथा तीस तोप थी, जबकि भाऊ की कमान मे पचपन सहस्र सवार, तीस सहस्र पैदल, दो सौ तोप तथा अनगिनती हथियार बन्द सिपाही थे। सिपाही दल लुटेरो का गिरोह था। इस प्रकार इस मैदान मे तीन लाख से कम भीड जमा नही थी।

मराठा छावनी वास्तव में "हठयोगियो का आश्रय" था और यहा दोनों सेनायें दो महीने से अधिक अन्तिम निर्णायक युद्ध की अभिलाषा मे पडी रही। शाह दुर्रानी ने अपने सैनिक दल भेज कर जाट राज्य की सीमाओ को बन्द कर दिया और मराठो को दिल्ली से आगे किसी भी तरह की मदद मिलना बन्द हो गया था। पटियाला राज्य के संस्थापक अलासिंह जाट सरदार की कृपा से मराठा छावनी मे अन्न के कुछ काफिले आते रहे, परन्तु दुर्रानी ने यहा भी मराठों को भूखा मरने के लिये बाध्य कर दिया। मराठा छावनी मे "मनुष्यो को खाने के लिये न अन्न था, जलाने को लकडिया और न घोडो के लिये घास थी। मृतकों की ल्हास तथा मृतक जानवरो को न जलाया जा सका और न दफनाया ही गया। इससे चारो ओर दुर्गन्ध फैलने लगी थी। चारो ओर विशाल भीड से गन्दगी बढ़ती जा रही थी। खाईयो के अन्दर सैनिको को एक नरक का सा दृश्य दिखलाई दे रहा था।"[1]

१ नवम्बर को उभय पक्ष के गश्ती दलो मे मुठभेड शुरू हुई और फिर १९, २२ नवम्बर, ७, १७ दिसम्बर को बडी-बडी झडपें हुई। जनवरी १३, १७६१ को मराठा सेना ने "भूख से मरने की अपेक्षा शत्रु से जमकर लडने के लिये भाऊ पर भारी दबाव डाला।" यह देखकर भाऊ ने अपने पानदान रखने वाले सेवक बलाराम भगोजी नायक को अपने पत्र के साथ शुजा के पास रवाना किया। जिसमे लिखा था—"प्याला लबालब भर चुका है, आगे नहीं रुक सकता। यदि कुछ हो सकता है, तो करो अथवा मुझे साफ उत्तर दो। इसके बाद लिखने या बात करने का कोई अवसर नही रहेगा।"[2]

जनवरी १४, १७६१ ई० को पानीपत का हृदय विदारक संग्राम हुआ,

---

१ – काशीराज (गाई), पृ० २१; राजवाडे, खण्ड ६, लेख ४०६।

२ – काशीराज (गाई), पृ० २०–२१; नजीबुद्दौला, पृ० ४६; खजानहे अमीराह, पृ० १०८, हरीराम, पृ० २०८।

हकीम तथा जर्राहों ने उपचार किया। उनको पहनने को वस्त्र तथा खाने को भोजन देकर बिदा किया। जाट शासक की अधि-घोषणा का व्यापक प्रभाव पड़ा और सभी सम्पन्न नागरिकों ने अपनी जुम्मेदारी निभाई। साहूकारों ने अपनी श्रद्धा के अनुसार एक एक खण्डी उरद की दाल व आटा बांटा। कहीं कहीं दस दस, ग्यारह-ग्यारह मुठ्ठी चना बाटा गया। कहीं कहीं मराठों को पैसा तथा भोजन मिला। इस प्रकार खाते-पीते मराठा सैनिक आगे बढते गये।[1] "यदि इस समय सूरजमल के हृदय मे अदूरदर्शी मराठा सेनापति सदाशिव राव भाऊ के प्रति ग्लानि होती, तो वह राजनैतिक तिरस्कार का बदला ले सकता था और एक भी मराठा सरदार या सैनिक नर्बदा पार करके पानीपत की दु:खद गाथा पेशवा को नहीं सुना सकता था।"[2]

समकालीन तथा निकट समकालीन फारसी इतिहासकारों[3] ने सूरजमल की इस महान उदारता, मानवता की मुक्त लेखनी से प्रशंसा की है। मराठा इतिहासकार भी जाट शासक की महानता व उदारता के ऋणी हैं। उनके अनुसार– "अनेक मराठा सैनिकों ने मथुरा के समीप जाट शासक की राजधानी मे प्रवेश किया। सूरजमल भारतीय सनातन भावना से पल्लवित हो उठा और उसने अपनी सीमाओं पर मराठों की रक्षार्थ सैनिक चौकियां स्थापित कर दी थीं। उनको अन्न-वस्त्र देकर हर सम्भव सहायता प्रदान की गई। भक्त वत्सला रानी हंसिया ने ब्राह्मणों तथा मराठा महिलाओं के साथ विशेष उदारता का व्यवहार किया।" कृष्णाजी शामराज के शब्दों में—"ब्राह्मणों को अनेक दिन उपवास करना पड़ा। उनको अन्न के दर्शन नहीं हुए। पौष की कड़कड़ाती ठंड मे उनके शरीर पर तन की रक्षा के लिए वस्त्र भी नहीं था। इस प्रकार दीन-हीनों ने पन्द्रह दिन मे भरतपुर मे प्रवेश किया। सूरजमल की धर्मपरायणा पत्नी ने भारी दान-पुण्य किया और स्थान-स्थान पर सवार भेजकर चालीस-पचास सहस्र मराठों को सादर आठ दिन का पेटिया (अन्न, दाल व घृत) बाटा। ब्राह्मणों को दूध, पेड़ा, मेवा आदि मिष्ठान खिलाकर सम्मानित किया। एक दिन भोजन कराकर प्रत्येक ब्राह्मण को पांच-पांच रुपया नकद, एक-एक धोती, कमरी, एक रजाई तथा एक सप्ताह के लिए मार्ग मे खाने के लिए सीदा देकर शहर से आराम के साथ विदा किया। साथ ही शहरों म उसने घोषणा करवा दी कि किसी भी बस्ती में इनको नहीं लूटा जावे। जिससे जितना बन पड़े, अन्न दान करे।"[4]

---

१ – भाऊ बखर, अनु० १४५; पृ० १६१।
२ – ग्रेण्डल, पृ० ८१; कानूनगो,पृ० १४०; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २३८।
३ – इमाद, पृ० २०३, बयाने वाकई, पृ० २६३।
४ – भाऊ बखर, अनु० १४५, पृ० १६१।

इस प्रकार मराठों ने काठेड प्रदेश में अपनी महान विपत्ति को भुलाकर शांति की श्वांस ली।

पेशवा बाजीराव प्रथम का मुस्लिम उप-पत्नी मस्तानी से उत्पन्न पुत्र शमशेर बहादुर पानीपत के मैदान में काफी घायल हो गया था। वह घायल अवस्था मे कुम्हेर पहुँच गया, जहां उसका यथोचित सम्मान तथा घावो का उपचार भी किया गया। बाद मे उसको उपचार के लिए भरतपुर लाया गया। परन्तु उसके हृदय मे पानीपत की गहरी टेस लगी थी और उसने भरतपुर मे ही प्राण त्याग दिये।[1] जाट शासक ने राजसी क्रिया कर्म करके उसको आधुनिक चहार बाग (विक्टोरिया जनरल अस्पताल) की चार दीवारी मे दफनाया और इसी स्थान पर उसकी स्मृति मे एक मजार मस्जिद तथा कुआ का निर्माण कराया। इसी के सामने इसी समय मखास की पक्की सराय भी बनवाई गई।[2] यह स्मारक अभी तक "बांदा वाले नवाब साहब" के नाम से सुरक्षित है। इसी चहार बाग मे नवाब इमादुलमुल्क के लिए महल बनवाया गया था, जिसमे इमाद व उसके परिवार ने अनेक वर्ष तक निवास किया। इसी हवेली के समीप नवाब गली अभी तक मौजूद है।

सदाशिव राव भाऊ की धर्म पत्नी पार्वती बाई चालाक घोड़ी की पीठ पर सवार होकर जानू भिन्ताडे के प्रयासो से पानीपत के मैदान से बचकर निकल आई और दिल्ली के दक्षिण मे ४८ किमी० मल्हार राव तथा नाना पुरन्दरे के गिरोह में शामिल हो गई थी, परन्तु इस बार मल्हार राव ने उसको सुरक्षा प्रदान नही की।[3] अतः पार्वती बाई अन्य मराठा सरदारों के साथ बाध्य होकर मथुरा पहुँच गई। सूरजमल तथा रानी हंसिया ने रूपराम कटारा को उनकी अगवानी तथा अति आदर-सत्कार के साथ डीग मे लिवाकर लाने के लिए मथुरा भेजा, जहां उसने पन्द्रह दिन रुककर दिवगत पति की मातमी (शोक) रस्म की। राजा सूरजमल, उसकी पत्नी तथा अन्य सरदारो ने एकत्रित होकर भाऊ की मृत्यु पर सम्वेदना प्रगट

---

१ – इमाद, पृ० २०३; काशीराज (गाई), पृ० ३७; इ० डा० (तारीखे इब्राहीम), खण्ड ८, पृ० २८३; भाऊ बखर, पृ० १६१; वाक्या राज०, जि० २, पृ० ६६; पानीपत प्रकरण, पृ० २०५; कानूनगो, पृ० १४१।
– भाऊ गर्दी (पृ० ३६) का कथन है कि शमशेर बहादुर की मृत्यु फतेहपुर के समीप हो गई थी।

२ – इमाद, पृ० २०४।

३ – भाऊ बखर, अनु० १४५, पृ० १६१; नूरुद्दीन, पृ० ५२ ब; राजवाडे, जि० २, लेख ४०६; होलकर, पृ० १६६।

थी।[1] उसकी भोजन व्यवस्था के लिए कुछ ब्राह्मण रसोईया तैनात कर दिये गये। उसको वस्त्र, बैठने के लिए पालकी और मार्ग व्यय के लिए जाट खजाने से एक लाख रुपया भेंट किया गया और उसको सकुशल ग्वालियर तक पहुँचाने के लिए अपने सैनिक भेजे। सूरजमल की पत्नियों ने मराठा ब्राह्मणों को पाच-पाच रुपया, अन्न व वस्त्र दान किया। नारो सखाराम के शब्दों में—"झाडी तथा पाले की पत्ती खा खाकर मराठा सैनिक कुम्हेर पहुँचे। वहा जाट राजा सूरजमल ने प्रत्येक साधारण सिपाही को एक-एक सेर आटा तथा वस्त्र बांटकर सन्तुष्ट किया। उसने इतना दान पुण्य किया कि उसके सदृश अन्य कोई धर्मात्मा नहीं था।" इस प्रकार जाट शासक ने मराठों की सेवा मे दस लाख रुपया खर्च किया।[2]

सटवोजी जाधवराव भी कुम्हेर आ गया था। ६ फरवरी को उसने कुम्हेर से अपने पत्र म लिखा—"हमको बलूच प्रान्त में होकर भागना पडा। दो-दिन तक दिन-रात चलते रहे। मार्ग मे ग्रामीणो ने उन पर आक्रमण करके लूट लिया। हमारे घोडे छिन लिये गये। इससे हमको पैदल चलना पडा। हमारे अधिकाश सैनिको को पैदल ही प्राण-रक्षा करनी पडी। उनके शरीर पर न वस्त्र थे और न पैरो मे जूतियां। जाट राज्य मे प्रवेश करके मैं डोली तथा गाडी मागकर द्रुतगति से कुम्हेर पहुँच गया। इस समय सूरजमल भरतपुर म था। मैं उससे मिलने भरतपुर चल दिया। ठाकुर सूरजमल ने आगे बढ़कर भेंट की और हालचाल पूछे। फिर साथ-साथ कुम्हेर लौटे। हम सूरजमल के यहा १५-२० दिन रुके। उसने हमारी अति नम्रता से आवभगत की और हाथ जोडकर सहृदयता से कहा—"मैं आपका सेवक हूँ। यह आपका ही घर है। यह आपका ही राज्य है।" इस प्रकार के बिरले ही मनुष्य होते हैं। उसने अपने विश्वासी सरदारों की कमान में लश्कर तैनात करके उनके साथ हमको १० मार्च को सकुशल ग्वालियर पहुचा दिया।"[3]

नाना फडनीस अपनी आत्म कथा मे लिखता है—'तीन-चार ब्राह्मण और पाच-छः मराठों का एक दल सात दिन लगातार चलकर रेवाडी पहुँचा। यहा पर बाकीदास नामक व्यापारी ने हमारी मदद की ... मेरा विचार अब

---

१ – भाऊ गर्दी, पृ० ३६, इ० डा० (तारीखे इब्राहीम), खण्ड ८, पृ० २८३।
२ – भाऊ बखर, अनु० १४५, पृ० १६१; काशीराज, पृ० ३६-७, बयाने वाकई, पृ० २६३, पानीपत प्रकरण, १६३, हिंगण, जि० १, लेख २०८, खण्ड २, लेख १०४, पे० द०, खण्ड २ लेख १४६, खण्ड २६, लेख १, इमाद पृ० २०४, इ० डा० खण्ड ८, पृ० २८३, कानूनगो, पृ० १४०, वेण्डल, वाक्या राज०, भाग २, पृ० ६६।
३ – राजवाडे, खण्ड ६, लेख ४०६ (६ फरवरी), ४०६ (१० मार्च)।

डीग तथा भरतपुर की ओर जाने का था, परन्तु अपने साथ में मार्ग-दर्शक होना आवश्यक समझा गया। सौभाग्य से इस समय उस ओर एक बरात जा रही थी। मैं भी एक गाड़ी किराये पर लेकर उसके साथ चल दिया""(जिगनी) में मेरी निजी पत्नी (यशोदा बाई) से भेंट हो गई और मेरे आनन्द का पारावार नहीं रहा। उसके लिए एक दूसरी गाड़ी किराये पर ली और फिर हम डीग की ओर चल दिये। यहां पर हमसे पूर्व ही पुरुषोत्तम महादेव हिंगणे पानीपत से आ चुका था और वह बनोली के एक गुमास्ता के मकान मे रुक रहा था। बनोली के महाजन की डीग मे एक कोठी थी। यहां पर मैं अपनी पत्नी के साथ एक माह रुका और अपनी माता का पता लगाने का प्रयास किया। "" बाद मे घोड़े तथा पालकी उपलब्ध करके मैं धौलपुर होकर ग्वालियर पहुँचा, जहा मैंने पार्वती बाई, नाना पुरन्दरे, मल्हार राव आदि से मुलाकात की।" [१]

रानो खां घायल महादजी सिंधिया को लेकर डीग पहुँचा, जहा उसका पर्याप्त उपचार किया गया, परन्तु वह अपने घावो के कारण लगडा हो गया। इस प्रकार ग्वालियर पहुँचने पर मराठा सरदारों ने जाट शासक के सद्व्यवहार तथा सत्कर्तव्य के बारे मे पेशवा को अपने पत्र मे लिखा— "अब हम ग्वालियर मे मल्हार राव के साथ रुक रहे हैं। भरतपुर मे सूरजमल ने हमारी सुरक्षा तथा आराम की ओर पर्याप्त ध्यान दिया और हम वहां पन्द्रह-बीस दिन तक ठहरे। उसने हमारा अति आदर-सत्कार किया। सूरजमल के बारे मे नाना फड़नीस ने एक अन्य पत्र में लिखा— "सूरजमल की इस व्यवहार कुशलता से पेशवा को अत्यधिक सन्तोष हुआ।" [२] राजा सूरजमल को इस महानता, उदारता, सहानुभूति को देखकर ही सैयिद गुलाम अली ने उसको "जाट अफ्लातून (जाट प्लेटो) शब्द [३] से सम्मानित किया था।

२२ – जाटो पर सूबेदार राजे बहादुर नारो शंकर की लूट का आरोप

सम्भवत मुनालाल के आधार पर विलियम फ्रैंकलिन ने राजा सूरजमल पर सूबेदार नारो शंकर की लूट का आरोप लगाया है। उसके अनुसार— "शाहजहानाबाद का मराठा सूबेदार नारो शंकर पानीपत युद्ध के दूसरे दिन (१५

---

१ – काशीराज, परिशिष्ट ब, पृ० ५६-६०।

२ – पुरन्दरे, खण्ड १, लेख ३०७,४१७; पानीपत प्रकरण, पृ० १६३; कानूनगो, पृ० १४२।

३ – इमाद पृ० २०३।

जनवरी) ही अपने सभी सामान तथा खजाने के साथ आगरा की ओर भाग निकला, क्योंकि इस समय उसके प्रशासन में लूटमार तथा उपद्रव हो चुके थे। कहा जाता है कि राजा सूरजमल के आदेश पर उसको मार्ग में ही रोक लिया गया और शाही खजाने को लूट लिया। इसके बाद उसको संकट तथा भय के साथ आगरा जाने के लिए मुक्त कर दिया।"[1] फ्रैंकलिन का यह उपाख्यान असत्य, आधारहीन तथा मिथ्या आक्षेप मात्र है। मराठा लेखों से यह स्पष्ट है कि सूरजमल ने मराठों की हर-सम्भव सहायता की थी और मधुर मित्रता का परिचय दिया था। मराठा अभिलेखों के आधार पर डा० सरकार लिखते हैं— "राजधानी में शाह दुर्रानी के आगमन की अफवाह से गत तीन माह से मौत का सन्नाटा था। भाऊ के विनाश का समाचार मिलते ही राजधानी मे मुसलमानों की भीड़ जमा हो गई और निर्भय होकर लूटमार करने लगे। बेगम जीनत महल ने नारो शकर की सहायता की। इससे वह अपनी सम्पत्ति तथा परिवार के साथ नगर से सुरक्षित निकल गया। केवल किलेदार हवस खां तथा उसके दुर्ग रक्षकों ने बलपूर्वक उससे कुछ छीन लिया। वह दिल्ली से इतनी शीघ्रता से निकला कि अपने साथ इधर उधर बिखरी वस्तुयें एकत्रित करके नही ले जा सका और ये शाही खजाने में जमा करा दी गई।"[2]

मार्ग में मल्हार राव होलकर उससे आकर मिल गया। इस प्रकार पाच सहस्र सैनिको के साथ नारो शकर ने जाट राज्य मे होकर पलायन किया। नारो शकर के साथ चल रहे एक मराठा ने अपने पत्र में स्पष्ट लिखा— "नारो शकर तथा बालाजी पालडी दिल्ली से दो से चार सहस्र सैनिको के साथ पूर्व ही चल दिये थे। मार्ग में उनकी मल्हार राव से भेंट हुई, जिसके साथ मे आठ-दस सहस्र सवार थे। मार्ग में सूरजमल ने हमारी सुरक्षा का अधिक ध्यान रखकर हमारे साथ उदारता का परिचय दिया।"[3] इस प्रकार विलियम फ्रैंकलिन के आरोपों को आधुनिक इतिहासकारों ने नही स्वीकारा है। मराठा लेखों में इस आरोप की पुष्टि के लिए अभी तक कोई मौलिक सामग्री भी नहीं मिल सकी है। इससे आरोप एकाकी तथा तथ्यहीन है।

२३ – दुर्रानी का दिल्ली प्रवेश तथा प्रशासनिक प्रबन्ध, जनवरी–मार्च, १७६१ ई० .

पानीपत सग्राम के कुछ दिन बाद ही विजेता अहमदशाह दुर्रानी ने दिल्ली

१ – फ्रैंकलिन, शाहआलम, पृ० २५।

२ – पे० द०, खण्ड २, लेख १४२, खण्ड २१, लेख २०२, पुरन्दरे दफ्तर, खण्ड १, लेख ४१७; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २५३।

३ – पानीपत प्रकरण, पृ० १६३, कानूनगो, पृ० १४२–३।

की ओर प्रस्थान किया । सम्राट शाहआलम सानी की माता जीनत महल अपने ज्येष्ठ पौत्र वलीअहद मिर्जा जवान बख्त के साथ उसका स्वागत करने के लिए राजधानी से नरेला (उत्तर मे २६ किमी०) तक पहुँची और उसने शाह को एक लाख रुपया तथा उसके वजीर शाह वली खा को पचास हजार रुपया भेंट किया । २६ जनवरी को शाह दुर्रानी ने बडी धूमधाम के साथ राजधानी मे प्रवेश किया और सेना ने नगर मे बुरी तरह लूटमार की । दिसम्बर, १७५६ ई० से प्रवासी सम्राट शाहआलम सानी का वकील मुनीरुद्दौला शाह दुर्रानी के साथ था और वह शाह आलम सानी को मुगल सम्राट घोषित कराने की प्रार्थना कर रहा था । अब शाह ने दिल्ली में शाह आलम सानी को सम्राट घोषित किया और उसकी अनुपस्थिति मे उसके ज्येष्ठ पुत्र मिर्जा जवान बख्त को वली अहद (राज प्रतिनिधि) मानकर प्रशासन के सभी कार्य-कलाप तथा प्रबन्ध सौंप दिये । नजीबुद्दौला को अमीर-उल-उमरा और शाहजादा जवान बख्त का अतालीक (सरक्षक) नियुक्त किया गया । नवाब शुजाउद्दौला तथा इमादुलमुल्क को इस बार भी कोई पद या सम्मान नही मिल सका ।[1]

२४ – दुर्रानी का सूरजमल के साथ शाति–समझौता विफल

सूरजमल ने मराठा सरदार तथा सैनिको की जिस उदारता, सहृदयता से सेवा की थी, उससे शाह दुर्रानी को भारी आघात पहुँचा । उसने इस भारतीय नैतिकता को राजनैतिक स्वर पर अमैत्री सम्बन्ध मान लिया था । परवर्ती में शाह दुर्रानी ने सूरजमल पर प्रदत्त आश्वासनो को तोडने का आरोप लगाया और जाट शासक पर आक्रमण करने का विचार किया । भारत विजेता के क्रोध को शात करने के लिए ही सूरजमल ने समर्पण की शर्तों के साथ भरतपुर से दुर्रानी के शाही दीवान खालसा राजा नागरमल राजा दलेल सिह तथा [illegible] को शाति समझौता वार्ता करने के लिए दिल्ली रवाना किया । इसी बीच में दिल्ली मे शाह के सैनिको ने पिछले दो–तीन वर्ष के शेष वेतन के लिए हल्ला मचा दिया था और विद्रोह शुरू कर दिया था । इससे भारत विजेता की [illegible] बढ़ गई थी और उसने नजीबुद्दौला से मराठा मुक्ति का मूल्य [illegible] । नजीब ने इस भार को अपने कन्धो से उतार कर राजा सूरजमल के कन्धों पर डालने का विफल प्रयास किया और २१ फरवरी को गोधूलि के समय जाट राजा के प्रतिनिधियो को शाह के दरबार मे भेट-वार्ता के लिए [illegible]

---

१ – काशीराज, पृ० ५१, दे० क्रॉनी, मुनीरुद्दौला, पृ० [illegible]; [illegible], पृ० [illegible] सियार, खण्ड ४, पृ० २७ ।

भुगतान की शर्त पर सूरजमल को क्षमा करना स्वीकार किया जा सके।[१] नूरुद्दीन के अनुसार— "नजीब ने शाह से आग्रह किया कि यदि आप मालवा की ओर कूच कर दें तो वहा से प्रचुर खिराज वसूल किया जा सकता है। नजीब के माध्यम से जाट शासक भी पेशकश भुगतान करने और मराठो के विरुद्ध अपनी सैनिक टुकड़ियां भेजने के लिए तैयार हो गया था।[२]

अभी तक आलमगीर सानी का हत्यारा इमादुलमुल्क जाट शासक के संरक्षण में मथुरा मे निवास कर रहा था। सूरजमल ने उसको संरक्षण प्रदान करके उसके परिवार को खासा खर्च मे जागीर प्रदान कर दी थी। इससे राजमाता जीनत महल सूरजमल से घृणा करती थी। वह यह बात भली भाति समझती थी कि जाट शासक बातचीत करके समय निकालने का प्रयास कर रहा है और वह आगे एक कौडी भी नहीं देगा। अतः उसने वजीर शाह वली खा को इस बात पर राजी कर लिया था कि वह जाट वकीलो के साथ शांति समझौता न करके उनको वापिस लौटा देगा। इसी प्रकार नजीब ने भी शाह को सुझाव दिया कि सूरजमल पर आक्रमण करके उसे बलपूर्वक खिराज (कर) भुगतान के लिए विवश किया जावे। यद्यपि शाह स्वयं राजा सूरजमल, इमाद तथा मराठो के साथ मिलकर सरहिन्द तथा पजाब का स्थाई विभाजन करना चाहता था, फिर भी उसने वजीर शाह वली खा के नेतृत्व में अपनी सेनाओ को जाट दुर्गों पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। उसके साथ मे राजमाता जीनत महल, वली अहद जवान बख्त तथा शाहजादा मिर्जा बाबा को आगरा की ओर कूंच करने का निर्देश दिया गया। निश्चित योजना के अनुसार पीछे से नजीब को रुहेलों के साथ भेजने का निश्चय किया गया। इसी समय शाह ने जयपुर के शासक सवाई माधो सिंह के पास फरमान भेजा कि वह स्वय एक करोड रुपया पेशकश लेकर आगरा मे ससैन्य आकर शाह वली खा से मिले। इस प्रकार सूरजमल पर फौजी दबाव डालकर धन प्राप्त करने के लिए वजीर ने ७ मार्च को दिल्ली से आगरा की ओर प्रस्थान किया।[३]

सूरजमल यह भली भाति समझता था कि शाह दुर्रानी भारत में अधिक दिन नही रूकेगा, क्योंकि उसके सैनिको को अपने देश से निकले सोलह महीने हो चुके थे और वे अपने पहाड़ी घरों को शीघ्र ही वापिस लौटने के लिए हठ कर रहे थे। इस

---

१ – दे० क्रॉनी, पृ० १२२; नूरुद्दीन पृ० ५२ ब; पे० द०, खण्ड २१, लेख १०२, २१४; बयाने वाकई, पृ० १८४; पुरन्दरे, जि० १, लेख ४१७।

२ – नुरुद्दीन, पृ० ५२ ब।

३ – दे० क्रॉनो०, पृ० १२२; पे० द०, खण्ड २१, लेख १०२, २०२; मुरसालत, पत्र सं० २७।

बार दुर्रानी सैनिकों को पानीपत तथा दिल्ली में यथेष्ट लूट का माल भी नहीं मिल सका और जाट मुल्क से भी पर्याप्त धन-दौलत मिलने की आशा नहीं थी। साथ ही नवाब शुजाउद्दौला के साथ विश्वासघात हुआ। उसको भारी निराशा हाथ लगी। दिल्ली प्रवासकाल में शाह के सुन्नी तथा नवाब के शिया सैनिकों में एक बार पुन: साम्प्रदायिक झगड़ा हो गया था। फलतः ७ मार्च को शुजा ने भी निराशा से अप्रसन्न होकर दिल्ली से अवध की ओर प्रस्थान कर दिया था।

दिल्ली से आगे बढ़ते ही वजीर शाह वली खां के सैनिकों की आँखों के सामने मार्च, १७५७ की महामारी का हृदय-विदारक दृश्य थिरकने लगा था। वे भारत के मैदानों में ग्रीष्म ऋतु नहीं काटना चाहते थे। इसी से उन्होंने मथुरा की ओर कूँच करने से मना कर दिया।[1] वजीर ने बारापूला छावनी से सूरजमल के पास शांति-समझौता वार्ता की शर्तें निश्चित करने के लिए दिल्ली स्थित मराठा प्रतिनिधि बापूजी महादेव हिंगणे को भरतपुर भेजा। उसकी मध्यस्थता में सूरजमल ने शाह से लुभावने कौल-करार किये।[2] अन्त में अपनी आन्तरिक स्थिति को देखकर शाह ने १३ मार्च को अफगानिस्तान लौटने का निश्चय कर लिया और बाध्य होकर अपने वजीर तथा सैनिकों के लिए दिल्ली बुलाकर २० मार्च को दिल्ली से प्रस्थान कर दिया। २७ मार्च को शाह अम्बाला पहुँच गया।[3] इस प्रकार दीर्घ कूटनीतिज्ञ वार्ता करके सूरजमल ने दुर्रानी के कोप से अपनी रक्षा करके चतुरता का परिचय दिया। मराठा लेखों से पता चलता है कि— "उसने शाह को सन्तुष्ट करने के लिए एक लाख रुपया नकद भुगतान किया और पांच लाख रुपया बाद में देने सम्बन्धी एक वचन-पत्र (अनुबन्ध) लिख दिया था।"[4] किन्तु शेष रकम का फिर कभी भुगतान नहीं किया। इस नवीन अनुबन्ध के कारण जाट शासक ने १७५७ ई० में दिये वचन के पांच लाख रुपया भुगतान को भी मूकभाव से निरस्त कर दिया[5] और जाट राज्य तथा जनता की रक्षा करके पारदर्शिता का परिचय दिया।

---

१ – नूरुद्दीन, पृ० ५३ अ।
२ – पे० द०, खण्ड २१, लेख २०२।
३ – दे० कॉनी, पृ० १२२-३; बेगड़म, पृ० ८३; इमाद, जि० २, पृ० १८६-८; मुरसलात-ए अहमदशाह दुर्रानी, सख्या २५-२७; इ० हि० कां० प्रो० (१६४५), पृ० ३६६; पुरन्दरे जि० १, पृ० ४०२; कानूनगो, पृ० १४३; गण्डासिंह पृ० २६४; माडर्न रिव्यू मई १६४६।
४ – मुरसलात ए-अहमदशाह दुर्रानी, सख्या २५-२७; हिंगणे, जि० १, लेख २१७।
५ – कानूनगो, पृ० १४४।

अध्याय ९

विस्तारवादी नीति तथा नजीबुद्दौला से संघर्ष, १७६१–१७६३ ई०

पानीपत संग्राम के बाद हिन्दुस्तान (मुगल भारत) मे शस्त्रो की होड़ प्रायः समाप्त हो चुकी थी और अग्रतः पाच-छ वर्ष के लिए विशाल युद्ध का प्राय अन्त हो चुका था। बालाजी राव पेशवा की मृत्यु (जून २३, १७६१ ई०) के बाद उसके द्वितीय पुत्र माधव राव पेशवा ने उत्तराधिकार (२० जुलाई को) प्राप्त किया और सत्तरह वर्षीय नवयुवक पेशवा का अभिभावक (मुतालीक) रघुनाथ राव (राघोवा) दादा नियुक्त किया गया। सिंधिया घराने की शक्ति का विनाश हो चुका था और पूना सरकार इस घराने के उत्तराधिकार के बारे में निर्णय नहीं ले पा रही थी। वृद्ध मल्हार राव होल्कर इन वर्षों में राजपूताना में सक्रिय रहा। पेशवा के सामने दक्षिण भारत की जटिल तथा विषम राजनैतिक तथा आर्थिक समस्यायें थीं। इस प्रकार मराठा शक्ति हिन्दुस्तान की सक्रिय राजनीति से दूर हो गई थी। अहमद शाह दुर्रानी अर्द्ध विजय कीर्ति के साथ अफगानिस्तान वापस लौट गया था और उसने पुन. भारत में प्रवेश करने का विचार छोड़ दिया था। वह मराठों के साथ मिलकर स्थाई शांति-समझौता करने के लिए प्रयत्नशील रहा। अब पजाब तथा सरहिन्द मे अनेक सिख मिसलें खड़ी हो गई थीं और कपूरथला राज्य का संस्थापक जस्सा सिंह आहलूवालिया अपने आपको सुलतान-उल्-कौम घोषित करके लाहौर पर अधिकार करने की चेष्टा करता रहा। आला सिंह जाट ने दुर्रानी को पाच लाख रुपया पेशकश का भुगतान किया था। शाह ने उसको पटियाला राज्य का फरमान प्रसारित करके वहां का प्रबन्धक स्वीकार कर लिया था। इस प्रकार सिखों की अनेक मिसलो ने संगठित होकर अफगानिस्तान तथा सरहिन्द के बीच मे एक फौलादी सैनिक दीवार खड़ी कर ली थी।

मुगल सिंहासन नामधारी सम्राट का प्रतीक था।' सत्ताधारी नजीबुद्दौला सिख, बलूच तथा रुहेला भूखण्ड पर स्वाधिकार के लिए प्रयत्नशील था। निर्वासित

सम्राट शाह आलम सानी नवाब शुजाउद्दौला का पेंशन भोगी था और शुजा का विचार उसको अपने संरक्षण में रखकर बुन्देलखण्ड तथा बिहार प्रान्त पर अधिकार करने का था। बंगाल मे नवाब मोर कासिम ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सत्ता को उखाड़ने मे प्रयत्नशील था। राजपूताना में केवल सवाई माधो सिंह सम्पन्न व दिलेर शासक था। जोधपुर नरेश विजय सिंह मे राजनैतिक क्षितिज में चमकने की क्षमता नही थी और जयपुर–जोधपुर घरानो में आपसी वैमनस्यता थी। अफीम की पीनक ने अन्य राजपूत शासकों की वीरता, साहस तथा उद्यम को गति हीन कर दिया था और वे आगे फिर कभी देश की राजनीति मे अग्रगामी नहीं हो सके।

१ – जाट सघ राज्य की विस्तारवादी योजना

दिल्ली के चारो ओर जाट झुङ्ग व पालों का प्राधान्य था और ये जाट किसान श्रमिक वर्ग, जमीदार अति मजबूत तथा हल के धनी और आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न व सबल थे। सूरजमल की कमान में सभी जमीदार व किसान सगठित हो चुके थे और उन्होंने "सुषुप्त मुगल राजनीति" का लाभ उठाकर "जाट सघ राज्य की दिग्विजय योजना" को सफल करके का प्रयास किया। सूरजमल का निम्न विचार था—

(१) पजाब में रावी तट से यमुना नदी (सरहिन्द) पर्यन्त विशाल भूखण्ड में ज्ञाति कबीलो का एक ठोस सघ स्थापित किया जावे ताकि शाह दुर्रानी तथा रुहेला अफगान कबीलों के बीच मे एक फौलादी दीवार खड़ी हो सके और आगे दोनो राजनैतिक इकाईयो का आपस मे मिलन नही हो सके।

(२) मुगल सत्ता से नजीबुद्दौला को हटाकर इमादुलमुल्क को वजीर (प्रधान मन्त्री) पद प्रदान किया जावे। परन्तु इस कार्य सिद्धि के लिए वह राजधानी पर सीधा आक्रमण नही करना चाहता था। वह अपने विशाल सैनिक अभियानो तथा दिग्विजय योजना से राजधानी के अधिकारियो तथा नजीब को भयभीत करके आत्म समर्पण के लिए बाध्य करना चाहता था। सूरजमल ने अपनी स्पष्ट कूटनीति तथा उदारता से "मुस्लिम सघ की भावात्मक एकता" पर भारी चोट की और उसने तुर्क तथा भारतीय अफगानों की शक्ति तथा ऐक्य मे अलगाव पैदा कर दिया था। दिल्ली में नजीबुद्दौला को कुशल तुर्क सैनिक तथा सेनानायकों की लब्ध–प्रतिष्ठित सेवायें नही मिल सकीं

---

१ – कानूनगो, पृ० १४६–७।

और उसको भारतीय राजनीति मे केवल स्वजातीय कौमी सैनिक शक्ति पर निर्भर [1] रहना पड़ा। परन्तु घर मे वे भी आपस में व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा के कारण एक नहीं रह सके।

पंजाब तथा यमुना नदी के पश्चिमी तटवर्ती जाट आबादी के बीच में और दिल्ली के आसपास मेरठ, सहारनपुर आदि पर रुहेला सरदार नजीब का अधिकार था। रोहतक हरियाणा जाट बाहुल्य प्रदेश था, परन्तु वहा शक्ति सम्पन्न बलूची सरदारो की जागीरें व जमींदारियां थीं और वहा के जाट विद्रोही, स्वावलम्बी व सम्पन्न होकर भी सैनिक दृष्टि से बलहीन थे। सूरजमल की नीति इस प्रदेश पर अधिकार करने और मेवात तथा हरियाणा प्रान्त को एक इकाई मे सगठित करके पड़ोसी राज्य (बफर स्टेट) की भांति अपने पुत्र जवाहर सिंह को जागीर में देने की थी। वह प्रधान जाट राज्य को अपने द्वितीय पुत्र नाहर सिंह को प्रदान करना चाहता था। जवाहर सिंह में इस "बफर स्टेट" को सम्भालने की क्षमता थी और इस प्रान्त की सहायता से पजाब व सरहिन्द की कौमी सिख मिसलो से राजनैतिक सम्पर्क हो सकता था।

पजाब से आगे पश्चिम में सिन्ध नदी ने जाटो को दो भागों में विभक्त कर दिया था, फिर भी वे रक्त साम्जस्य, सांस्कृतिक तथा सामाजिक एकता से इस कौमी सघ मे शामिल होने के लिए उत्सुक थे। इस प्रकार सूरजमल ने शाह अफगान तथा रुहेलो के बीच मे पजाब के सिख सरदारों की सहायता से और मेवात, अहीरवाटी तथा हरियाणा मे अपने पुत्र जवाहर सिंह के नेतृत्व मे फौलादी दीवार खड़ी करने का निश्चय कर लिया था। इसी प्रकार उसने मराठों को चम्बल नदी के पार ही रोकने के लिए गोहद के जाट राणा क साथ मिलकर एक शक्ति सम्पन्न सघ बनाने का सफल प्रयास किया। इस समय राजपूत भी सूरजमल की नीति तथा शक्ति की उपेक्षा नहीं कर सकते थे और वे "मराठा निरोधक संघ" के लिए प्रयत्नशील थे। अत सूरजमल ने सवाई माधोसिंह महाराजा विजयसिंह तथा रामसिंह को एक स्थान पर मिलकर समझौता वार्ता द्वारा कोई निश्चित समझौता करने [2] के लिए पत्र लिखे। इसके बाद इन तीनों शासकों ने पुष्कर में मुलाकात की और मराठो को अपने राज्यो से बाहर खदेड़ने के लिए एक समझौता [3] भी

---

१ — माधव जयति, पृ० ३ अ।

२ — हिंगणे, भाग २, लेख ११८।

३ — पे० द०, खण्ड २१, लेख ५०, खण्ड २९, लेख २६, शिन्देशाही, भाग १, लेख ५४, सी० पी० सी०, खण्ड १, लेख २८२।

किया। इस प्रकार अपने राज्य को चारों ओर से सुरक्षित करके उसने शीघ्र ही विस्तारवादी नीति को साकार रूप दिया।

२ – मथुरा शांति सम्मेलन की विफलता, अप्रेल–मई, १७६१ ई०

शाह दुर्रानी को पानीपत संग्राम से आर्थिक, प्रादेशिक या राष्ट्र विजय जैसा कोई विशेष लाभ या इस्लिम विजेता का यश नहीं मिल सका। वास्तव में इस संग्राम ने उसके आर्थिक ढांचे को भकभोर दिया था। अब उसकी अभिलाषा थी कि उसके प्रस्थान के बाद भारत की सभी उदीयमान तथा सबल जन–शक्तियां आपस में एक स्थाई एकता तथा शांति के लिए प्रयास करें। वह केवल यह चाहता था कि सतलज पार इलाके पर उसका स्वामित्व स्वीकार कर लिया जावे और शेष भारत से उसको प्रतिवर्ष चालीस[1] लाख रुपया पेशकश नियमित रूप से मिलता रहे। इस रकम की वसूली के लिए उसको भारत पर सैनिक दबाव भी नहीं डालना पड़े।

अफगान मराठा संघर्ष से बचकर सूरजमल ने अपने चातुर्य्य से अपने आपको सबल कर लिया था और राजनैतिक परिस्थितियों के परिपेक्ष्य में उसने यह दृढ़ आत्मिक निर्णय कर लिया था कि इमाद को अपने संरक्षण में रखकर दिल्ली की राजनीति तथा प्रशासन में स्थाई हस्तक्षेप रखा जावे और सम्राट के नाम पर रुहेला–बंगश द्वारा अधिकृत जाट राज्य के समीपस्थ शाही परगनों को उनसे छीनकर जाट राज्य में शामिल कर लिया जावे। वह स्वयं वजीर की पीठ पर छाया की तरह मंडराता रहे, ताकि उसकी सभी नीतियां तथा योजनायें अनुमोदित होकर स्वीकार कर ली जावे। दिल्ली प्रवासकाल में शाह दुर्रानी को यह भली भांति आभास हो चुका था कि नवाब शुजा तथा नजीब के प्रति दिल्ली के मुगल अमीरों का रुझान नहीं है और वे उनके साथ साम्राज्य की दृढ़ता, राजनैतिक तथा कौमी एकता के लिए सहयोग करने के लिए उत्सुक[2] नहीं हैं। अतः पानीपत से ११ किमी० दूर अपनी छावनी में उसने सूरजमल के प्रस्तावों पर विचार किया। इमाद के वकील राजा दिलेर सिंह ने इमाद को वजारत की खिलअत प्रदान करने के एवज में १८ लाख रुपया नजर करने का आग्रह किया, तब सूरजमल के प्रस्ताव तथा अपने

---

१ – दुर्रानी ने सूरजमल से ७० लाख, शुजा से १० लाख और नजीब खां से ४० लाख, कुल मिलाकर दो करोड़ रुपया खिराज भुगतान की आशा की थी।
— सेलेक्ट कमेटी प्रोसी०, १६६१, जि० ८, पृ० ११७, ११८, १२७।

२ – मजीबुद्दौला, पृ० ६६।

करने या इमाद व नजीब में इन शक्तियों की मध्यस्थता से आपस में समझौता कराने का था। सूरजमल ने इमाद को इन सरदारों से बातचीत करने के लिए मुक्त कर दिया था। अनेकों प्रस्तावों पर आपस में बातचीत की गई। हाफिज़ रहमत खाँ मराठा-अधिकृत शिकोहाबाद व सहीट (जिला एटा) पर अपना दखल रखना चाहता था।

इस व्यक्तिगत स्वार्थ के वशीभूत होकर रुहेला-अफगान सरदारों ने विरोधी होकर भी स्वजातीय भाई नजीब के विरुद्ध इमाद की सहायता न करने का निश्चय दोहराया। उपस्थित रुहेला-अफगानों के वकीलों ने आवेश में आकर कहा, "यदि आप चाहते हैं कि हम अपनी भूमि का अधिकार इसलिए छोड़ दें कि अन्त में जाट राजा को यह भूमि प्रदान कर दी जावे, तो हम उसे कदापि स्वीकार नहीं करेंगे।" इसका परिणाम यह निकला कि यह सम्मेलन पूर्णत विफल रहा और किसी भी पक्ष ने एक भी शर्त को नहीं स्वीकारा।[1] राजा सूरजमल ने जब यह देखा कि नजीब ने दिल्ली पर अपना कब्जा कर लिया है और उसके विरुद्ध अन्य कोई भी राजनैतिक इकाई वजीर इमाद का सहयोग करने के लिए उत्सुक नहीं है, तब उसने मथुरा छावनी में लौटकर इमाद से स्पष्ट शब्दों में कहा— "वह आपकी खातिर अकेला नजीब से नहीं लड़ेगा।"[2] क्योंकि इस कार्य के लिए उसको दिल्ली पर आक्रमण करना पड़ता। इससे एक नवीन सघर्ष छिड़ने की सम्भावना थी और सूरजमल की दिग्विजय योजना सफलीभूत नहीं हो सकती थी। इस प्रकार शक्तिहीन व धनहीन इमाद अपने कूट प्रयत्नों में पूर्णत विफल हो गया और उसने भरतपुर में अपने कुछ वर्ष व्यतीत किये।

३—नजीब का दिल्ली पर अधिकार तथा संघर्ष टालना, मई-जून, १७६१ ई०

वजीर इमादुल्मुल्क जाट शरण में रहकर जाटों की सैनिक शक्ति के बल पर दिल्ली पर अधिकार करने के हवाई किले बना रहा था, किन्तु उसको सूरजमल के प्रयासों के बाद भी हिन्दुस्तान की किसी भी राजनैतिक इकाई का हार्दिक समर्थन

१—राजवाडे, खण्ड ६, लेख ४१४ (१२ मई), ३८२, ३८४, ४२३, ४२५, पे० द०, खण्ड २, लेख १०३, १४५, १४६, खण्ड २१, लेख २०२, खण्ड २७, लेख २७२, खण्ड ४०, लेख १४१, १४२, खण्ड २६, लेख ५, ६,१०, हिंगणे, खण्ड १, लेख २०५, २१३-२१६, २१८, नूरुद्दीन, पृ० ५४ अ-ब।

२—नूरुद्दीन, पृ० ५४ ब-५५ ब, ६८ ब, दे० फ्रांसी, पृ० १२४, पे० द०, खण्ड २, लेख १४४, सरकार, खण्ड २, पृ० २५५, २५८।

नहीं मिल सका। सूरजमल की इस समय साम्राज्य के अन्यतम् दुर्ग–आगरा पर आँखें लग रही थी, इससे उसने नवीनतम संघर्ष मे फसना उचित नहीं समझा। नजीब अधिक चतुर निकला और उसने अपने असीम धैर्य, साहस तथा कूटनयिक जाल मे इमाद को जकड कर यह मौका नही दिया कि वह वजारत की खिलअत धारण करके शीघ्र ही राजधानी तथा दुर्ग पर अधिकार कर ले। उसने मथुरा के दीर्घकालिक शांति सम्मेलन का लाभ उठाकर राजमाता जीनत महल को धमकी देकर अपनी ओर मोड लिया। फलत. वली अहद ने उसको दिल्ली में उपस्थित होने के लिए पत्र लिखा। नजीब के सलाहकारों ने उससे कहा— 'शक्तिशाली राजा सूरजमल इमाद का मित्र है। अफगान सरदार वहा पहुँचकर उससे बातचीत कर रहे हैं। इससे आपको भलीभांति सोच विचार कर ही आगे कदम बढाना चाहिये।" नजीब ने उनसे कहा— "मुझे विश्वास है कि रुहेला सरदार मेरे साथ घातघात नही करेंगे। यद्यपि सूरजमल शक्ति सम्पन्न सरदार है। वह पारदर्शी होकर स्वभावतः धैर्यवान है। जब मैं दिल्ली पहुँचकर वहा सत्ता हथिया लू गा, तब वह मुझे निरस्त करने की भूल नही करेगा।""यह विशुद्ध तथा असाधारण सौभाग्य है कि अभी तक इमाद दिल्ली की ओर नही बढ सका है।" [१]

६ मई को नजीब सोनपत से ईद की नमाज मे शामिल होने के लिए दिल्ली आया। जब वह लूनी पहुँचा, उस समय वली अहद स्वय उसको अपने ही ओहदे पर बिठलाकर ईदगाह ले गया। फिर उसको मीर बख्शी (प्रधान सेनापति), दिल्ली गिर्द का फौजदार तथा शाही प्रशासन का पूर्ण अधिकार प्राप्त मुख्त्यार पद प्रदान कर दिया गया। नजीब ने नगर की सुरक्षा व्यवस्था के लिए छ सहस्र रुहेला सैनिक, शाही दुर्ग मे अपनी सेना तैनात की और समस्त शहर में अपने विश्वसनीय कर-सग्राहक, अनाज की मडी (मडी–गल्ला) पर नियन्त्रण रखने के लिए अपने अफसर (दरोगा–ए–गज) नियुक्त किये। [२] इस समाचार को सुनकर सूरजमल स्वभावत शात हो गया। दिल्ली आने पर जब नजीब को समाचार मिला कि सूरजमल आगरा दुर्ग पर अधिकार करने का विचार कर रहा है, तब उसने वली अहद के साथ आगरा दुर्ग पर अधिकार करने पर विचार किया।

९ मई को नजीब के आमन्त्रण पर मुसावी खां, बहादुर खां बलूच क्रमश. दो–दो सहस्र सेना के साथ अपने सह धर्मी पडोसी की सेवा मे दिल्ली पहुँच गये। नजीब स्वय दिल्ली दुर्ग से पटपरगज में आ गया और उसने यहा अपनी सेना

---

१ – नूरुद्दीन, पृ० ५३ अ, ५४ ब, नजीबुद्दौला, पृ० ६७।

२ – दे० ऑनी०, पृ० १२३, दे० द०, खण्ड २, लेख १४४ (१५ जून); राजवाडे, खण्ड ६, लेख ४१४ (१२ मई); नूरुद्दीन, पृ० ५५ ब– ५६ अ।

व्यवस्थित की, किन्तु वह आगरा की ओर कूंच करने के लिए प्रयासों के बाद भी पर्याप्त सैनिक एकत्रित करने मे विफल रहा और अन्त मे उसको अपर्याप्त सैनिक साधनो को देखकर राजा सूरजमल की शक्ति पर प्रहार करने का विचार त्यागना पड़ा। डा० सरकार के अनुसार— "नजीव ने इस समय जाटों की महान शक्ति से संघर्ष छेड़ने मे बुद्धिमानी नही समझी, क्योकि उसने दिल्ली के उत्तर तथा पश्चिम के प्रदेशो, उपरि दोआब तथा रुहेलखण्ड की ओर अपनी जागीरो मे महत्वाकांक्षा सीमित कर दी थी। वह मध्य दोआब मे मराठो के अधिकृत परगनों को भी लेना चाहता था।" [१] आगरा पतन (१२ जून) के समाचारो से नजीव काफी हताश हो गया था। तब शाह वली उल्लाह ने उसको हतप्रभ न होकर जाटो से पूर्व निश्चयानुसार युद्ध की सलाह दी और निश्चित विजय का ढाढ़स बढ़ाया। [२] फलतः उसने १४ जून की शाम को दिल्ली से विदाई ली और वह सोनपत की ओर चला गया। [३]

४ – राजा सूरजमल का आगरा दुर्ग पर अधिकार, जून १२, १७६१ ई०

मथुरा सम्मेलन मे व्यस्त रह कर भी सूरजमल ने मुगल साम्राज्य के महत्वपूर्ण सम्पन्न नगर तथा दुर्ग पर शीघ्र ही अपना अधिकार करने का विचार कर लिया था। वजीरो के दीर्घकालिक सत्ता संघर्ष मराठा, जाट तथा दुर्रानी की लूटमार (गर्दी), नरसंहार से मुगल राजधानी का ऐश्वर्य, शान शौकत तथा व्यापार पूर्णतः ठप्प हो चुका था। वहा के अधिकांश व्यापारी, सेठ–साहूकार, सर्राफ, सम्पन्न परिवार तथा नागरिकों ने आगरा नगर मे आकर अपने सम्मान की रक्षा की थी। दिल्ली की आबादी उजड़ चुकी थी। इस प्रकार आगरा हिन्दुस्तान मे सर्वाधिक अर्थ सम्पन्न जन–बाहुल्य तथा सर्वोत्तम व्यापारिक व औद्योगिक केन्द्र था। यद्यपि आलमगीर के गृह संघर्ष और उसके उत्तराधिकारियो के दिवालियापन के कारण अकबर महान् का संचित अपार भंडार तथा कारखाने काफी नष्ट हो चुके थे और काफी दूरी तक फैले नगर का बाहरी भाग खण्डहर [४] हो चुका था, फिर भी आगरा दुर्ग मे भूमिगत गुप्त खजाना, अमूल्य शाही वस्त्र, बर्तन, राजसी आभूषण तथा प्राचीन विशाल तथा

---

१ – नूरुद्दीन, ५५ ब–५६ अ, ६८ ब; दे० क्रॉनो०, पृ० १२४; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २५५, २५८।

२ – सियासी मकतूबात, पत्र संख्या ८, पृ० ६५–६।

३ – दे० क्रॉनो०, पृ० १२४।

४ – राने मेंडक, पृ० ६६।

छोटी तोपें, गोला–बारूद का भडार शेष था। [1] अभी तक इस शाही दुर्ग पर अधिकार करने का किसी भी अन्य शक्ति ने प्रयास नही किया था। चहार गुलजार–इ–शुजाई के लेखक हरिचरन के अनुसार इस दुर्ग का शाही किलेदार फाजिल खाँ था। विगत दो वर्षों से किलेदार तथा उसके सैनिको को नियमित वेतन नही मिल रहा था और वे शाही भण्डारो के मूल्यवान बर्तन तथा आभूषणो को बेचकर अपने दिन काट रहे थे। इससे भूखों मरते शाही सैनिको पर विजय प्राप्त करना अधिक कठिन नही था।

४ मई को राजा सूरजमल ने उत्तरी किनारे से यमुना नदी पार करने के बहाने से अपने दो सहस्र सवार तथा तीन सहस्र पैदल सेना आगरा की ओर रवाना कर दी थी। इस सेना ने आगरा के किलेदार से नदी पार करने के लिए नावो की माग की। माग को न मानने पर जाट सैनिको ने आगरा शहर पर बिना किसी प्रतिरोध या रक्तपात के अपना अधिकार कर लिया। नगर मे अपनी चौकी व थाने स्थापित करके दुर्ग मार्ग तथा दुर्ग द्वार पर किला खाली करने की मांग करके जमाव किया। जब जाट सैनिक दुर्ग मे घुसने का प्रयास करने लगे, तब द्वार रक्षक सैनिकों को तलवारो से उनका सामना करना पडा। इस सघर्ष में दोनो ओर के दो सो आदमी काम आये या खेत रहे। इसी समय किलेदार ने दुर्ग द्वार बन्द करके सघर्ष की तैयारी की। आगरा अभियान का संचालन राजा बहादुर सिह (वैर) के हाथो में था। जाट सैनिको के पास अकबर के विशाल व दृढ दुर्ग को तोडने के लिए भारी तोपखाना, लम्बी मार करने वाली दुर्ग विध्वसक तोपो का अभाव था। इससे उन्होंने जामा–मस्जिद पर मोर्चा कायम किया। दोनों ओर से तोप युद्ध छिड गया। हरिचरन के अनुसार—' किलेदार फाजिल खां ने शाही तोपें दागकर जाटों का प्रथम आक्रमण विफल कर दिया था। फिर भी जाट सैनिकों ने दुर्ग को चारो ओर से घेरकर कडाई के साथ घेरा डाल दिया था। दुर्ग मे किलेदार के पास चार सौ सैनिक मात्र थे और पर्याप्त युद्ध–साज सामान की कमी थी। फिर भी नवयुवक किलेदार ने सम्राट के बिना आदेश के दुर्ग को न सौंपने का निश्चय कर लिया था। उसने सैनिको को आश्वस्त करने के लिए ईद के दिन अली गौहर (शाह आलम सानी) के नाम का खुत्बा पढा।" [2]

जाटों ने दुर्ग प्राचीर की छाया में स्थित सैनिको के बाहरी मकानों की लूट

---

१ – इर्विन (कार्नो), पृ० २९१।

२ – पे० द०, खण्ड २, लेख १४४ (१५ जून); हिंगणे दफ्तर, खण्ड १, लेख २०८ (४ मई), २१५।

कर तबाह कर दिया। दुर्ग रक्षकों की पत्नी तथा बच्चों को पकड़कर उन पर आत्म-समर्पण के लिए दबाव डाला गया। किलेदार नवयुवक था और वह डरपोक तथा अधीनस्थ सरदारों की दया का पात्र था। सूरजमल के सेनानायकों ने युद्ध तथा बर्बादी की अपेक्षा किलेदार के सहायकों को धन का लालच देकर तोड़ लिया। फादर वेण्डल के अनुसार— "जाट सैनिक बीस दिन तक घेरा डालने के लिए मैदान में खाईयां खोदकर पड़े रहे। जाटों ने शहर में भी लूटमार की, परन्तु दुर्ग रक्षकों को विशेष हानि नहीं पहुँचा सके।" जाटों ने २२ मई को इस दुर्ग का मुस्तैदी के साथ घेरा डाला था। किलेदार को नजीब से किसी भी प्रकार की मदद नहीं मिल सकी। अंत में १२ जून को उसने तथा उसके सहायकों ने एक लाख रुपया नकद और पांच गांव की जागीर प्रदान करने के आश्वासन पर दुर्ग का समर्पण कर दिया। आदेश मिलते ही पहरेदारों ने जाटों के प्रवेश के लिए दुर्ग के फाटक खोल दिये। सैनिकों ने दुर्ग में प्रवेश करके लूटमार की। आगरा नगर व दुर्ग की लूट से जाटों को पचास लाख रुपया शताब्दियों से सचित मुगल साम्राज्य के सर्वश्रेष्ठ शस्त्रागार, गोला-बारूद के भण्डार, लम्बी व छोटी तोपें, शाही वस्त्र तथा आभूषण हाथ लगे, जिनको जाट सैनिकों ने भरतपुर तथा डीग के दुर्गों में भेज दिया। राजा सूरजमल ने आगरा की किलेदारी का प्रबन्ध बख्शी मोहनराम के परिवार को सौंपा और नगर व्यवस्था के लिए फौजदार की नियुक्ति की। कहा जाता है कि बाद में सूरजमल ने विपुल धनराशि का गलत हिसाब प्रस्तुत करने का आरोप लगाकर शाही किलेदार फाजिल खां को बन्दी बनाकर डीग के कारागार में डाल दिया।[1] इस प्रकार मुगल सम्राट तथा सूबेदारों ने जिस दुर्ग में रहकर एक शताब्दी तक काठेड तथा ब्रज के जमींदारों, श्रमिकों के स्वाधीनता आन्दोलन पर विपुल प्रहार किये थे, उसी दुर्ग पर जाटों का ध्वज फहराने लगा था। बाद में सूरजमल ने इस उपेक्षित दुर्ग की मरम्मत[2] कराकर इसे सुदृढ़ कर लिया था।

---

१ – पे० द०, खण्ड २६, लेख १०, दे० क्रॉनी०, पृ० १२४, वेण्डल, पृ० ८६; वाक्या राज, जि० २, पृ० ७४, ६६, कानूनगो, पृ० १४३, ३४७, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २५८, २६८–६६।

— हरिचरन (पृ० ४५४ बं) के अनुसार "सूरजमल की मृत्यु के बाद जवाहर सिंह ने आगरा दुर्ग का घेरा डाला। उसने मूसा बेग किलेदार को गिरफ्तार कर लिया और शाही किलेदार फाजिल खां को तीन सौ रुपया मासिक पेन्शन कर दी।" जवाहर सिंह ने मुसावी खां को फर्रुखनगर अभियान में बन्दी बनाया था। आगरा दुर्ग अभियान सूरजमल से सम्बन्धित है।

२ – राने मेडक, पृ० ६६।

राजा बहादुर सिंह (वैर) ने आगरा दुर्ग से सम्राट जहांगीर के लिए निर्मित संगमरमर का बहुमूल्य हिंडोला (झूला) "विजय चिह्न" के रूप मे प्राप्त करके वैर के सफेद महल बाग मे लगवाया। यह झूला अति आकर्षक है, जिस पर कुशल कारीगरों ने अति उत्तम नक्काशी, पच्चीकारी तथा बेलबूटा बनाये हैं और इसमे अमूल्य रत्न जड़े थे। अब इनके स्थानों पर रंग भर दिये गये हैं। बाद मे इस झूला को डीग लेजा कर गोपाल भवन के सामने लगा दिया गया था।[1] जहां अभी तक यह उद्यान भवनों की शोभा बढ़ा रहा है। इसी समय काला तथा हल्के सफेद व गुलाबी रंग के संगमरमर (संगमूसा) के दो तख्ता प्राप्त किये गये। ये भी अभी तक "गोपाल भवन" में सुरक्षित हैं।

५ – सूरजमल का दिग्विजय अभियान– भदावर व दोआब प्रान्तो पर अधिकार

सूरजमल ने नजीबुद्दौला की "चारित्रिक कमजोरी, मानसिक अशांति, सैनिक निर्बलता"[2] का लाभ उठाकर क्लान्त सरदारों की अव्यवस्थित फौजी ताकत को चुनौती दी और उसने काठेड़, ब्रज, दोआब तथा हरियाणा की जनता मे एक नवीन उत्साह आत्म-विश्वास तथा साहसिक नव-चेतना का संचार किया। आगरा पतन का समाचार सुनकर नजीब दिल्ली से सोनपत की ओर चला गया था, जहां उसने भुआना, भिवानी के कस्बों मे निर्दयी लूट तथा नर संहार किया। फिर यह नजीबाबाद पहुंच गया। अब जाटो ने उत्साहित होकर पूर्व में उपरि व मध्य दोआब मे रुहेला तथा मराठा अधिकृत परगनों, उत्तर-पश्चिम मे अहीरवाटी, गुड़गावा, रोहतक, हरियाणा में आबाद बलूची दुर्गों पर पूर्ण विजय की योजना क्रियान्वित की। उसने दोआब के विद्रोही राजपूतों की शक्ति को कुचलने के लिए अपने पुत्र नाहर सिंह की कमान मे जाट राज्य के सेनापति बलराम नाहरवार, रिसाला सरदार मोहनराम राजा बहादुर सिंह (वैर) तथा अन्यान्य जमींदारों को जाट रिसालों के साथ रवाना किया और इन रिसालों ने तीन धाराओं मे विभक्त होकर दोआब तथा आगरा के दक्षिणी भूभाग म प्रवेश किया। अब तक सूरजमल ने चम्बल तथा यमुना नदी के मध्य भाग मे आबाद राजपूत, गूजर तथा ठाकुरो पर *अधिक दबाव नहीं डाला था। इधर बुन्देलखण्ड के मराठा सरदारों का भी दबाव* रहता था। अब जाट सेना की एक टुकड़ी ने आगरा के पश्चिम में आबाद, फरह, विरावली, फतहपुर-सीकरी और इसके दक्षिण में खेरागढ़, कोलारी, तातपुर,

---

१ – वेबनिश, गार्डन पैलेसेस् ऑफ डीग, ब्रूकमैन, गजे० ऑफ ईस्टर्न राजपूताना।
२ – सियार, खण्ड ४, पृ० २८।

बसैडी बाडी तथा धौलपुर परगनों पर अधिकार कर लिया। इधर जाट शासक ने चम्बल नदी को अपने राज्य की दक्षिणी सीमा निर्धारित किया। इसके पार ग्वालियर पर मराठा सरदारो का अधिकार था।

इसी प्रकार एक अन्य टुकडी ने आगरा के दक्षिण–पूर्व में फिरोजाबाद के दक्षिण मे यमुना तथा उटगन नदी के मध्य भाग मे प्रवेश करके बटेश्वर तथा मध्यवर्ती भाग पर अधिकार कर लिया, जबकि धौलपुर पहुँची जाट टुकडी ने धौलपुर के पूर्व मे उटगन तथा चम्बल नदी के मध्य मे आबाद राजाखेडा पर अधिकार कर लिया। राजाखेडा तथा पिनाहट कस्बो तथा आसपास के इलाको मे सिकडवाड (सिकरवार) राजपूतो की आबादी थी और यह सिकरवाड[1] कहलाता था। सिकडवाड़ राजपूत तथा गूजरो ने अब समर्पण कर दिया। इससे जाटो का गोहद (पिनाहट के दक्षिण मे ५३ किमी०) के जाट राणाओ से सीधा सम्पर्क हो गया था। इधर जाटो के परामर्श पर जमीदारो तथा शासको ने मराठो को चौथ तथा पेशकश देना बन्द कर दिया। इस प्रकार गोहद ने "सह राज्य" का दर्जा[2] प्राप्त कर लिया। इसी समय सूरजमल ने बैरागढ, बाडी, धौलपुर, सिरमथुरा, राजाखेडा, पिनाहट का शाही व मराठा प्रदेश अपने पुत्र नाहर सिह के लिए "खासा जागीर" मे प्रदान किया और क्षेत्रीय सुरक्षा व्यवस्था का भार भी उसको सौंपा गया।

सिकडवाड के पूर्व में भदावर प्रदेश था, जहा भदौरिया राजपूतो का शासन था। प्राय इन पर मराठो का प्रभाव रहा और समय समय पर भदौरिया शासक उनको चौथ देते थे। जाटों ने पिनाहट तथा इटावा के मध्य भाग मे आबाद मराठा थाना बाह तथा अन्य समीपस्थ इलाको पर अधिकार करके अटेर के राजा बख्तसिंह[3] और भिण्ड के राजा हिम्मतसिह भदौरिया को जाट अधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य कर दिया। भदावर प्रान्त के पूर्व मे इटावा और उत्तर में शिकोहाबाद मराठा कमाविसदारो के अधिकार मे थे। पानीपत अभियान काल में कालपी के कमाविसदार गोविन्द पन्त बुन्देला (बल्लाल) का दिसम्बर १७, १७६० ई० को देहान्त हो चुका था और उसके पुत्र बालाजी गोविन्द तथा गंगाधर गोविन्द मराठा विनाश के बाद निचले दोआब प्रान्त की व्यवस्था सम्भालने मे अशक्त थे। प्रारम्भ मे जाट सेनाओं ने मराठा थानों की ओर ध्यान नहीं दिया, किन्तु हाफिज रहमत खा और दुण्डी खा ने रुहेला सैनिकों के साथ मराठो के इन परगनों व थानों पर आक्रमण कर दिया

---

१ – ग्वालियर के पूर्वोत्तर कोने मे और धौलपुर के पूर्व में सिकरवार राजपूतों की अनेक गढ़ियां थीं और ये मराठों के करद जमींदार थे।

२ – पे० द०, जि० २७, लेख २७२, २७३।

३ – बनेड़ा अभिलेख, पृ० ६६।

था। हाफिज रहमत खा ने फर्रुखाबाद के पश्चिम में ४० किमी० भोगाव और इसके पश्चिम में मैनपुरी, इटावा (मैनपुरी के दक्षिण मे ५१ किमी०) तथा अन्य पड़ोसी परगनों पर, डुण्डो खा रुहेला ने शिकोहाबाद (इटावा के उत्तर-पश्चिम में ५२ किमी०) और अहमद खा बगश ने सिकन्दरा से अकबरपुर पर्यन्त मराठा थानो पर अधिकार कर लिया था।[1] बालाजी गोविन्द खेर अन्तर्वेद से भागकर जालौन चला गया। जाट सेनायें रुहेला-अफगानों के इस अधिकार को स्वीकार नहीं कर सकती थीं। अतः जाटो ने मराठा अधिकृत जाट बाहुल्य क्षेत्रों में प्रवेश किया और शिकोहाबाद, इटावा,[2] फर्रूखद, मैनपुरी, भोगाव पर अधिकार करके रुहेलो को काली नदी के पार ढकेल दिया।

जाटो की दूसरी टुकडी ने मथुरा, नौंहझील, खैर मार्ग से रामगढ की ओर कूंच किया। १७६० ई० मे शाह दुर्रानी ने जाट प्रशासित जिला रामगढ, बुलन्दशहर तथा इनके कई एक परगनों पर अपना दखल जमा लिया था और इनकी व्यवस्था रुहेलो के लिए स्वभावतः सौंप दी थी। अपने अस्तित्व के लिए पुहुप सिंह ने इस क्षेत्र मे दुर्रानी की काफी मदद की थी। पानीपत संग्राम के बाद दोआब मे मराठा अधिकृत परगनो में वहां के जमींदार, जागीरदार तथा रैय्यत ने विद्रोह कर दिया था और उन्होने मराठा थाने, चौकी तथा कमाविसदारो को मारकर भगा दिया था। जाट सेनाओं ने इस विद्रोही सघर्ष का लाभ उठाया और दुर्ग अलीगढ, जिला बुलन्द शहर से रुहेलो को निकालकर आगे कदम बढ़ाया। उन्होंने इस ओर अलीगढ के दक्षिण पूर्व व जनेसर के उत्तर-पूर्व में काली (कालिन्दी) नदी पार करके सिकन्दरा राऊ, कासगज तथा गगा नदी के पश्चिमी तट पर सोरो पर्यन्त, अन्य जाट टुकडी ने अलीगढ़ के उत्तर पूर्व मे २६ किमी० परगना अतरोली पर अधिकार करके गगा नदी के पश्चिमी तट को जाट राज्य की सीमा निर्धारित किया।

तीसरी टुकडी ने बुलन्दशहर पर अधिकार करने के बाद उसके पूर्व में अनूपशहर की ओर कूच किया और वहा से रुहेला-प्रबन्धकों को गगापारी इलाकों मे ढकेल दिया। फिर बुलन्दशहर के उत्तर-पूर्व म गगा के किनारे-किनारे चलकर सियाना, गढ़ मुक्तेश्वर तथा हापुड़ परगनों पर पूर्ण नियन्त्रण कर लिया। इस प्रकार उपरि दोआब मे दिल्ली दरवाजे से दक्षिण में चम्बल तट और पूर्व में गढ़ मुक्तेश्वर से सोरों घाट और इसके नीचे एटा मे काली नदी के पश्चिमी तट, यमुना नदी के पश्चिमी भूभाग मे दिल्ली मे ३२ किमी० दूर सराय ख्वाजा बसन्त (अक्तूबर, १७६१ ई०) से दक्षिण मे चम्बल नदी पर्यन्त जाट राज्य की पताकायें फहराने

---

१ – आशोब, जि० २, पृ० ५६; खैरुद्दीन, पृ० १०१।
२ – इम्पी० गजे०, जि० १२, पृ० ३६।

लगीं ।[1]

मेवात, अहीर वाटी तथा बलूच वस्तियों पर आक्रमण

दिल्ली के उत्तर तथा पश्चिमोत्तर में आबाद आधुनिक करनाल, रोहतक तथा जिला गुडगावा में सम्राट मुहम्मदशाह के शासनकाल में बलूची अफगान सैनिकों की अनेक वस्तिया आबाद थीं। इस काल में कामगार खा बलूच ने सगोत्री परिवारों को सगठित करके कौमी सरदारी प्राप्त कर ली थी। वह जातीय गुणों से सम्पन्न, योग्य, साहसी और बलूची सैनिको व उनके परिवार का भाग्य निर्माता सरदार था। उसके नेतृत्व (१७४८-६०) में बलूची सैनिको ने अपनी वीरता का परिचय देकर शाही जमादारो में विशिष्ट स्थान प्राप्त कर लिया था। सम्राट मुहम्मदशाह ने अपने शासन के अन्तिम वर्षो में कामगार खा को फर्रुखनगर[2] का शाही फौजदार नियुक्त किया। परगना फर्रुखनगर तथा आसपास का भूखण्ड जीवन-पर्यन्त उसकी जागीर में रहा। कामगार खां की कमान में चार पाच सहस्र बलूची सवार व पैदल सैनिक रहते थे, जिनकी कमान उसके भाई और उसकी मृत्यु के बाद उसके पुत्र हसन अली खा, असदुल्ला खा, औलिया खा बलूच, बहादुर खा बलूच आदि के हाथो मे रही।[3] शाहजादा अलीगोहर (शाह आलम सानी) के दीवान शाकिर अली के शब्दों मे—"सम्राट महमद शाह के शासन काल मे दिल्ली के समीपवर्ती शाही परगनो, खालसा भूमि तथा शाही जेब-खर्च की जागीरो पर भाग्य निर्माता उत्साही सैनिक तथा उनके सरदारो ने अधिकार कर लिया था और सम्पूर्ण प्रान्त छोटे छोटे कौमी सरदारों का राज्य बन गया था।"[4]

रेवाडी के राव बहादुर सूजरमल की हत्या (१७५० ई) के बाद उसके पुत्र भवानी सिंह मे प्रशासनिक योग्यता का अभाव था। वह चतुर तथा उत्साही सैनिक नही था। रेवाडी की विशाल जागीर पर घासेडा (परगना सोहना) के राव बहादुरसिंह बडगूजर और कामगार खां बलूच ने अधिकार कर लिया था और १७५३ ई० के अन्त मे सवाई माधोसिंह ने नारनौल तथा आसपास के परगनों पर

---

१ – कानूनगो, पृ० १४६, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ३००।
— उत्तरप्रदेश में जाटो के विस्तार के अध्ययन के लिए द्रष्टव्य—डा० देशराज कृत "जाट इतिहास"।

२ – गुडगावा के उत्तर-पश्चिम में २२ किमी०, आधुनिक जिला गुडगांवा की एक तहसील, फर्रुखनगर की स्थापना १७३२ ई० में हुई थी।

३ – सियार, खण्ड ४, पृ० २६, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २५, २६०।

४ – शाकिर, तज्किरा, पृ० ३४।

अपना कब्जा कर लिया था। [1] सैय्यद गुलाम हुसैन खां के अनुसार कामगार खां ने पानीपत तथा समीपवर्ती अन्य परगनो में वहा के विद्रोही किसानो को कुचलने मे अनेक बार सफलता प्राप्त की थी और अपनी सैनिक प्रतिभा से वह शाही मन्त्रियो के सम्पर्क मे आ गया था। उसने दिल्ली गिर्द के परगनो की फौजदारी उपार्जित करके आधुनिक हिसार, रोहतक, गुडगावा, जीद व पटियाला के कुछ भू भाग का अपहरण करके बहुत सा शाही प्रदेश दबा लिया था। इन बलूची सरदारों का सामना करने की आसपास के किसी भी सरदार म क्षमता नही थी। कामगार खा ने अधिकृत शाही परगनो की सुरक्षा-व्यवस्था का भी प्रब ध किया और अपने भतीजे हसनअली खा को झज्झर, असदुल्ला खां को रेवाडी क पूर्व मे २६ किमी० तोरू, औलिया खां को सहारनपुर जिले के निजामगढ दादरी का प्रबन्ध सौंप दिया था।

बहादर खां बलूच ने दिल्ली के पश्चिम मे ३२ किमी० बहादुरगढ नामक गढी का निर्माण कराया। कामगार खा की जमीदारी के अधिकांश ग्राम कच्ची गढियों मे पूर्णत सुरक्षित थे। [2] इन बलूची बस्तियो के दक्षिण म गूजर तथा अहीरो की गढिया आबाद थी और यह क्षेत्र अहीरवाडा कहलाता था। १७५५ ई० के प्रारम्भ मे वजीर इमादुलमुल्क न कामगार खा बलूच को सोनपत, हिसार, पानीपत तथा नारनौल की फौजदारी से पृथक कर दिया था। [3] किन्तु ३ मई को कामगार खा न अपने दो सहस्र बलूची सैनिको के साथ पानीपत मे इमादुल्मुल्क का साथ देकर स्वामि भक्ति का परिचय दिया और वजीर अब भाग के बलची सैनिको की शक्ति पर आश्रित हो गया था। [4] उसी की अनुकम्पा से मराठो ने उनके विरुद्ध फौजी कार्यवाही नही की।

तारीखे आलमगीर सानी से पता चलता है कि रेवाडी (अहीरवाटी) और उसक उत्तर मे बलूच बस्तिया शाहजादा अलीगौहर तथा अन्य शाहजादो के जेब-खर्च की जागीर थी। किन्तु इमाद का निश्चित मत था कि यदि अलीगौहर अपनी जागीरो से भू-राजस्व का सकलन करने मे सफल हो गया, तो वह शक्तिशाली हो जाएगा। इससे उसने अलीगौहर की विफलता क लिए बलूची जमीदारो को भू राजस्व भुगतान

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० २८, ४७ अ ५३ ब, ६१ अ ब।
सूदन पृ० १०६-१५२।
२ – सियार खण्ड ४, पृ० २६, रोहतक जिला गजेटियर, १८८३ ई०, पृ० १८-१६।
३ – ता० आलमगीर सानी, पृ० ४२ ब ४३ ब-४५ अ।
४ – ता० आलमगीर, पृ० ४८ ब-५१ अ, दे० क्रॉनो०, शाकिर, पृ० ७६, सियार, खण्ड ३, पृ० ३४२, ता० मुजफ्फरी, पृ० १०६-११०।

न करने का परामर्श दिया था।[1] सितम्बर, १७५७ई० म रघुनाथराव ने कामगार खां तथा उसके पुत्र मुसावी खां से जिला रोहतक के अनाधिकृत हिस्से की चौथ मांगी, किन्तु उसने कलियाना के सजावी सीताराम की विधवा सतभामा के माध्यम से कुछ रकम जमा करके अनाधिकृत गावो का पट्टा अपने नाम करवा लिया। अहमद शाह दुर्रानी के आक्रमणों मे बलूचियों ने अपने सहधर्मी नजीवखा का साथ दिया। कामगार खा की मृत्यु (१७६० ई०) के बाद उसके पुत्र मुसावी खा ने उत्तराधिकार प्राप्त किया किन्तु वह अति साहसी, चतुर तथा कुशल प्रबन्धक नही था। उसके चचेरे भाई-भतीजो ने उसका विरोध किया।[2] इससे उसने शीघ्र ही मीरबख्शी नजीबुद्दौला का सरक्षण प्राप्त कर लिया।

सूरजमल ने मेवात मे सरकार तिजारा के अनेक परगनों पर अपना कब्जा कर लिया था और तिजारा के दक्षिण-पश्चिम मे १८ किमी० किशनगढ जाटों का प्रमुख तथा महत्वपूर्ण दुर्ग था। इस जिले में फीरोजपुर झिरका, तिजारा, कोटकासिम (तिजारा के उत्तर मे १८ किमी० (बावल) कोटकासिम क उत्तर-पश्चिम मे १३ किमी० (मुण्डावर) किशनगढ के पूर्व में १३ किमी० (बहरोड) मुण्डावर के पूर्व मे २७ किमी० (नीमराना) मुण्डावर के उत्तर-पश्चिम मे २२ किमी०) आदि मेवाती परगना शामिल थे। मेवात के उत्तर मे अहीरवाटी के गुर्जर पटल, अहीर तथा राजपूत जाटो के अनुपालक थे। जाटो ने दिल्ली के समीप सराय बसन्त तथा सम्भल मे अपनी सीमान्त चौकिया स्थापित कर ली थीं। इस प्रकार दिल्ली से २० किमी० दूर तक जाटों का अमल व दखल हो चुका था। मराठा लेखों से स्पष्ट है कि जुलाई १७५७ ई० मे रेवाडी के आसपास तक जाटो का नियन्त्रण था। केवल कुछ गाव कामगार खा और कलियाना की विधवा सतभामा के कारिन्दा सीताराम क अधिकार में थे।[3] बलूची सरदारों के क्रमिक विस्तार तथा मौजो पर अधिकार करने की नीति के कारण रेवाडी के राव भवानी सिंह के पास केवल तेईस गावों की जागीर शेष रह गई थी।[4]

बलूची सरदारों की गद्दियों मे जाट राज्य में डाका डालने वाले मेवाती दस्यु शरण ले रहे थे, उनको पकडकर राज्य में शांति व्यवस्था कायम करना आवश्यक

---

१ – ता०आ०सा०, पृ० १०८–११६ व १२५–१२६, १४३ अ–१४५ ब, दे०ऑनो०; इमाद, पृ० ३०।

२ – सियार, खण्ड ४, पृ० ३०, सरकार (मुगल), खण्ड २ पृ० १०३।

३ – पे० द०, खण्ड ३७ लेख १६३, १६७।

४ – आभीर कुल दीपिका, पृ० १२३, रा० हि० रि० ज०, खण्ड २, स० १, पृ० २३-४।

था। सूरजमल की नीति को क्रियान्वित करने के लिए जवाहर सिंह ने मेवात के मेहर, चौधरी, गूजर व अहीर जमीदारो का पूर्ण सहयोग प्राप्त कर लिया था और जन सहयोग से कुंवर जवाहर सिंह की कमान में जाट सैनिको ने अहीरवाटी मे प्रवेश करके रेवाडी (कोटकासिम के उत्तर-पश्चिम में २० किमी०) पर अधिकार कर लिया। रेवाडी के उत्तर में झज्झर का बलूची दुर्ग था। कामगार खा का भतीजा हसन अली खा झज्झर परगना का जमीदार था। जवाहर सिंह ने रेवाडी शिविर से उत्तर की ओर प्रस्थान किया और अनेक कच्ची गढ़ियों पर कब्जा करते हुए झज्झर पर आक्रमण कर दिया। साधारण संघर्ष के बाद जाटों ने इस गढ़ी पर अपना अधिकार कर लिया। फिर उन्होंने झज्झर के पश्चिम मे चरखी, दादरी पर भी अपना कब्जा कर लिया। जवाहर सिंह ने झज्झर विजय की स्मृति में यहां पर एक महादेव जी का मन्दिर [1] बनवाया। इसी समय एक अन्य सैनिक टुकडी ने रेवाडी से उत्तर-पूर्व की ओर कूच किया और अनेक गढ़ियो पर कब्जा करके पटौडी (रेवाडी के उत्तर-पूर्व में ११ किमी०) पर अधिकार कर लिया। यहा पर जवाहर सिंह ने शीघ्र ही एक नवीन गढ़ी का निर्माण [2] कराया। इसी समय एक अन्य जाट सेना ने पलवल की ओर से और दूसरी ने घासेडा से कूच किया और सर्वप्रथम सोहना [3] पर अधिकार करके दिल्ली के दक्षिण-पश्चिम में २४ किमी० तथा गढ़ी हरसारू के उत्तर-पूर्व में १० किमी० गुडगांवा पर आक्रमण किया और उस पर अधिकार करने में सफलता प्राप्त की।

गढ़ी हरसारु पर आक्रमण

फर्रुखनगर के दक्षिण मे १३ किमी० हरसारु की एक पक्की गढ़ी थी, जहां से मेवाती दस्यु मेवात में लूटमार तथा डाकेजनी करते थे। इन डाकूओ को मुसावी खा का संरक्षण प्राप्त था। जब जवाहर को इन दस्युओ की लूटमार का समाचार मिलता था, तब वह उनके खोजों का पता लगाकर पकड लेता था और निर्दयता से उनको अग्नि में झोंककर मार डालता था। जवाहर की इस निर्दयता का शिकार होने पर भी मेवाती दस्युओं ने डाकेजनी का व्यापार बन्द नहीं किया और वे भागकर बलूच गढ़ियो मे शरण लेते थे। [4] गढ़ी हरसारु इन लुटेरों का प्रमुख शरण-स्थल था। अत जवाहर सिंह ने गढ़ी हरसारु का घेरा डाल दिया। उसके फाटकों को

---

१ – वाकया राज०, जि० २, पृ० ६७।

२ – उपरोक्त।

३ – घासेडा के पूर्व में १३ किमी०, पलवल के उत्तर-पश्चिम मे २० किमी०, तोरु के उत्तर-पूर्व मे ११ किमी०, गुडगांवा के दक्षिण में २४ किमी०।

४ – नूरुद्दीन, पृ० ६१ अ, पे० द० खण्ड २, लेख १४४।

तोडने के लिए उसने अपने हाथियों को भेजा, किन्तु फाटकों मे लगी नुकीली कीलों के कारण हाथियो को सफलता नही मिल सकी। कहा जाता है कि जाट सरदार सीताराम कोटवन अपने कुल्हाडी दल के साथ फाटकों की ओर दौडा और इस दल ने फाटक को तोड डाला। इस प्रकार सितम्बर, १७६१ ई० के अन्त तक उत्तर-पश्चिम मे चरखी, दादरी, झज्झर, गढ़ी हरसारु से लेकर दक्षिण मे काठेड (लक्ष्मणगढ़) तथा नरुखण्ड के सीमान्त तक जाट राज्य की पताकायें फहराने लगीं और अब जाट राज्य की वार्षिक जमा एक करोड से अधिक [1] थी।

६ – शांति–समझौता का प्रयास, अक्तूबर, १७६१ ई०

जाट सैनिको ने बिना किसी अड़चन व रुकावट के दिग्विजय अभियान में सफलता प्राप्त कर ली थी। इससे मीर बख्शी नजीबुद्दौला के हौसले पस्त हो गये और वह मानसिक रूप से अति खिन्न व परेशान दिखलाई देने लगा था। उसने शाह वली उल्लाह से इस बारे मे परामर्श किया। उसने अपने पत्र मे नजीब को जाटो के विरुद्ध युद्ध के लिए प्रोत्साहित करते लिखा— "यह सत्यत अनुभूति है कि इस फकीर ने अन्तर्दृष्टि से जाटो की पराजय का भान लिया है, जिस प्रकार मराठों का पतन देख चुका है। उसने स्वप्न मे यह भी देखा है कि मुसलमानों ने जाट अधिकृत सीमा तथा उनके किलो पर अधिकार कर लिया है। इससे मेरी धारणा है कि रुहेला जाट किलो पर अधिकार कर लेंगे। वास्तव मे यह अल्ला के दरबार में पहिले स ही तय हो चुका है। इसमे इस फकीर को लेश मात्र भी सन्देह नही है।" उसने अपने पत्र मे नजीब से यह जानने का प्रयास किया कि वह किस दिन व किस समय जाटो के विरुद्ध अभियान छेडेगा ताकि वह उसकी विजय की मंगल-कामना कर सके। साथ ही उसने नजीब को चेतावनी भी दी कि— "संघर्ष के दौरान उतराव चढाव अभियान के सहगामी होते हैं। उसकी अन्तिम विजय निश्चित है। उसको हिन्दू अनुचरों की बात नहीं सुननी चाहिये, क्योंकि जाटों के पतन मे उनकी अभिरुचि नहीं होगी और अभियान काल मे वे संकट पैदा करेंगे।" [2] नजीब ने सूफी दार्शनिक के इस युद्ध प्रस्ताव तथा साम्प्रदायिक पृथकत्व की भावना को नहीं स्वीकारा और अपने अनुजीवी-बलूचियों की सूरजमल के कोप से रक्षा करने के लिए शांति-समझौता का विफल प्रयास किया।

१० सितम्बर को वह अपनी जागीर नजीबाबाद से दिल्ली वापिस लौटा

---

१ – वेण्डल, पृ० ८५-६, वाकया राज०, जि० २, पृ० ६६, कानूनगो, पृ० १४८; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ३००, ३०२।

२ – सियासी मकतूबात।

और १२ सितम्बर को उसने राजधानी मे वली अहद से भेंट की। इसी दिन शाम को उसने राजा नागरमल को खिलअत प्रदान की।[१] फिर राजा नागरमल, याकूब अली खां, अब्दुल अहद खां आदि ने एक स्थान पर बैठकर जाटों की इस विस्तारवादी नीति और नवीन शाही परगनों पर उनके अधिकार के औचित्य पर विचार किया और दो बार नजीब से मिलकर बातचीत की। अन्त में काफी विचार विमर्ष के बाद यह निर्णय लिया गया कि राजा नागरमल को सूरजमल से शांति-समझौता वार्ता करने के लिए भेजा जावे, ताकि सूरजमल नजीब दोनों आपस मे मिलकर कोई निश्चित समाधान निकाल सकें। इसके बाद नजीब स्वयं बलूची सरदारों की सहायतार्थ गोहाना (परगना हरियाणा) चला गया।

नजीब ने दिल्ली से अपने वकील राजा दिलेर सिंह को जाट विदेश मंत्री रूपराम कटारा व राजा मोहनसिंह से बातचीत करने के लिए रवाना किया और ७ अक्तूबर को सभी मिलकर सूरजमल के पास दनकौर दुर्ग मे पहुँचे, जहां पांच दिन तक आपस मे बातचीत चलती रहीं। काफी विचार-विमर्ष के बाद यह स्वीकार किया गया कि अभी हाल मे जाट शासक ने पटोदी, झज्झर, गढी हरसारु आदि जिन बलूची परगनों पर दखल कर लिया है, वे यथावत उसी के प्रशासन मे शामिल मान लिये जावेंगे। इनके एवज में सूरजमल सम्राट को प्रतिवर्ष खिराज देता रहेगा। इस भुगतान के लिए राजा नागरमल जामिन रहेगा। इसके बाद १५ अक्तूबर को राजा दिलेर सिंह दिल्ली वापिस लौटा और दूसरे दिन (१६ अक्तूबर) उसने नजीबुद्दौला से बातचीत की। शांति-समझौता की शर्त स्वीकार होने पर सूरज-नजीब की आपसी मित्रता तथा मुलाकात कराने का निश्चय किया गया। इसके बाद राजा खेतराम तथा दिलेर सिंह सूरज-नजीब की आपसी मुलाकात का प्रबन्ध कराने के लिए कुम्हेर की ओर रवाना हो गये। उनके साथ मे कुरान की वह प्रति भी थी, जिसको हाथ मे लेकर नजीब ने सूरजमल के प्रति मित्रता की शपथ ग्रहण की थी। यहां पर चार दिन तक पुनः विचार-विमर्ष चलता रहा।

इसी बीच में १६ अक्तूबर को अहमद शाह दुर्रानी, का एक दूत काबुल से दिल्ली आया। शाह दुर्रानी ने अपने पत्र मे नजीब से मांग की थी कि जिन भारतीय शासकों ने रकम देने का आश्वासन दिया था, उसको पूरा किया जावे और यह भी बतलाया जावे कि सम्राट शाह आलम सानी के प्रति किन किन शासकों ने निष्ठा व भक्ति प्रदर्शित की है? दुर्रानी राजदूत ने यह भी बतलाया कि शाह दुर्रानी स्वयं ससैन्य हिन्दुस्तान की ओर कूच करने वाला है। फलतः २४ अक्तूबर को राजा नागरमल स्वयं शाह दुर्रानी को कर भुगतान की व्यवस्था के लिए सूरजमल

२ – दे० कानो०, पृ० १२४।

के पास कुम्हेर पहुँचा और उसने जाट-शासक से अनुरोध किया कि वह शांति समझौता-वार्ता को पूरा करने के लिए दिल्ली के समीप नजीब खां से व्यक्तिगत मुलाकात करे। इसके बाद नजीबुद्दौला सूरजमल के पुत्र को अपने साथ लेकर निर्वासित सम्राट शाह आलम सानी को दिल्ली लिवाकर लाने के लिए प्रस्थान करेगा। इस कार्य मे अन्य सभी शासक भी सहयोग प्रदान करेंगे।

२७ अक्तूबर को दीपोत्सव का महान् सांस्कृतिक पर्व था और राजा सूरजमल दीपोत्सव मनाने के लिए कुम्हेर से गोवर्धन जा रहा था। नजीब के दूत तथा वकील उसके साथ बातचीत करने के लिए, गोवर्धन भी गये और उन्होंने अन्त मे मिलकर दिल्ली के समीप दनकौर मे सूरज-नजीब दोनों सरदारों की भेंट वार्ता कराने की व्यवस्था की। इस समय सवाई माधो सिंह सम्राट शाह आलम सानी से पत्र व्यवहार कर रहा था और वह मराठो के विरुद्ध अभियान छेड़ने के लिए सभी शक्तियो की अनुकम्पा वरण करना चाहता था। सम्राट ने उसकी अर्जियों का उत्साहवर्धक उत्तर दिया था, किन्तु वह उनसे सन्तुष्ट नहीं हो सका था। इससे उसने मालवा मे मराठों के विरुद्ध नजीब से सहयोग प्राप्त करने का विचार किया और उसके पास अपनी अर्जी भेजी। नवम्बर २, १७६१ ई० को नजीब ने 'दोनों के आपसी मित्र व शत्रु एक दूसरे के मित्र व शत्रु मानकर कार्यवाही करने का वचन' देकर समझौता कर लिया था। इधर चार दिन के बाद राजा सूरजमल दनकौर पहुँचा। दनकौर घाट के समीप नदी के उभय-पाटों पर दोनों ओर के सैनिक आकर खड़े हो गये। नजीबुद्दौला ने अपने सैनिकों को नदी तट पर ही छोड़ दिया और वह स्वयं कुछ सेवकों सहित नौका मे सवार होकर सूरजमल से मिलने आया। सूरजमल ने अति शुद्ध हृदय से मुलाकात करके विचार विमर्श किया। व्यक्तिगत वार्ता के बाद सद्भावी वातावरण अवश्य बन गया था किन्तु प्रवासी सम्राट को दिल्ली लाने की कोई निश्चित योजना स्वीकार नही हो सकी।[1]

७ – दुर्रानी का पंजाब सरहिन्द अभियान तथा विफलता, १७६२ ई०

१७६१ ई० के अन्त मे उत्तर भारत, मालवा तथा बुन्देलखण्ड मे नियुक्त सभी प्रधान मराठा प्रबन्धक दक्षिण चले गये थे। इस समय सम्राट शाह आलम सानी तथा नवाब शुजाउद्दौला बुन्देलखण्ड मे मराठों के विरुद्ध संघर्ष रत थे। शुजा ने कालपी (दिसम्बर ११, १७६१ ई०), ग्वालियर, मोठ तथा झांसी (१ फरवरी) के

१ – पे० द०, जि० २१, लेख ८६, ६०, ६६, खण्ड २६, लेख २३-२४; नूरुद्दीन, पृ० ५६ ब; दे० क्रॉनो०, पृ० १२५; वेण्डल, पृ० ८३-८८; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २६१, ३००-१; इण्डियन हिस्ट्री रेकार्ड्स कमीशन, खण्ड २६, पृ० ८१; कपड़ द्वारा, सं० ७७८।

दुर्गों पर अपना अधिकार कर लिया था। यहां से उसने हिन्दूपत बुन्देला के विरुद्ध प्रस्थान किया। तब १४ फरवरी को सम्राट ने नवाब शुजाउद्दौला को वजीर पद की खिलअत प्रदान करके उसको अपना वजीर बनाया। इस प्रकार शुजा स्वयं बुन्देलखण्ड में उलझ रहा था।[१]

फरवरी, १७६२ ई० के प्रारम्भ में अहमद शाह दुर्रानी छठवीं बार जब हिन्दुस्तान की ओर बढ़ रहा था, तब राजा सूरजमल स्वयं आगरा दुर्ग में पहुँचा और उसने सभी शाही चिह्नों को हटवाकर समस्त दुर्ग को दूध व यमुना जल से धुलवाया। शास्त्रोक्त विधि से भव्य हवन व यज्ञ करके उसे पवित्र किया और जहां कभी मुगल सम्राट बैठ कर दरबार किया करता था, वहां उसने भव्य दरबार का आयोजन किया। किले में बादशाह के बैठने का संगमरमर का सिंहासन था। उस पर अन्य कोई नहीं बैठ सकता था। जवाहर सिंह ने धमाके के साथ उसके दो टुकड़े कर दिये, ताकि फिर कभी कोई उस पर आसीन नहीं हो सके। सूरजमल ने इस समय दुर्रानी से संघर्ष की सम्भावना से अपने अन्य दुर्गों के साथ ही आगरा दुर्ग व शहर का पक्का बन्दोबस्त किया और जवाहर सिंह को ससैन्य मथुरा की व्यवस्था के लिए रवाना कर दिया था।[२]

इस वर्ष शाह दुर्रानी ने हिन्दुस्तान में प्रवेश करके दिल्ली की ओर बढ़ने का विचार त्याग दिया था और सम्पूर्ण वर्ष वह पंजाब तथा सरहिन्द में सिख मिसलों से ही उलझता रहा। इससे इस वर्ष हिन्दुस्तान के प्रायः सभी प्रमुख नवाब, सरदार व हिन्दू शासक शान्त रहे। सूरजमल ने भी दिग्विजय अभियान स्थगित रखा और वह अन्यो की भांति पर्दे के पीछे समझौता राजनीति में व्यस्त रहा। शाह का मात्र यह इरादा था कि पंजाब के सभी मामलों का और दिल्ली सरकार के प्रश्न का कोई स्थाई हल निकल सके। साथ ही हिन्दुस्तान में स्थाई शांति के लिए पेशवा के साथ भी समझौता करने का इच्छुक था। इस कार्य हेतु उसने फरवरी, १७६२ ई० के प्रारम्भ में दिल्ली से नजीब तथा मराठा प्रतिनिधियों को सरहिन्द में आमन्त्रित किया। इसी समय उसने सम्राट शाह आलम सानी, शुजाउद्दौला, सूरजमल, माधोसिंह आदि के नाम भी शांति वार्ता में भाग लेने के लिए पत्र लिखे। फरवरी में नजीब स्वयं अविलम्ब ही सरहिन्द पहुँच गया और बातचीत करने के बाद १५ अप्रैल

---

१ – पे० द०, खण्ड २७, लेख २७२, खण्ड २९, लेख १३, २२, २३, २४, ४५ ५२; हिंगणे, खण्ड २, लेख ४६; राजवाडे, जि० ६, लेख ४६५; गुलाम अली, जि० २, पृ० ११२–४; मुनालाल, पृ० २८–३३; इमाद, पृ० ८६।

२ – हिंगणे, खण्ड २, लेख ४६ (१३ फरवरी); राजवाडे, खण्ड ६, लेख ४६५; होल्कर शाही, भाग १, लेख १४६।

खा, डुण्डी खा तथा अन्य गगापारी रुहेला अपनी टुकडियो सहित सम्राट को दिल्ली लाने के लिए सिकन्दरा छावनी के समीप पहुँच गये थे। तभी सूरजमल ने भी इमादुल्मुल्क के साथ कृपाराम पिरोहित के नेतृत्व मे २००० सवार सिकन्दरा रवाना कर दिये थे। शुजाउद्दौला वास्तव मे मार्ग चलते अहमद खा बंगश पर आक्रमण करना चाहता था। उसकी सेना ने बग्श प्रदेश में लूटमार भी शुरू कर दी थी। शुजा के शिया सिपाहियो और नजीब के सुन्नी अफगानो मे साम्प्रदायिक झगडा हो गया था। जिसमें अफगानो का एक पीरजादा भी मारा गया था। इससे अहमद खां बगश युद्ध के लिए तैयार हो गया और इमाद के सुझाव पर जाट सैनिक उसकी सहायता के लिए खडे हो गये। तब नजीव की मध्यस्थता से शुजा को बगश के साथ समझौता करना पडा, किन्तु इस विरोधात्मक स्थिति मे सम्राट दिल्ली नहीं लौट सका। अफगानो व रुहलो ने उसका साथ देने से मना कर दिया। यहा पर नजीब को काफी तेज बुखार आ गया था। इससे १६ मई को उसने सम्राट से विदाई ली और वह नजीबाबाद लौट गया,[1] जहा वह आगामी सात माह तक रुका रहा। इमाद तथा कृपाराम भी अन्य रुहेलो के साथ अपने वतन की ओर चल दिये।

८ – नरूका कछवाहों का विस्तार तथा जाट शासन मे शरण लेना

१३ वी शताब्दी मे कछवाहा (कुशवाहा) राजपूतो ने वर्तमान अलवर जिले के दक्षिणी तथा पश्चिमी भूखण्ड मे प्रवेश किया था और यहा पर ये सन्ततियां राजावत, शेखावत तथा नरुका तीन खांपो मे विभक्त होकर फैल गई थी। वर्तमान तहसील थानागाजी मे राजावत, तहसील बानसूर मे शेखावत खाप का बाहुल्य था, जबकि अलवर के दक्षिण–पूर्व में ३२ किमी० लक्ष्मण गढ तथा राजगढ के पूर्वी भाग मे नरुको के गाव व जागीरें थी और उनके बाहुल्य के कारण ही यह भूखण्ड 'नरुखण्ड' कहलाता था।[2] आमेर के राजा उदयकरण कछवाहा (१३६६–८८ ई०) के प्रपौत्र राव नरूजी (१५ वी शताब्दी) के (१) लाला (२) दासा (३) तेजा (४) छीतर और (५) जेता नामक पाच पुत्र थे। नरुजी के नाम पर उनकी सन्ततिया नरुका और क्रमश लाला व दासा के वशज लालावत तथा दासावत नरुका कहलाने लगे। लालावत नरुको ने नरुखण्ड की जागीर तथा दासावतो ने उनियारा, लावा, जावली (जिला अलवर), बरोली, पृथ्वीपुरा, दूलहपुरा गढी आदि तथा जेता के वशजो ने गोविन्दगढ मे पीपलखेडा, छीतर के वशजो ने नेताल, बेकडी

---

१ – नूरुद्दीन, पृ० ५८ अ०, दे० फ्रॉंनी, पृ० १२८; इमाद, जि० २, पृ० ८७–९१; मुनालाल, पृ० ५४–६०; गुलाम अली, जि० २, पृ० १४५–१६७।

२ – वीर विनोद, पृ० १३७३।

प्रादि गावों की जागीर प्राप्त कर ली थी। इस प्रकार इस क्षेत्र के प्रत्येक गाव मे नरुका कछवाहो ने अधिकाश जमीदारिया प्राप्त कर ली थी। राव लाला नरुका की चौथी पीढ़ी [1] मे ठाकुर कल्याण सिंह ने जन्म लिया था। यह अति वीर, साहसी तथा प्रतापी नरुका सरदार था। १६५० ई० में मिर्जा राजा जयसिंह ने उसको अपने पुत्र कीरत सिंह के साथ कामा, खोहरी तथा मेवात (मावास या मवासात) [2] के भीषण क्रान्तिकारी आदोलन (विद्रोह) को दबाने के लिए तैनात किया था। राव कल्याण सिंह ने नरुका, राजावत तथा अन्य राजपूतो की फौज के साथ अराजक मेवाती, सिनसिनवार जाट, गूजरों की गढ़ियों पर भयकर आक्रमण किये और उनको भारी श्रम, कठिन परिश्रम से दबाने मे सफलता प्राप्त कर ली थी। सम्राट शाहजहा के आदेश पर मिर्जा राजा जयसिंह ने इन परगनो में नरुका तथा अन्य राजपूत परिवारों को लाकर बसा दिया था।[3]

सितम्बर २५, १६५१ ई० को मिर्जा राजा जयसिंह ने कल्याण सिंह नरुका को चौरासी घोडो की 'सवार सेवा' के लिए माचेडी, [4] राजगढ़ तथा आधा राजपुर नामक ढाई गाव की जागीर प्रदान कर दी थी। इस प्रकार कल्याण सिंह ने जागीर प्राप्त करके यहां लालावत नरुका खाप परिवारो को लाकर बसाया। [5] इसके वशजो ने कामां, खोहरी, खोहरा, पाड़ा, पलवा, पाई, माचेडी तथा बीजवाड़ (बीजगढ) आदि गावों मे भौमिया पटेलाई (जमींदारी) प्राप्त कर ली थी। राव कल्याण सिंह

---

१ – वशावली के लिए द्रष्टव्य, पाउलेट, वीर विनोद, प्रताप रासो पृ० ४–५।

२ – प्रताप रासो मे मेवात के लिए 'मावास' शब्द का प्रयोग मिलता है (पृ० ५) जियाउद्दीन बरनी कृत 'तारीखे फीरोजशाही' में भी मेवात के लिए 'मवास या मवासात' शब्द का प्रयोग मिलता है। क्षेत्रीय भाषा मे बीहड जगल तथा पहाडी स्थान को 'मवास या मावास कहते हैं।

३ – द्रष्टव्य लेखक कृत 'जाटों का नवीन इतिहास'।

४ – अलवर के दक्षिण मे ३५ किमी० और राजगढ़ के पूर्व मे ५ किमी० पहाड़ियों के बीच मे आबाद एक कस्बा। पहाडों पर एक मध्यकालीन महल और उसके नीचे कुआ, बावडी आदि अभी तक मौजूद हैं। इसी माचेडी को मत्स्यपुरी माना जाता है। ६ वीं–१० वीं शताब्दी में यहा गुर्जर–प्रतिहारों का शासन था और अकबर के शासन काल तक यह बस आबाद रहा (आर्के० सर्वे, खड ६ पृ० ७७–८४)।

५ – पाऊलेट, पृ० १४, प्रतापरासो, पृ० ६, वीर विनोद, पृ० १३७५–७६, १३६५।

— डा० नागोरी (पृ २०) का कथन है कि 'रामसिंह ने दिसम्बर २५, १६७१ ई० को जागीर प्रदान की थी।' वास्तव मे इस समय इन जागीरों का पुन पट्टा किया गया था।

खां, डुण्डी खां तथा अन्य गंगापारी रुहेला अपनी टुकडियों सहित सम्राट को दिल्ली लाने के लिए सिकन्दरा छावनी के समीप पहुंच गये थे। तभी सूरजमल ने भी इमादुलमुल्क के साथ कृपाराम पिरोहित के नेतृत्व मे २००० सवार सिकन्दरा रवाना कर दिये थे। शुजाउद्दौला वास्तव मे मार्ग चलते अहमद खा बंगश पर आक्रमण करना चाहता था। उसकी सेना ने बंगश प्रदेश में लूटमार भी शुरू कर दी थी। शुजा के शिया सिपाहियों और नजीब के सुन्नी अफगानो मे साम्प्रदायिक झगडा हो गया था। जिसमें अफगानो का एक पीरजादा भी मारा गया था। इससे अहमद खां बंगश युद्ध के लिए तैयार हो गया और इमाद के सुझाव पर जाट सैनिक उसकी सहायता के लिए खडे हो गये। तब नजीब की मध्यस्थता से शुजा को बंगश के साथ समझौता करना पडा, किन्तु इस विरोधात्मक स्थिति मे सम्राट दिल्ली नही लौट सका। अफगानो व रुहेलो ने उसका साथ देने से मना कर दिया। यहा पर नजीब को काफी तेज बुखार आ गया था। इससे १६ मई को उसने सम्राट से बिदाई ली और वह नजीबाबाद लौट गया,[1] जहा वह आगामी सात माह तक रुका रहा। इमाद तथा कृपाराम भी अन्य रुहेलों के साथ अपने वतन की ओर चल दिये।

८ — नरूका कछवाहों का विस्तार तथा जाट शासन में शरण लेना

१३ वी शताब्दी मे कछवाहा (कुशवाहा) राजपूतो ने वर्तमान अलवर जिले के दक्षिणी तथा पश्चिमी भूखण्ड मे प्रवेश किया था और यहा पर ये सन्ततिया राजावत, शेखावत तथा नरूका तीन खांपो मे विभक्त होकर फैल गई थी। वर्तमान तहसील थानागाजी मे राजावत, तहसील बानसूर में शेखावत खाप का बाहुल्य था, जबकि अलवर के दक्षिण-पूर्व में ३२ किमी० लक्ष्मण गढ तथा राजगढ़ के पूर्वी भाग मे नरूको के गाव व जागीरें थी और उनके बाहुल्य के कारण ही यह भूखण्ड 'नरुखण्ड' कहलाता था।[2] आमेर के राजा उदयकरण कछवाहा (१३६६-८८ ई०) के प्रपौत्र राव नरूजी (१५ वीं शताब्दी) के (१) लाला (२) दासा (३) तेजा (४) छीतर और (५) जेता नामक पांच पुत्र थे। नरुजी के नाम पर उनकी सन्ततियां नरूका और क्रमश लाला व दासा के वंशज लालावत तथा दासावत नरूका कहलाने लगे। लालावत नरूको ने नरुखण्ड की जागीर तथा दासावतो ने उनियारा, लावा, जावलो (जिला अलवर), बरोली, पृथ्वीपुरा, दूल्हपुरा गढी आदि तथा जेता के वंशजो ने गोविन्दगढ़ मे पीपलखेड़ा, छीतर के वशजो ने नेताल, वेकड़ी

---

१ — नूरुद्दीन, पृ० ५८ अ०; दे० कॉनो, पृ० १२८; इमाद, जि० २, पृ० ८७-६१; मुन्नालाल, पृ० ५४-६०; गुलाम अली, जि० २, पृ० १४५-१६७।

२ — वीर विनोद, पृ० १३७३।

आदि गावो की जागीर प्राप्त कर ली थी। इस प्रकार इस क्षेत्र के प्रत्येक गाव मे नरुका कछवाहो ने अधिकाश जमीदारिया प्राप्त कर ली थी। राव लाला नरुका की चौथी पीढी [1] मे ठाकुर कल्याण सिंह ने जन्म लिया था। यह अति वीर, साहसी तथा प्रतापी नरुका सरदार था। १६५० ई० में मिर्जा राजा जयसिंह ने उसको अपने पुत्र कीरत सिंह के साथ कामा, खोहरी तथा मेवात (मावास या मवासात) [2] के भीषण क्रान्तिकारी आदोलन (विद्रोह) को दबाने के लिए तैनात किया था। राव कल्याण सिंह ने नरुका, राजावत तथा अन्य राजपूतो की फौज के साथ अराजक मेवाती, सिनसिनवार जाट, गूजरों की गढियो पर भयकर आक्रमण किये और उनको भारी श्रम, कठिन परिश्रम से दबाने मे सफलता प्राप्त कर ली थी। सम्राट शाहजहा के आदेश पर मिर्जा राजा जयसिंह ने इन परगनो मे नरुका तथा अन्य राजपूत परिवारों को लाकर बसा दिया था।[3]

सितम्बर २५, १६५१ ई० को मिर्जा राजा जयसिंह ने कल्याण सिंह नरुका को चौरासी घोडो की 'सवार सेवा' के लिए माचेडी, [4] राजगढ तथा आधा राजपुर नामक ढाई गाव की जागीर प्रदान कर दी थी। इस प्रकार कल्याण सिंह ने जागीर प्राप्त करके यहा लालावत नरुका खाप परिवारो को लाकर बसाया। [5] इसके वशजो ने कामा, खोहरी, खोहरा, पाडा, पलवा, पाई, माचेडी तथा बीजवाड (बीजगढ) आदि गावो मे भौमिया पटेलाई (जमींदारी) प्राप्त कर ली थी। राव कल्याण सिंह

---

१ – वंशावली के लिए द्रष्टव्य, पाउलेट, वीर विनोद, प्रताप रासो पृ० ४–५।

२ – प्रताप रासो में मेवात के लिए 'मावास' शब्द का प्रयोग मिलता है (पृ० ५) जियाउद्दीन बरनी कृत 'तारीखे फीरोजशाही' मे भी मेवात के लिए 'मवास या मवासात' शब्द का प्रयोग मिलता है। क्षेत्रीय भाषा मे बीहड़ जगल तथा पहाडी स्थान को 'मवासा या मावास' कहते हैं।

३ – द्रष्टव्य लेखक कृत 'जाटों का नवीन इतिहास'।

४ – अलवर के दक्षिण मे ३५ किमी० और राजगढ़ के पूर्व मे ५ किमी० पहाड़ियों के बीच मे आबाद एक कस्बा। पहाडों पर एक मध्यकालीन महल और उसके नीचे कुआ, बावडी आदि अभी तक मौजूद हैं। इसी माचेडी को मत्स्यपुरी माना जाता है। ६ वीं–१० वीं शताब्दी में यहां गुर्जर–प्रतिहारों का शासन था और अकबर के शासन काल तक यह वश आबाद रहा (आर्क० सर्वे. रिप ६, पृ० ७७–८४)।

५ – पाउलेट, पृ० १४, प्रतापरासो, पृ० ६, वीर विनोद, पृ० १३७५–७६, १३६१।
— डा० नागोरी (पृ २०) का कथन है कि 'रामसिंह ने दिसम्बर २५, १६७१ ई० को जागीर प्रदान की थी।' वास्तव मे इस समय इन जागीरों का पुन. पट्टा किया गया था।

की चौथी पीढ़ी मे राव मोहब्बत सिंह ने जन्म लिया। इसने १७३५ ई० में माचेडी जागीर का उत्तराधिकार प्राप्त कर लिया और यह "माचेडी वाला नरुका सरदार" कहलाता था। इसके अनुज जालिम सिंह ने बीजवाड की जागीर प्राप्त कर ली थी। राव मोहब्बत सिंह धर्मानुरागी, तपस्वी, महाप्रतापी वीर योद्धा सरदार था।[1] प्रायः सवाई माधोसिंह की सेवा मे जयपुर रहता था। १७५७ ई० मे इसने बरवाडा (चौथ का बरवाडा) युद्ध[2] मे शेखावतो के साथ मिलकर रघुनाथ राव तथा उसके मराठा सैनिको का डटकर मुकाबिला किया था। जयपुर राज्य मे इस समय नाथावत, राजावत, शेखावत तथा नरुका—ये चार खाप अधिक साहसी, वीर योद्धा थी और सवाई माधोसिंह के दरबार मे प्राय इनका राजनैतिक प्रभाव व प्रभुत्व था। राव मोहब्बत सिंह ने मराठो का कडा प्रतिरोध करते हुए बरवाडा युद्ध मे वीरगति (मई, १७५७ ई०) प्राप्त की।

राव मोहब्बत सिंह का वीर, साहसी, प्रतापी व नीतिज्ञ पुत्र प्रताप सिंह था, जिसने अपने साहस, चतुरता, निपुणता तथा भुजबल से दिसम्बर २५, १७७५ ई० को अलवर के स्वतन्त्र राज्य की स्थापना की थी। प्रताप सिंह का जन्म जून १, १७४० ई० को हुआ था। माचेडी तथा राजगढ़ बीहड जगल तथा उपत्काओ की भूमि हैं। यहां के जगलो मे शिकार खेलकर उसने निर्भीकता व वीरता प्राप्त कर ली थी। ६ मई, १७५७ ई० को सवाई माधो सिंह ने पिता की मातमी का सिरोपाव भेजा। सत्तरह वर्षीय नवयुवक प्रतापसिंह ने ढाई गाव की चाकरी जागीर तथा सवाई माधोसिंह के दरबार में "राव" की उपाधि प्राप्त करके सरदारी प्राप्त कर ली थी और वह प्राय: जयपुर दरबार मे रहकर सैनिक सेवा करता था।[3]

सवाई माधो सिंह तथा राव प्रताप सिंह मे कटुता

जयपुर राज्य मे राव प्रताप सिंह की कमान में नरुका खाप अति शक्तिशाली थी। अन्य कछवाहा खाप तथा राजस्थान के अन्य राजपूत सरदार अफीम की पीनक मे पडे रहते थे और उनकी यह पीनक कभी–कभी रणभूमि मे उनमें पाशविक

---

१ – प्रताप रासो, पृ० ८, ६; वीर विनोद, पृ० १३७५।

२ – सवाई माधोपुर के उत्तर-पश्चिम मे २६ किमी०।

— बरवाड़ा युद्ध– राजवाडे, जि० १, लेख ५२, ६३, ६७, ७१; पे० द०, खण्ड २७, लेख १५५, खण्ड २१, लेख १२०, १२१, वीर विनोद, पृ० १३७६; वाक्या राज०, भाग २, पृ० ३३१।

३ – प्रताप रासो, पृ० ७; वीर विनोद पृ० १३७५; वाक्या राज० भाग २, पृ० ३३१; द० कौ०, जि० ११, पृ० १५८।

अन्धावेश से भंग हुआ करती थी। प्रताप सिंह नरूका धूर्त राजनयिक तथा चतुर सेनानायक था। उसके स्वभाव में विनम्रता तथा वाणी में कोमलता थी। उसमें जागरूकता, मिलनसारी, कठिन प्रश्नों को हल करने की पटुता थी।[१] उसका अवसरवादी सिद्धान्त था और दिन में भारी महत्वाकांक्षा थी। नरूका ने अपनी वीरता, श्रमशीलता, निपुणता दक्षता योग्यता तथा चातुर्य्य से सवाई माधोसिंह का ध्यान अपनी ओर खींचकर कछवाहा दरबार में विशिष्ट स्थान तथा यथेष्ट सम्मान प्राप्त कर लिया था और प्रायः वह सवाई माधोसिंह के साथ शिकार तथा साहसिक यात्राओं में रहता था। नवम्बर २१, १७५६ ई० को वह दलनी गुरु सहाय की कमान से माधो सिंह की चाकरी में पहुँचा तब उसको राजा हर सहाय की मारफत सिरोपाव प्रदान करके सम्मानित किया गया था।[२] उसने अनेक बार अपने युद्ध-कौशल प्रदम्य उत्साह व साहस से माधोसिंह का सान्निध्य प्राप्त कर लिया था और सवाई माधोसिंह उसके गुणों की अत्यधिक प्रशंसा करता था। इससे कछवाहा राज्य के अन्य तीन प्रमुख घटक उससे आन्तरिक द्वेष करने लगे थे।

पानीपत संग्राम में मराठा विनाश का समाचार मिलने पर दोआब तथा बुन्देलखण्ड के शासकों तथा जमीदारों की भांति राजस्थान के शासकों तथा जागीरदारों ने अपने राज्यों में बड़ी-बड़ी खुशियां मनाई थीं। यह समाचार लेकर जब हरकारा जयपुर पहुँचा, तब उसको इनाम और सम्वाद प्रेषक को एक 'पालकी' पुरस्कार में दी गई थी।[३] अब सवाई माधोसिंह ने मराठा निरोधक एक ठोस संघ बनाने का पुनः विफल प्रयास किया और अपने राज्य से मराठा थाना को उठाने के लिए कदम उठाया। उणियारा के रावराजा सरदार सिंह नरूका ने १७५१ ई० के अन्त में मल्हार राव होल्कर का संरक्षण प्राप्त कर लिया था।[४] किन्तु अब उसको मराठों की सैनिक सहायता नहीं मिल सकती थी। इससे मई, १७६१ ई० में सवाई माधोसिंह ने विश्वासघात का बदला लेने तथा उणियारा पर अधिकार करने के लिए अपने मन्त्री राजसिंह चौहान (धुड़चढ़ा) की कमान में चार सहस्र तथा नन्दलाल दीवान की कमान में पांच सहस्र सेना रवाना कर दी थी। इस सेना ने उणियारा जागीर में प्रवेश करके भारी लूटमार तथा बरबादी की, फिर भी सरदार सिंह ने समर्पण नहीं किया। दो महीने तक उणियारा का घेरा रहा। माधोसिंह

---

१ – सरकार (मुगल), खण्ड ३, पृ० २०२।

२ – द० कौ०, जि० ११, पृ० १५६।

३ – वनेड़ा अभिलेख संग्रह, पृ० ६-१०।

४ – पे० द०, खण्ड २, लेख ११३, ११५, ११७, खण्ड २१, लेख १७७, राजवाड़े, खण्ड १, लेख १५०।

स्वय अपनी राजधानी से निकला और १४ मई को रतलाम में अपनी शादी कराने के बाद उणियारा की ओर लौटा। उसके बख्शी हर सहाय खत्री ने उणियारा का घेरा डाला। अन्त मे नवयुवक राव प्रताप सिंह को हरावल की कमान सम्भालने के लिए तैनात किया गया। इस बारे म प्रसिद्ध है कि "नरुका कू नरुका मारे या मारे करनार।" प्रताप सिंह ने इस कठिन परिस्थिति में अपनी निजी सेना तथा कछवाहा राज्य की सेना के साथ आक्रमण किया। उसके कूटनयिक तथा सैनिक प्रयासों से राव सरदार सिंह को समर्पण करके समझौता करना पडा। इस सघर्ष में इक्कीस वर्षीय प्रतापसिंह ने अपार कीर्ति उपार्जित कर ली थी। फिर वह सवाई माधोसिंह के पास रणथम्भौर पहुँच गया। [1]

आगे राव प्रतापसिंह ने कोटा राज्य की कई जागीरो पर अधिकार करने में सफलता प्राप्त की। कछवाहों के इस अभियान को विफल करने के लिए नवम्बर, १७६१ ई० में मल्हार राव होल्कर ने इन्दौर से छ सहस्र मराठा सैनिकों के साथ कोटा राज्य मे प्रवेश किया। कोटा राज्य के दीवान अखैराम पचोली, बीस वर्षीय नवयुवक जालिम सिंह हाडा तथा रावराजा के सोतेले भाई ने ढ़ाई हजार सैनिकों के साथ उससे मुलाकात को। इसके बाद मराठा हाडौती सेनाओ ने मिलकर मागरोल व भटवाडा [2] के बीच मे पडाव डाला। नवम्बर २८, १७६१ ई० को कछवाहा तथा शत्रु पक्ष मे सूर्यास्त के तीन घटे बाद तक तोप युद्ध चलता रहा। दूसरे दिन नौ घटा तक भयकर युद्ध चला, जिसमे सालिग राम शाह मैदान मे खेत रहा। कछ-वाहा मैदान छोडकर भाग निकले। [3] भटवाडा युद्ध में राव प्रताप सिंह नरुका भी अपनी निजी सेना के साथ शामिल था और उसने रणक्षेत्र म वीरता तथा साहस-पूर्वक युद्ध लडा था। [4] सम्भवत राव प्रताप सिंह ने प्रथम आक्रमण मे हाडौती सेना पर आक्रमण किया था, जिसमे कोटा के सात सौ सैनिक मैदान में खेत रहे।

कहा जाता है कि चौमू के ठाकुर जोधसिंह नाथावत तथा राव प्रताप सिंह

---

१ – प्रताप रासो, पृ० ७–८, मथुरालाल शर्मा (जयपुर), पृ० ८०; नरेन्द्र सिंह (ईश्वरीसिंह चरित्र), पृ० १०६।

२ – मागरोल, कोटा के उत्तर पूब मे ५६ किमी० बनास नदी के पूर्वी किनारे पर; भटवाडा, मागरोल से ६ किमी० दक्षिण मे नदी के पश्चिमी तट पर।

३ – पे० द०, खण्ड २, लेख ५ ६, खण्ड २१, लेख ६२–६४, खण्ड २६, लेख २७, शिन्देशाही, खण्ड २, लेख ६५, टॉड (कोटा); मथुरालाल शर्मा (जयपुर), पृ० १८१, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ३४५; स्याह वकाया, नवम्बर ३०, तथा दिसम्बर २, १७६१ ई० (रा०रा०अ०)।

४ – प्रतापरासो, पृ० ८।

की कछवाहा दरबार मे दाहिनी ओर प्रथम गद्दी थी। नरुका सरदारो की केवल एक ही गद्दी थी, जिस पर समय-समय पर दोनो सरदार आकर बैठते थे। इसी से दरबार मे एक बार केवल एक ही सरदार को आमन्त्रित किया जाता था। जोधसिंह नाथावत प्रताप सिंह से उम्र तथा अनुभव मे वरिष्ठ था और दरबार मे उसका दवदबा अधिक था। एक बार भूल से दोनो सरदारो को दरबार मे आमन्त्रित कर लिया गया। राव प्रताप सिंह दरबार मे पहले पहुँचा और बाद म ठाकुर जोधसिंह ने प्रवेश किया। राव प्रताप सिंह को अपनी मसनद पर बैठा देखकर उसे क्रोध आ गया और वह उसका हाथ पकडकर मसनद से उठाकर स्वयं वहा बैठ गया। इससे प्रताप सिंह ने उसको मारने के लिए दरबार मे ही कटार निकाल ली थी। यह देखकर ठाकुर ज धसिंह ने सवाई माधोसिंह को उसके विरुद्ध भडकाना शुरु कर दिया और उसको मारने का षडयन्त्र रच डाला।

ठाकुर जोधसिंह की मृत्यु के बाद उसके पुत्र रतन सिंह ने भी प्रताप सिंह से बदला लेन का निश्चय कर लिया था और दोनो ही दाहिनी प्रथम कुर्सी के दावेदार थे। प्रताप सिंह ने दरबार में इस बैठक का दावा प्रस्तुत किया और सवाई माधोसिंह ने स्पष्ट शब्दो मे कहा कि इस बैठक के दो दावेदार नही हो सकते। इससे प्रतापसिंह ने क्रोधित होकर रतनसिंह नाथावत को दबाने की चेष्टा की। फलतः नरुका खाप विरोधी घटक ने प्रताप के विरुद्ध आन्तरिक षडयन्त्र रच डाला। उन्होंने राज-ज्योतिषी आदि लोगो से माधोसिंह से कहलवाया कि उसकी आँखो मे राज-चिह्न दिखलाई देता है और वह राजगद्दी पर अधिकार करना चाहता है। इससे माधोसिंह उसके प्रति शका करने लगा। सम्भवत. यह सामान्य विश्वास पैदा हो चुका था कि सवाई माधोसिंह नवयुवक प्रताप की जान का प्यासा है और प्रताप भी यह समझने लगा था कि उसकी वीरता के लिए जयपुर राज्य में अधिक स्थान नही है और यहा उसके महत्वाकाक्षी भविष्य का प्रकाश नही हो सकेगा।[१] कहा जाता है कि एक बार शिकार म सवाई माधोसिंह की ओर से किसी ने उस पर गोली भी चलाई थी, जो प्रताप सिंह शरीर से रगडती हुई निकल गई, जिसस नाराजगी का भेद खुल गया।[२] प्रताप रासो के लेखक ने इस घटना का उल्लेख नही किया

---

१ – वावया राज०, जि० २, पृ० ३३२, वीर विनोद, पृ० १३७६; ठाकुर नरेन्द्रसिंह; मथुरालाल शर्मा (जयपुर), पृ० १८६, प्रताप रासो, पृ० ८।

— १७५६ ई० मे लाखेरी युद्ध मे जोधसिंह की मृत्यु हो चुकी थी और मल्हार राव ने रतन सिंह को बरवाडा दुर्ग से बाहर निकाल कर अधिकार कर लिया था।

२ – वावया राज०, भाग २, पृ० ३३२, वीर विनोद, पृ० १३७६; मथुरालाल शर्मा (जयपुर), पृ० १८६, प्रताप रासो (पृ० ३२) के अनुसार— "सवाई पृथ्वी सिंह*

है। नाराज होकर सवाई माधोसिंह ने प्रताप सिंह पर दरबार मे उपस्थित होने पर पाबन्दी लगा दी और राजगढ़ की जागीर भी खालसा कर ली थी। इससे प्रतापसिंह अपने आश्रयदाता के दरबार को छोड़कर राजगढ चला आया। उसके साथ उसका मन्त्री (कारिन्दा) छाजूराम हल्दिया तथा उसका परिवार, निजी नरुका सैनिक व सेवक थे। राजगढ़ पहुँच कर प्रताप सिंह ने एक खास पचायत में सवाई माधो सिंह की अप्रसन्नता का वृतात बतलाया। इसको सुनकर सभी ने कहा "कल्याण वश माधो सिंह से द्रोह नही कर सकेगा" उन्होने प्रताप सिंह को देश त्याग कर अन्यत्र रहने की सलाह दी।[1]

राजा सूरजमल के दरबार मे शरण लेना

राव प्रताप सिंह ने अपने भाई-बन्धुओ की सलाह मानकर अपने रनिवास को रथ मे सवार किया और निजी सेवक, मन्त्री छाजूराम हल्दिया परिवार तथा सैनिको के साथ राजगढ़ से प्रस्थान किया और प्रथम दिन पहाड के समीप आधुनिक टेडा के हनुमानजी के समीप अपना प्रथम पडाव डाला। यहा उसने दरबार करके भाई बन्धु, भतीजो से अपने साथ चलने का आग्रह किया। फलत. खोहरा, पलवा, ईडर, बीजगढ, पाई आदि मे आबाद सभी भाई भतीजे उसके साथ चल दिये। यहा से प्रस्थान करके फिर उसने जावली मे डेरा डाला। जावली के ठाकुर गजसिंह नरुका ने उसका स्वागत-सत्कार किया और उसने सधैर्य प्रताप से पूछा कि— "आप अपने देश को छोड कर कहा जा रहे हो?" प्रताप सिंह ने कहा— "सवाई माधो-सिंह मेरे से नाराज हो गये हैं। अत. जहा भी अन्न जल होगा, वही चले जावेंगे।" इस पर ठाकुर गजसिंह ने उसको सुझाव दिया—"आप दो-चार दिन यही पर विश्राम करें। यह गाव भी आपका ही है। मैं प्रात काल सवाई माधोसिंह के पास समझौता कराने के लिए जाऊंगा। यदि राजा आपको अपनी जागीर मे रख लेगा, तो सभी रहेंगे। अन्यथा हम भी आपके साथ ही चल देंगे।" यह सुनकर राव प्रताप सिंह ने कहा— "आप यही पर निवास करें। समय आने पर मैं (नरुका) भी जयपुर की सेवा में उपस्थित हो जाऊगा।" इसके बाद प्रताप ने सदल जावली से प्रस्थान किया और दो स्थानो पर रुककर डीग (दोघ) के निकट डेरा डाला। यहा से उसने अपने मन्त्री छाजूराम हल्दिया को राजा सूरजमल के पास राजधानी डीग मे भेजा।

सूरजमल ने उससे पूछा, "महाराजा माधोसिंह ने राव प्रताप सिंह को किस काम से भेजा है?" छाजूराम ने निवेदन किया— "राव माधोसिंह की नाराजगी के

ॐ के शासन काल मे राव प्रताप सिंह पर गोली चलाई गई थी। दस्तूर कौमवार (जि० ११, पृ० १५६) से भी प्रताप रासो की पुष्टि होती है।

१ – प्रताप रासो, पृ० ६।

कारण आमेर राज्य को छोड़कर इधर आये हैं। यदि आप उनको अपने यहां आश्रय प्रदान कर देंगे, तो वे आपके राज्य मे ही रुक जावेंगे। अन्यथा वे दिल्ली की ओर जाकर कहीं शरण लेंगे।" यह सुनकर सूरजमल अपने सुभटो के साथ राव प्रताप के डेरों पर गया और कहा— "आमेर तथा इस राज्य में कोई भी अन्तर नहीं है। आप यहीं रुक कर सेवा करें।" इसके बाद ब्रजराज सूरजमल डीग लौट आया। फिर प्रताप सिंह ने इन्द्रपुरी सदृश, सेना-सुभट समाज से सुरक्षित जाट राजधानी डीग में प्रवेश करके सूरजमल से भेंट की।[1] सूरजमल ने उसका 'मनुहार' करके सत्कार किया। उसको घोडा तथा भाई-भतीजो आदि प्रमुख सरदारो को सिरोपा प्रदान किये। दैनिक व्यय के लिए खजाने से भारी रकम दी और रनिवास, भाई-बन्धु तथा नरुका फौज को रहने के लिए अति सम्पन्न व समृद्ध डहरा गाव जागीर में प्रदान किया। इस प्रकार राव प्रताप सिंह ने सूरजमल के यहा शरण लेकर जाट राज्य की सेवा की और नरका फौज के साथ कई युद्धो में भाग लिया।[2]

९ – जवाहर सिंह का तोरु पर सफल आक्रमण, १७६३ ई०

रेवाडी के पूर्व में ३९ किमी० तथा धासेडा के उत्तर-पश्चिम मे १५ किमी० तोरु का दुर्ग था, जहां असदुल्ला खा बलूच की जमीदारी थी। इस दुर्ग में मेवाती डाकुओं का सरदार सानुल्वा शरण लेता था। सानुल्वा अपने दस सवार डाकुओं के एक गिरोह के साथ डीग दुर्ग के समीप तथा होडल-बरसाना के बीच मे कोकलबन की पहाडियो मे छिपकर एक-दो दिन के अन्तर से छापा मारा करता था और कारवा लूटा करता था। उसके अत्याचारो से भयभीत आसपास के ग्रामीण-जन कुछ नहीं कर सकते थे, क्योंकि असदुल्ला खा लूट में हिस्सा लेकर दस्यु दल की

---

१ – प्रताप रासो, पृ० ९–१४।
– मु सिफ ज्वाला सहाय (वाक्या राज०, खण्ड २, पृ० ३३२) का मत है कि— राव प्रताप सिंह जवाहर सिंह के दरबार में आकर उपस्थित हुआ था और उसने रहने के लिए डहरा गाव की जागीर प्रदान की थी। डा० मथुरा लाल शर्मा (पृ० १८९) इसी का अनुसरण करते हैं। इसी प्रकार डा० नागोरी (पृ० २७) ने भी इस कथन की पुष्टि की है। किन्तु यह कथन पूर्णत असत्य है।
– कविराजा श्यामलदास (वीर विनोद, पृ० १३७६) का कथन है कि प्रताप सिंह माचेडी से राजा सूरजमल के पास पहुचा और वहां उसकी सेवा मे रहा। जाचोक जीवण का वृतान्त निकट समकालीन है और वीर विनोद के कथन से मेल खाता है।

२ – प्रताप रासो पृ० १४।

रक्षा किया करता था। इस प्रकार बलूच सरदार की अनुकम्पा से सानुल्बा की कमान में दस्यु दल ने जाट राज्य में आतंक फैला रखा था। जवाहर सिंह ने अपने पिता को लिखा— "जब तक तोरु दुर्ग तथा उसके सरदार पर आक्रमण नहीं किया जावेगा, तब तक दस्यु दल का पतन नहीं हो सकेगा।" इसमें सर्व प्रथम सूरजमल तथा जवाहर सिंह ने असदुल्ला खां के पास सन्देश भेजा कि वह दस्युओं को अपने दुर्ग में शरण देकर रक्षा करना बन्द कर दे। परन्तु बलूची सरदार ने अपने आर्थिक लाभकारी उपजीवो का साथ छोड़ने से मना कर दिया।[1]

सम्राट के दिल्ली न आने की विफलता से लाभ उठा कर जवाहर सिंह ने शीघ्र ही तोरु पर चढ़ाई कर दी, जहां मुसाबी खां अपने कुछ सैनिकों के साथ मदद के लिए पहुँच गया था। सम्भवत इस समय मुसाबी खां तथा बहादुर खां में आपसी मतभेद तथा राजनैतिक प्रतिस्पर्धा विद्यमान थी। बहादुर खां का भाई ताज मोहम्मद खां स्वय अपने लिए एक स्वतन्त्र जागीर उपार्जित करने का प्रयत्न कर रहा था। यह सम्भव हो सकता है कि ताज मोहम्मद खां ने अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए मुसाबी खां के विरुद्ध जाट सरदार से समझौता कर लिया था और उसने ही जवाहर सिंह को सानुल्बा दस्यु की गतिविधियों की सूचना दी थी। जवाहर सिंह ने इसका लाभ उठाया। शाह वली-उल्ला को बलूचों की यह स्थिति असह्य थी और वह बलूचो में व्याप्त आपसी मतभेदों से सन्तुष्ट नहीं था। उसने अपने एक पत्र मे ताज मोहम्मद खां पर एकता का भारी दबाव डाला और लिखा— "स्वकुलीन बन्धुओं के साथ मिल-बैठ कर उसे अपने मतभेद भुला देने चाहिये।" उसने जाटों के विरुद्ध मुसाबी खां तथा अन्य प्रतिष्ठित जमीदारों के साथ मित्रता करने और जाट विरोधी अभियान में शामिल होने की भी सलाह दी थी।[2]

शाह वली उल्लाह के प्रयासो का अभीष्ट फल निकला और ताज मोहम्मद मुसाबी खां की सहायता के लिए पहुँच गया। फलतः जवाहर सिंह व ताज मोहम्मद खां मे एक युद्ध हुआ, जिसमे दोनो ओर के बीस व्यक्ति खेत रहे। बलूची पराजित हो गये और ताज मोहम्मद के साथ कुछ ही व्यक्ति शेष रहे। जयसिंह राव नामक एक खत्री, जो नजीब का सहयोगी था, खेत रहा। ताज मोहम्मद ने जब अपनी पराजय की स्थिति देखी, तब वह अपने घोड़े से उतरा और उसने जमीन पर फतीहा पढ़ा। फिर वह घोड़े पर सवार हुआ और जाटों पर आक्रमण कर दिया। जाट सैनिक इस आक्रमण का सामना करने मे विफल रहे और वे पीछे हटकर

---

१ – नूरुद्दीन, पृ० ६० अ–६२ अ, नजीबुद्दौला, पृ० ६६।
२ – शाह वली उल्लाह का पत्र ताज मोहम्मद के नाम, मकतूबात, पत्र सं० २३, पृ० ८५–६।

जवाहर के पास लौट आये। इससे जवाहर काफी नाराज हो गया। उसे हताश होकर पीछे हटना पड़ा। परन्तु इस पराजय से उसका हौसला अधिक बढ़ गया और उसने पूर्ण उत्साह के साथ दूसरी बार दुर्ग पर आक्रमण किया। अन्त में तोरु दुर्ग पर जाट राज्य का ध्वज फहराने लगा।[१]

१० – फर्रुखनगर अभियान- अक्तूबर–दिसम्बर, १७६३ ई०

मुसावी खां बलूच ने अपने दुर्ग फर्रुखनगर को रसद व शस्त्रों से सुरक्षित कर लिया था। उसने सादुल्ला खां की अनैतिक, अव्यवहारिक लूट के लिए उसका पक्ष लेकर राजा सूरजमल का खुला विरोध किया और गढ़ी हरसारु, तोरु आदि बलूची दुर्गों के रक्षा–प्रयत्नों में अपने भाईयों को सैनिक सहायता दी थी। जवाहर सिंह तोरु अभियान के बाद अपने पिता के पास लौट आया और उसने शिकायत के रूप में कहा — "जब तक मैं बलूचियों का दमन नहीं कर लूंगा, तब तक मुझे शांति नहीं मिलेगी।" वर्षा ऋतु के बाद क्रोधित होकर जवाहर सिंह ने फर्रुखनगर की ओर प्रस्थान किया और मार्ग में पड़ने वाली बलूची गढ़ियों को एक–एक करके नष्ट कर दिया, ताकि मुसावी खां को अन्य ग्रामीण जनों तथा आश्रित उपजीवियों का सहयोग नहीं मिल सके। नजीबुद्दौला सिकन्दरा छावनी में बीमारी की हालत में नजीबाबाद चला गया था, जहां उसको स्वास्थ्य लाभ के लिए कई माह तक रुकना पड़ा। बलूची सरदारों पर जाट शासक के आक्रमणों का समाचार मिलने पर उसने सूरजमल को अपने एक पत्र में लिखा— "हम दोनों के बीच में शांति–समझौता के साथ मित्रता है। बलूची सरदार, जिनके पास न अधिक साधन हैं और न उनमें आपका मुकाबिला करने की ही क्षमता है, वास्तव में मेरे संरक्षण में हैं। आप उनको जान–बूझकर निर्वासित कर रहे हैं। यह मित्रता का खुला विरोध है।" इस पर सूरजमल ने उत्तर में लिखा— "परिस्थितियां मेरी शक्ति के बाहर हैं। मेरा पुत्र इस कार्य के लिए कृत–संकल्पित है। बलूच मार्गों में डाका डालने वाले दस्युओं को शरण दे रहे हैं, इससे उनको दण्ड मिलना ही चाहिये।"[२]

अक्तूबर में जवाहर सिंह ने फर्रुखनगर की ओर कूंच किया और वहां के गावों में लूटमार की। किन्तु जब बलूची बाहर निकल कर आये, तब वह संघर्ष को टाल कर अपने देश में लौट आया। आवश्यकता के क्षणों में ठाकुर अजीत सिंह कछवाहा संरक्षण को त्याग कर राज सेवा में लौट आया था और जाट शासक ने सहृदयता से उसको फौजी टुकड़ियों की व्यवस्था संभाल दी थी। बलूची सरदारों के

---

१ – नरुद्दीन, पृ० ६१ ब, ६२ अ; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ३०२।
२ – नूरुद्दीन, पृ० ६२ ब; वेण्डल, पृ० ८८।

दमन पर नजीब के हस्तक्षेप पर सूरजमल ने अपने भतीजे बहादुर सिंह (वैर) तथा अपने साले बख्शी बलराम नाहरवार को दशहरा की राम राम करने जयपुर भेजा। जहां उनकी मिजवानी की व्यवस्था की गई और २८ अक्तूबर (कार्तिक वदि ६) को दोनों के लिए सरपेच व सिरोपाव प्रदान करके विदा किया गया।[1] सम्भवतः इस समय माधो सिंह ने बलूची सरदारों व नजीब के मामले में हस्तक्षेप न करने का आश्वासन प्रदान कर दिया था। तब जवाहर ने लौटकर गढी का घेरा डाल दिया। दो महीने तक मुसावी खां जवाहर सिंह का सामना करता रहा। बहादुर खा ने उसको हर सम्भव सहायता तथा कुमुक भेजकर सहायता की। यह देखकर विशाल तोपखाना पक्ति तथा सेनाओं के साथ सूरजमल ने स्वयं फर्रुखनगर की ओर प्रस्थान किया और जाट तोपचियो ने अति सावधानी व कडाई से घेरा डाला। इसी बीच मे मुसावी खा ने नजीब से तत्काल सहायता करने की प्रार्थना की।

नजीब ने सूरजमल को पुन. लिखा— "श्रीमन्त, आप एक चतुर बुजुर्ग व्यक्ति हैं और अपने अनुबन्ध की पालना में दृढ हैं। अब क्या हुआ, जो आप मेरी तथा मेरे उपजीवियों की सीमा मे पहुँच गये हैं। वहा आप सैनिक बल से रैय्यत को लूट रहे हैं। परेशान कर रहे हैं।" सूरजमल ने उत्तर में लिखा—''जवाहर सिंह की इच्छा है कि मुसावी खा की सीमाओ मे फर्रुखनगर के आस-पास चौकिया स्थापित कर दी जावें। आप उसको कही अन्यत्र रहने का सुझाव दें, अन्यथा उसको जीवन, सम्मान व सम्पदा से हाथ धोना पडेगा।" इसके साथ ही सूरजमल ने स्वयं फर्रुख-नगर की ओर कूंच कर दिया। यह देखकर बलूची सरदार ने नजीब को शीघ्र ही अपनी सहायता के लिए आने के लिए पत्र लिखा, किन्तु जब तक यह पत्र नजीबा-बाद पहुँचता, उससे पूर्व ही सूरजमल फर्रुखनगर पहुँच गया था और वहा उसने खाईया खोद ली थीं।[2] यद्यपि नजीब खा बीमार था और इस घटना से उसको काफी धक्का लगा। दिल्ली गिर्द (चारो ओर) तथा दिल्ली नगर मे नजीब का राजनैतिक प्रभुत्व तथा व्यक्तित्व का विकास बलूचो की सहायता पर निर्भर था। वह अपने आश्रितो के दमन को सहन नही कर सकता था। इससे उसने अपने उप-जीवियों की सहायता के लिए दिल्ली पहुचने का निश्चय कर लिया था। इसमें एक माह का समय निकल गया। अब फर्रुखनगर का पतन सन्निकट था। भयभीत होकर दुर्ग से सेना भाग गई थी। ताज मुहम्मद खा भी कोई सहायता नहीं कर सका। किले मे कुल सात सौ सैनिक रह गये थे, जबकि सूरजमल की कमान में बीस

---

१ – द० कौ०, जि० ७, पृ० ४८०–२।

२ – नूरुद्दीन, पृ० ६३ अ–ब।

सहस्र सवार, अनगिनती पैदल और आवश्यक तोपखाना था। तोपों ने दुर्ग-दीवार तोड़ डाली थी। इससे मुसावी खां हतोत्साहित हो गया।[१]

मुसावी खा को कडे घेरे के कारण बाहर से किसी भी प्रकार की राहत व कुमुक नहीं मिल सकी और वह रसद की कमी के कारण काफी परेशान हो गया था। निराश होकर उसने आत्म-समर्पण करने का विचार किया और उसने सूरजमल को अपने पत्र मे लिखा— "........ आप (सूरजमल) पवित्र गंगाजली अपने हाथ मे लेकर शपथ ग्रहण करें कि आत्म समर्पण के बाद उसको सकुशल गढी के बाहर निकल कर गन्तव्य स्थान की ओर चला जाने देंगे। उस स्थिति में मैं समर्पण करने को तैयार हूं।" जाट शासक ने मुसावी खा की इस शर्त को स्वीकार नही किया। इस समय बलूच-सरदार कपट योजना में भी व्यस्त था और वह नजीब से सम्पर्क स्थापित कर रहा था। यह देखकर अन्त में सूरजमल ने मुसावी खां की प्रार्थना को स्वीकार कर लिया और प्राण-रक्षा का वचन देकर उसको अपने शिविर में समझौता-वार्ता के लिए आमंत्रित किया। मुसावी खां अपने साठ भाई-बन्धुओ, जिनमे उसके चचाजाद चौदह भाई भी शामिल थे, के साथ किले से बाहर निकला और सूरजमल से भेंट की। सूरजमल ने उसका हार्दिक सम्मान किया और चलते समय कहा कि उसके ठहरने की व्यवस्था एक शामियाने मे कर दी गई है। जब वह उस शामियाने मे पहुँच गया, तब जाट शासक ने उसके चारो ओर पहरा बिठला दिया। उसके परिवार को गाडियो मे बिठला कर इसी शामियाने में लाया गया और सभी को एक स्थान पर एकत्रित कर लिया गया। १२ दिसम्बर को जवाहर सिंह ने स्वय खाली दुर्ग मे प्रवेश किया और वहां उपलब्ध खजाना व सामान को जब्त कर लिया। इस प्रकार गढी, सभी शस्त्रास्त्र तथा भंडारो पर जाटों का अधिकार हो गया। दूसरे दिन (१३ दिसम्बर) मुसावी खां को उसके भाई-बन्धु तथा परिवार के साथ रथ व बहलियों मे सवार किया गया और उनको राजनैतिक बन्दी बनाकर डीग दुर्ग मे भेज दिया गया। इस घटना के दो चार दिन बाद ही नजीब दिल्ली पहुँच गया था। इससे सूरजमल ने फर्रुखनगर से दिल्ली की ओर कूंच कर दिया।[२]

---

१ – नूरुद्दीन, पृ० ६३ब–६४ अ।

२ – नूरुद्दीन, पृ० ६४ अ, ब; वेण्डल, पृ० ८८–६; इमाद, खण्ड २, पृ० १६४; दे० क्रॉनी०, पृ० १२८; हिंगणे, खण्ड २, लेख ६३; नजीबुद्दौला, पृ० ६८–६, पृ० १४८; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २६३, ३०३; मुन्शी बिहारी लाल ने (पृ० ८) इस युद्ध का उल्लेख नहीं किया है।

११ – नवाब मीरकासिम का जाटों से सहायता प्राप्त करने का विचार

१७६३ ई० के प्रारम्भ में सम्राट तथा नवाब वजीर शुजाउद्दौला राजधानी दिल्ली की ओर प्रस्थान करने और अहमद खां बंगश को उसके प्रान्त से पृथक करने के प्रयत्नों में व्यस्त थे, तभी बंगाल के नवाब मीर कासिम अली खां तथा फोर्ट विलियम के बीच में संघर्ष छिड़ गया था। मीर कासिम अली ने बंगाल प्रान्त की व्यवस्था के लिए कर्तव्य-पालना का भरसक प्रयास किया, किन्तु उसको ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के व्यापारिक, आर्थिक तथा राजनैतिक लालच का शिकार बनना पड़ा। फोर्ट विलियम की अंग्रेजी सेनाओं ने नवाब को कटवा, घेरिया तथा उदेनाला युद्धों में परास्त करके इलाहाबाद की पूर्वी सीमाओं की ओर उसके माल व असबाब, परिवार व बची खुची सेना के साथ खदेड़ दिया था। इस कठिन परिस्थिति में, डॉ० नन्दलाल चटर्जी का मत है कि— "मीर कासिम ने अंग्रेजों के विरुद्ध जाट, रुहेला, मराठा तथा शुजा से सहायता प्राप्त करने का विचार किया।" [1] डा० चटर्जी का मुख्य आधार शाकिरउद्दौला का वह पत्र है जिसमें उसने शाही दरबार से एक पत्र लिख कर सम्भावना व्यक्त की थी कि मीर कासिम जाट तथा रुहेलों की सहायता के लिए जाना चाहता है। [2] लेकिन हिन्दुस्तान की राजनैतिक स्थितियों का सम्यक् अध्ययन से विद्वान लेखक के कथन में अधिक सत्यता का आभास नहीं होता है। सूरजमल वास्तव में अपनी दिग्विजय योजना में व्यस्त था और उसका कार्यक्षेत्र दिल्ली के आसपास तक सीमित था। वह अपने पड़ोसी नवाब वजीर शुजा के बिना-परामर्श के क्षेत्रीय सीमाओं से बाहर अपनी सेनायें भेजने का इच्छुक नहीं था। फिर भी यह स्पष्ट आभास होता है कि राजा सूरजमल की कमान में वास्तव में जाट जन-शक्ति एक भारतीय राजनैतिक शक्ति के रूप में संगठित हो चुकी थी और आपत्काल में दूरस्थ प्रान्तों के शासक भी जाटों की सैनिक सहायता, नैतिक व हार्दिक सहानुभूति के इच्छुक थे।

१२ – बहादुरगढ़ पर अधिकार, दिसम्बर, १७६३ ई०

फौजदार कामगार खां बलूच की सैनिक कमान में अति साहसी अधिकारी बहादुर खां बलूच था, जिसको कामगार खां ने सहारनपुर की फौजदारी का प्रबन्ध

---

१ – डॉ० नन्दलाल चटर्जी, मीर कासिम, नवाब आफ बंगाल, पृ० २५४-५; जोन सों, पृ० ३१२-३।

२ – सी० पी० सी०, खण्ड १, पत्र संख्या २०२३।

सौंप दिया था। सफदरजंग गृह युद्ध मे मीर बख्शी इमाद की अपील पर वह जून, १८ १७५३ ई० को एक सहस्र सवार व पैदलों की एक सेना के साथ सहारनपुर से दिल्ली पहुँचा। ११ जुलाई को उसने नजीब खा के साथ मिलकर सम्राट अहमदशाह से खुले मैदान में स्वय उपस्थित होकर सूरज-सफदर के विरुद्ध युद्ध सचालन का आग्रह किया। उसने इस युद्ध मे मीर-बख्शी इमाद की सेवा करके विशिष्ट अनुकम्पा प्राप्त कर ली थी और उसको माही-ओ-मरातिब (मछली का निशान) से सम्मानित किया गया था।[1] इससे बहादुर खा के स्वतन्त्र व्यक्तित्व का विकास हुआ और उसने २६ नवम्बर को रुहेलो के साथ मिलकर शाहदरा तथा पटपर गज की लूट में शामिल होकर पर्याप्त धन सग्रह कर लिया था।[2] इसके बाद उसने दिल्ली के पश्चिम में ३२ किमी० एक स्थान पर अपने नाम पर "बहादुरपुर" नामक गढी का निर्माण कराकर नवीन बलूची कस्बा आबाद किया। यहा उसने निवास के लिए एक हवेली तथा कचहरी भी बनवाई। कुछ वर्षों के बाद यह कस्बा बहादुरगढ़ कहलाने लगा। उसने दो सहस्र बलूची सैनिको के साथ वजीर इमाद की सेवा करके सेनानायक का पद प्राप्त कर लिया। इमाद ने उसको "सैनिक व्यय" के लिए बहादुरगढ का ताल्लुका प्रदान करके स्वतन्त्र ताल्लुकेदार बना दिया था।[3] पानीपत सग्राम के बाद बहादुर खां के सिपाही तथा रैय्यत ने मराठा सरदार तथा सैनिको के साथ अति निर्दयता का व्यवहार किया और उनको लूट लिया था।[4] फिर उसने स्वभावत सहधर्मी नजीब का सरक्षण प्राप्त कर लिया और दिल्ली के दक्षिणी-पश्चिमी अभियानों मे नजीब की हरसम्भव सहायता की थी।[5] अब जाट अभियानो ने उसको बाध्य कर दिया कि वह अपने बचाव के लिए नजीब की सैनिक सहायता प्राप्त करे।

फर्रुखनगर अभियान में बहादुर खां ने मुसावी खा को नैतिक व सैनिक समर्थन दिया था और उसने मुसावी खा की रक्षा के लिए नजीब से सैनिक सहायता भेजने की करुण प्रार्थना की थी। अति विचलित होकर वह स्वयं नजीब के पास पहुँचा, किन्तु नजीब के दिल्ली आने से दो दिन पूर्व ही फर्रुखनगर का पतन हो चुका

---

१ – ता० अहमदशाही, पृ० ५६ ब, ६४, ७१, सियार, खण्ड ४, पृ० २६, (इसी समय उसको ७०० सवार का मनसब भी प्रदान किया गया था)।

२ – ता० अहमदशाही, पृ० ८८ अ।

३ – सियार, खण्ड, ४, पृ० २१; रोहतक जिला गजे०, १८८३ ई०, पृ० १८-६; सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० २५।

४ – राजवाडे, जि० ६, लेख ४०१।

५ – नूरुद्दीन, पृ० ५६; पे० द०, जि० २, लेख १४४।

था। उसने मुसावी खां तथा उसके परिवार को जाटो की कैद से मुक्त कराने के लिए नजीब पर कड़ाई के साथ दबाव डाला, परन्तु वह (नजीब) क्या कर सकता था ? वह बहादुर खां को आश्वासन ही देता रहा। नजीब ने वास्तव में दिल्ली मे सैनिक तैयारियां करने का बहाना करके देरी कर ली थी। इस स्थिति को देखक फर्रुखनगर विजय के बाद जवाहर सिंह ने बहादुरगढ़ की ओर प्रस्थान किया। इससे भयभीत होकर बहादुर खा अपने सैनिक तथा परिवार के साथ दिल्ली भाग गया। *जवाहर सिंह ने इस प्रान्त मे बलूचियो को अन्तिम गढी पर अधिकार करके बलूचियो* की शक्ति को पूर्णतः कुचल दिया था।[1]

१३ – गिर्द फौजदारी की माग, दिसम्बर १७६३ ई०

दोआब प्रान्त मे कुंवर नाहर सिंह तथा बख्शी बलराम नाहरवार की कमान मे तैनात जाट सेनाओं ने पूर्ण सफलता प्राप्त कर ली थी और क्षेत्रीय मराठा चौकी तथा थानों पर अधिकार कर लिया था। पश्चिम मे बलूची सरदारो का पूर्णतः पतन हो चुका था। १४ दिसम्बर को बीमार होने पर भी नजीबुद्दौला ने अपने पुत्र तथा साथियों सहित दिल्ली मे प्रवेश[2] किया। नायब सेनापति बहादुर खां ने अपने संरक्षक नजीब पर दिल्ली पहुचकर दबाव डाला कि वह मुसावी खा को जाट बन्दीगृह से मुक्त कराने का प्रयास करे। नजीब बीमार होने पर भी सूरजमल के सैनिक अभियानों के प्रति अति सजग व जागरूक था। वह अपने संरक्षक अहमद शाह दुर्रानी के हिन्दुस्तान मे आने से पूर्व जाटों के साथ शक्ति परीक्षण करने को तैयार नहीं था। वह अपनी मानसिक तथा शारीरिक दुर्बलता को छुपाने[3] के लिए ही "रुको,देखो" की नीति अपना रहा था। सूरजमल ने नजीब की इस दुर्बलता से राजनैतिक विजय लाभ उठाने का निश्चय कर लिया था और वह उसको दिल्ली से बाहर निकालने के लिए तैयार था। नजीब असहाय था और उसने फर्रुखनगर के पतन के बाद हार्दिक विरोध प्रगट करते हुए अपने वकील राजा दलेल सिंह को सूरजमल के पास भेजकर[4] अपने पत्र में लिखा— "आप एक कुशल सेनापति हैं और आपके मेरे बीच मे निष्कपट मित्रता रही है। ये बलूची मेरे आश्रय मे थे। इस बारे मे मेरी *भावनाओ की उपेक्षा करके आपने इनके साथ कठोर व्यवहार किया है*। क्या आपकी

---

१ – वयाने वाकई, पृ० ३०२; बे० क्रॉनी०, नूरुद्दीन, पृ० ६४५; वेण्डल; कानूनगो, पृ० १४६।
२ – बे० क्रॉनी०, पृ० १२८।
३ – सियार, खण्ड ४, पृ० २८।
४ – हिंगणे, खण्ड २, लेख ५३, (१२ दिसम्बर)।

यही उदारता व सहृदयता है ? फिर भी अब तक जो कुछ गुजरा, गुजर चुका। जिस गद्दी पर आपने कब्जा कर लिया है, उसे अपने ही अधिकार में रखें। किन्तु यह उचित नहीं है कि आप मुसावी खां को उसके स्त्री-बच्चों सहित बन्दी बनाकर अपने दुर्ग में रखें। वह मेरा सहयोगी तथा मित्र है। मेरी खातिर ही आप उसको मुक्त करके मित्रता का परिचय दें।''

सूरजमल एक चतुर पारदर्शी राजनयिक था। उसने नजीब को उत्तर में लिखा— "हम दोनों के बीच में पारस्परिक मित्रता तथा सहयोग का अनुबन्ध है। बलूची सरदार मेरे शत्रु हैं। फिर आप मेरे शत्रुओं के विरुद्ध हस्तक्षेप करने का प्रयास कैसे कर रहे हैं ? यह कहां तक न्यायसंगत है कि आप इस मामले में पक्षधर होकर मेरे शत्रु को मुक्त कराने पर जोर दे रहे हैं। जब मैं फर्रुखनगर का घेरा डाल रहा था, उस समय आपने उनकी सहायता के लिए नजीबाबाद से दिल्ली की ओर कूच करके मित्रता की भावना तथा समझौता को तोड़ने का प्रयास किया है। इस बात को सभी लोग भाप गये हैं कि आपने मुझ पर सेना के साथ चढ़ाई करने के लिए ही कूच किया है। यदि मैं आपके दिल्ली आने से पूर्व मुसावी खां को पराजित करके दुर्ग पर अधिकार करने में विफल रहता तो आप उससे मिलकर मेरे विरुद्ध उसकी सहायता अवश्य करते। इस प्रकार आपने मेरे में पूर्व ही निष्ठा भाव तथा वचन भंग करके मित्रता व समझौता को तोड़ दिया है। अब आप मुझसे उदारता तथा भलाई की बात नहीं सोचें।'' इसके बाद भी नजीब ने नम्रता प्रगट की और यह प्रयास भी किया कि सूरजमल के साथ उसका संघर्ष टलता रहे। उसने अब मुसावी खां के मामले में हस्तक्षेप करना ठीक नहीं समझा, ताकि आपसी मतभेद उग्र नहीं हो सकें।[1]

सूरजमल इस समय महान शक्तिशाली तथा साधन-सम्पन्न भारतीय सरदार था। उसकी सेनायें पूर्णत: व्यवस्थित व अनुशासित थीं। मराठा युद्ध के बाद अभी तक नजीबुद्दौला अपनी जागीरों का प्रबन्ध व्यवस्थित नहीं कर सका था। अनेक महीनों से भयानक रोग से ग्रस्त था और उसका खजाना भी खाली था। वह कपट वार्ता करके शुकरताल अभियान की भांति समय खींचना चाहता था। अब्दुल करीम काश्मीरी के अनुसार— "यह स्थिति देखकर सूरजमल ने नजीबुद्दौला के पास प्रस्ताव भेजा कि आप उत्तरि दोआब के सभी परगने तथा राजधानी को खाली करके मुझको सौंप दें। नजीब ने दबाव में आकर सिकन्दराबाद तथा दोआब के अन्य परगने सौंपने का प्रस्ताव रखा, जिससे सूरजमल सन्तुष्ट हो गया।''[2]

---

१ – नूरुद्दीन, पृ० ६४ ब–६५ ब।
२ – बयाने वाकई पृ० ३०२, कानूनगो, पृ० १२०।

अन्य समकालीन इतिहासकारो का कथन है कि राजा सूरजमल ने दिल्ली "गिर्द (दिल्ली के चारो ओर लगे परगने) फौजदारी" की माग की थी।[1] नि सन्देह भयभीत नजीब ने सूरजमल से शाति-समझौता करने का प्रयास किया था और उसने अभी हाल में जाटों द्वारा विजित सिकन्दराबाद तथा बलूची परगने व अन्य परिलाभो के स्वामित्व को स्वीकार कर लिया था, किन्तु सूरजमल उसकी इस स्वीकारोक्ति से सतुष्ट नहीं था। "गिर्द फौजदारी" की हठपूर्ण माग जाटो के लिए अधिक महत्वपूर्ण थी। नजीब के इस मांग को स्वीकारने का अर्थ 'दिल्ली का जाट शक्ति के समक्ष आत्म समर्पण" था। सूरजमल ने इस समय दिल्ली को तीन ओर से घेर रखा था और उसका दिल्ली के निकट तक अधिकार क्षेत्र बढ चुका था। नजीब ने प्रारम्भ मे इस प्रस्ताव को गम्भीर कह कर टालने का प्रयास किया और उसने विचार करने के लिए कुछ समय मागा, किन्तु सूरजमल उसको अधिक समय देने को तैयार नही था। उसने अविलम्ब ही दोआब अभियान मे व्यस्त सेनाओं को दिल्ली की ओर कूच करने का आदेश भी भेज दिया था।

याक़ूब अली के विफल प्रयास, १६-२३ दिसम्बर

लोक दिखावा को नजीब जाटो से व्यक्तिगत तथा राजनैतिक सम्बन्ध विच्छेद नही करना चाहता था। वह अपनी सफलता के लिए "रुको, देखो" की कपट नीति अपना रहा था। जाट शासक अत्यधिक क्रुद्ध था और उसने भारतीय राजनीति से रुहला काटा को उखाड़ फेंकने का निश्चय कर लिया था। इससे नजीब ने १६ दिसम्बर को वजीर शाह वली के भ्राता व दुर्रानी के भारत स्थित प्रतिनिधि याक़ूब अली खा को अपना मध्यस्थ बनाकर सूरजमल के पास समझौता-वार्ता करने के लिए दिल्ली दुर्ग से रवाना किया। उसके साथ मे अपने निजी सेवक शख करीमुल्ला खा, राजा दिलेर सिंह खत्री को विशिष्ट दूत के रूप म भेजा गया। इस समय तक सूरजमल दिल्ली के समीप २६ किमी० दूर पहुँच चुका था और उसने कालिका पहाड़ी पर डेरा डाल दिया था। याक़ूब अपने साथ सुनहले व गुलाबी रग के मुल-तानी छीट के दो थान भेंट करने के लिए भी लाया था। इनको स्वीकार करके जाट शासक ने उसी समय अपने लिए जामा बनवाने का आदेश दिया। राजा सूरजमल तथा याक़ूब अली खा काफी समय तक इन आकर्षक वस्त्रो के बारे मे बातचीत करते रहे। हृदयग्राही विशद वार्ता से नजीब के दूत तथा शिष्टमण्डल के अन्य सदस्य ऊब गये थे। अब याक़ूब अली खा ने रुहेला सरदार के समझौता

---

१ – सियार, खण्ड ४, पृ० ३०, ता० शाह आलम सानी, पृ० १६६; नूरुद्दीन, पृ० ६५ अ, वेण्डल, पृ० ८६, नजीबुद्दौला, पृ० ६६, पे० द०, खण्ड २१, लेख ६०, खण्ड ४०, लेख २३, कानूनगो, पृ० १५०।

प्रस्ताव की चर्चा करना उचित नही समझा। उसने दूसरे दिन वार्तालाप करने का विचार किया।

उसने सूरजमल से चलने की आज्ञा मांगते हुए कहा — 'ठाकुर साहब! आप इतनी जल्दी मे कोई निर्णय नही लें। मैं कल फिर आपकी सेवा मे उपस्थित हूंगा।'' सूरजमल ने यह सुनकर जाटो के अक्खड स्वभाव से कहा— 'नजीब ने मेरी आशा के प्रतिकूल कार्य किया है। अब आपसी तौर से दिलों की सफाई असम्भव है। वह अपने कौमी दलो के घमण्ड मे चूर होकर ही आया है। इसने एक बार उसकी शक्ति को आंकना आवश्यक है। कल मैं कूच करके यमुना नदी पार करूंगा और गाजीउद्दीन नगर को जलाकर बरबाद करूंगा। फिर हिण्डन नदी पर शिविर डालूंगा। समाचार मिला है कि उसकी सहायता के लिए रुहेला गंगा तट तक पहुँच चुके हैं। पहले मैं उनकी शक्ति से निपटूंगा। फिर जो भी कुछ होगा देखा जायेगा। यदि आप इस बारे मे आगे वार्ता करना चाहते हैं तो आप मुझसे मिलने का प्रयास नही करें।'' [१] सूरजमल के इस निर्णय को सुनकर याकूब अली खां हताश हो गया और वह राजधानी में वापिस लौट आया। उसने नजीब के सामने भेंट का विवरण प्रस्तुत किया। इसे सुनकर नजीब ने कहा— 'यदि ऐसा ही है तो हम अविश्वासी से अवश्य युद्ध करेंगे और यदि खुदा का शुकर होगा तो अब उसका अवश्य वध करेंगे।'' [२]

मीर गुलाम हुसैन का मत है कि वास्तव में सूरजमल ने भेंट को रुचि पूर्वक स्वीकारा परन्तु समझौता वार्ता विफल रही। वह लिखता है— 'याकूब अली खाँ ने जिस दिन राजा सूरजमल से भेंट की उसी दिन उसको वापिस लौटने का निर्णय मिल चुका था। उससे यह स्पष्ट रूप से कह दिया गया था कि यदि वह नवल 'गिद सूबेदारी' की मांग को स्थगित करके समझौता वार्ता करना चाहता है तो यह उचित ही होगा कि वह फिर मिलने का कष्ट नहीं करे।'' [३] देहली क्रॉनीकल का लेखक इस भेंट-वार्ता के विवरण के बारे में मौन है। निःसन्देह राजा सूरजमल की मांग उचित थी, परन्तु नजीब के प्रति उसका स्वभाव उपेक्षात्मक, अहंकारी तथा हठपूर्ण था। फादर वेण्डल का विश्वास है कि ''लेकिन सूरजमल ने युद्ध की मांग की थी' [४] इस प्रकार उभय पक्षो में तनाव पैदा हो गया, जिसका निर्णीत परिणाम अति दुःखद था।

---

१ – नूरुद्दीन पृ० ६५ व ६६ अ।

२ – बयाने वाकई पृ० १६६, दे० क्रानी०, पृ० १२८; सियार, खण्ड ४, पृ० ३०–३१, मारवा राज० खण्ड २ पृ० ६७, कौन, पृ० ८४–५, कानूनगो, पृ० १५१।

३ – सियार, खण्ड ४, पृ० ३१।

४ – वेण्डल, पृ० ८६।

समकालीन फारसी इतिहासकारों के विवरणों से स्पष्ट हो जाता है कि नजीबुद्दौला का विचार जाट सीमाओं पर आक्रमण करने का था। उसने "दिल्ली नगर की रक्षार्थ" अपने दो पुत्र अफजल खां तथा जाविद खां और सुप्रसिद्ध रुहेला बलूची सरदारों की कमान में दस-बारह सहस्र स्वार व पैदल सैनिक एकत्रित कर लिये थे और इसी कौमी सेना का भरोसा करके उसने जाट शासक की न्यायसंगत मांग को नहीं माना। "युद्ध अनिवार्य" मानकर ही नजीब स्वयं अपनी सेना को व्यवस्थित करने के लिए दिल्ली नगर से बाहर निकला और २४ दिसम्बर को यमुना नदी पार करके अपने मोर्चा लगा लिये थे।

सूरजमल के रक्षात्मक तथा आक्रमणात्मक प्रबन्ध

सूरजमल नजीब के युद्ध-प्रबन्धों से पूर्णतः सावधान था। अफजल खां, सुल्तान खां, सादत खां आदि रुहेलों की कमान में आई रुहेला सेना ने उसको चौकन्ना कर दिया था। सूरजमल ने दस सहस्र जाट सैनिकों के साथ अपने ज्येष्ठ पुत्र जवाहर सिंह को फर्रुखनगर तथा समीपस्थ दुर्गों की रक्षार्थ व प्रबन्ध के लिए तैनात किया। साथ ही उसने समीपस्थ शाही इलाकों पर भी विजय प्राप्त करने का निर्देश दिया। इसी समय उसने अपने द्वितीय पुत्र नाहर सिंह तथा अन्य जाट सरदारों को दोआब से दिल्ली आने का आदेश भेजा। अब उसने भारी साज सामान, अनावश्यक तम्बू-डेरों को अपने राज्य की सीमाओं की ओर रवाना कर दिया था। छावनी में एक पालकी भी शेष नहीं रही। मात्र घोड़ा-घोड़ी तथा युद्ध का सामान रह गया था।

याकूब अली खां के रवाना होते ही सूरजमल ने मसाराम, चौधरी काशीराम होडलिया तथा उसके पुत्रों, चौधरी जोवाराम इचारी व चौधरी राम किसन, प्रधान-मन्त्री बलराम नाहरवार, बख्शी मोहनराम बरसानिया, ठाकुर मेद सिंह (बछामदी), ठाकुर भवानी सिंह (सिनसिनी), ठाकुर दलेल सिंह (अरतावन), ठाकुर वीर नारायण (बासी), राजा बहादुर सिंह (वैर), ठाकुर अजीत सिंह, किशन सिंह, पुहुप सिंह (पथैना), राजा अमर सिंह, राव प्रताप सिंह नरूका[1] तथा अन्य मुस्लिम व मेवाती सरदारों की कमान में दस सहस्र[2] सेना के साथ शीघ्र ही कालिका पहाड़ी मार्ग से दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। इसको सुनकर नजीब खां ससैन्य जाट शिविर से ७ किमी० दूर खिज्राबाद में आ धमका। जाट रिसालों ने यमुना नदी पार की ओर

---

१ – प्रताप रासो (पृ० १५) के अनुसार सूरजमल ने यमुना तट पर पड़ाव डाला।
२ – बिहारी लाल का विचार है कि सूरजमल ने तीस सहस्र सेना के साथ दिल्ली की ओर प्रस्थान किया था। अन्य इतिहासकार इस संख्या की पुष्टि नहीं करते हैं।

दिल्ली के पूर्व मे २३ किमी० हिण्डन नदी के पश्चिमी तट पर छावनी डाली। यह देखकर नजीब खिन्नता से खिजराबाद से दिल्ली वापिस लौट गया। जाट सेना की एक टुकड़ी ने हिण्डन नदी पार कर ली और गाजियाबाद पहुँचकर आसपास के समस्त गावो मे भारी लूटमार की और इनको आग लगाकर बरबाद कर दिया। केवल गाजियाबाद का किला जाट बरबादी से बच गया। फिर ये जाट टुकड़िया दिल्ली के दक्षिण मे वापिस लौट आईं। [1]

अशुभ भविष्यवाणी तथा अपसगुन

कहा जाता है कि इन्ही दिनों राजा सूरजमल की दाईं हथेली मे एक काली छिलौरी हो गई थी। सगुनियों ने इसके अशुभ परिणाम बतलाये। इसी प्रकार मुहूर्त शोधको ने, उसको इस समय दिल्ली पर आक्रमण न करने की सलाह दी थी। उन्होने इस यात्रा को अलाभकारी तथा मृत्युवासी बतलाया। फिर भी सूरजमल अपनी चुनौती तथा बात पर अड गया और भविष्यवक्ताओ की सलाह को न मानकर "दारिद्रो अरु सूरमा जब चाले तब सिद्ध" कहकर उसने अपने जीवन में भारी भूल की और जाट राज्य के लिए एक महान संकट पैदा कर दिया। एक अन्य लोक कथा के अनुसार— एक दिन जब वह (सूरजमल) अपने सलाहकारो के साथ बैठकर "गिर्द फौजदारी की माग तथा आक्रमण" के विषय में बातचीत कर रहा था, तभी एक अति उग्र कवि ने सभा मे प्रवेश किया। उसका समुचित सम्मान किया गया। सूरजमल ने जब कविराज से कविता सुनाने का आग्रह किया, तब उसने छन्द के अन्तिम पाद मे "परे रहैं खेत बिच खोपरिन के खपरा" का उच्चारण करके सभी को आश्चर्य चकित कर दिया। सूरजमल ने चारण से इसके बारे में पूछा, क्या कविवर, अब की बार यही होगा? कवि ने नम्रता के साथ कहा— "श्री महाराज, इस समय वाणी (सरस्वती) ऐसा ही कह रही है।" "ठीक है, यो ही सही," सूरजमल ने कहा। सूरजमल के दिल मे यह पदांश चुभ गया और उसने इसको कई बार गुनगुनाया। [2]

युद्ध की अन्तिम चुनौती, २४ दिसम्बर

२४ दिसम्बर को अन्तिम बार नजीबुद्दौला ने पुनः अपने निजी सेवक करीमुल्ला खाँ को सागरमल खत्री के साथ सूरजमल के डेरो पर अपना सन्देश लेकर भेजा। "आपने अब तक जो युद्ध किया, उचित ही किया और जो युद्ध करना चाहते

---

१ – बयाने वाकई, पृ० ३०२; दे० कॉनो; पे० द, खण्ड २१, लेख ६०, खण्ड २६, लेख २३; नूरुद्दीन पृ० ६६ अ; सेण्डस, पृ० ८६।

२ – क्षेत्रीय लोक वार्ताएं; दीक्षित, पृ० ६५–६।

हैं, वह भी ठीक ही कर रहे हैं। मैं भली भांति समझता हूं कि आप मुझसे हर प्रकार से श्रेष्ठ हैं। आपके पास श्रेष्ठतम बन्दूकची सवार हैं। अच्छे सुदृढ़ व सम्पन्न दुर्ग हैं। इन दिनो हिन्दुस्तान मे अन्य कोई राजा आपसे अधिक इतना शक्तिशाली व सम्पन्न नही है। आपके पास भारी खजाना तथा सम्पन्न राज्य है। इससे यह उचित नहीं होगा कि मैं आपसे युद्ध करू। फिर आप जान बूझकर हगामा कर रहे हैं। अब आप लूटमार को रोककर अपने वतन को लौट जावें। आपने जो कुछ सोचा था, वह पूरा हो चुका है। इसके अलावा आपने मेरे कुछ गावों को भी बरबाद कर दिया है। जो कुछ हुआ, ठीक है। अब आपसे वापिस लौटने का आग्रह करता हूं।"

रात्रि को दोनो दूत नजीब के पास लौट गये और उन्होंने सूरजमल का उत्तर प्रस्तुत किया। "आप नवाब जी से कह दें कि कल प्रातः वह रणक्षेत्र मे आकर मेरा मुकाबला करें। मैंने इतनी दूर से आने का श्रम किया है, लेकिन आप १६ किमी० बाहर नहीं आ सकते। यदि आप प्रातःकाल युद्ध करने के लिए नही निकलेंगे, तो मैं स्वयं आक्रमण करूंगा। इसलिए जो कुछ भाग्य मे लिखा होगा, उसके लिए आप उत्तरदायी होगे।" [१] इसके बाद मन्त्रणा-परिषद मे करीमुल्ला खा ने— "धैर्य तथा आश्वासन" देकर सूरजमल को सन्तुष्ट करने की सम्भावना का खुलकर विरोध किया। सैय्यद गुलाम हुसैन के शब्दो मे— "उसने (करीमुल्ला) बीच मे विघ्न डालते हुए कहा — सरकार यदि आपके दिल मे इज्जत (सम्मान) की चिनगारियां कुछ भी शेष हैं, तो आपको शीघ्र ही युद्ध करना चाहिये। इस समय न अन्य कोई उपाय है और न अन्य कोई मध्यस्थ जो सम्मानजनक मार्ग निकाल सके। शिष्टमण्डल व इस सभा का युद्ध ही मात्र परिणाम है।" [२] नजीब ने उसकी ओर मुड़कर कहा— "ठीक है, मुझे भी इसी मे आस्था है।" यह कहने के बाद ही उसने अपने पुत्र अफजल खा, सुल्तान खा और जाबित खा को बुलवाया और उनको दूसरे दिन राजघाट से यमुना नदी पार करने के लिए तैयार रहने का आदेश दिया। साथ ही उसने सादत खा, सैय्यद खा, मान खा, महमूद खा बगश, जो उस समय अन्य सरदारो के साथ वहा मौजूद थे, आदि अन्य सभी सरदारो को अपने पुत्र व भाई-बन्धुओ के साथ इस युद्ध मे शामिल होने का आग्रह किया। उसने कहा— "आप सभी अपनी सैनिक टुकडियो के साथ कल प्रातःकाल नदी पार करके इस घमण्डी नास्तिक से युद्ध छेड़ दें।" तभी नकीब को बुलाकर सैनिको को युद्ध के लिये एकत्रित होने का आदेश दिया। [३] आदेश मिलने ही उन्होंने आक्रमण करने की हर-सम्भव

---

१ — नूरुद्दीन, पृ० ६६ अ-६७ ब।

२ — सियार, खण्ड ४, पृ० ३१; बॉम्बा राज०, खण्ड २, पृ० ६७।

३ — उपरोक्त; नूरुद्दीन, पृ० ६७ ब।

तैयारियां प्रारम्भ कर दी।

१४ – अन्तिम युद्ध में राजा सूरजमल का देहावसान, दिसम्बर २५, १७६३ ई०

निर्देश मिलते ही कुंवर नाहर सिंह कुछ सहस्र सवारों के साथ दोआब प्रान्त से दिल्ली अभियान में आकर शामिल हो गया था। २४ दिसम्बर को जाट सैनिकों ने हल्के युद्ध प्रसाधनों के साथ यमुना नदी पार कर ली और गाजियाबाद से कुछ किमी० दूरी पर दक्षिण की ओर, सम्भवतः शाहदरा के मैदान में छावनी डाली। रविवार, २५ दिसम्बर को सूर्योदय से दो घण्टा पूर्व नजीबुद्दौला स्वयं घोड़े पर सवार होकर अपने दस सहस्र सैनिकों के साथ यमुना पार करके हिंडन नदी पर पहुँच गया। जाट सैनिक काफी आगे बढ़ चुके थे और उन्होंने हिण्डन नदी के पार अपनी खन्दकें भी खोद ली थी। नजीब की प्रगति में शाहदरा गंज बाधक था, जिस पर उसने अधिकार कर लिया था और अग्र पंक्तियों को सामान भेजने के लिए सुरक्षित कर लिया था। अब उसने हिण्डन नदी के पश्चिमी तट की ओर शाहदरा के मैदान में अपनी सैनिक पंक्तियां व्यवस्थित कर ली।[१] डा० सरकार का मत है कि "नजीबुद्दौला ने युद्ध क्षेत्र से सूरजपुर (सिकन्दराबाद) के पश्चिम में २४ किमी० की ओर कूच किया।" उभय पक्ष की दोनों सेनायें एक दूसरे के आमने-सामने आकर जम गईं।

सैय्यद गुलाम हुसैन के अनुसार— "अपनी सेनाओं को व्यवस्थित करने के बाद नजीबुद्दौला ने अपने पुत्र अफजल खां, जो हरावल (अग्र पंक्ति) का संचालन कर रहा था, को आक्रमण करने का आदेश दिया और उसकी पहल से सीधी झड़पें प्रारम्भ हो गई।" सम्भवतः दिल्ली से दक्षिण-पूर्व में ११ किमी० सराय बदर के पूर्व तथा भागेल के उत्तर में उभय पक्षों में कुछ समय तक भयंकर मुठभेड़ हुई, जिसमें दोनों ओर से आक्रमण-प्रत्याक्रमण होते रहे।[२] मध्याह्न तीन बजे तक दोनों ओर से तोपों की गोलाबारी चलती रही। दोपहर के बाद सूरजमल ने अपने अधिकांश सैनिकों, तोपखाना पंक्ति तथा हाथियों को रुहेलों पर आक्रमण करने के लिए व्यवस्थित किया। उसने मसाराम को हरावल की कमान सौंपी और अपने दक्ष व प्रशिक्षित सवारों को हरावल से दूर शत्रु पर आक्रमण करने के लिए खड़ा कर दिया, ताकि वे शत्रु के

७—प्रताप रासो (पृ० १५) के अनुसार नजीब खां ने धर्म के नाम पर युद्ध करने की पहल की।

१—शाकिर, पृ० १०५; दे० क्रॉनी०, पृ० १२९; कानूनगो, पृ० १५१।

२—सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ३०४; सियार, खण्ड ४, पृ० ३२।

कमजोर स्थान पर आक्रमण करने के लिए सुरक्षित रह सकें। इसके बाद वह थोडी सी सेना के साथ अपनी सैनिक पंक्तियो से दूर हटकर नजीब के पृष्ठ भाग पर आक्रमण करने को बढ़ा। मसाराम ने अफजल खा की अग्र पंक्ति पर भीषण आक्रमण किया। मुगलिया सवार, सैय्यद मुहम्मद खा बलूच, जेला गूजर का पुत्र गुलाब सिंह, अफजल खा (नजीब का भाई), उस्मान खा आदि ने जम कर संघर्ष किया। गोली लगने से उस्मान खा खेत रहा और जाटो ने उनको पीठ मोड कर भागने के लिए बाध्य कर दिया। इस युद्ध में राव प्रताप सिंह नरुका ने अपनी योग्यता का परिचय दिया। उभय पक्ष के लगभग एक सहस्र सैनिक खेत रहे या घायल हो गये और अन्त मे रुहेला-बलूच सैनिक मैदान छोडकर भाग निकले।[१]

जब युद्ध अपनी चरम सीमा पर था और अफजल खा के मध्य भाग पर मसाराम ने भयकर धावा किया उस समय राजा सूरजमल अपने तीस अंगरक्षकों के साथ घोडे पर सवार एक झाडी के समीप खडे होकर युद्ध देख रहे थे। उनकी कमर मे तमचा और मेवाती सैनिको की भाति हाथ में एक छोटा भाला था। आधुनिक इतिहासकार कर्नल जेम्स टॉड, ग्राउज तथा भरतपुर राज्य के इतिहासकारो का मत है कि वास्तव मे इस समय राजा सूरजमल का युद्ध की ओर ध्यान नही था। वह शाहदरा के शाही आखेट-उद्यान में शिकार खेलने मे मस्त था। इसी समय झाडियों में घात लगाकर बैठे नजीब के दो रुहेला दलों ने उन पर आक्रमण कर दिया। रुहेला सवारो के भीषण धावे से सूरजमल मैदान मे ही खेत रहा।[२] इस दुखद घटना के बारे मे फादर वेण्डल लिखता है— "सूरजमल का पुत्र तथा उत्तराधिकारी नाहर सिंह कुछ सहस्र सवारो के साथ द्रुतगति से दिल्ली की ओर बढ रहा था। एक दिन सूरजमल को समाचार मिला कि शत्रु का एक विशाल सैनिक दल नाहर सिंह पर आक्रमण करने के लिए बढ रहा है। दुर्भाग्य से जब राजा सूरजमल हिण्डन नदी के एक नाले को पार कर रहा था, तभी आक्रमण के लिए झाडी मे तैनात रुहेला बन्दूकचियों ने अचानक उसको दो ओर से घेर लिया। इन सैनिको ने जाट अंगरक्षको पर घातक हमला किया। फलत जाट सैनिक इधर-उधर तितर-बितर हो गये। वे मैदान मे ही खेत रहे या बुरी तरह घायल हो गये और अन्त मे राजा सूरजमल भी खेत रहा।"[३]

१—नूरुद्दीन, पृ० ६८, दे० फ्रॅंको, पृ० ११९।

— डॉ० कानूनगो (१५०) के अनुसार सूरजमल के साथ छ सहस्र सैनिक थे और नूरुद्दीन (पृ० ६८ अ) के अनुसार पाँच सहस्र सैनिक थे।

२—टॉड, खण्ड २, पृ० ३००; ग्राउज, पृ० २४, दीक्षित, पृ० ६७।

३—वेण्डल, पृ० ६०, कानूनगो, पृ० १५४।

मीर ग़ुलाम हुसैन का विवरण अति रोचक व विस्तृत है। वह लिखता है—"अपनी सेनाओं को व्यवस्थित करने के बाद सूरजमल अपने कुछ साथियों के साथ, जिनमें यह्या खां का पुत्र मीर मुंशी (मुख्य सचिव) कलीमुल्ला खां भी शामिल था, दोनों सेनाओं के बीच में होकर निकला। वह रणक्षेत्र की व्यवस्था के निरीक्षण के लिए इधर-उधर स्वच्छन्दतापूर्वक घूम रहा था। अचानक कुछ निर्णय लेने के लिए एक स्थान पर रुका। इसी बीच में मसाराम जाट की अग्र पंक्ति से पराजित होकर अफ़जल खां के सैनिक दल एक के बाद एक इधर होकर भागने लगे। यह देखकर गोल खास के सैनिकों ने उनसे निवेदन भी किया कि गिने चुने रक्षकों सहित शत्रु के इतने अधिक समीप खड़ा होना खतरे से खाली नहीं है। मीर मुंशी कलीमुल्ला खां तथा मिर्जा सैफुल्ला खां ने उनसे वापिस हटने का कई बार आग्रह भी किया, किन्तु वह शत्रु की गतिविधि का निरीक्षण करने में इतने अधिक दत्त-चित्त थे कि उन्होंने उनके आग्रह पर ध्यान नहीं दिया। उन्होंने पुनः आग्रह किया और सवार होने के लिए एक घोड़ा भी भेजा। सूरजमल घोड़े पर सवार भी हो गया, फिर भी एकाग्र-चित्त होकर उसी स्थान पर खड़ा रहा।

इसी समय सैय्यद मोहम्मद खां बलूच, जिसको सैय्यद खां या सैय्यदू भी कहा करते थे, अपने तीस–पैंतीस सवारों के साथ उनके समीप से भाग रहा था। इनमें से किसी एक सवार ने मुड़कर सूरजमल को पहचान लिया और वह सैय्यद (सेद्दू) के पास दौड़कर गया और चिल्लाकर कहने लगा— "अरे, कुछ आदमियों के साथ वहां जो व्यक्ति खड़ा है, वह सूरजमल के अलावा अन्य कोई नहीं है। मैं उसको अच्छी तरह पहचानता हूँ। क्या हमको इससे अच्छा अवसर मिल सकेगा हमको कुछ करना चाहिये। हमको आगे उसको देखने का मौका नहीं मिल सकेगा।" इन शब्दों को सुनकर सैय्यद स्वयं अपने सवारों के साथ पीछे की ओर मुड़ा और जाट अंगरक्षकों पर एकाएक आक्रमण कर दिया। रुहेलों ने मिर्जा सैफुल्ला, राजा अमर सिंह तथा अन्य दो–तीन अंगरक्षकों को तलवार के घाट उतार दिया। अन्य सवार घायल होकर अपने प्राण बचाकर मुख्य सेना की ओर भाग गये। सैय्यद प्रतिशोध की भावना से अपने घोड़े से उतरा और उसने सूरजमल के पेट पर अपना खंजर दो-तीन बार फेंककर मारा। इसके बाद अन्य दो तीन सवारों ने उसके ऊपर तलवारों से वार किया। जाट शासक की दाईं भुजा कटकर गिर गई और अन्त में वह धरा-शायी हो गया। उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर दिये गये। सैय्यद का एक सैनिक सूरजमल की कटी भुजा को अपने भाले की नोक में पताका की भांति उठाकर नजीबुद्दौला के पास ले गया।"[1]

---

१ – सियार, खण्ड ४, पृ० ३२।

—हरसुखराय (इ० डा०, खण्ड ८, पृ० ३६३) का कथन है— "दुर्भाग्यवश वह

इस युद्ध के बारे मे सैय्यद नूरुद्दीन लिखता है— "वह (सूरजमल) अनेक घावों से लोहू-लुहान होकर घोडे से नीचे गिर पडा। उसके कुछ अगरक्षक तथा पीरजादा शेख महमद (फतहपुर), जो उसका अति विश्वास पात्र सेवक था, काम आया। अन्य साधारण सवार भी खेत रहे। बाकी घटनास्थल से भाग निकले। उनका पीछा करने के लिए मुगलिया दल उधर चल दिये, किंतु अनेको जाट सैनिक अपने घोडो से उतरकर झाऊ की झाडियो मे जा छिपे। युद्ध के समय सय्यद मोहम्मद खा बलूच, जिसे सैयदू (सेहू) कहते थे, भागकर इन दलो मे शामिल हो गया था। करम खा रज्जर के एक रुहेला साथी ने कहा— "अरे, सैय्यद मोहम्मद खा कहा भाग रहे हो? सूरजमल यहा जमीन पर पडा है। मैं उसे पहचानता हू।" सैयदू घोडे से उतर पडा। सूरजमल ने बलूच जाति को अति अपमानित किया था और वे बदला लेने के लिए उतारु थे। इससे उसने कमरबन्धा से खजर निकाला और सूरजमल के पेट मे दो-तीन बार घोपा। दो तीन वारगीरो ने अपनी तलवारो से अनेक बार वार किया। फिर सैयदू ने उसके "सिर को उडाने" का आदेश दिया। तब पाच-छ: आदमियो ने तलवारो से सिर पर वार किये। इससे उसके सिर की कुट्टी हो गई। इसमें एक तलवार भी टूट गई थी। इसके बाद सैयदू वहा से लौट आया। मुगलिया दलों के हाथ अनेक घोडा लगे।"[१] इसी प्रकार नवाब समसामुद्दौला का मत है— "खान के एक जमादार ने उसको पहचान लिया और स्वजातीय एक सौ सवारो के साथ उस पर झपटा और मार कर भूमि पर लिटा दिया।"[२]

राजा सूरजमल के गोलोकवास का समाचार चारों ओर बिजली की भांति फैल गया था, फिर भी जाट शिविर में अनुशासन भग नही हो सका। उसके शरीर का कोई भी अग जाट सरदारों के हाथ नही लग सका। सयदू स्वय अपने सैनिको सहित शिविर मे लौटा और वह सूरजमल के प्राणान्त की शेखी बघारने लगा।

® अपनी एक तोपपक्ति की जाच करने के लिए मुख्य वाहिनी से काफी दूर निकल गया था।

—जाचीक जीवण (पृ० १५) के अनुसार— जब सूरजमल शत्रु सेना से घिर गया, तब उसने कहा— "अरे इसी समय फौज मे जाकर राव प्रताप सिंह नरुका को खबर कर दो।" किन्तु वहा कौन किसकी सुनने वाला था और कौन वहाँ राव प्रताप सिंह को जाकर समाचार देने वाला था। सूरजमल के आदेश पर जाट अगरक्षक शत्रु पर टूट पडे और सभी खेत रहे। अन्त में सूरजमल भी रणक्षेत्र में गिरकर स्वर्गलोकवासी हो गया।

१—नूरुद्दीन, पृ० ६८ ब-६६ ब।

२—म० उल उमरा, खण्ड १, पृ० १३०।

परन्तु जाट सेनायें यथावत रणक्षेत्र मे जम रही थी और हाथी पर निरन्तर निशान फहरा रहा था। धौंसा बज रहा था। इससे किसी ने भी उसकी घोषणा पर विश्वास नही किया। इसी प्रकार जाट शिविर में भी किसी न इस समाचार पर विश्वास नही किया। वहा यह समाचार जोर पकड रहा था कि सूरजमल (राजा) को शत्रु के अचानक आक्रमण से बचाने के लिए जसवत रेवारी ने अपन सिर पर राजसी कलगी धारण करके अपने प्राणो की आहुति दे दी है और महाराजा को कोई भी चोट नही आई है।[1] इसी प्रकार नजीब ने सैयद से कहा— "सूरजमल का प्राणान्त इतना सरल काम नही है, किन्तु पृष्ठ भाग से जिस सेना ने आक्रमण किया था, वह पराजित होकर अवश्य भाग गई है और उसका सरदार खेत रहा होगा। यदि सूरजमल वास्तव मे खेत रहा होता, तो बीस सहस्र सेना मैदान मे नही जमती। उनके सरदार सवार होकर लड रहे है और अपनी स्थिति सुदृढ बना रखी है।"[2] जाट सैनिक अपने सेनानायको की कमान मे पूर्ण उत्साह व उमग के साथ अपने-अपने स्थान पर जमे रहे और किसी ने भी अफवाह पर ध्यान नही दिया। जाट सेना के अनुशासन के बारे मे मीर गुलाम हुसैन लिखता है— "जाट सेना का अनुशासन श्लाघनीय था। सूरजमल की मृत्यु का समाचार मिलने पर भी जाट सैनिक विचलित नही हो सके। वे सभी अपने मोर्चों पर दृढता से जमे रहे, माना अभी तक कुछ भी नही हुआ था। नजीब की सेना के सामने मोर्चे पर तैनात सैनिक गोलिया चला रहे थे और उनके हाथी पर अभी तक झण्डा सीधा फहरा रहा था। रणवाद्य व नक्कारे बज रहे थे। रुहेला सैनिक भावी सकट की आशका से भयभीत होकर भाग निकले और अपने शिविरो म जाकर छिप गये थे।"[3]

सूर्यास्त से तीन घटा बाद दोनों ओर के सैनिक मैदान से हटकर अपने-अपने शिविरो मे वापिस पहुँच गये। नजीब अपनी सेना की व्यवस्था के लिए सारी रात मैदान मे ही जमा रहा और उसन वहा अपना डेरा डाल दिया था। मध्य रात्रि म जाट सैनिको न अपना शिविर शाति व व्यवस्था के साथ उठा लिया। प्रधान सेनापति बलराम नाहरवार ने कुवर नाहर सिंह सहित एक विजेता की भाति द्रुतगति से शाहदरा रणक्षेत्र को छोडकर जाट राजधानी-डीग की ओर कूच कर दिया। इसी समय कुछ सैनिक जवाहर सिंह के पास फर्रुखनगर की ओर चले गये और अन्यो ने नाहर सिंह के साथ राजधानी डीग मे २७ दिसम्बर को प्रवेश किया। दूसरे दिन

---

१ – मीरासियो के लोकगीत "अरे कोई म्हारो ऊट चरावत जसवत रेवारी" तथा लोक कथायें।

२ – नूरुद्दीन, पृ० ६९ ब-७० अ।

३ – सियार, खण्ड ४, पृ० ३२।

(२६ दिसम्बर) प्रात काल नजीबुद्दौला के हरकारो ने समाचार दिया कि ४८ किमी० तक जाट सेना का कोई भी चिह्न दिखलाई नहीं देता है। इस प्रकार जाट सेनापति ने अपने सैनिकों व साज-सामान को अपनी चतुराई से विनाश से बचा लिया। अब नजीब को भी विश्वास हो गया था और वह मैदान से हटकर राजधानी में वापिस आ गया।[1]

यथार्थ स्थिति की जाच तथा दिवंगत सूरजमल का पार्थिव शरीर

समकालीन इति-वृतों से स्पष्ट है कि जाट सम्राट सूरजमल के शरीर का एक अंग भी जाटों के हाथ नहीं लगा था। देहली क्रॉनीकल के अनुसार–"सैय्यद मोहम्मद खां बलूच सूरजमल की एक भुजा और सिर काटकर अपने साथ ले गया था और दो दिन तक अपने पास छिपाकर रखा। इसके बाद उसने इनको नवाब नजीबुद्दौला के सामने प्रस्तुत किया। तब सभी को पूर्णत विश्वास हो गया कि सूरजमल वास्तव मे मारा गया है।"[2] सैय्यद गुलाम हुसैन का मत है—" सैयदू का एक सवार सूरजमल की भुजा को ले गया और उसने नजीब के सामने भुजा प्रस्तुत की। नजीब अगले दो दिन तक यह विश्वास नहीं कर सका कि भुजा सूरजमल की ही है।"[3] इस घटना के बारे में सैय्यद नूरुद्दीन लिखता है— "जाट सेना के अचानक पलायन की सूचना मिलने पर नजीब ने सैय्यद मोहम्मद खां को बुलाकर पूछा कि उसने सूरजमल के शरीर को कहां छोड़ दिया था? उसने उसकी कुछ पहचान भी लाने को कहा। सैयदू ने सूरजमल की एक भुजा काट ली थी और वह उसे ले गया था।

नजीब ने सागरमल खत्री और करीमुल्ला को बुला कर पूछा कि बातचीत के समय उसने कौन से वस्त्र पहिन रखे थे। करीमुल्ला ने कहा — "उसने पीली छ का अंगरखा पहन रखा" था। सैयदू जब भुजा लेकर लौटा तब उसके हाथ पर वही छींट बतलाई गई। सागरमल ने कहा— "ठाकुर साहब की भुजा में विगत तीन वर्ष से छिनौरी हो गई थी और वह अभी भी है। मेरे सामने भुजा लाई जावे।" जब भुजा उसके सामने लाई गई, तब वह चिह्न उसमें मौजूद था, साथ ही छींट की आस्तीन भी। अब दिन का एक पहर शेष था।"[4] अब डा० न सूरजमल ने २५

१–वेण्डल, पृ० ८६-९०, दे० क्रॉनी०, पृ० १२६, बयाने वाकई, पृ० ३०५, नूरुद्दीन, पृ० ७० अ, बहार, पृ० ४५३, इमाद, पृ० १६४-२०५, मुन्नालाल, पृ० ७८-८५, कानूनगो, पृ० १५२ ३, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ३०४ ५।

२–दे० क्रॉनी०, पृ० १२६।

३–सियार, खण्ड ४, पृ० १२६।

४–नूरुद्दीन, पृ० ७० अ ब दे० क्रॉनी०।

दिसम्बर को स्वर्गलोकवास प्राप्त किया। सियार-उल-मुताक्रीन का लेखक भी इसी तथ्य को दोहराता है, उसके अनुसार सूरजमल की भुजा में बंधे ताबीज तथा मुलतानी छींट की आस्तीन को पहचान कर ही जाट शासक की मृत्यु को स्वीकार कर लिया गया था।[1] युद्ध के तीसरे दिन (२७ दिसम्बर) नजीब ने दिल्ली से अपने देश की ओर कूंच कर दिया और सिकन्दराबाद के पश्चिम में २४ किमी० सूरजपुर पहुँच कर डेरा डाला।[2]

एक मात्र देहली क्रॉनीकल का मत है कि सैय्यद मोहम्मद खां सूरजमल के सिर को अपने साथ ले गया था और दो दिन तक उसने अपने पास रखा। किन्तु अन्य लेखकों का विवरण अधिक उपयुक्त है। रुहेला सवार सूरजमल के धड़ को मैदान में ही छोड़कर भाग गये थे। अतः यह निश्चित ही है कि जाट मन्त्री या सेनापतियों ने उसके पार्थिव शरीर की अवश्य खोज कराई होगी, परन्तु घोर परिश्रम के बाद भी वे सफल नहीं हो सके और न दूसरे दिन ही नजीब को इसका पता चल सका। अतः यह सम्भव हो सकता है कि रुहेला सवारों ने उनके धड़ को भी तितर-बितर कर दिया था या भय के कारण किसी सैनिक ने उनको नदी में ले जाकर बहा दिया था। इस बारे में समकालीन कवि जुलकरन[3] का विवरण उचित ही है। वह लिखता है—

रंग राच्यो रणभूमि झूमि झूमि लड़्यो सूजा,
सग को सगोती लोग पीछे कों हटि गयो।
कहे "जुलकरन" अनल सो तातो भयो,
रातो भयो रूप छवि छोभ में पटि गयो।
टारे से टर्‌यो न ऐसो धरती समान रुप्यो,
तन टूक टूक तरवारन कटि गयो।
भेध रविमंडल को छेदि गयो परलोक,
सुरलोक द्वारेन को फाटक फटि गयो॥

सम्वेदना तथा संस्कार

रविवार, दिसम्बर २५, १७६३ ई०/पौष वदी ५, वि० सं०, १८२०/१६ जमादि दोयम ११७७ हि० को सूर्यास्त से कुछ समय पूर्व (लगभग ५ बजे) शाहदरा के मैदान में जाट सम्राट सूरजमल ने वीरगति प्राप्त की। उसकी मृत्यु पर उसके आश्रित जन, जाट राज्य के कवियों, विद्वानों ने कारुणिक सम्वेदना प्रगट की थी।

---

१ – सियार, खण्ड ४, पृ० १२१।
२ – दे० क्रॉनी०।
३ – कवि कुसुमांजलि, पृ० ३५।

जाट राज्य में इस समाचार से सर्वत्र मूर्च्छा छा गई। मीर बख्शी नजीबुद्दौला को भी भारी आश्चर्य व सन्ताप हुआ। उसने अपने पत्र में सम्वेदना प्रगट करते हुए लिखा— "ईश्वर (खुदा) साक्षी है, ये घटना ईश्वरेच्छा से घटी और दु:खद घटना भाग्य की विडम्बना मात्र थी। महाराजा सूरजमल एक महान व्यक्ति थे।" [१] सियार-उल-मुताखरीन का लेखक सैय्यद गुलाम हुसैन खां लिखता है— "यह मृत्यु एक विशेष महत्वपूर्ण घटना है। अब तक यह देखा गया था कि सूरजमल कभी युद्ध-क्षेत्रों में अपनी सेना को अनावश्यक खतरे में नहीं डालता था। वह स्वयं किसी सुरक्षित स्थान पर रहकर ही अपने सैनिकों के पास सन्देश भेजता था। उसका कहना था — 'युद्ध साहस या अग्र मोर्चे पर बढ़कर जीतने की चीज नहीं है, बल्कि विजय कूटनैतिक प्रयास व जन-समर्थन से मिलती है।" इस समय दुर्भाग्य ही था कि वह अपनी नीति तथा विश्वास को भूल गया और उस असुरक्षित स्थान पर अकेला ही खड़ा रह गया था, जहां उसका प्राणान्त हुआ। उसकी मृत्यु नजीब के उत्कर्ष की विजय थी, जिस पर किसी को भी विश्वास नहीं था।" [२]

कुंवर नाहर सिंह तथा प्रधान सेनापति बलराम नाहरवार की कमान में जाट सेनायें घटना के ३० घण्टा बाद २७ दिसम्बर को डीग पहुँच गईं और फिर नाहर सिंह कुम्हेर चला गया, जहां सूरजमल के अन्य पुत्र, बन्धु-बान्धव अपनी जागीरों से आ गये थे। जवाहर सिंह स्वयं ३६ घन्टे के बाद २९ दिसम्बर की रात्रि को डीग पहुँचा और ३० दिसम्बर को सामाजिक परम्परा के अनुसार मातमपुरसी के बाद जाट साम्राज्य की गद्दी प्राप्त की। [३] फिर दो दिन तक दिवंगत राजा के अंतिम संस्कार के बारे में विचार-विमर्श होता रहा। कहा जाता है कि इसी समय राज खजांची ने कोषागार से सूरजमल का एक दांत सौंप [४] दिया था। उसी दांत का गोवरधन में कुसुम सरोवर नामक स्थान पर अन्तिम संस्कार किया गया। जवाहर सिंह ने इसी स्थान पर अति भव्य, शालीन, कलात्मक छतरी का निर्माण कराया। यह स्मृति अद्यत जाट स्थापत्य कला की अनुपम देन है।

१५ – राजा सूरजमल का व्यक्तित्व तथा मूल्यांकन

जाट जाति के क्रमिक राजनैतिक इकाई के विकास तथा ऐतिहासिक संदर्भों के अध्ययन से स्पष्ट है कि हिन्दुस्तान में सहस्रों वर्षों के बाद १८ वीं शताब्दी के

---

१ – नजीबुद्दौला, पृ० ६९-७०।
२ – सियार, खण्ड ४, पृ० ३३।
३ – नूरुद्दीन, पृ० ७१ अ-७२ अ, वेण्डल, पृ० ९५, कानूनगो, पृ० १७२।
४ – दीक्षित, पृ० ६७।

पूर्वार्द्ध में जाट समाज मे एक दिव्य प्रतिभा के रूप मे सूरजमल ने जन्म लिया था, जिसने अपने अटूट आत्म-विश्वास, पराक्रम, दूरदर्शिता व नीति-निपुणता से समग्र जाट जाति को भारतीय इतिहास में एक राजनैतिक इकाई के रूप मे नव-जीवन प्रदान किया और स्वयं ने अपनी असाधारण प्रतिभा, बुद्धि-कौशल से इतिहास मे अपना महानतम स्थान बना लिया था। सूरजमल के जन्म तथा सत्कार्यों से अनेक शताब्दियो के बाद हरियाणा ब्रजमडल तथा अन्तर्वेद (दोआब) की विलुप्त भारतीय सभ्यता तथा सस्कृति का पुन विकास हुआ। वह अति प्रतापी, कुशल कूटनीतिज्ञ, अति उदार, चरित्रवान, रचनात्मक प्रतिभा-सम्पन्न शासक था, जिसकी सु-स्मृति समस्त जाट-क्षत्रिय समाज मे अभी तक विद्यमान है। फ्रेंच जॉन गोटलिब्ब कोहन के अनुसार— "सूरजमल एक शासक के सभी गुणो से समलकृत था।"[१] वास्तव मे "वह जाट जाति के नेत्रो का तारा और देदीप्यमान ज्योति नक्षत्र था।"[२] अपनी कल्पना का जाट राज्य स्थापित करने से पूर्व ही उसने पचपन वर्ष की आयु मे गौरव व गरिमा के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचकर रणक्षेत्र में परम वीर सुगति प्राप्त की थी। उसकी असामयिक मृत्यु के बाद जाट समाज मे आगे अन्य कोई प्रतिभावान्, सद्चरित्र जाट उत्तराधिकारी, जाट सरदार या लोकप्रिय नेता पैदा नही हो सका, जिसने उसके अपूर्ण राजनैतिक प्रयत्न, नीति तथा स्वप्नो को साकार रूप देने म सफलता प्राप्त की हो। सूरजमल ने लगभग तीस वर्ष तक जाट साम्राज्य का विस्तार तथा सघात्मक सगठन किया था और अन्तिम आठ वर्ष (१७५६-६३ ई०) तक सफल जाट राजा या लोकप्रिय नेता के रूप में जाट राज्य का उपभोग किया था।

सूरजमल अति प्रभावी, भारी भरकम सुडौल आकृति का व्यक्ति था। राजत्व उसके अग-प्रत्यग म आभासित होता था। मात्र आकृति को देखकर प्रत्येक व्यक्ति उसको राजा समझ सकता था। कद ठिगना, शरीर गठीला, कन्धा चौडे और भुजायें विशाल व मासल थी। वृद्धाकाल मे सु-गठित शरीर भारीपन की ओर झुकता चला गया था। रग साफ होने पर भी अग साँवला था। नेत्रो से तेज चमकता था। चेहरा पर मृदुलता, सरलता व सरसता, व्यवहार मे उदार-कुशलता थी और अति साधारण रहन-सहन आवास प्रवास था।[३] उसकी भौंहे काली, पलकें भारी, नासिका छिद्र फने हुए थे। गलमुच्छ थी और चौडे माथे पर कृष्णानन्दी तिलक अति सुशोभित होता था।" अपने लघुभ्राता राजा प्रताप सिंह की दरबारी शान-शौकत, वैभव, तडक-भडक, विलासिता को छोडकर वह स्वय एक साधारण जमीदार की

१ – जॉन कोहन, पृ० २० अ।

२ – सियार, खण्ड ४, पृ० २७।

३ – माधव विनोद, छंद ११, वेण्डल, पृ० ५१, कानूनगो, पृ० ६४, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ३०५।

भांति सामान्य अगरखा (जामा) पहनता [1] था, जिसकी तनियां बांधी जाती थीं। सिर पर पगडी बाघता था। उसमे एक शासक की भांति सिरपेच या सोने की कलगी, मोती-जवाहरातो की लडी लटकती थी। गले में अति कीमती कंठा और हीरा-जवाहरात की लडियां रहती थीं। पैरो में जूतियां पहनता था। कमर में कमरपट्टा बांधता था, जिसमे कटार व तलवार लटकती थी। [2]

वह प्रचलित शासकीय भाषा अरबी-फारसी या उर्दू की अपेक्षा केवल अपनी मातृ-भाषा काठेडी या ब्रज बोली [3] मे बातचीत करने में चतुर था। साधारण साक्षर होने पर भी अनुभवी विद्वानो के सत्सग या सानिध्य से उत्कृष्ट वैदिक विधि-विधान, रीति नीतियो का ज्ञाता था। सूक्ष्म पर्यवेक्षक, निश्चल भावी तथा चतुर राजनयिक था। ये सभी ईश्वर प्रदत्त वरदान थे। आध्यात्मक, दर्शन, काव्य इतिहास तथा प्रचलित नीति शास्त्र तथा सभी कलाओ के ज्ञाता तथा कलावन्तों के ससर्ग मे रहकर उसने विशद अनुभव व ज्ञान प्राप्त कर लिया था। उसकी स्मरण शक्ति व जिज्ञासा अलौकिक थी और राजनैतिक विचारधारा स्पष्ट थी। समकालीन लेखको ने आपको 'पंडित चारु विवेक', "चौदह विद्या निधान, धर्म-कर्म प्रवीण" माना है। [4] निसन्देह उसकी अभिव्यक्ति मे प्रवाह व चातुर्य्य था और वह जाट जाति का अफलातून [5] या प्लेटो [6] तथा सरताज [7] था।

अपने काल मे राजा सूरजमल अति चतुर राजनयिक, दूरदर्शी, प्रबल पराक्रमी, उत्कट वीर, गुणी, शिष्ट, सभ्य, शरणागत वत्सल, लोक व्यवहार कुशल, धर्मज्ञ, शिल्प व स्थापत्य कला पारखी, विद्यानुरागी तथा ललित कला, काव्य कला मर्मज्ञ तथा प्रेरक था। आकर्षक व्यक्तित्व, उन्नत स्वाभिमान, मानवता, सद्चरित्रता तथा उदार श्रेष्टता को आंक कर ही १८ वीं शताब्दी के प्रत्येक दरबारी इतिहासकार तथा साहित्यकार ने आपके प्रति सहज सम्पन्न भाव प्रगट किया है। सैय्यद गुलाम हुसैन खां के शब्दो मे— "उदात्त चातुर्य्य, दूरदर्शिता, योग्यता, तहजीब, दीवानी व आन्तरिक गृह प्रबन्ध पटुता, दिग्विजय (मुल्कगीरी) तथा प्रशासनिक प्रबन्ध (निजाम) के सर्वोत्कृष्ट ज्ञान मे उसके पूर्व या समकाल मे अन्य कोई हिन्दू राजा उसके समान

---

१ – इमाद, पृ० ५५।
२ – कुसुम सरोवर के भित्ति चित्र तथा अन्य दरबारी चित्र।
३ – इमाद, पृ० ५५।
४ – सोमनाथ, माधव विनोद, पृ० ६, अखैराम, सिंहासन बत्तीसी।
५ – इमाद, पृ० ५५, (अफलातून = यूनानी चिकित्सा का सस्थापक)।
६ – कानूनगो, पृ० ६५।
७ – सूदन।

नहीं था।"[1] इसी प्रकार मीर गुलाम अली के अनुसार— "अपने मुल्क (देश) की प्रशासनिक व्यवस्था (निजामी, दीवानी, राजस्व) प्रबन्ध में तत्कालीन हिन्दुस्थान के कुलीन पुरुषों में आसफजहा निजाम-उल-मुल्क से भी अधिक योग्य था। हिन्दुस्तान के राजा, जो सहस्रों वर्षों से अमीर (रईस) कहलाते थे, उसकी क्षमता के नहीं थे।"[2] सूरजमल ने अपनी सूझबूझ, शूरवीरता, यशस्विता तथा राजनयिकता से समस्त देश में अपनी धाक जमा दी थी। फ्रेंच लेखक फादर वेण्डल ने लिखा है— "वह (सूरजमल) अपने जन्म संस्कारों से अधिक चतुर, सफल राजनयिक, शूरवीर, एवं प्रतिभाशाली राजा था। विदेशी आक्रामक उससे भयभीत थे और पड़ोसी शत्रु भी उसकी कूटनीति के सामने झुक जाते थे। अन्यान्य पड़ोसी नवाब और हिन्दू जमींदार उसकी प्रशंसा करते थे और उसके साथ ही उसकी अपार सैनिक सत्ता से भयभीत रहते थे।"[3] एक समकालीन मुस्लिम यात्री ने उसको 'हिन्दुस्तान का अन्तिम हिन्दू सम्राट' लिखा है।

इस प्रकार के लोकप्रिय जीवन्त वीर की असामयिक मृत्यु के बाद अनेक कवियों ने भावावेगाकुल काव्यात्मक श्रद्धाञ्जलियां अर्पित की थीं। वास्तव में इन लेखकों का मानस स्वतः फूट पड़ा था। १८ वीं शताब्दी के मध्यकाल में सूरजमल का साम्राज्य की तत्कालीन राजनीति तथा प्रशासन में अति महत्वपूर्ण हस्तक्षेप था। सैनिक निपुणता, कुशाग्रता, नेतृत्व सम्पन्नता के कारण ही उसमें राजनैतिक कार्यों की कुशलता, राजनैतिक तथा आर्थिक सन्धियां एवं शांति-समझौता में भारतीय समाज तथा जाट राज्य को हितकारी उपलब्धियां प्रदान कराने की क्षमता थी। सभी युद्ध-क्षेत्रों में धैर्य, निपुणता से सैन्य संचालन करके विजय प्राप्त करने की दूरदृष्टि, चातुर्य्य तथा नेतृत्व सम्पन्नता श्लाघनीय थी। सूरजमल ने "लूट तथा एकता" के आधारभूत सिद्धान्त तथा लोक प्रचलित परम्परा पर विकसित "कौमी पंचायत" या अल्प जन शासित दुर्ग व पाल इकाईयों को अपने राज्य में मिलाकर विशाल सम्पन्न जाट राज्य की स्थापना की थी और महान यश, सम्मान तथा कीर्ति-प्राप्त कर ली थी। उसने समाज को स्थाई शांति व सुरक्षा प्रदान की थी।

सूरजमल का जीवन एक आदर्श था। सर्वोच्च सत्ता सम्पन्न तथा यश सम्पन्न होने पर भी वह अपने आपको "एक सामान्य जमींदार या किसान" मानता था और कहलाने में गौरव अनुभव करता था। उसमें अपने पिता तथा वृद्धजनों के प्रति अटूट प्रेम, श्रद्धा तथा पितृ भक्ति थी। जीवन पर्यन्त आज्ञाकारिता तथा कर्तव्य-

---

१ – मिफार, खंड ४, पृ० २८।

२ – इमाद, पृ० ५५।

३ – वेण्डल, पृ० ५१, कानूनगो, पृ० १५३, सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ३०६।

परायणता का परिचय देकर अपने परिवार के अन्य भाई-बन्धुओं का असीम प्रेम, ममत्व उपार्जित करने में सफलता [१] प्राप्त कर ली थी। सूरजमल ने अपने पिता की भांति अनुरक्त होकर अपने रनिवास में अगणित रानियों का वरण नहीं किया था, फिर भी उसमें अपनी पत्नियों के प्रति संयत अनुराग था और प्रायः इनमें से कई एक राजनैतिक, सामाजिक तथा धार्मिक कार्यों में हाथ बटाती थी। पूर्ण सहयोग देती थी। कुम्हेर घेरा (१७५४ ई०) के समय रानी हसिया ने अपनी सूझबूझ तथा राजनैतिक कुशलता का सफल परिचय दिया था [२] और उसके सतत् प्रयत्नों नीति निपुणता, आत्म-विश्वास से ही सूरजमल मराठों के साथ समझौता करने में सफल रहा था। आन्तरिक गृह-संघर्ष को टालने में और पानीपत संग्राम के बाद रानी हसिया ने मराठों की सेवा करके सहृदयता व मानवता का परिचय दिया था।

सूरजमल में सादगी, अनुराग, मित्र स्नेह तथा मित्र भक्ति विद्यमान थी। अपार सम्पत्ति तथा प्रशिक्षित सैन्य बल का स्वामी होने पर भी वह सवाई जयसिंह के दशहरा दरबार में उपस्थित रहता था। उसने एक सम्मानीय राव या जागीरदार की भांति कछवाहा शासकों के प्रति उदार निष्ठा भाव प्रगट करके राज्य की पश्चिमी सीमाओं को संघर्ष से सुरक्षित कर लिया था। सम्भवतः अलवर विजय के बाद उसको सवाई माधो सिंह से कुछ सन्देह होने लगा था। सवाई माधो सिंह तथा शाह दुर्रानी के बीच चले गुप्त पत्र-व्यवहार का सूरजमल को पूर्ण आभास था और शाह दुर्रानी जाट शक्ति तथा सत्ता को निर्बल करने के लिए कछवाहों को अपना हथियार बनाना चाहता था। इसी लिए सतर्क जाट शासक ने कछवाहों के प्रति उपेक्षा प्रदर्शित करने का प्रयास किया था। [३]

उसकी चमकीली आंखों में किसी का चेहरा देखकर लक्षण निरुपण की विलक्षण क्षमता थी और व्यक्ति के मानवीय गुणों की परख करने की चतुराई थी। वह वीरों, नीति-निपुणों, गुणियों का अति सम्मान करता था। स्वजातीय सद्भाव साहस, दृढ़ आत्मविश्वास तथा कडवाहट को आत्मसात करने की क्षमता के कारण ही उसने अपने जीवन में कभी पराभव या पराजय [४] स्वीकार नहीं की थी। गोहद के जाट राणा, भदौरिया राजपूत शासक, कछवाहा, राठौड़, मराठा तथा फर्रुखाबाद के नवाब तथा वजीर इमादुलमुल्क के साथ मित्रता निभाने में सफलता प्राप्त की थी।

---

१ – सोमनाथ, सूदन तथा अखैराम साहित्य।
२ – भाऊ बखर, सं० ६, पृ० ५।
३ – वेण्डल, सरकार (मुगल), खण्ड २, ३०६।
४ – इमाद, पृ० ५५।

कौमी मजलिस, बन्धु-बान्धवो, कुटुम्बियो के प्रति सौहार्द प्रेम भाव रखा और संरक्षण की भावना को उदारता के साथ निभाया। वजीर इमादुल्मुल्क जाट जन शक्ति व जाट सत्ता का परम शत्रु था, फिर भी सकट में समय भयभीत होकर उसने जाट शासक के दरबार मे शरण ली थी और सूरजमल ने उसको सरक्षण प्रदान करके उसकी तथा उसके परिवार की जीवन रक्षा की थी। "शत्रुता की भावना" को त्याग कर पदच्युत शाही वजीर था उसके पद तथा सम्मान के अनुरूप आदर-सत्कार किया था और अति बलशाली अहमदशाह दुर्रानी तथा नजीबुद्दौला से रक्षा करके उसको अपने राज्य म उसके अनुरूप निवास तथा खासा जागीर व अन्य सुख सुविधायें प्रदान कर दी थीं।

सवाई माधोसिंह से भयभीत माचेड़ी के राव प्रताप सिंह नरुका को भी सहज भाव से सरक्षण प्रदान किया और उसको खासा खर्च में डहरा नामक गांव जागीर मे दिया। उसने दुर्रानी के भय से भाग कर आये वरिष्ठतम शाही अधिकारियो को अपने राज्य म शरण दी और उनको शाह दुर्रानी को सौंपने से मना कर दिया था। उससे सदाशिव राव भाऊ के समान हठ, मन्द बुद्धिमत्ता या अदूरदर्शिता नही थी। पानीपत सग्राम के बाद विपन्न, त्रस्त, भगोड़ा मराठा सरदार तथा सैनिकों की भारी सेवा की थी और उनके पद व प्रतिष्ठा के अनुरूप सत्कार करके भारतीय भावना उजागर की थी। "महान सघर्ष और घोर विपत्ति तथा विषम परिस्थितियो में उसमे राजनैतिक प्रबन्ध पटुता, मार्ग अनुसधान की प्रतिभा तथा चातुर्य्य कला थी। इस काल मे नजीबुद्दौला के अलावा अन्य किसी भारतीय शासक मे इतनी पटुता नहीं थी।"[1] व्यवहारिकता में नजीबुद्दौला ने अहमदशाह दुर्रानी की फौजी सहायता से देश का विनाश किया और सूफी सन्त शाह वली उल्लाह की प्रेरणा से कट्टर मुस्लिमवाद का सहारा लिया था। सूरजमल नजीब की समता से कही अधिक योग्य उदार व नीत्ति निपुण था। "मुगल साम्राज्य का पतन होने पर भी उसने अपने आपको महान बना लिया था। हिन्दुस्तान मे अन्य कोई शासक इतना भाग्यशाली नही था।"[2]

सूरजमल की मानवता तथा नैतिकता मे पूर्ण आस्था थी। उसने कौमी गुणो से अधिक अपने व्यक्तिगत जीवन मे नैतिकता को उच्च माना था। उसकी न्यायिक कीर्ति, सुख-समृद्धि, सह अस्तित्व और धर्म निरपेक्षता की भावना, प्रशासनिक चतुराई, प्रजाहित की दक्षता तथा प्रबन्ध पटुता ने सभी जाति, प्रजाति, वर्ण, वर्ग, सम्प्रदाय के सेठ साहूकार, सर्राफ-व्यापारी, दूरस्थ मजदूर, कारीगरों को अपने

---

१ – नजीबुद्दौला, पृ० ५६।
२ – सरकार (मुगल), खड २, पृ० ३०६।

राज्य में आकर बसने के लिए आकृष्ट कर लिया था। हिन्दुस्तान में ह्रासोन्मुख मुगल तथा राजपूत राजधानियों में केवल जोर जबरदस्त जाट राज्य ही शेष था, जहां जो धर्म, न्याय, शांति-सुरक्षा व व्यवस्था प्रतिष्ठापित थी।[१] इस आकर्षण से ही जाट नगर अति शीघ्र ही आबाद हो गये थे और इन नगरों में सम्पन्नता, और समृद्धि विलास करने लगी थी। उनके लोक-व्यवहार मे संयम था और जीवन में आराम या विलासिता का अभाव था। बचपन से ही साहसिक कार्यों के प्रति मोह के कारण कठिन से कठिन समय तथा भयकर प्रसगो मे उसने धैर्य को नहीं छोड़ा। वह जीवन-पर्यन्त खतरो से खेलता रहा और राजनैतिक भविष्य को सदैव दाव पर लगाता रहा।

सूरजमल के व्यक्तिगत जीवन मे आलस्य तथा अकर्मण्यता का अभाव था। उसने फौजी सगठन तथा अनुशासन मे कुशलता व कठोरता दिखलाई। वह स्वयं सधे सवारों के साथ नियमित कवायद-परेड करता था और सैनिको को अनुशासन में रहने की शिक्षा-दीक्षा देता था।[२] रणक्षेत्र मे युद्ध सचालन, सामान्य अवसरों पर मल्ल-युद्ध तथा शिकार[३] खेलने का अति शौकीन था। उसकी निजी कमान मे *स्वामिभक्त, धर्म तथा राष्ट्र निष्ठ, अति पराक्रमी सरदार व सवार* थे और उन्होंने सदैव सूरजमल का साथ दिया था। सैय्यद गुलाम हुसैन खां के शब्दों में— "उसकी अनुशासित व सगठित सेना थी। महान आपत्ति और शत्रुओं के आक्रमणों से अपनी सेना, जमींदार तथा प्रजा की रक्षा करने की सहज साहसिक योग्यता थी। शाही वजीर या मीर बख्शी, मराठा तथा दुर्रानी ने विशाल सेना के साथ जब भी उसके देश पर आक्रमण किया तब वह फौजो सघर्ष को टालने के लिए ही अपनी सेना, सरदार तथा प्रजा के साथ अपने सुरक्षित दुर्गों मे चला गया था। उसने आक्रान्ताओं से यथासभव राज्य तथा प्रजा की रक्षा की और फौजी दबाव मे आकर शत्रु को कभी युद्ध-क्षति की राशि का भुगतान भी नहीं किया था। उसमे सैनिक उत्साह था। उसने वजीर सफदर जग के साथ मिलकर रुहेला पठानों के साथ सघर्ष किया था। उनको एक-एक करके या मित्र-सघ के रूप मे पराजित किया था और प्रत्येक रणक्षेत्र मे विजेता कहलाने मे सफल रहा।"[४]

उसने राज्य-रक्षा के विशेष प्रयत्न किये थे और सीमा त, प्रदेशो मे नवीन गढ़िया तथा दुर्गों की मरम्मत कराकर चौकी व थाने स्थापित कर लिये थे। उसके

---

१ – कानूनगो, पृ० ६०।
२ – सियार, खण्ड ४, पृ० २८।
३ – सोमनाथ, सूदन साहित्य।
४ – सियार खड ४ पृ० २८।

राज्य में बिना पूर्व अनुमति के कोई भी सेनानायक अपने सैनिक दस्तों के साथ प्रवेश नहीं कर सकता था। सीमान्त चौकियों पर पूर्ण सतर्कता बरती जाती थी। जीन लॉ के संस्मरणों से स्पष्ट हो जाता है कि मार्च, १७५८ ई० में फ्रेंच सेनानायक जीन लॉ ने जाट सीमाओं में होकर दिल्ली की ओर प्रस्थान किया था। जब उसने परगना अतरौली में प्रवेश किया, तब रामगढ़ अतरौली के किलेदार राव दुर्जन सिंह ने २२ मार्च को उसके जाट राज्य में प्रवेश पर आपत्ति की और जब तक उसको नियमित प्रवेश की आज्ञा नहीं मिलती, रुकने का आग्रह किया। किन्तु अनुशासित तथा नवीनतम युद्ध-कला में निपुण सैनिकों के घमण्ड में चूर होकर फ्रेंच सेनानायक ने प्रातःकाल कूच करके काली नदी पर डेरा डाल दिया। एक हरकारा ने उसको जाट शासक के निर्देश पर पुनः चेतावनी दी और २४ मार्च को राव दुर्जन-सिंह ने उसको पुनः सूचित किया कि उसने राज्य की सीमाओं में बिना नियमित सुरक्षा शुल्क भुगतान के प्रवेश किया है। अतः जाट दरबार ने उसको बन्दी बना लेने का आदेश दिया है। इसके साथ ही समीपस्थ इलाके के जाट सैनिकों ने उसको गिरफ्तार करने के लिए सैनिक बल का प्रयोग किया और उस पर तोपें चलाकर हमला कर दिया। जाट अश्वारोहियों ने उसकी छावनी को घेर लिया। दिन भर दोनों में संघर्ष चला। यद्यपि जाट सवार फ्रेंच जनरल को बन्दी बनाने में विफल रहे, किन्तु उसे राज्य की सीमाओं से खदेड़ने में सफलता प्राप्त कर ली।[१]

जीन लॉ को दिल्ली में अपने भाग्य निर्माण का उपयुक्त अवसर नहीं मिल सका, इससे उसको जाट राज्य में होकर पुनः वापस लौटना पड़ा। इस बार उसने अपनी सुरक्षा के लिए मराठा टुकड़ी का सहयोग प्राप्त कर लिया था और वह जाट राज्य की सीमाओं से बिना किसी गतिरोध के निकल गया। फिर भी मार्ग में कुछ लुटेरों ने उसकी छावनी को अवश्य लूट लिया था। राजा सूरजमल ने इस बार उसके पास पत्र भेजकर लिखा कि राव दुर्जन सिंह ने उसके साथ जो अभद्रता की थी, उसके लिए उसने क्षोभ प्रगट किया और उसको इसका दण्ड भी दिया गया है।[२] जीन लॉ के इन संस्मरणों के आधार पर डा० गौरी शंकर वशिष्ठ ने यह सम्भावना व्यक्त की है कि सूरजमल जीन लॉ की सेवायें प्राप्त करके अपनी सेनाओं को यूरोपियन युद्ध-कला तथा सैनिक अनुशासन की नवीनतम विकसित रीति पर प्रशिक्षित करना चाहता था।[३] किन्तु अन्य लेखकों के विवरणों से स्पष्ट है कि

---

१ – जीन लॉ, पृ० ३१२-३, ३२१-३२२,

२ – जीन ला, पृ० ३४७।

३ – रिलेशन्स विथ दी ईस्ट इंडिया कम्पनी एण्ड भरतपुर, १७६१-१८२६, पृ० ५३।

सूरजमल की सेना मे कोई भी विदेशी नहीं था [1] और न सूरजमल विदेशियो को अपनी सेना मे भरती करके देशस्थ सैनिकों की प्रतिभा को कुंठित ही करना चाहता था। अतः डा० वशिष्ठ की सम्भावना अधिक उपयुक्त नहीं है।

सूरजमल की नीति निपुणता को नव्य विकसित सामाजिक व्यवस्था पर गहरी छाप थी। मुगलिया सभ्यता व संस्कृति का अल्हड जाट किसानो पर शनैः शनैः गहरा प्रभाव पड़ा था। मुख्यतः दुर्रानी के भय से भयभीत दिल्ली के अमीरों, सुसंस्कृत नागरिको और धनी-मानी लोगो ने काठेड राज्य मे शरण लेकर इस जनपद के जमींदारों व जाट समाज व सस्कृति, रहन सहन, खानपान, पहनाव, दरबारी तौर तरीको को अति प्रभावित किया था।

प्रत्यक्ष अनुभवो के आधार पर वेण्डल का कथन है— "नि.सन्देह सूरजमल अपने आपको अति भाग्यशाली समझता था कि उसने सुसंस्कृत वजीर, शाही अमीरो व सभासदो को अपने यहां आश्रय दिया, इससे अल्हड किसान समाज मे क्रान्तिकारी सामाजिक परिवर्तन आने लगा था। अब जाट किसान व जमींदार यह अनुभव करने लगे थे कि एक सम्पन्न किसान और मुगल राजधानी के शिष्टजनों, सुसस्कृत निवासियो के रहन-सहन, बोलचाल, चाल-ढाल, खानपान मे अति असमानता है। इससे उनके रूढिवादी व्यवहार, अक्खडपन में भारी परिवर्तन दिखलाई देने लगा था। वे यह अनुभव करने लगे थे कि पैसों को केवल स्वादिष्ट व पौष्टिक भोजन पर व्यय करने या अतिरिक्त द्रव्य को जमीन में गाडने की अपेक्षा उसका अन्य तरीको से भी उपभोग किया जा सकता है। इससे पूर्व जोर-तलब जाटों को आगरा व दिल्ली नगरो की सस्कृति व सभ्यता का ज्ञान अवश्य था और उन्होंने इन नगरों के अमीरो के षडयन्त्रो, मक्कारी, कूट-भाषा व कुटिल राजनीति को भली भांति समझ लिया था जिनमे प्रतिस्पर्धा भी थी, किन्तु वजीर व अन्य जनों के जाट राज्य में आ जाने से डीग, कुम्हेर, भरतपुर के दुर्गो मे दिल्ली की राजनीति, सुख-समृद्धि, सम्पन्नता निवास व विलास करने लगी थी और जाट समाज की सस्कृति व सभ्यता मे परिवर्तन आने लगा था। मैं स्वयं उन शरणागतों के बीच मे जाट दुर्ग में मौजूद था और मैंने स्वयं यह देखा कि इन व्यक्तियों के सम्पर्क से काठेड जनपद की रीति-रिवाजो, रहन सहन, खानपान, पहनाव, बोली, भाषा तथा, भवन निर्माण शैली मे भारी परिवर्तन आ गया था।"

सूरजमल राजपूत तथा मुगल दरबारों की शिष्टता, शालीनता, चमक-दमक तथा व्यवहारिकता से पूर्णतः परिचित था। उसने अपने दरबार मे सुयोग्य हिन्दू-

---

१ – वेण्डल, पृ० ६५।

मुस्लिमों को सम्मानित किया था। आचार्य शिवराम को उनके काव्य "नवधा भक्ति राग रस सार" पर छत्तीस सहस्र मुद्रायें प्रदान [1] की थी। अन्य साहित्यसेवी आचार्य सोमनाथ, सूदन, अखैराम, मुहम्मद बक्श "आसोब", सैय्यद नूरुद्दीन हसन आदि ने उसके दरबार मे रहकर काफी सेवायें की थी और पर्याप्त "धन व धरती" प्राप्त की थी। उसमे एक राज्य तथा जन-सभा के परामर्श पर काम करने वाले राष्ट्र प्रतीक प्रधान की भावना थी और जाट राज सत्ता राष्ट्रीय भावना की प्रतीक थी। उसका एकाधिकार या एकतन्त्री शासन प्रणाली से इतर लोकतन्त्रात्मक सघ शासन की नीति मे अधिक विश्वास था, परन्तु पडौसी शासको की धर्म-मदान्धता, व्यक्तिगत स्वार्थ के कारण सघ शासन का प्रस्ताव विफल रहा। उसने सामाजिक एकता, आर्थिक विकास, औद्योगिक व सास्कृतिक प्रगति मे अति रुचि ली थी। उसके संरक्षण मे अनेक हिन्दू धार्मिक, वैदिक तथा दार्शनिक ग्रन्थ, पौराणिक आख्यान, नाटक या ख्यालो का सरस व सरल ब्रजभाषा में अनुवाद किया गया था। इससे ब्रजभाषा साहित्य मे अति वृद्धि हुई थी।

वह स्वय वैष्णव धर्म का कट्टर अनुयायी, पालक व समर्थक था और श्री हरिदेव जी उसके निजी इष्ट देव थे। राष्ट्र ध्वज तथा राज-मुद्रा मे "श्री हरिदेव जी" अक विद्यमान था। प्रत्येक युद्ध से पूर्व व बाद में, प्रतिवर्ष कार्तिक अमावस्या तथा अन्य हिन्दू त्योहारों पर वह सदैव श्री गोवर्धन की नियमित पूजा करता था। उसने ब्रज के पुनीत तीर्थ मथुरा, वृन्दावन, गोकुल, गोवर्धन, नन्दगांव, बरसाना आदि मे नवीन निर्माण-कार्य तथा पुनरोद्धार कराकर भारतीय सस्कृति को सरक्षण प्रदान किया था। पुनश्च राजधर्म अति उदार तथा शासन मे धर्म-निरपेक्षता, धार्मिक सहअस्तित्व व्याप्त था। राज सेवाओ मे जातिगत, सम्प्रदायगत भेदभाव नही था और अनेक लोग उसके विश्वासपात्र सेवक थे। इस प्रकार वह अन्य भारतीय हिन्दू-मुस्लिम शासको से अधिक उदार था। उसने पेशवा की मुस्लिम पत्नी के उदर से उत्पन्न पुत्र की स्मृति मे मजार, मस्जिद, कुआ तथा सराय का निर्माण कराकर धार्मिक उदारता प्रगट की थी।

प्राचीन भारतीय नरेशों की भाति दरिद्री तथा अपाहिजो के प्रति अति सहृदय, दान-पुण्य करने मे उतना ही उदार जितना अपव्यय को रोकने में दक्ष व उत्सुक, विरोधियो की उत्तेजनात्मक प्रवृत्तियो को सहज स्वभाव से सहन करके रण-भूमि या कूटनीति के अखाडे में अन्य भारतीय शक्तियो से अधिक गूढ तथा विवेक-शील था। षडयन्त्र या कूट प्रबन्धों में धोखेबाज मुगल तथा चालाक मराठा-दोनों

---

१ - शिवराम, नवधा भक्ति राग रस सार।

ही राजनैतिक शक्तियों ने उससे पराजय स्वीकार कर ली थी। वास्तव में वह उस अप्रमत्त चिड़िया की भांति था, जो अपने घोसला के लिए सहयोगियों के घोसलों से तिनका बीनकर उड़ जाती थी, लेकिन कभी उनके जाल में नहीं फसती थी।[१] वह सम्राट औरंगजेब की भांति छल कपट से भी काम निकालता था। जाट साम्राज्य के विकास तथा विस्तार, न्याय की प्रतिष्ठापना, जन-हित की रक्षा में उसकी निपुणता ही नहीं चालाकी तथा सिद्धान्तहीनता भी थी। आगरा तथा फर्रुखनगर के किलों पर अधिकार करने में उसने 'वचन देकर" भी उनका पालन नहीं किया था। वह आन्तरिक व्यवस्था में अति कठोर था और अपने राज्य में किसी विद्रोह, गृह-संघर्ष को स्वीकार नहीं कर सकता था। उसने अपने सहोदर भ्राता राजा प्रताप सिंह के विरोध को नहीं स्वीकारा और अपने ज्येष्ठ पुत्र जवाहर सिंह के विद्रोह को शक्ति से कुचल दिया था। इसी प्रकार ठेनुआ सरदारों के विद्रोह तथा विरोधी कार्यवाहियों का दमन किया और बाद में उनको हाथरस, मुरसान तथा समीपस्थ परगनों की प्रशासनिक व्यवस्था भी सौंप दी थी। उसने साथ ही भदौरिया, सिकरवार, पौरच राजपूतों की शक्ति का भी दमन किया और उनको अधीनस्थ जमींदार की भांति जाट दरबार के निर्देशों को स्वीकार करने के लिए बाध्य कर दिया था।

नियमित युद्धों तथा कूटनयिक समझौतों में व्यस्त रहने पर भी सूरजमल ने राज्य के प्रबन्ध में सम्यक् सफल रुचि ली थी। उसने एक साधारण, अविकसित जमींदारी को अति लाभकारी राज्य के रूप में गठित किया था और मुगलकालीन परगनों (मुहाल) के क्षेत्रफल में पर्याप्त अदला-बदली करके उनको भू-राजस्व प्रबन्ध की दृष्टि से पुनर्गठित किया था। फादर वेण्डल के अनुसार— "उसने राजस्व वृद्धि के बाद भी अपने व्यय को सीमित कर लिया था और कुछ वर्षों के बाद वह अपनी आय का आधा भाग बचत खाते में रखने लगा था।" फौजी प्रतिष्ठान, नवीन सुदृढ़ दुर्ग, भव्य राज-महल, डीग के विख्यात जल महल तथा उद्यानों के निर्माण पर सूरजमल ने अपार द्रव्य व्यय करने के बाद भी अपनी राजधानी के कोषागार में प्रतिवर्ष अपार धन-संग्रह कर लिया था। प्रारम्भ में जाट जमींदार लूट के लिए विख्यात थे, लेकिन सूरजमल की मृत्यु के समय वे सर्वाधिक शक्तिशाली व अर्थ सम्पन्न थे और उन्होंने भारत में कीर्ति पताका फहराकर राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की थी। सैय्यद गुलाम हुसैन खां के शब्दों में— "परन्तु वह (सूरजमल) अपने देश की सीमाओं के विस्तार के लिए अति लालची था और उसने सदैव अपने पड़ोसियों की

---

१ – सियार, खण्ड ४, पृ० २८।

भूमियों पर शक्ति से कब्जा किया था।"[१] यथार्थ रूप में पड़ौसी जमीदार मुगल शासकों के प्रति उत्तरदायी थे, लेकिन साम्राज्य की कमजोरी का लाभ उठाकर वे स्वतन्त्र या अर्द्ध-स्वतन्त्र हो गये थे और उन्होने शाही जागीर तथा परगनों पर कब्जा कर लिया था।

"[१] सूरजमल ने पड़ौसी जमींदारों तथा सरदारों को उनकी वतन जागीरों से बेदखल करके बाहर नहीं निकाला, केवल अपना स्वामित्व स्वीकार करने तथा जाट शासन को नियमित भू-राजस्व कर भुगतान करने के लिए बाध्य कर दिया था। इस प्रकार यह सूरजमल का चारित्रिक दोष नहीं था। इसी संदर्भ में फादर वेण्डल ने भी उसके चरित्र में "कृपणता" का दोष देखा था। उसने लिखा— "अभ्युदय के शिखर पर पहुँचने पर भी जाट शासक ने अपने राज्य मे लुटेरा समूह को सेवा में रख लिया था और वह उनके लूट के माल से हिस्सा लेता था। अपने व्यय मे कंजूसी दिखलाता था। उसके कुटुम्ब को निर्धनता में दिन काटने पड़ते थे और सेना का बहुत सा वेतन चढा था।"[२] फादर वेण्डल यह भूल गया था कि सूरजमल एक जमीदार का पुत्र था और उसने जमीदार से राजा का विरुद धारण किया था। राज्य की स्थिरता तथा सुदृढ़ता के लिए एक स्थाई-कोष के सिद्धान्त की पालना अति आवश्यक थी। इस युग मे फौजो को वेतन देर से भुगतान करने का एक साधारण नियम था। दिग्विजय की सफलता के लिए उपद्रवी तथा लुटेरा या हुल्लड़-बाज सैनिकों को सरक्षण प्रदान करना आवश्यक था और इस युग का यह फौजी सिद्धान्त था। अतः सूरजमल इसका अपवाद मात्र नहीं था।

जाटों की कूटनैतिक सफलता मे राव हेमराज व राव रूपराम कटारा के महत्व को भूलना एक भारी अक्षम्य अपराध होगा। वह एक महान मंत्रदाता था। उसकी कुशाग्रता, देशप्रेम, कूट प्रयासो का ही परिणाम एक नवीन राष्ट्र के उद्‌भव का कारण था।

सूरजमल अति लोकप्रिय शासक तथा जन-नेता था। आर्थिक शोषण व उत्पीड़न, लूट व युद्ध, अन्याय व गरीबी के विरुद्ध "कौमी मजलिस" ने रैय्यत में जिस राष्ट्रीय चेतना शक्ति, मातृ प्रेम की भावना पैदा की थी, सूरजमल ने उस चेतना तथा भावना को एक स्थाई ऐक्य शक्ति में स्थिर कर दिया था। उसने जनता की भावना को जीत लिया था और उसमे नई आशा, जोश, आत्म-विश्वास, राष्ट्रीयता तथा मातृभक्ति की भावना उभर कर आई थी। राज्य की समस्त जनता और राज्य

---

१ – सियार, खण्ड ४, पृ० २८।

२ – वेण्डल; सरकार, खण्ड २, पृ० ३०७।

ही राजनैतिक शक्तियो ने उससे पराजय स्वीकार कर ली थी। वास्तव में वह उस अप्रमत्त चिड़िया की भांति था, जो अपने घोसला के लिए सहयोगियो के घोसलो से तिनका बीनकर उड जाती थी, लेकिन कभी उनके जाल में नही फंसती थी। [१] वह सम्राट औरगजेब की भांति छल-कपट से भी काम निकालता था। जाट साम्राज्य के विकास तथा विस्तार, न्याय की प्रतिष्ठापना, जन-हित की रक्षा मे उसकी निपुणता ही नही चालाकी तथा सिद्धान्तहीनता भी थी। आगरा तथा फर्रुखनगर के किलो पर अधिकार करने मे उसने "वचन देकर" भी उनका पालन नही किया था। वह आन्तरिक व्यवस्था मे अति कठोर था और अपने राज्य मे किसी विद्रोह, गृह-संघर्ष को स्वीकार नही कर सकता था। उसने अपने सहोदर भ्राता राजा प्रताप सिंह के विरोध को नही स्वीकारा और अपने ज्येष्ठ पुत्र जवाहर सिंह के विद्रोह को शक्ति से कुचल दिया था। इसी प्रकार ठेनुआ सरदारो के विद्रोह तथा विरोधी कार्यवाहियो का दमन किया और बाद मे उनको हाथरस, मुरसान तथा समीपस्थ परगनो की प्रशासनिक व्यवस्था भी सौंप दी थी। उसने साथ ही भदौरिया, सिकरवार, पौरच राजपूतो की शक्ति का भी दमन किया और उनको अधीनस्थ जमींदार की भांति जाट दरबार के निर्देशो को स्वीकार करने के लिए बाध्य कर दिया था।

नियमित युद्धो तथा कूटनयिक समझौतो मे व्यस्त रहने पर भी सूरजमल ने राज्य के प्रबन्ध मे सम्यक् सफल रुचि ली थी। उसने एक साधारण, अविकसित जमींदारी को अति लाभकारी राज्य के रूप मे गठित किया था और मुगलकालीन परगनो (मुहाल) के क्षेत्रफल मे पर्याप्त अदला-बदली करके उनको भू-राजस्व प्रबन्ध की दृष्टि से पुनर्गठित किया था। फादर वेण्डल के अनुसार— "उसने राजस्व वृद्धि के बाद भी अपने व्यय को सीमित कर लिया था और कुछ वर्षों के बाद वह अपनी आय का आधा भाग बचत खाते मे रखने लगा था।" फौजी प्रतिष्ठान, नवीन सुदृढ दुर्ग, भव्य राज-महल, डीग के विख्यात जल महल तथा उद्यानो के निर्माण पर सूरजमल ने अपार द्रव्य व्यय करने के बाद भी अपनी राजधानी के कोषागार मे प्रतिवर्ष अपार धन-संग्रह कर लिया था। प्रारम्भ में जाट जमींदार लूट के लिए विख्यात थे, लेकिन सूरजमल की मृत्यु के समय वे सर्वाधिक शक्तिशाली व अर्थ सम्पन्न थे और उन्होंने भारत मे कीर्ति पताका फहराकर राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की थी। सैय्यद गुलाम हुसैन खा के शब्दो में— "परन्तु वह (सूरजमल) अपने देश की सीमाओ के विस्तार के लिए अति लालची था और उसने सदैव अपने पड़ोसियो की

---

[१] – सियार, खण्ड ४, पृ० २८।

भूमियो पर शक्ति से कब्जा किया था।" [१] यथार्थ रूप मे पडोसी जमींदार मुगल शासको के प्रति उत्तरदायी थे, लेकिन साम्राज्य की कमजोरी का लाभ उठाकर वे स्वतन्त्र या अर्द्ध-स्वतन्त्र हो गये थे और उन्होंने शाही जागीर तथा परगनों पर कब्जा कर लिया था।

सूरजमल ने पडोसी जमीदारो तथा सरदारों को उनकी वतन जागीरो से बेदखल करके बाहर नही निकाला केवल अपना स्वामित्व स्वीकार करने तथा जाट शासन को नियमित भू-राजस्व कर भुगतान करने के लिए बाध्य कर दिया था। इस प्रकार यह सूरजमल का चारित्रिक दोष नही था। इसी सदर्भ मे फादर वेण्डल ने भी उसके चरित्र में 'कृपणता' का दोष देखा था। उसने लिखा— "अभ्युदय के शिखर पर पहुँचने पर भी जाट शासक ने अपने राज्य मे लुटेरा समूह को सेवा मे रख लिया था और वह उनके लूट के माल से हिस्सा लेता था। अपने व्यय मे कजूसी दिखलाता था। उसके कुटुम्ब को निधनता म दिन काटन पडते थे और सेना का बहुत सा वेतन चढा था।" [२] फादर वेण्डल यह भूल गया था कि सूरजमल एक जमींदार का पुत्र था और उसन जमीदार से राजा का विरुद धारण किया था। राज्य की स्थिरता तथा सुदृढ़ता के लिए एक स्थाई-कोष के सिद्धान्त की पालना अति आवश्यक थी। इस युग मे फौजो को वेतन देर से भुगतान करने का एक साधारण नियम था। दिग्विजय की सफलता के लिए उपद्रवी तथा लुटेरा या हुल्लड़-बाज सैनिकों को सरक्षण प्रदान करना आवश्यक था और इस युग का यह फौजी सिद्धान्त था। अत सूरजमल इसका अपवाद मात्र नहीं था।

जाटों की कूटनैतिक सफलता मे राव हेमराज व राव रूपराम कटारा के महत्व को भूलना एक भारी अक्षम्य अपराध होगा। वह एक महान मन्त्रदाता था। उसकी कुशाग्रता देशप्रम, कूट प्रयासो का ही परिणाम एक नवीन राष्ट्र के उद्भव का कारण था।

सूरजमल अति लोकप्रिय शासक तथा जन-नेता था। आर्थिक शोषण व उत्पीडन, लूट व युद्ध अन्याय व गरीबी के विरुद्ध कौमी मजलस ने रैय्यत मे जिस राष्ट्रीय चेतना शक्ति मातृ प्रम की भावना पैदा की थी सूरजमल ने उस चेतना तथा भावना को एक स्थाई ऐक्य शक्ति मे स्थिर कर दिया था। उसने जनता की भावना को जीत लिया था और उसमे नई आशा, जोश, आत्म-विश्वास, राष्ट्रीयता तथा मातृभक्ति की भावना उभर कर आई थी। राज्य की समस्त जनता और राज्य

---

१ – सियार, खण्ड ४, पृ० २८।

२ – वेण्डल, सरकार खण्ड २, पृ० ३०७।

के बाहर पड़ोसी उसका सम्मान करते थे। उसके जीवनकाल में ही जाटों की कीर्ति सर्वोच्च शिखर [1] तक पहुँच चुकी थी। विदेशी राष्ट्र भी जाट शक्ति के उत्कर्ष से भयभीत थे।

सूरजमल निःसन्देह भारतीय राजनैतिक क्षितिज का देदीप्यमान नक्षत्र था। सम्राट अकबर के शासनकाल में महाराणा प्रताप, शाहजहाँ काल में महाराजा जसवन्त सिंह राठोड, औरंगजेब शासन में छत्रपति शिवाजी और १८ वीं शताब्दी के प्रथम पूर्वार्द्ध में छत्रसाल बुन्देला, सवाई जयसिंह, महाराजा अजीत सिंह राठोड़ को भारतीय इतिहास में जो सम्मान व महत्व प्राप्त हो चुका था, वही इस शताब्दी के मध्यकाल में जाट राजा सूरजमल को प्राप्त था। सूरजमल ने अत्याचारों के विरुद्ध कृपाण चमकाकर एक स्वाधीन जन-सत्तात्मक कृषक प्रधान जाटेड साम्राज्य की स्थापना की थी और एक शताब्दी तक समग्र भारत में जाटों का राजनैतिक प्रभाव रहा। सूरजमल एक आदर्श व्यक्तित्व, अनुकरणीय शासक तथा अद्वितीय कृषक प्रधान राष्ट्र निर्माता था और उसके सद्गुणों के कारण ही भारत के महान राजनैतिक पुरुषों में उसकी गणना की जाती है।

---

[1] सरकार (मुगल), खण्ड २, पृ० ३०७।

संकेताक्षर एवं ग्रन्थ तालिका

अनु० = अनुवादक	ले० = लेखक
अंग्रे० = अंग्रेजी अनुवाद	सम्पा० = सम्पादक
प्रका० = प्रकाशन	संस्क० = संस्करण

(१) मौलिक अभिलेख

(अ) श्री नटनागर शोध संस्थान, सीतामऊ संग्रह

१-अखबारात (१७०७-२३ ई०) सीतामऊ संग्रह का वर्गीकरण—
- (१) सरकार संग्रह
- (२) अतिरिक्त फारसी अभिलेख
- (३) विविध लेख संग्रह
- (४) सम्राट मुहम्मद शाह शासन कालीन अखबारात, जि० ७
- (५) सम्राट फर्रुखसियर कालीन अखबारात

२-वकाये सरकार अजमेर व रणथम्भौर (इनायत उल्ला अहकाम), ले० इनायतउल्ला (मीर बख्शी तथा अखबार नवीस)

प्रतिलिपि—(१) सीतामऊ तथा
(२) हिस्ट्री शोध विभाग लाईब्रेरी, अलीगढ़, स० १५-१६

३-अखबारात दरबार-इ-मुअल्ला १७०७-२२ ई०, मूल अभि०, रा० रा० अभि० बीकानेर; (देखिये, क्रम संख्या १ (१)।

(आ) राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर (जयपुर अभिलेख) संग्रह

१-अर्जदाश्त (फा० तथा राज०)— ए डेस्क्रिप्टिव लिस्ट ऑफ अर्जदाश्त

२-आमेर रिकार्ड — विविध कागजात संग्रह

३-अठसता — परगना अकबराबाद, मथुरा, सहार, मुसावर, बयाना, कठूमर, सोंखर-सोखरी, कामा, खोह, खोहरी, पहाड़ी आदि आदि

४-कागजात — (१) दफ्तर सवद नवीस
(२) मुतफर्रिक महलकारान
(३) मुतफर्रिक महाराजगान

५-खरीता — (१) इन्दौर — जयपुर खरीता
(२) जयपुर-जोधपुर खरीता

(३) ड्राफ्ट खरीता व परवाना
(४) भरतपुर-जयपुर खरीता
(५) जोधपुर खरीता वही, स० २ (१७८६-६२), जोधपुर रेकार्ड

६–खतूत — (१) खतूत अहलकारान (ए डेस्क्रिप्टिव लिस्ट, राजस्थानी खतूत)
(२) खतूत महाराजगान

७–फरमान — ए डेस्क्रिप्टिव लिस्ट ऑफ फरमानस, मंसूर्स एण्ड निशानस (१६२३–१७६२ ई०), प्रकाशित १६६२ ई०

८–वकील रिपोर्ट्स — ए डेस्क्रिप्टिव लिस्ट ऑफ दी वकील रिपोर्टस
(१) (फा०) भाग प्रथम, १६६७ ई०, भाग द्वितीय प्रका० १६७२ ई०
(२) (राजस्थानी), मुद्रण, १६७४ ई०

९–वाक्या रेकार्ड्स

१०–डिग्गी सग्रह — डिग्गी घराने से प्राप्त कागजात

११–दस्तूर कौमवार — जिल्द १, २, ७, ६, १०, ११, १६ तथा २३

१२–स्याहा हजूर तथा स्याहा वकाया

१३–हस्व उल् हुक्म

(इ) जयपुर राजघराना (निजी रेकर्ड्स)

१–कपड द्वारा रेकर्ड्स, सिटी पैलेस जयपुर

(ई) राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली

१–फारिन पॉलिटिकल प्रोसीडिंग्स, १८११ ई०

२–सेलेक्ट कमेटी प्रोसीडिंग्स, जि० ७ (१७६०–६२)

३–(सी०पी०सी०), कलेण्डर ऑफ परशियन कारस्पोंडेंस, प्रथम खण्ड (१७५६–६७ ई०), मुद्रण, १६११ ई०

४–फारिन पॉलिटकल लेटर्स टू दी कोर्ट आफ डाईरेक्टर्स एण्ड फॉम दी कोर्ट (१८००–१८२६ ई०)

(उ) गवर्मेन्ट सेन्ट्रल प्रेस, वम्बई

१–पारसनिस फारसी लेख सग्रह, भारत इतिहास संशोधक मण्डल, पुणे (न्यूज लैटस ऑफ दी मुगल कोर्ट रेन ऑफ अहमद शाह, १७५१-५२ ई०) सम्पा० बी० डी० वर्मा, मु० १६४६ ई०

(उ) लेखक सग्रह

१-कागजात	(१) जाट शासकों तथा दरबार द्वारा प्रसारित रुक्का खास, सनद, परवाना, अर्जदाश्त, छूट चिट्ठी, उदक पत्रक, कबूलियात आदि
	(२) बल्लभगढ़ जागीर
	(३) खान पान बरसानिया घराना
	(४) मुकदमा मदिर श्री लश्करी, वैर
२-पोथी	(पा० लि०) पोथी तीर्थ पुरोहिताई दीवान राव हेमराज व राव रूपराम कटारा, बरसाना (१६७१-१७७७ ई०) मूल प्रति
३-पोथी जागा	खेडिया, जगनेर, नदवई, हिण्डौन के जागाओ की पोथियो की सूचनायें

१ (ख) अप्रकाशित फारसी ग्रन्थ

१-अखबार इ मुहब्बत	लि० नवाब मुहब्बत खान
२-अखबार उल् जमाल	लि० राजी मुहम्मद, मौलाना आजाद लाइब्रेरी, अलीगढ़
३-अब्दुल कादिर	तारीख-इ इमाद-उल्-मुल्क (जुलाई १७५४-जून १७५८) लि० अब्दुल कादिर उपनाम गुलाम कादिर खां
४-अली इब्राहीम खां	तारीख-इ जनको भो भाऊ, हि० १२०१ (१७८७ ई०)
५-अहकाम	अहकाम इ आलमगीरी, लि० इनायत उल्ला खां काश्मीरी, देखिये क्रम स० अ (२)
६-अहवाल	अहवाल इ सनातीन इ मुखतरीन इ-हिन्द (सीतामऊ प्रति)
७-अजाइब	अजाइब उल आफाक, लि० अज्ञात (राजा छबीला-राम नागर, राजा गिरधर बहादुर तथा भवानी राम के नाम लिखे पत्रो तथा उनके उत्तरों का सग्रह), सीतामऊ प्रति
८-आनन्दराम	तज़्किरा ये-आनन्दराम, लि० आनन्दराम 'मुखलिस' (सीतामऊ प्रति)

९–माशोब	:	तारीख-इ-शहादत-इ-फर्रुखसियर-व-जलूस-इ-मुहम्मद शाही, ले० मिर्जा मुहम्मद बख्श 'आशोब' सरकार प्रति (डा० यदुनाथ सरकार द्वारा 'मुगल साम्राज्य का पतन' में प्रयुक्त)
१०–ईसर दास	:	फतूहात-इ-आलमगीरी, ले० ईसर दास नागर (सीतामऊ प्रति)
११–कमवर	:	तज्किरातुस्सलातीन-इ-चगताई व तारीख-इ-चगताई, ले० मुहम्मद हादी कमवर खां, खण्ड २ (सीतामऊ प्रति)
१२–कामराज	:	इबरतनामा, ले० कामराज इब्न नैन सिंह (सीतामऊ प्रति)
१३–कासिम	:	इबरतनामा, ले मुहम्मद कासिम लाहौरी (सीतामऊ प्रति)
१४–कुदरत	:	जाम-इ जहाँनुमा, हि० सन् ११९१-९९ (१७७७-८५), ले० कुदरतउल्ला सिद्दकी, डॉ० गण्डा सिंह द्वारा अहमद शाह दुर्रानी में प्रयुक्त
१५–खिजर		सियानहे खिजरी, ले० मुहम्मद उमर इब्न खिजर खां, प्रथम भाग
१६–खुशहाल	:	तारीख-इ-नादिर-उल् जमानी, ले० खुशहाल चन्द (अ० मु० वि०, अलीगढ प्रति)
१७–बहार	:	बहार गुलजार-इ-शुजाई, ले० हरिचरन दास, हि० सन् १२०१ (१७५७ ई०), अंग्रे० अनु०, (१) मुन्शी सदासुख लाल (अंशत.), (२) इलिएट तथा डासन, जि० ८ (अंशतः)
१८–जौहर	.	जौहर-इ-समसम, ले. मुहम्मद मुहसिन सिद्दिकी
१९–तज्किरा	:	तज्किरा ए-इमाद-उल्-मुल्क, ले० अज्ञात
२०–तहमास्प नामा	:	ले० तहमास्प खां (हि० सन् ११९३–१७७९ ई०) (सर हेनरी इलियट तथा डा० यदुनाथ सरकार आदि ने तहमास्प खां का उपनाम 'मिसकिन' माना है)
२१–तारीख-इ-अली	:	ले० शेख मुहम्मद सालेह कुदरत (दिसम्बर, १७८५ ई०) बाँकीपुर प्रति

२२–तारीख-इ-महमदशाही : ले० अज्ञात (हि० ११६७/१७५३ ई०), अंग्रे० अनु०, डा० यदुनाथ सरकार (सीतामऊ संग्रह)

२३–तारीख इ-आलम-गीर सानी : ले० अज्ञात (हि० ११७४/१७६० ई०), अंग्रे० अनु०, डा० यदुनाथ सरकार, (सीतामऊ संग्रह)

२४–तारीख इ इमाद-उल मुल्क . ले० नजिमुद्दीन इसरत स्यालकोटी (१७३४–५८ ई०)

२५–तारीख-इ खानजादा हैदराबाद प्रति

२६–तारीख इ-दर हालात-इ-महमद शाह दुर्रानी-दर-हिन्दुस्तान ले० अज्ञात (१८४२ ई०), (पानीपत संग्राम)

२७–तारीख इ-मुहम्मद शाही ले० अज्ञात (अ०मु०वि०, अलीगढ प्रति)

२८–तारीख इ-हुसैन शाही अथवा तारीख इ-अहमदशाही अथवा तारीख इ-अहमद शाह दुर्रानी, ले० इमामुद्दीन अल हुसैनी (१७९८ ई०)

२९–देहली क्रॉनीकल • वाका इ शाह आलम सानी, ले० अज्ञात (१७३८–१७९८ ई०) अंग्रे० अनु०, डा० यदुनाथ सरकार, सीतामऊ संग्रह

३०–नामहे मुजफ्फरी : ले० अज्ञात, (अ० मु० वि०, अलीगढ प्रति)

३१–फरहतून नाजरिन : ले० मुहम्मद असलाम (हि० सन् ११८४/१७७०-१ ई०), सम्राट मुहम्मद शाह के छठवें शासन काल तक

३२–बयान इ वाकी • (१७३९–१७८५ ई०), ले० ख्वाजा अब्दुल करीम खा काश्मीरी इब्न अकीबत महमूद काश्मीरी (अ० मु० वि०, अलीगढ प्रति)

३३–बहादुर शाहनामा ले० नियामत खान अली (सीतामऊ प्रति)

३४–मिर्जा मोहम्मद • इबरतनामा (१७१३–१९ ई०) (सीतामऊ प्रति)

३५–मीराते आफ्तावनुमा ले० अब्दुर्रहमान उर्फ शाह नवाज खा हाशिमी (हि० सन् १२१७/१८०२ ई०) (सीतामऊ प्रति)

३६–यह्या खां : तज्किरात उल् मुल्क (अलीगढ़ प्रति)

३७–रुस्तम अली खां : तारीख इ हिन्दी (सीतामऊ प्रति) अंशत अनु०, इ० डॉ०, खण्ड आठ

३८–लाहौरी : बादशाह नामा, खण्ड प्रथम, ले० मुल्ला अब्दुल हामिद लाहौरी

३६–सियासी मकतूबात : ले० शाह वली उल्लाह देहलवी (राजनैतिक पत्रों का संग्रह); उर्दू अनु० एवं सम्पा०, खलीक अहमद निजामी, अलीगढ़, १६५० ई०

४०–शाकिर : तारीख-इ-शाकिर खानी (तज्किरा-ए-शाकिर खां), ले० नवाब शेख शाकिर खां (सीतामऊ प्रति)

४१–शाहनामा-ए-अहमदिया डॉ० गडासिंह द्वारा प्रयुक्त

४२–हरसुख राय : मजमा उल् अखबार (इ० डा०, खण्ड ८)

१ (ग) अप्रकाशित उर्दू ग्रन्थ

१–बलदेव सिंह सूर्यद्विज : तवारीख भरतपुर (१८५५–६ ई०) लेखक प्रति

(२) फारसी के प्रकाशित तथा अनुवादित ग्रन्थ

१–अलबदायूंनी : मुन्तखुब तवारीख, ले० अब्दुल कादिर अल–बदायूंनी, अंग्रे० अनु०, लोबी तथा रैंकिग, प्रका०, एशियाटिक सोसायटी, बंगाल, कलकत्ता

२–आइने अकबरी : ले० शेख अबुल फजल अल्लामी, खण्ड द्वितीय, अनु० जेरेट, सम्पा० डा० यदुनाथ सरकार, प्रका०, ए० सो० बंगाल

३–इमाद-उस्-सआदत : (फा०), ले०, सैय्यद गुलाम अली खां, खण्ड १व२, मुद्र०, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ

४–काशीराज : अहवाल-इ जंग-इ-भाऊ व अहमद शाह अब्दाली, ले०, काशीराज शिवदास पण्डित

अंग्रे० अनु०, जेम्स ब्राउन, प्रका०, एशियाटिक रिसर्जेज, खण्ड ३, १७६६ ई०

एन एकाउन्ट ऑफ दी लास्ट बेटल ऑफ पानीपत, सम्पा० एच० जी० रॉलिनसन, बम्बई यूनिवर्सिटी, बम्बई, १६२६

पुनर्प्रकाशन, अनु०, वी०एम०गाई, बम्बई

अंग्रे० अनु०, डा० यदुनाथ सरकार, (इण्डियन हिस्टोरिकल क्वाटरली, खण्ड १० तथा ११, जून १६३४ तथा १६३५)

५–खजानेह् अमीराह् : ले० मीर गुलाम अली खां आजाद बिलग्रामी, अनु०, अब्दुल कादिर (माडर्न रिव्यू, १६२६ ई०)

६–खाफी खां : मुन्तखबुललुबाब ले० मुहम्मद हासिम खाफी खां, प्रका० बिब० इण्डिका, कलकत्ता, खण्ड २ तथा इ० डा०, जि० ८

७-खैरुद्दीन : इबरतनामा, ले० मुहम्मद खैरुद्दीन इलाहाबादी, अंग्रे० अनु०, डॉ० यदुनाथ सरकार, सम्पा० जोशी तथा खोब्रेकर, महाराष्ट्र अभिलेखागार, बम्बई, १९६६ ई०

८-गुलाम अली खा : शाह आलम नामा, प्रथम खण्ड, प्रका० रॉ०ए०सो०, बंगाल, १९१२-१४ ई०

९-गुलिस्तानी : मुजमिल-उत-तवारीख-बाद नादिरिया, १७८३ ई०, ले० अबुल हसन इब्न मुहम्मद अमीन गुलिस्तानी, सम्पा० ओस्कर मन लीडन, १८९६ ई०

१०-गुलिस्तां : लाइफ ऑफ हाफिज उल-मुल्क-हाफिज रहमत खा, ले० मुस्तजीब खां बहादुर एनटाईटल्ड गुलिस्ताने रहमत, अंशतः अंग्रे० अनु०, सर चार्ल्स इलियट, संस्क०, १८३१ ई०

११-गोटलिइब (जॉन कोहन) पर्शियन हिस्ट्री ऑफ दी जाट्स, ले०, फॅथ गोटलिइब जॉन कोहन; अंग्रे० अनु०, डा० यदुनाथ सरकार, बंगाल : पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट, १९५५-१९५६ ई०

१२-तबकाते अकबरी : ले० निजामुद्दीन अहमद, अंग्रे० अनु० अजेन्द्रनाथ दे प्रका०, ए० सो० बंगाल

१३-तबकाते नासिरी : ले० निजामुद्दीन अहमद, अंग्रे०, अनु०, एच० जी० रावेर्टी, संस्क० १८६४ ई०

१४-ताजुल मआसिर : ले० सद्रुद्दीन मुहम्मद बिन हसन निजामी

१५-तारीख-इ-इब्राहीम : ले० इब्राहीम खां (इ० डा० खण्ड ८)

१६-तारीख-इ-इरादत खा : ले० इरादत खा, अंग्रे० अनु०, जोनाथन, १७८६ ई०

१७-तारीख-इ-मुजफ्फरी : ले० मुहम्मद अली खा अंसारी (१७५८-१७६१ ई०) अनु०, डा० यदुनाथ सरकार (अंशत:) तथा इ० डा० खण्ड ८ (अंशत:)

१८-नजीबुद्दौला : (१) अहवाल-इ-नजीबुद्दौला (लाइफ एण्ड टाईम्स), ले० सैय्यद नूरुद्दीन हसन खां, अंग्रे० अनु०, वीरेन्द्र वर्मा, सम्पा० शेख अब्दुर्रशीद, अलीगढ़, १९५२ ई०

(२) अंग्रे० अनु०, डा० यदुनाथ सरकार 'इस्लामिक कल्चर, अंक, जुलाई व अक्टू०, १९३३ तथा अप्रैल १९३४ ई०

(३) (उर्दू अनु०,) सर गुजश्त-इ-नजीब-उद-दौला, अनु०, अब्दुस समद खा, अलीगढ, १६२४ ई०

१९-फरिश्ता : तारीख-इ-फरिश्ता, ले० मुहम्मद कासिम हिन्दूबेग फरिश्ता, खण्ड १ व २, अंग्रे० अनु०, ले० क० ज्रॉन ब्रिग्ज (हिस्ट्री ऑफ दि राइज ऑफ दि मुहम्मडन पावर इन इण्डिया टिल १६१२ ई०) संस्क० १६०८ ई०

२०-बरनी : तारीखे फीरोजशाही, ले० जियाउद्दीन बरनी, प्रका०, मु० वि० वि०, अलीगढ ।

२१-बाल मुकुन्द नामा : ले० मेहता बाल मुकुन्द, अंग्रे० अनु०, डा० सतीश चन्द्र, दिल्ली १६७२ ई०

२२-बिहारी लाल : अहवाले नजीबुद्दौला व अली मुहम्मद खां व दुण्डी खां, ले० बिहारीलाल इब्न बद्रीदास, अंग्रे० अनु०, डा० सरकार, 'इस्लामिक कल्चर' अक्तू० १६३६ ई०

२३-म० उल उमरा : (१) मुआसिरुल उमरा, ले० शाह नवाज खां समसामुद्दौला, जि० १-३, अंग्रे० अनु०, ए० सो० बंगाल

(२) मुगल दरबार (हि० अनु०), जि० १-५, ना० प्र० सभा, वाराणसी

२४-मीराते अहमदी : ले० अली मुहम्मद खां, सम्पा० सैय्यद नवाब अली, बडोदरा, १६२७ ई०

२५-मआसिर-इ आलमगीरी : ले०, मुहम्मद साकी मुस्तइद खां, अंग्रे० अनु०, डॉ० यदुनाथ सरकार, ए० सो० बंगाल, १८७०-३ ई० (अंशत), हि० अनु०, मुंशी देवी प्रसाद, 'औरंगजेब नामा' खण्ड-१-३, १६०६ ई०

२६-मुर्तजा अली खां : मुनीर उद् दौला, बम्बई, १६४७ ई०

२७-मुन्नालाल : शाह आलम नामा (हि० ११८४-६६), अंग्रे० अनु०, डा० सरकार, सम्पा०, बी० जी० खोब्रेकर, म० अभि०, १६७० ई०

२८-सामीन : (१) (फा०) हालात-इ अमदान-इ-अहमद शाह दुर्रानी-दर हिन्दुस्तान

(२) अहमद शाह अब्दाली एण्ड हिज इण्डियन वजीर इमाद-उल् मुल्क (एन एकाउन्ट ऑफ

गुलाम हुसैन सामिन), इण्डियन एण्टीक्वेयरी खण्ड ३, ६ मार्च, १६०७ ई०, पृ० १०–१६, ४३-५१, ५५–७०, अनु०, सर विलियम इर्विन

२६–सियारुल मुताखरीन : (१) ले० सैयद गुलाम हुसैन खां तबतबाई (१७०६–८० ई०), प्रका०, न० कि० प्रेस, लखनऊ, १८६७ ई०

(२) अंग्रे० अनु०, खण्ड १–४, हाजी मुस्तफा, संशो० संस्क०, जॉन ब्रिग्ज, प्रका०, आर० कैम्ब्रे एण्ड कम्पनी, १६२६ ई०

३०–शिवदास लखनवी : शाहनामा मुनव्वर-इ-कलाम, अंग्रे० अनु०, डा० सैय्यद हसन असकरी, प्रका०, जानकी प्रकाशन, पटना, १६८० ई०

३१–हदीकत : हदीकत-उल-अकालीम, ले० मुर्तजा हुसैन खां बिलग्रामी, मुद्र०, न० कि० प्रेस, १८७६ ई०

(३) उर्दू के प्रकाशित ग्रन्थ

१–वाकया राजपूताना : ले० मुंसिफ ज्वाला सहाय, खण्ड २, प्रका० १८७८ ई०

२–हयाते हाफिज रहमत खा ले० सैय्यद अलताफ अली, बदायूं, १६३३ ई०

(४) फ्रेंच भाषा के ग्रन्थ

१–मनूची, निकोलाई : स्टोरिया दो मोगोर (खण्ड २), अंग्रे० अनु०, विलियम इर्विन, मुद्र० १६०७–८ ई०

२–जीन लॉ : 'मीमोआरी सुर आई' एम्पायर मोगोल, सम्पा०, अलफ्रेड मार्टिन्यू, संस्क० १६१३ ई०

३–थिफेन थेलर : अनु० बरनौली

४–राने मैडक (राने मादे) : मेमायर्स आफ ली नवाब रेने मैडक (मादे), (अंशतः) अंग्रे० अनु०, डा० यदुनाथ सरकार, (बंगाल: पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट), जि० ५२, जुलाई–दिसम्बर, १६३६ तथा जि० ५३, अप्रेल–जून, १६३७ ई०

५–मोडव : मेमायर्स आफ काम्पते द मादिव, (अंशतः) अंग्रे० अनु०, डा० सरकार (बंगाल : पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट, जि० ५१, १६३६ ई०)

६–वेण्डल : 'मम्वार डी० माई' ग्रोरिजीन दे जाट्स दा इन्दोस्तान, ले० फादर फांसिस जेवियर वेण्डल, (ग्रंशत') ग्रनु०, डा० यदुनाथ सरकार (एन एकाउन्ट ग्राफ दा जाट्स किंग्डम) (सीतामऊ प्रति)

(५) मराठी ग्रभिलेख

(१) इतिहास संग्रह : सम्पा० दत्तात्रय बलवन्त पारसनिस, तीन खण्ड, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई

२–एठले दफ्तर : (पा० लि०) वि० एठले द्वारा सङ्कलित (सीतामऊ सग्रह)

३–ऐति पत्रें : ऐतिहासिक पत्रेंन यादि वगैरा लेख (द्वितीय संस्क०), एम० काले तथा बी० एम० वाकासकर के सहयोग से गोविन्द सखाराम सरदेसाई द्वारा सम्पादित, प्रका० चित्रशाला प्रेस पुर्णे।

४-ऐति० पत्र व्यवहार : ऐतिहासिक पत्र व्यवहार, सम्पा० सरदेसाई, कुलकर्णी व काले, प्रका० समर्थ भारत छापाखाना, पुर्णे, १९३३ ई०

५–ऐति० लेख : ऐतिहासिक लेख सग्रह, प्रथम भाग, सम्पादक वासुदेव वामन शास्त्री खरे, भाऊ नाना प्रेस, कुरुन्दवाड, १८९७ ई०

६–गुलगुले द० : (पा० लि०) गुलगुले दफ्तर, प्रथम जिल्द (सीतामऊ सग्रह)

७–चन्द्रचूड : चन्द्रचूड दफ्तर सग्रह (गंगोबा तात्याची कारकीर्द) कला प्रथम, सम्पा० दत्तात्रेय विष्णु ग्राप्टे, प्रका० ग्वालियर सरकार, १९३४ ई०

८–पारसनिस : दिल्ली येथिल मराठांच्या, राजकरणें, सम्पा० डी० बी० पारसनिस, जिल्द एक व दो

ब्रह्मेन्द्र स्वामी धवडशोकर याचा पत्र व्यवहार, सम्पा० डी० बी० पारसनिस, बम्बई, १९०३ ई०

: सिलेक्शन्स फाम सतारा राजाज् एण्ड दा पेशवाज डायरीज, जि० १–३, सम्पा० वाड तथा डी०बी०-पारसनिस, १९०७ ई०

९–पुरन्दरे : पुरन्दरे दफ्तर, सम्पा० वी० के० खरे खण्ड (प्रथम) कृष्णाजी वासुदेव पुरन्दरे (खण्ड १ व ३), भा० इ० स० मण्डल, पुर्णे

१०– पूना पारसनिस : परशियन रेकार्डस ऑफ मराठा हिस्ट्री, प्रथम भाग (देहली अफेयर्स, १७६१–८८ ई०), न्यूज लेटर्स फ्राम पूना पारसनिस कलेक्शन्स, सम्पा० पी० एम० जोशी, अंग्रे० अनु० डा० यदुनाथ सरकार, प्रका० बम्बई सरकार, १९५३ ई०

११–पे० द० : सिलेक्शन्स फ्रॉम पेशवा दफ्तर (पेशवा दफ्तर सग्रह, जिल्द (२, ६, १०, १२, १३, १४, १५ २०–२४, २७, २६, ३०, ३७ तथा ४०, सम्पा० गोविन्द सखाराम सरदेसाई, प्रका० बम्बई सरकार

: (न्यू सिरीज) सिलेक्शन्स फ्रॉम पेशवा दफ्तर, खण्ड १ व ३, सम्पा० डा० पी० एम० जोशी, गवं०, सेन्ट्रल प्रेस बम्बई

१२–भाऊ कैफि० : भाऊ साहेबाची कैफियत, सम्पा० काशिराज नारायण साने, १८८७ ई०

१३–भाऊ बखर : भाऊ साहेबाची बखर, ले० कृष्णाजी शामराव (१७५४-६१ ई०) सम्पा काशिराज नारायण साने, पाचवा सस्क०, १९३२ ई०

१४–भाऊ गर्दी : (पा० लि०) भाऊ गर्दी अगर (भाऊ साहेबाची दुसरी बखर), ले० नारो सखाराम, सकलनकर्ता, वि० एठले०, १९०५ ई० (सीतामऊ प्रति)

१५–मराठी रियासत : जि० २ (१७०७–४० ई०), जि० ३ (१७४०–६० ई०) तथा जि० ४, पानीपत प्रकरण, ले० गो० स० सरदेसाई

१६–राजवाडे : मराठांच्या इतिहासाची साधनें, जि, १, ३ तथा ६, सम्पा० विश्वनाथ काशीनाथ राजवाडे, शक सं० १८१८–१८२७ ई०

१७–साहू यांची रोजनिशी

१८–शिंदेशाही : शिंदेशाही इतिहासाचीं साधनें (गुलगुले दफ्तर, कोटा), भाग प्रथम (१७५१–६० ई०), सम्पा० आनन्द राव भाऊ फालके, १९२१ ई०

१९–हिंगणे : हिंगणे दफ्तर (दिल्ली स्थित मराठा दूतो के अभिलेखों का संग्रह), खण्ड १ (१९४५ ई०), खण्ड २ (१९४७ई०), सम्पा० गणेश

सम्पा० डी०बी० पारसनिस, प्रका० भा०इ० सं० मंडल, पुणें।

२०–होल्कर : होल्करशाहीच्या इतिहासाची साधनें, सम्पा० वा० वा० ठाकुर (प्रथम भाग, १६६३–१७६७ ई०), प्रका० भा०इ०सं० मण्डल, पुणें

२१–होल्करांची कैफियत : सम्पा० य० ना० भागवत, द्वितीय संस्करण

(६) संस्कृत तथा राजस्थानी अभिलेख

१–काव्यमाला : प्राचीन लेखमाला संग्रह (संस्कृत)

२–बनेड़ा अभि० : बनेडा संग्रहालय के अभिलेख (१७५८–१७७० ई०), सम्पा० डॉ० कृष्ण स्वरूप गुप्ता तथा डा० लक्ष्मण प्रसाद माथुर, प्रका० साहित्य संस्थान, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर, १६६७ ई०

(७) हिन्दी व राजस्थानी के अप्रकाशित ग्रन्थ

१–अखैराम : (काव्य), सिंहासन बतीसी

२–ख्यात : जोधपुर राज्य की ख्यात, खण्ड २ व ३, महामहोपाध्याय गौरीशंकर हीराचन्द ओझा संग्रह (सीतामऊ प्रति)

३–गिरधर विलास : (काव्य), (सुजान सम्वत्), ले० कवि उदैराम

४–पर्थना रासो : (ऐति० काव्य), ले० चतुरा राई (लेखक संग्रह)

५–सोमनाथ : (१) (ऐति० काव्य) माधव जयति, ले० कवि सोमनाथ

(२) (काव्य), नवल रस चन्द्रोदय, (अगस्त १७७१)

६–सोमनाथ : आचार्य सोमनाथ चतुर्वेदी

(१) रस पीयूस निधि (मई, १७३७ ई०), नवाबोल्लास, माधव विनोद (अक्तू० १७५२), रामचरित रत्नाकर (किष्किन्धा काण्ड), शशिनाथ विनोद (दिसम्बर, १७५६ ई०), सुजान विलास

(२) सोमनाथ ग्रन्थावली, खण्ड १ व २, प्रका०, ना० प्र० स०, वाराणसी

७–शिवराम : (काव्य) नवधा भक्ति रस सार

(८) हिन्दी व राजस्थानी के सहायक ग्रन्थ

१-प्रवध : प्रवध के दो नवाब, ले० डा० आर्शीवाद लाल श्रीवास्तव, सस्क०, १९५२ ई०

२-आभीर कुल दीपिका : ले० कृष्णानन्द

३-ओझा : (१) बीकानेर राज्य का इतिहास, (प्रथम खण्ड), ले० महामहोपाध्याय गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, सस्क०, १९३९ ई०
(२) जोधपुर राज्य का इतिहास, (२ रा खण्ड) सस्क० १९४१ ई०
(३) ओझा निबन्ध सग्रह, भाग १, ३ तथा ४, मुद्र० १९५४ ई०

४-ईश्वर विलास : (सस्कृत, पद्य), ईश्वर विलास महाकाव्यम्, ले० कवि कलानिधि देवर्षि श्रीकृष्ण भट्ट, प्रका० रा० प्रा० वि० प्रति०, जोधपुर
(काव्य) पद्य मुक्तावली, ले० श्री कृष्ण भट्ट, प्रका०, रा० पुरा० मदिर, जयपुर, १९५८ ई०

५-कवि कुसुमाञ्जलि : स्वर्ण जयन्ती ग्रन्थ, खण्ड २, प्रका०, श्री हि०सा० स०, भरतपुर

६-गहलोत : राजपूताना का इतिहास (खण्ड प्रथम), ले० जगदीश सिंह गहलोत

७-चौबे राधा रमण : भरतपुर राज्य का संक्षिप्त इतिहास

८-टॉड, कर्नल जेम्स : टॉड कृत राजस्थान, भाग १ खण्ड १, (राजपूत कुलो का इतिहास), मंगल प्रकाशन, जयपुर

९-दीक्षित : ब्रजेन्द्र वश भास्कर, ले० पं० गोकुल चन्द दीक्षित, प्रका० श्री हिन्दू सरक्षणी सभा, आगरा, वि० सं० १९८३

१०-देशराज (ठाकुर) : जाट इतिहास, १९३४ ई०

११-नरेन्द्र सिंह (ठाकुर) : महाराजा श्री सवाई ईश्वरी सिंह का जीवन चरित्र, वि० स०, १९७४

१२-नागोरी : अलवर राज्य का इतिहास, ले० डा० एस० आर० नागोरी, प्रका० १९८२

प्रताप रासो : (काव्य), ले० कवि जाचीक जीवण, प्रका० रा० प्रा० वि० प्रति, जोधपुर, १९६५ ई०

१४–भटनागर : सवाई जयसिंह, ले० डा० वीरेन्द्र स्वरूप भटनागर प्रका० रा० हि० ग्रन्थ अका०, जयपुर,

१५–भार्गव : राजस्थान का मध्यकालीन इतिहास, ले०, डा० विश्वेश्वर स्वरूप भार्गव, मुद्र० १९६९ (द्रष्टव्य— लेखक कृत जाट मुगल संघर्ष)

१६–मथुरा लाल शर्मा (डा०) कोटा राज्य का इतिहास, खण्ड १ व २

१७–महाराजकुमार : (१) ब्रज का इतिहास, खण्ड प्रथम (मुगल कालीन ब्रज प्रदेश, १६२६–१७१८ ई०)
ले० महाराजकुमार डा० रघुवीर सिंह, प्रका० अ० भा० सा० मंडल, मथुरा

(२) पूर्व आधुनिक राजस्थान

१८–मीतल : ब्रज का सांस्कृतिक इतिहास, ले०, प्रभुदयाल मीतल, १९६६ ई०

१९–मोतीलाल गुप्ता(डा०): मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन, प्रका० रा० प्रा० वि० प्रति०, जोधपुर

२०–यदुवंश : ले० ठाकुर गंगासिंह, प्रथम भाग (१६३७–१७६८ ई०) मुद्र० १९६७ ई०

२१–रेऊ : मारवाड का इतिहास, खण्ड १–२, ले० प० विश्वेश्वर नाथ रेऊ, १९३८ ई०

२२–लेखक : (१) जाटों का नवीन इतिहास (१६३८–१७२२ ई.), मंगल प्रकाशन, जयपुर, मुद्र० १९७७ ई०

(२) जाट मुगल संघर्ष [(देखिये क्रम स० ८ (१५)]

(३) युगयुगीन बयाना (पाण्डुलिपि)

(४) बदन सिंह दि फाउण्डर आफ दि भरतपुर स्टेट, प्रका०, रा० हि० रि० ज०, वर्ष २, अंक २, अप्रेल–जून, १९६७ ई०

(५) कविवर अखैराम और उनकी काव्य साधना, समिति वाणी, वर्ष १, अंक ३–४

(६) राजा सूरजमल— एक विवेचन, सूरजमल स्मारिका, भरतपुर

(७) भरतपुर की स्थापना व नामकरण, रा० हि० को० प्रो०, खण्ड ६, १९७३ ई०

(८) जाट राज्य के दो स्तम्भ—

(१) विदेश मंत्री रूपराम कटारा

(२) फौजदार मोहनराम बरसानिया, रा० हि० कां० प्रो० खण्ड ८, १९७५ ई०

(९) जाट राज्य संरक्षिका रानी किशोरी, रा० हि० रि० ज० वर्ष ११, अंक ३, १९७४ ई०

(१०) (पा० लि०) पृथ्वीन्द्र सवाई जवाहर सिंह और उत्तराधिकारी (१७६३–७६ ई०)

२३–वंशभास्कर : ले० सूर्यमल मिश्रण, जि० १–४, प्रका० राम श्याम प्रेस, जोधपुर)

२४–वीर विनोद : ले० महामहोपाध्याय कविराजा श्यामलदास

२५–सरकार (मुगल) : मुगल साम्राज्य का पतन, प्रथम खण्ड (१७३९–१७५४ ई०), द्वितीय खण्ड (१७५४–१७७१ ई०), ले०, डा० यदुनाथ सरकार, हिन्दी अनु०, डा० मथुरा लाल शर्मा

२६–सरदेसाई : मराठों का नवीन इतिहास, द्वितीय खण्ड (मराठा सत्ता का प्रसारण, १७०७–७२), ले०, गोविन्द सखाराम सरदेसाई, १९६१ ई०

२७–सूदन : (ऐति० काव्य) सुजान चरित, प्रका०, ना० प्र० स० वाराणसी

२८–शेजवल्कर : पानीपत १७६१, ले० आचार्य त्र्यम्बक शंकर शेजवल्कर, हि० अनु०, १९६६ ई०

(ई) अंग्रेजी के सहायक ग्रंथ

१–अब्दुल रशीद : नजीबुद्दौला, अलीगढ़, १९५२ ई०

२–अस्करी : दुर्रानी राजपूत निगोशियशन्ज, १७५९–६१, ले० खान साहब सैय्यद हसन अस्करी, प्रो० इं० हि० कां०, १९४५ ई०

३–आशीर्वादी लाल (डा०) (१) शुजाउद्दौला, प्रथम खण्ड (१७५४–१७६५ ई०), संस्क० १९६१

(२) स्टेडीज इन इण्डियन हिस्ट्री, संस्क० १९६४

४–एलफिंस्टन दी हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, ले० माउंट स्टुअर्ट एलफिंस्टन, संस्क०, १८२७ ई०

५–इ० डा० : हिस्ट्री ऑफ इण्डिया एज टोल्ड बाई इट्स ऑन हिस्टोरियंज, खण्ड ७ व ८, अंग्रे० अनु० व सम्पा० हेनरी एम० इलियट तथा जॉन डासन, संस्क० १८६७–८, हि० अनु०, डा० मथुरालाल शर्मा (भारत का इतिहास) खण्ड ७ (१९७२ ई०) तथा खण्ड ८ (१९७३ ई०)

६–इरफान : दी अग्रेरियन सिस्टम ऑफ मुगल इण्डिया (१५५६–१७०७ ई०), ले० डॉ इरफान हबीब, १९६३ ई०

७–इर्विन : (१) (मुगल), लेटर मुगल्स, खण्ड १ व २, ले० सर विलियम इर्विन, संस्क०, १९२२ ई०
(२) (आर्मी), दि आर्मी ऑफ दी इण्डियन मुगल्स, १९६२ ई०
: (३) बंगस नवाबस् ऑफ फर्रुखाबाद, ज० ए० सो० ब०, खण्ड ४७–४८, १८७८–७९ ई०

८–कानूनगो : (१) हिस्ट्री आफ दि जाट्स, खण्ड प्रथम, ले० डा० कालिका रंजन कानूनगो, १९२५ ई०
(२) हिस्टोरिकल एसेज, १९३० ई०
(३) (टंकण), हिस्ट्री ऑफ दि बेरोनियल हाउस ऑफ डिग्गी

९–कीन : दी फॉल ऑफ दि मुगल एम्पायर, ले० हेनरी कीन, संस्क०, १८५७ ई०

१०–कुंज बिहारी : दी इवोल्यूशन ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ दी फोमर भरतपुर स्टेट, ले० डॉ० कुंज बिहारी लाल गुप्ता

११–कैम्ब्रिज हिस्ट्री : कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, सम्पा० एच० डाडवेल, खण्ड ४, संस्क०, १९३७ ई०

१२–खेडकर : दि डिवीजन हेरीटेज ऑफ दी यादवाज

१३–गण्डासिंह (डॉ) : अहमद शाह दुर्रानी, १९५९ ई०

१४–ग्राउज : मथुरा · ए डिस्ट्रिक्ट मेमॉयर, ले० एफ० एस० ग्राउज, संस्क०, १८८० ई०

१५–गौरी शंकर : (टंकण), रिलेसंस् बिटविन दी ईस्ट इण्डिया कम्पनी एण्ड भरतपुर, १७६१–१८२५ ई०, ले० डॉ० गौरी शंकर वशिष्ठ, आ० वि० वि० आगरा

१६–चटर्जी : मीर कासिम–नवाब ऑफ बंगाल, ले० डॉ० नन्दलाल चटर्जी, मुद्र० १६३५ ई०

१७–चीपस : चीफ्स एण्ड लीडिंग फैमिलीज इन राजपूताना, संस्क०, १६१६ ई०

१८–जहीरुद्दीन : (१) दी रेन ऑफ मुहम्मदशाह (१७१६–४८ ई०), मुद्रण १६७७ ई०

(२) ए मुगल स्टेटसमेन ऑफ दी एटीन्थ सेंच्यूरी-खानदौरान, मीर बख्शी ऑफ मुहम्मद शाह १७१८–३६ ई०

१९–ज्वाला सहाय : हिस्ट्री ऑफ भरतपुर, १६१२ ई०)

२०–टॉड : एनल्स एण्ड एण्टीक्यूटीज ऑफ राजस्थान, खण्ड २, ले० कर्नल जेम्स टॉड

२१–टिक्कीवाल : जयपुर एण्ड दी लेटर मुगलस्, ले० डा० हरीश चन्द टिक्कीवाल, १६७४ ई०

२२–डफ : ए हिस्ट्री ऑफ मराठाज्, ले० जेम्स ग्राट डफ खण्ड २, सस्क०, १६१८

२३–डाउ, ए० : ए हिस्ट्री ऑफ हिन्दोस्तान (ट्रांसलेटेड फ्रॉम परशियन), १८६२ ई०

२४–दिघे : पेशवा बाजीराव फर्स्ट एण्ड मराठा एक्सपेंशन, ले० डॉ० वी० जी० दिघे, १६४८ ई०

२५–द्विवेदी : (टंकण), दि रोल ऑफ दी जाट्स इन दी हिस्ट्री आफ मुगल एम्पायर, ले० डा० गिरीश चन्द द्विवेदी, आ० वि० वि०, आगरा

२६–नटवरसिंह (कुंवर) : महाराजा सूरजमल (१७०७–१७६३ ई०), संस्क० १६८१ ई०

२७–नरेन्द्र सिंह (ठाकुर) : थर्टी डिसाइसिव बैटिल्स

२८–फ्रीडम मूव० : हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेन्ट, खण्ड प्रथम (१७०७–१८३१ ई०), प्रका० पाकिस्तान हिस्टोरिकल सौसाइटी, १६५७ ई०

२९–फ्रेंकलिन : दी हिस्ट्री आफ दा रेन आफ शाहआलम, ले० विलियम फ्रेंकलिन, पाणिनी आफिस, ——— १६३४ ई०

३०–फ्रेजर जेम्स : दी हिस्ट्री ग्रॉफ नादिरशाह, लण्डन, १६४२ ई०।

३१–बर्वे : लाईफ ग्रॉफ सूबेदार मल्हार राव होल्कर, ले० मुकुन्द वामनराव बर्वे, इन्दौर, १६३० ई०

३२–भटनागर : लाईफ एण्ड टाइम्स ग्राफ सवाई जयसिंह (१६८८–१७४३ ई०) ले० वीरेन्द्र स्वरूप भटनागर, १६७४ ई०

३३–भार्गव : दि राइज ग्रॉफ दि कछवाहाज इन ढूंढाड, ले० डा० विश्वेश्वर स्वरूप भार्गव, १६७६ ई०

३४–मथुरालाल (डॉ) हिस्ट्री ग्रॉफ दा जयपुर स्टेट, १६६६ ई०

३५–माधवराव : पेशवा माधवराव फर्स्ट, ले० ग्रनिल चन्द बनर्जी, १६४३ ई०

३६–मेकडानेल्ड : मेमायर्स, एन ग्राटोबाईग्राफिकल ग्रर्ली लाइफ ग्रॉफ लेट फडनवीस (नाना फडनवीस यांची बखर), ग्रनु० ले० क० जॉन ब्रिग्ज, सम्पा, कप्तान मेकडानेल्ड।

३७–मोरलैण्ड : दि एग्रेरियन सिस्टम ग्रॉफ मुस्लिम इण्डिया, ले० डब्ल्यू० एच० मोरलैंड, १६२६ ई०

३८–युसुफ हुसैन खा (डा०) निजाम–उल–मुल्क ग्रासफजहा फर्स्ट, १६३६ ई०

३६–राम पाण्डे (डा०) : भरतपुर ग्रप टू १८२६

४०–लोकहर्ट एल० : नादिरशाह, १६३८ ई०

४१–सतीश चन्द्र (डा०) : पार्टीज एण्ड पोलिटिक्स एट दा मुगल कोर्ट (१७०७–४० ई०) ग्रलीगढ, १६५६ ई०

४२–सरकार : मुगल एडमिनिस्ट्रेशन, ले० डा० यदुनाथ सरकार सास्क, १६६३ ई०

४३–सिद्दिकी, जमाल मुहम्मद : ग्रलीगढ़ डिस्ट्रिक्ट : ए हिस्टोरिकल सर्वे, प्रका० मुंशीराम मनोहर लाल, १६८१ ई०

४४–सिद्दिकी, नोमन ग्रहमद : लैण्ड रेवन्यू एडमिनिस्ट्रेशन ग्रण्डर दि मुगलस (१७००–१७५० ई०)

४५–हरीराम गुप्ता (डॉ०) (१) मराठाज एण्ड पानीपत, मुद्र० १६६१ ई०
(२) हिस्ट्री ग्राफ सिक्ख

४६–हिस्ट्री ग्राफ खानपान होल्डर्स, प्रका० भरतपुर स्टेट

४७–हेमचन्द्र राय : फ्लोवर्स ग्रॉफ हिन्दू शिवलरी, १६३२ ई०

(१०) गजेटियर

१–इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया, खण्ड, १, ३, ७, ८, १२ तथा १९, ले० डब्ल्यू० डब्ल्यू० हण्टर, १८८५ ई०

२–इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया, प्रविन्शियल सिरीज, राजपूताना, खण्ड प्रथम, सम्पा० प्रसकिन, संस्क०, १९०९ ई०

३–एटकिंसन, गजेटियर ऑफ नोर्थ वेस्टर्न प्रोविन्सेज ऑफ इण्डिया, खण्ड २ तथा गजे० ऑफ फर्रुखाबाद डिस्ट्रिक्ट, १८८० ई०

४–गजेटियर ऑफ दि अलवर स्टेट, मेजर पी० डब्ल्यू० पाउलेट

५–डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स ऑफ यूनाइटेड प्राविन्सेज ऑफ आगरा एण्ड अवध खण्ड २, ६, ८ (१९०५, १९०९), सम्पा० एच० आर० नेविल

६–ईस्ट इण्डिया गजेटियर, खण्ड प्रथम, वाल्टर, हेमिल्टन, १८२८ ई०

७–गजेटियर ऑफ ईस्टर्न राजपूताना, ले० मेजर एच० ई० ड्रेक ब्रोकमन, १९०५ ई०

८–ए गजेटियर ऑफ भरतपुर स्टेट, ले० सी० के० एम० वाल्टर, आगरा, १८६८ ई०

९–गजेटियर ऑफ राजपूताना, खण्ड प्रथम, १८७९ ई०, खण्ड ३, १८८० ई०

१०–डिस्ट्रिक्ट गजेटियर ऑफ गुड़गावा, रोहतक, देहली, मुजफ्फरनगर (१९२० ई०)

(११) जरनल व रिपोर्ट्स

१–इण्डियन कल्चर पत्रिका

२–इण्डियन हिस्टोरिकल, क्वाटरलि जरनल

३–इरिगेसन रिकार्ड ऑफ भरतपुर स्टेट : बध एण्ड चैनल्ज (१८६६–१९२५) ले० एफ० शैली, १९२६ ई०

४–एनल्स ऑफ दी भंडारकर ओरियंटल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना

५–ओडायर, एम० एफ०, असेसमेन्ट रिपोर्ट ऑफ सेन्ट्रल, सदर्न तथा फाइनल ऑफ भरतपुर स्टेट, १९००–१ ई०

६–जरनल ऑफ दि एसियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, खण्ड ४

७–जरनल ऑफ दि राजस्थान इन्स्टीट्यूट ऑफ हिस्टोरिकल रिसर्च, जयपुर।

८–बंगाल : पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट

९–माडर्न रिव्यू, कलकत्ता

१०–इस्लामिक कल्चर, अप्रेल १९३२; जुलाई-अक्तूबर १९३३, अप्रेल १९३४।

११–मुस्लिम रिव्यू

१२–भारत इतिहास संशोधक मण्डल त्रैमासिक, खण्ड ३; १९२४

१३–नागरी प्रचारणी पत्रिका

१४–जाट जगत, मासिक, अंक १४, अगस्त १९४२ ई०

१५–मरुभारती, शोध पत्रिका

१६–मधुमती

१७–भारत वीर, भरतपुर राज्य की पत्रिका

१८–प्रोसीडिंग्ज्–(१) इण्डियन हिस्ट्री कॉंग्रेस

(२) इण्डियन हिस्टोरिकल रेकार्डस कमीशन

(३) राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस

१९–वाजिब-उल-अर्ज : भरतपुर राज्य के ग्रामों की मिसिल हकीयत हदबस्त, तहसील रेकार्डस्

२०–रजिस्टर : पुण्य, माफी मन्दिरान, सदावर्त विभाग, भरतपुर स्टेट

२१–पञ्चांग : इण्डियन एफिमेरीज, खण्ड ६ (१५००–१७९९ ई०), ले० स्वामी कन्नू पिल्लई, मद्रास, १९२२ ई०